आपका स्वास्थ्य

। १९७३

C. K. Y.
LIB
HARIDWAR

029228

Stock Verification-2024

आपका स्वास्थ्य

COMPILED

इंडियन मेडिकल असोसियेशन की लोकोपयोगी मासिक पत्रिका

079228

079228

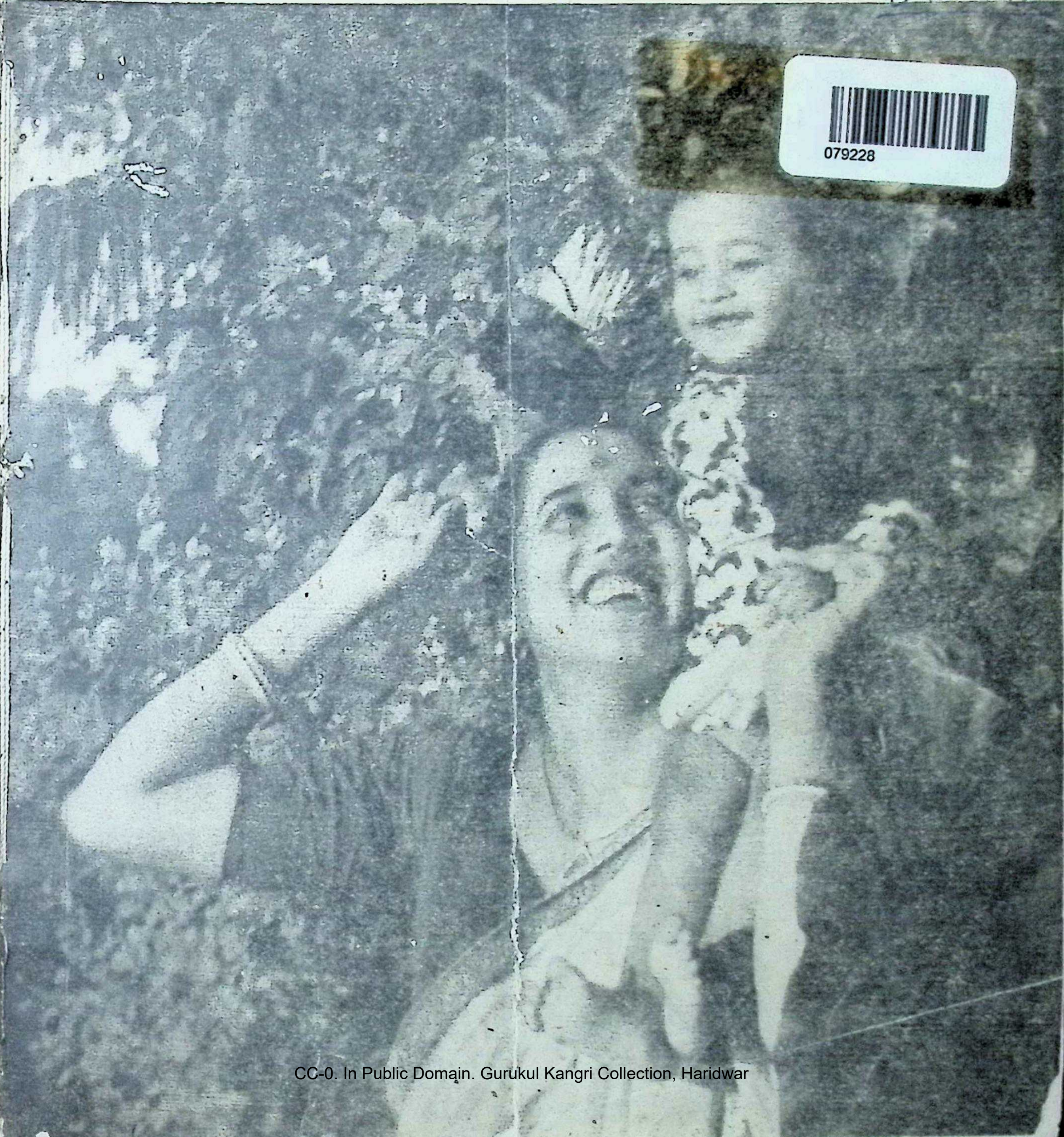

हमारे तीन महत्वपूर्ण प्रकाशन

कहीं हवा न लग जाय

-केप्टन शरत कुमार चोधरी-

इस पुस्तकमें मलेरिया, फाइलेरिया, चेचक आदि रोगोंसे बचनेके उपाय, रोगीकी परिचर्या सर्पदंश, प्राथमिक चिकित्सा सम्बन्धी अनेक महत्वपूर्ण समस्याओंकी चर्चा की गयी है।

मूल्य १५० पैसे

सुनो भाई पंचो

-डाक्टर कोशलपति तिवारी-

हिन्दीमें अपने ढंगकी सरल सुबोध शैलीमें लिखी गयी पुस्तक। रोग तथा स्वास्थ्य-सम्बन्धी उन सभी समस्याओं पर चर्चा की गयी है, जिनसे हमारे ग्रामीण भाइयोंको नित्य सामना करना पड़ता है।

पुस्तक दो भागोंमें प्रकाशित है।

प्रत्येक भागका मूल्य—१५० पैसे

गुजरात, मध्यप्रदेश, उत्तरप्रदेश, हरियाणा, राजस्थान सरकार, बिहार द्वारा नियोजन केन्द्रों, स्कूल-कालेजके पुस्तकालयों, राष्ट्रीय प्रसार सेवा खण्डों तथा ग्राम पुस्तकालयोंके लिए स्वीकृत।

डाक्टर के आने तक

- डाक्टर गोकुलदास अग्रवाल -

नागरिक सुरक्षाके संदर्भमें इस पुस्तकका विशेष महत्व है। देशके प्रत्येक नागरिकको प्राथमिक चिकित्सा सम्बन्धी ज्ञान प्राप्त करना आवश्यक है और इस पुस्तकमें विस्तृत ढंगसे इस विषयपर चर्चा की गयी है। प्राथमिक चिकित्सा (फर्स्ट एड और नर्सिंग) की शिक्षा लेनेवाले छात्र-छात्राओंके लिए सर्वश्रेष्ठ पुस्तक। प्रस्तुत पुस्तक आपके परिवारके लिए 'घरेलू डाक्टर' का काम देगी।

दो सौ से अधिक चित्र

मूल्य २७५ पैसे

चारों पुस्तकें एक साथ मंगानेपर डाक खर्च माफ। आपका स्वास्थ्यके ग्राहकोंको २५ प्रतिशत छूट दी जाती है। चारों पुस्तकें एक साथ न मंगानेपर प्रत्येक पुस्तकके लिए १२५ पैसे अलगसे डाक व्यय लगेगा।

हमारे अधिकृत विक्रेता,

हिन्दी प्रचारक संस्थान, पो० बा० १०६, वाराणसी
श्री गंगा पुस्तकालय, गायघाट, वाराणसी—१
आपका स्वास्थ्य कार्यालय, लहुराबीर, वाराणसी—१

COMPILED

आपका स्वास्थ्य

इंडियन मेडिकल एसोसियेशनका लोकोपयोगी प्रकाशन

वर्ष २० सितम्बर, १९७३ अंक १२

अनुक्रमणिका

सुरसरि सम कहँ हित होई ... २
सन्तुलित आहार ... ३
अपनी आँख बचाइये ... ५
जीवन खेलका आधार ... ६
चेलगाँवका भूछत्र नगर ... ७
खानेकी चीजोंमें मिलावट
स्वास्थ्यके लिए गम्भीर खतरा ... ९
कोयला खोयला खानोंमें काम करनेवालोंके
लिए चिकित्साकी सुविधाएँ ... ११
आपके बच्चे पानीमें क्यों खेलना चाहते हैं ? १३
पुत्रवधूके नाम पत्र (२) ... १५

परिवार नियोजन पूरक

परिवार नियोजन और स्वैच्छिक संस्थाएँ ... १९

कवर-चित्र
श्री बी० बी० बेनगल

● 'आपका स्वास्थ्य' में प्रकाशित प्रत्येक रचना और चित्रका कापीराइट प्रकाशकका है । इसलिए बिना आज्ञा कोई रचना या चित्र किसी प्रकार उद्धृत नहीं होना चाहिए ।

● 'आपका स्वास्थ्य' के लेखकोंके विचार पूर्ण रूपसे उनके अपने हैं आवश्यक नहीं है कि संपादक मंडल अथवा इंडियन मेडिकल एसोसियेशन उनसे सहमत हो ।

मूल्य—इस अंकका ५० पैसे
वार्षिक छः रुपये

आपका स्वास्थ्य कार्यालय
वाराणसी (बनारस- १)

सम्पादकीय

सुरसरि सम सब कँह हित होई

भारतीय मानसमें गंगाकी महिमा अपार है। अद्भुत है यह देव नदी। अमीर हो या गरीब, धर्मी हो या विधर्मी, आस्तिक हो या नास्तिक वह सबको बिना किसी भेद भावके तारती है। इस सदानीराने सदा सबका हित किया है।

हमारे मनमें भी एक भागीरथी है, ज्ञानकी गंगा। यह किसी विष्णुके कमंडलमें छिपी बैठी रहती है। उसे मन आँगनमें उतारनेके लिये भगीरथ प्रयास करना पड़ता है, उसे जटाजूटमें धारण करनेमें समर्थ सदाशिवकी शोध करनी पड़ती है। और जब गंगा अवतरण होता है तब मन प्रदेशमें हरियाली छा जाती है, आनन्द का अनुराग भरा राग गूँजने लगता हैं, जीवन अँगड़ाई लेने लगता है, कामनाएँ जागती हैं, कर्मकी शंख ध्वनि नवजीवनका उद्घोष करती है। और ज्ञानगंगा के दोनों तट पर 'सब कँह हित होई' का मंत्र प्रचारित होने लगता है।

ज्ञानी आदमीको, जानकार व्यक्तिको सबका भला करनेकी ओर प्रवृत्त होना चाहिये, ज्ञानगंगाके अवतरणका यही प्रमाण हैं।

किंतु दुनिया बहुत बड़ी है, यहाँ बहुतसी नदियाँ, नाले और नहरें हैं। सबकी अपनी महिमा है, मानव कल्याणमें अपना योग है। पर गंगाकी बात ही और है, वह तो सबका हित करनेको कृत संकल्प है।

इसी प्रकार आदमी भी भिन्न चरित्र स्वभाव के होते हैं। सभी भगीरथ प्रयास नहीं कर पाते, कुछ सूखे रूखे रह जाते हैं, कुछ भ्रम ज्ञानके नाले तो कोई मिथ्या नदी उतार लाते हैं। ये या तो अपना स्वार्थ साधते रह जाते हैं या अपकार करनेमें ही अपना पराक्रम मानते हैं। अपने सूखे खेतमें नहरसे जल ले जानेकी बात दूर, दूसरेके यहाँ नहरकाट कर जल न पहुँचे इसीका उपक्रम करनेमें पुरुषार्थ मानते हैं। कुछ ऐसे भी हैं जो जनता जनार्दन का अहित करते जाते हैं और सोचते रहते हैं कि मैं लोक कल्याण कर रहा हूँ, जनताकी सबकी सेवा कर रहा हूँ। ये महानुभाव नदी की बाढ़से खतरनाक होते हैं।

इस तथ्यको पहिचानें। औरोंकी खेती बहा देनेकी महती कृपा करने वालोंसे सावधान रहें। सद्वृत्ति, सद्भाव, सदइच्छासे प्रयास करें कि मानसरके तट पर ज्ञान गंगाका अवतरण हो जो सबका हित करे। पुण्य कंठमें एक ही कामना मुखरित हो 'सर्वे भवन्तु सुखिनः, सर्वे सन्तु निरामयाः'।

सन्तुलित आहार

कौन नहीं जानता है कि अच्छे स्वास्थ्यके लिए अच्छा और उचित आहार नितान्त आवश्यक है? हम खाना सिर्फ जीनेके लिए नही खाते हैं बल्कि एक स्वस्थ जीवन जीनेके लिए खाते हैं। फिर प्रश्न यह उठता है कि अच्छा खाना क्या है? इसे ठीक तरहसे जाननेके लिए यह आवश्यक है कि हम पहले यह जानें कि भोजन शरीरके लिए क्यों जरूरी है?

जब हम कोई काम करते हैं तो हमारी कुछ शक्ति क्षीण होती है। यहाँ तक कि जब हम सोये रहते हैं तब भी कुछ न कुछ शक्ति कम होती रहती है। हमारे शरीरकी जो भी शक्ति कम होती है उसे पूरा करना जरूरी है और इसे पूरा करनेके लिए ही हम भोजन करते हैं। जन्मके समय शरीरका आकार बहुत छोटा होता है। लगभग २१ वर्षकी अवस्था तक शरीरमें वृद्धि होती रहती है और यह वृद्धि पूर्ण वयस्क होने तक होती रहती है। शरीरमें यह वृद्धि हमारे भोजन लेनेके परिणामस्वरूप होती है। शरीरकी वृद्धिके समय तथा उसके बाद शरीरमें कई तरहकी प्रक्रियाएँ होती रहती हैं। इन प्रक्रियाओंको सामान्य ढङ्गसे पूरा होनेके लिए पोषक आहार लेना बड़ा ही जरूरी है। पुनः हम ऐसे वातावरणमें रहते हैं जिसमें अनेक प्रकारके जीवाणु भरे हुए हैं। इन सूक्ष्म जीवोंका सामना करनेके लिए हमारे पास काफी सहनशक्ति होनी चाहिए और यह सहनशक्ति हमें भोजनसे ही मिलती है।

हमारे शरीरकी वृद्धि तथा स्वास्थ्यके लिए पोषक तत्वोंका होना बहुत आवश्यक है। ये पोषक तत्व हमें भोजनसे भी प्राप्त होते हैं। सभी खाद्य-पदार्थोंमें कुछ न कुछ पोषक तत्व होते हैं। हाँ, उनकी मात्राके अनुपातमें भिन्नता हो सकती है। कुछ खाद्य पदार्थोंसे हमें अधिक शक्ति मिलती है जैसे—चावल और गेहूँ जैसे खाद्यान्नों, आलू जैसे कंद-मूल, तिलहन, चीनी और गुड़से हमें काफी शक्ति प्राप्त होती है। शरीरकी उचित वृद्धिके लिए हमें भोजनमें दाल, दूध, दही, मांस, मछली, अण्डे, तिलहन, फल और विभिन्न प्रकारकी सब्जियाँ होनी जरूरी होती हैं। हड्डियोंके उचित निर्माणके लिए हम दूध और दही खाते हैं और मांसपेशियोंके उचित विकासके लिए दाल, मांस और पशुओंके शरीरसे प्राप्त अन्य कई खाद्य-पदार्थोंका इस्तेमाल करना आवश्यक होता है। आँखों, मसूड़ों, हड्डियों और खूनको ठीक तथा स्वस्थ रहने के लिए हरी सब्जियाँ बहुत जरूरी होती हैं।

उम्र, शारीरिक श्रम तथा अन्य शारीरिक दशाओंके आधार पर पोषकतत्वोंकी जरूरतोंमें विभिन्नता आ जाती है। एक पूर्ण वयस्क व्यक्तिको एक छोटे शिशुके बजाय अधिक पोषक-तत्वोंकी आवश्कता होती है। पूर्ण व्यक्तिका शरीर बच्चेकी अपेक्षा कही अधिक बड़ा होता है। प्रति किलोग्राम शरीरके वजनके अनुपातमें बढ़ते हुए शिशु को एक युवकसे अधिक प्रोटीन और खनिजोंकी जरूरत पड़ती है क्योंकि बचपनमें शरीरकी बड़ी तेजीसे वृद्धि होती है। शारीरिक परिश्रम करने वाले मजदूरको कार्यालयमें काम करने वाले व्यक्तिकी अपेक्षा अधिक शक्तिदायक खाद्य-पदार्थों की जरूरत होती है। शारीरिक दशाओंमें अधिक परिवर्तनके कारण गर्भवती और दूध पिलानेवाली माताओंको शरीर-निर्माणमें योग देने वाले तत्वों-प्रोटीन और खनिजों-की भारी मात्रामें जरूरत होती है। अच्छा भोजन वह है जो हमारे दैनिक आवश्यकताके पोषक तत्वोंको पूरा कर सके तथा विभिन्न दशाओंमें हमारे शरीरकी जरूरतोंको पूरा कर सके। ऐसे भोजनको ही सन्तुलित आहार कहते हैं।

साधारण काम-काज करने वाले प्रौढ़ युवकके सन्तुलित आहारमें निम्नलिखित खाद्य-पदार्थों की जरूरत होती है:—

खाद्यान्न	४०० ग्राम
दालें	७० ग्राम
हरी सब्जियाँ	१०० ग्राम
कन्द	७५ ग्राम

अन्य सब्जियाँ	७५ ग्राम
फल	३० ग्राम
दूध	२०० ग्राम
वसा और तेल	३५ ग्राम
चीनी-गुड़	३० ग्राम

यह आहार निरामिषभोजी लोगोंके लिए बताया गया है। आमिषभोजी अपने भोजनमें दूध की मात्रा घटाकर उसकी जगह ३०-३० ग्राम मांस और अण्डे ले सकते हैं। यदि कोई आदमी भारी काम अधिक करता है तो उसे खाद्यान्नों, वसा और चीनीके पदार्थ बढ़ा देने चाहिए ताकि उसे अपने आहारमें अधिक कैलोरी प्राप्त हो सके।

सन्तुलित आहारमें बताये गये इन सभी पदार्थोंको लोग अपने भोजनमें लेते हैं परन्तु लोग इन्हें उचित मात्रा और अनुपातमें नहीं लेते हैं जिसके फलस्वरूप वे अनेक बीमारियोंके शिकार होते हैं। अधिकांश लोग अपने भोजन में खाद्यान्नों का अधिक प्रयोग करते हैं, शरीरकी रक्षा करने वाले पदार्थों-दूध अण्डे और सब्जियोंका इस्तेमाल कम करते हैं। इसका एक प्रमुख कारण लोगोंकी आर्थिक स्थिति है। खान-पानकी आदतों और खाना पकानेकी विधियों में परिवर्तनसे भी आहारके पोषक तत्वमें सुधार आनेकी सम्भावना है।

'टोण्ड दूध' में ताजे दूधकी ही तरह सभी पोषक तत्व होते हैं केवल वसा की मात्रा कुछ कम होती है। टोण्ड दूध ताजे दूधकी अपेक्षा सस्ता भी पड़ता है। सरकार मक्खन निकला हुआ दूध विद्यालयों में भी बँटवाती हैं। प्रत्येक लड़के और लड़कीको इस सुविधा का भरपूर लाभ उठाना चाहिए। यदि दूध थोड़ी ही मात्रामें सप्लाई किया जाता है तो गर्भवती महिलाओं और दूध पिलाने वाली महिलाओंको प्राथमिकता दी जानी चाहिए। इसके वाद जो दूध वचा रहे वही युवकों को लेना चापिए।

हाथ के कूटे चावल और भुजिया चावल में शरीर के लिए आवश्यक पोषक तत्व काफी मात्रा में मिलते हैं। इसी प्रकार मैदे की अपेक्षा चोकर मिले आटे में अधिक पोषक तत्व होते हैं। भोजन में केवल एक ही खाद्यान्न का इस्तेमाल करने के बजाय दो या तीन खाद्यान्नों का साथ-साथ प्रयोग करना वेहतर रहता है।

पोषक तत्वों के दृष्टिकोण से भोजन में सब्जियों का विशेष महत्व है। जो विटामिन 'सी' हमें फलों से प्राप्त होता है वही और उसी मात्रा में सब्जियों से भी प्राप्त हो जाता है। जब सभी दालों का भोजन में इस्तेमाल करना हो तो कुछ दालों को अंकुरित करके इस्तेमाल करना काफी स्वास्थ्यवर्द्धक होता है।

खाना पकाते समय भी काफ़ी पोषक तत्व नष्ट हो जाते हैं। भोजन बनाने की विधियों में उपयुक्त सुधार करके हम अपने आहार में इन्हें अधिक मात्रा में सुरक्षित रख सकते हैं। खाना पकाने में वैज्ञानिक विधियों को अपना कर भोजन पर थोड़ा ध्यान देकर हम सन्तुलित आहार ले सकते हैं तथा तथा मानसिक और शारीरिक रूप से अपने को स्वस्थ रख सकते हैं।

(राष्ट्रीय पोषाहार संस्थान, हैदराबाद के सौजन्य से)

◆

जिरह करते हुए वकीलने कटघरेमें खड़े गवाहसे पूछा "क्या आप बतायेंगे कि खूनके समय आप मृतकसे कितनी दूरी पर थे?"

"जी, मैं उस समय ग्यारह फुट पौने नौ इंचकी दूरी पर था।"

"गौर करें मी लार्ड" वकीलने जजका ध्यान खींचा, "गवाह सरासर झूठ बोल रहा है। इतनी बारीकीसे वह अपनी दूरीकी माप बता ही कैसे सकता है; खासकर ऐसे मौकेपर जबकि कहीं खून हो गया हो और......"

"यही मैं भी कह रहा हूँ," गवाहने कहा, "ऐसे वक्त कोई भी अपनी स्थिति याद नहीं रख सकता, तब भी मैं यह जानता था कि कोई न कोई वकील जरूर मुझसे यह सवाल पूछेगा।"

* * *

अपनी आँखें बचाइये !

—डॉ॰ एस. पी. माथुर

१. भारतमें ५० लाख व्यक्ति अन्धे हैं।

२. संसारमें अधिक अन्धे व्यक्ति संयुक्त अरब गणराज्यमें हैं।

३. अन्धों की जनसंख्या की दृष्टि से विश्वमें भारतका दूसरा स्थान है।

४. राजस्थानमें ७० प्रतिशत युवक आँखों की कमजोरी के कारण सेना सेवामें अयोग्य ठहराये जाते हैं।

५. राजस्थान व मध्य प्रदेशमें ६५ प्रतिशत जनता ट्रकोमा या रोहे की बीमारीसे पीड़ित है।

६. संसारमें ७० प्रतिशत अन्धापन नेत्र रोगों के कारण होता है जिसे रोका जा सकता है।

७. आँखें प्रकृति का सर्वश्रेष्ठ वरदान है जिसे हम अपनी लापरवाही से अभिशापमें बदलते जा रहे हैं।

८. आंखों के ज्यादातर रोग छूत से फैलते हैं और ५० प्रतिशत रोग बाल्यावस्थामें ही लग जाते हैं।

९. बचपनसे यदि माताएँ बालकों की आंखों की स्वच्छता पर ध्यान दें तो इन छूत की बीमारियोंसे बचा जा सकता है।

१०. चेचक अन्धेपन का एक मुख्य कारण है, इससे अपने बच्चों को बचानेके लिए निरन्तर टीका लगवाते रहना जरूरी है।

११. भोजनमें पौष्टिक तत्वों की खासकर प्रोटीन, विटामिन और कैल्शियम की कमी से आंख की ज्योति धीरे-धीरे नष्ट होती जाती है। दूध, घी, मक्खन, फल व सब्जीमें भरपूर मात्रामें ये तत्त्व होते हैं।

१२. काजल और सुरमा आंखों को विशेष रूप से हानि पहुँचाते हैं।

१३. आँखों की कुछ बीमारियां जन्मजात होती हैं। ज्यादातर उन लोगोंमें जो चाचा अथवा मौसेर भाई-बहनोंमें विवाह कर लेते हैं।

१४. ४० वर्ष के बाद प्रतिवर्ष आँखों की जाँच कराना आवश्यक है।

१५. सूरज की ओर देखनेसे रेटिना जल जाता है।

१६. अच्छी रोशनीमें पढ़ाई न करनेसे आँखें कमजोर हो जाती हैं।

१७. आँख की छूत की अनेक बीमारियां रोज सुबह व रात को सोते समय मुँह धोने और पानी छिटकीसे दूर हो जाती हैं।

१८. सिगरेट व बीड़ी के धुँए से आँखों को नुकसान पहुँचता है।

१९. कारखानों व उद्योगोंमें भट्टियों या झालन के कामोंमें आँखों को ढंकना बहुत जरूरी है।

२०. आपकी स्वच्छ आँख मृत्यु के बाद किसी अन्धे व्यक्ति को ज्योति प्रदान कर सकती है।

२१. पटाखोंके खेल से आँखमें चोट लगकर अन्धापन हो जाता है।

२२. तीनसे पाँच वर्ष की उम्रमें चश्मे की जाँच कराना बच्चेके शारीरिक एवं मानसिक विकासके लिए आवश्यक है।

२३. चश्मे की आवश्यकता होने पर यदि चश्मा न लगाया जाय तो बच्चे को भेंगापन हो जाता है।

२४. नुकीली चीज जैसे तीर-मान या गिल्ली-डंडेके खेलसे आँखमें चोट लगकर अन्धापन हो सकता है।

२५. कारखानोंमें काम करते समय आँख के बचाव की ज़िम्मेवारी कारखाना मालिक और कारीगर दोनों की है। बचावके लिए चश्मे उपलब्ध करना और उनका उपयोग करने से आँख दुर्घटना से बच सकती है।

२६. मोतियाबिन्द आँखमें लेन्स के अपारदर्शी हो जाने को कहते हैं। यह अधिकतर ४० साल की उम्रके बाद होता है। इस उम्रके बाद नेत्र विशेषज्ञसे समय-

(शेष पृष्ठ १४ पर)

जीवन-खेल का आधार

बच्चा एक बार चलना-फिरना और बोलना सीख जाए तो उसके दिल में नयी-नयी बातें सुनने, जानने और करने का शौक पैदा हो जाता है। उसकी हालत बिल्कुल उस तितली या चिड़िया के नन्हें बच्चे जैसी होती है, जिसने नया-नया उड़ना सीखा हो। अपने पंखों को फैला कर दुनिया की जानकारी हासिल करने की जैसी उत्सुकता उनमें होती है, ठीक वैसी ही बच्चे में होती है। बच्चे के इस शौक को पूरा करने के लिए उसे दूसरे बच्चों और नये-नये लोगों से मिलने के मौके दीजिए। लेकिन यह सब बच्चे की अपनी मर्जी से होना चाहिए, उसे मजबूर न किया जाए। हो सकता है, वह दूसरे बच्चों और लोगों को सिर्फ देखना ही चाहे, उनसे बोलना और बातें करना पसंद न करे।

एक-डेढ़ साल की उम्र का बच्चा घर-भर में घूम-फिर और चक्कर काट आता है, अकेले खेल कर भी मस्त रहता है। अक्सर अपने आप में और अपने खेल-खिलौनों में खोया रहता है। लेकिन निडर होने के लिए वह माँ-बाप की हिमायत चाहता है। वह चाहता है कि माँ हर वक्त उसके आस-पास रहे।

विकास के लिए खेल-कूद

बच्चे के शरीरिक और मानसिक विकास के लिए खेल-कूद बहुत जरूरी है। खेल-कूद के लिए उसे अपने हम-उम्र साथियों की जरूरत होती है। यह अपने देखा होगा कि बच्चे के लिए सबसे बड़ी सजा है, उसे मुँह पर अँगुली रखवा कर, कमरे के एक कोने में खड़ा कर देना। इससे ज्यादा कड़ी सजा की बच्चा कल्पना ही नहीं कर सकता क्योंकि बोलना, बातें करना, उछलना-कूदना और तरह-तरह की शरारतें करना उसकी आदत है।

खेल-कूद में लगे रहने वाले बच्चों की शारीरिक सेहत भी ठीक रहतो है और वे मानसिक तौर पर भी स्वस्थ रहते हैं। उनमें स्फूर्ति पायी जाती है। वे हमेशा खुश-खुश दिखाई देते हैं, भर-पेट खाना खाते हैं, पूरी नींद सोते हैं, कुछ करने, जानने और सीखने की भावना, उन्हें हर वक्त किसी न किसी काम में लगे रहने की प्रेरणा देती रहती है। इसके उलट जो बच्चे खेल-कूद में हिस्सा नहीं लेते, जिन्हें मनोरंजन आकर्षित नहीं करता, वे अक्सर सुस्त, जिद्दी और भोंदू बन जाते हैं।

बच्चा खेल में तब लगा रहता है जब तक कि उसका मनोरंजन होता है। जैसे ही उसका मन खेल से ऊबा या कोई और खेल उसे ज्यादा अच्छा लगा, वह अपने सामने के खेल-खिलौने छोड़कर उस तरफ़ चल देता है।

खिलौने और खेलने का ढंग

बच्चों के खिलौने और खेलने के ढंग में उम्र के मुताबिक फर्क होना स्वाभाविक है। साल-छः महीने की मुन्नी भी गेंद से खेलती है और तीन-चार साल का मुन्ना भी गेंद-बल्ले का शौकीन है। लेकिन जहाँ मुन्नी गेंद को पकड़ कर, दबोच कर अपने नन्हें हाथों में संभालने की कोशिश करती है और उसे अनायास लुढ़का कर तालियाँ पीटती है, वहाँ नन्हें मियाँ गेंद को बल्ले से उछाल कर या अपने साथी की तरफ फेंक कर खुश होते हैं।

तीन-चार महीने का बच्चा चीजों को छूने और पकड़ने की कोशिश करने लगता है। वह आस-पास की ओर हाथ बढ़ाता है। बाप की गोद में आकर कभी वह उसकी नाक पकड़ता है, कभी जेब में लगे पैन को छूता है। इसी तरह माँ की गोद में आकर उसके गले की चेन, कानों की बालियाँ या बुन्दे, हाथों की चूड़ियाँ जो चीज भी उसे आकर्षित करती है, उसे हाथ में लेने की वह कोशिश करता है। न सिर्फ हाथ में ले कर ही बल्कि मुँह में डाल कर भी वह उनका स्पर्श अनुभव करता है। धीरे-धीरे उसे कोमल और कठोर, हल्के और भारी आदि का अहसास होने लगता है।

(शेष पृष्ठ १० पर)

चैल गाँवका भूछत्र नगर

—श्री वि० गो० भागवत—

भूछत्र क्या है यह आप जानते हैं? अजी, यह वही है जिसे कौए का छाता या कुकुरमुत्ता कहते हैं। परन्तु इस भूछत्र की काश्त यह बात बेशक आप के लिए नयी होगी। हम जैसे गेहूँ, ज्वार, धान, गन्ने आदि की फसल निकालते हैं, उसी तरह "भूछत्र की फसल" इस शब्द प्रयोग को भी समझ लें। आज देश में कई जगह अकाल पड़ा है, साथ ही साथ अनाज की कमी है। अतः इस पृष्टभूमि में इस फसल का परिचय प्राप्त करना युक्तिसंगत अवश्य होगा।

हिमाचल प्रदेश में पहाड़ों की ढलान के निचले निसर्ग रमणीय शीतल जलवायु वाले शिमला-मार्ग पर, सोलन से ३५ किलोमिटर की दूरी पर स्थित "चैल" नामक गांव को आज "भूछत्र नगर" नाम से सम्बोधित किया जाता है। यहां पहिले भूछत्रों की पैदाइश और तदनन्तर उनका शुद्धि-संस्कार कर उन्हें सीलबन्द डिब्बों में भरने के लिए एक खास केन्द्र खुला। राज्य सरकार द्वारा अब वहाँ, १२ लाख रुपये की लागत पर एक वातानुकूलित भूछत्रगृह और प्रयोगशाला भी स्थापित की गयी है। भूछत्र की काश्त का दूसरा केन्द्र पटियाला में खुला है जहाँ इसकी फसल निकाली जा रही है। इसी तरह बंगलोर के निकट ऊटकमण्ड में भी भूछत्र की काश्त करने वाली संस्थाए निकट भविष्य में कार्यान्वित होंगी ऐसी आशा है।

भूछत्र की किस्में

सर्वसाधारण वनस्पति से भिन्न होकर भूछत्र यह फंगी किस्म के अन्तर्गत आती है। यह हरित द्रव्य तथा बीज रहित एक अनोखी वनस्पति है। वनस्पति शास्त्रज्ञों ने अब तक फंगी की कोई एक लाख किस्मों का पता लगाया है। इनमें से कुछ जहरीली और दूसरी फसलों को नुकसान कारक होती हैं। फसलों का तमेरा, फफून्द आदि इसके कुछ उदाहरण कहे जा सकते हैं। "एमानिटो फैलाइडस" नामक किस्म तो अत्यन्त विषाक़्त होती है। भूछत्र की जो खाद्योपयोगी किस्में हैं, उनमें से कुछ विशिष्ट प्रक्रियाओं द्वारा डबल रोटी, यीस्ट इत्यादि में काम में लायी जाती हैं। प्राचीन काल में भूछत्र को एक मिष्टान्न मानते थे, तो ग्रीक और रोमन लोगों ने इसे देवताओं का अन्न माना था तथा धार्मिक कार्यों में इनका अकसर उपयोग होता था।

-'फ्रेंच चैम्पिग्नन", जिसका दूसरा नाम एगैरिकस वायस्पोरस है, अन्य खाद्योपयोगी किस्मों में श्रेष्ठ होकर खेती की दृष्टि से भी लाभदायक पायी गयी है। लगभग २ से ३ इंच ऊंची बढ़नेवाली, सफेद रंग की और अण्डाकार छत्रवाली यह किस्म पिछले काफी वर्षों से युरोप और अमेरिका में ज्ञात थी और वहाँ इसकी खेती होती थी। यह किस्म प्रोटीन, खनिज एवं जीवनसत्वों से परिपूर्ण होकर पचने में हलकी और स्वादिष्ट है। युरोप और अमेरिका के लोग कई वर्षों से इसका अपने आहार में उपयोग कर रहे हैं, परन्तु भारत में इसकी काश्त अभी कुछ दिन पहिले शुरू की गयी है। इस किस्म की काश्त शुरू करनेवालों को वैज्ञानिक ढंग से खेती करना सुकर हो, इसलिए संयुक्त राष्ट्र संघ के कृषि व अन्न विभाग की ओर से नियुक्त परिचम जर्मनी के इस विषय के महान विशेषज्ञ डा. एरिच मैटल द्वारा उपर्युक्त केन्द्र को मार्ग दर्शन दिया जा रहा है। इन्हे भूछत्र की काश्त का पिछले ३० वर्षों का अच्छा अनुभव है। हिमाचल प्रदेश की सरकार ने इन्हीं के मार्ग दर्शन में उपरोक्त चैल नामक गांव में एक आधुनिकतम अनुसंधान केन्द्र खोला है, जहाँ अनुसंधान कार्य के साथ-साथ विशेष प्रक्रिया द्वारा भूछत्रों की डिब्बाबन्दी की जाती है और उनका विदेशों को निर्यात होता है।

१४ से २० रु० प्रति किलो!

भारत में अब तक आहार की दृष्टि से भूछत्र की

विशेष मांग नहीं है, क्योंकि यह भी एक खाने की वस्तु है यही तो अधिकांश लोग जानते नहीं, और दूसरे आज इसके दाम भी बहुत हैं। ऋतुओं के अनुसार दिल्ली में एक किलो ताजे चैम्पिग्नन के दाम १४ से २० रु. तक होते हैं जो मध्यमवर्गीयों की पहुँच के बाहर है। डा. मेंटले आशा करते हैं कि उत्पादक कुछ समय बाद, इस व्यवसाय में लगी अपनी लागत वसूल करने पर, कम लाभ लेकर ४ से ५ रु. किलो की दर से बेच सकते हैं। इसलिए आज भारतीय चैम्पिग्नन की विदेशी मण्डियों में अच्छी मांग है। ज्ञात हुआ है कि आगामी वर्ष में उक्त किस्म के भूछत्रों के ५०० टन के सीलबंद डिब्बों की युरोप की मण्डियों में मांग है। अपने माल का अधिकाधिक उठाव होकर इसके जरिये विदेशी मुद्रा प्राप्त करने का यह प्रयत्न स्तुत्य है। डा. मेंटले के मतानुसार, भारत में भूछत्र की काश्त का भविष्य उज्वल है।

भूछत्रों का राजा

इन दिनों डा. मेंटले भूछत्र की अन्य किस्मों पर अपना शोधकार्य कर रहे हैं। इनमें से "मोर्चेला" भी भूछत्र की एक अच्छी किस्म है जो चेम्पिग्नन से कुछ बड़ी और अधिक स्वादिष्ट होकर पाश्चात्य देशों में दर्जेदार मांसाहारी पदार्थों में तथा सासेज व अन्य कीमती रक्षित पदाथो में इसका उपयोग किया जाता है। मोर्चेला किस्म के भूछत्र साधारण: 'सेब' के पेड़ों के नीचे बढ़ते हैं। हिमाचल प्रदेश में सेब के बगीचे हैं और वहां इस किस्म की काश्त डा. मेंटले के मतानुसार संभव है। इनके अतिरिक्त जिसे भूछत्र का राजा कहते हैं वह "ट्रूफले—" एक अनन्यसाधारण किस्म है। प्राचीनकाल से ही जगत्-प्रसिद्ध किस्म के रूप में इसकी गणना हो रही है।

KURAZOL
(Liquid & Tablet
ADIOL COMPOUND — A Remedy for Asthma

● ● ●

A General Pick-up

● ● ●

HEMOGASTRIN — A Digestive & Haematinic Tonic

● ● ● ●

LYCOLIV — A Liver Tonic

● ● ●

Products of :
INTERNATIONAL CHEMICAL & BIOLOGICAL INSTITUTE
PRIVATE LIMITED
KURAZOL HOUSE, BANGALORE-4.

खाने की चीजों में मिलावट

स्वास्थ्य के लिए गम्भीर खतरा

स्वादिष्ट आइस-क्रीम या चाँदी के वर्क में लिपटी हुई रंग-बिरंगी मिठाई खरीदते समय किसे इस बात का भान हो सकता है कि इन सुन्दर खाद्य-पदार्थों को खरीदने के बदले वह व्यक्ति किसी भयंकर रोग को नियंत्रण दे रहा है। उत्पादकों और व्यापारियोंके बीच कुछ ऐसे असामाजिक तत्व हैं, जो स्वादिष्ट वस्तुओं के अलावा रोजमर्रा क खाद्य-पदार्थों में भी मिलावट करके उसे मनुष्य के लिए अखाद्य बना देते हैं। इन खाद्य-पदार्थोंमें कई तरह की नुकसान पहुँचाने वाली जहरीली चीजें भी मिला दी जाती हैं।

गत वर्ष अगस्तमें कलकत्ता के दमदम नामक स्थानमें हुई दुखद घटना की याद अभी ताजा है जिसमें लगभग २७५ पुरुषों, महिलाओं और बच्चों द्वारा प्लास्टिक उद्योगों में इस्तेमाल होने वाला रंगहीन द्रव मिला हुआ सरसों का तेल पीने से उनके नीचे के धड़ में लकवा मार गया था। यह कोई इस तरह की अकेली घटना ही नहीं है। हमारे देश में मिलावट वाले पदार्थों के इस्तेमाल से कई दुखद घटनाएं हो चुकी हैं। दमदम वाली घटना को समाचारपत्रों और जनता ने इसलिए अधिक महत्व दिया के उसे बहुत अधिक संख्या में लोग प्रभावित हुए थे। आये दिन जो इस तरह की घटनाएं होती हैं, उसका मुख्य कारण है—मिलावट।

अधिकतर मिलावट दूध, दाल, सरसों तथा अन्य खाने वाले तेल, चाय, कहवा, मसाले तथा चाँदी के वर्क आदि में की जाती है। मिलावट के भयंकर परिणामों की जानकारी के लिए आप सरसों के तेल का ही उदाहरण लीजिए—सरसों के तेल में आर्जेमोन का तेल मिला देने से काले मोतियाबिन्द से अंधापन, दिल की बीमारियाँ, रसौली और यहाँ तक कि मृत्यु भी हो जाती है। खनिज तेल मिले हुए खाद्य तेलों के इस्तेमाल से यकृत को बड़ी हानि होती है, यहाँ तक कि कैंसर होने की भी आशंका रहती है। अरहर की दाल, काले चने और बेसन में खेसारी की मिलावट से निचले हिस्से में लकवा हो सकता है। सीसे के क्रोमेट मिली हुई हल्दी का इस्तेमाल करने से खून की कमी, अंगों का लकवा, मिर्गी के दौरे, आँखों की रोशनी का जाना और गर्भवती महिलाओं के गर्भपात की घटनाएं होती हैं। मिलावटी मिठाइयों और कोका कोला आदि के इस्तेमाल से कैंसर होने का डर रहता है।

हमारे देश में बहुत बड़े पैमाने पर खाद्य पदार्थों में मिलावट होती हैं। पिछले तीन-चार सालों में खाद्य निरीक्षकों द्वारा लिए गये खाद्य नमूनों से पता चलता है कि प्रत्येक तीसरे-चौथे नमूनों में मिलावट है। शुद्ध भोजन हमारे स्वास्थ्य के लिए बहुत जरुरी है। इस तथ्य को जानते हुए भी हमारे यहाँ खाने की चीजों में बहुत अधिक मिलावट की जा रही है। भारत जैसे देश—जहाँ का पोषक आहार का स्तर निर्धारित स्तर से भी नीचा है, वहाँ शुद्ध भोजन की तो और भी आवश्यकता है।

खाद्य-पदार्थों में मिलावट रोकने के लिए अधिकारियों और जनता को मिलकर कार्यवाही करनी चाहिए। स्थिति निरन्तर बिगड़ती हुई देखकर १९६४ में केन्द्रीय स्वास्थ्य परिषद, स्थानीय स्वायत्त शासन तथा योजना आयोग की सलाह पर भारत सरकार ने खाद्य मिलावट रोकथाम अधिनियम, १९५४ में कुछ संशोधन किया। संशोधित अधिनियम के अनुसार भारत सरकार को खाद्य निरीक्षकों और विश्लेषकों की नियुक्ति तथा इस कानून को बेहतर और प्रभावशाली ढंग से अमल में लाने का अधिकार मिल गया। इस कानून का उल्लंघन करने वाले के लिए कठोर दण्ड की व्यवस्था की गई। मिलावट करने वाले को छह माह की सजा तथा १००० रु० के जुर्माना कीसजा दी जाएगी। इसके लिए उत्पादक को

या फेरी वाले को माल के मूल्य के बराबर क्षतिपूर्ति का बाण्ड भरना पड़ेगा। संशोधित कानून के अनुसार अब नमूना लेते समय एक ही आदमी की गवाही जरूरी होगी जबकि इसके पहले दो गवाहों का होना जरूरी था।

इतने बड़े कानून और कठोर नियमों के बावजूद खाद्य-पदार्थों में मिलावट हर जगह बेरोकटोक की जा रही है, इसके क्या कारण हैं? इस समस्या ने जनसाधारण को बहुत ही परेशान कर रखा है क्योंकि उसे ही असली मुसीबतें झेलनी पड़ती है। यहाँ यह स्मरणीय है कि खाद्य-पदार्थों में मिलावट की रोकथाम पर अमल लाने वाली संस्थाएं प्रायः स्थानीय हैं, जो वित्तीय कठिनाइयों के कारण पूरे समय के लिए खाद्य निरीक्षकों की नियुक्ति नहीं कर पाती हैं। फलस्वरूप यह अतिरिक्त काम सफाई निरीक्षकों पर लाद दिया गया है। इसके अतिरिक्त इसे निष्क्रिय बनाने में स्थानीय प्रभावशाली व्यक्तियों का भी बहुत बड़ा हाथ रहता है। केवल महाराष्ट्र में वहाँ की राज्य सरकार ने खाने में मिलावट की चुनौती का सामना करने का स्वयं निश्चय किया है।

इस कार्यान्वयन की दूसरी समस्या है—नमूनों के विश्वस्त और शीघ्र विश्लेषण की पर्याप्त सुविधाओं का अभाव। भारत जैसे विशाल देश में केवल ६६ ऐसी प्रयोगशालाएं हैं, जहां विश्लेषण किये जा सकते हैं। इनमें से २२ स्थानीय संस्थाओं के हाथ में हैं तथा शेष राज्य सरकारों के अधीन हैं। इसके अलावा, इनमें से अधिकांश प्रयोगशालाओं में कर्मचारियों और उपकरण का अभाव रहता है। इसलिए ये ठीक तरह से काम नहीं दे पाती हैं।

इन सारी कमियों के बावजूद स्वास्थ्य और परिवार नियोजन मंत्रालय ने कई कदम उठाये हैं। नई दिल्ली—११ के डी० एच० डाकघर में ५४१५ नं० के एक विशेष पोस्ट बाक्स नं० की व्यवस्था की गयी है, देश के किसी भी भाग में यदि किसी व्यक्ति को किसी कस्म के मिलावट की शिकायत हो तो इस पते पर पत्र व्यवहार किया जा सकता है। मिलावट की रोकथाम के लिए अन्तर्राजीय स्तर पर खाद्य निरीक्षकों के एक केन्द्रीय दस्ते का गठन किया है, ऐसा करना इसलिए आवश्यक था कि स्थानीय संस्थाओं और राज मरकारोका कार्य बहुत सीमित था। खाद्य निरीक्षकों के केन्द्रीय दस्ते को आवश्यक कानूनी अधिकार भी मिले हुए हैं। गत वर्ष उन्होंने विश्लेषणके लिए १३४ नमूने लिए। कुछ मुख्य उत्पादन-केन्द्रों तथा राजधानीके बाजारोंमें मिलावटके कुछ महत्वपूर्ण स्रोतका पता लगा।

हम सभी लोगोंको, चाहे निम्नवर्गके हों या उच्च वर्गके चाहे राजधानीमें रहने वाले हों या ग्रामीण इलाकेमें मानवताके इस भयंकर शत्रु मिलावट से डटकर संघर्ष करना होगा इसे, प्रश्रय न दें। इस प्रकार इसे दूर करनेमें सभी नागरिक महत्वपूर्ण भूमिका अदा कर सकते हैं।

(पृष्ठ ६ शेषांश)

साल, सवा-साल के बच्चे की सुनने की शक्ति भी बढ़ जाती है। जानवरों की बोलियाँ, गीत-संगीत और लय-ताल आदि से उसका मनोरंजन होता है। दो-तीन साल के बच्चे ढोलक की थाप या रेडियो सुनकर खुश होते हैं और ताली बजा-बजा कर नाचना शुरू कर देते हैं।

तीन, साढ़े-तीन साल की उम्र के बच्चे अपने खेल-खिलवाड़ में किसी साथी को शामिल कर के खुश होते हैं। इस उम्र में बच्चे में टीम-स्प्रिट का अभाव होता है, वह तो हर खेल में अपनी मर्जी और मनमानी चाहता है। वह अपनी धाँधली करता है, क्योंकि जिस खेल में उसकी प्रधानता न हो, उसे वह पसंद नहीं आता। इसलिए छोटे बच्चों के खेल को जमाने के लिए यह जरूरी है कि कोई बड़ा आदमी उनके साथ हो और उन्हें सहयोग दे।

असल में बचपन का खेल-खिलवाड़ ही जीवन-खेल का आधार है। खेल ही बच्चे का काम है और खिलौने उस काम का साधन। खेल से ही बच्चों की रुचि और पसंदका पता चलता है। आप की मुन्नी जब सुई-धागा ले कर गुड़ियों के कपड़े सींतीहै या आपका मुन्ना कील ले कर लकड़ी की तख्ती में ठकोता है, तो मुमकिन है कि उनका यही खेल आने वाले समय में निपुण गृहिणी या या कुशल इंजीनियर बनने की शुरूआत हो। (घर परिवार से साभार)

कोयला खानोंमें काम करनेवालोंके लिए चिकित्सा सुविधाएँ

कोयला खानों में काम करने को स्वास्थ्य संबंधी कई समस्याओं का सामना करना पड़ता है । भारत में इस समय लगभग ४ लाख व्यक्ति इन खानों में काम करते हैं । यदि खान में काम करने वाले प्रत्येक के उपर आश्रितों की संख्या औसतन तीन हो तो लगभग १२ लाख व्यक्तियों का जीवन स्वास्थ्य की इन समस्याओं के जुड़ा हुआ है । १९४४ के बाद भारत सरकार का ध्यान इन समस्याओं की ओर गया और तबसे कोयला खान उद्‌योग में लगे हुए श्रमिकों की भलाई के लिए सरकार ने सक्रिय कदम उठाना शुरू किया । इसी साल सरकार ने इन श्रमिकों की भलाई के लिए एक कोष की स्थापना करने का निश्चय किया । कोयला खान श्रमिक कल्याण कोष अधिनियम, १९४२ के अन्तर्गत इस कोष की स्थापना की गयी ।

इसके अन्तर्गत सबसे अधिक महत्वपूर्ण जो कार्य किया गया वह है चिकित्सा की अधिक से अधिक सुविधाएँ प्रदान करना तथा मौका पड़ने पर अस्पतालों में भर्ती होकर इलाज कराने की व्यवस्था करना है । ५०० रू० तक वेतन पाने वाले खान कर्मचारियों तथा उनके आश्रितों को इस कोष से निःशुल्क चिकित्सा-सुविधाएँ दी जाती है । इसके अन्तर्गत अस्पताल और मातृशिशु कल्याण केन्द्र, खोला और चलाया जाता है; तपेदिक का उपचार किया जाता है । आयुर्वेदिक औषधालयों तथा अन्य औषधालयों की सेवाओं की सुविधाएँ दी जाती हैं ।

यह संगठन इस समय तीन केन्द्रीय अस्पताल, १२ क्षेत्रीय अस्पताल, एक तपेदिक का क्लिनिक, ४ तपेदिक के अस्पताल चला रहा है । इसके अतिरिक्त तपेदिक सेनीटोरियमों में ६१ रोगी शय्याएँ सुरक्षित हैं तथा एक एलोपैथी औषधालय और २९ आयुर्वेदिक पद्‌धति के औषधालयों की सहूलियतें भी इसी संगठन द्वारा उपलब्ध करायी गयीं हैं । इन विभिन्न पद्‌धतियों दवारा लगभग ७ लाख रोगियों का प्रति वर्ष इलाज होता है ।

इनके अतिरिक्त कोयला खानों में काम करने वाले इन श्रमिकों तथा उनके आश्रितों के लिए राज्यों के अस्पतालों तथा गैर-सरकारी अस्पतालों में भी कुछ स्थान सुरक्षित रहते हैं । इनमें उन रोगों का इलाज होता है जिनके लिए कोष द्‌वारा परिचालित चिकित्सा-संस्थाओं में कोई प्रबंध नहीं है । ऐसे उपचार का सारा खर्च कोष से ही दिया जाता है । जो औषधालय कोयला खान के मालिकों की ओर से संचालित हैं, उनमें भी कोष से सहायता दी जाती है । काफी बड़े पैमाने पर मलेरिया उन्मूलन अभियान भी चलाये गये हैं, इनसे लगभग १५ लाख लोगों को लाभ पहुँचा है । हाल के वर्षों में कोषकी चिकित्सा तथा सार्वजनिक स्वास्थ्य गतिविधियों में बहुत अधिक वृद्‌धि हुई हैं ।

केन्द्रीय अस्पताल

धनवाद, आसनसोल और महेन्द्रगढ़ में केन्द्रीय अस्पताल खोले जा चुके हैं । ये अस्पताल हर प्रकार से सुसज्जित तथा आधुनिक सुविधाओं से युक्त हैं । इन अस्पतालों में चिकित्सा के विभिन्न क्षेत्रों-दवा, शल्य-चिकित्सा, शिशु-पालन और प्रसूति विज्ञान, आंख, नाक, कान और दाँत के इलाज, यौन रोग, एनीस्थिसिया, थूक, खून आदि की की जाँच, रेडियोलोजी आदि विभिन्न चिकित्सा-शाखाओं के विशेष इलाज की व्यवस्था है । १९७२-७३ में धनवाद और आसनसोल के अस्पतालों में से प्रत्येक में १,६५,००० रोगियों का इलाज हुआ है । महेन्द्रगढ़ के अस्पताल में लगभग ८ हजार लोगों का उपचार किया गया ।

धनवाद और आसनसोल के अस्पतालों में रक्त कोष (ब्लड बैंक) तथा पुनर्वास केन्द्रों की भी सुविधाएँ दी गयी हैं। पुनर्वास केंद्र में व्यायाम, बिजली की सेंक, बिजली के झटके, मालिश, पैराफिन स्नान, रेडियम की

गर्मी से स्नान थेरेपी आदि के इलाज की भी व्यवथा है। एक सामाजिक कार्यकर्त्ता भी रखा गया है जो रोगियों की अनेक जरूरतों में सहायता देता है, उनके लिए पत्र लिखता है; उनके पारिवारिक मामलों में उनकी मदद करता है और अस्पताल में यथासंभव उनके मनोरंजन की व्यवस्था करता है।

क्षेत्रीय अस्पताल

स्थानीय कोयला-खान श्रमिकों और उनके आश्रित के साधारण इलाज के लिए (जहां अस्पतालों की सुविधाएँ नहीं हैं) १९७१ में १२ क्षेत्रीय अस्पताल खोले गये जिनमें कुल ४३२ रोगी शय्याएँ हैं। हाल में सरकार ने महाराष्ट्र की चांदा खानों के लिए वेल्लूरपुर में एक अस्पताल खोलने का निश्चय किया है, इसमें ५० रोगी शय्याओं की सुविधाएँ उपलब्ध होगीं। इन क्षेत्रीय अस्पतालोंमें साधारण रोगों के इलाज की समुचित व्यवस्था होती है। जिन रोगों के उपचार के लिए विशेष चिकित्सा जरूरी होती है, उनके विषय में केन्द्रीय अस्पतालों से परामर्श लिया जाता है। अब तक इन क्षेत्रीय अस्पतालों में २ लाख १५ हजार रोगियों का इलाज किया जा चुका है।

मातृ-शिशु कल्याण केन्द्र

प्रत्येक क्षेत्रीय अस्पताल के साथ एक मातृ-शिशु-कल्याण-केन्द्र भी सम्बद्ध होता है। इसके अलावा, विभिन्न कोयला क्षेत्रों में लगभग ८ केन्द्र स्वतंत्र रूप से काम कर रहे हैं। प्रत्येक केन्द्र की अधिकारी एक महिला स्वास्थ्य अधिकारी होती है। ये केन्द्र भारती रेड क्रास सोसायटी की पद्धति पर काम करते हैं। घरों में जच्चाओं की सेवा के लिए प्रशिक्षित दाइयां, मिडवाइफ और स्वास्थ्य अधिकारी होती है; प्रसूति के लिए सभी पंजीकृत महिलाएँ इन सुविधाओं का लाभ उठा सकती हैं। उन्हे दवा, दूध, फल, अंकुरित चने इत्यादि भी दिये जाते हैं। महिला स्वास्थ्य अधिकारी कोयला खान श्रमिकों की गर्भवती महिलाओं को देखने जाया करती हैं तथा उन्हें प्रसूति के पहले तथा उसके बाद देख-भाल की सलाह देती है।

एलोपैथी और आयुर्वेदीय औषधालय

कोयला क्षेत्रों की जनता के लिए एक स्थायी औषधालय तथा एक चलते-फिरते चिकित्सा यूनिट की सुविधा भी दी गयी है। इन चलते-फिरने चिकित्सा यूनिटों में से प्रत्येक में एक चिकित्सा अधिकारी तथा एक कम्पाउण्डर भी होता है। इनमें प्रति वर्ष ३५०० लोगों का इलाज होता हैं। कोयला खान मजदूरों को आयुर्वेदिक पद्धति की चिकित्सा सुविधाएँ देने के लिए आयुर्वेदिक औषधालय खोलने की भी स्वीकृति दी गयी है। इस समय २९ आयुर्वेदिक औषधालय खुल चुके हैं।

औषधालयों में सुधार के लिए ऋण

कोयला खान मालिकों को औषधालयों में सुधार करने, नये औषधालय खोलने या उनके लिए उपकरण आदि खरीदने का प्रोत्साहन देने के लिए १९५७ से ही ब्याज रहित ऋण देने की एक योजना चलायी गयी है; यह ऋण ३२ किस्तों में देना होता है। यह धन राशि वास्तविक लागत मूल्य या औषधालय की सेवाओं के लिए दी जाने वाली वार्षिक अनुदान राशि की २६ गुने तक हो सकती हैं। इसके लिए गत छः वषो में लगभग साढ़े पाँच लाख रु० ऋण दिया जा चुका है।

कोयलाखान-श्रमिकों के लिए पुनर्वास की सुविधा

कोयला खानो में काम करने वाले श्रमिकों को कई बार बहुत घातक चोटें लग जाती हैं जिसके कारण वे कभी-कभी विकलांग हो जाते हैं। सरकार ने इन लोगोंके पुनर्वास के लिए आवश्यक कदम उठाये हैं। छिन्दवाड़ा (मध्य प्रदेश) में २५ विस्तरों वाला एक केन्द्र खोला गया है। बाद में यह सुविधा बढ़ाकर ५० रोगी-शय्या तक कर दी जायेगी। पश्चिम बंगाल के सिद्धबाड़ी नामक स्थान में भी एक इसी तरह का केन्द्र खोला जा रहा है। यह केन्द्र निर्माणाधीन है तथा शीघ्र ही चालू हो जायेगा।

यहां कोयला खान कल्याण संगठन की कुछ प्रमुख कार्य कलापों का उल्लेख किया गया है। इन कार्यकलापों

(शेष पृष्ठ १४ पर)

आपके बच्चे पानीमें क्यों खेलना चाहते हैं?

"अगर मैंने तुम्हें नल पर खेलते हुए देख लिया तो तुम्हारे तमांचा जड़ दूंगी," इस प्रकार बौखलाई हुई मां अपने बच्चे को चेतावनी देते हुए उसे वाश बेसिन से खींच कर परे हटा देती है। बच्चा बेचारा रोने लगता है और अपनी मां को कोसता हुआ एक कोने में चुपके से जा खड़ा होता है। दूसरी बार बच्चा जब फिर पानी को देखता है तो वह पानी के साथ खेलने का अपना लोभ संवरण नहीं कर सकता। दुनिया का कोई भी बच्चा ऐसा नहीं जो पानी की छप छप की आवाज और फुहारों से आकर्षित न होता हो, चाहे वह शहरों में फव्वारों या सार्वजनिक नलों पर हो या भारी वर्षा के बाद जहां तहां बने हुए छोटे-छोटे तालाबों में हो, या वाश बेसिनों और स्नानगृहों में हो। माताओं और घर के बड़ों को यह जानना चाहिए कि छोटे-छोटे बच्चे जल-क्रीड़ा की ओर क्यों आकषित होते हैं। पानी में आपके बच्चों को साफ रखने का गुण तो है ही, आरोग्य की दृष्टि से भी इसका बहुत महत्व है। पानी शारीरिक आरोग्य का एक उत्ताम साधन सिद्ध हो सकता है, इससे तनी हुई मांसपेशियां ढीली पड़ जाती हैं और कुछ शारीरिक रोगों से भी मुक्ति मिलती है। ऐसा कहा जाता है कि तैरने के बाद तैराकों को गहरी नींद आती है। अगर आप अपने बच्चों को उचित समय तक पानी में खेलने दें तो आप उन्हें बहुत हल्की-फुल्की और प्रफुल्लित मुद्रा में पाएंगे, उनका तनाव काफी ढीला पड़ चुका होगा।

घर में बच्चों के लिए जल-क्रीड़ा के पर्याप्त साधन नहीं जुटाए जा सकते, परन्तु बालवाड़िया निश्चित रूप से ऐसे साधन जुटा सकती हैं जो बच्चों के लिए सर्जनात्मक और आरोग्यवर्धक सिद्ध हों। शहरों के कई नर्सरी स्कूलों में छोटे-छोटे तालाबों की व्यवस्था होती है जिनमें बच्चे खुश होकर खेलते हैं और स्कूल की अध्यापिकाएं भी उन्हें खेलते देख कर बहुत खुश होती हैं।

अपने बच्चे को वाश बेसिन के पास जाने दें और और उसे गौर से देखें। जैसे ही बच्चा टोंटी खोलता है और पानी उसकी उँगलियों से टकराता हुआ निकलता है, उसका चेहरा खुशी से चमकते लगता है। कई बार पानी की तेज धार के कारण बच्चा अपनां हाथ टिका नहीं पाता। किन्तु जब वह टोंटी के ठीक नीचे उँगलियां रख कर पानी की फुहारें निकालने का यत्न करता है, उससे कभी-कभी उसका शरीर भी भींग जाता है। उस समय उसकी उत्सुकता अपने चरमोत्कर्ष पर होती है। अगर मां उसे इस प्रकार पानी के साथ खेलते हुए देख ले तो उसे डांटती है। माताओं को चाहिए कि वे उन के साथ नरमी बरतें। हां, यदि वे अति करने लगें तो बात और है। अगर आपके घर में वाश बेसिन नहीं है तो बच्चे को पानी की छोटी-सी बाल्टी दे दीजिए और उसे खूब अच्छी तरह खेलने दीजिए। वह समय आने पर इसे स्वतः छोड़ देगा और मनोरंजन तथा आत्म-अभिव्यक्ति का कोई दूसरा जरिया अपना लेगा।

अगर बालवाड़ियों में पानी के साथ-साथ अन्य उपकरणों और साज-समान की व्यवस्था की जाय तो बच्चों की सर्जनात्मक गति-विधियों में विविधता आएगी। बच्चे छोटी-छोटी नलियों की सहायता से साबुन के पानी में बलबुले उठाना बहुत पसंद करते हैं। निस्संदेह, शुरू-शुरू में छोटे-छोटे बच्चों को साबुन के रंगीन बुलबुले उठाने में कुछ कठिनाई होगी। ऐसा हो सकता है कि बुलबुले उठाने की बजाए साबुन का पानी ही उनके गले में चला जाय। परन्तु अगर माता-पिता धैर्यपूर्वक बुलबुले उठा कर दिखाए तो उन्हें अवश्य सफलता मिलेगी। जब छोटी-छोटी लड़कियां अपनी माताओं की नकल करते हुए रबड़ की गुड़ियों को नहलाती-धुलाती हैं तो उससे उनकी सुप्त मातृत्व की भावना और अनुकरण वृत्ति का परिचय मिलता है। बड़ों को चाहिए कि वे बच्चों को पानी के साथ खेलने जैसी गतिविधियों में बेरोकटोक लगे रहने की स्वतंत्रता प्रदान करें। जब तक बच्चों का मन किसी विशेष गतिविधि से भर न जाए तब तक बड़ों को चाहिए कि वे दूर से ही उनकी गतिविधियों का निरीक्षण और नियमन करते रहें। इससे बच्चों में आत्मनिर्भरता, संतोष और सुरक्षा की भावना पैदा होगी। बच्चों के शौकों, अभिरुचियों, रुझानों और गतिविधियों को हमें वयस्कों की नजर से नहीं देखना चाहिए। बच्चों को उचित लाड़-प्यार और स्नेह-संरक्षण प्रदान करें और उनकी स्वतन्त्र सत्ता को स्वीकार करते हुए उन्हें स्वाभाविक रीति से पनपने दें।

(पृष्ठ १२ का शेषांश)

पर प्रतिवर्ष लगभग २ करोड़ रु० खर्च होते हैं। जनवरी, १९७३ से कल्याण उपकर प्रति टन ७५ पैसे कर दिया गया है। पहले यह उपकर ५० पैसे प्रति टन ही था। अब इस कार्य के लिए अधिक धन उपलब्ध होगा। इस संगठन के ये विभिन्न कार्यकलाप राज्य सरकार या नियोजकों दवारा चलाये गये कार्यक्रमों के स्थान पर नहीं हैं बल्कि इनका उद्देश्य राज्य सरकारों और नियोजकों द्वारा चलाये गये कार्यक्रमो में और सहयोग देना है। सभी कोयला खानों के पूर्ण रूप से राष्ट्रीयकरण हो जाने के बाद जल्दी ही चिकित्सा सुविधाओं के लिए एक समन्वित योजना चालू की जायेगी जिसके अन्तर्गत सभी कोयला खान श्रमिकों तथा उनके आश्रितों के लिए चिकित्साकी सुविधाएँ उपलब्ध होने लगेगी। यह योजना बहुत महत्वपूर्ण है क्योंकि कोयला खान श्रमिकों के स्वास्थ्य पर ही कोयले का उत्पादन निर्भर करता है।

(पृष्ठ ५ का शेषांश)

समय पर सलाह लेना आवश्यक है। प्रारम्भमें चश्मेसे रोशनी बढ़ सकती है।

२७. ग्लूकोमा (काला पानी) मोतियाबिंद की तरहसे ४० साल की आयुके बाद होता है। इसमें भी आँख की रोशनी धीरे-धीरे कम हो जाती हैं जो न दवा न चश्मा और न ऑपरेशन से वापस आती है। इसलिए ४० साल की आयुके बाद नेत्र विशेषज्ञ को आँखें दिखाकर सलाह लेनी चाहिये।

२८. आंखके इलाजके लिए नेत्र विशेषज्ञ से ही सलाह लेनी चाहिये। घरेलू या नीम हकीम के इलाजसे नुकसान की सम्भावना हैं।

२९. बच्चों को कुर्सी पर बैठकर रोशनी सामने रख कर और यदि चश्मा डॉक्टर ने बताया है तो चश्मा लगा कर पढ़ना चाहिये।

३०. रंग का अन्धापन पैदायशी बीमारी होती है। फौज रेलवे तथा अन्य नौकरियोंके लिए व्यक्ति अयोग्य रहता है। इसलिए प्रारम्भसे इसकी जांच कराके इन्हें अन्य धन्धों की ओर आकर्षित करना चाहिये।

३१. एक आँख वाले व्यक्ति फौजमें, उद्योगोंमें, भीड़में जानेके अयोग्य होते हैं। एक स्थान पर बैठकर कार्य करने वाले धन्धे इनके लिए उपयुक्त हो सकते हैं।

पुत्रवधूके नाम पत्र (२)

१७ कालिदास रोड
देहरादून ।
दिनांक मार्च २३, १९७३ ।

चिं० बेटी गीता,

आज सवेरे इला तुम्हारे पास से वापस आ गयी है। जब हम लोग स्टेशन पहुँचे तब गाड़ी आ चुकी थी।

इला के हाथ तुम्हारा पत्र मिला। मेरा पत्र तुम्हें अच्छा लगा, यह जानकर प्रसन्नता हुई। पर साथ ही तुमने लिखा है कि मुझे पत्र लिखने में तुम्हें दुविधा हो रही है। इसका कारण तो मैं अपने पूर्व पत्र में ही लिख चुका हूँ। न मालूम क्यों भारतीय परिवारोंमें कुछ ऐसे अन्तर्निरोध[1] व्याप्त रहते हैं जो एक ही घर में रहने वाले आत्मीयजनों को एक दूसरे से दूर रखते हैं। बड़े होने के बाद अपने बच्चोंके साथ भी उनमुक्त चर्चा और स्वाभाविक व्यवहार नहीं हो पाता। इसके कारण स्वाभाविक आत्मीयता का स्वस्थ विकास नहीं होता। समाज के संस्कारोंका थोड़ा बहुत प्रभाव हम सभी पर पड़ता है। इसलिये तुम्हारी यह दुविधा की स्थिति स्वाभाविक ही है। शुरूमें तुम्हें अपनी आण्टीको भी पत्र लिखनेमें परेशानी महसूस हुई थी। जिस तरह तुम अपने पापा को पत्र लिखती हो बिल्कुल वैसे ही हम लोगों को भी लिखो। जब अपने बेटे-बेटी बड़े हो जाते हैं और उनके स्वयंके पारिवारिक अस्तित्व बनने लगते है तब मां-बाप ऐसे मित्रोंकी तरह हो जाने चाहिये। जिनमें वे विश्वास कर सकें। कुछ ऐसा ही रिश्ता बना पानेके लिये मैंने तुम्हें यह पत्र लिखना शुरू किया है।

कुछ ऐसा हुआ कि जबसे चिं० अशोक बाहर रहा, मैं उसे बहुत कम पत्र लिख सका। पिछले सात वर्षोंमें शायद सात-आठ पत्र भी कुछ मिलाकर मैंने नहीं लिखे होंगे। शुरूमें इसका एकमात्र कारण मेरी बहुव्यस्तता रहा। पत्राचारका सारा दायित्व मैंने तुम्हारी आण्टीको ही सौंप रक्खा था। इसका परिणाम बना कि अशोकके पत्र भी अपनी भाभीके नाम ही आते रहे। अब मुझे ऐसा लगता है कि शायद उसे भी और मुझे भी एक दूसरेको पत्र लिखनेमें अकारण हिचक होती है।

इसलिये मैं अब न केवल इस गलतीको दोहराना ही नहीं चाहता अपितु इसका निराकरण भी करना चाहता हूँ। और अब तो सौभाग्यवश अपनी परिस्थितियाँ भी बदल गयी हैं। अभी तक तो सबेरेसे शाम तक केवल एक ही काम रहता था—रोग और मरीज। अब शामका सारा समय अपना होता है। प्रैक्टिस जो बन्द हो गयी है। अब तो शामको तुम्हारी आण्टीके साथ घूमनेके अवसर भी मिलने लगे हैं। इस समय का कुछ सदुपयोग भी चाहता हूँ।

इन्हीं सब कारणोंसे मैंने तुम्हारे लिये यह पत्र शृंखला शुरू की है। इसके माध्यमसे ऐसी सभी बातें करनेकी कोशिश करूँगा जो तुम्हें बताना जरूरी समझता हूँ।

अपने पिछले पत्रमें मैंने लिखा था कि अब तुम अपने जीवनकी एक नयी मंजिल शुरू करने जा रही हो। मेरा संकेत तुम्हारे विवाह की ओर था।

अभी जब तुम्हारी मम्मी देहरादून आयीं थीं तब उन्होंने बताया था कि जिस दिन हम लोगोंके बीच टेलीफ़ोन पर इस नये सम्बन्धके लिये परस्पर स्वीकृति हुई थी, उस समय तुम भी वहीं थीं। इस बात को जानकर तुमने सहसा अपने कमरे में जाकर रोना शुरू कर दिया था। जब मथुरासे देवेन्द्रके पिताजी का स्वीकृतिसूचक पत्र आया था तब इलाने भी बिल्कुल ऐसा ही किया था।

मनुष्य की यथास्थिति[2] में जब भी सहसा कोई परिवर्त्तन होता है तब ऐसा ही कुछ होता है। अपनी पूर्व अभ्यस्थ स्थिति[3] की सुख-सुविधाओं को छोड़कर जब बिल्कुल अनजान और नयी विधा शुरू करनी होती है तब मनमें भय, आशंका और अनिश्चितता के तत्व स्वभावतः

रहते हैं। गर्भस्थ शिशु माँ के पेट के भीतर वहाँ के सुरक्षित और सुखद परिवेश[४] में रहता है। अपने जन्मके समय जब उसे वह परिवेश छोड़कर स्वतन्त्र अस्तित्व बनाना पड़ता है तब भी कुछ ऐसा ही होता है। हम सभी ने अपने स्वतन्त्र जीवन की शुरुआत रोकर की है। उस वक्त नवजात शिशु[५] को यह आभास नहीं होता कि इस नये जीवन की भावी संभावनाएँ कितनी सुहानी और सुखद बनेगीं। उसे तो अपने उस सुरक्षित स्थान को छोड़नेके कष्ट की अनुभूति ही उस समय होती है।

अपने रिश्ते की बात जानकर तुम्हारी कुछ इसी तरहकी प्रारम्भिक प्रतिक्रियाकी अनहोनी बात नहीं थी। इतना तो तुम समझती ही ही कि विवाहके बाद अबतकका अपना घर छोड़कर दूसरी जगह-जाना होता है। अभी तो किसी तरहकी परेशानी होने पर तुम दौड़कर अपने अम्मी-पापा के पास जाती हो। वे तुम्हारी सभी मुश्किलों का समाधान करते हैं। तब इस सबके लिये न तुम्हारे मम्मी पापा होंगे, न हम लोग। शेष सब बातें भी अनिश्चित ही हैं। भावी जीवनकी व्यापक सम्भावनाओंका पूरा परिचय भी तुम्हें नहीं है। इसलिये उस दिन सहसा तुम्हारे रोनेकी घटना बिल्कुल स्वाभाविक बात थी।

किसी भी यात्राके पहले उसके हेतु और सम्भावनाओं का परिचय यात्राको आसान और मनोरम बना देता है। आजके इस पत्रमें मैं इसी सबके बारेमें कुछ बातचीत शुरू करूँगा।

विवाह प्रथाका अभ्युदय और विकास जैसे हुआ इसके बारेमें जानकारी रोचक होगी। इन सबका कोई प्रामाणिक और कालक्रमबद्ध[६] इतिहास उपलब्ध नहीं है। केवल वैज्ञानिक अनुमान भर किये जा सकते है। प्रकृतिने जीव-जातियोंकी निरंतरता[७] बनाये रखनेके लिये उनमें प्रजनन[८] की व्यवस्थाकी है। विभिन्न जीव-जातियोंमें प्रजननके ढंग अलग-अलग होते हैं। मनुष्यमें नर-नारीके माध्यमसे प्रजनन होता है। परन्तु कुदरतने इसे आदमीकी मर्जीके भरोसे नहीं छोड़ा है। इस हेतुके निमित्त प्रकृतिने सैक्स-भावना, प्रवृत्ति और प्रक्रियाकी रचना की है। सही उमरपर हर नर-नारीमें इनका अभ्युदय होता है। तब उनमें एक दूसरेके प्रति सहज आकर्षण होने लगता है। सैक्सकी प्रेरक ऊर्जा[९] इतनी उग्र और बलवती एवं अनुभूति इतनी सुखकर होती है कि वह हर इन्सानके लिये सैक्स प्रक्रिया अपरिहार्य[१०] बना देती है। इसका सहज परिणाम प्रजनन होता है। मूलतः प्राणी प्रजननके लिये सैक्स प्रक्रियामें नहीं रत होते है। सैक्सकी जैविक प्रवृत्ति,[११] ऊर्जा और उससे उपलब्ध होनेवाली सुखानुभूति ही इसका प्राथमिक हेतु होता है। सभी मानवेतर[१२] जीव-जातियोंके लिये यह बात पूरी तरह लागू होती है। बहुतसी आदिम जन-जातियाँ[१३] आज भी गर्भ स्थिति[१४] को देवी कृपाका परिणाम मानती है। यौन प्रक्रियासे वे इसका कोई सम्बन्ध नहीं जानती-समझतीं। केवल आधुनिक मानव ही एकमात्र ऐसा प्राणी है जो इन दोनों बातोंके कार्य कारण सम्बन्ध[१५] को जानता हैं।

मानव-सभ्यताके विकाससे बहुत पहले आदमीके घर परिवार नहीं हुआ करते थे। न वह खेती करता था न कोइ धन्धा। झुण्डों अथवा समूहोंमें नर-नारी रहते थे। अपने-अपने क्षेत्रों[१६] में ऐसे समूह घूम-घूमकर खाना (फल-फूल और शिकार) इकट्ठा करते थे। अपनी रक्षा भी मिलजुल कर करते थे। तब दूसरे प्राणियोंकी ही तरह मनुष्यके सभी जीवन-व्यवहार सर्वथा जैविक प्रवृत्तिके आधार पर हुआ करते थे। सैक्सके बारेमें भी कुछ ऐसा ही रहा होगा। जब, जहाँ और जैसी जैविक परिस्थितियाँ बनी तब वहाँ, वैसा निभ गया। नर-नारीका कोई विशिष्ट भावनात्मक[१७] और स्थायी[१८] नाता-रिश्ता नहीं रहता रहा होगा। यह मनुष्यमें सैक्सके यूथाचार[१९] का युग था।

भोजन इकट्ठा करनेके इस युगसे कुछ आगे बढ़कर मनुष्यने जैसे ही खेती करना सीखा होगा तभी सम्भवतः इस दिशामें पहली बार परिवर्तन शुरू हुए होंगे। खेती मिलजुल करनी होती थी। कुछ समय एक ठिकाने रहकर व्यवस्था भी करनी पड़ती थी। तब खेतीमें मदद करनेके लिये स्त्रीका महत्व बना होगा। और तभी नर-नारीने मिलजुल कर घर जैसी जगहका कोई पूर्वरूपभी बनाया होगा। तभी स्थानीय परिस्थितियोंके अनुसार कुछ नर

नारी मिलजुल कर स्थायी रूपसे एक जगह रहने लगे होंगे। इस तरह आदि मानव समूहोंके बीच स्त्री-पुरुषके स्थायी सम्बन्धोंकी शुरुआत हुई होगी।

इसके बाद किस तरह, कब, कहाँ और क्या परिवर्तन और विकास हुए होंगे कहना कठिन है। पर सम्भवतः यह अनुमान ठीक ही है कि अगली स्थिति बहुपत्नी[२०] और बहुपति[२१] प्रथाओंके ढङ्गकी वनी होगी। पितृसत्तात्मक[२२] स्थिति में वहुपत्नी तथा मातृसत्तात्मक[२३] स्थितिमें बहुपति प्रथाके ढङ्ग विकसित हुए होंगे। अनेक जन-जातियोंमें इनके प्रतिनिधिस्वरूप आज भी देखनेको मिलते है।

आदमीकी एक जैविक मजवूरी भी परिवारके विकासका निमित्त वनी होगी। मनुष्यकी सन्तान दूसरे प्राणियोंके शावकों[२४] की अपेक्षा स्वतंत्र अस्तित्व वना पानेके लायक वननेमें अधिक समय लेती है। इस अवधिमें माँ-वापको ही उनकी देखरेख करनी होती है। परिवार-नियोजन[२५] के व्यवहार के अभावमें जब एकाधिक बच्चे जल्दी-जल्दी अवतरित होते थे तब माँ-बापको इस दायित्वको लगातार दीर्घ अवधि तक निवाहना पड़ता था।

इस तरह प्रारम्भिक खेतीके निमित्त एक साथ श्रम और सहयोगके लिए एवं बच्चोंकी देखभालके हेतु सम्बन्धित नारी-नारीको जब अधिक समय तक साथ रहना पड़ा तो उनमें परस्पर उन भावनात्मक सम्बन्धों का आविर्भाव होने लगा होगा जो एकात्मकता[२६] के जनक बने। इसी स्थितिने आगे चलकर एकचारिता[२७] का रूप लिया होगा। एकचारितासे मतलव उस स्थितिसे है जहाँ एक पुरुष और एक स्त्री पति-पत्नीके रूपमें जीवन यापन करते है।

प्रारम्भमें इस तरह एक स्त्री और एक पुरुषका साथ रहने लगना प्रायः संयोगिक और जैविक कारणों पर ही निर्भर रहता रहा होगा। जोर जवर्दस्तीके तत्व भी इनमें रहते होंगे। इस तरहका सम्बन्ध एक बार बननेके बाद आजीवन स्थायी होता हो ऐसा भी अनिवार्य नहीं रहा होगा। तब ऐसे सम्बन्धके लिये कोई निषेधऔर नियम भी नहीं रहे होंगे। शुरूकी स्थितिमें सामाजिक पक्ष भी नहीं बना होगा। पात्रता-अपात्रताके आजके से विचार भी नहीं किये जाते होंगे।

कालान्तरमें जब दुनियाके विभिन्न भागोंमें उन्नत संस्कृतियाँ विकसित होने लगीं तव इस स्थितिने विवाहका रूप लिया होगा। एक स्त्री और एक पुरुषके इस तरह साथ रहनेके लिये सामाजिक अनुमोदन[२८] आवश्यक वन गया होगा। फिर इस घटनाने एक प्रथाका रूप लिया होगा। तरह-तरहके रीति-रिवाज इसके साथ जुड़ने लगे होंगे। अधिक विकसित होने पर आधुनिक विवाहका रूप बना। विभिन्न संस्कृतियोंमें इसे हिन्दू-विवाह, मुस्लिम-विवाह, ईसाई-विवाह जैसे विशेषण दिये गये। तरह-तरह के निषेध और भी वने। अन्तत कहीं इसका रूप वैधानिक और सामाजिक अनुवन्ध[२९] का वना तो कहीं इसने पवित्र धार्मिक संस्कार[३०] का रूप लिया।

आजका पत्र यहीं खत्म कर रहा हूँ। इस पत्रमें मैंने तुम्हें यह वतानेकी कोशिश की है कि किस तरह आदमीका यौन आचरण अपने मूल जैविक स्वरूपके यूथाचारके युगसे शुरू होकर एकचारिताकी प्रवृत्ति तक विकसिक हुआ और कालान्तरमें कैसे इसने विवाहका रूप लिया। इस विषयकी चर्चा करते समय कुछ पारिभाषिक शब्द मजवूरन इस्तेमाल करने पड़े है। आशा है तुम इनको समझ सकोगी। फिर भी सुविधाके लिये ऐसे कुछ कठिन लग सकने वाले शब्दों के अर्थ साथमें संलग्न कर रहा हूँ। तुम स्वयं एंथ्रोपोलौजीकी विद्यार्थी हो। इसलिये तुम्हारे लिये यह विषय सर्वथा अपरिचित नहीं होगा। मैंने यह सब अपनी सामान्य जानकारीके आधार पर ही लिखा हैं। अगर शास्त्रीय दृष्टिसे इसमें कहीं कोई बात गलत प्रतीत हो तो वताना।

तुम्हारी पेंटिंग भी मिली। बहुत सुन्दर है।

इलाके लखनऊ जानेके बाद तुम्हारी आण्टीको चिकन पौक्स निकल आयी थी। चार-पाँच दिन बहुत परेशानी रही।

अपने पापा-मम्मी को मेरा सादर अभिवादन कहना। चिं० संगीताको प्यार।

इस पत्र पर तुम्हारी प्रतिक्रियाकी प्रतीक्षा करूँगा ।

तुम्हारा
सुरेन्द्रनाथ गुप्त
(अंकल)

१. अन्तर्निरोध—किसी स्वाभाविक इच्छा और प्रवृत्ति को रोकने वाले (प्रदमन करने वाले) सांस्कारिक तत्व ।

२. यथास्थिति—जो स्थिति पहले से बनी हुई हो ।

३. अभ्यस्थ स्थिति—जिस स्थिति में रहने की आदत (अभ्यास) हो गयी हो ।

४. परिवेश— वातावरण

५. नवजात शिशु—हालका जन्मा बच्चा ।

६. कालक्रमबद्ध—समयके सिलसिले वार ।

७. निरन्तरता—सिलसिला वनाये रखना ।

८. प्रजनन— बच्चे उत्पन्न होने की प्रक्रिया ।

९. ऊर्जा— व्यक्तिमें सैक्स भावना, प्रक्रिया और व्यवहारकी प्रेरक और नियामक शक्ति ।

१०. अपरिहार्य – जरूरी, जिससे बचा न जा सके, अनिवार्य । लिबिडो

११. जैविक प्रवृत्ति—बायोलाजिक टिंक्ट

१२. मानवेतर— मनुष्यके अलावा, मनुष्यसे परे ।

१३. आदिम जनजातियां—प्राचीनकालके मानवोंकी जातियाँ

१४. गर्भ स्थिति— गर्भ रहने की प्रक्रिया ।

१५. कार्यकारण सम्बन्ध—जब एक बात दूसरेका कारण बने ।

१६. क्षेत्र— वह सीमित स्थल जिसमें आदि मानवके समूह विशेष रहते थे, और अपना आहार एकत्र करते थे ।

१७. भावनात्मक—इमोशनल

१८. स्थायी—पर्मानेंट

१९. यूथाचार— संस्कृत में यूथ झुण्ड अथवा समूहको कहते हैं । आचार का अर्थ है व्यवहार ।

२०. बहुपत्नी— एक पुरुषकी एकाधिक पत्नियाँ होनेंकी स्थिति ।

२१. बहुपति— जब कई पुरुष एक ही स्त्रीके पति हो ।

२२. पितृ सत्तात्मक—जहां पुरुषकी प्रभुता रही हो ।

२३. मातृ सत्तात्मक— जहाँकी स्त्रीकी प्रभुता और सत्ताकी स्थिति हो ।

२४. शावक— जानवरोंके बच्चोंके लिये शावक शब्द का प्रयोग होता है ।

२५. परिवार-नियोजन—सीमित और नियोजित परिवार बनाने का ढंग ।

२६. एकात्मता— एक होनेकी भावना और प्रक्रिया ।

२७. एकचारिता— एक पुरुष और एक स्त्रीका पति पत्नी सम्बन्ध ।

२८. सामाजिक अनुमोदन—सामाजिक दृष्टिसे ठीक समझा जाना ।

२९. वैधानिक और सामाजिक, अनुबन्धन— लिगल एण्ड सोशल कांट्रैक्ट

३०. पवित्र धार्मिक संस्कार,—सेक्रेड एण्ड रेलिजस सेक्रामेंट ।

अपने तीन लड़कों के अच्छे नाम 'विश्वम्भर' 'श्वेताम्बर' और 'पीताम्बर' रखने के बाद एक सज्जन अपने चौथे बच्चे के नाम के लिए मुश्किल में पड़ गये । उनके मजाक-प्रसन्द दोस्त ने सुझाव दिया कि अभी खैर 'नीलाम्बर' रख दीजिए, लेकिन अग़र बच्चों का यही सिलसिला जारी रहा तो अगले बच्चे का नाम 'दिगम्बर' ही रखना पड़ेगा, जिसका मतलब है, 'बिना कपड़े-लत्ते का' ।

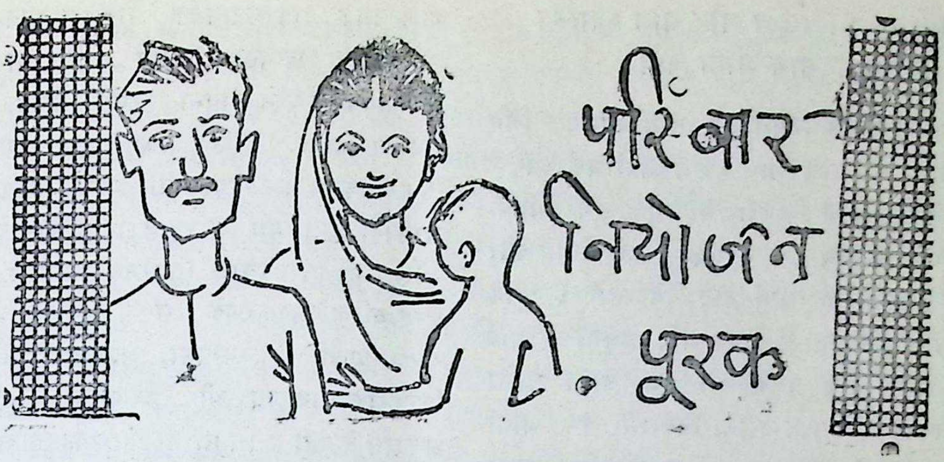

परिवार नियोजन और स्वैच्छिक संस्थाएँ

परिवार नियोजन कार्यक्रम को एक ऐसा जन-आन्दोलन बनाने की दिशा में, जिसमें समाज के सभी वर्ग भागीदार हों, स्वैच्छिक संगठनों को सहायक और पूरक के रूप में महान् दायित्व वहन करना है। अपने साधनों, लचकदार कार्यप्रणाली और जनमत को प्रभावित करने की क्षमता के कारण वे जनसंख्या-नियंत्रण के कार्यक्रम में एक प्रभावशाली भागीदार के रूप में हिस्सा ले सकते हैं। स्वैच्छिक संगठनों की क्षमताओं से पूर्णतः परिचित होने के कारण सरकार ने उन्हें परिवार नियोजन कार्यक्रम का भार तुरन्त वहन करने के लिए आमंत्रित किया है। कई स्वैच्छिक संगठनों ने परिवार नियोजन कार्यक्रम को अमली जामा पहनाने की दिशा में अपना सहयोग भी दिया है।

स्वैच्छिक संगठन इस दिशा में कहाँ तक सफल हो सकते हैं, इस पर हमें संपूर्ण समाज की वर्तमान परिस्थितियों को दृष्ठि में रखते हुए विचार करना होगा। किसी भी आन्दोलन को प्रभावकारी बनाने के लिए यह जरूरी है कि उसे बुनियादी स्तर से चलाया जाए। प्रेरणा भीतर से होनी चाहिए। जब तक लोगों को उसके अन्दर से प्रेरणा नहीं मिलेगी तब तक सरकारी सहायता और तकनीकी मार्गदर्शन से पूरी सफलता नहीं मिल सकती। यह एक ऐसा आन्दोलन हैं जिसके लिए केवल जन-चेतना को प्रबुद्ध करने और अज्ञान के परदे को हटाने की ही आवश्यकता नहीं है बल्कि लोगों में वेहतर जीवन की इच्छा उत्पन्न करने की भी जरूरत है ताकि जिन लोगों को परिवार नियोजन की आवश्यकता है, वे इसकी मांग करें न कि यह आन्दोलन उन लोगों तक पहुँचाया जाए जो अज्ञान में रहते हैं और इसे घृणा की दृष्टि से देखते हैं। इसका अभिप्राय यह हुआ कि जनसंख्या संबंधी शिक्षा जनसंख्या-नियन्त्रण का सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण पहलू है।

परिवार-नियोजन आन्दोलन में समाज का प्रत्येक वयस्क सदस्य कुछ न कुछ योगदान कर सकता है। परिवार नियोजन कोई ऐसा विषय नहीं है जिस पर संबद्ध लोगों के साथ एक साथ विचार किया जा सके। परिवार नियोजन की समस्या लोगों की व्यक्तिगत समस्या है और इस पर कई बातों का प्रभाव पड़ता है। इसके समाधान के लिए तो ऐसे व्यक्ति की व्यक्तिगत दिलचस्पी अपेक्षित है जो जन-हित को महत्व देता हो। स्वैच्छिक कार्यकर्ता से बढ़कर कौन ऐसा व्यक्ति हो सकता है, जिसे न पद की लालसा है, न प्रतिष्ठा की और न कार्य करने के लिए किसी प्रकार के अधिकारों की। स्वैच्छिक संगठनों के कार्यकर्ताओं का यह कर्त्तव्य है कि वे अपने संपर्क में आने वाले तरुण दम्पतियों को धीरे-धीरे और निरंतर परिवार-नियोजन के लिए प्रेरित करें।

परिवार नियोजन को प्रसूति और बाल स्वास्थ्य सेवाओं के साथ जोड़ा जाय

सम्भवतः इस नाजुक विषय पर वार्तालाप के लिए व्यक्ति के जीवन का सबसे भावुक क्षण सर्वाधिक उपयुक्त होता है। यही कारण है कि बार-बार यह सुझाव दिया गया है कि परिवार-नियोजन कार्यक्रम को प्रसूति और बाल स्वास्थ्य सेवाओं के साथ जोड़ दिया जाए। चूंकि प्रत्येक महिला को प्रसूति से पहले और प्रसूति के बाद की अवधि में अनेक बार प्रसूति-केन्द्र में जाना पड़ता है, इसलिए डाक्टर में उसका इतना विश्वास जम जाता है कि वह छोटा परिवार स्वीकार करने के लिए तैयार हो जाए।

प्रसूति-केन्द्रों के साथ संबद्ध शिशु क्लिनिक के डाक्टर माता को यह बता सकते हैं कि शिशु का कल्याण और उसका स्वास्थ्य, बहुत सीमा तक माता के हाथ में है जिसे बच्चे की एकाग्रचित्त होकर देखभाल करनी है और उसे सामान्य विकास के अवसर प्रदान करने हैं। परिवार-नियोजन के साथ पोषण और स्वास्थ्य का कार्यक्रम भी सम्बद्ध है। परस्पर संबद्ध कारकों की शृंखला पर दृष्टिपात करने पर हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि यद्यपि परिवार-नियोजन कार्यक्रम युद्ध स्तर पर संचालित किया जा रहा है तथापि नौकरशाही मशीनरी, थोड़े से कर्मचारियों या कार्यक्रम को अमली जामा पहनाने वाली थोड़ी-सी संस्थाओं द्वारा इसे संचालित नहीं किया जा सकता। इस कार्य में तभी सफलता मिल सकती है जब हरेक व्यक्ति का सहयोग प्राप्त करते हुए, इसे पूरे जोरशोर से चलाया जाए। इस आवश्यकता को दृष्टि में रखते हुए भारत सरकार ने देश भर के स्वैच्छिक कल्याण संगठनों का विश्वास और हार्दिक सहयोग करने का निर्णय किया।

सरकार द्वारा वैच्छिक संगठनों को सहायता

सरकारने स्वैच्छिक संसठनों को, अपनी गतिविधियों को जारी रखने तथा उनके प्रसारके लिए समकक्ष योगदान के आधार पर वित्तीय सहायता देकर इस दिशामें शुरुआत की। उसके बाद अनावर्तक और आवर्तक व्ययके लिए शत-प्रतिशत सहायता दी जाने लगी। धनराशि वितरण के कार्यको तेजीसे सम्पन्न करनेके लिए, पहले केन्द्रीय सरकार द्वारा वितरित किए जाने वाले अनुदानका विकेन्द्रीकरण कर दिया गया और वे अब विभिन्न राज्य सरकारों द्वारा दिये जा रहे हैं। सरकार न केवल शहरी और ग्रामीण परिवार नियोजन कल्याण केन्द्र चलानेके लिए बल्कि वंध्यकरणके लिए पर्यंकोंकी व्यवस्था, वन्ध्यकरण एएकों की स्थापना, प्रशिक्षण, क्षेत्रीय प्रशिक्षण शिविरोंके आयोजन और प्रेरणा व प्रोत्साहनके लिएभी अनुदान दे रही है। हाल ही में सरकारने स्वैच्छिक संगठनों को ये निर्देश दिये हैं कि अगर कोई स्वैच्छिक संगठन किसी प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्रके क्षेत्रमें काम करना चाहे तो उसके कार्यक्षेत्रका स्पष्ट निर्धारण करनेके बाद उसकी सहायताकी जाय। इसी दृष्टिसे अगर कोई स्वैच्छिक संस्था पहलेसे ही किसी ग्रामीण क्षेत्रमें काम कर रही है तो केवल इस आधार पर कि वहाँ सब प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र खुल गया है, उसे अपनी गतिविधियाँ बन्द करनेके लिए न कहा जाय।

सरकार द्वारा ऐसी भी व्यवस्था की गयी है कि अगर कोई स्वैच्छिक संगठन अपनी गतिविधियो का विस्तार करना चाहे तो जरूरी हो, इसे पर्याप्त परिवहन सुविधाएँ प्रदान की जाएँ।

ऐसी भी व्यवथाकी गयी है कि अगर कोई स्वैच्छिक संगठन एक वर्षमें अपने निर्धारित लक्ष्योंको प्राप्त न कर सके तो उसकी सहायता बन्द न की जाए।

स्वैच्छिक संगठनोंके कर्मचारियों और नेताओंके प्रशिक्षण एवं अभिनवीकरणके लिए एक ऐसा कार्यक्रम संचालित करनेका सुझाव है जो उन्हें परिवार-नियोजन कार्यक्रमके नए विकासों और तकनीकोंसे पूर्णतः परिचित रख सके।

ये निर्देश स्वागत-योग्य हैं। इनमें कुछ उन समस्याओं को दृष्टिमें रखा गया है, जिनका सामाना स्वैच्छिक संगठनों को करना पड़ता है और जिनका संकेत सामाजिक विकास परिषद् (काउंसिल फार सोशल डैवलपमेंट) तथा भारतीय

जनसंख्या परिषद् (पापुलेशन कौंसिल आफ इण्डिया) द्वारा दक्षिणी क्षेत्रकी स्वैच्छिक गैर-सरकारी संस्थाओंकी कार्यप्रणालीके अध्ययनके लिए नियुक्त अध्ययन-दलने किया था। इस अध्ययन-दलकी कुछ जोरदार सिफारिशें परिवार नियोजन कार्यक्रमके संगठन, प्रशासन, वित्तीय प्रक्रिया तथा अन्य कारकोंसे सम्बद्ध हैं। अध्ययन दलकी एक सिफारिश उस क्षेत्र और उसमें रहने वाली जनसंख्याके निर्धारणसे सम्बद्ध है, जहाँ संस्थाको कार्य करता है। इसने केन्द्र से अनुरोध किया है कि वह परिवार-नियोजन कार्यक्रमका सञ्चालन करने वाले सरकारी, गैर-सरकारी या स्वैच्छिक सङ्गठनोंके कार्यक्षेत्र, उसमें समाविष्ट जनसंख्या और कार्यों का स्पष्ट निर्धारण कर दे। हाल ही में जारी किये नये निर्देशोंके अणुसार सङ्गठनोंको यह छूट दे दी गयी है कि वे अपने कार्यक्षेत्रका स्वयं निर्धारण कर लें।

स्वैच्छिक स्वास्थ्य संगठनोंके लिए क्षेत्रोंका निर्धारण

क्षेत्रका निर्धारण इस दृष्टिसे भी आवश्यक है कि किसी सङ्गठनके कार्यका मूल्यांकन करते समय, सरकारी संस्था पर जो मापदण्ड लागू किया जाता है, वही स्वैच्छिक सङ्गठन पर भी लागू किया जा सके। सम्भव है कि स्वैच्छिक सङ्गठनके साथ सम्बद्ध परिवार नियोजन एकक वहाँ तक अपने भौतिक लक्ष्योंको प्राप्त न कर सके जहाँ तक एक सरकारी अस्पताल कर सकता है। क्योंकि एक निजी अस्पताल या सरकारी संस्थामें आने वाले लोगोंकी संख्या सरकारी अस्पतालमें आने वाले लोगोंकी अपेक्षा कम होती है। स्वैच्छिक संस्था और सरकारी संस्थामें आने वाले लोगोंका अनुपात १ : १५ या १ : २० के बीचमें है। अगर एक सरकारी अपस्पातमें नियुक्त परिवार नियोजन कर्मचारी अस्पतालके बहिरंग विभागमें प्रतिदिन आने वाले २५०–३०० लोगोंमें से १० के साथ भी अपना सम्पर्क स्थापित कर ले तो वह अपने निर्धारित लक्ष्यको प्राप्त कर सकता है जबकि स्वैच्छिक सङ्गठनके साथ सम्बद्ध उसी वर्ग का कर्मचारी वहाँ आने वाले अधिक से अधिक २५-३० रोगियोंमें से चार या पाँचके साथ सम्पर्क स्थापित कर सकता है। स्वैच्छिक सङ्गठनमें एक एककी उपलब्धि स्ववं सङ्गठनके ढांचेके अन्दर आंकी जानी चाहिए।

एक और भी कारक है जिसके सम्बन्धमें कोई लिखित समादेश तो नहीं है परन्तु जिसका उपयोग अधिकारी-गण सरकारी और स्वैच्छिक संस्थाओंकी आपसी प्रतियोगिताके समय करते हैं किसी विशेष क्षेत्र में सरकारी, अर्द्ध-सरकारी और स्वैच्छिक सङ्गठनोंके लक्ष्यों और उपलब्धियोंके विश्लेषणके बाद हमारे सामने कई दिलचस्प तथ्य आते हैं। एक स्वैच्छिक सङ्गठनके साथ वन्ध्यकरण एकक सम्बद्ध है और कुछ मील दूर एक सरकारी अस्पतालके साथ एक दूसरा वन्ध्यकरण एकक सम्बद्ध है। ऐसा देखने में आया है कि स्वैच्छिक सङ्गठनके पड़ोस में स्थित सभी सरकारी सस्थाएं सन्व्यवरणके केस स्वैच्छिक सङ्गठनोंके पास न भेज कर सरकारी अस्पतालके वन्ध्यकरण एककके पास भेजती हैं। इसका स्पष्ट परिणाम यह निकलता है कि सरकारी अस्पताल अपने लिए निर्धारित लक्ष्य का १०० से ३०० प्रतिशत प्राप्त कर लेते हैं जब स्वैच्छिक संस्था अपने लक्ष्य का ५० से ६० प्रतिशत ही प्राप्त कर सकती है। इसीलिए, किसी विशेस संस्थाको कितने क्षेत्रमें कार्य करना है और कितनी जनसख्याको समाविष्ट करना है, इसका निर्धारण आवश्यक हो जाता है।

अनुदान राशि की मात्रा

चूंकि स्वैच्छिक सङ्गठनकी समस्याएँ अनुदान-राशि की मात्रा और उसके देनेकी प्रक्रियासे पैदा होती हैं, इसलिए इस कार्यक्रममें स्वैच्छिक सङ्गठनोंके अनुभवका जिक्र कर देना जरूरी है अनुदाम राशिके देनेके लिए निर्धारित वर्तमान प्रक्रियाके अनुसार वर्ष भरके लिए अनुमानित व्यय का २५ प्रतिशत राज्य परिवार नियोजन अधिकारियों द्वारा वित्तीय वर्षके शुरूमें दे दिया जाता है और इसके लिए सङ्गठनको यह लिखित आश्वासन देना पड़ता है कि वह वर्ष भर अपना काम जारी रखेगा। अनुमानित व्यय का दूसरा २५ प्रतिशत पिछले साल किये गये कार्यके प्रगति प्रतिवेदन और किसी जिम्मेवार अधिकारी द्वारा हस्ताक्षरित लेखापरीक्षित आय-व्ययका व्यौरा प्रस्तुत करने के बाद दे दिया जाता है। शेष छः महीनोंके लिए अवशिष्ट अनुदान राशि चार्टर्ड अकौउण्टेण्ट द्वारा विधिवत लेखा परीक्षित आय-व्यय विवरण और धनराशिके उपयोग

गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय हरिद्वार
079258

सम्बन्धी प्रमाण-पत्र प्रस्तुत करने के बाद दे दी जाती है। व्यवहार में शेष ५० प्रतिशत प्रायः वित्तीय वर्ष के अंतिम दिन मिलता है या कभी-कभी बिल्कुल नहीं मिलता। तो फिर किस आश्वासन पर कोई स्वैच्छिक सङ्गठन काम करे ?

स्वास्थ्य और परिवार नियोजन मन्त्रालयकी सिफारिश पर केन्द्रीय समाज कल्याण बोर्डने सितम्बर, १९६९ में बोर्डसे अनुदान प्राप्त करने वाले कल्याण विस्तार परियोजनाओंके केन्द्रों और स्वैच्छिक सङ्गठनों का इस कार्यक्रमको अमली जाका पहनाने के उद्देश्य से प्रयोग करने का निर्णय किया। मार्च, १९७० की समाप्ति तक, राज्य बोर्डोंको १०६ परिवार नियोजन केन्द्रोंके लिए ८,१३,३०० रुपएके अनुदान स्वीकृत किये गये। राज्य स्तर पर एक सुस्थापित मशीनरी और बुनियादी स्तर पर क्रियान्वयन अभिकरणों के कारण, इस कार्यक्रम के क्रियान्वयनके मार्ग में किसी प्रकारकी कई गम्भीर समस्या नहीं होनी चाहिए। परन्तु अनुभव इसके सर्वथा विपरीत रहा है। अनुदानोंसे न मिलने या राज्योंके परिवार नियोजन विभागों द्वारा विलम्बके कारढ, लगभग सभी राज्योंके लिए इस कार्यनेमको जारी रखना असम्भव रहा है। एक राष्ट्रीय महत्वके कार्यक्रमके सम्बन्धमें सरकारी और स्वैच्छिक क्षेत्रोंमें सहयोगके बारेमें यह एक बड़ा दुखदायी कथ्य है। राज्य स्तर पर अधिकारियोंकी उदासीनता और कभी-कभी विरोधी वृत्तिके कारण राज्य बोर्डोंका यह कार्यक्रम छोड़ना पड़ा है।

अपने गत अनुभवों को दृष्टि में रखते हुए, केन्द्रीय समाज कल्याण बोर्ड ने स्वास्थ्य और परिवार नियोजन विभाग के सन्मुख इस कार्यक्रम को परिवार और बाल कल्याण कार्यक्रम के अन्तर्गत केन्द्रीय बोर्ड के अभिकरणों के माध्यम से चलाने का प्रस्ताव रखा है। चूँकि परिवार और बाल कल्याण कार्यक्रम एक ऐसा कार्यक्रम है, जिसमें परिवार के सम्पूर्ण यानी उसकी स्वास्थ्य और पोषण संबंधी सभी आवश्यकताओं को ध्यान में रखा जाता है, इसलिए इन परियोजनाओं के माध्यम से बड़ी आसानी से परिवार नियोजन का संदेश ग्रामीण जनता तक पहुँचाया जा सकता है। परन्तु इसके लिए पारस्परिक सद्भावना और पर्याप्त धनराशि की आवश्यकता है। राज्य और जिला स्तर पर अपने अभिकरणों के माध्यम से किसी कार्यक्रम को अमली जामा पहनाने वाले संगठन के लिए यह वांछनीय है कि उसे धनराशि केन्द्रीय संस्था के माध्यम से दी जाय ताकि केन्द्रीय अभिकरण कार्य की प्रगति का समय-समय पर जायजा ले सके। इस समय कार्यक्रम को अमली जामा पहनाने वाले स्वैच्छिक संगठनों पर केन्द्रीय समाज कल्याण बोर्ड का कोई नियन्त्रण नहीं है, किन्तु इस कार्यक्रम के सफल संचालन के लिए उसका नैतिक दायित्व है। अनुदान देने की प्रक्रियाओं को सरल बनाना, परिवार नियोजन एकक के लिए अधिकांश अनुदान राशि संस्था को साल के शुरू और शेष राशि हिसाब-किताब चुकता करते समय देना जरूरी है।

संगठनों का चुनाव

एक और समस्या का भी हमें ध्यान रखना है। वर्तमान अनुदान पद्धति के अंतर्गत केवल वही संगठन जिनके पास विशाल साधन और धनराशि है, वित्तीय कठिनाइयों का मुकाबला कर सकते हैं। दूसरों को बाध्य होकर कार्यक्रम बंद करना पड़ता है या जब उन्हें सरकार से कई गतिविधियों के लिए अनुदान मिलते हैं तो एक गतिविधि के लिए प्रदत्त धनराशि को वे दूसरी गतिविधि के मद में खर्च कर देते हैं। चूँकि कर्मचारियों का वेतन किसी संगठन का प्रथम दायित्व है, इसलिए परिवार नियोजन की मद में समय पर अनुदान न मिलने के कारण वे अंतरिम प्रबन्ध के रूप में दूसरे कार्यक्रम के लिए प्रदत्त अनुदान-राशि को इस मद पर व्यय कर देते हैं। लेखा-परीक्षा की दृष्टि से यह बिल्कुल ठीक नहीं है परन्तु स्वैच्छिक संगठन द्वारा कठिन परिस्थितियों का सामना करने के कारण इसके सिवाय और कोई चारा नहीं। इसलिए वांछित तो यह है कि इस कार्यक्रम के लिए नियुक्त कर्मचारियों का वेतन, एकक की स्थापना से ही स्वैच्छिक संगठन को दे दिया जाय।

अनुदान के लिए मापदंड

अरिवार नियोजन कार्यक्रम को अमली जामा पहनाने के लिए. संगठनों के चुनाव का क्या मापदण्ड हो, अब हम इस प्रश्न पर आते हैं। ऐसे भी संगठन हैं जिनके पास साधन और वित्त दोनों ही हैं और जो कुछ समय के लिए अपने साधनों से एकक की गतिविधियों का संचालन कर सकते हैं। और ऐसे भी सगठन हैं जिनके साधन और वित्तराशि सीमित हैं और जो लंबे अरसे तक एकक का संचालन शायद न कर सकें। फिर ऐसे छोटे संगठन भी हैं जिनके पास परिवार नियोजन एकक खोलने के लिए तो सुविधाए हैं परन्तु अन्य किसी अतिरिक्त गतिविधि के लिए धनराशि नहीं है। स्पष्टतः, इनमें से प्रत्येक संगठन को दी जाने वाली वित्तीय सहायता के ढांचे के अंतर्गंग संवद्ध संगठन की क्षमता को ध्यान में रखना होगा। सभी संस्थाओं के लिए सहायता के लिए सहायता का एक ढांचा वांछित नहीं होगा।

प्रसूति और बाल स्वास्थ्य सेवाओं के साथ समन्वय

अनुभव से ऐसा पता चला है कि प्रसूति और बाल कल्याण सेवाएँ गांवों में सर्वाधिक लोकप्रिय सिद्ध हुई हैं, गावों की उन स्त्रियों को ये विशेष रूप से आकर्षित करती हैं, जिन्हे अभी तक चिकित्सा और सार्वजनिक स्वास्थ्य संबंधी सेवाएँ पर्याप्त रूप में उपलब्ध नहीं करायी गयी। गांवों में इस कार्यक्रम में बहुसंख्यक स्त्रियों को सम्मिलित करने की दृष्टि से परिवार नियोजन कार्यक्रम के साथ प्रसूति और बाल कल्याण सेवाओं का समन्वय बहुत उपयोगी सिद्ध होगा।

समस्याएँ और स्वैच्छिक संगठनों का योगदान

परिवार नियोजन कार्यक्रम के रास्ते में आने वाली कुछ समस्याएँ इस प्रकार हैं :

(क) संतानोत्पत्ति योग्य आयु-वर्ग के दम्पतियों के साथ संपर्क स्थापिथ करने की दृष्टि से चिकित्सा कर्मचारियों और प्रशिक्षित सामाजिक कार्यकर्त्ताओं की कमी।

(ख) अनुवर्ती कार्यक्रम का अभाव।

(ग) दूर-दूर बिखरे हुए छोटे-छोटे और कम आबादी वाले क्षेत्रों में सेवाओं का अभाव।

(घ) अपूर्ण तकनीकों के उत्तरवर्ती प्रभाव जिसके कारण कभी-कभी लोग परिवार नियोजन विधियों के प्रति प्रतिकूल रुख अपना लेते हैं।

(ङ) परिवार नियोजन के प्रति जनता के योगदान का अभाव।

इस पृष्ठभूमि को ध्यान में रखते हुए, स्वैंच्छिक संस्थाओं को परिवार-नियोजन के कार्यक्रम में अपने योगदान का निर्धारण करना है। स्वैच्छिक संस्थाएँ अपने कन्धों पर जो जिम्मेदारियाँ ले सकती हैं, उनमें से कुछ निम्न हैं :—

(क) प्रेरणा-प्रोत्साहन।

(ख) किसी संख्या के सामान्य कार्यक्रम के भाग रूप में परिवार नियोजन परामश का प्रसार।

(ग) परिवार नियोजन केन्द्रों और वध्यकरण एककों में आये केसों का अनुवर्तन। इस कार्य के लिए कितने भी चिकित्सा-अधिकारी और सामाजिक कार्यकर्त्ता नियुक्त किये जायें, वे प्रत्येक केस का अनुवर्तन नहीं कर सकते। इस कार्य को तो स्वैंच्छिक कार्यकर्त्ता ही ठीक ढंग से सरंजाम दे सकते हैं।

(घ) आपरेशन कराने वाली माताओं के बच्चो की देखभाल की व्यवस्था करना।

(ङ) जनसंख्या-नियंत्रण संबंधी शिक्षा को सर्वोच्च प्राथमिकता देना और जन कल्याण के लिए संचालित किसी भी कार्यक्रम के निमित्त इसे अत्यावश्यक करार देना।

जनसंख्या वृद्धि एक ऐसी समस्या है, जिसकी ओर तुरन्त ध्यान देने की आवश्यकता है। अगर जनसंख्या वर्तमान दर से बढ़ती रही तो हमें कितने बड़े खतरे का सामना करना पड़ेगा, इसकी सहज ही कल्पना की जा सकती है। १९७१ की जनगणना के अनुसार जनसंख्या-वृद्धि की दर २३५७ प्रतिशत है। भले ही सरकारी तौर पर स्वीकृत आंकड़ों से यह निम्न है, फिर भी सारे राष्ट्र

के लिए एक चुनौती प्रस्तुत करती है । एक प्रमुख पत्र के अनुसार, "वर्तमान दर से बढ़ती हुई वाषिक जनसंख्या की आवश्यकताओं की पूति के लिए देश को १ लाख स्कूलों, ३ लाख स्कूल शिक्षकों, २० लाख मकानों, १५ करोड़ मोटर बस और १ करोड़ क्विंटल खाद्य पदार्थों की आवश्यकता होगी ।"

क्या हमारा सारा आयोजन इस विशाल मांग की पूति कर सकता है ?

स्वैच्छिक संगठनों को मैं यह परामर्श दूँगी कि वे समस्या गंभीरता की पहचानें । न अकेली सरकार और न कुछ थोड़े से परिवार नियोजन कर्मचारी इस सचाई को लाखों लोगों तक पहुँचा सकते हैं । विशाल जनता के जागरूक वर्ग का यह कर्तव्य है कि वह अज्ञानी वर्ग का जनकल्याण के इस कार्य में नेतृत्व करे । प्रत्येक संगठन का यह कर्तव्य है कि वह तात्कालिक परिस्थितिया और सम्पूर्ण समस्या को मदेनजर रखते हुए अपने कर्तव्य का निर्धारण करे । यही हमारी उज्ज्वल आशा का एकमात्र अवलम्ब है ।

धमतारी के रत्न

•

आज धमतारी को अपने २३ रत्नों पर गर्व है । ये रत्न हैं-मध्य प्रदेश के रायपुर जिले के धमतारी तहसील के वे २३ गांव-जिन्होंने परिवार नियोजन कार्यक्रम के अन्तर्गत जितना लक्ष्य था, उतना पूरा करने का एक अनुपम कीर्तिमान प्रस्तुत कर दिया है । इन गांवों में कुल २,१२२ परिवार हैं जिनमें कुल १२,३२८ व्यक्ति निवास करते हैं । इनमें से १०६६ दम्पति परिवार नियोजन लक्ष्य के अन्तर्गत आते हैं । इन दम्पत्तियों में से ७६५ दम्पत्तियों ने तो परिवार नियोजन सम्बन्धी आपरेशन कराया है तथा ३०१ अपना परिवार सीमित रखने के लिए परम्परागत निरोधों का इस्तेमाल करते हैं ।

आपरेशन कराने वालों में से ७२७ पुरुषों ने नसबन्दी तथा ३८ महिलाओं ने गर्भ निरोधक आपरेशन कराते हैं । पटियाडीह नामक ग्राम में ६८ पुरुषों तथा १२ स्त्रियों ने परिवार नियोजन सम्बन्धी आपरेशन कराया जो यहां सबसे अधिक आपरेशन कराने का यह एक नया रिकार्ड है । इस गांव के १०३ दम्पत्तियों में से शेष २३ दम्पत्ति परिवार नियोजन की परम्परागत विधियों का इस्तेमाल करते हैं । कुरा गाँव को भी इस क्षेत्र में शत-प्रतिशत सफलता मिली है । इस गांव के ७६ दम्पत्तियों में से ५९ पुरुषों ने नसबन्दी आपरेशन कराना स्वीकार कर लिया है । तथा शेष १७ दम्पत्ति परम्परागत निरोधों का कर रहे हैं । वन्ध्याकरण की दृष्टि से भोयना गांव आदर्श हैं क्योंकि इसके ५५ अर्ह दम्पत्तियों में से ४९ ने नसबन्दी तथा एक महिला ने गर्भ निरोधक आपरेशन कराया है । शेष तीन दम्पत्ति भी नियमित रूप से परिवार केन्द्र पर जाते हैं तथा सीमित परिवार रखने की सलाह लेते रहते हैं ।

परिवार नियोजन कार्यक्रमों को अपनाने वाले इस प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र के अन्य गांव हैं-बाग तराई. जूनौनी, विरोतरा, गोपालपुरी, कसही, हरपनर, मोद, पहाड़ी कोना, भिदवार, सिंघंडला, लाभ कोनी, दरगाहन, मालगाव, थेमसरा, उड़पत्ती. वसन्ता, भँवर मारा, कोदेगांव, स्पतवाड़ी, सतियारे और मातपड़ । ये सभी गांव छोटे और कम आबादी वाले गाँव हैं । यहां के निवासी न तो अच्छी तरह पढ़े-लिखे हैं और न ही खुशहाल । उनका मुख्य पेशा खेती है । परन्तु उन्होंने परिवार नियोजन के सन्देश के महत्व को समझा और सम्भवतः यही कारण है कि रायपुर जिले की १९७२ ७३ में २९,४९३ नसबन्दी तथा २,०३५ गर्भनिरोधक आपरेशन जैसी उल्लेखनीय सफलता प्राप्त हुई है ।

पारिवारिक जीवनोपयोगी स्वास्थ्य साहित्य

लोकप्रिय स्वास्थ्य साहित्य

राजा बेटा कैसे बनायें ?	३.००
सुन्दर दांत और उनकी देखरेख	२.५०
आपके बच्चेकी खुराक	३.३७
भोजन क्या, क्यों और कैसे ?	४.००
विटामिन और हीनता जनित रोग	४.२५

यौन-साहित्य

यौन मनोविकार कारण और निवारण	४.२५
विवाहित जीवनमें यौन सम्प्रयोग	५.५०
नारीकी यौन समस्यायें	२.५०
सन्तति-निरोध कब और कैसे ?	४.००
गर्भवती स्त्री और प्रसवपूर्व व्यवस्था	२.५०

प्रकाशक

स्वास्थ्य सन्देश प्रकाशन,
पोस्ट–कालपी (उत्तर प्रदेश)

उद्यम

मासिक पत्रिका

'उद्यम' में निम्न विषयों पर लेख प्रकाशित होते हैं :

*लाभदायक उद्योग-धन्धोंकी व्यवहारोपयोगी जानकारी

*व्यवसायमें सफल व्यक्तियोंकी मुलाकातें और परिचय तथा मवेशियोंके रोगोंका निवारण ।

*इंजिनियरिंग, यंत्र सामग्री और ग्रामोद्योग संबंधी लेख

*आरोग्य, संक्रामक रोग तथा घरेलू औषधियों संबंधी जानकारी ।

*पंचवर्षीय योजनाओंके कारण होता हुआ ग्रामसुधार

*महिला विभाग : घरेलू उद्योग, मितव्ययिता, खाद्य पदार्थ आदि पर लेख ।

*बालकोंका विश्व : बालक-बालिकाओंके लिए सुलभ भाषामें त्रैमासिक जानकारी ।

*विद्यार्थियों के लिये : विशेषज्ञों द्वारा उपयुक्त लेख

*पाठकों द्वारा पूछी गई जानकारी ।

'उद्यम' का वार्षिक मूल्य रु० दस भेजकर परिवारके प्रत्येक व्यक्तिके लिये उपयोगी यह मासिक पत्रिका अवश्य संग्रहीत करें ।

उद्यम मासिक, धर्मपेठ, नागपुर-१

स्वास्थ्य का वृहद् ज्ञान सागर

आपका स्वास्थ्य

१६ वर्षों की

पुरानी फाइलें

चौथे और सोलहवें वर्ष के अलावा प्रत्येक वर्ष की फाइलें प्राप्य हैं ।

प्रत्येक वर्ष की फाइल ६ रु० में प्राप्य है फाइलें वी० पी० से नहीं भेजी जायेंगी । अग्रिम मूल्य भेजना अनिवार्य है ।

आपका स्वास्थ्य कार्यालय

चेतगंज, वाराणसी–१

घर बैठे संगीत सीखिए

प्रतिमास घर बैठे गायन, वादन तथा नृत्य की ठोस जानकारी प्राप्त करने के लिए १५) भेजकर '**संगीत**' मासिक के वार्षिक सदस्य बन जाइए । नमूना चाहें तो १)५० के टिकिट भेजिए । फिल्मी गीतों के प्रेमी २०) भेजकर '**फिल्म-संगीत**' त्रैमासिक के वार्षिक सदस्य बनें । वर्ष में इसके कुल चार अंक (जनवरी, अप्रैल, जुलाई और अक्टूबर में) प्रकाशित होते हैं । प्रत्येक अंक में ३५ प्रसिद्ध फिल्मी गीत स्वरलिपि-सहित छपते हैं । हर प्रकार के संगीत-साहित्य की विस्तृत जानकारी के लिए हमारा बड़ा सूचीपत्र मुफ्त मंगाएं ।

पता

संगीत कार्यालय, ६, हाथरस (उ. प्र.)

इंडियन मेडिकल असोसियेशनकी ओरसे डा० कोशलपति तिवारी द्वारा
संपादित, प्रकाशित और सुदर्शन मुद्रक वाराणसीमें मुद्रित ।

HEALTH

is your most precious possession

Your Health

will help preserve it

Your Health aims to educate the common man on matters of health. It deals with day to day problems of sanitation and hygiene and presents the scientific side of preventing many bodily and mental ills.

Remember it is

A Publication of the Indian Medical Association.

SUBSCRIPTION RATES

(Post free)

Inland : 1 year Rs. 8/- ; 2 years Rs. 12/-
Foreign : 1 year Rs. 10/- ; 2 years Rs. 16/-
Members of I. M. A. ; 1 year Rs. 6/-

Remittances should be by money orders or postal orders payable to YOUR HEALTH

All business correspondence should be addressed to

Manager, YOUR HEALTH
23 Samavaya Mansion : Corporation Place
CALCUTTA-13

मूल्य–पचास पैसे

आपका स्वास्थ्य

इंडियन मेडिकल असोसियेशन की लोकोपयोगी मासिक पत्रिका

नवम्बर, १९७३

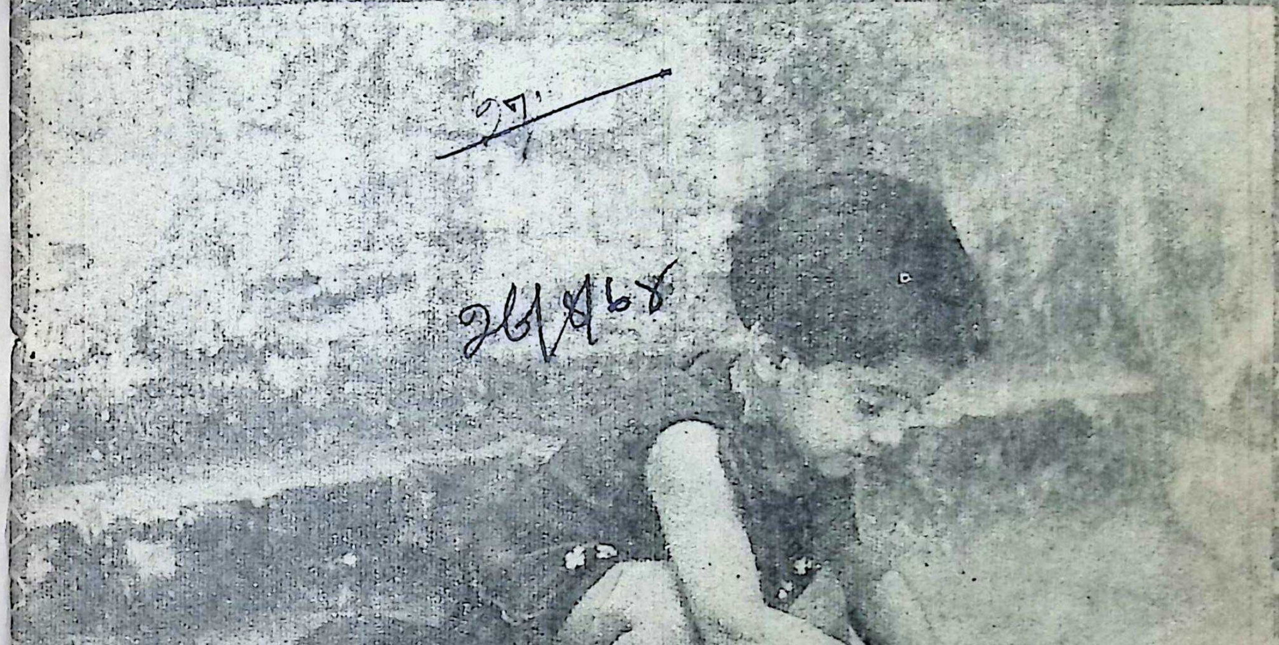

~~२७~~

२८/४८४

हमारे तीन महत्वपूर्ण प्रकाशन

कहीं हवा न लग जाय

-कैप्टन शरत कुमार चौधरी-

इस पुस्तकमें मलेरिया, फाइलेरिया, चेचक आदि रोगोंसे बचनेके उपाय, रोगीकी परिचर्या सर्पदंश, प्राथमिक चिकित्सा सम्बन्धी अनेक महत्वपूर्ण समस्याओंकी चर्चा की गयी है।

मूल्य १५० पैसे

सुनो भाई पंचो

-डाक्टर कोशलपति तिवारी-

हिन्दीमें अपने ढंगकी सरल सुबोध शैलीमें लिखी गयी पुस्तक। रोग तथा स्वास्थ्य-सम्बन्धी उन सभी समस्याओं पर चर्चा की गयी है, जिनसे हमारे ग्रामीण भाइयोंको नित्य सामना करना पड़ता है।

पुस्तक दो भागोंमें प्रकाशित है।

प्रत्येक भागका मूल्य—१५० पैसे

गुजरात, मध्यप्रदेश, उत्तरप्रदेश, हरियाणा, राजस्थान सरकार, बिहार द्वारा नियोजन केन्द्रों, स्कूल-कालेजके पुस्तकालयों, राष्ट्रीय प्रसार सेवा खण्डों तथा ग्राम पुस्तकालयोंके लिए स्वीकृत।

डाक्टर के आने तक

- डाक्टर गोकुलदास अग्रवाल -

नागरिक सुरक्षाके संदर्भमें इस पुस्तकका विशेष महत्व है। देशके प्रत्येक नागरिकको प्राथमिक चिकित्सा सम्बन्धी ज्ञान प्राप्त करना आवश्यक है और इस पुस्तकमें विस्तृत ढंगसे इस विषयपर चर्चा की गयी है। प्राथमिक चिकित्सा (फर्स्ट एड और नर्सिग) की शिक्षा लेनेवाले छात्र-छात्राओंके लिए सर्वश्रेष्ठ पुस्तक। प्रस्तुत पुस्तक आपके परिवारके लिए 'घरेलू डाक्टर' का काम देगी।

दो सौ से अधिक चित्र — मूल्य २७५ पैसे

चारों पुस्तकें एक साथ मँगानेपर डाक खर्च माफ। आपका स्वास्थ्यके ग्राहकोंको २५ प्रतिशत छूट दी जाती है। चारों पुस्तकें एक साथ न मँगानेपर प्रत्येक पुस्तकके लिए १२५ पैसे अलगसे डाक व्यय लगेगा।

हमारे अधिकृत विक्रेता,

हिन्दी प्रचारक संस्थान, पो० बा० १०६, वाराणसी
श्री गंगा पुस्तकालय, गायघाट, वाराणसी–१
आपका स्वास्थ्य कार्यालय, लहुराबीर, वाराणसी–१

आपका स्वास्थ्य

इंडियन मेडिकल एसोसियेशनका लोकोपयोगी प्रकाशन

वर्ष २१ नवम्बर, १९७३ अंक २

अनुक्रमणिका

बातुल भूत बिबस मतवारे ... २
बालकके व्यक्तित्वका स्वस्थ विकास कैसे हो ? ३
बच्चोंके विकासमें कहानी सुनानेका महत्त्व ६
पिताके पत्र पुत्रवधूके नाम—४ ... ८
आन्ध्राके कुछ व्यंजन ... १२
समयसे पूर्व जन्म लेनेवाले बच्चे और उनकी समस्याएँ ... १५
भारतमें जनशक्तिका विकास ... १७
रोजी कमानेवाले बच्चे और उनकी समस्याएँ १९

परिवार नियोजन-पूरक

परिवार नियोजन की उपलब्धियाँ ... २२

कवर-चित्र

श्री परिमल गोस्वामी

● 'आपका स्वास्थ्य' में प्रकाशित प्रत्येक रचना और चित्रका कापीराइट प्रकाशकका है। इसलिए बिन आज्ञा कोई रचना या चित्र किसी प्रकार उद्धृत नहीं होना चाहिए।

● 'आपका स्वास्थ्य' के लेखकोंके विचार पूर्ण रूपसे उनके अपने हैं आवश्यक नहीं है कि संपादक मंडल अथवा इंडियन मेडिकल एसोसियेशन उनसे सहमत हो।

मूल्य—इस अंकका ५० पैसे
वार्षिक छः रुपये

आपका स्वास्थ्य कार्यालय
वाराणसी (बनारस—१)

सम्पादकीय

बातुल भूत बिबस मतवारे

गोस्वामी तुलसीदासजी ने एक बड़ी मार्के की सलाह दी है कि 'बातुल भूत बिबस मतवारे, ते नहि बोलहिं बचन विचारे। जिन्ह कृत महामोह मद पाना, तिन्ह कर कहा करिअ नहिं काना' अर्थात जिन्हें वायु रोग (उन्माद, सन्निपात) हो गया हो या जो भूत के वश हो गये हों या नशे में चूर हों, वे लोग बिना सोचे समझे जो जी में आता है कह देते हैं, इसी प्रकार मोह ग्रस्त लोग भी बकवास करते हैं, समझदार आदमी को इनकी बात पर ध्यान नहीं देना चाहिये।

कहा गया है बड़ों की हर एक बात माननी चाहिये, कोई नुक्ता-चीनी नहीं करनी चाहिये, माता-पिता, गुरुजन और अनुभवी बुजुर्गों की आँख मूँदकर आज्ञा पालन करनी चाहिये। एक ओर तो आदर्श रूप में यह निदेश ठीक ही है, पर इसमें एक 'किन्तु' भी है और वह यह है कि आज्ञा देने वाले, निदेश करने वाला 'बातुल' नहो, भूत बिबस नहो, न मतवारा हो, न मोह, ग्रस्त। कुछ ऐसी शारीरिक अस्वस्थताएं या अस्वस्थ अवस्थाएं होती हैं जिसमें निर्णय विवेक पूर्ण नहीं होता और निदेश देने वाला व्यक्ति भले ही वह बुजुर्ग, ज्ञानी और जिम्मेदार हो फिर भी ऐसी स्थिति में गलत भ्रष्ट निदेश देता है। तब सहज ही व्यवस्था का प्रश्न उठता है ऐसी अवस्था में बजुर्गवार की बात मानी जाय या नहीं ? और समाधान स्पष्ट है कि निदेश देने वाला यदि अस्वस्थ अवस्था में है तो उसकी बात सुननी ही नहीं चाहिये। जिम्मेदार व्यक्ति स्वस्थ दशा में, विवेक और न्याय, नीति और धर्म के अनुकूल जो निर्णय देते हैं वे ही मान्य हैं।

स्वास्थ्य के अनेक प्रश्नों पर इस तरह की परिस्थितियों का सामना होता है और उस समय सामान्य व्यक्ति ऊहापोह की स्थिति में आ जांता है। ऐसी स्थिति पैदा हो तो गोस्वामी जी की अनमोल सलाह मानकर यह अवश्य देख लेना चाहिये कि आदेश देने वाला, निर्णय करने वाला, सलाह देने वाला तन मन से स्वस्थ है या नहीं। स्वस्थ तन में ही स्वस्थ मन होता है, स्वस्थ मन ही स्वस्थ निर्णय ले सकता है।

बालकके व्यक्तित्वका स्वस्थ विकास कैसे हो ?

—श्री अरूण कुमार मिश्र—

एक बालक मनोविज्ञानिक, बौद्धिक, शारीरिक तथा सामाजिक परिपक्वता को लेकर पैदा नहीं होंता । उसकी इन क्षमताओं का विकास समाज में रहते हुए होता है । अतएव प्रारम्भिक अवस्थाओं में बालक इन क्षमताओं की पूर्ति के लिए पूर्णरूप से अपने माता-पिता पर निर्भर करता है । इस समय बालक को उचित प्रशिक्षण तथा दिशा निर्देशन की आवश्यकता होती हैं । अगर प्रशिक्षण तथा दिशा निर्देशन आज के समाज की बदलती हुई परिस्थितियों के अनुरूप नहीं होता तो इसका प्रभाव बालक के व्यक्तित्व के विकास पर उलटा पड़ सकता है । इन परिस्थितियों में बालक गलत दिशा निर्देशन के कारण एक ऐसे व्यक्तित्व को विकसित करता है जो समाज को अमान्य है । उदाहरण स्वरूप अगर परिवार का मुखिया या सबसे बड़ा व्यक्ति जुआ खेलने या अन्य किसी खराब व्यवसाय से संबधित है तो यह संभव है कि बालक भी ऐसे वातावरणमें रहकर अपने पिताके पथ का अनुसरण करे । इसके विपरीत अगर पिता बालक का उचित दिशा-निर्देशन करता है तो सम्भव है बालकके व्यक्तित्व का स्वस्थ विकास हो । लेकिन ऐसा उसी समय सम्भव है जब पिता ऐसे व्यवसाय से परे हटकर ऐसे कार्यों को करे जिनका अनुसरण करने पर बालक स्वस्थ व्यक्तित्व को विकसित कर सके ।

ऐसे बालक थोड़ा और बड़ा होने के पश्चात यह अनुभव करने लगते हैं कि उनके व्यक्तित्व का विकास उचित ढंग से नहीं हुआ हैं या उनकी क्षमताओं का विकास नही हुआ है जिसके कारण समाज द्वारा उन्हें कोई सम्मान या स्थान नहीं प्राप्त हो सका । ऐसे मनोभावों का समावेश होने पर बालक की अपने माता-पिता के प्रति आक्रोश की भावना का होना स्वाभाविक है । बालक मे ग्लानि की भावना भी व्याप्त होती है तथा इच्छित सफलता प्राप्त न होने पर निराशा तथा निराशा के कारण उसका विक्षोभ बढ़ता है । आज के समाज में बालकों में बढ़ रहे अपराध अनुशासनहीनता, तोड़फोड़ की प्रवृत्ति का मुख्य कारण वे स्वयं नहीं हैं, बल्कि उनके माता-पिता तथा वातावरण हैं जो उनके व्यक्तित्व के विकास में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाते है ।

जैसे-जैसे बालक का शारीरिक विकास होता है वैसे उसका मानसिक विकास होता है तथा व्यक्तित्व भी उसी के अनुसार विकसित होता हैं । व्यक्तित्व के पूर्ण विकास के लिए अनेक कारकों की आवश्यकता होती है परन्तु कुछ ऐसे भी कारक होते है जो मुलभूत हैं तथा जिनकी भूमिका स्वस्थ व्यक्तित्व के निर्माण में महत्वपूर्ण है । ये कारक तीन हैं—स्नेह, अनुशासन तथा स्वतन्त्र रहने की भावना ।

वास्तव में अगर ध्यानपूर्वक देखा जाय तो यह कहना अतिशयोक्ति न होगा कि उपरोक्त तीन कारकों में स्नेह का सबसे अधिक महत्व हैं । कारण स्पष्ट है । किसी न किसी रूप में स्नेह ही माता को इस बात के लिए प्रेरित करता है कि वह बालक की ठीक तरह से देखभाल करे । एक बच्चे के लिए प्रारम्भिक आवश्यकता शारीरिक सुरक्षा की होती हैं जिसका पूर्ण दायित्व माता पर ही पड़ता है । अगर माता का अपने बच्चे के प्रति प्रेम न हो तो बच्चे की देखभाल में त्रुठि आ सकती है तथा बच्चे की सुरक्षा संकट मे पड़ सकती है । यह ध्यान देना आवश्यक है कि एक वर्ष के या छह महीने के बच्चे को जिस प्रकार प्यार किया जाता हैं उस प्रकार प्यार आगे की उम्र में नहीं किया जा सकता । उम्र के लिहाज से प्यार का रूप भी बदलता जाता है । उदाहरणस्वरुप एक माता अपने छः महीने के बच्चे को गोद में सुला लेती है । उसका यह कार्य उचित हैं लेकिन अगर वहा माता अपने तीन या चार वर्ष के बच्चे को गोद में लेकर सुलाती है तो यह प्यार तो हुआ लेकिन प्यार की यह प्रक्रिया बालक की उम्र को देखते हुए अनुचित है । यहां साधारण बोलचाल की भाषा मे यह कहा जा सकता है कि ज्यादा लाड़ प्यार से बच्चे बिगड़ जाते हैं । अतएव बच्चो को उतना ही प्यार करें जितना उचित है तथा वह व्यक्तित्व के विकास में सहायक हो बाधन न बने

नैसर्गिक-स्नेह : बालक का जन्मसिद्ध अधिकार

माता-पिता को यह अनुभव करना चाहिए तथा बालक को भी यह अनुभव कराने का प्रयत्न करना चाहिए कि वे उसे इसलिए प्यार नहीं करते कि वह अमुक कार्य करने में

सक्षम या अक्षम है। अपितु यह अनुभव कराना चाहिए कि चूंकि वह एक बालक हैं तथा समाज में एक बालक की भूमिका निभा रहा है, इसलिए वे उसको प्यार करते हैं। यहां यह स्वाभाविक है कि अगर बालक इस तरह अनुभव करता है तो उसके अन्दर आत्मविश्वास की भावना प्रबल होगी क्योंकि वह यह अनुभव करता है कि उसका यह जन्म सिद्ध अधिकार हैं। ऐसे अनुभव की सबसे बड़ी व महत्वपूर्ण उपलब्धि यह है कि बालक में किसी भी कार्य में असफल होने पर प्यार से बंचित होने का भय जाता रहता है तथा बालक किसी भी कार्य को करने के लिए प्रयत्नशील रहता हैं क्योंकि उसको यह भय नहीं रहता है कि असफल होने पर वह माता पिता के प्यार से वंचित हो जाएगा।

अनुशासन और प्यार

कभी-कभी माता-पिताके लिए यह समस्या बन जाती ह कि बालक में प्यार सम्बन्धी इस भावना का विकास कैसे किया जाय। इस प्रकार की भावनाओं कें विकास की प्रक्रिया कठिन नहीं हैं। अनेक पढ़े-लिखे माता-पिता इस प्रक्रिया का अनजाने में प्रभावशाली ढंग से उपयोग करते हैं उदाहरण स्वरूप अगर बालक कोई गलत कार्य करता है तो उसको यह अनुभव कराना चाहिए कि जो कुछ भी उससे गलत कार्य हो गया है उसे वह ध्यान में रखे तथा फिर दुबारा न करे। इसके साथ ही साथ माता बच्चे को अपने पास बुलाकर बैठाकर प्यार से यह कह सकती है कि वह उसको कितना प्यार कर सकती है। इस प्रक्रिया से माता- पिता तथा बालक का पारस्परिक सम्बन्ध सुदृढ़ होता है। बालक यह अनुभव करता है कि माता-पिता उसे अनुशासन में रखना चाहते हैं, लेकिन वह यह भी अनुभव करता है कि वे उसको प्यार भी करते हैं तथा वे उसे अनुशासन में रहने का प्रशिक्षण इसलिए देते हैं क्योंकि वे उसको हार्दिक भाव से प्यार करते हैं।

प्रशंसा और प्रोत्साहन का चमत्कारी प्रभाव

प्रायः यह देखा जाता है कि जब कभी बालक कोई अच्छा कार्य करता है तो माता पिता उसकी प्रशंसा करते हैं--उससे प्यार करते हैं। उदाहरणस्वरूप, अगर बालक स्कूलसे कोई पुरस्कार जीत कर आता है या परीक्षामें अच्छे अंक प्राप्त करता है तो माता-पिता उसकी प्रशंसा करते हैं। यह एक अच्छी बात है तथा बालकके आत्म-विश्वास को बढ़ाती है। लेकिन कभी-कभी बालक कोई गलत कार्य कर देता है या किसी कार्यमें असफल हो जाता है। प्रायः इन अवसरों पर माता-पिता बालकको डांटते हैं, जो उचित नहीं है। इन अवसरों पर माता-पिता को बालकके असफल होने पर भी कार्य करते रहने की लगन पर उसकी प्रशंसा करनी चाहिए या गलत कार्य करने पर उसकी आलोचनाके स्थान पर उसे प्यारके साथ समझाना चाहिए।

माता-पिता द्वारा शिक्षा

माता-पिता को बालकके प्रति प्यार का अनुभव स्वयं बालकको भी कराना चाहिए, जैसे बालकको सोते समय समझाना चाहिए कि वह बीते हुए दिनके गलत कार्यों को भूल कर आगे आने वाले दिनोंमें अच्छे कार्य करे। गलत कार्यों को करने पर बालक को मारना नहीं चाहिए। ऐसे समय ठंडे दिमागसे बालकको प्यार भरा हल्का सा चांटा मारना जिससे उसको चोट नहीं लगे तथा बुरे कार्योंके लिए समझाना काफी फलदायी होता है।

यह याद रखना आवश्यक है कि बालक बचपनमें अनुशासनके बारेमें जो कुछ भी माता-पितासे सीखता है बड़ा होने पर वह स्वयं ही अपने को अनुशासनके दायरोंमें बांधता है तथा यही अनुशासन का उद्देश्य है। इस प्रकार बालकमें आत्मसंयमके विकासको बल मिलता है। अनुशासन तथा दंडके बारेमें जो यह भ्रम फैला हुआ है कि दोनों एक ही हैं, दूर हो जाना चाहिए। जहां अनुशासनका अर्थ यह है कि वह व्यक्तिके विकासमें सहयोग देता है, वहां दंड एक तरहका मानसिक या शारीरिक आघात होता है जो व्यक्तिको किसी गलत कार्यके करनेके परिणाम-स्वरूप मिलता है।

अनुशासन और बालककी जिज्ञासाओंका समाधान

बालकोंमें अनुशासनके प्रति आस्था उत्पन्न करनेके लिए माता-पिता को चाहिए कि वे बच्चे को यह शिक्षा

देनेमें सफल हो सकें कि उसके माता-पिता सही हैं, उन पर विश्वास रखना चाहिए तथा उनकी आज्ञाओंका पालन करना चाहिए। इन उद्देश्योंकी पूर्तिके लिए माता-पिताको चाहिए कि वे बालकको यह अनुभव कराएं कि बालक पर उनका अधिकार है। माता-पिताको इस उद्देश्यकी पूर्तिके लिए विशेष वैज्ञानिक तरीका अपनाना आवश्यक है। माता-पिताको यह विश्वास होना चाहिए कि वे जिस चीजकी जानकारी बालकको दे रहे हैं, उसके बारेमें उनका ज्ञान अधिक है। कारण स्पष्ट है। इस प्रकार वे बालककी किसी भी तरहकी शंका या प्रश्नका सन्तोषजनक उत्तर प्राप्त होने पर उसके मनमें माता-पिताके प्रति आदरकी भावनाका समुचित विकास होगा। माता-पिता को ऐसे आदेशों या निर्देशनोंसे बराबर दूर रहना चाहिए जिनका कोई विशेष प्रभाव बालक पर नहीं पड़ता, जैसे 'रोना बन्द करो', 'खाना खाओ', 'खेलो मत' इत्यादि।

बालक को अनुशासित बनाए रखनेके लिए यह आवश्यक है कि माता तथा पिता दोनों का अनुशासनके प्रति एक समान दृष्टिकोण हो। अलग-अलग दृष्टिकोणके कारण बालक पर अलग-अलग प्रभाव पड़ता है। फलस्वरूप बालकके लिए यह निर्णय लेना कठिन हो जाता है कि कौन से निर्देश का पालन करे तथा बालकका अपने माता-पिताके प्रति विश्वास जाता रहता है।

प्रलोभनोंसे बचें

बालकमें अनुशासनके प्रति आस्था बनाये रखनेके लिए यह आवश्यक है कि माता-पिता बालक को झूठे लालच देकर उससे कोई भी कार्य न करवाएं। उदाहरणके लिए प्रायः माताको यह कहते सुना जाता है कि अगर वह दूध पी लेगा तो उसको घुमाने ले जाएंगे। अनुशासित रखने के लिए और अन्य तरहके तरीके अपनाये जा सकते हैं, जो उचित हैं। अनुचित तरीके अपनानेसे बालकका विश्वास जाता रहता है तथा बादमें वह जिद्दी हो जाता है। इस तरहके लालच कभी-कभी बालक को काफी उलझनमें डाल देते हैं कि वह जिस कार्य को कर रहा है उसे ही करे या माता-पिताके दिये हुए कार्य को करे। उलझन होना स्वाभाविक है क्योंकि छोटी अवस्थामें बालकमें निर्णय लेने की क्षमता कम होती। कभी-कभी माता-पिता अपने बच्चेसे यह कहते सुने जाते हैं कि उसने जो व्यवहार अमुक व्यक्ति के सामने प्रदर्शित किया है उस पर वे गर्व करते हैं। इस प्रकार का स्पष्टीकरण तर्कसंगत है। लेकिन अगर वे यह कहते हैं कि अगर अमुक व्यक्तिके सामने बालक अच्छी तरहसे व्यवहार करेगा तो वे उस पर खुश होंगे तो यह अनुचित तरीका है क्योंकि ऐसी परिस्थितिमे बालक सशंकित रहता है कि वह कहां तक अपने उद्देश्योंमें सफल होगा।

स्वतंत्र विचार और व्यक्तित्वका विकास

बालकमें स्वतंत्र रूपसे सोचने तथा किसी कार्यको करनेकी भावना उसके व्यक्तित्वके विकासमें अत्यन्त महत्वपूर्ण स्थान रखती है। स्वतंत्र होकर किसी कार्य को करना या निर्णय लेना किसी भी बालकके व्यक्तित्वके विकास की एक कड़ी है जो स्वतः आती है। बालकके मानसिक रूपसे तैयार न रहने पर किसी भी माता-पिता को इस प्रकार की जल्दबाजी नहीं करनी चाहिए।

यदि बालक विकासके उस चरण पर है जहां उसे यह अनुभव होता है कि उसको स्वतंत्र होकर कुछ करना चाहिए तो माता-पिता को यह स्वीकार करना चाहिए तथा यह मौका देना चाहिए कि जो कुछ भी वह कर रहा है उसे करने दें। कभी-कभी यह देखा जाता है कि माता-पिता बच्चे को चलनेसे रोकते हैं क्योंकि उन्हें भय रहता है कि चलने की कोशिश करने पर बालकके गिरने पर उसे चोट लग सकती है। माता-पिता की इन प्रवृत्तियोंके कारण बालकके स्वतन्त्र रूपसे किसी कार्य को करनेके मार्गमे बाधा उत्पन्न होती है। अतएव इन परिस्थितियोंमें अगर माता-पिता अनुभव करते हैं कि बालकके किसी कार्य को स्वतंत्र रूपसे करनेके प्रयत्नमें उसे छोट-मोटी चोट लगनेका अन्देशा है तो उसे अपने हाल पर छोड़ देना चाहिए, क्योंकि इससे बालकमें आत्म-विश्वास की भावना विकास होता है। कभी-कभी माता-पिता यह सोचते हैं कि बालक को किसी भी कार्यके बारेमें निर्णय लेनेका

(देखिये पृष्ठ ७ पर)

बच्चों के विकास में कहानी सुनाने का महत्व

—सुश्री एच० मनोरमा बाई—

कुछ लोग सोचते है कि कहानी कहना एक मामूली बात है पर बच्चोंके लिए कहानियोंका बड़ा महत्व होता है। बच्चे कहानियाँ बड़े शौकसे सुनते हैं। रोचक ढंगसे कहानी सुननेवालेकी ओर तो वयस्क भी आकर्षित होते हैं।

दोसे छ वर्षकी आयुके बच्चे कहानियाँ सुनकर बड़े प्रसन्न होते हैं और घरमें बड़े-बूढ़ोंको तब तक चैन नहीं लेने देते जब तक कोई कहानी सुन न लें। बच्चोंको सोते समय कहानी सुनना बड़ा अच्छा लगता है। इस समय तो चंचल और चिड़-चिड़े बच्चे भी कहानी सुनकर खुश हो जाते हैं। इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि बच्चोंको कहानी सुनना बहुत पसन्द है। जैसे शारीरिक रूपसे स्वस्थ रहनेके लिए भोजन अनिवार्य है, वैसे ही बच्चे की भावनात्मक तृप्तिके लिए कहानी सुनना आवश्यक है।

सभी लोग कहानी रोचक ढंगसे नहीं कह सकते। अगर व्यक्तिको कहानी कहनेका अनुभव न हो तो बच्चे बोर हो जाते हैं। जोर-जोरसे बोलने या हाथ पाँव पटकने लगते हैं वस्तुतः नौसिखिए व्यक्तिमें कहानी कहनेकी आवश्यक योग्यताएँ नहीं होती। बच्चा ही इस सम्बन्धमें सही निर्णायक होता है। अतः कहानी वही व्यक्ति सुनाए जो बच्चेकी उत्सुकताको शांत कर सके।

कहानी सरल और रोचक होनी चाहिए

एक कुशल कहानी कहने वालेको स्वयं यह स्पष्ट होना चाहिए कि कहानी कहनेका उद्देश्य क्या है। कहानी सुनाने वाली महिलाको चाहे वह माँ हो या चाची अथवा दादी या नानी सुनियोजित ढंगसे कहानी सुनानी चाहिए ताकि बच्चा उसे समझ सके और कहानी उसे रोचक लगे।

तीन-चार सालके बच्चेके लिए ऐसी कहानी होनी चाहिए जिसका उसके आस-पासकी चीजोंसे सम्बन्ध हो ताकि वह उसे समझ सके। कहानी मनोरंजक हो और रस ले-लेकर सुनायी जाए। छः सालके बच्चेके लिए कहानी ऐसी होनी चाहिए जिसमें बच्चेकी अनुभवकी गयी वस्तुओं और उसकी गतिविधियोंका वर्णन हो परन्तु इन स्थितियोंमें भी मनोरंजनका ध्यान अवश्य रखना चाहिए। नर्सरी गीतों और लोरियोंको सुनकर बच्चे बड़े प्रसन्न होते हैं। शिशु भी लोरी सुनकर सो जाते हैं। इससे स्पष्ट होता है कि बच्चेकी भावनात्मक आवश्यकताओंकी पूर्ति भी इन गीतों और लोरियोंसे होती है। बाल गीत लाभदायक होते हैं। क्योंकि इनसे बच्चेमें लयके प्रति रुझान और क्रियाशीलता का विकास होता है जो कि बच्चेके लिए हितकर है।

बच्चेकी आरम्भिक अवस्थामें भौगोलिक अथवा ऐतिहासिक कहानियाँ उपयुक्त नहीं रहती क्योंकि बच्चा तो वर्तमानमें जीता है, समय-स्थानकी दूरी तक पहुँचनेकी सामर्थ्य उसकी नहीं होती। इसलिए हम बच्चोंकी कहानियाँ इस ढंगसे आरम्भ करते हैं, 'एक समयकी बात है', 'बहुत पहले की बात है', 'बहुत दूर देशकी कहानी है।' इस वर्णनमें स्थान और समयका अस्पष्ट आभास मिलता है पर बच्चेकी सन्तुष्टिके लिए इतना ही काफी है।

लोक कथाएँ सोद्देश्य होती हैं

कहानियां तो बच्चोंके लिए रोचक होती ही हैं पर लोक कथाओंका उद्देश्य होता है जिनमें पशु और पक्षी मनुष्योंकी तरह बात करते हैं, जैसे 'लैम्ब एण्ड दी वुल्फ' (मेमना और भेड़िया) अथवा 'रेनार्ड दी फाक्स' (रेनार्ड लोमड़ी) इत्यादि। भारतीय लोक कथाओंका साहित्य काफी समृद्ध है। पंचतंत्रकी कथाओं में पशु, पक्षी और पौधोंके द्वारा कथाएँ कही गई हैं। पशु-पक्षियों और पौधों को मनुष्योंकी तरह भावावेशमें बातें करते हुए जब बच्चे सुनते है तो उन्हें मानवीय भावनाओंको समझनेका सुअव-

सर मिलता है। लोककथाओंके माध्यमसे बच्चोंको अप्रत्यक्ष और सहज ढंगसे नैतिकताकी शिक्षा मिलती है। कुशल कथाकार बच्चोंको नैतिकताका पाठ नहीं पढ़ाता। वह कहानी इस ढंगसे कहता है कि बच्चा स्वयं ही समझनेकी कोशिश करे। हां, कथाकार उस ओर इशारा कर सकता है। यदि कथाकार जबर्दस्ती बच्चों पर नैतिकताका मुलम्मा चढ़ानेकी गलती करेगा तो वह इसमें सफलता नहीं पा सकता है।

परी कथाएँ भी कम महत्वपूर्ण नहीं होती। ये पौराणिक कथाओं जैसी ही होती हैं। इनका अपना आकर्षण होता है, विशेषकर चार वर्ष तकके बच्चोंके लिए ऐसी कथाओंको सुनकर बच्चोंकी कल्पना शक्ति बढ़ती है। इसके अतिरिक्त साहित्यके प्रति उनकी रुचि बढ़ती है और साथ ही नैतिकताका उपदेश मिलता है। हम कह सकते है कि ऐसी कहानियां बच्चोंके लिए आकर्षक तो होती ही है साथ ही नैतिकता का पाठ भी बच्चोंको पढ़ाती है। इनसे बच्चोंकी कल्पना शक्ति बढ़ती है। अतः ये कहानियां अधिक मूल्यवान सिद्ध होती है जैसे सिंड्रेला, अलाद्दीनका जादुई चिराग इत्यादि। चूंकि ये कहानियां किसी धर्म, जातिसे सम्बद्ध नहीं होती और इनमें काल्पनिक चरित्रों यानी परियोंका वर्णन होता है, इसलिए बच्चे इन्हें आसानीसे समझ लेते है।

अतः इन सब पौराणिक लोक तथा परी कथाओंका नैतिक और शैक्षणिक महत्व है। ये बच्चोंकी कल्पना-शक्तिको समृद्ध करती है जो बच्चोंके बौद्धिक विकासमें सहायक होती है। बिना कल्पना की उड़ान भरे हम विचारोंकी ऊँचाइयों तक नहीं पहुँच सकते।

पौराणिक कथाओंका भी बड़ा महत्व है। एक तो बच्चा गम्भीर कथाओंकी ओर प्रवृत्त होता है, दूसरा उसे इतिहासकी जानकारी भी मिल जाती है। किन्तु ये कहानियाँ तभी सुनाई जाती चाहिए जब बच्चा मानसिक दृष्टि से इनके योग्य हो जाए। और ये कहानियां सरल, घटनाप्रधान और सुनियोजित होती है जो कि विज्ञानकी प्रगतिके लिए आवश्यक है। चूंकि ये कहानियां एक व्यक्ति या अनेक व्यक्तियोंके इर्दगिर्द घूमती है, इसलिए इनमें बच्चा खूब दिलचस्पी लेता है।

डरावनी अथवा हीन भावना पैदा करने वाली कहानियां बच्चोंको नहीं सुनानी चाहिए। उदासीनता अथवा कुरूपताका भाव जगाने वाली कहानियां बच्चोंको कभी न सुनाएं। परन्तु सभी कहानियोंमें केवल सुखद घटनाओंका वर्णन करनेसे कहानी अस्वाभाविक बन जाती हैं। अतः बच्चा जीवनके बारे में स्वाभाविक ज्ञान प्राप्त नहीं कर पता। कहानीमें अच्छे और बुरेका भेद बच्चेके सामने इस प्रकार सूक्ष्म रूपसे प्रस्तुत किया जाना चाहिए जिससे वह बुरे पर अच्छे की विजय को समझ सके। बच्चेका मनोरंजन होनेके साथ-साथ उसमें हास्यास्पद और अप्रत्याशित घटनाओंकी सराहनाका भाव भी आना चाहिए।

(पृष्ठ ५ से आगे)

अवसर देना उस समय तक खतरनाक है जबतक उसमें उसके परिणामोंके बारेमें जानने की क्षमताका पूर्ण रूपसे विकास न हो गया हो। माता-पिताको इन मिथ्या धारणाओंका परित्याग करना चाहिए। इसके विपरीत बालकको ऐसे कार्योंके बारेमें निर्णय लेने या कार्य करनेके बारेमें कोई रोक-टोक नहीं लगानी चाहिए, जिसने चूक होने पर छोटी-मोटी गलतियों की संभावना हो।

इस प्रकार हम देखते हैं कि स्नेह, अनुशासन और स्वतंत्र विचार का बालकके व्यक्तित्वके स्वस्थ विकासमें कितना महत्वपूर्ण स्थान है।

मिलिट्रीके दो जवान बात कर रहे थे। एकने पूछा, "तुमने मिलिट्री क्यों ज्वाइन की ?"
जवाब मिला, "मेरी शादी नहीं हुई, इसलिए। और तुमने ?"
"मेरी शादी हो गयी इसलिए।"

पिताके पत्र पुत्रवधू के नाम-४

देहरादून ।
३ अप्रैल १९७३ ।

चि० बेटी गीता,

तुम्हारा पिछला पत्र २ अप्रैलको दोपहरमें मिला था। मैं उस समय दिल्ली जा रहा था। इलाकी नानीजी का देहावसान ३० मार्चकी रातमें हो गया था। तुम्हारी आण्टी उस समय वहीं थीं। हम लोग ४ अप्रैलको देहरादून वापस आ गये।

इलाका अनुमान ठीक ही है। इन पत्रोंके माध्यमसे एक ऐसी पुस्तककी रचना अनायास हो सकेगी जो विवाहोन्मुख कन्याओंके लिए उपयोगी होगी। परन्तु मेरा प्राथमिक हेतु यह नहीं है। मैंने समय-समय पर जो कुछ भी लिखा है वह उस प्रेरणाका परिणाम है जो जीवनकी विविध अवस्थाओं पर उसे ढंगसे जीनेके लिए मुझे आवश्यक प्रतीत हुई। इसीके अन्तर्गत परिवारके अन्य सदस्योंके लिए भी उनकी अवस्था और आवश्यकताके अनुकूल जानकारी प्रस्तुत करनेकी कोशिश करता रहा हूँ। इला और अशोकके लिए लिखी गई ऐसी कुछ पुस्तकोंकी एक-एक प्रति तुम्हारे लिए भेज रहा हूँ। दूसरी पुस्तकोंका परिचय भी समयानुसार तुम्हें कराऊँगा।

मैं अपने एक पिछले पत्रमें लिख चुका हूँ कि जीवनकी प्रक्रिया एक कला है। बहुत कम लोग यह जाननेकी कोशिश करते हैं कि जीवनको कैसे जिया जाय। तो, प्राथमिकरूपेण यह पत्र शृंखलामें तुम्हारे लिए ही प्रस्तुत कर रहा हूँ। तुम अब हमारे परिवारका अभिन्न अंग बनोगी। मैं चाहता हूँ कि तुम अपने दाम्पत्य जीवनका निर्वाह सचमुच कलात्मक ढंगसे कर सको। अगर इनका रूप कुछ ऐसा बन सका कि समाजकी दूसरी बेटियांके लिए भी उपयोगी प्रतीत हुए तब इन्हें पुस्तकाकार रूप देनेकी बात बाद में सोची जायगी।

विवाह-संस्थाके उद्विकास और हेतुके बारेमें मैं अपने पिछले दो पत्रोंमें चर्चा कर चुका हूँ। विवाहके लिए दो पात्रों (वर और कन्या) का चयन करना होता है। यह संकेत किया जा चुका है कि विवाह संस्थाके विकासकी शुरुआतमें पात्रोंके चयनके मौजूदा ढंग नहीं रहे होंगे। तब पति-पत्नीके रूपमें परस्पर साथ रहने वाले नर-नारीका सम्बन्ध परिस्थितिगत और संयोगिक कारणों पर ही अधिक निर्भर करता होगा।

धीरे-धीरे सामाजिक संगठन के विकासके साथ जब कुछ सामाजिक और सांस्कृतिक मान्यताओंका प्रादुर्भाव हुआ तब विवाहके लिए वर-कन्याके चयन का ढंग भी इन परिवर्तनोंसे प्रभावित होने लगा होगा। तब तरह-तरहके नियम और निषेध बने। रक्त, कुल, जातिकी शुद्धता अशुद्धताकी बातें सोची जाने लगीं। तभी विकासमान समाजके आर्थिक मूल्य भी बनने लगे। अब विवाहके साथ अर्थका नाता-रिश्ता जुड़ने लगा। पारिवारिक और जातीय संगठन एवं स्थिरता की दृष्टिने भी पात्रोंके चयनके ढंग को प्रभावित किया।

इस तरह कालान्तरमें विभिन्न समुदायोंमें विवाहके लिए पात्रोंके चयनके विविध ढंग इन सब बातोंसे प्रभावित होकर विकसित होने लगे। इन सबके भौगोलिक, सामाजिक सांस्कृतिक और कालक्रमानुसार रूपों कें अध्ययन सोशियोलोजी और एंथ्रोपोलोजीके विद्यार्थियों के विषय है। तुम्हें इनकी जानकारी होगी।

विवाहके लिए वर्तमान में प्रचलित पात्रोंके चयनके ढंगों पर विवेचना करनेसे पहले कुछ विगत विविध ढंगों की चर्चा रोचक होगी। भारतीय समाजमें ऐसे प्रमुख ढंग निम्नांकित रहे हैं—

१—**परिवीक्षाविवाह**--इसमें संभावित पात्रों को विवाहसे पहले एक दूसरेके साथ रहने, परस्पर बरतने और समझनेका मौका दिया जाता है। इस परिवीक्षाकाल के बाद अगर वे विवाह करना चाहें तो विधिवत विवाह कर दिया जाता है। यह विधि कई भारतीय जन-जातियों में प्रचलित रही है उदाहरण के लिये असममें मिकिर, कूकी, नागा और दफला जातियां। वर्तमानमें दुनियाकी प्रगतिशील पाश्चात्य जातियोंमें यह ढंग लोकप्रिय बन रहा है।

२—हरण विवाह—जब किसी कन्या को वर पक्ष वाले जबरदस्ती छीनकर या उठा ले जाकर वर से विवाह कर देते थे तब उसे हरण विवाह कहा जाता था। अनेक विद्वानों का मत है कि विवाह की उद्विकास प्रक्रिया की शुरुआत का यही ढंग रहा होगा। भारतवर्ष में महाभारत-काल के अनेक प्रतिष्ठित नायकों ने इसी तरह विवाह किये थे। पृथ्वीराज द्वारा संयोगिता का हरण अभी हाल की इतिहास की बात है। अब सभी वर्गों में इस ढंग का विवाह लोप हो गया है; जन जातियो में भी वास्तविक हरण की जगह अभिनयात्मक हरण का ढंग ही रह गया है।

३—परीक्षा विवाह—इस ढंग के अन्तर्गत संभाविक वर को अपने शारीरिक बल-बुद्धि की परीक्षा देनी होती थी। कन्या पक्ष द्वारा निर्धारित परीक्षा में जो खरा उतरता था उसी के साथ कन्या का विवाह किया जाता था। वर्तमान में अनेक जन-जातियो में इस ढंग के विविध रूप प्रचलित हैं।

४—क्रय विवाह—इसके अन्तर्गत विवाह के लिए पात्र की उपलब्धि एक पक्ष द्वारा दूसरे पक्ष को वर या वधू मूल्य देकर की जाती थी और है। वर्तमान भारतीय समाज की दहेज प्रथा इसी रूप का प्रतिनिधित्व करती है।

५—सेवा विवाह—जहां वर पक्ष वधू का मूल्य नहीं दे सकता था तब संभावित वर को कुछ समय के लिये अपने भावी श्वसुर परिवार में रहकर सेवा करनी पड़ती थी।

६—विनिमय विवाह : वधू-मूल्य से बचने का दूसरा तरीका विनिमय विवाह का था। इसमें एक परिवार के एक भाई और एक बहिन का विवाह दूसरे परिवार की एक बहन और एक भाई के साथ हो जाता था। यह प्रथा अनेक भारतीय जन-जातियों में पाईं जाती है। कभी-कभी उच्च वर्णों में भी देखने को मिलती है।

७—सहमति और सहपलायन विवाह—जीवन-व्यवहार सम्बन्धी अनेक विधि-निषेधों के बावजूद प्रेम सम्बन्ध सभी समाजों में पनप जाते हैं। ऐसी स्थिति में युवक-युवती सामाजिक प्रतिबन्धों और बड़ों की इच्छा की अवहेलना करके परस्पर सहमति से विवाह कर लेते हैं। यह ढंग वर्तमान में भी पाया जाता है।

८—हठ विवाह। कुछ जन-जातियों में एक विशेष युवक से विवाह की इच्छा रखने वाली लड़की उसके घर में जबरदस्ती घुस जाती है और तब तक वहां से नहीं हटती जबतक उसे वधू के रूप में स्वीकार नहीं कर लिया जाता। इसके लिये वह तरह-तरह की प्रतारणा और अनादर भी सहती है।

जब हिन्दू धर्म और संस्कृति ने संगठित रूप ले लिया और जीवन के विविध क्षेत्रों में विधि-विधान बनने लगे तभी पात्र चयन के ढंग के आधार पर हिन्दू विवाह के प्रकारों का वर्गीकरण किया गया। इसके अन्तर्गत मनुस्मृति में ८ प्रकार के विवाहों का उल्लेख किया गया है। इनमें से प्रथम चार को उत्तम विवाह माना गया है, शेष को निकृष्ट। उत्तम विवाह निम्नोक्त हैं।

१—ब्रह्म विवाह—कन्या के पिता द्वारा जब किसी योग्यता, वेद-पारंगत, श्रुतिवान और सच्चरित्र वर को आमंत्रित करके उसके साथ आभूषणों से युक्त कन्या का विवाह किया जाता था उसे ब्रह्म विवाह कहते थे। वेद पारंगत और श्रुतिवान से अभिप्राय था शिक्षित और प्रबुद्ध। जब ये विधान बने थे तब हिन्दू संस्कृति में ज्ञान और विद्या का चरमोत्कर्ष वेद ही थे। वेद पारंगत व्यक्ति का उस समय कुछ वैसा ही मान होता था जैसा आज के युग ने किसी प्राविधिक विद्या में सर्वोच्च शिक्षा प्राप्त व्यक्ति का होता है। आभूषणों से युक्त कन्या से अभिप्राय था, विवाह के समय स्वेच्छा से कन्या और वर को उपहार भेंट करना। आजकल भी भारतीय समाज में विवाह के लिये पात्र निर्वाचन का यह ढंग सर्वाधिक व्यापक है।

२ देव विवाह—देव विवाह की परिभाषा के लिये कहा गया है—ऋत्विजे वितते कर्मणि दवादलंकृत्य स देवः। अर्थात सद् कर्म में लगे हुए पुरोहित (ऋत्विज) को जब वस्त्र और अलंकारों से सुसज्जित कन्या दी जाती थी तो उसे देव विवाह कहा जाता था। विवाह का यह रूप श्ल्याघ्य नहीं है। हिन्दू संस्कृति के प्राचीन काल में जब समाज पर पुरोहितों का व्यापक प्रभाव रहा होगा तब उन्होंने ही स्वाभिप्रायवशात ऐसा विधान रचा होगा। अनेक स्मृतिकारों ने भी ऐसे विवाह की आलोचना की है। वर्तमान में

विवाह का यह ढंग बिल्कुल भी नहीं पाया जाता है। अब यह केवल इतिहास की बात रह गई।

३—आर्ष विवाह—पहले कन्या का पिता विवाह करने के लिये तत्पर ऋषि से एक जोड़ा बैल और एक गाय लेकर अपनी पुत्री का विवाह करता था, ऐसा विवाह आर्ष विवाह कहलाता था। कन्या के पिता को दी जाने वाली इस भेंट का क्या अभिप्राय रहा होगा—नहीं कहा जा सकता। अब इस तरह के विवाह भी नहीं होते।

४—प्रजापत्य विवाह—'तुम दोनों मिलकर आजीवन धर्मका आचरण करो' कह कर जब कन्या का पिता वरको कन्या वधूके रूपमें सौंपता है, ऐसे विवाह को प्रजापत्य विवाह कहा जाता है। वास्तवमें ब्रह्म विवाह और प्रजापत्य विवाहमें कोई मूलभूत अन्तर नहीं है। निकृष्ट कोटिके विवाह निम्नोक्त हैं—

५—असुर विवाह—जब कन्याके पिताको धन देकर किसी कन्यासे विवाह किया जाता है तो उसे असुर विवाह कहते हैं। यह एक तरहसे कन्या को खरीदने की प्रक्रिया है। वर्तमानमें भी समाजके कुछ निम्न वर्गोंमें तथा कुछ विशेष परिस्थितियाँमें सम्पन्न नागरिकों द्वारा ऐसे विवाह किये जाते हैं। प्रकट है कि यहाँ द्रव्यके लोभसे कन्या का पिता वर की पात्रता-अपात्रता का ख्याल नहीं करता।

६—गन्धर्व विवाह—जब काम की जैविक प्रवृत्तिके वशीभूत कन्या और वर स्वयं सम्बन्ध स्थापित कर लेते थे, ऐसे विवाहको गन्धर्व विवाह कहा जाता था। निकृष्ट कोटिके विवाहोंमें इसरूपको सबसे अच्छा माना गया है क्योंकि यहाँ वर और कन्याकी स्वतंत्र इच्छा और सहमति तो रहती है। वर्तमानमें प्रेम विवाह इसका स्वरूप है। यह ढंग पाश्चात्य संस्कृति प्रभावित प्रशिक्षित वर्गोंमें

Kurazol (Liquid & Tablet) — A Remedy for Asthma

Adiol Compound — A General Pick-up

Hemogastrin — A Digestive & Haematinic Tonic

Lycoliv — A Liver Tonic

Products of :

INTERNATIONAL CHEMICAL & BIOLOGICAL INSTITUTE
PRIVATE LIMITED
KURAZOL HOUSE, BANGALORE-4.

व्यापक होता जा रहा है।

७—राक्षस विवाह : प्राचीन कालमें युद्धोंमें स्त्रियों का हरण करके विजेता पक्ष उनसे विवाह करता था। ऐसे विवाहों को राक्षस विवाह कहा जाता था। महाभारतकालमें संभवतः यह ढंग सर्वाधिक प्रचलित था। यह तरीका क्षत्रियोंमें प्रमुख रूपसे व्यापक था। इसलिये इसे क्षात्र-विवाह भी कहा जाता था। वर्तमान कालमें इस ढंगके विवाहों का कोई अस्तित्व नहीं है। परन्तु कुछ जातियोंके रीति-रिवाजोंमें इसके सांकेतिक अवशेष अभी भी देखने को मिलते हैं।

८—पैशाचिक विवाह—मनुके अनुसार किसी सोई हुई, मदिरा पान की हुई उन्मत स्त्री अथवा राहमें जाती हुई लड़कीके साथ यदि कोई पुरुष बलपूर्वक कुचेष्टा करके उससे विवाह करता था, उसे पिशाच विवाह कहा जाता था। यद्यपि यह स्थिति मूलतः अनाचार की थी और दण्डनीय भी होती थी तथापि संभवतः सम्बन्धित स्त्री को सामाजिक अनुमोदन दे दिया जाता होगा। निकृष्ट विवाहों में यह स्वरूप सबसे अधम है।

वर्तमानमें भारतीय समाजमें ब्रह्म विवाह का ढंग ही सर्वाधिक प्रचलित है। समाजके आधुनिक सभ्यता प्रभावित उन्नत वर्गमें गन्धर्व विवाहों (प्रेम विवाहों) की व्यापकता बढ़ती जा रही है। यदाकदा कन्याके पिता को वधू मूल्य देकर असुर विवाह करनेके उदाहरण भी देखनेको मिलते हैं। दैव, आर्ष और राक्षस विवाहों के ढग का अब समाज से पूरी तरह लोप हो चुका है।

हरण-विवाह जैसे प्रयास ग्रामीण-जन-जीवनमें यदाकदा सुनने को मिलते है। पैशाच-विवाह जंसे कुकृत्य भी यत्र-तत्र पाये जाते है। ये सर्वथा निन्दनीय और दण्डनीय प्रवृत्तियाँ है। इन्हें विवाह की संज्ञा देने का कोई औचित्य नहीं है।

विनिमय विवाहके उदाहरण भी कभी-कभी दिखाई पड़ जाते हैं। परिवीक्षा विवाह जैसी चीज़ पाश्चात्य समाज में काफी व्यापक हो रही है।

अगले पत्रमें मैं भारतीय समाजमें विवाहके लिये पात्रोंके चयनके प्रचलित प्रमुख ढंगों (माँ-बाप द्वारा चयन अथवा पात्रों द्वारा स्वयं चयन) पर विवेचना करूंगा।

नीलू-गुन्नों ८ अप्रैल को तुम्हारे पास पहुँच रही हैं। तुमसे मिलने को वे दोनो कितनी उत्सुक हैं यह तुम्हें तभी ज्ञात होगा जब वे तुम्हारे पास पहुँचेगी।

चि० अशोकके पत्रोंसे मालूम होता है कि उसे तुम्हारे पत्र न पाकर परेशानी महसूस हो रही है। इधर तुम्हें भी उसके पत्र नहीं मिल रहे हैं। कहीं कुछ गड़बड़ी जरूर है। दो काम करो-एक तो जो पत्र तुम उसे डालो उसपर आवश्यक टिकट लगाकर उन्हें स्वयं डाकखानेमें देकर टिकटों पर मोहर लगवा दिया करो। दूसरा अपने डाकिये को कहो कि विदेशी डाक को लेटर बाक्स में न डाल कर घरमें डिलीवरी दे।

विदेशमें अपने स्नेहजनके पत्र विशेष आनन्द और सन्तोष देते हैं। न मिलने पर उतना ही क्लेश मन को होता है।

कुछ पारिवारिक चित्र भी तुम्हारे पास भेज रहा हूँ।

तुम्हारा शुभाकांक्षी
सुरेन्द्रनाथ गुप्त

नम्र निवेदन

पिछले कई माह से "आपका स्वास्थ्य" के प्रकाशन में पर्याप्त अनियकता आयी है जिसके लिए हम पाठकों के निकट क्षमाप्रार्थी हैं। कागज की जैसी विकट समस्या सहसा उत्पन्न हो गयी है, उसे देखते हुए हम पाठकों की सेवा समय पर करने में असमर्थ रहे। मुहँ माँगा दाम देने पर भी हमें कागज समय से प्राप्त नहीं हो सका। आशा है वर्त्तमान संकट को देखते हुए हमारे पाठक धैर्य रखेंगे।

ज्यों-ज्यों कागज हमें प्राप्त होता जायगा, हम पाठकों के पास अंक, भेजते रहेंगे। अगर आपको नया अंक प्राप्प हो और पिछला अंक न मिले तो समझ लें कि डाक विभाग में गड़बड़ी हो गयी है। वैसी स्थिति में कार्यालय को अपना ग्राहक नम्बर का उल्लेख करते हुए सूचित कर दें।

—व्यवस्थापक

आंध्रा के कुछ व्यंजन

पेसरट्टू (मूँगदाल का दोसा)

सामग्री

मूंगदाल	बारीक कतलों में
हरीमिर्च	
अदरख	
प्याज	
नमक	स्वाद के अनुसार
जीरा	
तेल	तवे पर पोतने के लिये

बनानेकी विधि

इसके लिए पालिश की हुई दालकी अपेक्षा छिलके सहित दाल ही अच्छी है। सात-आठ घंटे पहले दालको काफी पानीमें भिगोइये। फिर पानी निसार कर दालको पीस लीजिये और इसमें अपनी रुचिके अनुसार नमक मिलाइये। तवेको खूब गरम करके उस पर थाड़ा घी, डालडा या तेल पोत लीजिये। कलछी भर आटेको तवे पर डाल कर फैलाइये। आंचको मद्धिम रखें। फिर इस पर प्याज, हरीमिर्च, अदरखके कतलें और जीरा भी फैलाइये। एक मिनट बाद किनारेसे दो तीन बूँद तेल उस पर चलाइये। कुछ सोंधने पर दो-तीन मिनिट ठहर कर इसे दूसरी ओर पलटिये। दो तीन मिनटके बाद निकाल कर गरम गरम खा लीजिये। इसमें सभी सामग्री अपनी रुचिके अनुरूप मात्रामें ले सकती हैं। आपको पसन्द आती है ता पुदीना भी डाल सकती हैं। यह पेसरट्टू आंध्राका खास उपाहार है। यह वैसे ही खाया जाता है। लेकिन आंध्राके होटेलोंमें उपमा और पेसरट्टूका खास 'काम्बिनेशन' चलता है।

कटहल-दाल भाजी

कच्चे कटहलसे तरह-तरहके व्यंजन बनाना आंध्राके कोस्ता जिलोंकी विशेषता है। तरकारी बनानेके लिऐ कटहलका किस्म ही अलग होता है। छिलका उतारकर एक विशेष चाकूसे कुतर कर चूरा निकाला जाता है। आंध्राकी सब्जी मंडीमें यह चूरा प्राप्त होता है। इस चूरेको एक एक बकेट भर पानीमें डाल दें तो कचरा आदि नीचे उतर कर साफ चूरा ऊपर तैर आता है। इससे व्यजन बनानेकी विधि दी जा रही है जो चावलके अलावा चपाती आदि में भी बहुत स्वादिष्ट लगता है।

सामग्री

कटहल का चूरा
मूँगदाल
लाल मिर्च
छौंकनेकी सामग्री

बनाने की विधि

दाल और चूरेकी मात्राको अपनी-अपनी रुचिके अनुसार घटा या बढ़ा सकते हैं। काफी पानी डालकर इन दोनोंको अलग-अलग ऐसा पकाये कि वह पक भी जाए लेकिन लेई जैसा न रहकर दाना-दाना अलग और कुछ सख्त रहें। चूरेमें ही पकाते समय काफी हल्दी और नमक डालें। फिर चूरेको खूब निचोड़ लें। फिर उसे दालमें डाल कर दो तीन मिनिट हल्की आंच पर पका लें। फिर अलग पतीलेमें बघार तैयार करके इसे छौंक लें।

बैंगनकी सब्जी

सामग्री

ताजा बैंगन	
आलू या शकरकंद	
हरी मिर्च	
इमली	रुचिके अनुसार
प्याज	
अदरख	
नमक	
उर्ददाल	बघारके लिये
चना दाल	,,
छौंकनेकी अन्य सामग्री	

बनानेकी विधि

बैंगन, शकरकन्द या आलूको पानीमें साफ धोइये।

इन्हें ½ अंगुल टुकड़ोंमें काटिये । (बैंगनके टुकड़ोंको पानी में रखें । नहीं तो इनमें कड़ुवाहट आ जाती है ।) काफी पानी डाल कर इन सभी टुकड़ोंको इमलीके साथ पकाइये । काफी नरम पड़ने पर पतीला उतारिये और तभी इसमें काफी नमक डालकर कलछी से हलका कूट लीजिये । एक कढ़ाहीमें काफी तेल डालकर उपरोक्त सामग्रीसे बघार तैयार करें । बघार तैयार करते वक्त मुंगफलीके बीज, चने और उददाल, हरीमिर्चं, प्याज तथा अदरखके कतले और बाकी सामग्री क्रमशः डालकर इस बघार में बैंगन आदिके गूदेको चलाकर खूब मिलाइये । इस मिश्रणको हलकी आँच पर थोड़ी देर पकने दीजिये । अगर आप पसन्द करती हैं तो बघारमें ही थोड़ी हींग भी डाल सकती हैं ।

फली या तिलहनोंकी चटनी

फलीके बीजों को भूरे रंग आने तक हलका भून लीजिये । फिर हथेलीसे मसल कर ऊपरी छिलके निकालिये । फिर इसे ओखलीमें डालकर कुछ मोटे आटेमें कूट लीजिये । दहीमें रुचिके अनुसार नमक और चुटकी भर हलदी डालकर खूब फेंट लीजिये । इसमें फलीका आटा चला कर मिलाइये । पसन्द आये तो हरी धनियाके कतले भी डाल सकती हैं । किसी कलईदार पतीलेमें आवश्यक सामग्री डाल कर छौंक लें । यह चटनी भी चपातीके साथ बहुत स्वादिष्ट लगती है । तिलहनोंसे बनाते वक्त खूब साफ किये हुए सफेद तिलहन लेना चाहिये ।

कद्दू की खीर

सामग्री

मंझोले साइजका कद्दू	१
लालमिर्च	२–३
नारियल के लच्छे	मुट्ठी भर
गुड	¼ किलो
दूध	¼ लीटर
चावलका आटा	¼ किलोसे कुछ कम
छौंकनेकी सामग्री	

बनाने की विधि

कद्दूको छिलका उतार कर छोटी-छोटी टुकड़ियोंमें कीजिये । सब्जीकी तरह बघार तैयार करके इन्हें डालिये । काफी पानी डालकर तीन मिनट पकने दीजिये । फिर इस में गुड़का चूर्ण डालिये । काफी पकने पर इसमें दूध और आटा चलाकर खूब मिलाइये और दो तीन मिनिटके बाद बर्तन चूल्हे पर से उतारिये । बस कद्दूका खीर तैयार है । चिचड़ेसे भी इसी प्रकार खीर बनाती हैं ।

मिनप सुन्नी (उड़द दालका लड्डू)

सामग्री

उड़द दाल (पालीश किया हुआ)	१ कि०
घी	२५० ग्राम
चावल	मुट्ठी भर
शक्कर	आधा कि०

बनानेकी विधि

काफी खुशबू निकलने तक दालको कढ़ाहीमें भून लीजिये । यह देखना जरूरी है कि दाल ज्यादा भूरी न बने । फिर चावलको भी हल्का भून लें । दोनोंको मिलाकर चक्कीमें बारीक आटा पीस ले । पीसनेकी शक्ति नहीं है तो मिलको भेज सकती हैं । शक्करको धूपमें सुखाकर ओखलीमें बारीक कूट लीजिये । फिर शक्कर और आटेको किसी बड़ी थालीमें डालकर एक सा मिला ले । इस मिश्रण को थालीमें ऐसा फैलायें कि बीचमें घी भरनेके लिये गड्ढा जैसा रहे । फिर घी को चूल्हे पर चढ़ाइये । जब यह गलकर काफी गरम हो जाता है तब इसमें से आधा भाग आटेमें चलाये । बाकी घी को फिर चूल्हे पर ही रखिये ताकि वह जम न जाय । घी डाले हुए इस मिश्रणको खूब मिलाइये फिर थोड़ा-थोड़ा करके बाकी घी भी मिला लें । खूब मिल जानेके बाद सारे मिश्रणको ढेरमें इकट्ठा करके हाथोंसे थोड़ा दबा ले ताकि ढेरको ज्यादा हवा लगकर ठंडा न पड़े । फिर इसमें से मिश्रण निकालते हुए अपनी मर्जीके साइजमें गोल लड्डू बना ले । लड्डू बनाते वक्त जमते न दिखें तो मिश्रणमें थोड़ा घी और डाले । यह बेहद स्वादिष्ट है । साथ-साथ इसकी खुशबू तो इतने

कमालकी है कि आप इसे खाये बिना नहीं रह सकती। घी डालने और डिब्बेमें बन्द रखने पर यह एक-डेढ महीने तक रहता है।

चंद्रकांतलु (मूंगदाल बर्फी)

सामग्री

मूंगदाल	१/४ कि.
शक्कर	१/४ कि.
नारियल	१/२
घी	
काजू	
इलायची	

बनानेकी विधि

दालको एक घंटा पानीमें भिगोइये। फिर इसके छिलके आदि निकाल कर साफ कीजिये। दालको थोड़ा पानी डाल कर बारीक पीस लीजिये। इस पीठीमें शक्कर और नारियलके लच्छे डाल कर एक सा मिला लीजिये। किसी स्टेनलेस स्टील और कलईदार चौड़े मुँह वाले पतीलेमें डाल कर मद्धिम आंच पर पकाइये। पकाते समय हलवा की तरह पीठीको लगातार मिलाते चलाते रहे। पन्द्रह बीस मिनिटोंमें पीठोके शक्कर और पानी चाशनी बन जाते हैं और अतिरिक्त पानी भी सोख जाता है। जब पीठीमें नमी बिलकुल न रहे और छूने पर आटा उंगलियोंको न लगे तव इसमें इलायचीका चूर्ण भी छिड़क कर फिर एक बार मिलाइये और पतीलेको नीचे उतारिये।

एक मोटे, सफेद, गीले कपड़ेको किसी पीढे पर फैलाइये। इस कपडे पर पीठीको फैला कर हाथसे उसे १/२ या ३/४ अंगुल मोटाईमें वेल लीजिये। ठडा होने पर त्रिभुजाकार, चतुर्भुज या किसी भी आकारमें टुकड़े काटिये। कढ़ाई में काफी घी डाल कर इन्हें हल्का भूरा रंग आने तक तल लीजिये—बस चंद्रकांतलु तैयार हैं।

पाल आर्दि (आटे की खीर)

सामग्री

चावल का आटा	१/२ कि०
पानी	१ कि०
दूध	१/२ कि०
नारियल	१/२
शक्कर	१/२ कि०
इलायची	६
नमक	चुटकी भर

बनानेकी विधि

पानीमें नमक घोल कर चौड़े मुंहवाली पतीलेमें उबालिये। उबलते पानीमें ३/४ भाग आटा चलाकर खूब मिलाते रहिये। जब यह मिश्रण गोलियां बनाने लायक गाढ़ा, सख्त बन जाता है तब बर्तन उतारिये। मिश्रणको किसी थाली या दूसरे बर्तनमें बदलकर ठंडा होने दीजिये। फिर इसे चकलीकी सहायतासे लंबे कुछ मोटे पलीते जैसा बनाइये। इन्हींको तालिकलु कहते हैं चकली न होने पर पीढ़े पर ही हाथसे बना सकती हैं। एक कप दूध अलग रख कर बाकी दूध और पानी मिलाकर उबालिये। इसमें नारियलके लच्छे, शक्कर और तालिकुल डालिये। काफी पकाकर जब यह मिश्रण खदबदाने लगता है तब उसमें बाकी आटा भी चलाकर आठ-दस मिनट और उबलने दीजिये। उतारनेके पूर्व इलायचीका चूर्ण भी मिला दीजिये। बस 'पाल आर्दि' तैयार है। चाहते हों तो पानी का अंश कम करके उसके स्थान पर दूध भी इस्तेमाल कर सकती हैं।

(खाद्य विज्ञानसे साभार)

* * *

यह बहुत बुरी बात है शीला जब मैंने तुमसे कहा था कि यह बात किसीसे न कहना, तो तुमने यह लक्ष्मीसे क्यों कही ?"

"कसम ले ले रीता, मैंने वह बात लक्ष्मीसे कही ही नहीं, मैंने तो सिर्फ रेणुको बतायी थी, उसके सिवा... ।"

समय-पूर्व जन्म लेने वाले बच्चे और उनकी समस्याएँ

--श्री शिशिर पाठक--

समय-पूर्व होने वाले अधिकांश बच्चे मृत्युके शिकार हो जाते हैं। विशेषज्ञोंका मत है कि चूंकि ऐसे बच्चोंकी देखभाल नहीं हो पाती, इसलिए वे किसी अभावके कारण मर जाते हैं। सामाजिक अन्ध विश्वास और प्रसवके समय के गलत रीति रिवाजोंके कारण भी ऐसे बच्चे जीवित नहीं रहते।

ऐसे बच्चोंकी मृत्यु अधिकतर प्रसवके एक-दो सप्ताह में हो जाती है। हमारे देशके स्त्री-पुरुषोंमें ऐसा अन्ध विश्वास है कि समय पूर्व हुए बच्चे प्राकृतिक रूपसे जीवित नहीं रहते लेकिन यह बिल्कुल गलत है। यदि इन बच्चोंकी उचित देखभाल की जाय और चिकित्सा सुविधा उपलब्ध रहे तो यें स्वस्थ व हृष्टपुष्ट बने रहते हैं।

समय-पूर्व होने वाले प्रसवका कारण जानना आवश्यक है। इसके अनेक कारण हो सकते हैं। गर्भावस्थामें विकृति या गलत खान-पान, आकस्मिक दुर्घटना, अधिक परिश्रम या मानसिक उत्तेजनासे प्रसव समय पूर्व हो सकता है। आकस्मिक दुर्घटनाका इसमें विशेष हाथ रहता है क्योंकि भारी बोझ उठाने सीढ़ियाँ उतरने चढ़नेसे गर्भाशय पर दबाव पड़ता है और प्रसव समय पूर्व हो जाता है।

तुरन्त अस्पताल ले जायें

यदि किसी स्त्रीके समय-पूर्व प्रसव पीड़ा हो तो उसे तुरन्त नजदीकके अस्पतालमें ले जाना चाहिए क्योंकि अस्पतालमें ही अधिक सुख-सुविधा मिल सकती है। ऐसे प्रसव भी सरलतासे नहीं हो पाते। ऐसी हालतमें महिला चिकित्सकका नजदीक रहना आवश्यक है ताकि समय पर आपरेशनकी सुविधा मिल सके। समय-पूर्व होने वाले बच्चोंको अस्पतालमें भी अधिक समय तक नहीं रखा जा सकता, इसलिए घरमें रखनेके लिए आपको उसके लिए कुछ विशेष परिवर्तन करने होंगे। सर्दी और गर्मीके मौसममें उसके रहनेके लिए अलग-अलग प्रबन्ध करना आवश्यक है।

शीत ऋतुमें उत्पन्न हुए बच्चोंकी सुरक्षाके लिए अधिक सावधान रहना पड़ता है क्योंकि शिशुकी खाल अत्यन्त कोमल होती है। दूसरे, शारीरिक कमजोरीके कारण उसे जल्दी ठंड लग सकती है। हल्की सी ठंड उसे विभिन्न रोगोंका शिकार बना सकती है।

शीत ऋतुमें सुरक्षाके लिए यह आवश्यक नहीं है कि बच्चेको अधिकसे अधिक गर्म वस्त्रोंमें रखा जाय। अधिक गर्म वस्त्रोंसे शिशुको हानि भी हो सकती है क्योंकि ऐसे बच्चोंको जितनी जल्दी सर्दी लगता है, उतनी ही जल्दी वे गर्मीसे भी परेशान हो सकते हैं। अधिक सर्दी या गर्मी दोनों ही अवस्थाओंमें उसे हानि हो सकती है।

शीतऋतुमें कमरेको २२° से ३०° सेंटीग्रेड तक गर्म रखना आवश्यक है। कमरेकी खिड़कियों पर पर्याप्त शीशे लगे रहने चाहिए। खिड़कियों पर पर्दे भी रहने चाहिए ताकि बाहरकी ठंडी वायु सीधे अन्दर न आ सके। तापमानके लिए कमरेमें पत्थरके कोयलोंकी अंगीठीका कभी प्रयोग न करें, इससे अधिक हानि पहुँच सकती है। लकड़ी के खूब जले कोयलोंको थोड़े तापमानके लिए बिस्तरके नीचे रखा जा सकता है। लेकिन इससे भी बिस्तरके अधिक गर्म हो जानेका भय रहता है। कमरेके उचित तापमानके लिए बिजलीके हीटर निश्चित मात्रामें जलाएं। यदि सम्भव हो सके तो कमरेको भाप द्वारा गर्म रखें।

शुद्ध वायु मिलती रहे

अधिकांश घरोंमें बाहरसे आने वाली वायुका प्रवेश बन्द कर दिया जाता हैं साथ ही अन्दरकी वायु भी बाहर नहीं निकल पाती। इससे कमरा तो गर्म हो जाता है। लेकिन वायु दूषित होनेसे स्वास्थ्यको बहुत हानि होती है। दूषित वायुमें नन्हें शिशुको सांस लेनेमें बहुत कठिनाई

होती है। कई महिलाएं गर्म वस्त्रोंसे इतना शिशुको ढांप देती हैं कि वह खुली वायुमें सांस नहीं ले पाता है, कई बार ऐसी परिस्थितिमें बच्चेकी सांस भी रुक सकती है ! इसलिए शिशुका मुँह खुला रखना चाहिए ताकि उसे सांस लेनेमें कोई कठिनाई न हो। दरवाजे, खिड़कियोंको खोल कर उन पर परदे डाल कर रखें, इससे स्वच्छ वायुका आवागमन ठीक रहेगा।

जन्मके समय दो कि० ग्राम वजन वाले बच्चेको अधिक गरम कपड़ोंमें लपेट कर रखना भी ठीक नहीं। इससे उसे हाथ-पांव हिलानेमें बहुत कठिनाई होती है। बिस्तर पर शिशुको गर्म वातावरणमें रखनेके लिए गर्म पानीकी बोतलें रखनी चाहिए। इन बोतलोंसे ७०° सेंटीग्रेड तक तापमान रखना चाहिए।

समय-पूर्व हुए बच्चोंको अधिक गर्मीकी आवश्यकता होती है लेकिन थोड़ी सी अधिक गर्मी उन्हें हानि भी पहुँचा सकती है। जब बच्चेको पसीना आने लगे तो गर्मी कुछ कम कर देनी चाहिए। बच्चोंकी त्वचा बहुत कोमल होती है, इसलिए नहलाते समय, गोदमें उठाते समय अधिक सावधानीकी आवश्यकता होती हैं। ऐसे बच्चोंको गोदमें लेनेसे पहले अपने हाथोंको पूरी तरह स्वच्छ कर लेना चाहिए नहीं तो बच्चेको कोई भी रोग व चर्मविकार हो सकता है। धूल-मिट्टीसे सने हाथोंसे उठाने पर बच्चेको गन्दगी लग सकती है। अधिक ठंडे हाथोंका स्पर्श भी बच्चेको परेशान कर सकता है, इसलिए शीत ऋतुमें बच्चेको उठाते समय किसी कपड़ेका उपयोग करना चाहिए अथवा हाथोंको कुछ गर्म कर लेना चाहिए।

समय पूर्व हुए बच्चोंकी नाल गिरनेके बाद नहलाना चाहिए, इसके लिए एक-दो सप्ताह तक उसके लिए उबले हुए कुनकुने पानीका उपयोग करें पानीका तापमान ३८° सं० रखा जा सकता है।

बच्चेको नहलानेके लिए अच्छी स्वच्छ रूईका उपयोग करें। बच्चेको सीधे साबुन मल कर नहीं नहलाएँ। पहले अपने हाथ पर साबुन लगा लें, फिर उसे बहुत धीरे-धीरे बच्चेके शरीर पर मलें और हल्के पानीसे नहलाएँ। बच्चेके शरीर पर देर तक साबुन नहीं मलें क्योंकि उसकी त्वचा बहुत कोमल होती है तथा साबुन मलनेसे त्वचा अधिक शुष्क हो जाती है बच्चेके लिए ग्लिसरीन युक्त साबुनका उपयोग करें। सप्ताहमें एक-दोबार ही बच्चेको साबुनसे नहलाएं।

बच्चेको नहलानेके बाद पहलेसे हल्के गर्म किए तौलिए से उसका शरीर पोंछें। इसके लिए दो बातोंका विशेष ध्यान रखें। शरीरको रगड़ कर कभी नहीं पोंछें तथा अधिक मुलायम तौलिएका ही उपयोग करें। हल्के तौलिए से हल्के-हल्के पोंछना चाहिए। शरीर पोंछनेके बाद अंगोंके जोड़ोंमें तेल अवश्य लगाएँ।

आहार पर विशेष ध्यान दें

बच्चेके आहार पर ध्यान देना बहुत आवश्यक है क्योंकि ऐसे बच्चेको दूसरे स्वस्थ बच्चोंकी अपेक्षा अधिक पौष्टिक भोजनकी आवश्यकता पड़ती है। लेकिन ऐसे बच्चे अधिक मात्रामें भोजन पचा भी नहीं पाते, इसलिए बच्चेको थोड़ा-थोड़ा कई बार करके भोजन देना चाहिए ताकि बच्चे उसे सरलतासे पचा सके। बच्चेको सुपाच्य भोजन तरल रूपमें देना चाहिए। ऐसे शिशु अधिक समय तक स्तनपान भी नहीं कर सकते। इसलिए बच्चेको थोड़ा-थोड़ा स्तनपान कराएँ तथा स्तन न कराते समय हल्के हाथसे स्तन दबाकर बच्चेको दूध पीनेमें सहायता करें। बच्चेको बिस्तर पर लिटाकर कभी दूध न पिलाएँ, इससे बच्चेको हानि पहुँचती है। बच्चेको गोदमें लेकर, थोड़ा-सा सिर उठाकर स्तनपान कराएँ। माँ का दूध यदि पर्याप्त मात्रामें नहीं हो तो बच्चेको गायका दूध पिलाएँ। तीन महीनेके बच्चेको दही, छेना व सूखे खाद्य पदार्थोंका मिश्रण खिलाना चाहिए। तीन-चार महीनेके बच्चेको फलोंका रस और ग्लूकोस मिला पानी पिलाएँ। बच्चेके विकासमें कैल्शियमकी बहुत जरूरत रहती है, अधिकांश घरोंमें एक-दो मास तक बच्चों को पानी नहीं पिलाते, यह बहुत हानिकारक बात है। पानीकी कमीसे बच्चा सूखे रोगका शिकार हो जाता है।

भारत में जन-शक्ति का विकास

—श्री पी० एन० लूथड़ा—

किसी भी देश का प्रारब्ध इस बात पर निर्भर है कि वहाँ के शिशुओं और बच्चों का लालन-पालन किस प्रकार होता हैं। इस बात के लिए अब अधिक जागरुकता दिखलाई पड़ रही है कि शिशु कल्याण आर्थिक विकास कार्यक्रम का एक आन्तरिक और महत्वपूर्ण भाग बनाया जाय। इस प्रस्तावको गम्भीरता के साथ प्रतिपादित करते हुए भारत के प्रथम प्रधानमन्त्री श्री जवाहरलाल नेहरू ने ५ दिसम्बर, १९५२ को शिशु कल्याणपर अन्तरराष्ट्रीय सम्मेलन का उद्घाटन करते हुए कहा था—

"कदाचित यह तथ्य, कि अन्ततोगत्वा हर काम जनशक्ति पर निर्भर करता है, गुम हो जाता है जब हम अपने विकास के लिए बड़े-बड़े कल-कारखानों और भारी यन्त्रोंके सन्दर्भमें योजनाएँ बनाते हैं......। कलकारखानें और यन्त्र बहुत महत्वपूर्ण हैं और यह हमारे पास होने चाहिए। किन्तु अन्त में हमारी मानव शक्तिका महत्व ही सर्वोपरि हो जाता है और जब मानव शक्ति ही सर्वोपरि है तब शिशु का विकास और लालन पालन अति महत्वपूर्ण विषय बन जाता है।"

शिशु विकास कार्यक्रममें तीन इकाइयों को आपसमें मिलकर सहायक भूमिका निभानी है। यह है—

(१) सरकारी कार्यक्रम जो शिशु विकास की राष्ट्रीय योजना को उच्च प्राथमिकता प्रदान करे। सरकारी मशीनरीको पहल करनी चाहिए और इस योजना के कार्यान्वयन के लिए आवश्यक साधन जुटाने चाहिए।

(२) स्वयं सेवी संस्थाओं को चाहिए कि वह सरकार के साथ सहयोग करते हुए देश के विभिन्न क्षेत्रोंमें इस योजनाको लागू करने में मदद करे।

(३) परिवारों को शिशु विकासके प्रति एक बार पुनः सजग तथा सचेष्ट बनाना चाहिए।

इस कार्यक्रमके पूरा करनेके निमित्त शासन ने कई उल्लेखनीय कदम उठाये हैं। शिशु कल्याणके लिए दृढ़ संकल्प किया हैं तथा इस निमित्त शिशु कल्याणके राष्ट्रीय बोर्डका गठन किया जाने वाला है। इस प्रकार नेतृत्वका सृजन होगा तथा कार्यक्रम को सर्वोपरि प्राथमिकता मिलेगी। चूँकि शिशु कल्याण कार्यक्रम एक बहुमार्गीय उपाय है अतएव समाज कल्याण विभाग को स्वास्थ्य, शिक्षा, समाज, विकास कृषि, योजना आयोग आदि अनेक सम्बन्धित मंत्रालयों का मार्ग दर्शन करना होगा। इस उद्देश्य की पूर्ति हेतु एक एक अन्तर मन्त्रालय समन्वय समिति को स्थापना पर विचार किया जा रहा हैं। केन्द्र से गांवों तक जहां वास्तविक रूप में शिशु कल्याण का कार्य होना है, सन्देश पहुँचाने के लिए राजस्तर पर अन्तर मन्त्रालय समितियाँ गठित की जायेंगी तथा प्रत्येक जिलेके मुख्यालयों तथा खण्ड स्तर पर भी ऐसे समितियों का निर्माण किया जायेगा। समाज कल्याण विभाग के नये कार्यकर्त्ता समन्वय स्थापित करनेके लिए इन राज्य, जिला तथा खण्ड स्तरकी समितियोंमें काम करेंगे। इस प्रकार शिशु कल्याण को इस राष्ट्रीय नीतिको विकेन्द्रित करके गाँव-गाँव और कस्बों-कस्बों तक पहुँचाया जायेगा।

अपने उत्तरदायित्वोंको समझने और पूरा करनेके लिए इस क्षेत्रमें काम पूरा करने वाली विभिन्न स्वयं सेवी संस्थाएँ शासन के साथ सम्पर्क बनाये रखेगी। इन संस्थाओंको धन, साज-सामान तथा प्रशिक्षण सुविधाएँ दी जायेंगी ताकि वह सरकारी योजनाओंके साथ ताल तेल बिठाकर इस बृहत राष्ट्रीय कार्य-क्रम की एक रूपता बनाये रखें।

जहाँ तक परिवारों को उनके शिशु कल्याण सम्बन्धी उत्तरदायित्वों से अवगत करानेका प्रश्न है, स्थिति सन्तोषजनक है। भारतोय बच्चों को प्यार करते हैं, तथा वह अपने बच्चों का विकास और उन्नति चाहते हैं। कमी केवल इतनी है कि गाँव के परिवार शिशु कार्यक्रमोंकी समग्रता से अपरिचित हैं। परिवारोंको उनके मातृत्व-पितृत्वके उत्तरदायित्वोंसे अवगत करने की आवश्यकता

है। इस बात का विशेष महत्व है कि माताको गर्भावस्थाके समयसे ही उसके कर्तव्य समझायें जाय तथा उसे जागरूक बनाने में मदद दी जाय।

शिशुके विकासमें जन्मसे लेकर ६ वर्ष तक की आयुकी अवधि बड़ी महत्वपूर्ण है। उसमें तेजीसे शारीरिक-मानसिक विकास होता है। अनुसंधानों से पता चला है कि इस अवधि में विपरीत प्रभाव शिशुके विकासको जकड़ देते हैं तथा कभी-कभी स्थिति दुष्कर हो जाती है।

इस अवधि में बच्चे तमाम खतरनाक वातावरणमें से होकर गुजरते हैं। उनकी शारीरिक, खुराक सम्बन्धी, शैक्षिक मनोरंजन तथा समाज कल्याण सम्बन्धी आवश्यकताओंका एक दूसरे से गहरा सम्बन्ध होता है। अच्छी प्रकार से योजना बनाकर एक संगठित तरीके से ही यह आवश्यकताएं पूरी की जा सकती हैं। इस तरीके को "शिशु कल्याणके आन्तरिक उपाय" के नाम से जाना जाता है। इस प्रकारकी जो संयुक्त राष्ट्र संघके अन्तरराष्ट्रीय शिशु कार्यक्रम के अन्तर्गत उपलब्ध कराई जाती है उन्हें "शिशु सुधार की आन्तरिक सेवाएं" कहते है।

"पूर्व विद्यालय शिशु" अर्थात् छः वर्ष तक की आयुके विकासके लिए तीन प्रकारके कार्यक्रम चलाये जाते है जा कि स्वास्थ्य, खुराक और शिक्षासे सम्बन्धित है।

शिशुके सर्वांग विकासको इस अवधि में स्वास्थ्य और खुराक सम्बन्धी नीतियाँ ऐसी होनी चाहिए जिससे रोगोंकी रोकथाम हो सके और शिशुको निर्धारित स्तरके खाद्य पदार्थ मिल सकें।

शिशुके व्यक्तित्वके पूर्ण विकासके उद्देश्यसे ही शिक्षा सम्बन्धी नीति प्रेरित होनी चाहिए।

जहाँ तक सामाजिक नीतिका प्रश्न है उसका घर और सामाजिक वातावरण ऐसा हो जिसमें उसे सुरक्षा तथा स्नेह मिले।

यह सभी कार्यक्रम बच्चोंके शारीरिक और मानसिक विकास के उद्देश्य से प्रेरित है।

पूर्व-विद्यालय शिशुके लिए शिक्षा व्यवस्था किस प्रकार की हो, यह विवादका विषय है। कुछ यह दलील देते है कि उन्हें प्राइमरी शिक्षाके लिए तैयार किया जाय। कुछ दूसरों का मत है कि इस आयुमें बच्चे पर संस्थागत अध्ययनका बोझ न डाला जाय। यह प्रश्न अत्यन्त महत्वपूर्ण है और इस आयु के बच्चोंके लिए शिक्षा नीति क्या हो उस पर हमें खुले दिमाग से ही कोई कार्यक्रम निर्धारित करना चाहिए।

वह बहुत स्पष्ट बात है कि शिशु कल्याण केन्द्र केवल ऐसे ही न हो कि जहाँ बच्चोंको छोड़ा जा सके। उनमें जहाँ घरके वातावरण जैसी सभी बातें होनी चाहिए। वहाँ इससे कुछ ज्यादा आकर्षण भी प्रदान किये जाने चाहिए। शिशु केन्द्रों में बच्चों को मुक्त रूप से खेलने देना चाहिए और मुक्त रूपसे ही उन्हें सृजनात्मक कार्य करने देना चाहिए।

लगनके साथ कठिन अभ्यास करके पाठ करानेके स्थान पर उनमें स्वतः स्मरण करने की आदत डालनी चाहिए। यहाँ शिशुको यह अनुभव भी होंगे कि समाज में किस प्रकार स्थान बनाया जाय। इतना ही पर्याप्त नहीं है कि शिशु अपने उम्रके साथियोंके साथ खेले। उसे अपने से अधिक आयु के बच्चोंके साथ भी खेलना चाहिए। अतएव शिशु विकास केन्द्रके लिए किसी प्राइमरी स्कूल की समीपता एक उत्तम व्यवस्था होगी।

प्रश्न यह हैं कि शिशु को किस प्रकार के समाजके साथ गुजर करने के लिए तैयार किया जाय। आजके समाजके लिए अथवा सन् २००० ईस्वी में जो समाज होगा—उसके लिए। समस्त संसार में आज के नवयुवक जो विद्रोह मचा रहे हैं उससे स्पष्ट है कि हमारे आज के समाज के सिद्धान्तों को नयी पीढ़ी ने स्वीकार नहीं किया है। किन्तु वह अथवा हम जो आने वाली पीढ़ी के माता-पिता हैं, आखिर चाहते क्या हैं? हमें तो केवल इतना मालूम हैं कि आज हम जिस शिशु को पाल-पोस रहे हैं, वह आगे चलकर एक ऐसे समाज में जियेगा जहाँ साधन घटते जायेंगे तथा आवश्यकताएँ बढ़ती जायँगी। शिशुओंके लिए योजना उपरोक्त तथ्य को ध्यान में रखकर ही बनाई जानी चाहिए।●

रोजी कमाने वाले बच्चे और उनकी समस्याएँ

—श्री सरोज अग्रवाल—

(गतांकसे आगे)

दुकानों और होटलों में काम करने वाले बच्चे

बच्चों को रोजगार मिलने का दूसरा बड़ा स्थान दुकानें, होटल एवं नाटक अथवा नृत्य कम्पनियाँ रहती हैं। छोटी-छोटी दुकानों और जलपान गृहों में तो बच्चों को सुबह से शाम तक साँस लेने की फुर्सत नहीं मिलती। यहाँ भी गन्दी गालियों और भद्दे मजाकों का दौर कुछ ही कम होता है। नाइट क्लबों या होटलों में काम करने वाले बच्चों में ठाट-बाट का जीवन व्यतीत करने की उत्कट अभिलाषा पनपती है। ये क्लब बड़े लोगों की काम पिपासा शांत करने के केन्द्र रहते हैं। बच्चों में भी व्यभिचार पनपता है। शराब की दुकानों और रेस्तराओं में काम करने वाले बच्चे सब कुछ समझते हैं। परिणाम यह होता है कि उनमें बुरी आदतें आ जाती हैं और वे अपराधी बन जाते हैं।

घरों में छोटे बच्चों को खिलाने के लिए अथवा घर का छोटा-मोटा काम निबटाने के लिए भी प्रायः बच्चों को नौकर रख लिया जाता है। यह रोजगार प्रायः स्वस्थ उच्च मध्यम वर्ग के परिवारों में मिलता है। यहां परिस्थिति भिन्न रहती हैं। जिस परिवार में बच्चा नौकरी करता है, उस परिवार के वातावरण, मालिक के व्यवहार और बच्चों की प्रवृत्तियों आदि पर यहाँ सब कुछ निर्भर करता है। प्रायः नौकरी करने वाले बच्चे अभावग्रस्त घरों से आते हैं। दूसरे, परिवार में आकर उनकी आँखे खुलती है। एक से एक बढ़िया खाने और पहनने की चीजें देखते हैं तो मन ललचा उठता है। आँख बचाकर देखने की कोशिश करते हैं कि कैसी लगती हैं। धीरे-धीरे यही आदत चोरी में बदल जाती है। सभी बच्चे ऐसा करते हों ऐसी बात भी नहीं है। किसी-किसी बड़े परिवार के बच्चे में भी बड़ी गंदी आदतें होती हैं। इन्हीं बच्चों के बीच रहकर ये, भोले-भाले गरीब परिवार के बच्चे भी बिगड़ जाते हैं।

कभी-कभी बड़े और संभ्रांत कहलाने वाले परिवारों में भी इतना भ्रष्टाचार चलता है कि बस कहा नहीं जा सकता। इन्हीं अपराधों पर परदा डालने के लिए बच्चों की नियुक्ति की जाती है। बहाना छोटे काम-काज का बनाया जाता है। एक सेठानी जी ने अपने यहाँ एक नौकर रखा। वह ११-१२ वर्ष का बच्चा कुछ ही दिनों में सेठ और सेठानी दोनों का विश्वासपात्र बन गया। एक दिन सेठानी उसे क्या समझा रही थी, आप भी सुनिए।

"देख रे श्यामू, तू बाहर दरवाजे पर बैठा रहना। कहीं जाना मत। और देख सेठ जी घर आएं तो तू दौड़कर सीटी बजाता हुआ मुझे खबर कर देना। हाँ, कुछ समझा।"

"हाँ, बहू जी समझ गया" कहकर उसने सीटी बजाकर दिखा दी। "शाबास! और देख श्यामू हमारे घर और कौन आता हैं यह सेठ जी को मत बताना कभी भी।" सेठानी ने समझाया।

अब श्यामू अपनी मालकिन के कहने के मुताबिक चलने लगा। झुकाव सेठानी की तरफ इसलिए था कि खाने को उन्हीं से मिलता था। काफी दिनों तक सेठानी के यहाँ आने जाने वालों का क्रम चलता रहा। श्यामू को घर की नौकरानी ने भी अपना मोहरा बनाया। एक दिन सेठानी के बहुमूल्य आभूषण गायब हो गये। शत-प्रतिशत काम श्यामू का ही था। अकेले में सेठानी ने उससे पूछा भी: वह साफ मुकर गया। सेठ जी से कैसे कहे? अगर इसने बात खोल दी तो? अभी तो जेवर से ही बीती है। इज्जत पर भी बीतेगी। बेचारी हाथ मलती रह गई। श्यामू अच्छा खासा बड़ा चोर होकर निकला वहाँ से।

आजकल समाज में अभिजात अर्थात् सफेदपोश अपराधियों का एक ऐसा वर्ग पनपता जा रहा है कि जो बड़े-बड़े अपराध करने में अबोध बच्चों का उपयोग करता है। उदाहरण के लिए स्मगलिंग का धन्धा करने वाले लोग माल को इधर से उधर पहुँचाने के लिए बच्चों का उपयोग करते हैं। उन्हें अच्छी रकम पारिश्रमिक के रूप में देते है। बच्चे स्वभावतः बड़े जिज्ञासु होते हैं। सब कुछ समझने लगते

हैं और धीरे-धीरे बड़े स्मगलर हो जाते हैं। इतना ही नहीं, अन्य राष्ट्रद्रोही कामों में भी सिद्धहस्त हो जाते हैं।

इन सबसे यह स्पष्ट हो जाता है कि बच्चे जहाँ रोजी कमाने जाते हैं वहाँ का वातावरण उनके बिलकुल अनुकूल नहीं होता। अब देखना यह है कि इस प्रकार के बच्चों की क्या-क्या समस्याएँ हैं ?

कठोर श्रम विकास में बाधक

रोजी कमाने वाले बच्चों की सबसे प्रमुख समस्या है कि उनसे बहुत अधिक श्रम लिया जाता है। खेल कूद आदि तो वे भूल ही जाते हैं, उन्हें दम लेने की मोहलत भी मालिक नहीं देना चाहता। परिणाम यह होता है कि उनके विकास में बहुत बाधा पड़ती है। शारीरिक और मानसिक दोनों प्रकार का विकास अवरुद्ध हो जाता है।

इसके अलावा इन बच्चों की काम न करने और छोटी मोटी गलतियाँ हो जाने पर अमानुषिक ढंग से प्रायः पीटा भी जाता है कभी-कभी तो यह पिटाई दिल दहलाने वाली होती है। इस कारण ये बच्चे इतने ढीठ हो जाते हैं कि कठोर से कठोर दंड से भी नहीं डरते। दंड का भय न होना भी समाज की जड़ों को खोखला कर डालता है।

इस प्रकार के बच्चे प्रायः शिक्षा से वंचित रह जाते हैं। अशिक्षित मनुष्य पशु से भी गया बीता होता है। बहुत ही कम ऐसे बच्चे होते हैं जो नौकरी करने के साथ ही साथ कुछ पढ़ाई-लिखाई भी कर लें। कारण स्पष्ट है कि उन्हें पढ़ाई-लिखाई के लिए अवकाश ही कहाँ मिल पाता है। परिणाम होता है कि वे अच्छे नागरिक नहीं बन पाते। दूसरी ओर शिक्षा के अभाव में वे कुशल श्रमिक भी नहीं हो पाते। इससे भविष्य में उनकी आय कम होती है। उन्हें निर्धनता कभी नहीं छोड़ती और वे समाजविरोधी कार्य करने लगते हैं।

बुरी आदतों का सूत्रपात

ऐसे बच्चों का काम करने का वातावरण प्रायः ऐसा रहता है कि उनमें बुरी आदतों का समावेश होना आरम्भ हो जाता है। यदि उन्हें अच्छा संग-साथ मिले, अच्छा व्यवहार मिले, अच्छा वातावरण मिले तो वे अपनी जीविकार्जन करते हुए भी अच्छे नागरिक बन सकते हैं, व्यसनों से दूर रह सकते हैं। परंतु जैसा कि ऊपर कहा जा चुका है कि वयस्क श्रमिकों के साथ काम करने वाले बाल श्रमिक धूम्रपान करने और भद्दे मजाक करने को प्रायः विवश हो जाते हैं।

यदि हमें बाल अपराधियों की बाढ़ को रोकना है और समाज को स्वस्थ एवं योग्य नागरिक प्रदान करना है तो निश्चय ही रोजी कमाने वाले बच्चों की ओर विशेष ध्यान देना होगा एवं उनकी समस्याओं का निदान करना होगा।

समस्या के समाधान हेतु दो प्रकार के उपाय सुझाये जा सकते हैं ;

१. योजनाबद्ध दीर्घकालीन उपाय, २. तुरन्त प्रभावी उपाय।

प्रथम प्रकार के उपायों के अन्दर सर्वप्रथम एक विस्तृत सर्वेक्षण कराए जाने की आवश्यकता है। इसके परिणामों के आधार पर एक समन्वित एवं पूर्ण योजना तैयार की जाय। सर्वेक्षण में बच्चों के रोजी कमाये जाने के कारणों पर विशेष जोर दिया जाय। इसके बाद ही पृथक् कारणों से रोजी कमाने को बाध्य बच्चों की समस्या सुलझाने हेतु पृथक्-पृथक् उपाय किये जायँ।

निर्धनता पल भर में तो दूर की नहीं जा सकती। अतः ऐसे बच्चे जो परिवार की निर्धनता के कारण नौकरी करने को विवश होते हैं, उनके परिवार के भरण पोषणकी उचित व्यवस्था करनी चाहिए। उन्हें परिवार की अतिरिक्त आमदनी के सुझाव एवं अवसर प्रदान किए जाएं। दूसरे शब्दों में ऐसी परिस्थितियाँ पैदा की जाएं कि बच्चोंके लिए रोजी कमानेका अवसर होन आये। इन बच्चों की शिक्षा का समुचित प्रबन्ध किया जाना आवश्यक है।

मनोवैज्ञानिक कारणों से रोजी कमाने की ओर प्रवृत्त बच्चोंको सुधार संस्थाओंमें भेजा जाए। वहाँ उनमें शिक्षाके प्रति रुचि उत्पन्न करनेके प्रयास किए जाएँ। इसका परिणाम यह होगा कि एक ओर तो समाज में बाल अपराधियोंकी संख्या कम हो जाएगी और दूसरी ओर वे बच्चे अच्छे नागरिक बन सकेंगे।

079228

दूसरे प्रकारके उपायोंको अपनानेके लिए सम्पूर्ण समाज का सहयोग अपेक्षित है। इस समस्याके समाधानके लिए कोई क्रांतिकारी कदम तो फिलहाल उठाया नहीं जा सकता। इससे तो दूसरी समस्याएँ और उग्र रूप धारण कर लेंगी। उदाहरणके लिए यदि मान लें कि बिना और कोई उपाय किये सरकार यह कदम उठाती है कि कहीं किसी स्थान पर भी बच्चे नौकरी करते अथवा आजीविका कमाते नहीं पाए जाएंगे तो निश्चय ही लाखों परिवारों के भरण-पोषणकी समस्या सामने आ जाएगी दूसरी तरफ श्रम महँगा हो जाएगा और फिर मूल्यवृद्धिका चक्र शुरू हो जायगा। अतः नीचे कुछ ऐसे उपाय प्रस्तुत किये जा रहे हैं जो वर्तमान परिस्थितियों में ही रोजी कमाने वाले बच्चों की समस्याओंको आंशिक रूपसे हल करनेमें अवश्य सहायक होंगे।

१. कारखानों में यथासम्भव बच्चों को रोजगार न दिये जाएँ। छोटे कारखानोंमें अगर बच्चोंसे छोटे-मोटे काम लिए ही जाएँ तो उनके काम करनेका स्थान अन्य मजदूरोंसे पृथक् होना चाहिए ताकि वे उनके सम्पर्कमें आकर गन्दी आदतोंके शिकार न हो सकें। इसके अलावा यह भी जरूरी है कि उनके लिए ताजगी प्रदान करने वाले बाल मनोरंजन के साधन सुलभ किये जाएँ।

२. समस्याके निदानके लिए दुकानों व जलपान गृहोंके मालिकों को भी मानवीय दृष्टिकोण अपनाना पड़ेगा। उन्हें चाहिए कि वे बच्चोंसे कठोर श्रम न लें। साधारणतया उनके प्रति अपने बच्चों जैसा व्यवहार करें न कि मजदूरों जैसा। उन्हें बिगड़नेसे बचानेके प्रति सजग रहें। किसी भी व्यसन की सूचना मिलते ही उनके अभिभावकोंको तुरन्त सूचना दें। उन्हें एक बातका सदा ध्यान रखना चाहिए कि उनकी नौकरीका पैसा सदा उनके अभिभावकों को ही दें।

३. होटलों, बार, वेश्यालयों और नाटक कम्पनियों आदि में बच्चों की नौकरी पर पूर्ण प्रतिबन्ध लगा दिया जाय। यदि ऐसे स्थानों पर किसी बच्चेको देखा जाय तो मालिकको कड़ा दंड देने की व्यवस्था की जाय। इन स्थानों पर बच्चों की नौकरीके प्रतिबन्ध से निश्चय ही समाजको काफी लाभ होगा।

४. घरेलू नौकर रखने वाले परिवारके बच्चोंके प्रति कोई अन्याय न करें। उनकी शिक्षाकी यथासम्भव व्यवस्था करें। उनकी छोटी-छोटी गलतियों या उनके द्वारा टूट-फूट आदि हो जाने पर उन्हें बेरहमी से न पीटें। उन पर किसी भी प्रकारका आरोप लगाते समय पहले काफी सोच-विचार कर लें। यह ध्यान रखें कि उनमें किसी प्रकार भी अपराध प्रवृत्ति न पनपने पाये। स्वयं या परिवारके बच्चे जो कुछ खाएँ, उसका कुछ भाग इन नौकर बच्चोंको अवश्य मिलना चाहिए, अन्यथा चोरीकी प्रवृत्ति पनप सकने का पूरा भय है। समाज विरोधी कार्य करने अथवा अपने अपराधों पर पर्दा डालने के लिए इन निरीह बच्चों को अपना चौकीदार कदापि न बनाएं।

५. सफेदपोश अपराधियोंके चंगुलसे भी बच्चोंको छुड़ाना अत्यन्त आवश्यक है क्योंकि प्रायः देखा गया है कि इनके साथ काम करने वाले बच्चे आगे चलकर वही पेशा अपना लेते हैं और समाज में ऐसे अपराधियोंकी संख्या कम होनेके बजाय बढ़ती ही जाती है। अतः जब कभी भी किन्हीं ऐसे अपराधोंका भंडाफोड़ हो तो उनके साथ काम करने वाले बच्चों को उनके चंगुलसे छुड़ाया जाए। इसके साथ ही इन अपराधियों पर बच्चोंको बिगाड़नेका आरोप लगा कर इन्हें कठोर दण्ड दिया जाय।

* * *

तुम नीलमसे शादी करना चाहते थे न ?"

"चाहता तो था, पर असफल रहा।"

"क्यों ? क्या तुमने अपने मामूजानके बारेमें उसे नहीं बताया, जिनकी बेशुमार दौलतके एक तुम्हीं वारिस हो ?"

"बताया तो था।"

"हुँह ! तब तो नीलम बेवकूफ है। उसे तुमसे ब्याह कर ही लेना चाहिये था।"

'वह बेवकूफ नहीं। अब वह मेरी मामी है।"

* * *

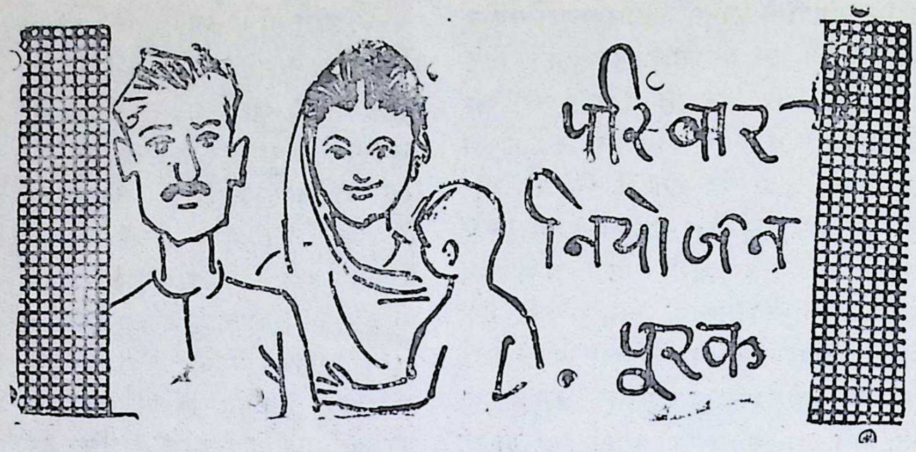

परिवार नियोजन की उपलब्धियाँ

—डॉ० जी० सी० लोढ़ा—

१—जनसंख्या वृद्धि की समस्या पूरे विश्व की समस्या रहो है। हमारे देश में जब यह एक समस्या मात्र ही नहीं बल्कि डर यह है कि यह भारी विपत्ति का कारण भी बन सकती है।

२—जनसंख्या की दृष्टि से भारत विश्व का दूसरा सबसे बड़ा राष्ट्र है। इसकी जनसंख्या विश्व की सम्पूर्ण जनसंख्या का १४ प्रतिशत है। और यह गति २४ प्रतिशत की दर से बढ़ रही है। इस प्रकार आज विश्व के प्रत्येक सात व्यक्तियों में एक भारतीय है।

३ –प्रो० मोरलैंन्ड के अनुमान के अनुसार सन् १९०० में भारत की जनसंख्या केवल १३ करोड़ थी, इसके लगभग २५० वर्ष बाद यानी सन् १८५० में भारत की जनसंख्या १३ करोड़ से बढ़कर १७ करोड़ हो गयी। २५० वर्षों में जनसंख्या में चार करोड़ की वृद्धि हुई। यह विशेष वृद्धि नहीं है। छोटी सी इस वृद्धि दर का कारण उस समय अधिक जन्म दर के साथ-साथ अधिक मृत्यु दर हो थी। क्योंकि बार-बार आने वाले अकाल महामारी युद्ध एवं अशान्ति की वजह से मृत्यु दर अधिक थी। वास्तव में जनसंख्या १९२१ के पश्चात् अधिक तीव्र गति से बढ़ी है। १९५१ से १९६१ के दौरान में भारत की जनसंख्या में ७ करोड़ ८१ लाख की वृद्धि हुई जो योरोप में इसको छोड़ किसी भी देश की जनसंख्या से कहीं अधिक थी।

४—आज भारत की जनसंख्या अफ्रीका व लेटिन अमेरिका के ५५ राष्ट्रों की संयुक्त जनसंख्या से भी अधिक है। भारत की जनसंख्या प्रति वर्ष १ करोड़ तीस लाख की रफ्तार से बढ़ रही है। हर साल एक नया आस्ट्रेलिया, एक नया स्वीडेन या एक श्रीलंका जैसा देश हमारे अपने देश में पैदा हो जाता है। पांच साल से पांच देशों के बराबर हमारे देश में जनसंख्या जुड़ जाती है।

५—भारत की जन संख्या की वृद्धि दर के फलस्वरूप अंक गणित विशेषज्ञों का मत है कि १९८५ में भारत की जनसंख्या ७० करोड़ तथा १९९४ में १०० करोड़ हो जायगो। इस प्रकार जिस पचास करोड़ जनसंख्या को प्राप्त करने में इस देश को ५००० वर्ष लगे उतनी ही ५० करोड़ की जनसंख्या केवल आगामी २७ वर्षों में बढ़ जायगी। यह जनसंख्या का विस्फोट नहीं है तो फिर क्या है?

६—मृत्यु दर में कमी बराबर होती जा रही है। जनसंख्या की वृद्धि का प्रमुख कारण मृत्यु दर में कमी होना ही है। जो मृत्यु दर १६०१ से ४२६ प्रति हजार थी वह आज सिर्फ १४ प्रति हजार ही रह गयी है। यह कमी स्वास्थ्य एवं चिकित्सा सेवाओं में सुधारका ही परिणाम है।

७-इसमें नवीन औषधियोंका आविष्कार चेचक, क्षय, रोग एवं अन्य भयंकर बीमारियों के अवरोधक टीकों का प्रयोग आदि मुख्य हैं। विश्व स्वस्थ्य संगठन के सहयोगसे चला मलेरिया उन्मूलन अभियान भी उसके लिए उत्तरदायी है। मृत्यु दरकी कमींके फलस्वरूप हमारी आयु भी जहाँ १९०१ में २३ वर्षके लगभग थी वह आज ५४ बर्ष हो गई है।

८—इस देशकी जनसंख्याकी वार्षिक वृद्धि लगभग एक करोड़ तीस लाख है। हमारे यहाँ प्रति डेढ़ सेकेन्डमें एक बालकका जन्म होता है। इस प्रकार एक दिनमें ५७ हजार तथा वर्षमें लगभग २ करोड़ ११ लाख बालक जन्म लेते हैं। एक वर्षकी जनसंख्याके पोषणके लिये हमें प्रति वर्ष जिन अतिरिक्त साधनोंका जुगाड़ करना पड़ेगा वह इस प्रकार है—खाद्य सामग्री एक करोड़ ग्यारह लाख क्विन्टल, मक्का बाईस लाख बीस हजार क्विन्टल, कपड़ा सोलह करोड़ सत्रह लाख मीटर, नये रोजगार पैंतीस लाख चालीस हजार और स्कूल एक लाख बारह हजार।

९—इन बढ़ी आवश्यकताओंकी पूर्ति करना हमारे लिये असम्भव है, आज तो समस्या इतनी जटिल है कि जनसंख्याकी प्रत्येक वृद्धि वास्तवमें हमारी गरीबीकी वृद्धि ही होती है। किसी भी देशके लिये जनसंख्या बहुत बड़ी ताकत हो सकती हैं परन्तु जब देशमें साधन सीमित हों तब जन संख्या वृद्धिका अर्थ है कम प्रगति और अधिक समस्यायें। हम भले ही और अधिक स्कूल तथा अस्पताल बनायें और अन्य सुविधाओंकी व्यवस्था भी करें पर हमारी आबादी जिस तेजीसे बढ़ रही है उसके कारण यह अपर्याप्त हो जाती है।

१० गत २५ वर्षों में भारतकी राष्ट्रीय आयमें १५ प्रतिशतसे भी ज्यादा वृद्धि हुई है। जबकि हमारी प्रति व्यक्ति आय कुल २२ प्रतिशत ही बढ़ी है। जन संख्याकी वृद्धिकी वजहसे हमारी बढ़ी हुई आय नगण्य रह जाती है। यदि हमारी जनसंख्या १९४७ के स्तर पर ही सीमित रहती तो निश्चय ही हमारा समाज अधिक स्वस्थ्य और सुखी होता।

११—यदि हम अपनी ऊँची जन्मदर पर रोक नहीं लगा देते और जन संख्याको नियन्त्रित नहीं करते हैं तो हमारी विकास योजनाएँ निरर्थक हो जायगी।

१२—संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा प्रकाशित विश्वकी सामाजिक स्थितिकी रिपोर्टके अनुसार जनसंख्याकी वृद्धि अविकसित देशोंके आर्थिक विकासको अवरुद्ध करती है।

(१) इन देशोंकी अधिकांश जनसंख्या कृषि पर अवलम्बित है और बढ़ी हुई जनसंख्यासे कृषि, श्रम व भूमिकी उत्पादन शक्तिका ह्रास होता है।

(२) जनसंख्याकी प्रत्येक वृद्धिके साथ पूंजीकी कमी की समस्या अधिक गम्भीर होती है। क्योंकि इस वृद्धिके साथ प्रत्येक श्रमिक के लिए उपकरण उपलब्ध करनेमें अधिक पूंजीकी आवश्यकता होती है।

(३) बढ़ी हुई जनसंख्यासे कार्य करने वाले वर्ग पर निर्भर बालकोंका भार भी बढ़ता जाता है।

१३ राष्ट्रीय परिवार नियोजन कार्यक्रम भारतमें १९६७ से कार्यरत है। लेकिन कार्य क्रमको १९६७ से तेज गति पर लाया गया है। समय-समय पर जो सर्वेक्षण किये गये हैं उनके आधार पर जनवरी ७४ तक एक करोड़ इकतीस लाख सत्तर हजार दो सौ चार पुरुष एवं महिलाओंके वंध्याकरणके आपरेशन किये गये हैं इसी तरह जनवरी ७३ तक ४५ लाख ७२ हजार ४८४ लूप प्रविष्ट किये गये हैं।

१४—इसके अलावा परिवार नियोजनके दूसरे उपकरण के इस्तेमाल करने वालोंकी संख्या अलग हैं। इन सब साधनोंसे देशके लगभग ९ करोड़ ८० लाख स्त्री-पुरुषोंके ऐसे जोड़े जो बच्चे पैदा करने योग्य हैं। उनमेंसे करीब १४·४ प्रतिशत जोड़ोंको सुरक्षित किया गया है ताकि वह अनऐच्छिक बच्चे नहीं पैदा कर सके। और यह अनुमान किया जाता है कि अब तक भारतकी, जनसंख्या में १ करोड़ २४ लाखकी वृद्धिको रोका गया है। अगर परिवार नियोजन कार्यक्रम नहीं चलाया गया होता तो आज भारतकी जनसंख्या १ करोड़ २४ लाख ज्यादा होती। भारतकी जन्मदर जो १९५१-६१ के दौरानमें ४१ प्रति एक हजार थी वह घटकर ३५ प्रति एक हजार रह गयी है। जन्म दर में

कमी परिवार नियोजनके सफल होनेका प्रमाण है। पांचवीं पंचवर्षीय योजनके अन्त तक जन्मदरको ३० प्रति एक हजार और छठी पंच वर्षीय योजना तक जन्म दर २५ प्रति एक हजार तक कर लेनेका लक्ष्य है।

१५—भारतकी १९६१ की जन गणनाके अनुसार ८२ प्रतिशत जनसंख्या गांवोंमें रहती है। देशमें अभी हाल ही में एक सर्वेक्षण हुआ है। इसके अनुसार ६०से ७० प्रतिशत ग्रामीण क्षेत्रमें एवं ७० से ८० प्रतिशत व्यक्ति शहरी क्षेत्रमें परिवार नियोजनकी महत्वको जानने लग गये हैं। देशकी देहाती जनता वंध्याकरण एवं लूप परवेष्टीमें शहरी जनतासे कहीं आगे है गत ५ वर्षोंमें ९० प्रतिशत वंध्याकरण एवं लूप प्रविष्ट ग्रामीण जनता ही में किये गये थे।

१६-- महाराष्ट्र, तामिलनाडू आन्ध प्रदेश, केरल राज्य परिवार नियोजनके लिए कार्यक्रममें दूसरे प्रान्तोंकी अपेक्षा काफो आगे है। इन राज्यों ने चौथी पंचवर्षीय योजनाके अन्त तक अपनी-अपनी जन्म दर ३१ से घटा कर २२ कर ली है। पंजाब, कर्नाटक, दिल्ली एवं उड़ीसा राज्य भी इसी होड़में है।

१७ हमारे आर्थिक भविष्यका एक मात्र आधार परिवार नियोजन द्वारा हमारी जनसंख्याकी गतिमें कमी करना है। जिससे आर्थिक विकास एवं बढ़ती हुई जन संख्यामें संतुलन स्थापित किया जा सके।

१८—राष्ट्रीय परिवार नियोजन कार्यक्रमका ध्येय जन-संख्याके नियन्त्रणके साथ-साथ परिवार कल्याण भी है।

१९—परिवार कल्याण तभी हो सकता है जब परिवार का आकार छोटा हो, दो बच्चोंके जन्ममें समुचित अन्तर हो।

२०—संतान पैदा करना संयोग पर नहीं आपकी अपनी इच्छा पर होना चाहिये।

२१—हमारी सरकार दुनियाकी उन थोड़ी सी सरकारोंमें से एक है जिंसने परिवार नियोजनको वैज्ञानिक विधिसे अपनाया है। मांके स्वास्थ्यकी रक्षाके लिए और परिवारके सुख शान्तिके लिए यह आवश्यक भी है कि परिवार छोटा हो।

२२—माता-पिताका यह धर्म है कि उतने बच्चोंको हो जन्म दे जिनकी वे अच्छी तरहसे देख भाल कर सकते हैं। हर एक बच्चेका अधिकार है कि उसे पूरा खाना मिले, शिक्षा मिले और उसके शरीर तन और बुद्धि का पूरा विकास हो सके इसलिए छोटा परिवार सुखी परिवारकी कुंजी है। जो लोग भारतको समृद्धि चाहते हैं, वे परिवार नियोजन तथा आर्थिक निर्माणको समान महत्व दे रहे हैं। अतः हम सबका प्रयास होना चाहिए कि हम परिवार नियोजनको अपनायें। ('लोक विज्ञान' से साभार)

उस कम्पार्टमेन्टकी भीड़में जब एक गरीब सा आदमी खिसकते-खिसकते उन गंजे महाशयसे एकदम सट गया तो वे गुस्सेसें उफनपड़े, बोले, "हां हां, आ जाओ, सिर पर जाओ।"

उस आदमीने उनके गंजे सिरको देखा और डरनेका अभिनय करते हुए बोला, "यहीं ठीक हूँ, वहांसे फिसल जाऊंगा।"

* * *

डाक्टर, "जरा भी चिन्तित न हों मित्र! इस तरहकी बीमारी तो मुझे भी कुछ वर्ष पूर्व हो गयी थी, मगर आज देखिये, मैं कितना स्वस्थ हूँ!"

"वह तो ठीक है," बीमारने कहा, "पर आपका डाक्टर तो कोई और ही रहा होगा न!"

◆

प्रायः मोटे आदमी हंसमुख और भले स्वभावके होते है इसका एक मामूली सा कारण हैं। कारण यह है कि मोटे आदमी न तो लड़ सकते हैं, न भाग-दौड़ ही कर सकते हैं।

पारिवारिक जीवनोपयोगी स्वास्थ्य साहित्य

लोकप्रिय स्वास्थ्य साहित्य

राजा बेटा कैसे बनायें ?	१.००
सुन्दर दांत और उनकी देखरेख	२.५०
आपके बच्चेकी खुराक	३.३७
भोजन क्या, क्यों और कैसे ?	४.००
विटामिन और हीनता जनित रोग	४.२५

यौन-साहित्य

यौन मनोविकार कारण और निवारण	४.२५
विवाहित जीवनमें यौन सम्प्रयोग	५.५०
नारीकी यौन समस्यायें	२.५०
सन्तति-निरोध कब और कैसे ?	४.००
गर्भवती स्त्री और प्रसवपूर्व व्यवस्था	२.५०

प्रकाशक

स्वास्थ्य सन्देश प्रकाशन,
पोस्ट—कालपी (उत्तर प्रदेश)

उद्यम

मासिक पत्रिका

'उद्यम' में निम्न विषयों पर लेख प्रकाशित होते हैं।

*लाभदायक उद्योग-धन्धोंकी व्यवहारोपयोगी जानकारी
*व्यवसायमें सफल व्यक्तियोंकी मुलाकातें और परिचय तथा मवेशियोंके रोगोंका निवारण।
*इंजिनियरिंग, यंत्र सामग्री और ग्रामोद्योग संबंधी लेख
*आरोग्य, संक्रामक रोग तथा घरेलू औषधियों संबंधी जानकारी।
*पंचवर्षीय योजनाओंके कारण होता हुआ ग्रामसुधार
*महिला विभाग : घरेलू उद्योग, मितव्ययिता, खाद्य पदार्थ आदि पर लेख।
*बालकोंका विश्व : बालक-बालिकाओंके लिए सुलभ भाषामें त्रैमासिक जानकारी।
*विद्यार्थियों के लिये : विशेषज्ञों द्वारा उपयुक्त लेख
*पाठकों द्वारा पूछी गई जानकारी।

'उद्यम' का वार्षिक मूल्य रु० दस भेजकर परिवारके प्रत्येक व्यक्तिके लिये उपयोगी वह मासिक पत्रिका अवश्य संग्रहीत करें।

उद्यम मासिक, धर्मपेठ, नागपुर-१

स्वास्थ्य का बृहद् ज्ञान सागर

आपका स्वास्थ्य

१६ वर्षों की

पुरानी फाइलें

चौथे और सोलहवें वर्ष के अलावा प्रत्येक वर्ष की फाइलें प्राप्य हैं।

प्रत्येक वर्ष की फाइल ६ रु० में प्राप्य है फाइलें वी० पी० से नहीं भेजी जायेंगी। अग्रिम मूल्य भेजना अनिवार्य है।

आपका स्वास्थ्य कार्यालय

चेतगंज, वाराणसी—१

घर बैठे संगीत सीखिए

प्रतिमास घर बैठे गायन, वादन तथा नृत्य की ठोस जानकारी प्राप्त करने के लिए १५) भेजकर **'संगीत'** मासिक के वार्षिक सदस्य बन जाइए। नमूना चाहें तो १)५० के टिकिट भेजिए। फिल्मी गीतों के प्रेमी २०) भेजकर **'फिल्म-संगीत'** त्रैमासिक के वार्षिक सदस्य बनें। वर्ष में इसके कुल चार अंक (जनवरी, अप्रैल, जुलाई और अक्टूबर में) प्रकाशित होते हैं। प्रत्येक अंक में ३५ प्रसिद्ध फिल्मी गीत स्वरलिपि-सहित छपते हैं। हर प्रकार के संगीत-साहित्य की विस्तृत जानकारी के लिए हमारा बड़ा सूचीपत्र मुफ्त मँगाएं।

पता

संगीत कार्यालय, ६, हाथरस (उ. प्र.)

इंडियन मेडिकल असोसियेशनकी ओरसे डा० कोशलपति तिवारी द्वारा
संपादित, प्रकाशित और सुदर्शन मुद्रक वाराणसीमें मुद्रित।

HEALTH

is your most precious possession

Your Health

will help preserve it

Your Health aims to educate the common man on matters of health. It deals with day to day problems of sanitation and hygiene and presents the scientific side of preventing many bodily and mental ills.

Remember it is

A Publication of the Indian Medical Association.

SUBSCRIPTION RATES

(Post free)

Inland : 1 year Rs. 8/- ; 2 years Rs. 12/-
Foreign : 1 year Rs. 10/- ; 2 years Rs. 16/-
Members of I. M. A. ; 1 year Rs. 6/-

Remittances should be by money orders or postal orders payable to YOUR HEALTH

All business correspondence should be addressed to

Manager, YOUR HEALTH
23 Samavaya Mansion : Corporation Place
CALCUTTA-13

मूल्य—पचास पैसे

आपका स्वास्थ्य

इंडियन मेडिकल असोसियेशन की लोकोपयोगी मासिक पत्रिका

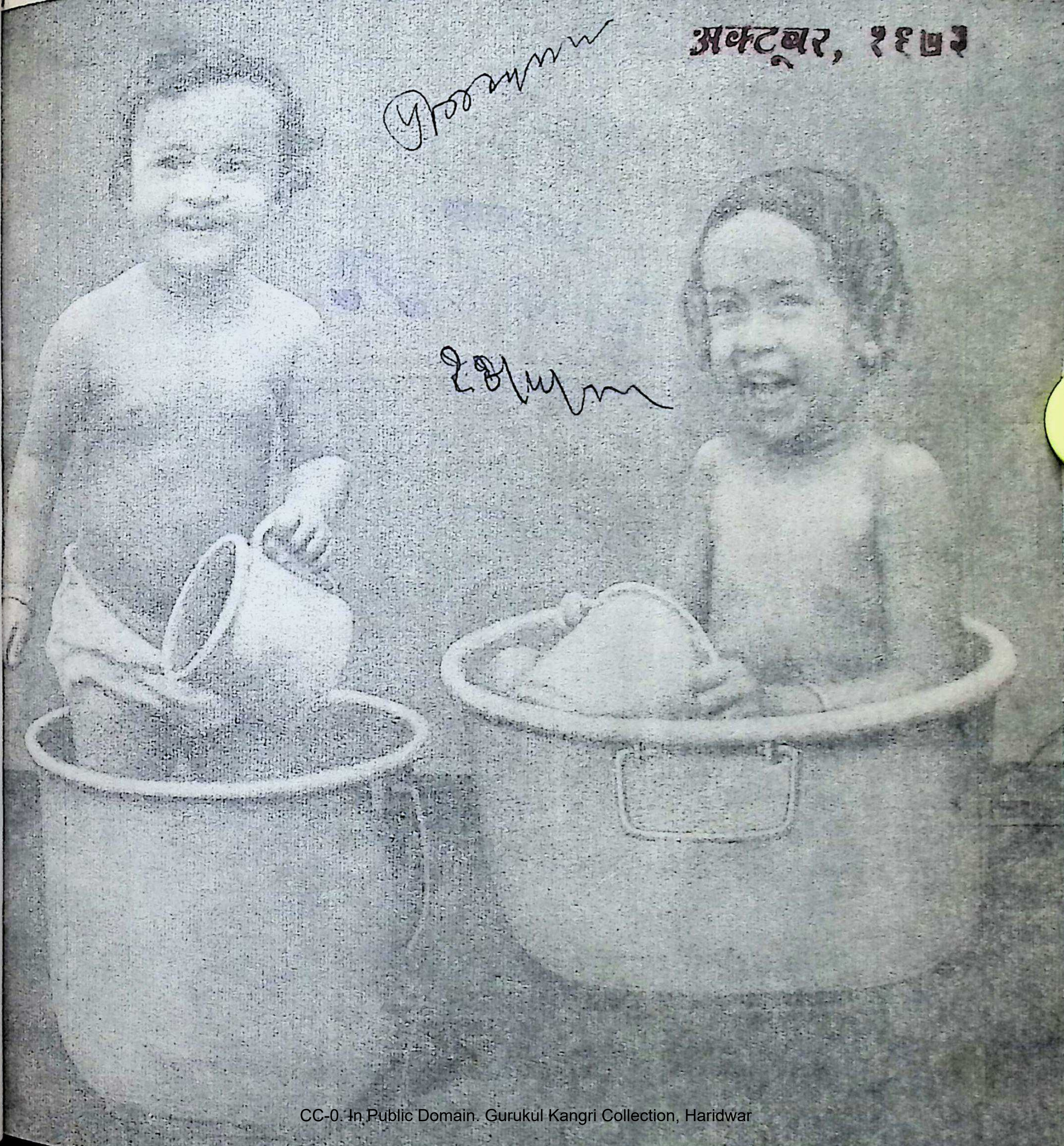

अक्टूबर, १९७३

हमारे तीन महत्वपूर्ण प्रकाशन

कहीं हवा न लग जाय

-कैप्टन शरत कुमार चोधरी-

इस पुस्तकमें मलेरिया, फाइलेरिया, चेचक आदि रोगोंसे बचनेके उपाय, रोगीकी परिचर्या सर्पदंश, प्राथमिक चिकित्सा सम्बन्धी अनेक महत्वपूर्ण समस्याओंकी चर्चा की गयी है ।

मूल्य १५० पैसे

सुनो भाई पंचो

-डाक्टर कोशलपति तिवारी-

हिन्दीमें अपने ढंगकी सरल सुबोध शैलीमें लिखी गयी पुस्तक । रोग तथा स्वास्थ्य-सम्बन्धी उन सभी समस्याओं पर चर्चा की गयी है, जिनसे हमारे ग्रामीण भाइयोंको नित्य सामना करना पड़ता है ।

पुस्तक दो भागोंमें प्रकाशित है ।

प्रत्येक भागका मूल्य—१५० पैसे

गुजरात, मध्यप्रदेश, उत्तरप्रदेश, हरियाणा, राजस्थान सरकार, बिहार द्वारा नियोजन केन्द्रों, स्कूल-कालेजके पुस्तकालयों, राष्ट्रीय प्रसार सेवा खण्डों तथा ग्राम पुस्तकालयोंके लिए स्वीकृत ।

डाक्टर के आने तक

- डाक्टर गोकुलदास अग्रवाल -

नागरिक सुरक्षाके संदर्भमें इस पुस्तकका विशेष महत्व है । देशके प्रत्येक नागरिकको प्राथमिक चिकित्सा सम्बन्धी ज्ञान प्राप्त करना आवश्यक है और इस पुस्तकमें विस्तृत ढंगसे इस विषयपर चर्चा की गयी है । प्राथमिक चिकित्सा (फर्स्ट एड और नर्सिंग) की शिक्षा लेनेवाले छात्र-छात्राओंके लिए सर्वश्रेष्ठ पुस्तक । प्रस्तुत पुस्तक आपके परिवारके लिए 'घरेलू डाक्टर' का काम देगी ।

दो सौ से अधिक चित्र

मूल्य २७५ पैसे

चारों पुस्तकें एक साथ मँगानेपर डाक खर्च माफ । आपका स्वास्थ्यके ग्राहकोंको २५ प्रतिशत छूट दी जाती हे । चारों पुस्तकें एक साथ न मँगानेपर प्रत्येक पुस्तकके लिए १२५ पैसे अलगसे डाक व्यय लगेगा ।

हमारे अधिकृत विक्रेता,

हिन्दी प्रचारक संस्थान, पो० बा० १०६, वाराणसी

श्री गंगा पुस्तकालय, गायघाट, वाराणसी—१

आपका स्वास्थ्य कार्यालय, लहुराबीर, वाराणसी—१

आपका स्वास्थ्य

इंडियन मेडिकल एसोसियेशनका लोकोपयोगी प्रकाशन

वर्ष २१ अक्टूबर १९७३ अंक १

अनुक्रमणिका

मुकुर मलिन अरु नयन बिहीना ... २
बच्चोंका स्वस्थ भावनात्मक विकास कैसे हो ? ३
किशोरकी व्यवहार सम्बन्धी समस्याएँ ... ७
स्वस्थ कैसे रहें ? ... १०
रोजी कमानेवाले बच्चे और उनकी समस्याएँ १२
सब्जियाँ अच्छे स्वास्थ्यके लिए आवश्यक ... १५
पिताके पत्र पुत्रवधूके नाम—३ ... १७

परिवार नियोजन-पूरक

एक राष्ट्रीय कर्त्तव्य ... २१
परिवार नियोजन कार्यक्रमका समर्थन करता हूँ २३

कवर-चित्र
श्री परिमल गोस्वामी

● 'आपका स्वास्थ्य' में प्रकाशित प्रत्येक रचना और चित्रका कापीराइट प्रकाशकका है। इसलिए बिना आज्ञा कोई रचना या चित्र किसी प्रकार उद्धृत नहीं होना चाहिए।

● 'आपका स्वास्थ्य' के लेखकोंके विचार पूर्ण रूपसे उनके अपने हैं आवश्यक नहीं है कि संपादक मंडल अथवा इंडियन मेडिकल एसोसियेशन उनसे सहमत हो।

मूल्य—इस अंकका ५० पैसे
वार्षिक छः रुपये

आपका स्वास्थ्य कार्यालय
वाराणसी (बनारस—१)

मुकुर मलिन अरु नयन बिहीना

गोस्वामी तुलसीदासजी अपने मानस काव्यमें पग पग पर ज्ञानभक्तिका संदेश और साहित्यका श्रेष्ठतम रस छलकाते चले हैं। उनकी अनूठी उक्तियाँ सुधि पाठकको ठहरकर सोचनेको बाध्य करती हैं। अ इस अर्धाली को ही देखें कि 'एक अंधा यदि झांखे दर्पण में देखे तो' अर्थात असंभवको भी असंभव करने बात है। अच्छे खासे विमल दर्पणमें भी अंधा अपनी सूरत नहीं देख सकता और मलिन मुकुरमें तो शाय आँख वाला भी न देख पायेगा, अंधेकी तो बात ही क्या ! अंधे भी होते हैं, मलिन मुकुर भी होते हैं पर अं द्वारा उस दर्पणमें अपनी सूरत देखनेकी चेष्टा कैसी होगी ?

गोस्वामीजीका मुकुर हमारा मन है और नयन हमारा ज्ञान है। अगर बातको समझना है तो ज्ञानकी आँखें चाहिये और साथ ही मन स्वच्छ, साफ, निर्मल होना चाहिये। जिसके मनमें नाना प्रकारक शंकाएँ, कुंठाएँ, दुर्भावनाएं, अशुभ कामनाएं, और विकार भरे हैं उसे 'स्व' को देखनेकी फुरसत कहाँ है अपनी उन्नतिका, अपने हित साधनका प्रथम चरण है अपनेको देखना, अपनेको जानना ! किसीने ठी कहा है :

'बुरा जो देखन मैं चला, बुरा न दीखा कोइ
जो दिल अपना ढूंढिया, मुझसा बुरा न कोइ'।

और फिर जब मैं को मैं की बुराइयाँ दिख गयीं तो सहज है कि वह उन्हें त्यागकर स्वच्छ निर्मल बनने की चेष्टा करेगा या कहें कि जीवनमें उन्नतिके मार्गकी सही दिशा पकड़ लेगा। मगर 'दिलको ढूंढ़ने', 'स्व को देखनेके लिये दो शर्तें हैं 'मन मुकुर मलिन न हो' और 'देखने वालेके पास ज्ञानचक्षु हों'। यह दोनों काम कैसे सधेंगे यह भी एक समस्या है। सामान्यतः मुकुर की मलीनता दूर करनेके लिए उसे गीले कपड़ेसे पोंछना पड़ता है, नयी पालिश करनी पड़ती है। चक्षुमें ज्ञान भरनेके लिए कि ज्ञान सरोवर तक जाकर ज्ञान-ज लाना होता है। पश्चातापके आँसू, सत्कर्म और सत्-संकल्पकी पोंछाई, पालिश और परम्परानुसार गुरू नाम ज्ञान सरोवरकी यात्रा ही लक्ष्य तक पहुँचा सकती है।

कहते हैं गुरू-ज्ञान मिलनेसे भगवान मिल जाते हैं। भले ही भगवान न मिलें पर इतना तो सत्य है कि निर्मल मन मुकुरमें अपनी सूरत देख सकना नास्तिकके लिए भी बहुत बड़ी उपलब्धि है। अपनी (आपका स्वास्थ्य) वर्ष गांठके अवसर पर हम आपके सपत्र यही शुभ कामना लेकर आये हैं कि आपका मन मुकुर विमल हो और आपके ज्ञानचक्षु खुल जायँ।

बच्चोंका स्वस्थ भावनात्मक विकास कैसे हो

—श्री विश्वम्भरनाथ शुक्ल—

जिस प्रकार आप कभी प्रसन्न और कभी नाराज हो जाते है, ठीक इसी प्रकार आपके बच्चे भी प्रसन्न, अप्रसन्न, ईर्ष्यालु, क्रुद्ध और आक्रामक भी हो सकते है। प्रायः आपने देखा होगा कि आपने ज्योंही कार्यालय से लौट कर घर में कदम रखा छोटा पुत्र आपके पास आकर शिकायत करेगाः "पापा! हमको भैया ने मारा है।" दूसरे ही क्षण आक्रामक आक्रोश के साथ आपके बड़े पुत्र सफाई देंगे, "यह झूठ बोलता है पापा। यह मुझे पढ़ने नहीं देता।" और साथ ही आप की नजर बचाकर छोटे को घूंसा भी दिखा देगा—"ज्यादा बोला तो खैर नहीं।" किन्तु आपकी उपस्थिति छोटे का सम्बल बन जाती है और वह दुगने जोश के साथ अपना आरोप दुहराता है, 'नहीं पापा! इसने हमें मारा था।"

इस प्रकार की घटनाएं घरों में प्रायः होती हैं और जन-साधारण इसे बच्चों की बात कह कर टाल देते हैं और यदि बहुत किया तो एक को डांट दिया और दूसरे को प्यार कर लिया, झगड़ा खत्म। किन्तु माता-पिता के इस व्यवहार का कुछ मनोवैज्ञानिकों ने गहन अध्ययन करने पर पाया है कि बालकोंके बीच होनेवाले मतभेदों एवं झगड़ोंका निपटारा दायित्वहीनताकी भावनासे करना बालकोंके संतुलित विकासमें बाधक होता है।

इस समस्याका व्यवस्थित हल खोजने एवं उसके निराकरण हेतु आपका एकपक्षीय निर्णय बालकोंके चारित्रिक विकासमें बाधक एवं उनमें दायित्वहीनताकी भावनाका जनक होता है। उपरोक्त परिस्थितिमें यद्यपि दिन भर कार्यालयमें काम करनेके पश्चात् यह आवश्यक हो सकता है कि आपकी थकी मनःस्थिति समस्याका उचित समाधान करनेकी स्थितिमें न हो, फिर भी बाल-युद्धोंके सही समाधान और लड़ाकू पक्षोंको समान रूपसे संतुष्ट करने हेतु आपको मध्यस्थता करनी ही पड़ेगी। इसलिए बजाए इसके कि छोटे और बड़ेके झगड़ेका आप तुरंत निपटारा कर दें बेहतर होगा कि दोनों पक्षोंको अपना वक्तव्य देने दें और तब तक कपड़े बदल कर एक कप चाय लें, स्वयंको आश्वस्त भी कर लें।

दोनों पक्षोंके आरोपों एवं प्रत्यारोपोंका सिलसिला कुछ देर तक चलते रहनेका परिणाम यह होगा कि समस्या की जड़ स्वयं ही प्रकट हो जाएगी और आप सही निर्णय लेनेमें समर्थ हो जाएंगे। उदाहरणार्थ उपरोक्त दो कथन यों हो सकते हैं :-बड़े की सफाईका प्रत्युत्तर छोटा देगा, "हाँ, हाँ, खुब तो पढ़ते नहीं हैं, कहते हैं कि पढ़ने नहीं देता।"

"फिर झूठ बोलता है पापा, मैं पढ़ रहा था तो यह मेरी पेंसिल और कापी लेकर भागता था।"

"मैं तुम्हारी कापी, पेंसिल कहाँ ले रहा था। मैं तो दीदी की कापी लिए हुए था, सिर्फ तुम्हारी पेंसिल ले रहा था।"

"हाँ, तो मेरी पेंसिल क्यों ले रहा था?"

"वह पेंसिल तुम्हारी तो थी नहीं, दीदी की थी। पापा, यह अपनी पेंसिल गुम कर आया है और दीदीकी पेंसिलसे लिखता है।"

'मै कुछ भी करूं। तुझे क्या है?"

"मुझे क्या करना है, मैं तो दीदीकी पेंसिल ले रहा था।" छोटा कहेगा और फिर बड़े पर हमला करेगा, 'तुम पेंसिलसे लिख भी तो नहीं रहे थे। तुम तो 'चंदा मामा' पढ़ रहे थे।"

"पापा, यह झूठ बोलता है।" बड़ा आपकी शरणमें आनेका प्रयास करेगा।

"झूठ नहीं सच है पापा। आप इसके बिस्तर पर देख लीजिए। यह लेटकर पढ़ रहा था।"

ठहरिए। बड़ेका बिस्तर देखिए और 'चंदा मामा' जैसे प्रमाण पर कब्जा कर लीजिए। तब तक आपको

थकान उतर चुकी होगी और युद्धका मूलतत्व आपके सम्मुख यों प्रकट हुआ होगा :

बड़े ने अपनी पेंसिल गुम करके, अपनी बहनकी पेंसिलका उपयोग करना शुरू कर दिया है।

छोटा उसी पेंसिलसे अपनी लिखनेकी भावनाको संतुष्ट करना चाहता है।

बड़ा 'कार्स' से परे 'चंदा मामा' नामक पत्रिका पढ़ रहा था और छोटा बार-बार पेंसिल मांग कर उसके अध्ययनमें बाधा डाल रहा था।

छोटा अपनी जिद पर था, इसलिए बड़ेको क्रोध आ गया और उसने छोटेको पीट दिया था।

बच्चोंकी शिकायतों पर ठंडे दिमागसे गौर करें

उपरोक्त 'वाद' का निपटारा यदि आपने आरम्भ में अपनायी गयी नीतिके अनुसार कर दिया है तो आपका निर्णय संतुलित न होकर पक्षपातपूर्ण होगा और उससे दोनों पक्षोंको उचित पथ-प्रदर्शन नहीं प्राप्त हो सकता। तो फिर अब आपको क्या करना चाहिए ?

पहले तो बड़ेको अपनी पेंसिल गुम करने हेतु डांटें। फिर उसे उसकी त्रुटिका ज्ञान कराएं कि उसने पेंसिल गुम हो जाने की सूचना आपको क्यों नहीं दी ? फिर यह जांच करें कि उसने अपने स्कूलका काम पूरा कर लिया था या केवल 'चंदा मामा' की ओटमें पढ़नेका अभिनय कर रहा था और अंतमें उसे बताएं कि बड़ोंको छोटों पर क्रोध नहीं करना चाहिए और उसे अपने भाईसे प्रेमपूर्वक व्यवहार करना चाहिए। इसीके साथ ही एक कापी और पेंसिलका प्रबन्ध कर छोटे को सौंप दें जिससे उसके लिखने-पढ़नेके प्रति रुझानको प्रोत्साहन मिले।

भविष्यके लिए उपरोक्त विश्लेषणात्मक उदाहरणको ध्यानमें रखना आप और आपके बच्चों दोनोंके लिए हितकर होगा क्योंकि यह विधि त्रुटि वाले पक्षको आवश्यक पथ-निर्देश देती है और निर्दोष पक्षको अपना महत्व समझनेका अवसर देती है। साथ ही भविष्यमें इस प्रकारकी संघर्षमय घटनाओंका दोहराया जाना भी असम्भव हो जाएगा क्योंकि तब दोनों ही पक्ष अपने मतभेदोंको स्वयं ही सुलझानेके बजाए सीधे आप या आपकी पत्नीको सौंप देंगे और तीसरे पक्षका समन्वयपूर्ण निर्णय उन दोनोंको ही मान्य होगा। साथ ही बालकोंके बीच पाई जानेवाली तनावपूर्ण स्थितिका अंत हो जाएगा।

दूसरे, यह भी हो सकता है कि बालकोंके बीच उपरोक्त झगड़ेकी स्थिति न हो किन्तु फिर भी व्यावहारिक, मानसिक और शारीरिक दुर्बलताके कारण परिवारके दो बच्चोंमें सहयोग, सद्भाव एवं सहानुभूतिका अभाव हो वे ऐसे रहते हों जैसे एकको दूसरेसे कोई प्रयोजन ही न हो अथवा दोनोंका हर कार्य स्वतंत्र रूपसे अलग-अलग हो। एक को दूसरेसे कोई लगाव ही न हो।

इस प्रकारकी समस्याको भी आप अपनी अनुभवी बुद्धिकी सहायतासे सुलझा सकते हैं। बस करना सिर्फ इतना होगा कि जब भी आपको बालकोंमें ऐसे असहयोगपूर्ण व्यवहार की झलक मिले, बारी-बारीसे वार्तालापके माध्यमसे असलियतका पता लगा लें और समस्याको सुलझानेकी चेष्टा करें।

बच्चोंको मिलजुल कर रहनेका महत्व समझाएं

समस्याको सुलझानेका एकमात्र उपाय भी केवल वार्तालाप है। आप उन्हें बताएं कि बच्चोंको आपसमें मिलकर रहना चाहिए क्योंकि एकतामें बल है। उन्हें सुझाएं कि यदि बच्चे आपसमें मिल कर नहीं रहेंगे तो आवश्यकता पड़ने पर एक बालक दूसरे की सहायता नहीं करेगा। उन्हें समझाएं कि एकतामें बल है। साथ ही यदि असहयोग की यह भावना किसी शारीरिक अथवा मानसिक तनावके कारण है तो व्यक्तिगत उपायोंके साथ ही साथ किसी योग्य बाल-मनोवैज्ञानिक अथवा बाल-चिकित्सक की सहायता लेनेसे भी न चूकें।

अनुचित जिदके सम्मुख झुकना अवांछित

बच्चे कभी-कभी जिद्दी भी होते हैं। हठधर्मिता कोई विकार न होकर एक प्रकारसे बालकों की मानसिक तरंग होती है। किसी वस्तु हेतु बालक कब जिद करने लगेगा, इसकी कोई निर्धारित सीमा नहीं होती है। किन्तु बालकोंके हठी स्वभावका उपचार करनेके लिए आपके पास कुछ उपाय अवश्य हैं। उदाहरणार्थ यदि बालक आपसे कभी

कोई वस्तु प्राप्त करना चाहता है और आप एक बार उसकी माँग की पूर्ति करनेसे इनकार कर देते हैं, तो ध्यान रखिए कि बालकके रोने, चीखने अथवा रूठनेसे आपको अपने 'नहीं' को 'हाँ'में नहीं बदल देना चाहिए। यदि आप ऐसा करेंगे तो दो ही एक बारमें बच्चा समझ जाएगा कि रूठने, चीखने और रोनेका आप पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता। इसलिए हठ करना व्यर्थ है। और यदि एक बार 'नहीं' कह कर पुनः आप उसी माँग को 'हाँ' करके स्वीकार कर लेते हैं तो आप बच्चेको हठी बनानेके उत्तरदायी हैं और वह अपनी हर माँग सदैव ही आपसे मनवा कर ही रहेगा।

यदि बच्चे आपसे कोई अनुचित मांग करते हैं और उसे पूरी करवाने हेतु हठ करने लगते हैं तो उन्हें पैसे, मिठाई अथवा खिलौने आदि का प्रलोभन देकर फुसलाने का प्रयत्न न करें। यदि आप इस प्रकार घूस देनेकी प्रवृत्ति अपना लेते हैं तो बच्चे इसी आदतके आदी हो जाएंगे जो कि बड़े होने पर उनके जीवन का एक कलुषित अभिशाप बन सकती है। इसके विपरीत सही रास्ता यह होगा कि जब भी वे कोई अनावश्यक अथवा अनुचित मांग की पूर्ति हेतु जिद करे और समझाने-बुझाने पर भी न मानें, आप उन्हें निःसंकोच दो-एक चांटे लगा कर सीधा कर दें। एक पश्चात्य मनोवैज्ञानिक का कथन है कि जिद्दी बच्चों की अनुचित मांगोंको स्वीकार करनेकी अपेक्षा उनकी थोड़ी, किन्तु कोमल पिटाई कर देना बालकोंके लिए सर्वथा हितकर होता है क्योंकि इससे वे भविष्यमें फिर इसी प्रकार की जिद नहीं करेंगे।

बच्चों को धमकाएं नहीं

एक बात और ध्यानमें रखनी चाहिए कि बालकोको जिद्दी बननेसे रोकनेके लिए आप उन्हें धमकियाँ न दें। बहुधा देखा जाता है कि आप चीखते हैं, "पप्पू, अगर तुम नहीं मानोगे तो कान खटाई कर दूँगा।" किन्तु आपने कभी वास्तवमें पप्पूको अपनी धमकीका चारित्रिक परिचय नहीं दिया। बेचारा यह भी नहीं जानता कि 'कान खटाई करने' का मतलब क्या होता है। इसलिए धीरे-धीरे आपकी सारी धमकियाँ बच्चेके लिए निरर्थक हो जाती हैं। आप बच्चेको जब भी कोई धमकी दें, उसे चरितार्थ अवश्य करें, नहीं तो कुछ ही दिनोंमें वह निडर हो जाएगा और आप कितना भी चीखें, उस पर कोई प्रभाव ही नहीं पड़ेगा क्योंकि उस समय तक आपकी धमकियाँ उसके लिए मात्र 'सनक' बनी रहेंगी।

बालकों को जिद्दी बनानेमें बहुत कुछ आपके सहयोग का भी हाथ होता है। यदि बालक आपसे अपनी किसी समस्या का समाधान करवाना चाहता है और आप उसकी अपेक्षित सहायता नहीं करते, इसके मतलब यही होंगे कि आप चाहते हैं कि बच्चा विद्रोहके माध्यमसे हठधर्मिता द्वारा आपका सहयोग प्राप्त करे।

बच्चोंके प्रश्नों को टालें नहीं

कृपया बच्चों को ऐसा अवसर ही न दें। यदि आप अवसर-विशेष पर व्यस्त हैं तो बच्चेको प्यारसे किसी दूसरे समय आनेको कहें और यदि उसकी जिज्ञासा ऐसी है कि वह अपनी समस्या का समाधान स्थगित नहीं कर सकता तो आप स्वयं अपना कार्य रोक दें और उसकी सहायता कर दें। बहुधा बच्चों की बड़ीसे बड़ी समस्या भी दो-चार मिनटोंमें ही सुलझ जाती है और इस अल्पावधिमें सुलझी हुई बाल-कठिनाई उन्हें अपार संतोष देकर आपके प्रति उन्हें आभारी बना देती है और वे आपके आज्ञाकारी बननेमें गर्व का अनुभव करते हैं। इसके विपरीत यदि आप उन्हें अपने सहयोगसे वंचित रखते हैं तो वे आपके प्रति असहयोग, निरादर एवं अवज्ञा की भावनासे ग्रस्त हो जाएंगे।

हो सकता है कि आप कठोर अनुशासनप्रिय हों और अनवरत अनुशासनात्मक व्यवहारके कारण बच्चे आपसे भयभीत रहते हों। यदि ऐसा है तो आपके बच्चे अपने हर कार्य को, जो कि उन्होंने आपकी अनुपस्थितिमें किया होगा, असत्य भाषणों द्वारा छिपाने का प्रयास करते होंगे। यह स्थिति बालकोंके चारित्रिक विकास एवं पारिवारिक सहयोग की भावनाके निर्माणमें बाधक हो सकती है। यदि आपको अपने परिवारमें यह विकार दिखाई पड़ता है तो

फौरन ही आप अपनी अनुशासन प्रणालीमें फेर-बदल करने का प्रयास करें, अन्यथा अवसर हाथसे निकल जाएगा ।

अनुशासन एवं स्नेह में सामंजस्य रखें

अनुशासनात्मक वातावरण का निर्माण उसी समय तक हितकर होता हैं जब तक कि अनुशासन एवं आपके स्नेह में सामंजस्य हो । यदि इस सामंजस्य का संतुलन बिगड़ा तो सारी पारिवारिक व्यवस्था भंग हो जाती है । इसलिए आप ध्यान रखें कि बालकों के प्रति आपका अनुशासन कहीं अत्यधिक कठोर न हो जाए इसका एक मात्र उपाय यही होगा कि आप अपने अनुशासन को ऊपर से थोड़ा कठोर एवं भीतर से मुलायम रखें और बच्चों को अनुशासनहीन पाते ही कोमल शब्दों, उचित निर्देश और अपने सहयोग द्वारा तुरंत ही सही राह पर लें आएं ।

बहुत से माता-पिता इस प्रकार की अनुशासन प्रणाली अपनाते हैं जिसमें कुछ भी कहने का अधिकार केवल उन्हीं को रहता है और वे बच्चों को कुछ भी कहने का अवसर देना पसंद नहीं करते । यह तानाशाही व्यवहार बालकों के चारित्रिक, नैतिक एवं सामाजिक विकास में बाधक होता है क्योंकि सतत दबे रहने के कारण वे हीन-भावना से ग्रस्त हो जाते हैं तथा कभी भी स्वतंत्र निर्णय लेने का साहस ही नहीं कर सकते ।

बच्चे समाज के आधार-स्तम्भ एवं राष्ट्र के भावी नागरिक होते हैं । किन्तु बच्चे परिवार के नीड़ में पनपते हुए पक्षियों के उन बच्चों की भांति होते हैं जो माता-पिता को हवा में उड़ता देखकर स्वयं भी उड़ने का प्रयास नहीं करते । करते तब हैं जब माँ-बाप उन्हें घोंसले से निकाल वृक्ष की चोटी से धरती की ओर गिरने के लिए फेंक देते हैं । माता-पिता द्वारा इस प्रकार गिराये जाने पर ही वे पंख फड़फड़ा कर हवा में हो जाते हैं और उड़ना सीखने लगते हैं । इसी संदर्भ में आप भी याद रखें कि आप अपने जीवन में चाहे जो हों, किन्तु बालक के भावी जीवन के निर्माण हेतु उसे आगे बढ़ने के लिए प्रोत्साहन आप ही को देना पड़ेगा ।●

(पृष्ठ ९ का शेषांश)

क्षोभ के भाव पढ़े जा सकते हैं । उन्हें अपनी शिक्षा और रोजगार के बीच किसी प्रकार का अंतर्संबंध नहीं दिखाई पड़ता, उच्च शिक्षाप्राप्त करने और धन इकटठा करने के प्रति उनके दिल में कोई चाव नहीं होता और उनके अभिभावकों द्वारा सुझाए गए भौतिकवा के मध्यम लक्ष्य से उन्हें कोईं संतोष नहीं होता ।

शायद इसीलिए वे वर्तमान समाज के प्रति अपने आक्रोश की भावना को अंतर में दबाये रखते हैं और जब बेकारी और अयोग्यता की भावना उन्हें दबोचती हैं तब वे आत्महत्या कर लेते हैं ।

निष्कर्ष मैं में यह कहूँगी कि अभिभावकों को युवकों की निम्नलिखित आधारभूत आवश्यकताओं से अवगत रहना चाहिए ।

(१) अन्य प्रौढ़ों को प्रौढ़ों की तरह मानने की युवकों की आवश्यकता ।
(२) उनकी सेक्स भावना का आदर करना ।
(३) उनको रुचि और योग्यता के मुताबिक व्यवसाय का चुनाव ।
(४) उनकी सामाजिक स्थिति के प्रश्न का निर्णय करना ।
(५) जीवन में कुछ अर्थ की खोज करना ।

इन आधारभूत आवश्यकताओं के आधार पर आज के अभिभावकों को चाहिए कि वे युवकों की बातें सहानुभूतिपूर्वक सुनें और उनकी निन्दा न करें । प्रौढ़ होने के नाते हमें यह महसूस करना चाहिए कि हमारे युवको के समाज-विराधी कार्य उनके तनाव की अभिव्यक्ति मात्र है । हमें अपना उत्तरदायित्व निभाकर युवकों की मदद करनी चाहिए ताकि वे भी परिपक्व प्रौढ़ बन सकें ।

(आकाशवाणी की वार्ता पर आधारित)

किशोरकी व्यवहार सम्बन्धी समस्याएँ

—श्रीमती के० निश्चल—

समाचारपत्रों में इस प्रकार के चित्र यदाकदा छपते हैं, जिनके नीचे लिखा रहता है "सब माफ है, घर लौट आओ, मां की दशा गम्भीर है" । ऐसी भी खबरें होती हैं, कि एक लड़की ने निराश होकर आत्मघात कर लिया, एक लड़के ने शराब पीने और नशीली दवा खाने की इल्लत पाल ली तथा नित्य प्रति बढ़ते यौन-रोगों और अविवाहित माताओं संबंधी खबरें । ये सभी समाचार आज के युवकों में नैतिक पतन की ओर इंगित करते है ।

हम बुजुर्ग इन किशोरों पर केवल दोष ही मढ़ते हैं और इनकी आलोचना ही करते हैं जो बिना किसी अपने दोष के कारण निराश हो चुके हैं । आज जब भी हम युवा-वर्ग के बारे में सोचते हैं तो हमारी कल्पना में वह एक हिप्पी और विकृत मस्तिष्क वाला बेतुका मनुष्य जैसा प्राणी है, जिसके बदन पर जीन के कपड़े हैं, उसके बिखरे हुए बाल है, वह शराब पीता है और यौन संबंधों के प्रयोग करता रहता है ।

परन्तु यदि हम ऐसे युवक से सम्पर्क स्थापित करें और उसके साथ रहें तो हमें पता लगेगा कि वह किसी दूसरे नक्षत्र से उतरा हुआ अद्भुत जीव नहीं हैं । वह भी एक शिशु अथवा प्रवुद्ध प्रौढ़ जितना ही प्रिय लगता है । परन्तु फिर भी हम युवकों की समस्याओं और स्वयं युवकों को ऐसी दृष्टि से देखते हैं, जैसे कि वह किसी विशिष्ट जातिके हों, जिनके बारे में बहुत गहराई, अनुसंधान और बार-बार सर्वेक्षण करने की आवश्यकता है ।

मेरा अपना विचार है कि इन समस्याओं को इस तरह से अलग नहीं किया जा सकता, वास्तव में युवकों की समस्याएं जैसी कोई खास चीज है ही नहीं बल्कि ये सब मानवीय समस्याएँ हैं । अन्तर केवल इतना है कि इन समस्याओं का मुकाबला करने के लिए न वे अभी परिपक्व हुए हैं और न ही परिपक्वता प्राप्त करने के लिए उन्हें आवश्यक सद्भाव और मार्गदर्शन ही मिल रहा है ।

कैशौर्य की सीमित परिभाषा

यदि हम किशोरावस्था की सीमित परिभाषा भी स्वीकार करें कि यह अवस्था यौवन विकास की वयः-संधि से शुरू होती है और प्रौढ़ता तक समाप्त हो जाती है तो भी भारत में इस वर्ग में लगभग ६ करोड़ व्यक्ति आते हैं । ये व्यक्ति विभिन्न समाजिक-आर्थिक-सांस्कृतिक पृष्ठभूमि से संबंधित होते हैं और इनमें युवक-युवतियां दोनों ही होते हैं । इसलिए जब हम इतनी बड़ी और विविध जनसंख्या की बात करते हैं तो हम इनकी समस्याओं को 'तथाकथित' कहकर सामान्य नहीं मान सकते ।

अब अगर हम प्रौढ़ यह मानते हैं कि किशोरों की समस्याएं हैं और अगर उनकी समस्याएं हैं तो इससे हमारी कमजोरी का ही पता लगता है कि हम उनको समस्याओं का हल नहीं ढूंढ सके हैं । यदि एक शिशु को पालकर बड़ा करने और उसे परिवार बनाकर समाज का एक सभ्य सदस्य बनाने की जिम्मेदारी माता-पिता और समाज की है तो हम बड़ों को ही अपने आप को टटोलना चाहिए और इस चुनौती को स्वीकार करना चाहिए ।

युवा वर्ग की प्रायः आलोचना की जाती है कि उन्होंने एक विशिष्ट युवा संस्कृति का निर्माण किया है और वे उसी से संबंधित है । उन्हें उस पृथक संस्कृति का बनमानुस समझा जाता है और इस प्रकार अपने घरों में ही उन्हें अजनबी समझा जाता है । परन्तु क्या यह प्रौढ़ों के कारण नहीं है, जो उन्हें ऐसा समझने का मजबूर करते हैं ।

युवा वर्ग की समस्याएं

आज कल भारत में आर्थिक परशानियों अथवा सामाजिक मान्यता के कारण प्रौढ़ व्यक्ति युवकों को कितना समय दे पाते हैं ? प्रायः उन्हें अलग-अलग कर दिया जाता है जिससे कि प्रौढ़ व्यक्ति अपने-अपने-धन्धो में लग रहें ।

अगर अमीर मां-बाप ज्यादा जेब खर्च की रिश्वत देकर उन्हें अपनी नजर से दूर कर देते हैं, तो इसमें आश्चर्य ही क्या है कि वे अपने घरों मं अजनबी से लगते हैं ।

यह सच है कि १४ वर्ष की उम्र के बाद युवकों की रुचियां और उनके सामाजिक सम्पर्क व्यापक हो जाते हैं और वह घर से बाहर ही आनन्द की खोज में रहते हैं । इसमें कोई शक नहीं कि इस उम्र में आने पर वे चाहते हैं कि उनके साथ घर में बड़े सदस्यों जैसा व्यवहार किया जाय परन्तु अन्य सदस्य उन्हें ऐसा समझने से इन्कार कर देते हैं । उस स्थिति में किशोर विद्रोही हो जाते हैं जब उन्हें अन्य बड़ों जैसा व्यवहार नहीं मिलता ।

आज का युवक अपने अन्दर उठने वाली यौन भावनाओं और विपरीत सेक्स वालों के आकर्षण से परिचित है । यौन के बारे में जानकारी प्राप्त करने और जीवन में इसके महत्व को समझने की उनकी उत्कट इच्छा रहती है । डांटकर चुप कर देने की बडों की प्रवृत्ति युवा वर्गको यौन संबंधों के बारे में आवश्यक जानकारी और यौन-शिक्षा प्राप्त करने से वंचित रखती है ।

मैंने अक्सर अविभावकों के सम्मुख यह बात दोहरायी है कि यदि व्यक्ति को जानकारी नहीं है तो इसका मतलब यह नहीं कि वे नासमझ हैं । माता-पिता की ये आशंकाएँ बिल्कुल निराधार है कि युवक-युवतियों को यदि यौन-संबंधों की कोई जानकारी दी जाती है तो इसके बारे में प्रयोग करने की उनकी इच्छा तीव्र हो जाएगी । हम सभी जानते हैं कि कुछ देर से सही, मित्रों से या यौन साहित्य आदि से युवक-युवतियां सब कुछ जान ही जाएंगे ।

यह जानकारी उन्हें गलत राह दिखाएगी और घर से सही जानकारी न मिलने की स्थिति में वे यौन प्रयोग ही करना चाहेंगे । अपने पितृत्व अथवा मातृत्व के बारे में निःशंक होने के लिए युवक युवतियां अनेक प्रकार के प्रयोग करते रहते हैं । परिणामस्वरूप अंधेरे में भटकने वाला युवा वर्ग समाजविरोधी यौन संबंध न रखने के मानसिक तनावों को सह नहीं पाता है ।

यह सच है कि पुराने और आधुनिक घरों में भी सेक्स के साथ लज्जा और अपराध की भावना जुड़ी हुई हैं । परन्तु आवेशहीन स्वस्थ लहजे में यौन-सम्बन्धी सही जानकारी देकर हम युवक-युवतियों में यौन सम्बन्धी भ्रामक विचारों को मिटा सकते हैं । इससे यौन के क्षेत्र में प्रयोग करने की युवावर्ग की प्रवृत्तियों पर अंकुश लगाने में काफी सहायता मिलेगी और सेक्स के प्रति स्वस्थ दृष्टिकोण रखते हुए उनका विकास हो सकेगा ।

वयः संधि की अवस्था से गुजर रहे किशोरों का माता-पिता व समाज के मान्य सिद्धांतों के प्रति विद्रोहात्मक दृष्टिकोण होता है । यदि हम उनके व्यवहार के इस पक्ष पर जरा भी गौर से विचार करें तो पता चलेगा कि पुराने सड़े-गले मूल्यों और घटिया लक्ष्यों के प्रति उनका विद्रोह जायज है ।

अपने विचारों और कठिनाइयों में स्वतंत्र वार्तालाप के लिए किसी अन्य हमउम्र को न पाकर ये किशोर परिवार से पृथक किसी अन्य व्यक्ति के सम्पर्क में या अपने अधकचरे विचारों पर प्रयोग आरम्भ कर देने में ही सान्त्वना अनुभव करते हैं ।

हम भारत में अभी भी वंश-परंरागत अधिकार के सिद्धांत से चिपके हुए हैं । इसके मूल में हमारा विशुद्ध स्वार्थ है । हम युवा पीढ़ी को अपने पर निरंतर आश्रित बनाए रखना चाहते हैं तथा उस पर अपना अधिकार भी रखना चाहते हैं । पुराने जमाने में यह संभव था किंतु आज जब सामाजिक मूल्य बदल गये हैं और माता-पिता स्वयं बच्चों के साथ दुराव करते हैं, तो फिर इसमें आश्चर्य क्या यदि युवक प्रौढ़ों पर अविश्वास करें और विद्रोह करें ।

आधुनिक युवक-अत्यधिक मुखर

आज का युवक मुखर होता जा रहा है । जिन प्रौढ़ों पर वह श्रद्धा रखता था, वे खोखले और छिछले सिद्ध हो रहे हैं । वस्तुतः अब वह प्रौढ़ लोगों के उस अधिकार को चुनौती दे रहा है जिसके अंतर्गत वे उसकी ओर से उसके

बारे में अनेक निर्णय किया करते हैं। जब कभी किसी अपरिपक्व युवा के आदर्शों के नायक का पतन होता है तब उसकी अपरिपक्वता में असुरक्षा और परेशानी और जुड़ जाती है।

समाज विरोधी समस्याएँ

मादक द्रव्यों के सेवन, सुरापान, कुमारी माताओं, आत्महत्या और अपराध आदि की समाज विरोधी समस्याओं के बारे में मेरा यह विचार है कि शहरी युवकों को कुल जनसंख्या का केवल ३-४ प्रतिशत हो इन वृत्तियों का आदी होता है और १३-१४% लोग ऐसे हैं जो इन अपराधों में कभी-कभी प्रवृत होते हैं। अभिभावकों को चाहिए कि वे युवकों को इस बुराई की ओर न झुकने देने के लिए रोक-थाम वाले तरीके अपनाए न कि सुधार संबंधी तरीके।

एक युवा छात्र मेरे पास परामर्श के लिए आया और मेरे सामने उसने यह स्वीकार किया कि वह मादक द्रव्यों का सेवन किसी विशेष प्रयोजन से नही कर रहा बल्कि छात्र समुदाय में अपने स्तर को बनाये रखने के लिये कर रहा हूँ। अगर वह मादक द्रव्यों का सेवन करने से इन्कार करेगा तो उसे अपने समुदाय से वहिष्कृत होना पड़ेगा। इसके अलावा जिस चीज का उपयोग वर्जित है, उसे अपनाने में वह आनंद का अनुभव करता था।

यह अपने किस्म का शायद एक ऐसा मामला है जो प्रकाशमें आया है। ऐसे अन्य मामले भी होंगे जो पर्द के पीछे छिपे होंगे और अभिभावकों के भय या समाज में पर्दाफाश होने के भय से प्रकाश में नहीं आते। अस्तु हमें अभिभावक होने के नाते अपने प्रति और भी सच्चा और ईमानदार रहना चाहिए।

युवक को समय पर सलाह चाहिए

रूढ़िवादिता में जकड़े रहने के कारण क्या हमने कभी युवकों को उनके आंतरिक तनावों और विषय परिस्थितियों में मदद दी हैं? आखिरकार दवाएं युवकों की मदद कहां-तक करेंगी। हो सकता है वह किसी ऐसी परिस्थिति में फँसा हो जिसमें समझौता करना उसके लिए मुश्किल हो, इसलिए उसे कुछ थोड़ी देर के लिए कभी-कभी सम्मान भी दिया जाना चाहिए।

हमेशा किसी समस्या के समाधान के लिए रक्षात्मक तरीके अपनाना ठीक नहीं होता है। समस्या को कुछ दिनों के लिए भूल जाना चाहिए और तनावों को बाहर निकाल देना चाहिए। प्रौढ़ होने के नाते हम क्या करते हैं? सबसे पहली बात तो यह है कि हमें युवकों की मनोवैज्ञानिक आवश्यकताओं के बारे में पर्याप्त जानकारी नहीं होती।

अगर हम में से कुछ को उनकी जानकारी होती भी है तो भी न तो हमारे पास इतना समय होता है और न धैर्य कि हम युवकों की समस्याएं सुन सकें। सबसे बड़ी बात तो यह है कि धनी घरों में हम अभिभावक ही युवकों को इन सब लतों में खर्च करने के लिए पैसे देते हैं। वरना यह कैसे हो सकता है कि ३० पैसे की एक गोली के लिए आज के युवक ३-४ रुपये तक दे देते हैं। अतः हमें अपनी कमजोरियाँ स्वीकार कर लेनी चाहिए और युवकों को अपने व्यक्तित्व का विकास करने में सहायता देनी चाहिए।

कुछ महीनों पहले एक धनी घर की लड़की ने आत्महत्या की थी। उसकी डायरी में लिखा पाया गया- 'जीवन का मुझे कोई अर्थ नहीं दिखाई पड़ता-मैं अपने माता-पिता से घृणा करती हूँ।' हमारे समाज में अधिकतम आत्महत्याएं १८-२५ वर्ष की आयु वर्ग में होती हैं और उपरोक्त उदाहरण उन अनेक आत्महत्याओं में से एक ही हैं। निर्धन परिवारों में गरीबी या बेरोजगारी के कारण युवक आत्महत्या करते होंगे।

समृद्धि के खतरे

समृद्ध समाज में हमारे आज के युवको की सबसे बड़ी समस्या जीवन की निरर्थकता की समस्या है। हममें से हर एक किसी न किसी लक्ष्य की प्राप्ति के लिए उत्सुक रहता है जिसकी प्राप्ति के लिए वह प्रयत्न कर सके। अधिकांश युवकों के चेहरे पर जीवन की नीरसता से जनित

(शेष पृष्ठ ६ पर)

स्वस्थ कैसे रहें ?

डा० हरि वैष्णव

एक कहावत है" साठा सो पाठा" । इसका तात्पर्य है कि असली जवानी तो ६० वर्ष की अवस्था में आती है । दुनिया में आजकल भी कई ऐसे उदाहरण मिलते हैं जब ६० साल की अवस्था के बाद कई लोगों ने महान काम कर दिखाये हैं ।

सर विंस्टन चर्चिल के जीवन का स्वर्ण-काल ६५ वर्ष से शुरू हुआ, जब वे इंगलैंड के युद्धकालीन प्रधानमंत्री बने । महान दार्शनिक बर्टेण्ड रसेल ने अपने जीवन के उत्तरार्द्ध में ही मानव जाति को अपने विचारों से लाभन्वित किया । महान चित्रकार पिकासो अपने जीवन के अंतिम दिन तक महान कलाकृतियाँ बनाते रहे । चीन के नेता माओ त्से तुंग और स्पेन के जनरल फ्रैंको वृद्धावस्था में भी लगातार सक्रिय हैं ।

अन्तरराष्ट्रीय ओलम्पिक समिति के अध्यक्ष, एवरी बुंडागे ने ८५ वर्ष की आयु में अवकाश लिया । जिन लोगों ने उन्हें देखा है, वे कभी भी उन्हें साठ साल से अधिक का नहीं समझ सकते । उन्होंने ३५ साल की एक राजकुमारी से शादी की ।

कुशाग्र प्रतिभाशाली श्री चक्रवर्ती राजगोपालाचारी सभी सामयिक नेताओं से अधिक दिन तक जीवित रहे । इसी प्रकार महान अभियन्ता श्री विश्वश्वरैया, सुप्रसिद्ध वैज्ञानिक श्री सी० वी० रमन, महान समाज सुधारक महर्षि कर्वे और आचार्य विनोबा भावे जैसे कुछ महान लोगों की असली प्रतिभा का उन्मेष ६० साल के बाद की अवस्था में ही हुआ ।

हमें प्रायः पढ़ने को तथा सुनने को मिलता है कि रूस कि काकेशस पर्वत क्षेत्रों में अनेक लोग १०० वर्ष की आयु से अधिक उम्र तक जीवित रहते हैं । उनकी दीर्घायु का मुख्य रहस्य है-अधिक परिश्रम, बेहतर पोषाहार, चिन्तारहित जीवन और धूम्रपान तथा शराब आदि से परहेज या इनका कम सेवन ।

पोषाहार का महत्व

पौष्टिक आहार का प्रयोग किसी भी व्यक्ति के स्वास्थ्य के लिए अत्यन्त आवश्यक है । यह मनुष्य को कई भयंकर बीमारियों से बचाता है । आहार का निर्धारण करने में सामाजिक, जातीय, धार्मिक तथा मनोवैज्ञानिक तथ्यों का भी ध्यान रखना पड़ता है । इन सभी बातों को ध्यान में रखते हुए अच्छे भोजन की व्यवस्था की जा सकती है ।

किसी व्यक्ति को कुल कितने कैलोरी ऊर्जा की आवश्यकता पड़ती है, यह उस व्यक्ति की अवस्था और उसके कार्यकलापों आदि पर निर्भर होता है । प्रायः प्रति किलोग्राम वजन के लिए ३० कैलोरी ऊर्जा की जरूरत पड़ती है । लेकिन कार्यशील व्यक्ति को अधिक कैलोरी ऊर्जा की आवश्यकता पड़ती है । उसे दिन भर में २ हजार कैलोरी से अधिक ऊर्जा की जरूरत पड़ सकती है ।

हमारा आहार संतुलित होना चाहिए तथा इसमें कार्बोहाइडेट, प्रोटीन और वसा की मात्रा ६०: १५: २५ के अनुपात में होनी चाहिए । भोजन में पर्याप्त विटामिन भी होने चाहिए । आहार-नाल प्रणाली की लम्बाई के अनुसार हमें अपने भोजन को चार भागों में विभक्त कर लेना चाहिए तथा प्रत्येक व्यक्ति को अपनी आवश्यकतानुसार भोजन की मात्रा तथा उसके गुणों पर भरसक ध्यान रखना चाहिए ।

कई वृद्ध खाने-पीने के मामले में बड़ी मीनमेख निकालते हैं । अतः उन्हें मानसिक दृष्टि से सन्तुष्ट रखना चाहिए । जिन लोगों के पास मनोरंजन का कोई साधन नहीं रहता है तो भोजन ही उनके लिए एकमात्र आनन्द का साधन बन जाता है । कुछ बुजुर्ग लोगों का वजन बहुत घट जाता है, सम्भवतः अपर्याप्त भोजन ही इसका प्रमुख कारण होता है ।

आहार और शारीरिक क्षमता

आहार का निर्धारण शारीरिक क्षमता के आधार पर

होना चाहिए। मोटे लोगों को कम कैलोरी वाला भोजन करना चाहिए तथा उनके भोजन में सब्जियों, सलाद और फलों की अधिकता होनी चाहिए।

वृद्धावस्था में पेट में वायु बनने की आम शिकायत होती है। इससे बचने के लिए भोजन में कार्बोहाइडेट, प्रोटीन और मसालेदार पदार्थों की भाषा कम कर देनी चाहिए।। चाय और कहवा भी कम लेना चाहिए। यदि कोई शराब का आदी हो तो उसे मना नहीं करना चाहिए। अंजीर, इसबगोल और किशमिश को पानी में भिगोकर खाने से कब्ज दूर होता है। हृदय रोगों में या बदन में सूजन आ जाने पर नमक का परहेज करना चाहिए, अन्य दशाओं में नहीं। यदि किसी व्यक्ति को मधुमेह की बीमारी हो तो उसे चीनी और मिठाइयों से परहेज रखना चाहिये।

यदि कोई व्यक्ति हृदय रोग से पीड़ित है तो उसे घी, मक्खन और नारियल के तेल की जगह मूंगफली का तेल, सरसों का तेल और सफोला का तेल इस्तेमाल करना चाहिए! उसे अण्डे की जर्दी का भी इस्तेमाल नहीं करना चाहिए क्योंकि उसमें काफी मात्रा में चर्बी होती है।

मांस और मछली में काफी मात्रा में प्रोटीन मिलती है। शाकाहारी लोग इनकी पूर्ति दूध, दही, मक्खन और दालों से कर सकते हैं। मूंगफली और बादाम में भी काफी मात्रा में प्रोटीन मिलती है।

शरीरिक श्रम आवश्यक

शरीर के विभिन्न कार्यों को सुचार रूप से चलने के लिए नियमित रूप से शारीरिक श्रम करना जरूरी है। प्रायः देखा जाता है कि जब कोई रोगी काफी दिन बिस्तर पर पड़ा रहता है तो उसके शरीर की कई कार्य-प्रणालियों का ह्रास होने लगता है। वह बिस्तरे में पड़े रहना पसन्द नहीं करता।

शारीरिक गतिविधियों में कमी आने पर हौसला कम होने लगता हैं बल्कि शारीरिक गतिविधियों वाले वृद्ध लोग शारीरिक और मानसिक रूप से काफी चुस्त दिखाई पड़ते हैं। अधिक देर तक बिस्तरे में पड़े रहने से मांस और हड्डियों का क्षय होता है। इसलिए अपने शरीर की क्षमता के अनुसार वृद्ध व्यक्ति को कार्यरत रहना चाहिए।

प्रातःकाल या सायंकाल का भ्रमण सर्वोत्तम व्यायाम है। खुली हवा में यौगिक व्यायाम भी उनके लिए बहुत लाभकारी होता है। नख से शिख तक प्रतिदिन १५ मिनट तक का व्यायाम बहुत उपादेय होता है। कुछ भाग्यशाली लोगों को तैरने, गोल्फ, बैडमिंटन, टेबल—टेनिस आदि खेलने का भी सुअवसर प्राप्त होता है। प्रतिदिन घण्टे या आध घण्टे तक शरीर की मालिश करने से शरीर में खून का संचार अच्छी तरह होता हैं। प्राणायाम से भी अनेक लोगों को लाभ हुआ है।

हृदय के रोगों के कारण जिन लोगों को श्वास लेने में कठिनाई होती है, उन्हें हल्का व्यायाम करने चाहिए। उनके लिए शरीर की मालिश बहुत उत्तम व्यायाम है। गठिया के रोगियों को भी कुछ विशेष किस्म के व्यायाम कराये जा सकते।

स्वस्थ दृष्टिकोण

पौष्टिक आहार और व्यायाम के साथ-साथ स्वस्थ दृष्टिकोण का होना भी बहुत आवश्यक है। लोगों को वृद्धावस्था का मुकाबला करने के लिए अपने को तैयार करना चाहिए। जो लोग युवावस्था में कट्टर प्रकृति के होते हैं, जिनका सामाजिक दायरा संकुचित होता है और जिनके केवल इने-गिने मित्र होते हैं, जिनका कोई शौक नहीं होता, ऐसे लोग वृद्धावस्था में प्रायः बड़े दुःखी रहते हैं।

यद्यपि हमारे देश में रोजगार के अवसर बहुत कम हैं फिर भी बहुत से वृद्ध अंशकालिक काम करते हैं। समाज में सुयोग्य अध्यापकों, सतर्क लेखाकारों, अनुभवी प्रशासकों और अच्छे डाक्टरों की जरूरत रहती है। कई अवकाश प्राप्त अभियन्ता (इंजीनियर) अपना व्यवसाय भी शुरु कर सकते हैं।

वृद्ध लोगों के जीवन में धर्म का बड़ा ही महत्वपूर्ण स्थान है। धार्मिक संस्थाओं के सम्पर्क में रहने से उन्हें भावनात्मक सम्बल मिलता है और वे अपने को समाज से अलग-थलग नहीं समझते हैं। इस प्रकार की गतिविधियों

(शेष पृष्ठ २४ पर)

रोजी कमाने वाले बच्चे और उनकी समस्याएँ

—सुश्री सरोज अग्रवाल—

किसी भी होटल में चाय पीते समय या फिर खरीददारी करते समय आपने गिलास और कप-बसी उठाते अथवा दुकानों पर काम करते छोटे-छोटे बच्चों को अवश्य देखा होगा। हो सकता है कि आपके मन में यह भी आया हो कि कितना चंट लड़का है, खाने-खेलने की उम्र है और धन्धे में लग गया। यह भी सम्भव है कि कभी उनके भद्दे मजाक और गंदी गाली आपके कानों में पड़ी हो या लापरवाही से फूंकी गई बीड़ी का धुआं आपकी नाक के पास से गुजरा हो। क्या कभी आपने गहराई से सोचा है कि ये नन्हीं कलियाँ खिलने से पूर्व ही मुरझाने की ओर क्यों चल देती हैं? समाज के सबसे महत्वपूर्ण समझे जाने वाले अंग को क्यों मजबूर होकर रोजी कमाने जाना पड़ता है? उनके रोजी कमाने जाने से समाज पर क्या असर पड़ता है? इन मासूम बच्चों की क्या-क्या समस्याएँ हैं? ये अपने मालिकों द्वारा बेरहमी से पीटे जाते हैं। सुबह से लेकर रात तक काम करते हैं। बुराइयों और बुरी लतों में पड़ते जाते हैं, इनमें अपराध प्रवृत्ति पनपती जाती है और अन्त में समाजद्रोही गतिविधियों मे माहिर हो जाते हैं।

कितने बच्चे रोजी कमाने जाते हैं, यह बात बाद में सोचने की है। मछली तो एक ही सारा तालाब गन्दा कर देती है। फिर जिन बच्चों पर सम्पूर्ण राष्ट्र का भविष्य निर्भर रहता है, उनमें से एक को भी यदि गलत राह पर चलने का अवसर दिया गया तो वह समाज की सबसे बड़ी भूल होगी! अतः रोजी कमाने वाले बच्चों की समस्या को तनिक गहराई से सोचकर उसका समाधान प्रस्तुत करना होगा।

साधारणतया रोजी कमाने वाले बच्चों को हम दो वर्गों में विभाजित कर सकते हैं। एक तो वे जो स्वयं का धन्धा करते हों। इस श्रेणी में छोटी मोटी दुकान लगाने वाले बच्चे, सड़क पर माल बेचने वाले बच्चे पालिश करने वाले बच्चे या फिर अपने संरक्षक के साथ पूरे समय हाथ बँटाने वाले बच्चे आते हैं। दूसरे वे जो कि नौकरीपेशा हैं। पहले वर्ग के बच्चों से समाज को कम हानि होती है। असमय में ही काम का भारी बोझ आ जाने के कारण उनके विकास में बाधा पड़ती है। कृषि-प्रधान देश भारत में तो अभी भी अधिकांश किसानों के बच्चे पढ़ने नहीं जाते। खेतों पर ही काम करते हैं। कुशल श्रमिकों के बच्चे भी प्रायः पैतृक कौशल सीख लेते हैं और उसी में सिद्धहस्त हो जाते हैं। ऐसे बच्चों को अक्षरज्ञान भले ही कम मिल पाता हो या फिर न भी मिल पाता हो पर उन्हें कार्यात्मक ज्ञान काफी प्राप्त हो जाता है। यहाँ भी एक बात तो निश्चित है कि इन बच्चों का उतना विकास तो नहीं हो पाता जितना अपेक्षित है। फलतः उनका ज्ञान बड़ा संकुचित रह जाता है। बचपन से ही बालकों को रोजगार पर लगा देने से उन्हें शिक्षा प्राप्त करने के अवसर से वंचित रह जाना पड़ता है। अशिक्षित बालक समाज तथा कानून द्वारा मान्य कार्यों के महत्व को समझ नहीं पाता है और न ही एक अच्छा नागरिक बन पाता है।

दूसरे वर्ग के बच्चे जो नौकरी करते हैं समाज को कई प्रकार से हानि पहुँचाते हैं। कष्टसाध्य और अधिक घंटों के काम से उनके स्वास्थ्य पर विपरीत प्रभाव पड़ता है। बीड़ी-सिगरेट और शराब से लेकर जुए तक के आदी हो जाते हैं। जो बालक नाइट क्लब, नाटक या नृत्य कम्पनी, वेश्यालय, होटल या शराब की दुकान आदि में काम करते हैं, उनमें व्यभिचार और ठाठ बाट की जिन्दगी व्यतीत करने की उत्कट अभिलाषा तथा बुरी आदतें पनप जाती हैं। फिर यही बच्चे बाल अपराधी बनकर समाज के सामने आते हैं। अधिकांश समस्याएं इसी दूसरे वर्ग के बच्चों की हैं

जिन पर हमें विचार करना है ।

बच्चों को रोजी क्यों कमानी पड़ती है ?

बच्चों के छोटी आयु में रोजी कमाने का प्रमुख कारण है निर्धनता । अधिकांश परिवारों में बच्चों की संख्या अधिक है । एक व्यक्ति की आय से पूरे परिवार का भरण-पोषण सम्भव नहीं हो पाता । माता-पिता सोचते हैं 'पढ़ लिखकर कौन कलक्टर बनना है । काम-धन्धा करेगा कुछ सहारा मिलेगा ।' अधिकांश माता-पिता बिल्कुल नहीं चाहते कि उनका बच्चा अभी से रोजी कमाने के चक्कर में फँसे । वे उसे पढ़ा-लिखाकर योग्य बनाना चाहते हैं । पर उन्हें लाचार होकर उसे नौकरी करने भेजना पड़ता है । ऐसे परिवारों की और ऐसे बच्चों की अपनी मजबूरी है । कुछ बच्चे कुसमय में ही माता-पिता की छत्रछाया से वंचित हो जाते हैं । उन्हें भी लाचार होकर पेट पालने के लिए धन्धे या नौकरी की शरण लेनी ही पड़ती है ।

कुछ बच्चे ऐसे भी होते हैं जो कि दुष्ट संगति या वातावरण के दुष्प्रभाव में आकर नौकरी की ओर प्रवृत्त हो जाते हैं । एक परिचित हैं. उनका काफी सम्पन्न परिवार है । कई लड़के अच्छे पदों पर भी हैं । छोटे लड़के को भी पढ़ाना चाहते हैं । परन्तु क्या करें ? लड़के ने पढ़ाई-लिखाई छोड़ दी । कहीं नौकरी कर ली । शौक-मौज में पैसा फूंकने लगा । वातावरण के प्रभाव में आकर रोजी कमाने वाले बच्चे अपराधवृत्ति की ओर जल्दी अग्रसर होते हैं ।

कुछ बच्चे ऐसे होते हैं कि जिनकी स्वाभाविक रुचि ही रोजी कमाने की ओर होती है । पढ़ाई-लिखाई की ओर उनकी कोई रुचि नहीं होती । विनोद नाम के एक काफी सम्पन्न परिवार के लड़के का उदाहरण मेरे सामने है । यह लड़का जब चौथी या पाँचवीं कक्षा में पढ़ता था तभी से उसे यह शौक हो गया । उसने घर के पास में ही टाफी और गोलियाँ बेचना शुरू किया । रुचि, उद्यम, और भाग्य की बात । पढ़ना-लिखना छोड़कर जनरल मर्चेन्ट की दुकान खोल ली । खूब चली । पर सन्तोष नहीं हुआ । पैतृक धंधा सर्राफे का था । आजकल यह महाशय विनोदकुमार सर्राफे के नाम से मशहूर हैं ।

विश्व में रोजी कमाने वाले बच्चों की सबसे अधिक संख्या जापान में है । इसके बाद अमेरिका, जर्मनी, इंग्लैंड आदि देशों का नम्बर आता है पर विदेशों की बात बिल्कुल अलग है । वहाँ बच्चों का आत्मनिर्भर हो जाना एक फैशन-सा बन गया है । वहाँ काम करने की परिस्थितियाँ भी ऐसी होती है कि बच्चों के सामने कोई विशेष समस्याएं उत्पन्न ही नहीं होतीं । हमें अब देखना यह है कि भारत में कितने बच्चे ऐसे हैं जिन्हें किसी भी कारण से रोजी कमाने जाना पड़ता है । रोजी कमाने वाले बच्चों की संख्या के ताजे आंकड़े उपलब्ध नहीं है । १९६१ की जनगणना के अनुसार १४ वर्ष तक की आयु समूह के बालकों में काम करने वाले बालकों की संख्या १४५ लाख थी ! यह संख्या कुल बच्चों की संख्या की ८ प्रतिशत है ।

यह भी एक महत्वपूर्ण बात है कि हम यह देखें कि किस वर्ग के लोगों के बच्चे रोजी कमाने अधिक जाते हैं । अनुसंधानों से पता चला कि मुख्यतया शहरी अथवा अर्धशहरी क्षेत्रों में निम्न वर्ग के परिवारों के बच्चे रोजगार के क्षेत्र में अधिक हैं । कारण साफ है । शहर में महँगाई अधिक होती है । परिवार का भरण-पोषण हो नहीं पाता अतः बच्चों का सहारा लेना पड़ता है । ग्रामीण क्षेत्रों में खेती-किसानी में लगे बच्चों की संख्या तो ज्यादा मिलेगी परन्तु नौकरीपेशा बच्चों की नहीं ।

अब हमें यह देखना है कि भारत में बच्चों को अधिकांशतः रोजगार कहाँ-कहाँ मिलता है और इन क्षेत्रों में वातावरण कैसा रहता है ? क्या यह वातावरण बच्चों के अनुकूल रहता है ?

कारखानों में काम करने वाले बच्चे

प्रायः यह देखा गया है कि बच्चों को मिलों अथवा छोटे कारखानों में काम दे दिया जाता है । औद्योगिक नगरियों में अधिकांश श्रमिकों के बच्चे किसी न किसी कार्य में लग जाते हैं । यहाँ इन्हें प्रायः अन्य श्रमिकों के साथ मिलकर काम करना पड़ता है । इनके साथ रहने से

उनकी अनेक बुरी आदतें बच्चे भी सीख जाते हैं अन्य बुरी आदतों में तीन आदतें विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं—एक तो बीड़ी-सिगरेट पीने की आदत, दूसरी जुआ खेलने की आदत और तीसरी विकृत यौन कार्यकलाप संबंधी आदतें। पहले तो मजाक-मजाक में वयस्क श्रमिक बच्चों से एक कश लगवाते हैं और कभी-कभी जबरदस्ती भी करते हैं और यहीं से उनमें इस बुरी लत का बीजारोपण हो जाता है। ठीक इसी प्रकार अवकाश के समय में जब वयस्क श्रमिक आपस में जुआ खेलते हैं तो बच्चों को भी शामिल कर लेते हैं। यही जुआ खेलने की आदत कुछ बच्चों मे इतनी गहरी पैठ जाती है कि वे आगे चलकर पक्के जुआरी बन जाते हैं। न केवल अपनी कमाई को फूंककर घर लौटते हैं बल्कि मौके-बे-मौके घर की चीजों पर भी हाथ साफ कर अपना शौक पूरा करने लगते हैं। वयस्क श्रमिक आपस में भद्दे मजाक, गन्दी गालियाँ और यौन संबंधी बातें करते हैं। उनके साथ काम करने वाले बच्चे यह सब कुछ सुनते हैं। उनमें यौन जिज्ञासा पैदा होती है। इतना ही नहीं उन बच्चों में यौन के संबंध में विकृत मनोभाव भी पैदा हो जाता है। (क्रमशः)

(शेष पृष्ठ १६ का)

मात्रा समाप्त हो जाती है। इसलिए पत्ते वाली सब्जियों को धूप में नहीं रखना चाहिए।

पत्ते वाली ताजी सब्जियोंको उपयोग करना चाहिए। इन सब्जियोंके जमा करनेसे इनमें विद्यमान विटामिन नष्ट हो जाते हैं।

सब्जियां थोड़ी देर के लिए पकानी चाहिए तथा पकानेके बाद जितनी जल्दी हो सके खा लेनी चाहिए। इससे विटामिन सी कम मात्रा में नष्ट होगी।

(राष्ट्रीय पोषक आहार अनुसंधान संस्था, हैदराबाद)

Kurazol
(Liquid & Tablet)
A Remedy for Asthma
● ● ●

Adiol Compound
A General Pick-up
● ● ●

Hemogastrin
A Digestive & Haematinic Tonic
● ● ● ●

Lycoliv
A Liver Tonic
● ● ●

Products of :
INTERNATIONAL CHEMICAL & BIOLOGICAL INSTITUTE
PRIVATE LIMITED
KURAZOL HOUSE, BANGALORE-4.

सब्जियाँ-अच्छे स्वास्थ्यके लिए आवश्यक

यह धारणा सही नहीं है कि अच्छे स्वास्थ्यकी कुञ्जी मांसांहारी भोजन है। सब्जियोंमें भी विटामिन तथा खनिज जैसे पोषक तत्त्व काफी मात्रा में मौजूद हैं।

विटामिन ए के महत्वको कौन नहीं जानता। ये विशेषकर आंख की ज्योतिको बनाये रखनेके लिए बहुत उपयोगी है। भोजनमें विटामिन ए की नितान्त कमी या इसे उपयुक्त मात्रामें न लेनेसे कई लोगों की आँखों की ज्योति चली गयी है।

कई सब्जियोंमें कैरोटीन नामक एक पदार्थ होता है जिसे शरीर विटामिन ए में परिवर्तित कर लेता है। पीले या नारंगी रंगकी ऐसी सब्जियाँ जिनमें गहरे हरे रंगका गूदे वाला हिस्सा होता है, काफी मात्रामें कैरोटीन होता है। गाजर, सीताफल, पक्का पपीता तथा आममें काफी मात्रा में कैरोटीन होता है इन चीजोंके खानेसे भोजनमें विटामिन ए की मात्रा सन्तोष जनक बनी रहती है।

अन्य सब्जियों की अपेक्षा हरे पत्तों वाली सब्जियोंमें कैरोटीनकी मात्रा अधिक होती है। ये सब्जियाँ आसानीसे उपलब्ध हैं और इन्हें औसत मनुष्य भी खरीद सकता है। हरे पत्ते जैसे, पालक, सहजनकी पत्तियों, धनियेंकी पत्तियों और चौलाईके सागमें कैरोटीनकी मात्रा अधिक होती है। सब्जीका पत्ता जितना अधिक हरा होगा, उसमें उतनी ही अधिक कैरोटीन की मात्रा होगी।

रिबोफलावीनमें विटामिन बी होता है। यह सामान्यतः मँहगे खाद्य पदार्थों जैसे दूधमें होता है, लेकिन विटामिन बी पत्तों वाली सब्जियोंमें भी होता है।

शरीरको विटामिन सी की भी आवश्यकता रहती है जो मसूड़ों, दांतों तथा हड्डियोंको ठीक हालतमें रखता है। बहुत सी सब्जियों जैसे टमाटर, गोभी, पालक तथा नीबूमें विटामिन सी काफी मात्रामें होता है। बन्द गोभीके बाहर के हरे पत्तोंमें विटामिन सी अन्दरके सफेद पत्तोंसे अपेक्षाकृत अधिक मात्रामें होती है। हममें से प्रायः लोग गोभीके बाहर वाले पत्ते फेंक देते हैं, लेकिन यह ठीक नहीं है। बाहरके पत्ते धोकर उनका भी उपयोग करना चाहिए। अक्सर ताजी सब्जियोंमें विटामिन सी की मात्रा अधिक होती है। लेकिन जब सब्जियोंको कुछ दिनके लिए रखा जाता है तो विटामिन सी की मात्रा कुछ कम हो जाती है। आंवले में विटामिन सी की मात्रा बहुत अधिक होती है।

सब्जियोंमें कैलशियम और लोहे जैसे खनिज लवण भी होते हैं। हमारे आहारमें कैल्शियमकी प्रायः कमी होती है जो हड्डियों और दांतों को मजबूत बनाता है। लोहा रक्त बनाने के काम आता है। रक्त में लाल रंग लोह पदार्थोंसे बनता है। जिन लोगोंमें लोहे की कमी होती है वे अधिकतर पीले दिखाई देते हैं। रक्त की कमी अधिकतर गर्भवती तथा दूध पिलाने वाली स्त्रियोंमें दिखाई देती है, इसलिए इन स्त्रियोंको पत्ते वाली सब्जियों जैसे चौलाईका साग, पालक तथा मैथी का अधिक प्रयोग करना चाहिए। जिस पानीमें सब्जियाँ उबाली जाती है, उसे ६ महीनेके बच्चों को भी पिलाया जा सकता है।

सब्जियोंमें प्रायः प्रोटीनकी मात्रा कम होती है, लेकिन सेम की पत्तियों आदि में दूसरी सब्जियोंकी अपेक्षा प्रोटीन की मात्रा अधिक होती है।

सब्जियोंमें महत्वपूर्ण पौष्टिक तत्वोंके अतिरिक्त कब्ज दूर करनेका गुण भी है। जिन लोगोंको कब्जकी शिकायत रहती हैं, उन्हें अधिक सब्जियों विशेष कर पत्त वाली सब्जियोंका उपयोग करना चाहिए।

कन्दमूल जैसे आलू तथा टेपिओका आदिमें कार्बोहाईड्रेट् काफी मात्रामें रहता है और इनसे शरीरको शक्ति मिलती है! दूसरी अन्य सब्जियोंमें कार्बोहाईड्रेट्की मात्रा अधिक नहीं होती इसलिए भार घटानेके लिए आहारमें

उन सब्जियोंको अधिक खाना चाहिए जिनमें कार्बोहाईड्रेट् कम हों। इन सब्जियोंसे शक्ति कम मिलती है लेकिन इनमें विटामिनों तथा खनिजों की मात्रा अधिक होती है।

हरे पत्तों वाली सब्जियाँ कन्दमूल तथा अन्य सब्जियाँ हमारे दैनिक आहारका अंग होनी चाहिए। पोषक आहार विशेषज्ञों की रायमें बालिग व्यक्तिको प्रतिदिन १०० ग्राम हरे पत्ते वाली सब्जियाँ, ७५ ग्राम कन्दमूल तथा ७५ ग्राम अन्य सब्जियां लेनी चाहिए।

यह आम धारणा है कि पत्ते स्वास्थ्यके लिए अच्छे नहीं होते और उनमें कीड़े होते हैं अगर पत्तोंको अच्छी तरहसे साफ किया जाए तथा गन्दे पत्तोंके फेंक दिया जाए तो कीड़े साफ हो जाएँगे। बहुत अधिक हरे पत्ते खाने पर पेचिश हो सकती है लेकिन अगर इन्हें आवश्यक मात्रामें खाया जाय तो ये शरीरके लिए वास्तवमें काफी लाभदायक है।

खाद्य पदार्थोंमें शायद पत्ते वाली सब्जियां ही ऐसी हैं जो सस्ती तथा पौष्टिक होती हैं। इसके अतिरिक्त ये सब्जियां हर जगह पर काफी मात्रामें उपलब्ध होती हैं। पालक. चौलाई, मेथी इत्यादि जो आमतौरपर हर जगह मिल जाती हैं।

पत्ते वाली सब्जियोमें खनिज लोहकी मात्रा अधिक होती है। हालाँकि शरीरमें लोहेकी कुल मात्रा कम होती है लेकिन इसकी भूमिका बहुत महत्त्वपूर्ण है। रक्तके रंग लाल होनेका कारण उसमें एक तत्व हीमोग्लाबिनका विद्यमान होना है। यह तत्व आक्सीजन को फेफड़ोंमें ले जाकर उसे तन्तुओंमें भेज देता है। लोहा हीमोग्लोबिनका प्रमुख अंग है इसलिए जिन लोगोंमें लोहे की कमी होती है, वे पीले दिखाई देते हैं तथा उनमें रक्तकी कमी होती है। गर्भवती तथा दूध पिलाने वाली स्त्रियोंको विशेषकर लोहेकी मात्रा लेनेमें सावधानी बरतनी चाहिए। इसके लिए उन्हें पत्ते वाली सब्जियोंका अधिक उपयोग करना चाहिए। मांसाहारी लोगोंको लोहा गुर्दे जैसे खाद्य पदार्थों से मिल जाती है। शाकाहारी व्यक्तियोंको लोहेके लिए पत्ते वाली सब्जियों पर निर्भर रहना पड़ता है। पकी हुई पत्ते वाली सब्जियां ६ महीनेके बच्चेको भी दी जा सकती है।

पत्ते वाली सब्जियों में काफी मात्रामें कैल्शियम होता है जो हड्डियोंके लिए बहुत आवश्यक है। इसलिए बढ़ते हुए बच्चों गर्भवती स्त्रियों तथा दूध पिलाने वाली स्त्रियों को प्रतिदिन इन सब्जियोंका उपयोग करना चाहिए। खनिजोंके अतिरिक्त पत्ते वाली सब्जियोंमें शरीरके लिए आवश्यक विटामिन होते हैं। पत्ते वाली सब्जियोंमें विटामिन सी भी होता है. जो मसूड़ोंके लिए उपयोगी है।

प्रायः सब्जियां पकाते वक्त विटामिन सी की काफी मात्रा में नष्ट होने की सम्भावना होती है लेकिन अगर पत्तेको उबलते पानी में छोड़ दिया जाय तो एक तो पकाने का समय काफी कम हो जाएगा तथा विटामिन सी भी कम मात्रामें नष्ठ होगा।

पत्ते वाली सब्जियोमें कैरोटीन तथा विटामिन सी के अतिरिक्त दूसरे विटामिन भी होते हैं जो शरीरके लिए आवश्यक है। सब्जियोंसे रिबोफ्लाबीन, फोलिक एसिड, विटामिन बी तथा विटामिन के भी मिलता है। रिबोफ्लाकी कमीसे मुँहके कोने फटने लगते हैं।

फोलिक ऐसिड लाल रक्त कोशिकाओंके निर्माणके लिए आवश्यक है। फोलिक ऐसिडकी कमीसे एक प्रकार की रक्ताल्पता हो जाती है।

याद रखिए—सब्जियोंसे अधिक से अधिक पौष्टिक तत्व प्राप्त करनेके लिए सब्जियां पकाते वक्त कुछ आवश्यक सावधानियाँ बरतनी चाहिए। वे हैं—

जब सब्जियों को तला जाता है तो कैरोटीनके नष्ट होने की सम्भावना रहती है, इसलिए सब्जियाँ तलनेकी अपेक्षा पानीमें पकाकर खानी चाहिए।

पत्ते वाली सब्जियाँ पकाते समय बर्तनको अच्छी तरह से ढक देना चाहिए क्योंकि खुले बर्तनमें पकानेसे विटामिन सी नष्ट होने की सम्भावना रहती है।

खाद्य पदार्थोंको धूप में रखनेसे कैरोटीनकी काफी

(शेष पृष्ठ १४ पर)

पिताके पत्र—पुत्रवधूके नाम—३

देहरादून।
मार्च ३०, १९७३।

चि० बेटी गीता,

आशा है स्वस्थ और प्रसन्न होगी। अभी दो-तीन दिन पहले मैंने अपना दूसरा पत्र पोस्ट किया था। मिल गया होगा। लिखना कैसा बना है। भाषा आसानीसे समझमें आ पाती है या नहीं।

तुम्हारे पत्र की प्रतीक्षा किये बिना यह अगला पत्र लिख रहा हूँ। वर्तमान सन्दर्भ में तुम्हारे लिये आवश्यक विषय वस्तु को यथाशीघ्र इस पत्र शृखला के माध्यम से तुम्हे बता देना चाहता हूँ। शुरू के ये पत्र तो केवल भूमिका की तरह हैं। मतलब की बात-चीत अगले पत्रों में करूंगा।

हो सकता है अभी परीक्षा निकट होने के कारण तुम्हें इन पत्रों में रुचि न हो। तुम इन्हें ढंग से फाइल के रूप में रखती जाओ। जब फुरसत हो और मूड बने तब पढ़ना। फाइल बनाने में सुविधा हो इसीलिये मैं इन्हे टाइप करके भेज रहा हूँ यद्यपि प्राथमिकरूपेण ये पत्र तुम्हे सम्बोधित करके लिख रहा हूँ परन्तु इनमें कही जाने वाली बातें अशोक के लिए भी उतनी ही अभिप्रेरित है, जितनो तुम्हारे लिये। उपयुक्त अवसर पर अशोक को भी यह पत्रावली पढ़ने को देना।

अपने पिछले पत्र में मैंने संकेत किया था कि आधुनिक मानव-समाज में विवाह संस्था के दो प्रमुख रूप बने है। कुछ संस्कृतियो में विवाह एक अनुबन्ध मात्र है। उदाहरणतः मुस्लिम समाज के विवाह का ढंग इकरारनामे की तरह का होता है। जिसमें दोनों पक्षों की स्वतंत्र स्वीकृति रहती है। हिन्दू विवाह इस तरह के वैज्ञानिक अनुबन्धन से बृहत्तर एक पुण्य धार्मिक संस्कार माना गया है। यहां केवल इस जीवन भर के लिये ही नहीं अपितु पारलौकिक[1] जीवन एवं भावी जन्म-जन्मान्तरों[2] के लिए इस सम्बन्ध के बने रहने की कल्पना और कामना की जाती है।

विवाह के इन दोनों ढंगों के अपने-अपने गुण दोष है। मूलतः दोनों प्रकार के विधानों की रचना के हेतु शुभ ही रहे होंगे। कालान्तर में तरह-तरह के रूढ़िवादी[3] विधि विधान, रीति-रिवाज और दूसरे दोष इनमें जुड़ते गये। इनके कारण अब सामान्य व्यवहार में दोनों के रूप विकृत बन गये हैं।

विवाह चाहे वह अनुबन्ध हो अथवा संस्कार, एक स्त्री विशेष और एक पुरुष विशेष के बीच समाजानुमोदित[4] सम्बन्ध की व्यवस्था करता है। तब एक नर और एक नारी साथ रहकर अपने परिवार की रचना करते है। विवाह संस्था परिवार को स्थायित्व और सुरक्षा प्रदान करती है. परिवार समाज की इकाई है। इस तरह विवाह व्यक्ति और समष्टि[5] दोनों के लिए कल्याणकारी है।

इधर कुछ तथाकथित प्रगतिशील लोग विवाह संस्था की आलोचना करने लगे है। कुछ एक तो इस हद तक प्रतिक्रियावादी बन जाते है कि वे समाज से विवाह-संस्था के आमूल निराकरण की बातें करते हैं। उनकी यह प्रतिक्रिया या तो उन अरुचिकर घटनाओं और अनुभवों पर आधारित होती है जहां विवाह दयनीय ढंग से असफल हुए है या फिर उन व्यक्तियों की अपनी उच्छृंखल प्रकृति का परिचय देती है जो किसी तरह के नियम सयम से नहीं बंधना चाहते, परिवार और समाज के लिए व्यक्तिगत जीवन में किसी भी तरह का अनुशासन उन्हें स्वीकार नहीं होता और केवल उन्मुक्त आचरण ही जिनका एकमात्र प्रेय होता है। इनमें से दूसरी तरह के लोगों के बारे में मुझे कुछ विशेष नहीं कहना है। समाज में हमेशा और हर क्षेत्र में ऐसे लोग देखने को मिलते हैं। ऐसे व्यक्ति समाज की मुख्य धारा के अंग नहीं होते। बहती नदी के किनारे पर के कूड़े-कचरे की तरह ही इनका भी अस्तित्व होता है। हां, जहाँ विवाह संस्था की असफलता की बात

की जाती है, इनके लिए मैं कहना चाहूँगा कि यह असफलताएं विवाह की नहीं होती बल्कि उन दो व्यक्तियों की की होती हैं जिन्हें परस्पर साथ रहना नहीं आता है। ऐसे व्यक्ति जीवन के प्रायः सभी क्षेत्रों में असफल रहते है। जो लोग खुद अच्छे नागरिक नहीं बन पाते वे अच्छे पति-पत्नी और अच्छे मां-बाप भी नहीं बन सकते। ऐसे व्यक्तियों के लिए चाहे जैसा विवाह हो असफलता की आशंका रहती है।

अधिकार और दायित्व विवाह संस्था के अनिवार्य अंग है। इनका सामंजस्यपूर्ण व्यवहार इस व्यवस्था की सफलताका रहस्य है। परस्पर आदान-प्रदान इसका प्राण है। यहाँ आदान-प्रदान होते हुए भी लेन-देन और तेरे-मेरे की बात नहीं रहती। परस्पर आत्मार्पण[६] की भावना सवोपरि होती है। स्त्री-पुरुष का सर्वांगीण एकात्म्य विवाह संस्था का चरम विकास है।

कुछ चर्चा इस प्रसंग पर भी करना चाहूँगा कि विवाह के हेतु और दायित्व क्या हैं। इस चर्चा को मैं केवल हिन्दू संस्कृति की पृष्ठभूमि तक ही सीमित रखखूंगा।

हिन्दू संस्कृति के अनुसार मनुष्य के लिए चार पुरुषार्थों का विधान है। पुरुषार्थ से अभिप्राय जीवन में उपलब्ध करने योग्य वांछित हेतु से है। ये पुरुषार्थ हैं-धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष। हिन्दू संस्कृति में यह मान्यता है कि जीव की मृत्यु के बाद उसकी आत्मा[८] का पुनर्जन्म होता है। इहलौकिक[९] जीवन को कुछ झंझट की सी बात माना गया है। पुनर्जन्म की संभावना से मुक्त होकर आत्मा को परमात्मा[१०] में लीन होने की स्थिति को मोक्ष कहा गया है। आधुनिक वैज्ञानिक विवेक को न लौकिक जीवन झंझट लगता है, न पुनर्जन्म की बात समझ में आती है और न मोक्ष की (कल्पनापूर्ण) कामना का औचित्य प्रतीत होता है। इसलिये वर्तमान सन्दर्भ में व्यवहारतः केवल प्रथम तीन पुरुषार्थों का ही महत्व रह जाता है।

प्राचीन हिन्दू संस्कृति में मनुष्य जीवन के लिए चार आश्रम[११] की व्यवस्था भी गयी थी-ब्रह्मचर्य,[१२] गृहस्थ,[१३] वानप्रस्थ,[१४] संन्यास[१५]। अपने मूल स्वरूप में अब ये पहले की तरह व्यावहारिक नहीं रह गये है। अब विवाह से पूर्व की स्थिति अपने परिवार में माता-पिता के साथ व्यतीत होती है। तभी अपने भावी जीवन की तैयारी के लिए शिक्षा और व्यावहारिक प्रशिक्षण प्राप्त किया जाता है। विवाह के बाद गृहस्थ आश्रम की शुरुआत होती है। परिवार का निर्माण होता है। फिर यही स्थिति रहती है। इसी गृहस्थ जीवन की स्थिति में इन तीनों पुरुषार्थों-धर्म, अर्थ और काम की उपलब्धियाँ दम्पति करते हैं।

इन पुरुषार्थों की सम्यक् उपलब्धि विवाहित दम्पति ही ढंग से कर पाते हैं। यही मूलतः स्त्री-पुरुष के विवाह का हेतु है। विवाह के बिना मनुष्य का व्यक्तित्व अधूरा रहता है। इसी बात के महत्व को ध्यान में रखते हुए कहा गया है-अयज्ञियो एषवा यो पत्नीकं' अर्थात बिना पत्नी के व्यक्ति को यज्ञ का अधिकार नहीं होता है। यज्ञ से अभिप्राय विभिन्न कर्तव्यों की पूर्ति से है, यथा-देवयज्ञ ऋषियज्ञ, पितृयज्ञ, और भूतयज्ञ आदि। देव यज्ञ का तात्पर्य धार्मिक अनुष्ठानों के करने से है। ऋषियज्ञ का अभिप्राय ऋषियों द्वारा प्राप्त ज्ञान का प्रसार करना है। पितृयज्ञ का अर्थ माता-पिता के प्रति दायित्वों के निर्वाह से है। भूतयज्ञ में सभी जीवों के प्रति दया और पोषण की भावना रहती है। स्पष्ट है कि ये सभी कार्य अकेला व्यक्ति ढंग से नहीं कर सकता। पति-पत्नी मिलकर ही इनका समुचित निर्वाह कर पाते हैं। इसीलिये विधान बना था कि पत्नी के बिना यज्ञ का फल प्राप्त नहीं होता। पुरुष के जीवन में पत्नी की इस महत्ता के कारण ही स्त्रीको धर्मपत्नी की संज्ञा दी गयी है।

इस तरह प्राचीनकाल से ही हिन्दू संस्कृति की व्यावहारिक मान्यता रही है कि जीवन में वांछित पुरुषार्थों की उपलब्धि के लिए तथा विभिन्न यज्ञों (कर्तव्यों) के सम्पादन के लिए विवाहित स्थिति जरूरी है। इसलिये विवाह को एक अनिवार्य धार्मिक संस्था का रूप दिया गया है।

उपयुक्त विवेचना में इस्तेमाल किये गये शब्दों (पुरुषार्थ, आश्रम, यज्ञ आदि) की ध्वनि प्राचीनता का आभास कराती है। तुम्हें भ्रम हो सकता है कि मैं पुरातन

वादी मानस[१६]लेकर बातें कर रहा हूँ । पर सचमुच ऐसा नहीं है । इन कथित प्राचीन सूत्रों[१७]का आज के व्यावहारिक जीवन में भी उतना ही महत्व है । जरूरत केवल इस बात की है कि इस शब्दों और संस्थाओं का अपने अतीत के रूढ़िवादी स्वरूप से अलग करके जीवन और समाज के वर्तमान व्यावहारिक सन्दर्भों के अनुसार इनके अर्थ किये जांय ।

वर्तमान वैज्ञानिक परिवेश में मोक्ष की निरर्थकता के बारे में संकेत कर चुका हूँ । अर्थ से अभिप्राय जीवन के लिये जरूरी सभी भौतिक आवश्यकताओं और उपलब्धियों से है । काम में व्यक्तिकी अपनी जैविक यौनिक आवश्यकता[१८]और प्रकृति का मूल हेतु प्रजनन दोनों ही निहित हैं । धर्म शब्द की ध्वनि से सहसा कुछ विशेष विशेषणों वाली परम्पराओं और आडम्बरयुक्त बातों का आभास होता है । ये सब धर्म नहीं है । धर्म जीवनको अनुसाशित[१९] बनाने का व्यापक साधन है । अर्थ और काम के प्रति स्वस्थ सम्यक् दृष्टि के लिये भी धर्म जरूरी है । इन सभी पर चर्चा अगले पत्रों में करूंगा ।

यज्ञ शब्द से अभिप्राय कर्तव्यों से है । प्रकट है कि प्राचीनकाल की सामाजिक परिस्थितियों और मान्यताओं के अनुसार ही दम्पति के लिये तब आवश्यक यज्ञों का विधान भी किया गया था । यहां भी वर्तमान सामाजिक परिवेश और दम्पति के व्यक्तिगत सन्दर्भों के अनुसार यज्ञों (कर्तव्यों की नयी व्याख्या करने की जरूरत है ।

आश्रमों की रचना पुरुषार्थों की उपलब्धियों और यज्ञों के सम्पादन कर पाने के साधनों के रूप में की गई थी । इनके परम्परागत रूप अब सचमुच अव्यावहारिक बन गये हैं । गृहस्थ जीवन से पूर्व की स्थिति अब अपने परिवारों में मां-बाप के साथ ही व्यतीत होती है । इस अवधि में विद्योपार्जन और दूसरे व्यावहारिक ज्ञान अर्जित किये जाते है । ब्रह्मचर्य एक व्यापक शब्द है । इसको चर्चा भी अगले पत्र में करूंगा ।

गृहस्थ आश्रम का रूप आज भी विद्यमान है । यही सर्वाधिक महत्वपूर्ण और व्यावहारिक भी है । वानप्रस्थ और संन्यास के परामपरानुगत ढंग अब अव्यावहारिक हो गये हैं । अपने जीवन की मौजूदा स्थिति में तुम्हें इन बातों से कोई विशेष सरोकार भी नहीं है । हां, यदि परिवार के बड़े-बूढ़े सदस्य घरों में रहते हुए भी अपने सोचने और बरतने का ढंग वानप्रस्थ और संन्यास आश्रमों की मूल दृष्टि के अनुसार बना सकें तो मौजूदा परिवारों के बहुत से तनाव तथा नयी और पुरानी पीढ़ियों के संघर्ष अनायास कम हो सकते हैं ।

इस पत्र में इतना ही पर्याप्त है । अगले पत्र में विवाह के पात्रों के चयन के बारे में चर्चा करूंगा ।

मैं जानना चाहूँगा कि इण्टर और बी० ए० में तुम्हारे क्या विषय थे और मीडियम क्या था, ताकि उसी के अनुसार पत्रों को सुगम रूप दे सकूं । लखनऊ में तुमने बताया तो था पर लगता है मैं भूल गया हूँ ।

आज सवेरे तुम्हारी आन्टी को सहसा दिल्ली जाना पड़ा । इला की नानीजी की तबियत बहुत खराब है ।

तुम्हारा
सुरेन्द्रनाथ गुप्त

---

१. पारलौकिक जीवन—हिन्दू धर्म में यह मान्यता है कि इस दुनिया से मृत्यु के बाद व्यक्ति परलोक जाता है । पारलौकिकसे अभिप्राय है परलोक का जीवन ।

२. जन्म-जन्मान्तरों— दूसरी मान्यता है कि मृत्युमें केवल शरीरका नाश होता है आत्माका नहीं । आत्मा पुनः दूसरे शरीरके रूपमें जन्म लेती है । जन्म-जन्मान्तर से इसी क्रमिक प्रक्रिया का अभिप्राय है ।

३. रूढ़िवादी— विवेकपूर्ण व्यवहारको छोड़कर केवल प्रथाके ढंगसे की जाने वाली प्रक्रियाएँ ।

४. समाजानुमोदित— जिसे समाज मान्यता प्रदान करे ।

५ समष्टि— समाज, सबका समुह ।

६. आत्मार्पण— अपने आपको निःस्वार्थ भावसे दूसरे के प्रति अर्पित करना ।

७. सर्वांगीण एकात्म्य—जीवनकी हर विधा और क्षेत्र में एकात्मता ।

८. आत्मा— जीवित शरीरका एक अपार्थिव तत्व जो शरीरमें जीवनका कारण बनता है । जब ये शरीर को छोड़ देता है तब यह शरीर मृत हो जाता है । यह स्वयं अनश्वर होता है । एक शरीरको छोड़कर जब दूसरे शरीरको ग्रहण करता है तब पुर्नजन्म होता है । यह कल्पनापूर्ण मान्यता दुनियाकी प्रायः सभी प्रमुख संस्कृतियोंमें है (रूह, सोल, आदि)

९. इह लौकिक जीवन—इस दुनिया का जीवन, सांसारिक जीवन ।

१०. परमात्मा— परम आत्मा, ब्रह्म । यह मान्यता है कि पुनर्जन्मके चक्रसे मोक्ष पाकर आत्मा ब्रह्ममें लीन हो जाती है ।

११ आश्रम— प्राचीन भारतीय संस्कृतिके अन्तर्गत मनुष्यका जीवन चार भिन्न अवस्थाओंमें बांटा गया था । इन अवस्थाओंमें जीवन-यापन के सुनिश्चित ढंग थे । इन्हें आश्रम कहा जाता था ।

१२. ब्रह्मचर्य— उपर्युक्त के अनुसार जीवनका का पहला आश्रम । जब उपनयनके बाद (द्विज) बालक—बालिकाएँ ऋषियोंके आश्रम में रहकर शिक्षा प्राप्त करते थे । इस अवधिमें जीवन विशेष अनुशासित और संयमित रहता था ।

१३. गृहस्थ— जीवनका दूसरा आश्रम जब विवाह के बाद परिवारका विकास किया जाता था धर्म, अर्थ और काम इस आश्रमको प्रमुख उपलब्धियाँ होती थी ।

१४. वानप्रस्थ— आर्योंके जीवनका तीसरा आश्रम जिसके अन्तर्गत व्यक्ति पारिवारिक मोह ममता छोड़कर विशेष अनुशासित सरल और साधना पूर्ण जीवन व्यतीत करता था । सामाजिक दायित्व रहते थे ।

१५. संन्यास— जीवनका चौथा आश्रम जब व्यक्ति संसारसे विमुख हो आत्म साधना और मोक्ष की कामना करता था ।

१६. पुरातनवादी मानस—पुरानी मान्यताओं और बातों में विश्वास करने वाली मनः स्थिति ।

१७. सूत्र - संक्षिप्त पर सारगर्भित बात ।

१८. यौनिक आवश्यकता—अंग्रेजीके सैक्स शब्दके लिये हिन्दी में यौन शब्द चल निकला है । यौनिक इसी से विशेषण है ।

१९. अनुशासित— अनुशासनयुक्त ।

गुस्सेमें लाल पीले होते वे महाशय दर्जीकी दुकानपर चढ़े, "देख रहे हो यह सूट ? तुम कहते थे, कपड़ा कम है ! मटका गलीवाले दर्जीने उसी कपड़ेसे सूट भी बनाया और जो कपड़ा बचा, उससे अपने पांच सालके लड़केका एक कोट भी बना लिया । मैं तुमसे पूछता हूँ...

"मैं खुद ही बताये देता हूँ," दर्जी विनम्रतासे बोला, "असलमें मेरा लड़का ग्यारह सालका है ।"

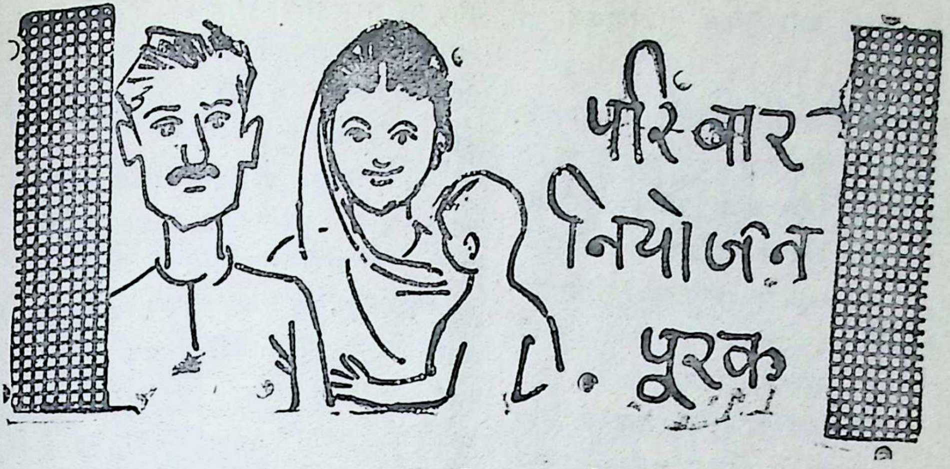

एक राष्ट्रीय कर्त्तव्य

—श्री मन्मथनाथ गुप्त—

इस समय भारत की आबादी ५१ करोड़ से ऊपर हो चुकी है और यह आशंका की जाती है कि इसकी रोकथाम न की गयी तो सन २००० तक भारत की आबादी १०० करोड़ हो जाएगी, जो भारत के लिए और संसार के लिए भी बहुत दुर्भाग्य की बात होगी। प्रतिवर्ष भारत में २ करोड़ १० लाख बच्चे पैदा होते हैं और ८० लाख व्यक्ति मरते हैं। इस प्रकार प्रति वर्ष १ करोड़ ३० लाख व्यक्ति बढ़ रहे है, यानी यदि इसका प्रतिशत निकाला जाए तो हम पाएंगे कि प्रति वर्ष भारत की आबादी २.५ प्रतिशत की दर से बढ़ रही है।

स्वतन्त्रता के इन सालों में हमने काफी आर्थिक उन्नति की है। कुछ मिलाकर राष्ट्रीय आय में प्रतिवष ३.८ प्रतिशत वृद्धि हुई है, पर इसके साथ ही आबादी से २.५ प्रतिशत बढ़ोतरी हुई है, यानी कुल मिलाकर राष्ट्रीय आय में प्रतिवर्ष एक प्रतिशत की वृद्धि हो रही है। यह दर इतनी कम है कि किसी भी अन्य देश की तुलना में हम पिछड़े हुए हैं।

खाद्यान्न का उत्पादन स्वराज्य के पहले के मुकाबले बढ़ गया है, पर आबादी जिस दर से बढ़ी है, उस दर से खाद्य का उत्पादन नहीं बढ़ सका। नतीजा यह है कि प्रति व्यक्ति खपत १२.८ औंस से घटकर १२.४ औंस हो गयी है। यदि खाद्य-उत्पादन का पूरा हिसाब दिखाया जाए तो मालूम होगा कि १९५१-५२ में भारत में खाद्य का उत्पादन ५ करोड़ १० लाख टन हुआ था, जबकि १९६५ में लगभग ७ करोड़ २० लाख टन हुआ था, फिर भी जैसा कि हमने बताया, प्रति व्यक्ति खाद्य की खपत की दर घट गयी। यदि खाद्य का उत्पादन उस दर से न बढ़ सका, जिस दर से आबादी बढ़ रही है तो एक ऐसी परिस्थिति आएगी जब कि लोगों को भूखा रहना पड़ेगा या आधा पेट खाना पड़ेगा। दूसरे शब्दों में आबादी के बढ़ते रहने के कारण हमारा बढ़ा हुआ खाद्योत्पादन व्यर्थ सिद्ध हो रहा है और हमें लाचारी की हालत में विदेशों से अन्न का आयात करना पड़ा है।

स्वराज्य के बाद से चिकित्सा तथा रोगियों की देखभाल में बहुत उन्नति हुई है। उसका नतीजा यह है कि १९५१ में जहां प्रति हजार व्यक्ति २७ की मौत हो जाती थी, वहाँ अब १७ की ही मौतें होती हैं। दूसरे शब्दों में लोग दीर्घजीवी हो रहे हैं। दीर्घजीवी होना बहुत अच्छी बात है। इससे सूचित होता है कि स्वराज्य के बाद जितना चाहिए था, उतना लाभ न होते हुए भी बहुत लाभ हुआ है। फिर भी लोगों को दीर्घ जीवन प्राप्त होने से खाद्य

समस्या पहले से बिगड़ गयी है-यह तो बिल्कुल ही स्पष्ट है।

इस सम्बन्ध में स्वतन्त्र भारत में बराबर चिन्ता बनी रही और बहुत-से चिन्तक और नेता इस विषय में सोचते रहे हैं। योजनाओं में इसके लिए काफी धन की व्यवस्था की गयी कि परिवार नियोजन के कार्यक्रम का लोगों में प्रचार किया जाए स्वतन्त्रता के पहले भी लोग इस विषय में चिन्तन करते थे। दुर्भाग्य है कि गांधीजी अपने धार्मिक विचारों के कारण परिवार नियोजन के विरुद्ध थे। उनका विचार कुछ इस प्रकार का था कि ब्रह्मचर्य से ही परिवार नियोजन का काम लिया जाना चाहिए। उनका कहना यह था कि पुरुष तभी स्त्री के पास जाए, जब वह प्रजनन चाहता हो। वस्तुतः यह विचार केवल साधु-महात्माओं के लिए ही सम्भव है और साधारण आदमियों के लिए इस विचार का कोई अर्थ नहीं होता। यदि पति अपनी पत्नी के पास साल में एक बार भी जाए तो वह १६ और २० बच्चों का पिता बन सकता है। अभी राष्ट्पति श्री गिरि ने अपने एक वक्तव्य में कहा था कि मैं १६ बच्चों का बाप हूँ। यह उस युग का परिचायक है, जिसमें नियोजन का विचार आमतौर से प्रचलित नहीं था। पर अब हम उस युग को बहुत पीछे छोड़ आये हैं और आज का तकाजा यह है कि परिवार नियोजन के वैज्ञानिक उपायों से काम लिया जाए।

स्वतन्त्र होने के कुछ साल बाद तक भारत सरकार ने इस सम्बन्ध में पूरी जागरूकता से काम नही लिया, क्योंकि अभी तक वही विचारधारा सरकार के ऊपर छाई हुई थी कि ब्रह्मचर्य से ही परिवार नियोजन होना चाहिए। राजकुमारी अमृत कौर, जो भारत की स्वास्थ्य मन्त्रिणी थीं, यह विचार रखती थीं कि निरापद दिनों का सहारा लेकर परिवार नियोजन हो सकता है। और कई बहुमूल्य वर्ष इसी ऊहापोह में नष्ट हो गये। इसमें सन्देह नहीं कि प्रति मास स्त्री के कुछ ऐसे दिन होते हैं जब गर्भ नहीं टिकता है। पर एक तो उन दिनों का पता लगाना मुश्किल होता है, दूसरे यह कि प्रत्येक स्त्री का अलग-अलग नियम होता है और तीसरे, हर स्त्री अपना नियम भी समय-समय पर बदलती रहती है। इसलिए यह मार्ग जोखिम से भरा और अव्यावहारिक है। इस प्रकार के आधे मन से किये जाने वाले तरीकों मे परिवार नियोजन का काम पूरा नही हो सकता।

यह सौभाग्य की बात है कि इस समय एक ऐसे व्यक्ति भारत सरकार के परिवार नियोजन विभाग के मन्त्री हैं जो सारी समस्याओं को अच्छी तरह समझते हैं। वह स्वयं वैज्ञानिक है और हर तरह से इस क्रम को आगे बढ़ाने में तत्पर हैं। उन्होंने हाल ही में एक लेख में यह लिखा था कि इस समय एक हजार व्यक्ति पीछे ४० बच्चे पैदा होते हैं, जबकि हमारा उद्देश्य यह है कि इसे घटाकर २५ पर ले आया जाये। देश में ९ करोड़ दम्पति हैं। उनके दिमाग में यह भावना भरनी है कि भारत को अधिक बच्चों की जरूरत नहीं है। इसमें कोई सन्देह नहीं कि यह काम बहुत कठिन है, क्योंकि भारत ५ लाख ९० हजार गाँवों और ३,००० शहरों में बसा हुआ है।

शहरों तक तो परिवार नियोजन का सन्देश आसानी से पहुँच सकता है, क्योंकि शहरों के लोग पढ़े लिखे हैं और वे रेडियो भी सुनते हैं और जहां टेलीविजन हैं, वहां टेलीविजन भी देखते हैं, पर असली समस्या है गांवों तक परिवार नियोजन के सन्देश को पहुँचाने की। केवल सन्देश पहुँचाना ही नहीं है, बल्कि उसके लिए सामग्री भी पहुँचानी है। और सबसे बढ़कर मुसीबत यह कि हमारे लोग बहुत ही पिछड़े हुए और अपरिवर्तनवादी हैं। उन्हें समझाना टेढ़ी खीर है, क्योंकि अब तक उनका तजर्बा यह है कि समझाने वाले अपने स्वार्थ को बात ही समझाते हैं, न कि उनके स्वार्थ की।

अजीब बात है कि धर्म का प्रभाव परिवार नियोजन के विरुद्ध पड़ता है। धर्म के द्वारा इस सम्बन्ध में जो विरोध हो रहा है, वह कई रूपों में है। हमने कुछ अच्छे पढ़े-लिखे हिन्दुओं को यह कहते सुना है कि मुसलमान तो परिवार नियोजन करते नहीं, फिर यदि हम परिवार करें, तो नतीजा यह होगा कि मुसलमानों का संख्या और बढ़ जाएगी और वे फिर एक और पाकिस्तान मांगेंगे, वगैरह वगैरह। कहना न होगा कि यह विचार बिलकुल वेबुनियाद हो, ऐसा नहीं कहा जा सकता। पर ऐसे लोगों को यह विश्वास दिलाया जा सकता है कि धर्म का जिस

तरह से सारे संसार में और भारत में असर घट रहा है, उससे यह आशा की जा सकती है कि न केवल भारत में, बल्कि पाकिस्तान में भी कट्टर लोगों के विचार बदलेंगे और उस हालत में कोई हिन्दू हो या मुसलमान, इससे अधिक फर्क नहीं रहेगा, क्योंकि सभी एक प्रकार का विचार रखने लगेंगे।

अभी अखबारों मे यह आया था कि रोमन कैथोलिकों के धर्मनेता पोप ने परिवार नियोजन का विरोध किया है। पर इसके साथ यह भी खबर आई कि बहुत-से रोमन कैथोलिकों ने इस विचार को नहीं अपनाया। उन लोगों ने खुलकर उसका विरोध किया। अतः दकियानुस और अपरिवर्तनवादी लोग अवश्य हमारा विरोध करेंगे, पर उनको यह विश्वास दिला देना चाहिए कि इसमें कोई धार्मिक मामला इसलिए नहीं है कि परिवार नियोजन का उदेश्य किसी प्राणी का हनन नहीं, बल्कि यह है कि जहां तक हो सके, प्राण-संचार के पहले ही काम कर दिया जाए इसलिए प्राणी-हत्या का कोई प्रश्न ही नहीं उठता। इसके अलावा एक बात की ओर ध्यान दिलाया जाए — वह यह कि जो लोग यौन विज्ञान को समझते हैं, वे जानते हैं कि जब गर्भ ठहर भी जाता है तो सैकड़ों प्राणों की हत्याएं होती हैं, क्योंकि बहुत-से प्रतिद्वन्द्वियों में केवल एक ही प्राणी रह जाता है, बाकी प्रतिद्वन्द्वी समाप्त हो जाते हैं।

अतः हमारा उदेश्य यह होना चाहिए कि सभी तरह से, चाहे गोलियां से हो या अन्य सामग्रियो का इस्तेमाल करने से—जैसे भी हो, परिवार नियोजन करें। इस सम्बन्ध में 'लूप' बहुत सफल सिद्ध हुआ है। समय के साथ-साथ और भी नए उपाय निकलेंगे, जो इससे भी अधिक वैज्ञानिक होंगे। अतः वर्तमान परिस्थतियों में प्रत्येक दम्पति को यही सोचना चाहिए कि वह जिस प्राणी को संसार में लाएगा, उसे अच्छी-से अच्छी शिक्षा और खुराक देगा या उसे पैदा करके भिखमंगा, वेश्या या इसी प्रकार का गया-बीता व्यक्ति बनाने में हाथ बंटाएगा। यदि राष्ट्र को एक स्वस्थ राष्ट्र बनाना हैं, तो उसे परिवार नियोजन के कार्यक्रम को कारगर ढंग से अपनाना है, तभी हमारी मुक्ति संभव है।

मैं पूरे जोर के साथ

परिवार नियोजन कार्यक्रमका समर्थन करता हूँ

—श्री जय प्रकाश नारायण—

देश में कथित 'जनसंख्या विस्फोट' से मैं बहुत चिन्तित हूँ। भारत की आबादी ५० करोड़ के निशान से ऊपर जा चुकी है। हमारे भूतपूर्व राष्ट्रपति डा० सर्वपल्ली राधाकृष्णन ने इसे खतरे की घंटी बताया था, जिसे हम मुसीबतों को न्योता दिए बगैर नजरअन्दाज नहीं कर सकते।

जैसा कि प्रधानमंत्री ने कहा है, जनसंख्या के तीव्र गति से बढ़ते रहते आयोजित विकास करना बहुत कुछ ऐसी भूमि पर मकान खड़ा करने के समान है जिसे बाढ़ का पानी बराबर बहा ले जा रहा हो। मैं कहूँगा कि यह बालू की नींव पर खड़ा करने जैसा है। आयोजन और औद्योगिक तथा कृषि-विकास के द्वारा जो कुछ भी उन्नति होती है, वह आबादी की वृद्धि में डूब जाती है। फलतः जनता के रहन-सहन के स्तर में कोई उल्लेखनीय उन्नति नहीं दिखाई पड़ती। वस्तुतः मुझे अन्देशा है कि हमारे सामाजिक ढांचे के निचले तबकों के लोगों के रहन-सहन में गिरावट आयी है।

यह समस्या कई दृष्टियों से अन्य सभी समस्याओं, विपत्तियों अथवा खतरों से गंभीर है, जो हमारे सामने आ सकते हैं। यह समस्या विदेशी आक्रमण से भी भयंकर है। विदेशी आक्रमण के समय हम सब एकजुट होकर, अपने सभी भेद-भाव भुला देते हैं और एक नयी प्रेरणा, एक नया उत्साह और एक नया संकल्प राष्ट्र को रक्षा के

लिए उमड़ने लगता है। लेकिन तेजी से बढ़नेवाली आबादी से उत्पन्न खतरे की ओर, जो अब हम पर हावी होने लगा है, किसी का ध्यान नहीं जा रहा है।

सामर्थ्य से अधिक बच्चों वाले परिवार की सहायता के लिए कोई भी नहीं दौड़ता, क्योंकि इसे विपत्ति नही माना जाता—भले ही इन बच्चों को वस्त्र और भोजन के अभाव में नंगा और भूखा ही रहना क्यों न पड़ता हो। यह स्थिति उस तरह की सहानुभूति अथवा भावना को जन्म नहीं देती, जो उदाहरण के लिए विदेशी आक्रमण के समय पैदा होती है। फिर भी यदि कुछ वर्षों के अन्दर आबादी की बढ़ोतरी पर अंकुश नहीं लगा, तो हम अपने को एक ऐसी स्थिति में पाएंगे, जिससे शायद ईश्वर ही हमें उबार सकेगा। जरा १०० करोड़ की आबादी—एक अरब लोगों की कल्पना कीजिए।

ऐसे लोग हैं, जिनकी ईश्वर में आस्था है और वे कहते हैं—ईश्वर ने हम सबको पैदा किया है और वही हम सबके खाने का भी प्रबन्ध करेगा। लेकिन ईश्वर ऐसा कुछ करता नजर नहीं आता। कुछ भी हो, मेरी राय में ईश्वर में आस्था रखने वाले लोग बुद्धि का उपयोग नहीं कर रहे हैं, जो ईश्वर ने उन्हें दी है। हमारे जो देशवासी नैतिक, आध्यात्मिक और धार्मिक कारणों से या किसी और कारण से भारत सरकार के वर्तमान परिवार नियोजन-कार्यक्रम का विरोध करते हैं, उन्हें अब चेत जाना चाहिए। सौभाग्यवश, मेरा निजी अनुभव यह रहा है कि आमतौरसे लोग—चाहे वे किसी भी जाति, समुदाय, भाषा या धर्म के हों—इसके विरोधी नहीं है। उनमें केवल अज्ञान है। बिहार में सूखे के समय एक अत्यन्त पिछड़े हुए इलाके में उत्तरपूर्व रेलवे द्वारा स्थापित चिकित्सा-केन्द्र में औरतें दूर-दूर से अपने आप आती थीं और पूछती थीं कि क्या सन्तानोत्पत्ति पर काबू पाया जा सकता है।

संस्कृत की एक उक्ति के अनुसार देवता वहाँ निवास करते हैं, जहाँ स्त्रियों की पूजा होती है। लेकिन अपने देश में स्त्रियों की स्थिति किसी से छिपी नहीं है। उन्हें अकेले ही माँ, पत्नी, रसोइया, धोबिन, मेहतरानी और नौकरानी की भूमिकाएँ निभानी पड़ती है। इन कामों में पुरुष उनकी सहायता नहीं करते। पुरुष न चाहते हुए भी एक के बाद एक बच्चा पैदा करते चले जाते हैं और इस तरह स्त्रियों पर, जिनकी जिन्दगी पहले ही बीमारियों से समझौता कर कर चुकी होती है, इतना बोझ लद जाता है कि वे उसे बर्दाश्त नहीं कर सकतीं।

सन्तति-नियमन को एक ऐसा उपाय कहा जाता है, जो भारत को स्त्रियों के लिए एक नये युग का आवाहन करेगा। मैं इससे सहमत हूँ। परिवार, प्रेम, पत्नीत्व और मातृत्व के नाम पर गुलामी में जुते रहने की अपेक्षा स्त्रियों का स्वास्थ्य सुधरेगा, उनमें आत्म-सम्मान जागेगा और उन्हें अवकाश भी मिलेगा। इसलिए मैं पूरे जोर के साथ इस आन्दोलन का समर्थन करता हूँ।

—मौलाना आजाद मेडिकल कालेज. नयी दिल्ली,

में दिए गये भाषण से

(पृष्ठ ११ का शेषांश)

में सक्रिय सहयोग देने से उनके अन्दर आत्म विश्वास और समाज का एक उपयोगी अंग होने की भावना जगती है।

स्वास्थ्य की नियमित परीक्षा आवश्यक

साल में कम से कम दो बार शरीर की जाँच करा लेने से कई बीमारियों का पता लग जाता है। कभी-कभी भयंकर और असाध्य बीमारियों का प्रारम्भिक अवस्था में पता लग जाने पर उनका इलाज भी संभव होता है। कैंसर, राजयक्ष्मा (टी. बी.), मधुमेह, उच्च रक्त दबाव आदि जैसे रोगों का शुरु में पता लग जाने पर उनको ठीक करना आसान होता है। शरीर को स्वस्थ रखने के लिये पौष्टिक आहार, नियमित व्यायाम, स्वस्थ दृष्टिकोण तथा समय-समय पर शारीरिक परीक्षा आदि बहुत जरूरी है।

प्रकृति के नियममानुसार सभी को समय आने पर वृद्ध होना पड़ता है। परन्तु इसके आगमन को कुछ समय तक रोका जा सकता है। वृद्ध होने का यह तात्पर्य नहीं कि उसके लिये कोई अपनी युवावस्था के उल्लास और आमोदपूर्ण क्षणों को ही नष्ट कर दे। हम सभी को वृद्ध होना है परन्तु हमें वृद्धावस्था का वरण सम्मानपूर्वक करना चाहिये।

पारिवारिक जीवनोपयोगी स्वास्थ्य साहित्य

लोकप्रिय स्वास्थ्य साहित्य

राजा बेटा कैसे बनायें ?	१.००
सुन्दर दांत और उनकी देखरेख	२.५०
आपके बच्चेकी खुराक	३.३७
भोजन क्या, क्यों और कैसे ?	४.००
विटामिन और हीनता जनित रोग	४.२५

यौन-साहित्य

यौन मनोविकार कारण और निवारण	४.२५
विवाहित जीवनमें यौन सम्प्रयोग	५.५०
नारीकी यौन समस्यायें	२.५०
सन्तति-निरोध कब और कैसे ?	४.००
गर्भवती स्त्री और प्रसवपूर्व व्यवस्था	२.५०

प्रकाशक

स्वास्थ्य सन्देश प्रकाशन,
पोस्ट–कालपी (उत्तर प्रदेश)

उद्यम

मासिक पत्रिका

'उद्यम' में निम्न विषयों पर लेख प्रकाशित होते हैं :

- ★लाभदायक उद्योग-धन्धोंकी व्यवहारोपयोगी जानकारी
- ★व्यवसायमें सफल व्यक्तियोंकी मुलाकातें और परिचय तथा मवेशियोंके रोगोंका निवारण।
- ★इंजिनियरिंग, यंत्र सामग्री और ग्रामोद्योग संबंधी लेख
- ★आरोग्य, संक्रामक रोग तथा घरेलू औषधियों संबंधी जानकारी।
- ★पंचवर्षीय योजनाओंके कारण होता हुआ ग्रामसुधार
- ★महिला विभाग : घरेलू उद्योग, मितव्ययिता, खाद्य पदार्थ आदि पर लेख।
- ★बालकोंका विश्व : बालक-बालिकाओंके लिए सुलभ भाषामें त्रैमासिक जानकारी।
- ★विद्यार्थियों के लिये : विशेषज्ञों द्वारा उपयुक्त लेख
- ★पाठकों द्वारा पूछी गई जानकारी।

'उद्यम' का वार्षिक मूल्य रु० दस भेजकर परिवारके प्रत्येक व्यक्तिके लिये उपयोगी यह मासिक पत्रिका अवश्य संग्रहीत करें।

उद्यम मासिक, धर्मपेठ, नागपुर-१

स्वास्थ्य का वृहद ज्ञान सागर

आपका स्वास्थ्य

१६ वर्षों की

पुरानी फाइलें

चौथे और सोलहवें वर्ष के अलावा प्रत्येक वर्ष की फाइलें प्राप्य हैं।

प्रत्येक वर्ष की फाइल ६ रु० में प्राप्य है फाइलें वी० पी० से नहीं भेजी जायंगी। अग्रिम मूल्य भेजना अनिवार्य है।

आपका स्वास्थ्य कार्यालय
चेतगंज, वाराणसी–१

घर बैठे संगीत सीखिए

प्रतिमास घर बैठे गायन, वादन तथा नृत्य की ठोस जानकारी प्राप्त करने के लिए १५) भेजकर **'संगीत'** मासिक के वार्षिक सदस्य बन जाइए। नमूना चाहें तो १)५० के टिकिट भेजिए। फिल्मी गीतों के प्रेमी २०) भेजकर **'फिल्म-संगीत'** त्रैमासिक के वार्षिक सदस्य बनें। वर्ष में इसके कुल चार अंक (जनवरी, अप्रैल, जुलाई और अक्टूबर में) प्रकाशित होते हैं। प्रत्येक अंक में ३५ प्रसिद्ध फिल्मी गीत स्वरलिपि-सहित छपते हैं। हर प्रकार के संगीत-साहित्य की विस्तृत जानकारी के लिए हमारा बड़ा सूचीपत्र मुफ्त मंगाएं।

पता

संगीत कार्यालय, ६, हाथरस (उ. प्र.)

इंडियन मेडिकल असोसियेशनकी ओरसे डा० कोशलपति तिवारी द्वारा
संपादित, प्रकाशित और सुदर्शन मुद्रक वाराणसीमें मुद्रित।

आपका स्वास्थ्य रजिस्ट्री संख्या L-96 अक्टूबर, १९७३

HEALTH

is your most precious possession

Your Health

will help preserve it

Your Health aims to educate the common man on matters of health. It deals with day to day problems of sanitation and hygiene and presents the scientific side of preventing many bodily and mental ills.

Remember it is

A Publication of the Indian Medical Association.

SUBSCRIPTION RATES
(Post free)

Inland : 1 year Rs. 8/- ; 2 years Rs. 12/-
Foreign : 1 year Rs. 10/- ; 2 years Rs. 16/-
Members of I. M. A. ; 1 year Rs. 6/-

Remittances should be by money orders or postal orders payable to YOUR HEALTH

All business correspondence should be addressed to

Manager, YOUR HEALTH
23 Samavaya Mansion : Corporation Place
CALCUTTA-13

मूल्य–पचास पैसे

आपका स्वास्थ्य

इंडियन मेडिकल असोसियेशन की लोकोपयोगी मासिक पत्रिका

जनवरी, १९७३

हमारे तीन महत्वपूर्ण प्रकाशन

कहीं हवा न लग जाय

-कैप्टन शरत कुमार चौधरी-

इस पुस्तकमें मलेरिया, फाइलेरिया, चेचक आदि रोगोंसे बचनेके उपाय, रोगीकी परिचर्या सर्पदंश, प्राथमिक चिकित्सा सम्बन्धी अनेक महत्वपूर्ण समस्याओंकी चर्चा की गयी है।

मूल्य १५० पैसे

सुनो भाई पंचो

-डाक्टर कोशलपति तिवारी-

हिन्दीमें अपने ढंगकी सरल सुबोध शैलीमें लिखी गयी पुस्तक। रोग तथा स्वास्थ्य-सम्बन्धी उन सभी समस्याओं पर चर्चा की गयी है, जिनसे हमारे ग्रामीण भाइयोंको नित्य सामना करना पड़ता है।

पुस्तक दो भागोंमें प्रकाशित है।

प्रत्येक भागका मूल्य—१५० पैसे

गुजरात, मध्यप्रदेश, उत्तरप्रदेश, हरियाणा, राजस्थान सरकार, बिहार द्वारा नियोजन केन्द्रों, स्कूल-कालेजके पुस्तकालयों, राष्ट्रीय प्रसार सेवा खण्डों तथा ग्राम पुस्तकालयोंके लिए स्वीकृत।

डाक्टर के आने तक

- डाक्टर गोकुलदास अग्रवाल -

नागरिक सुरक्षाके संदर्भमें इस पुस्तकका विशेष महत्व है। देशके प्रत्येक नागरिकको प्राथमिक चिकित्सा सम्बन्धी ज्ञान प्राप्त करना आवश्यक है और इस पुस्तकमें विस्तृत ढंगसे इस विषयपर चर्चा की गयी है। प्राथमिक चिकित्सा (फर्स्ट एड और नर्सिग) की शिक्षा लेनेवाले छात्र-छात्राओंके लिए सर्वश्रेष्ठ पुस्तक। प्रस्तुत पुस्तक आपके परिवारके लिए 'घरेलू डाक्टर' का काम देगी।

दो सौ से अधिक चित्र

मूल्य २७५ पैसे

चारों पुस्तकें एक साथ मँगानेपर डाक खर्च माफ। आपका स्वास्थ्यके ग्राहकोंको २५ प्रतिशत छूट दी जाती है। चारों पुस्तकें एक साथ न मँगानेपर प्रत्येक पुस्तकके लिए १२५ पैसे अलगसे डाक व्यय लगेगा।

हमारे अधिकृत विक्रेता,

हिन्दी प्रचारक संस्थान, पो० बा० १०६, वाराणसी
पुस्तक भवन, कचहरी रोड, राँची।
श्री गंगा पुस्तकालय, गायघाट, वाराणसी–१
आपका स्वास्थ्य कार्यालय, लहुराबीर, वाराणसी–१

आपका स्वास्थ्य

इंडियन मेडिकल एसोसियेशनका लोकोपयोगी प्रकाशन

वर्ष २० जनवरी १९७३ अंक ४

अनुक्रमणिका

तब फिरि जीव विविध विधि पावइ संसृति क्लेस २
बच्चोंमें कुपोषणकी समस्या और पौष्टिक आहार ३
बच्चोंके साथ माता-पिताका असंतुलित व्यवहार ११
भारतमें कुष्ठ रोगकी समस्या और हमारा कर्त्तव्य १६
जन्म और जीवनके संचालक हारमोन ... १९
मधुमेहके रोगियोंके लिए उपयुक्त भोजन २१
स्कूलोंसे यक्ष्माका प्रसार २५

परिवार नियोजन पूरक

भुलक्कड़ मास्टरजी २९

कवर-चित्र
श्री पार्थ चटर्जी

- 'आपका स्वास्थ्य' में प्रकाशित प्रत्येक रचना और चित्रका कापीराइट प्रकाशकका है । इसलिए बिना आज्ञा कोई रचना या चित्र किसी प्रकार उद्धृत नहीं होना चाहिए ।

- 'आपका स्वास्थ्य' के लेखकोंके विचार पूर्ण रूपसे उनके अपने हैं आवश्यक नहीं है कि संपादक मंडल अथवा इंडियन मेडिकल एसोसियेशन उनसे सहमत हो ।

मूल्य—इस अंकका ५० पैसे
वार्षिक छः रुपये

आपका स्वास्थ्य कार्यालय
वाराणसी (बनारस–१)

सम्पादकीय

तब फिरि जीव विविध विधि पावइ संसृति क्लेस

गोस्वामी तुलसीदासजी गूढ़ मनोविज्ञानके ज्ञाता और पटु दार्शनिक हैं। उन्होंने अनेक नये तकनीकी शब्द दिये हैं जैसा कि उपरोक्त दोहेकी प्रथम पंक्तिमें परिलक्षित है। शब्द है 'संसृति क्लेस'। यह 'होने' की पीड़ा जिसकी आजके साहित्य और दर्शनमें इतनी अधिक चर्चा है उसकी चर्चा संत शिरोमणि सार्त्र महाशयसे चार सौ वर्ष पहले ही एक शब्दमें कर गये। यह पैदा होना, क्रमशः बड़े होना, बूढ़े होना, फिर मर जाना और मृत शरीरका कालांतरमें मिट्टीमें मिलकर विलुप्त हो जाना। एक आदमीके अपने लिए तो यह एक बड़ी घटना है, लंबा इतिहास है, पर निरपेक्ष ज्ञानीके लिए यह सारी घटना एक लहर मात्र है! यदि हम कहें कि लहर बड़ी दुखी है कि वह उत्पन्न हुई और बिनष्ट हो गयी तो शायद हँसी आ जाय! लहरमें पीड़ा होती है यह उसकी पछाड़ और फेनिल अवसादसे प्रगट होता है। पर ज्ञानी कहता है कि लहरें सागरतलका खेल मात्र हैं, आती जाती रहती हैं, मात्र दृष्टि भ्रम हैं न कोई उत्पन्न होता है न कुछ नष्ट होता है। मानव जीवनकी बाबत भी यदि यह तथ्य हृदयंगम हो जाय तो यह संसृतिका, जीवन मरणका, क्लेश मिट सकता है। यह तथ्य आलोक तभी हृदयमें प्रगट हो सकता है जब ज्ञान दीप जले।

'होने' की व्यथा आज जीवमात्रको विकल किये है। विकलता, पीड़ा, क्लेश सब एक प्रकारके रोग हैं अतः चिकित्साके क्षेत्रमें आते हैं। और चिकित्साका कर्त्तव्य है कि क्लेशका नाश करे, आनंदकी स्थापना करे। यह ज्ञानदीप जलानेसे हो सकता है। प्रश्न यह है कि इस ज्ञान दीपको कौन जलाये ? इसके लिए आध्यात्म और भक्तिके मार्ग बताये गये है, अपने आपको जाननेको कहा गया है। जब 'होना' मिट जाता है तब फिर लहर सागर बन जाती है।

अपने आपको, 'होने' के इस तमाशेको, आप समझ सकें, संसृति क्लेससे मुक्ति पा सकें, नव वर्षके मंगलद्वारपर यही हमारी शुभ कामना है।

'न था कुछ तो खुदा था, कुछ न होता तो खुदा होता।
डुबोया मुझको होने ने, न होता मैं तो क्या होता॥

(ग़ालिब)

बच्चोंमें कुपोषणकी समस्या और पौष्टिक आहार

—श्री बी० एन० धर—

हैदराबादमें पोषणपर पहली एशियाई कांग्रेसका आयोजन हुआ था। इसकी अध्यक्षता नेशनल इंस्टीट्यूट आफ न्यूट्रीशन, हैंदराबादके निदेशक डा० सी० गोपालनने की थी। उन्होंने अपने अध्यक्षीय भाषण में कहा था कि कुपोषणकी समस्या एशिया महाद्वीपमें सबसे ज्यादा विकट है, इसलिए इस पर तुरंत ध्यान दिया जाना चाहिए। कुछ एशियाई देशोंमें लगभग ७० प्रतिशत गरीब बच्चे कम या ज्यादा कुपोषणके शिकार हैं। भारतके विभिन्न वर्गोंके लोगोंमें भोजनपर किस ढंगसे खर्च होता है, इसका सर्वेक्षण किया गया तो पता चला कि लगभग ७० प्रतिशत लोग भोजनपर जो खर्च करते हैं, वह कमसे कम खर्चपर उपलब्ध होनेवाली संतुलित खुराक देनेके लिए भी काफी नहीं है।

भारतमें आम खुराकमें मिलनेवाली कैलोरी और प्रोटीनकी मात्रा संसारमें सबसे कम है। किसी निर्धारित समयमें समुदायके पोषणका स्तर मुख्यतः इस तरह तय किया जाता है कि जनसंख्या और खाद्य पदार्थोंमें विशेषकर कैलोरी व प्रोटीनवाले खाद्य पदार्थोंमें अनुपात क्या रहा है। हमारी जनसंख्या निरंतर बढ़ती रही है, इसलिए खाद्यान्नोंकी आवश्यकताओं और उपलब्ध भोजनकी मात्राके बीचकी दूरीको पाटा नहीं जा सका है, हालांकि खाद्य मोर्चेपर महत्त्वपूर्ण उपलब्धि हुई है। १९५१ की तुलनामें हमारा खाद्य उत्पादन दुगुना हो गया है, फिर भी प्रति व्यक्ति भोजनकी उपलब्धि सिर्फ ०.७ औंस ही बढ़ी है। संयुक्त राष्ट्र खाद्य व कृषि संगठनके तीसरे विश्व खाद्य सर्वेक्षण १९६३ के अनुसार हमें अपने सामने यह उद्देश्य रखना होगा कि १९८० तक दालोंमें ९० प्रतिशत, फलों व सब्जियोंमें ८० प्रतिशत, खनिज खाद्य पदार्थोंमें १०० प्रतिशत और वसा व तेलांमें ९५ प्रतिशत वृद्धि हो सके। ऐसा अनुमान है कि सन् २००० ई० तक भारतकी जनसंख्या १०० करोड़ हो जायगी, अतः उस समयकी आवश्यकता को पूरा करनेके लिए हमें खाद्य आपूर्तिमें पांच गुना वृद्धि करनी होगी।

जनसंख्यामें वृद्धि

भारतमें हाल ही में प्रकाशित १९६१-७१ के जनगणना संबंधी अस्थाई आंकड़ोंसे सातवें दशकके जनसंख्या विस्फोटका प्रश्न फिरसे उभरकर सामने आ गया है। इसके परिणामस्वरूप बहुत सी समस्याएं जैसे भूख, आम जनतामें गरीबी, अशिक्षा, बेरोजगारी, अपर्याप्त आवास और सभी अन्य आर्थिक व सामाजिक परिस्थितियां सामने आयी हैं, जिनसे आम जनताके अत्यन्त निम्न स्तरका पता चलता है।

भारतकी जनसंख्या १९६१ में ४३ करोड़ १० लाख थी। उसके बाद दस वर्षोंमें १० करोड़ ७९ लाखकी वृद्धि हो गयी है। इसके परिणामस्वरूप पहली अप्रैल १९७१ को भारतकी कुल जनसंख्या ५४ करोड़ ७० लाख हो गयी है। इस प्रकार विश्वमें जनसंख्याकी दृष्टिसे चीनके बाद भारतका स्थान है। यह भारी वृद्धि योजना-निर्माताओं, प्रशासकों और जनसंख्या-नियंत्रण आंदोलनमें लगे हुए लोगोंके लिए खुली चुनौती है। अनुमान है कि वर्तमान दरपर सालाना जनसंख्या वृद्धिके हिसाबसे कमसे कम १ लाख स्कूलों, ३ लाख स्कूल अध्यापकों, २० लाख मकानों, १५ करोड़ ६० लाख मीटर कपड़े और १ करोड़ क्विंटलसे अधिक खाद्यान्नकी आवश्यकता होगी। इन आंकड़ोंसे पता चलता है कि जनसंख्या वृद्धिको रोकनेके लिए परिवार नियोजन कार्यक्रम जैसे सर्वोत्तम प्रयत्नोंके बावजूद जनसंख्याका दबाव बढ़ रहा है। इससे सामाजिक व आर्थिक सतुलन पर और बुरा असर पड़ेगा तथा जनताके स्वास्थ्य व पोषण स्तरोंमें और भी गिरावट आएगी।

भारतकी जनसंख्या वृद्धिमें प्रमुख कारण यह रहा है कि आयुके ढांचेमें परिवर्तन आ गया है और १-१५ आयु वर्गमें वृद्धि हो गयी है। इसका कारण यह है कि भारत जैसे विकासशील देशमें शिशुओं और बच्चोंकी मृत्यु संख्या अन्य आयु-वर्गके मुकाबले बहुत कम हो गयी है। डा० अग्रवालके अनुसार, इसी तत्वके कारण १-१५ के अनुत्पादक आयु वर्गमें जनसंख्याका प्रतिशत बढ़ गया है। इससे आगे चलकर कम ही सही, जन्मदरमें गिरावट आ गयी है। बल्कि देशकी अनुत्पादक जनसंख्याके प्रतिशतमें वृद्धि हो गयी है।

जनसंख्याके आयु ढांचेमें इसका ठीक-ठीक अर्थ क्या है ? ताजा अनुमानोंके अनुसार भारतमें १५ वर्षसे कम आयुके बच्चोंकी संख्या लगभग २१ करोड़ ८० लाख या कुल जनसंख्याका ४० प्रतिशत है। स्कूलपूर्व आयु वर्गके बच्चे भारतकी कुल जनसंख्याके १५ प्रतिशत हैं और उनमेंसे ३० प्रतिशत या २ करोड़ ४० लाख बच्चे दूसरे दर्जेके या उससे कुछ अधिक कुपोषणके शिकार हैं। भारतमें हालके वर्षोंमें शिशुओंकी मृत्यु दरमें कमी आ गयी है। फिर भी हर १०० मरनेवालोंमेंसे ४० बच्चे होते हैं। डा० एस० जी० श्रीकान्तैयाके अनुसार ताजा सर्वेक्षणोंसे पता चलता है कि दक्षिण भारतमें ही ३ लाख बच्चे प्रोटीन-कैलोरी कुपोषणके शिकार हैं। अगर एक बच्चेमें कुपोषणके सिर्फ लक्षण आते हैं तो ८-१० बच्चे ऐसे भी होंगे जिनका पोषण स्तर इतना सामान्य है कि यदि पोषण स्तरमें जरा भी और कमी हो जाय तो वह कुपोषणका शिकार हो सकता है।

गर्भवती व दूध पिलानेवाली माताओंका पोषण-स्तर

इस सुझावमें काफी बल है कि गर्भ धारणसे पहले या उसके बाद माताके लिए पोषणकी स्थिति बहुत महत्त्वपूर्ण है कि जिसपर गर्भ और बच्चेके स्वास्थ्यकी सफलता निर्भर है। गर्भ धारणके कारण माताकी पोषण आवश्यकतामें भी वृद्धि हो जाती है। गर्भावस्थामें बच्चा अपने पोषणके लिए पूरी तरह अपनी मातापर निर्भर होता है। इसलिए गर्भावस्थाके समय माताकी खुराक सिर्फ अपना हो मूल आवश्यकताओंकी पूर्तिके लिए नहीं होनी चाहिए, बल्कि उससे शिशुकी पोषण व विकास संबंधी आवश्यकताएं भी पूरी होनी चाहिए।

गर्भावस्थामें अच्छी खुराक खानेवाली एक औरतके शरीरमें लगभग १० किलोग्राम वजन बढ़ जाता है और वह ३.२ से ३.५ किलोग्राम वजनके बच्चेको जन्म देती है। दूसरी ओर, जिस औरतको अच्छी खुराक नहीं मिलती है, उसका वजन ६ किलोसे ज्यादा नहीं बढ़ता है और वह सिर्फ २.६ से २.८ किलो वजनके बच्चेको जन्म देती है। अक्सर ऐसी औरतोंको गर्भपात या गर्भस्राव हो जाता है या वे मरे हुए शिशुको जन्म देती हैं। ऐसी हालत उन माताओंकी होती है जिनके पास खाद्य तेल, लोहा, विटामिन ए और विटामिन बी–१२ जैसे आवश्यक पोषक खाद्य पदार्थ खरीदनेके लिए पैसे नहीं होते। इस प्रकार गर्भावस्थामें अभावकी बीमारियाँ हो जाती हैं। इसमें शक नहीं है कि गर्भवती मातामें पर्याप्त पोषणके अभावमें गर्भस्थ शिशुके मस्तिष्कपर भी बुरा असर पड़ता है।

सब जानते हैं कि हमारे देशमें १८-४५ के आयु वर्गकी औरतोंकी खुराक पोषणकी दृष्टिसे पर्याप्त नहीं है और गर्भावस्था व दूध पिलानेकी विशेष आवश्यकताओंपर बहुत कम ध्यान दिया गया है। गर्भावस्थामें दी जानेवाली खुराकसे संबंधित बहुतसे रीति-रिवाज, खासतौरपर गांवोंमें ऐसे हैं जिनके कारण वे कुछ विशेष प्रकारके खाद्य पदार्थ नहीं खा सकतीं। इसका परिणाम यह होता है कि माताकी सेहत खराब हो जाती है और गर्भस्थ शिशुका वांछित विकास नहीं होता। इसलिए गर्भवती औरतोंके भोजनमें कैलोरी खनिज और प्रोटीन तत्वोंका अभाव रहता है। गर्भवती औरतोंके लिए २३०० और अन्य औरतोंको २००० डी० और ए० (इंडियन रिकमेंडेड डेली अलाउंस) कैलोरी मिलनी चाहिए। राष्ट्रीय पोषण संस्थान (नेशनल इंस्टीच्यूट आफ न्यूट्रीशन) हैदराबादके सर्वेक्षणोंसे पता चला है कि दक्षिण भारतके कुछ हिस्सोंमें निम्न सामाजिक-आर्थिक स्तरकी गरीब औरतोंको रोजाना खुराकमें

१४०० से १५०० कैलोरी तक ही मिल पाती हैं और लगभग ४० प्रतिशत मामलोंमें गर्भ गिर जाते हैं, गर्भस्राव हो जाता है या मरा हुआ बच्चा होता है।

स्कूल-पूर्व बच्चोंमें अभावकी बीमारियां

शिशुओंमें अभाव रोगोंमें सूखा रोग और क्वाशियरकर हैं। सूखा रोगकी पहचान यह है कि शिशुकी टांगें और जोड़ सींकसे पतले होते हैं और इसका सिर बहुत बड़ा होता है। क्वाशियरकर रोगके लक्षण हैं कि अंगोंपर सूजन आ जाती है और चमड़ी व बालोंका रंग बदल जाता है। इन बीमारियोंसे शिशुका स्वास्थ्य हमेशाके लिए खराब हो सकता है। अक्सर इन बीमारियोंसे ग्रस्त शिशु शारीरिक व मानसिक दृष्टिसे अपंग हो जाता है और उसका पूरा विकास नहीं हो पाता तथा वह बड़ा होकर समाजका उपयोगी सदस्य नहीं बन पाता।

हालमें, राष्ट्रीय पोषण संस्थान, हैदराबादने आंध्र प्रदेशके एक गांव कुंटलूरमें एक आदर्श भोजन कार्यक्रमकी परियोजना शुरू की थी जिसके अंतर्गत १५०० लोग और अनुमानित २०० स्कूल-पूर्व बच्चे सम्मिलित किये गये थे। हर एकको १० ग्राम प्रोटीन, ३०० कैलोरी, ४ ग्राम वसा और थोड़ी मात्रामें खनिज व विटामिन दिये गये। प्रति बच्चा प्रतिदिन खर्च १० पैसे पड़ा। इस खुराकके लिए हर एकको निम्न पदार्थ दिए गये थे।

हरे चने	२० ग्राम
मूंगफली	८ ग्राम
गेहूँका आटा	३० ग्राम
चीनी	२० ग्राम

पोषण संस्थानने खाद्य पदार्थोंका खर्च उठाया और स्थानीय संगठनोंने कार्यक्रमको चलाने व कच्चे खाद्य पदार्थ लानेकी सेवा प्रदान की। इस संस्थाके श्री वी० रामदास मूर्तिने हाल ही में अपने एक लेखमें दावा किया है कि लगभग १०० स्कूल-पूर्व बच्चोंवाला यह मार्गदर्शी अध्ययन जल्दी ही बहुत लोकप्रिय हो गया। उसके बाद इस कार्यक्रमको दूसरे एक गांवमें चलाया गया और दोनों गांवोंमें लगभग १६० स्कूल-पूर्व बच्चोंको पूरक खुराक खिलायी गयी। इस बातकी खास सावधानी बरती गई कि बच्चोंको पूरक खुराक देनेका समय घरपर नियमित भोजनसे अलग हो। निम्न तालिका (साइंस टुडे जनवरी, १९७१ में प्रकाशित) से पता चलता है कि जिन बच्चोंको पूरक खुराकमें शामिल किया गया था, वे उन बच्चोंसे पोषणकी दृष्टिसे बेहतर हो गये जिन्हें इसमें शामिल नहीं किया गया था।

नियंत्रणाधीन व प्रयोगाधीन बच्चोंमें प्रतिशत पोषण अभावके लक्षण

वर्ग	संख्या	बालोंमें परिवर्तन			सफेद चेहरा	क्वाशियरकर	सूखा
		छितरे हुए	रंग उड़ जाता है	उखड़ने लगते हैं।			
प्रयोगाधीन (जिन्हें पूरक खाद्य पदार्थ दिए गए)	१५९	५.०	६.३	४.४	५.७	—	१.६
नियंत्रणाधीन (जिन्हें पूरक खाद्य पदार्थ नहीं दिये गये)	२००	१५.०	१५.०	७.५	६.०	१.५	६.५

क्वाशियरकरकी जो पी० सी० एम० की उग्र किस्म है, रोकथाम पूरक खाद्य-पदार्थ दिये जानेवाले बच्चोंमें पूरी तरह हो गयी। इस अध्ययनसे दो महत्वपूर्ण पहलू सामने आये। एक तो जिन बच्चोंको पूरक पोषण दिया गया था, उनका कद और वजन बढ़ा, हालांकि अन्तर बहुत अधिक नहीं था। दूसरे समुदायको कार्यक्रम और उसके लक्ष्योंकी संतोषजनक जानकारी मिल गयी। जिन लोगोंका सर्वेक्षण हुआ था, उनमेंसे बहुत कम ऐसे सदस्य थे जिनपर अनपेक्षित प्रभाव पड़ा हो जैसे भोजन कार्यक्रमके कारण पेटकी खराबी या बुखार हुआ हो।

शिशुके लिए माताका दूध सबसे बढ़िया भोजन होता है, लेकिन उसके साथ ही तरल खाद्य पदार्थ भी मिलने चाहिए और बादमें छलनीमें छाने हुए तथा ठोस पदार्थ दिये जा सकते हैं। पाठककी सूचनाके लिए इस लेखमें आगे बताया गया है कि दूध पिलानेवाली माताओं और बच्चोंको कितना और किस प्रकारका भोजन देना चाहिए। यहां यह बताना आवश्यक है कि बचपनकी विभिन्न अवधिमें शरीरका वजन कितना बढ़ना चाहिए। इसके लिए निम्न तालिका देखें—

६ वर्ष तक शरीरके वजनमें परिवर्तन

(भारतीय शिशुओंके लिए)

उम्र	औसत वजन (किलोग्राममें)
जन्मके समय	३
२ मास	५
४ ,,	६
६ ,,	७
८ ,,	८
१० ,,	८.५
१ वर्ष	९
२ ,,	११
३ ,,	१३
४ ,,	१५
५ ,,	१६-१७

जिन सामाजिक व सांस्कृतिक तत्वोंके कारण गर्भवती व दूध पिलानेवाली माताओं, शिशुओं और स्कूल-पूर्व बच्चोंमें कुपोषणको बढ़ावा मिलता है, वे बहुत हैं और उनका अध्ययन गहराईसे होना चाहिए। हमारे यहां दूर-दूर तक शाकाहारी लोग हैं जो मुर्गी आदि, मछली, मांस जैसी प्रोटीन बहुल खुराक नहीं खाते। कुछ खाद्य पदार्थोंको धर्मके नाते छोड़ दिया जाता है। अब रह जाते हैं सिर्फ अनाजके खाद्य पदार्थ जो भूखों मरनेसे तो बचाते हैं, पर छोटे बच्चे व माताके लिए उनमें पर्याप्त प्रोटीन नहीं होता। (आदिवासी क्षेत्रोंमें तो कभी-कभी लोग कंदमूल फल खाकर ही गुजारा करते हैं।) शिशु और उसकी मांको शरीरके वजनके अनुसार वयस्कोंकी अपेक्षा ज्यादा प्रोटीन चाहिए जिससे गर्भ धारण करने, दूध पिलाने व शिशुकी बढ़वार हो सके।

तो इन दोनों वर्गोंको कितने प्रोटीन व खनिज पदार्थोंकी जरूरत है? पोषण-युक्त भोजनके पांच मूल तत्व हैं। प्रोटीन, कार्बोहाइड्रेट, वसा, खनिज और विटामिन। प्रोटीन शरीरको बनानेके लिए अत्यन्त आवश्यक है। कार्बोहाइड्रेट वसाकी तरह शरीरको मूल ईंधन व ऊर्जा प्रदान करते हैं। खनिज अच्छे स्वास्थ्यके लिए महत्वपूर्ण हैं, जैसे लोहा स्वस्थ रक्तके लिए, कैल्शियम हड्डियोंके लिए और अंततः विटामिय अत्यन्त आवश्यक हैं, क्योंकि उनके बिना शरीर ठीक तरह काम नहीं कर सकता, जैसे विटामिन ए आंखोंकी रोशनीके लिए अच्छा है, विटामिन बी कंप्लेक्स मांस-पेशियोंका विकास करता है, भूख व पाचनको नियत्रित करता है, आदि।

हमारा मार्च अंक
होलिकांक
होगा

गर्भावस्थामें माताके लिए

खाद्य पदार्थ	शाकाहारी (प्रतिदिन मात्रा ग्रामोंमें)	माँसाहारी (प्रतिदिन मात्रा ग्रामोंमें)
अनाज (चावल, गेहूँ, मोटा अनाज)	४००	४००
दालें	७०	५५
हरी पत्तियों वाली सब्जियां	१५०	१५०
अन्य सब्जियां	७५	७५
कंद, मूल	७५	७५
फल	७५	७५
दूध, दही आदि	३०	३०
तेल, घी, मक्खन आदि	३२५	२२५
चीनी व गुड़	४०	४०
मांस व मछली	—	३०
अंडे	—	३०

बच्चेको दूध पिलानेवाली माताके लिए

खाद्य पदार्थ	शाकाहारी (प्रतिदिन मात्रा ग्रामोंमें)	मांसाहारी (प्रतिदिन मात्रा ग्रामोंमें)
अनाज (चावल, गेहूँ, मोटा अनाज)	४५०	४५०
दालें	८०	६५
हरी पत्तीवाली सब्जियां	१५०	१५०
अन्य सब्जियां	७५	७५
कंद, मूल	७५	७५
फल	३०	३०
दूध, दही	३२५	२२५
तेल, घी, मख्खन	५०	५५
चीनी और गुड़	५०	५०
मांस व मछली	—	३०
अंडे	—	३०

दूध छुड़ाते समय छह महीनेसे एक वर्ष तकके बच्चेके लिए

जब शिशु ६ महीनेका हो जाए या उसका वजन १५ पौंड हो जाय तो कुछ ठोस प्रोटीन खाद्य पदार्थ दिए जायँ।

६ से ८ महीनेके बच्चेके लिए

समय	खाद्य पदार्थ
सुबह छह बजे	माताका दूध (या अन्य दूध)
सुबह दस बजे	फलोंका रस—एक या दो बड़े चम्मच। एक छोटा चम्मच भर अनाजका घोल दूधमें चीनीके साथ। ठोस पदार्थ खानेके बाद माताका दूध। धीरे-धीरे अनाजकी मात्रा बढ़ाएं।
दोपहर १२ से २ बजे	मक्खन लगाकर डबलरोटीके स्लाइस जो रसदार सब्जीके साथ दिए जाएं, बादमें दूध।
शाम ५-६ बजे	एक हल्का बिस्कुट। पका हुआ केला; बादमें दूध।
रात ९-१० बजे	माताका दूध [या अन्य दूध]

९ से १० महीनेके शिशुके लिए

समय	खाद्य पदार्थ
सुबह छह बजे	माताका दूध (या अन्य दूध)
सुबह दस बजे	फलोंका रस, एक दो बड़े चम्मच, दूध और चीनीके साथ एक छोटा चम्मच भर अनाजका घोल, ठोस पदार्थ खानेके बाद माताका दूध, धीरे-धीरे अन्नकी मात्रा बढ़ाएं या साबूदाना या सूजी और फलोंका रस एक दो छोटे चम्मच, बादमें दूध ।
दोपहर १२-२ बजे	थोड़ेसे चावल या उबाले हुए आलू दालके साथ, बादमें दूध ।
शाम ५-६ बजे	एक मुलायम बिस्कुट, पका हुआ केला, बादमें दूध ।
रात ९-१० बजे	माताका दूध (या अन्य दूध)

११-१२ महीनेके शिशुके लिए

समय	खाद्य पदार्थ
सुबह ६ बजे	माताका दूध (या अन्य दूध)
सुबह १० बजे	दाल, चावल, साथमें अच्छी तरह पकाई हुई हरी पत्तियों वाली सब्जियां उबाले हुए आलू और दाल, फलोंका रस, बादमें दूध ।
दोपहर १२-२ बजे	थोड़ेसे चावल या उबाले हुए आलू, साथमें दाल, बादमें दूध या चपाती (मुलायम) दालके साथ, अच्छी तरह पकाई हुई, उबाली हुई सब्जियां ।
शाम ५-६ बजे	फल, फलोंका गूदा या पके हुए केले बिस्कुट, बादमें दूध ।
रात ९-१० बजे	माताका दूध [या अन्य दूध)

अगर आप मांसाहारी हैं तो सुबह दस बजेके भोजनमें पूरी तरह उबाला हुआ अंडा दें [खासतौरपर जर्दीसे शुरू करें] और धीरे-धीरे मात्रा बढ़ाते जाएं ।

स्कूल-पूर्व बच्चोंके लिए (१-३ आयु वर्ग)

समय	खाद्य पदार्थ	मात्रा
सुबह ६ बजे	उबाला हुआ दूध	१/२ गिलास (११० मि०ग्रा०) ४ औंस ।
सुबह ९-१०	पकाया हुआ अनाज दालके साथ	२ चम्मच
	जैसे खिचड़ी, दाल आदि या इडली	१-१ १/२ इडली
	या मक्खनके साथ डबल रोटी	१-१ १/२ स्लाइस
	हल्का उबाला हुआ अंडा	१ अंडा
	या उबाला गया दूध	१/२ गिलास
	फलोंका रस	१/४-१/२ गिलास

दोपहर (१२-१ बजे)	पकाया हुआ अनाज या कड़ी सब्जियां	१ चम्मच
	या बड़ा पकौड़ा	१ बड़ा
	उबाली हुई दाल, मछली या कीमा, कलेजी आदि	१-१ १/२ चम्मच
	पत्तेवाली व हरी सब्जियां (पकाई हुई)	१ चम्मच
दोपहर बाद (३.३०-४ बजे)	उबाला हुआ दूध	१/२ गिलास
	मछलीका तेल	१ छोटा चम्मच
शाम (६-७ बजे)	पकाया हुआ अनाज जैसे सूजी, गेहूँका दलिया	२ चम्मच
	उबला हुआ दूध	१/२ गिलास
सोते समय	उबला हुआ दूध	१/२ गिलास

स्कूल-पूर्व बच्चोंके लिए (३-५ वर्ष)

समय	खाद्य पदार्थ	मात्रा
सुबह ८-९ बजे	पकाया हुआ अनाज, दालकी चीजें (खिचड़ी, दलिया आदि)	२-३ चम्मच
	या इडली	१-२ इडली
	या दूध डबलरोटी मक्खनके साथ	१-२ स्लाइस
	या उबाली हुई सफेद रागी (दूधके साथ खानेके लिए) हल्का उबला हुआ अंडा	१ अंडा
	या उबाली हुई दालें	१ चम्मच
	उबाला हुआ दूध	१/२ गिलास
सुबह १०-३० बजे	फलोंका रस	१/२ गिलास (४ औंस)
	या ताजा मौसमी फल	१
दोपहर १२-१ बजे	पकाए हुए चावल	२-४ चम्मच
	या गेहूँ या रागी चपाती	१-२ चपातियां
	या उबले हुए आलू, मीठे आलू या टेपिओका (कभी-कभी) दही या दूध	१-२ चम्मच
	पकाई हुई या पत्तेवाली हरी सब्जियां	१-२ चम्मच
	या कच्ची सब्जियोंका सलाद जिसे हफ्तेमें ३ बार दिया जाय	१ १/२-२ चम्मच
शाम ३-४ बजे	उबाला हुआ दूध	१/२ गिलास
	मछलीका तेल	१ छोटा चम्मच

रात ७-८ बजे	पकाया हुआ अनाज जैसे सब्जी, गेहूंका दलिया या लेप्सी	२-३ चम्मच
	उबाली हुई दाल, मछली या मांसका तैयार पदार्थ	२ चम्मच
	उबाला हुआ दूध (सोते समय दिया जाय)	१/२ गिलास

इन पूरक भोजन वितरण केन्द्रोंमें २-३ आयु वर्गके बच्चोंकी उपस्थिति फरवरी, १९७१ में ६.५ लाख तक पहुंच गयी थी और केन्द्रोंकी संख्या ३६०० से लगभग ७००० हो गयी थी। आशा है कि सालके अंत तक इस कार्यक्रमके अंतर्गत लगभग १० लाख बच्चोंके लिए पूरक भोजनकी व्यवस्था की जा सकेगी। इस प्रकारका कार्यक्रम ३-५ आयु वर्गके बच्चोंमें भी शुरू किया गया है, जिसमें कुछ अखिल भारतीय संगठनों और केन्द्रीय समाज कल्याण बोर्डका सहयोग लिया गया है। बोर्ड इस कार्यक्रमको अपने विभिन्न कार्यकमोंके अन्तर्गत अनुदान प्राप्त ७३०० बालवाड़ियोंके माध्यमसे क्रियान्वित करेगा।

KURAZOL
(Liquid & Tablet)
A Remedy for Asthma
● ● ●

ADIOL COMPOUND
A General Pick-up
● ● ●

HEMOGASTRIN
A Digestive & Haematinic Tonic
● ● ● ●

LYCOLIV
A Liver Tonic
● ● ●

Products of :
INTERNATIONAL CHEMICAL & BIOLOGICAL INSTITUTE
PRIVATE LIMITED
KURAZOL HOUSE, BANGALORE-4.

बच्चोंके साथ माता-पिता का असंतुलित व्यवहार

—श्री घनश्यामदास अग्रवाल—

यह एक ऐसा विषय है जिसे लोग अत्यन्त ही सुलझा हुआ समझते हैं। यही कारण है कि साधारण लोग इस विषयपर ध्यान नहीं देते हैं, परन्तु इसकी वास्तविकताकी ओर यदि ध्यान दिया जाय और इसके उन पक्षोंको देखा जाय जिनसे बच्चोंके व्यक्तित्वके विकासका संबंध है तो यह विषय अत्यन्त महत्वपूर्ण प्रतीत होगा परिवारके प्रत्येक सदस्यके व्यवहार एवं क्रियाकलापोंका बालकके व्यक्तित्वपर गहरा प्रभाव पड़ता है। बालक जो व्यवहार करता है वह इस बातका द्योतक है कि उसके परिवारका वातावरण किस प्रकारका होगा। अत: बालकके साथ ऐसा व्यवहार किया जाय जो उसके संतुलित व्यक्तित्वके विकासमें सहायक हो।

अनुचित व्यवहार और उसका प्रभाव

प्रायः ऐसा देखा जाता है कि माता-पिता या परिवारके अन्य सदस्य अनायास ही बिना किसी गलतीके बालकको इस ढंगसे डाँट देते हैं कि बालक अपनेको उपेक्षित महसूस करता है और यदि इसी ढंगका व्यवहार उसके साथ हमेशा होता गया तो इसकी जड़ इतनी मजबूत हो जाती है कि बालक उम्र और ज्ञानके विकासके साथ अपने माता-पिताके इस व्यवहारके प्रति नकारात्मक प्रतिक्रिया प्रकट करता है। उदाहरणस्वरूप वह माता-पिता या परिवारके सदस्योंके साथ इस प्रकारका व्यवहार करता है जो अनुचित है अर्थात् उनके साथ संबंध ढीला करता जाता है, उनकी अवहेलना करने लगता है और अन्ततोगत्वा उनकी ओरसे उदासीन सा हो जाता है। इस स्थितिका जब माता-पिताको आभास होता है तो बहुतसे माता-पिता इसकी वास्तविकताको समझ नहीं पाते हैं और बालकको ही दोषी ठहराते हैं। परिणामस्वरूप यह एक मनः सामाजिक समस्या बन जाती है और बालक भविष्यमें गलत रास्तेपर जा सकता है। अतः आवश्यकता इस बातकी होती है कि बालकके साथ इस प्रकारका अनुचित व्यवहार न करें जो उसके संतुलित व्यक्तित्वके विकासमें बाधक हो।

अनुचित व्यवहारसे हमारा तात्पर्य उन सभी पक्षोंसे है, जिनका प्रभाव बच्चोंके व्यक्तित्वके विकासमें बाधक सिद्ध होता है। बालककी मानसिक क्षमता रुक जाती है, सही सोचने समझनेकी शक्तिमें व्यवधान पड़ता है। एक बालक जो सही सोच सकता था, वह गलत ढंगसे सोचने लगता है। एक ऐसा बालक जिसमें माता-पिता के उचित अनुचित व्यवहारोंको समझनेकी क्षमता आ गयी है, उसे यदि किसी कार्यमें जरा-सी गलतीकर देनेपर मारा-पीटा जाता है तो इसका परिणाम यह हो सकता है कि वह उस समय मार तो खा ले परन्तु बड़े होनेपर उन्हीं लोगोंके साथ उसी प्रकारका व्यवहार अपनाये जैसा कि उसके साथ व्यवहार किया गया था अर्थात् वह भी क्रोधका प्रदर्शनकर सकता है या मारने पीटने तकके लिए कदम बढ़ा सकता है। यदि एक बार बालकको ऐसा करनेकी हिम्मत आ गयी तो वक्त-बेवक्त किसी समय वह घटना घट सकती है जिसका समाधान होना मुश्किल हो सकता है।

एक बालक जन्मके बाद ही व्यवहार प्रतिमानोंको सीखकर नहीं पैदा होता है। यह बात स्पष्ट है परन्तु बालक आपके सामने जो व्यवहार करता है, चाहे वह अच्छा हो या बुरा, वह अपने चारों ओरके वातावरणसे ही सीखता है और जो कुछ वह सीखता है उसे विभिन्न अवसरोंपर आपके सामने प्रस्तुत करता है। अर्थात् बालकके सामने हम जैसा वातावरण प्रस्तुत करेंगे, वह उसका वैसा ही अनुकरणकर उसे प्रस्तुत करता है। यही कारण है बालकके व्यक्तित्वके विकासमें उसके पर्यावरणकी भूमिका महत्वपूर्ण है। इस संदर्भमें यह बात भी सत्य है कि यदि एक बालक कुछ दिनोंतक एक

जगह रह जायगा तो उसके चारों ओरके वातावरणका उसपर प्रभाव पड़ेगा और यदि थोड़े दिनोंके बाद उसे दूसरे निम्न वातावरणमें ले जाया जाय तो वर्तमान वातावरणका प्रभाव उसपर ज्यादा हो जाएगा और पिछले वातावरणसे वह जो कुछ सीखकर आया है, वह मिटता जाएगा। इस प्रकारका परिवर्तन ज्यादातर कम उम्रके बालकोंमें देखा जाता है या उन लोगोंपर होता है जो नये वातावरणमें ज्यादा दिनोंतक रह जाते हैं। उदाहरणके तौरपर यदि एक बालक अपने पिताके परिवारके साथ कुछ वर्षोंतक उत्तर प्रदेशमें रहता है और उसके बाद पंजाब चला जाता है और वहाँ काफी दिनों तक रह जाता है तो पंजाबकी बोल-चाल और रहन-सहनका प्रभाव उसपर स्पष्ट रूपसे झलकेगा और उत्तर प्रदेशकी बोल-चाल और रहन-सहनके तौर-तरीके गायब होते जाएंगे। उपरोक्त बातोंसे यह बात स्पष्ट हो जाती है कि बालकके लिए वर्तमान वातावरणका काफी हदतक प्रभाव पड़ता हैं। कहनेका आशय यह है कि बच्चे अपने वातावरणमें उचित अनुचित जो देखते हैं या सीखते हैं उसके प्रति उस समय प्रतिक्रिया तो करते ही हैं। साथ-ही साथ भविष्यमें भी अपने पूर्वके अनुभवका प्रदर्शन विभिन्न अवसरोंपर करते हैं। एक बालकका उसके परिवारमें ही पालन-पोषण होता है और इस समय वह जिन जिन व्यक्तियोंके सम्पर्कमें आता है, उनका प्रभाव उसपर पड़ता जाता है। यह आवश्यक नहीं है कि उन व्यक्तियोंसे जो उसने सीखा है उसे तुरन्त प्रस्तुत करे। विभिन्न अवसरोंपर वह उसे दर्शाता है परन्तु अधिकतर अनुकरणकी क्रिया माता-पिता या परिवारके सदस्योंकी ही होती है क्योंकि उनके सम्पर्कमें ही वह ज्यादा रहता है और उसका प्रभाव ज्यादा पड़ता है। एक बालक जिस तरहसे बोलता है, भाषाका प्रयोग करता है, खाता पीता है, उसकी उस समयकी क्रियाएँ उसके परिवारके लोगोंके करनेके ढंगसे बिल्कुल मिलती हैं।

दूषित पर्यावरण और अनुकरणकी वृत्ति

इस सन्दर्भमें यह बात कहना उचित होगा कि प्रायः एक बालकको हम गाली देते हुए, अभद्र या अश्लील व्यवहार करते हुए देखते हैं या सुनते हैं तो इसका कारण यह हो सकता है कि उसके परिवारका वातावरण ही दूषित हो। कहनेका तात्पर्य यह है कि यदि बालकके माता-पिता या परिवारके अन्य सदस्य बालकके सामने जैसा अभद्र, अश्लील या भद्र व्यवहार करेंगे, उसका बच्चे अनुकरण करेंगे और उसे अपने व्यवहारमें लाएंगे। प्रायः हम देखते हैं कि बच्चे उन्हीं गन्दी गालियोंका प्रयोग करते हैं जैसाकि उनके माता-पिता या परिवारके अन्य सदस्योंको कहते हुए सुना जाता है। परन्तु यह भी आवश्यक नहीं है कि बच्चे सभी आदतें परिवारसे ही सीखते हैं। गन्दी आदतें उन्हें उन पर्यावरणोंसे भीं मिलती हैं जिनके सम्पर्कमें वे आते रहते हैं। अतः आवश्यकता इस बातकी होती है कि हम उसको इन पर्यावरणोंसे दूर रखनेका प्रयास करें अन्यथा व्यक्तित्वका विकास सुदृढ़ एवं सामाजिक मान्यताएं और मूल्योंके अनुरूप नहीं होगा। इसके साथ ही उस एक बालकके साथ अन्य बालक भी दूषित होंगे और इससे समाजका अहित होगा।

एक परिवारमें स्त्रियोंके अतिरिक्त एक बालकके पिता और उसके बाबा थे। बालक लगभग १०-१२ सालका था। बालकके पिता कुछ क्रूर प्रकृतिके थे। उसके बाबा वृद्ध हो गये थे और अवकाश ग्रहणकर चुके थे। बालकके पिता और उसके बाबामें अनबन हो जाया करती थी क्योंकि बालकके पिता अपने दोस्तोंके साथ गुमराह हो रहे थे। इससे व्यापारमें भी काफी घाटा हो रहा था। प्रायः लड़केके बाबा अपने बेटेको समझाया करते, पर उसके पितापर कुछ भी असर नहीं हो रहा था। एक दिन बात और भी बिगड़ गयी और बालकके पिताने अपने वृद्ध पिताको डण्डेसे खूब मारा और यह सिलसिला बढ़ता गया। एक दिन परिवारका सदस्य वह वृद्ध चल बसा। उस बालकने अपने पिताकी इस क्रूर प्रकृतिको ग्रहणकर लिया। अब बालक बड़ा हुआ तो उसकी भी अपने पितासे नहीं बनती थी और एक दिन उसने भी अपने पिताको डण्डेसे मारा। इस प्रकार सारे परिवारका वातावरण दूषित हो गया। इससे स्पष्ट है

है कि बालकके सामने अनुचित व्यवहार करनेसे किस प्रकारसे उसका अनुकरण करते हैं।

बच्चोंमें भेद-भाव न रखें

कभी-कभी परिवारमें माता-पिता अपने सभी बच्चोंके साथ समान व्यवहार नहीं करते हैं। किसी बच्चेकी ओर झुकाव ज्यादा रहता है तो किसीकी ओर कम। किसीको ज्यादा लाड़-प्यार मिलता है तो किसीकी सर्वथा उपेक्षाकर दी जाती है। किसीकी आवश्यकताओंकी पूर्ति जितनी होनी चाहिए उससे कहीं ज्यादा होती है तो दूसरे बच्चेको जलन होती है। बच्चे अपने माता-पिताके इस व्यवहारको अच्छी तरहसे समझते हैं, इसलिए उनके व्यवहारोंमें नकारात्मक दिशाकी ओर प्रगति दिखाई पड़ने लगती है। उदाहरणस्वरूप वे चिड़चिड़े और क्रोधी हो जाते हैं। साथ ही कभी कभी वे माता-पिता या भाई बहनोंसे दूर रहनेकी कोशिश करने लगते हैं। इसके साथ ही ऐसे बच्चोंमें चोरी करने, जेब काटने और दूसरोंको धोखा देनेकी आदतका विकास होने लगता है जिस कारण उनका विकास अवरुद्ध हो जाता है।

अति संरक्षण और प्यारकी कमी

दूसरी ओर वे बच्चे हैं जिन्हें माता-पितासे अति संरक्षण मिला है, अधिक प्यार मिला है। वे प्रायः जीवनमें कुछ नहीं कर पाते हैं और चोरी, जेब काटना और गंदी आदतें उनका पीछा नहीं छोड़तीं। उनका लक्ष्य ही हो जाता है दूसरोंको धोखा देना। समयानुसार वे माता पिताको भी धोखा देते हैं। इसका कारण यह है कि उनकी आवश्यकताओंकी मांग इतनी बढ़ जाती है जितनीकी पूरी नहीं हो सकती। परिणामस्वरूप इन आवश्यकताओंकी पूर्तिके लिए वे समाजविरोधी आचरण अपनाते हैं। इस प्रकारके गन्दे व्यवहार बच्चोंमें प्रायः किशोरावस्थामें ही देखे जाते हैं जबकि उन्हें रोका नहीं जा सकता और रोकना और भी घातक होता है क्योंकि उस समय उनका मस्तिष्क संतुलन अव्यवस्थित सा रहता है। अतः बच्चेकी उन्हीं आवश्यकताओंकी ओर विशेष ध्यान दिया जाना चाहिए जो उनके जीवनके लिए उपयोगी हों।

बालक लाड़-प्यारका भूखा होता है और अपने माता-पिता या परिवारका प्यार पानेके लिए प्रायः वह उनकी गोदमें रहना पसन्द करता है। परन्तु कुछ माता-पिता ऐसे देखे गये हैं कि यदि बालक रो रहा है तो उसे स्वयं गोंदमें नहीं उठायेंगे और यदि वह स्वयं उनकी गोंदमें आनेकी कोशिशकर रहा है तो भी उसे गोंदमें नहीं लेंगे। इससे वह अपनेको तिरस्कृत महसूस करता है। इसका परिणाम यह भी होता है कि जब कभी माता-पिता उसी बच्चेको दूसरोंसे कभी स्वयं गोदमें लेकर प्यार करना चाहेंगे तो वह प्रतिक्रिया स्वरूप इसके लिए अवसर नहीं देता है और अपना मुँह दूसरी ओर कर लेता है या वहाँसे धीरे-धीरे चला जाता है। यही नकारात्मक विचार उसके मनमें विकसित होते जाते हैं और जैसे-जैसे वह बड़ा होता जाता है, इन नकारात्मक धारणाओंका विकास होता जाता है। इस कारण बच्चेको तिरस्कृत करना हानिकारक है, चाहे बालक जिस अवस्थाका हो।

अत्यधिक लगाव हानिकारक

प्रायः जो बालक माता-पिता और परिवारसे अधिक सांवेगिक रूपसे सम्बद्ध होते हैं, उन्हें घरके बाहर स्कूल आदिमें भेजनेमें परेशानी आती है। वे स्कूल जाना पसंद नहीं करते हैं और रोते हैं, छिप जाते हैं। इसका कारण यह हो सकता है कि माता-पिताने बालकको शुरूसे ही सदा अपने साथ रखा है और किसी कार्यको स्वतंत्र रूपसे करनेका अवसर नहीं दिया है। इसके साथ ही हर कार्यमें जहां उन्हें बालककी सहायता नहीं करनी चाहिए, वहां भी वे सहायता करते हैं। ऐसे बालकोंको परिवारसे अलग होनेमें परेशानी होती है और वे शिक्षाके क्षेत्रमें अपने हम-उम्र बच्चोंसे पिछड़ जाते हैं।

कभी-कभी तो ज्यादा लाड़-प्यारके कारण माता-पिता बच्चोंको काफी उम्रमें स्कूल भेजते हैं और उनकी यह धारणा रहती है कि यदि बालकने थोड़ा कम ही

पढ़ा तो क्या होगा, घरका रोजगार करेगा या घरमें उनके खानेके लिए काफी हैं। इस प्रकारकी मनोवृत्ति वास्तविक रूपसे बालकके लिए लाड़-प्यार नहीं है बल्कि उसके व्यक्तित्वकी प्रगतिमें एक बाधक तत्व है जो कि उसके सारे जीवनको नाश करनेवाला है। माता-पिताकी ओरसे ऐसा अवसर मिलनेपर बालक भी निष्क्रिय हो जाते हैं और वे स्वयं किसी कार्यमें भाग लेनेके लिए आगे नहीं बढ़ते हैं और जीवन आरामसे बिताना चाहते हैं। परन्तु परेशानी उन्हें उस समय आती है जब उन पर परिवारका सारा बोझ आ जाता है और वे एकाएक इस प्रकारके बोझसे परेशान हो जाते हैं। अतः माता-पिताको इस ओरसे सजग रहना चाहिए जिससे वे आगे बढ़ सकें।

बहुतसे परिवारोंमें माता-पिता अपने बच्चोंको इस बातकी छूट नहीं देते हैं कि बालक परिवार और स्कूलके अतिरिक्त स्वयं कहीं जा सके। न तो वह पास-पड़ोसके बच्चोंके साथ खेल पाता है और न ही वह स्कूलके मित्रोंमें मिल सकता है। यह बात सही है कि पास-पड़ोस या स्कूलके मित्र सभ्य बच्चे हों, नहीं तो उसमें गन्दी आदतें पड़ जाएँगी। इस बातकी ओर माता-पिताको ध्यान देना चाहिए कि बच्चोंका सम्पर्क अवांछनीय तत्वोंसे न होने पाये परन्तु बच्चोंके समुचित विकासके लिए यह आवश्यक हैं कि बच्चे कभी-कभी स्वयं मित्रोंसे मिलें अच्छी-अच्छी बातें करें, खेलें, कूदें आदि। इस बातकी छूट माता-पिताको देनी चाहिए। मैं कुछ ऐसे बच्चोंको जानता हूँ जिन्हें माता-पिताने ज्यादा लाड़-प्यारके कारण न तो शिक्षा ग्रहण करनेका अवसर दिया और न ही किसी व्यवसायमें काम करनेका अवसर दिया। परिणामस्वरूप उनकी उम्र काफी हो चुकी है, परन्तु न तो वे अपने बराबरके लोगोंके साथ बात-चीतकर सकते हैं और न ही इस लायक हैं कि स्वयं स्वतंत्र रूपसे किसी विषयपर विचारकर सकें तथा स्वयं अपना जीवन-यापनकर सकें। वे मंदित न होते हुए मंदित हो जाते हैं। उनके माता-पिता अब अपनी गलतीपर पश्चात्ताप हैं और अब चाहते हैं कि उनका वह बालक (जिन्हें वे बालक ही समझते हैं) सिर्फ इस लायक हो जाय कि जीवनमें स्वयं रोजी-रोटी कमा सके। ऐसे बालकोंमें काफी प्रयासके बाद कुछ सुधार लाया जा सकता है।

कभी-कभी विशेषतः धनी परिवारोंमें यह देखा जाता है कि माता-पिताको बच्चोंसे लगाव नहीं होता है। वे घरके दाई-नौकरोंपर ही निर्भर रहते हैं। माता-पिताको इस बातकी भी चिन्ता नहीं रहती है कि उनका बालक क्या खा रहा है या किस चीजकी उसको आवश्यकता है। कुछ माता-पिता तो बच्चेसे छुटकारा पानेके लिए बचपनसे ही उसे शहरमें या शहरसे बाहर बोर्डिंगमें भर्तीकर देते हैं। बच्चा बहुत सी व्यावहारिक बातें जो अपने माता-पितासे सीख सकता था, उन्हें नहीं सीख पाता है और जीवन-पर्यन्त तक यह कमी उसमें बनी रहती है। इसके साथ ही इसका परिणाम यह भी होता है कि बच्चे माता-पिताके प्यारसे वंचित रह जाते हैं, जिसकी कमी हमेशा वे महसूस करते रहते हैं। बादमें बालक भी प्रतिक्रियास्वरूप ऐसा व्यवहार अपने माता-पिताके साथ करता है जैसे उसका कोई लगाव उनके साथ नहीं है। इसमें उसके माता-पिता एवं बालकको निराशाका अनुभव होता है। एक बार यह देखा गया था कि मां तो बालकको बहुत चाहती थी परन्तु पिता बच्चेके साथ बहुत ही रूखा व्यवहार करते थे। वह अपने बच्चेको न तो अपने पास बैठाना चाहते थे और न ही उसके साथ बात करना चाहते थे। बालक मांसे काफी घुला-मिला हुआ था, परन्तु पितासे उतना ही दुराव रखता था। साधारण सी बातोंके लिए पितासे डांट एवं मार भी पड़ जाती थी। वह पितासे दूर रहने लगा और जैसे-जैसे वह बड़ा होता गया, पिताके प्रति ईर्ष्या, क्रोध एवं आक्रोशकी भावना विकसित होती गयी। इसके साथ ही उसके पिताने उसे कहीं जाने-आनेकी छूट भी नहीं दी थी। इससे वह किसीसे मिलनेमें शर्मका अनुभव करता था और बड़े होनेपर वह किसीके कहनेपर भी किसी कार्यक्रममें जानेमें शर्मका अनुभव करता था और जाना भी नहीं चाहता था। यहाँ तक कि किसी नये व्यक्तिसे बात करनेमें भी वह घबराता था। जब वह

समझदार हो गया तो वह पिताकी कोई बात नहीं सुनता था क्योंकि इसका कारण यह था कि पिताने कभी उसके सुख-दुखकी ओर ध्यान नहीं दिया। ऐसी दशामें बालक कभी-कभी अपने परिवारसे सम्बन्ध भी तोड़ लेते हैं।

शिक्षाके प्रति उदासीनता—

माता-पिता बच्चोंका स्कूलमें नाम तो लिखवा देते हैं, परन्तु पढ़ाई-लिखाईमें उनकी क्या प्रगति है तथा किस विषयकी ओर उनकी रुचि है, इसका उन्हें जरा भी ध्यान नहीं रहता है। परन्तु वे यह निश्चयकर लेते हैं कि बच्चोंको डाक्टर, इंजीनियर या वैज्ञानिक बनाना है। इस प्रकारकी माता-पिताको मनोवृत्ति बच्चेके शैक्षणिक विकासमें बाधक सिद्ध होती है। बिना रुचिके शिक्षा ग्रहण करना असम्भव हो जाता है और इस अरुचिका परिणाम यह होता है कि बच्चे अपनी रुचिको माता-पिता या अभिभावकसे नहीं कहते हैं और अपना ध्यान दूसरी ओर देना शुरूकर देते हैं। गंदे बच्चोंका साथ हो जानेसे वे स्कूलसे भागकर सिनेमा देखते हैं तथा इसके लिए चोरी करना, जुआ खेलना आदि गंदी आदतें को सीख लेते हैं। इसके भयानक परिणामसे बचनेके लिए आवश्यक है कि माता-पिता बच्चोंकी रुचिका ध्यान रखकर उससे विचार-विमर्श करके विषयको चुननेका उन्हें स्वयं अधिकार दें। यहांपर यह भी ध्यान देना आवश्यक है कि यदि बालक गलत निर्णय लेता है तो उसे सही रास्ता दिखानेका प्रयास करें और गलत विषय का चयन न करने दें।

प्रायः यह भी देखा जाता है कि एक ओर तो यदि किसी बालकको कोई रोग हो गया है तो माता-पिता उसकी दवा एवं चिकित्साकी ओर समुचित ध्यान नहीं देते हैं। दूसरी ओर कुछ माता-पिता इतनी अधिक सेवा करते हैं जितनी कि आवश्यकता नहीं है। पहली अवस्थामें बालक अपने मनमें माता-पिताके प्रति आक्रोश, क्रोध आदि नकारात्मक भावनाका विकासकर लेते हैं और दूसरी ओर बालक भविष्यमें भी बड़े होनेपर कोई कठिन कार्य करनेमें असमर्थ रहते हैं। अतः इस प्रकार का अनुचित व्यवहार भी व्यक्तित्वको असंतुलित करता है।

[पृष्ठ ३२ का शेषांश]

पार्वती—लालच।

नंदकिशोर—(खुश हो कर) बिल्कुल ठीक। (कापीमें लिखने लगता है।)

पार्वती—ठहरो। लिखनेसे पहले इसकी व्याख्या सुन लो। तीनके बाद और बच्चोंका लालच नहीं करना चाहिए। 'लालच' के बाद शब्द आएगा 'लालटेन'।

नंदकिशोर—हाँ, हाँ, बिल्कुल ठीक।

पार्वती—इसकी भी व्याख्या सुन लो। दो या तीन बच्चोंके बाद माँ-बापको खासकर बापको अपने खोपड़ेमें अक्लकी लालटेन जलानी चाहिए। लालसे जुड़कर जो सबसे महत्वपूर्ण शब्द बनता है, वह है 'लाल तिकोन'। बोलो, ठीक।

नंदकिशोर—(पिटा-पिटा सा) ठो···क।

पार्वती—तो आओ मेरे साथ परिवार नियोजन केन्द्रके उस डाक्टरके पास।

(हाथ पकड़कर नंदकिशोरको उठाती है। तभी सरिता अन्दरसे आती है, उसके पीछे-पीछे मुन्ना भी है।)

सरिता—माता जी, मुनिया सो गयी।

पार्वती—बेटी, तुम जरा देर उसके पास बैठो, मैं और तुम्हारे पिताजी अभी आते हैं। जाते-जाते हम स्कूलसे तुम्हें और मुन्नेको आजकी छुट्टी दिला देंगे।

सरिता—आप दोनों कहाँ जा रहे हैं ?

पार्वती—तुम्हारे पिताजीके भुलक्कड़पनका इलाज कराने।

(नंदकिशोरको खींचकर बाहर ले जाती है।)

मुन्ना—दीदी, भुलक्कड़पन क्या ?

सरिता—अभी शब्दकोश देखकर बताती हूँ।

(सरिता गुटका शब्दकोशके पन्ने जल्दी-जल्दी पलटती है।)

(पर्दा गिरता है)

भारतमें कुष्ठ रोगकी समस्या और हमारा कर्त्तव्य

—श्री जे० बी० मन्कर—

कुष्ठ रोग उन्मूलनकी समस्या बहुत जटिल है। यह समस्या भारतकी ही नहीं, सम्पूर्ण विश्व की है। प्रत्येक देश इस रोगको समाप्त करनेका प्रयत्नकर रहा है, परन्तु समस्या बढ़ती जा रही है।

१९४० तक इसके लिए कोई भी उपयुक्त औषधि न थी। उस वर्ष सल्फोन औषधियोंकी खोज हुई। यद्यपि सल्फोन बहुत सस्ती है, तथापि इसका उपयोग आज तक आरम्भ नहीं हुआ है, क्योंकि प्रत्येक कुष्ठ रोगी यह प्रकट नहीं करना चाहता कि उसे कोढ़ है। और जब उसका रोग अन्तिम अवस्थामें आ जाता है, तब उसे कुष्ठ रोग बस्तियोमें भेज दिया जाता है क्योंकि समाज उससे घृणा करता है।

कुष्ठ रोगीके पुनर्वासका अर्थ केवल वह नौकरी दिलवाना ही नहीं है जो कोढ़के कारण उससे छिन गयी है। इसका उद्देश्य रोगीको समाजमें स्थान दिलवाना भी होना चाहिए जिससे उसे वंचित रखा जाता है। अतः कुष्ठ रोगीके पुनर्वासके लिए उसके प्रभावित अंगोंका सक्रिय संचालन और मानसिक सन्तुलन बनाये रखना आवश्यक है तथा उनके लिए मार्गदर्शन और प्रशिक्षणकी आवश्यकता है जिन्हें अपनी योग्यताओंके कारण व्यवसाय बदलनेकी आवश्यकता पड़ती है। परन्तु पहले रोग बढ़ने दिये जाने और फिर उसके पुनर्वासके लिए कुछ करनेसे अच्छा है कि ऐसी नौबत ही न आये कि उसे समाजसे निकलना पड़े।

परन्तु भारतमें कुष्ठ रोगियोंका पुनर्वास ही एकमात्र मार्ग रह गया है क्योंकि यहाँ कितनी ही कुष्ठ रोग बस्तियाँ हैं। गाँधी स्मारक कुष्ठ रोग संगठन ही ऐसी एकमात्र संस्था है जिसने पुनर्वासका बड़ा विरोध किया और यह १९५१ से कुष्ठ रोगियों और समाजको यह बतानेका प्रयत्नकर रही है कि कुष्ठ रोगका इलाज हो सकता है। परन्तु संगठनको अपेक्षित सफलता नहीं मिली है।

इसके अनेक कारण हैं। सबसे महत्वपूर्ण कारण यह है कि कुष्ठ रोगियोंको समाज सहानुभूतिपूर्ण दृष्टिसे नहीं देखता और इसलिए उन्हें कुष्ठ रोग बस्तियोंमें शरण लेनी पड़ती है। यह भी उन्हींके लिए सम्भव है जो बस्तीके मालिकोंको इसका खर्चा दे सकते हैं। यदि उनके पास पैसा नहीं है तो उन्हें भिखारी बनना है। संगठनने भारतमें कुछ सीमा तक समस्याका हल ढूंढ लिया है।

यह अनुमान है कि भारतमें २५ लाखसे अधिक कुष्ठ रोगी हैं और उनकी संख्या बढ़ती जा रही है, क्योंकि सरकार समस्याको गम्भीरतापूर्वक नहीं ले रही है। विश्वमें उनकी संख्या २८,३१,७७५ है जबकि विश्व स्वास्थ्य संगठन की नवीनतम रिपोर्टके अनुसार उनकी पूरी संख्या १,०७,८९,००० है। कहा जाता है कि

भारतमें ३०,००० कुष्ठ रोगी भिखारियोंका जीवन बिता रहे हैं।

बस्तियों की अपेक्षा अस्पतालोंका अधिक होना जरूरी

जिस समय गाँधी स्मारक कुष्ठ रोग संगठनका जन्म हुआ था, कुष्ठ रोग कार्यका अर्थ कुष्ठ रोग बस्तियोंका निर्माण ही था। जो भी कुष्ठ रोगपर कार्य करनेकी सोचता बस्ती बनाने की बात उसके मनमें आती परन्तु संगठनने कुष्ठ रोग बस्ती की समस्याका बहुत ध्यानपूर्वक अध्ययन किया और इस निष्कर्षपर पहुँचा कि जिस देशमें २० लाख कुष्ठ रोगी हों और बस्तियोंमें केवल १५,००० रोगियोंके रहने की व्यवस्था हो, वह कुष्ठ रोग नियन्त्रणके उपायके रूपमें केवल बस्ती निर्माणको नहीं अपना सकता। संगठनने इस विचारका विरोध करनेका निश्चय किया है और उसने कार्यक्रमों की सहायतासे अपनी गतिविधियोंको आरम्भकर दिया है।

संगठन गाँधी स्मारक निधिसे आर्थिक सहायता प्राप्त करनेमें सफल रहा और ३ नवम्बर, १९६५ को वर्धा (महाराष्ट्र) में भारतके तत्कालीन राष्ट्रपति डा० राधाकृष्णनने एक कुष्ठ रोग अस्पतालका उद्घाटन किया।

उस समय बस्तियोंमें ७५,००० रोगियोंके अतिरिक्त लगभग एक लाख रोगी बाह्य रोगी विभागमें इलाज करवा रहे थे। यदि पृथक बस्तियों कीं व्यवस्था करना सम्भव नहीं था तो यह निष्कर्ष निकालना तर्कसंगत था कि रोगियोंको कमसे कम बाह्य रोगी विभागोंमें नयी औषधि तो दी जानी चाहिए ताकि कुछ समयके बाद रोगको नियन्त्रित किया जाय।

कुष्ठ रोग नियन्त्रणके परम्परागत उपायको संगठन द्वारा ठुकरानेका एक कारण यह था कि १९५१ में यह विधि कुष्ठ रोग समस्याको सुलझानेमें असफल रही थी। उस समय भारतमें लगभग १५ लाख (इस समय २५ लाख) कुष्ठ रोगी थे। इनमेंसे ३ लाख संक्रामक थे और शेष १२ लाभ असंक्रामक। सिद्धान्ततः सभी ३ लाख संक्रामक रोगियोंको पृथक बस्तियोंमें रखा जाना चाहिए था। वास्तवमें केवल १५,०० या ५ प्रतिशत कुष्ठ रोगी पृथक बस्तियोंमें रखे गये थे। इतनी महत्वहीन संख्यामें रोगियोंको पृथक रखनेसे कुष्ठ रोगको नियन्त्रित नहीं किया जा सकता था। शेषके लिए बस्तियोंका निर्माण वित्तीय साधनों और कर्मचारियों की कमीके कारण असम्भव सा था।

लगभग १२ लाख असंक्रामक रोगियोंकी भी देखभाल नहीं की जा रही थी। उसमेंसे केवल एक लाख या ८ प्रतिशतका बाह्य रोगी विभागोंमें इलाज चल रहा था। स्पष्टतः, कुष्ठ रोग नियन्त्रणकी दिशामें यह कोई विशेष प्रगति नहीं थी।

संगठनने मनोनीत सदस्या श्रीमती शकुन्तला परांजपे द्वारा राज्यसभामें प्रस्तुत एक विधेयकके विरुद्ध अभियान आरम्भ किया जो उन्होंने २७ फरवरी १९६७ को पेश किया था। विधेयकमें उनकी स्त्री-पुरुषोंके अनिवार्य वन्ध्यकरण की व्यवस्था थी "जो इस प्रकारके कुष्ठ रोग या क्षयरोग या पागलपन या बुद्धि-दुर्बलतासे पीड़ित हों जिससे उनके द्वारा अपनी ही तरह की सन्तान उत्पन्न किये जाने की सम्भावना हो।" संगठनका विचार था कि विधेयकमें कुष्ठ रोगको जोड़ा गलत कदम है, जिसके कानून बन जानेपर कुष्ठ रोग उन्मूलन अभियानपर प्रतिकूल प्रभाव पड़ेगा।

यह हर्षका विषय है कि अनेक कुष्ठ रोग कार्यकर्त्ताओं और संगठनोंके संयुक्त प्रयासोंके कारण विधेयक वापस ले लिया गया। केन्द्रीय सरकार एक अन्य विधेयक लाने पर विचारकर रही है जिसमें कुछ रोगोंसे पीड़ित व्यक्तियोंके अनिवार्य वन्ध्यकरणकी व्यवस्था होगी **और** पता चला है कि उसमें कुष्ठ रोग सम्मिलित नहीं है।

संगठनने देशके अनेक नगरों और कस्बोंमें विभिन्न केन्द्र खोलकर बड़ी तत्परता और ईमानदारीसे कार्य आरम्भ किया। आज इन केन्द्रोंकी स्थिति निम्न प्रकार है।

राज्य	कुष्ठ रोग केन्द्र	सर्वेक्षण शिक्षा प्रशिक्षण केन्द्र	स्वैच्छिक संगठन	अन्तर्राष्ट्रीय संगठन	कुल	प्रशिक्षण केन्द्र
१. आन्ध्र प्रदेश	२२	१९२	१०	२	२२६	२
२. असम	१	१०	३	—	१४	—
३. बिहार	१९	—	३	—	२२	१
४. गोआ	१	२२	—	—	२३	—
५. गुजरात	३	७०	२	—	७५	—
६. हिमांचल प्रदेश	६	—	—	—	६	—
७. जम्मू-कश्मीर	४	२५	—	—	२९	—
८. केरल	१	१४९	३	—	१५३	१
९. मध्यप्रदेश	६	६१	१	—	६८	१
१०. तमिलनाडु	२४	१११	५	२	१४२	२
११. महाराष्ट्र	२८	४२८	५	—	४६१	२
१२. मणिपुर	४	—	—	—	४	—
१३. मैसूर	१०	४०	१	—	५१	१
१४. नागालैंड	—	२	—	—	२	—
१५. उड़ीसा	२२	७४	—	१	९७	१
१६. पांडीचेरी	—	२०	—	—	२०	—
१७. त्रिपुरा	१	—	—	—	१	—
१८. उत्तर प्रदेश	१६	३०	४	—	५०	१
१९. पश्चिम बंगाल	२३	—	—	—	२३	२
कुल योग	१९१	१२३४	३७	५	१४६७	१४

विकृतांगोंवाले भिखारियोंकी भीड़ धार्मिक स्कूलों पर आमतौर दिखाई दे जाती है। इनमेंसे अनेक भिखारी कुष्ठ रोगी होते हैं। अतः प्रश्न उठता है, सरकार इन भिखारियोंके विरुद्ध कानून क्यों नहीं बनाती ?"

१८९० का रेलवे अधिनियम, कुछ सावधानियों और स्थितियोंमें छोड़कर कुष्ठ रोगियोंके रेलसे यात्रा करनेपर प्रतिबन्ध लगाता है। १८९८ का कुष्ठ रोग अधिनियम भिखारी कुष्ठ रोगियोंके पृथक्करण और चिकित्साकी व्यवस्था करता है और उनपर कुछ व्यवसाय अपनाने तथा कुछ कार्य करनेपर प्रतिबन्ध लगाता है, जैसे खाद्य पदार्थ पकाना, सार्वजनिक कुओंपर नहाना-धोना सार्वजनिक वाहन चलाना इत्यादि। १९४५ के बम्बईके भिखारी अधिनियममें कुष्ठ रोगियोंके भिखारी बननेपर प्रतिबंध लगाया गया है, उन्हें पकड़ने, प्रशिक्षण देने और काम देनेकी व्यवस्था की गयी है। ये अधिनियम कोढ़को एक रोगके रूपमें स्वीकार करते हैं और इसमें वे इन पुरानी धारणाओंसे निश्चित रूपसे आगे हैं कि कोढ़ पिछले जन्मके पापोंके लिए भगवान द्वारा दिया गया दण्ड है।

● ● ●

जन्म और जीवनके संचालक : हारमोन

[गतांकसे आगे]

पैराथायरायडके हारमोन—पैराथायरायड ग्रंथियां बहुत छोटी होती है इनका भार केवल ०.०५ ग्राम होता है। इनमेंसे दो थायरायडसे जुड़ी रहती हैं और दो उसकी सतहपर रहती हैं। इन्हें काटकर निकाल देनेपर चन्द दिनोंमें ही मृत्यु हो जाती है। खूनमें कैल्शियमकी समुचित मात्रा बनाये रखना इस हारमोनका मुख्य कार्य है। अगर यह न हो तो खूनमें कैल्शियम कम हो जाता है, नाड़ी-संस्थान व मांसपेशियोंमें उत्तेजना पैदा होकर दो-चार दिनमें ही टिटैनी रोग हो जाता है, मरीज मूर्छाके दौरोंमें ही समाप्त हो जाता है। पैराथायरायड हारमोन के इंजेक्शनसे फ़ौरन आराम मिलता है, क्योंकि मरीजकी हड्डियोंसे कैल्शियम खूनमें आने लगता है। बार-बार इंजेक्शन देनेसे एक अवस्था ऐसी आ जाती है कि कोई आराम ही नहीं होता। किसी विकारके कारण पैराथायरायडको लगातार अधिक कार्य करना पड़े तो हड्डियोंमें कैल्शियमकी कमी और टिशुओंमें कैल्शियमकी अधिकता हो जाती है, इस कारण गुर्देमें कैल्शियम फासफेटके पत्थर बन जाते हैं।

एडरीनल (उपवृक्क) ग्रंथियोंके हारमोन—दोनों गुर्देके शीर्ष भागपर एक-एक एडरीनल-ग्रन्थि होती है। प्रत्येकका वजन लगभग १० ग्राम होता है। इन्हें सुपरारीनल भी कहते हैं। जन-भाषामें इन्हें 'गुर्देकी टोपी' भी कहा जाता है। हरेक ग्रन्थिके भीतरी भागको मैंडुला और बाहरी आवरणको कार्टेक्स कहते हैं।

मैंडुलामें एपिनैफ्रीन (एडरीनेलिन) और नोरैपिनैफ्रीन (आर्टेरेनाल) नामक दो हारमोन बनते हैं। एपिनैफ्रीन जिगर और मांसपेशियोंमें ग्लाइकोजनका विश्लेषण तेज कर देता है, इस कारण खूनमें शक्कर बढ़ जाती है। किसी व्यक्तिको सदमा पहुँचा हो तो इस हारमोनसे इलाज किया जा सकता है, क्योंकि अस्थायी रूपसे खून का दवाब बढ़ जाता है। कभी-कभी आपरेशनके लिए बेहोशीकी दवासे मरीजके हृदयकी गति बन्द हो जानेपर इसी हारमोनके इंजेक्शनसे हृदयकी धड़कन वापिस बुलाई जाती है। नवजात शिशुके हृदयमें गति न हो तो इसी हारमोनसे इलाज किया जा सकता है। एपिनेफ्रीन शरीरकी कोमल मांसपेशियोंको पूर्ण विश्रामकी अवस्थामें पहुँचा देता है। दूसरे हारमोन नोरैपिनैफ्रीनके कार्य पहले हारमोनके कार्योंसे काफ़ी मिलते-जुलते हैं, किन्तु यह कार्बोहाइड्रेटके संव्ययको प्रभावित नहीं करता और कोमल मांसपेशियोंको विश्रामकी अवस्थामें पहुँचानेमें सहायक नहीं होता।

कार्टेक्समें अनेक हारमोन पैदा होते हैं जिनका सामूहिक नाम कार्टिन है। इनमेंसे कार्टिकोस्टेरोन, कार्टिसोन और कार्टिनसॉल कार्बोहाइड्रेटके संव्ययके नियमनमें भाग लेते हैं। डी—आक्सिकार्टिकोस्टेरोन तथा डी॰ आक्सिकार्टिसोल शरीरमें विद्युत्-विश्लेषण तथा जलके संव्ययको प्रभावित करते हैं। एल्डोस्टेरोन खनिज-लवणोंके घोलोंके नियमनके लिए जरूरी होता है, अधिक मात्रामें शरीरको उपलब्ध हो तो कार्बोहाइड्रेट और प्रोटीन-संव्ययको भी प्रभावित करता है।

कार्टिकोस्टरोन, कार्टिसोल और एल्डस्टेरोन प्रमुख हारमोन हैं जो खूनमें होते हैं। कार्बोहाइड्रेट और प्रोटीन के संव्ययपर कार्टिसोल और शरीर-द्रवोंके विद्युविश्लेषीय सन्तुलनपर एल्डोस्टेरोन अपना अधिकतम प्रभाव डालते हैं।

स्त्रीलिंगी हारमोन—स्त्रियोंके शरीरमें डिम्बकोषों में स्त्रीलिंगी हारमोन बनते हैं। इन्हींके कारण किशोर-अवस्था तक स्त्रीके शरीरमें नारी-अंगोंका विकास होता है। और ये ही हारमोन मासिक-धर्म और गर्भावस्थाका नियमन करते हैं। डिम्बकोष बादामकी शक्लकी ग्रंथियां पेटमें गर्भाशयके दोनों ओर स्थित होती है। डिम्ब एक छोटी-सी गेंदाकार 'स्यूनिका' में रहता है और जैसे-जैसे वह परिपक्व होता है, स्यूनिका बढ़ने लगती है। स्यूनिकाके विकासके दौरान एस्ट्रोन नामक हारमोन पैदा

होता है। स्यूनिका फटनेके बाद इसमें खून भर जाता है फिर एक पीली बड़ी कोशा इसका स्थान ले लेती है। वह कोशा 'नारंगकाय' (नारंगी-पीली-ग्रन्थि) के रूपमें विकसित हो जाती है। यदि इस बीच गर्भाधान न हो तो नारंगकाय कठोर टिशुओंमें परिवर्तित हो जाती है। नारंग-कायमें प्रोजेस्टेरोन नामक हारमोन बनता है। गर्भाधान होनेपर गर्भावस्थाकी अवधिमें यह ग्रन्थि बराबर सक्रिय रहती है।

गर्भाशयको गर्भाधानके लिए तैयार करना प्रोजेस्टेरोनका मुख्य कार्य है। गर्भाधान होनेपर उसी हारमोनकी सहायतासे वहां भ्रूणकी रक्षा होती है और वक्षमें दूधकी ग्रन्थियोंका विकास होता है।

गर्भधारणके बाद गर्भाशयमें गोल, चपटा एक अवयव 'भ्रूण-वेष्ट' बनता है जो भ्रूण और मांके शरीरके वीच सम्बन्ध स्थापित रखता है। भ्रूण-वेष्ठमें कई एक हारमोन बनते हैं, जिनमें एस्टेरीन, और मासिक धर्मका निरोध करनेवाला एक अन्य हारमोन प्रमुख हैं।

पुल्लिंगी हारमोन—पुरुषके अण्डकोषोंमें टैस्टोटैरीन नामक हारमोन बनता है। सक्रिय पुल्लिंगी हारमोनोंको 'एण्ड्रोजन' कहते हैं। पुरुषके शरीरमें नर-लक्षणोंका विकास, जैसे आवाज भारी होना, मूंछ-दाढ़ी उगना आदि, इन्हीं हारमोनों द्वारा सम्भव होता है। इसके अतिरिक्त, ये प्रजनन अंगोंका नियंत्रण करते हैं।

पिट्यूटरी ग्रन्थिके हारमोन—पिट्यूटरी ग्रन्थिके मष्तिस्कके ठीक नीचे स्थित होती है और इसका वजन सिर्फ ०.६ ग्राम (करीब ५ रत्ती) होता है। इसके दो कक्ष ऊतकोंसे जुड़े हुए होते हैं। अग्र भागमें अनेक हारमोन बनते हैं जो शरीरमें हारमोन बनानेवाली तमाम अन्तःस्रावी गन्थियोंका नियन्त्रण करते हैं। इसीलिए पिट्यूटरीको अन्तःस्रावी ग्रन्थियोंकी स्वामिनी कहा जाता है। सर्कसमें काम करनेवाले बौने इसके उदाहरण हैं। किन्तु दैत्याकार व्यक्तियोंकी अपेक्षा बौनोंकी मानसिक प्रतिभा अधिक विकसित होती है। उनका शरीर सुगठित और सुडौल होता है। वचपनमें इस हारमोनका अधिक उत्पादन होनेसे शरीर दैत्याकार हो जाता है। वयस्कोंके शरीरमें संवर्धी हारमोन ज्यादा बनने लगे तो 'एक्रामैगेली (महांगता) रोग हो जाता है, जिसमें चेहरे और हाथों तथा पैरोंकी लम्बी हड्डियां अनुपातसे अधिक बढ़ने लगती है।

प्रजनन-प्रेरक हारमोन—स्त्रियोंके डिम्बकोषों और पुरुषोंके अन्डकोषोंको प्रजनन-ग्रन्थियाँ (गोनाड), कहते हैं। पिट्यूटरी ग्रन्थिमें ऐसे पदार्थ होते हैं जो यौन हारमोनोंके उत्पादनका नियमन करते हैं। पुरुषोंमें शुक्राणु बननेकी क्रिया और स्त्रियोंमें मासिक-धर्म, सर्भाधान, गर्भकी रक्षा आदिसे सम्बन्धित सब क्रियाएँ इन्हीं हारमोनोंके सन्तुलनपर निर्भर रहती हैं।

दुग्धजनक हारमोन—पिट्यूटरीके अग्र-भागमें ही प्रोलैक्टिन नामक हारमोन बनता है। प्रजनन ग्रन्थियोंके हारमोनों द्वारा पृष्ठभूमि तैयार हो जानेपर, प्रोलैक्टिन चूचकोंमें दूध उत्पादन शुरू करता है। गर्भावस्थाके दौरान गर्भवेष्टमें बननेवाला एक हारमोन दुग्ध-ग्रन्थियोंका विकास करता है। साथ ही साथ प्रोलैक्टिनकी क्रियाको अवरुद्ध रखता है। वच्चेका जन्म होनेपर गर्भवेष्ट खारिज हो जानेके बाद प्रोलैक्टिन दूध उत्पादनकी क्रिया आरंभ करनेके लिए स्वतंत्र हो जाता है।

थायरोट्रोपिक हारमोन—थायरायड ग्रंथिका विकास और इसके हारमोनोंका उत्पादन पिट्यूटरीके थायरोट्रोपिक हारमोन द्वारा नियंत्रित होता है।

एडरैनोट्रोपिक हारमोन—इसको एडरैनोकोर्टिको ट्रोपिक (ए० सी० टी० एच०) भी कहते हैं। यह हारमोन एडरीनल कार्टेक्स (उपवृक्क ग्रन्थि) के विकास और कार्यको उत्प्रेरित करता है। गठिया बाय, सन्धिज्वर आदिके इलाजमें इसका उपयोग किया जाता है। ए० सी० टी० एच०के इन्जैक्शनसे उपवृक्क ग्रन्थिके हारमोनोंका उत्पादन तेज हो जाता है।

पिट्यूटरीके पुच्छ भागके हारमोन—यह भाग कमसे-कम दो हारमोन, पिटोसिन व पिट्रैस्सिन पैदा करता है। पिटोसिनके इंजैक्शनसे गर्भाशयकी कोमल मांसपेशियाँ संकुचित हो जाती हैं। प्रसूति गृहोंमें शिशुका

[शेष पृष्ठ २३ पर]

मधुमेहके रोगियोंके लिए उपयुक्त भोजन

श्री रामचन्द्र भूटियाणी और बालकृष्ण 'बालेंदु'

साधारणतया यह अनुभव किया गया है कि जो लोगशर्कर-पिष्ट पदार्थोंका सेवन अधिक करते हैं उनको ४० सालकी उम्रके बाद मधुमेह रोगका शिकार होना पड़ता है। इस रोगके होनेका प्रधान कारण यह है कि जब मनुष्यके शरीरमें इनसुलीन नामक रस काफी मात्रमें नहीं होता, तब इसके लक्षण दिखाई देने लगते हैं। इनसुलीन अग्न्याशयसे स्रवित होनेवाला एक रस विशेष है। जब शरीरमें यह रस आवश्यकतासे कम मात्रामें होता है तो रक्तमें ग्लूकोजका अंश बढ़ जाता है और मूत्र मार्गसे वह ज्यादा मात्रामें बाहर निकलने लगता है जिससे रोगीको बहुत पीड़ा होती है। इस रोगमें पिष्ट पदार्थोंको (कार्बोहाइड्रेट) अधिक मात्रामें नहीं खाना चाहिये।

पीड़ाके अनुसार मधुमेह रोगमें रोगीको आमतौरपर इनसुलीन इंजेक्शन बार-बार दिया जाता है और दैनिक भोजनमें भी अत्यधिक परहेजका ध्यान रखना पड़ता है। परन्तु इनसुलीन लेनेमें कई कठिनाइयाँ हैं।

(१) इनसुलीन इन्जेक्शन एक बार लेने मात्रसे बीमारी दूर नहीं होती। इस इन्जेक्शनको कई बार लेनेसे मधुमेह रोगकी पीड़ाओंसे थोड़ासा आराम मालूम पड़ता है।

(२) इनसुलीन प्राणिजन्य वस्तु है। यह बकरी जैसे जानवरोंके अग्न्यशयसे लेना पड़ता है।

(३) इनसुलीनको इन्जेक्शन द्वारा रक्तमें मिलाते हैं. ऐसा करनेपर भी उसका असर अधिक समय तक नहीं रहता। इसे दवाई की तरह मुँहके द्वारा लेनेका क्रम नहीं है।

(४) इनसुलीन इंजेक्शन बार-बार लेना बहुत मुश्किल है। इतना होते हुए भी रोगीको अपने आहार आदिमें संयम करना पड़ता है, फिर भी स्थाई लाभ प्राप्त नहीं होता है।

दवाके बदले खाद्य

मैसूरकी केन्द्रीय खाद्य अनुसंधानशालामें इस बातपर बहुत खोज बीन की गयी कि मधुमेंहके रोगीको दवादारुके बिना उसके नित्यप्रतिके भोजनमें ही सावधानी बरती जाय तो इस भयंकर रोगसे छुटकारा पाया जा सकता है? उन प्रयोगोंसे यह पता चला है कि मधुमेहके रोगीको कोमल कच्चे बल्लरके दानोंका (एक प्रकारकी सेम) प्रतिदिन सेवन कराया जाय तो इस रोगसे काफी हदका छुटकारा पाया जा सकता है।

मधुमेह रोगसे पीड़ित आदमी अपने आहारके साथ प्रतिदिन कच्चे कोमल बल्लरके दानोंका उपयोग करेगा तो उससे शरीरके रक्तमें शक्करका स्तर कम होनेमें बहुत मदद मिलेगी। लेकिन यह ध्यान रखना चाहिये कि जब कोमल, कच्चे बल्लरकी फालियाँ या दाने पकते जाते हैं वैसे-वैसे उसकी रोग निवारण शक्ति भी कम होने लगती है। अतः रोगियोंको कच्चे कोमल बल्लरके दाने या फलियाँ ही भोजनके साथ सेवन करना चाहिए। उसे अन्य भोजनके व्यंजनोंके साथ भी पकाकर उपयोग किया जा सकता है। इसका सेवन लगातार कुछ दिनों तक करना चाहिए।

कोमल वल्लरके दानोंमें जिस प्रकारका प्रोटीन होता है, उसी प्रकारके प्रोटीन सम्पन्न अन्य खाद्य वस्तुओंके उपयोगसे भी मधुमेह रोग कम होता है। प्रयोगोंसे मालूम हुआ कि उत्तम प्रोटीन सम्पन्न उड़दकी दालसे बनी इडलियाँ तथा गैर चिकनाईदार दूधका पाउडर (स्किमड मिल्क पाउडर , के खानेसे भी मधुमेह रोगी

अपनी बीमारीकी पीड़ासे बच सकते हैं। इडलियोंको रोज नाश्ते और भोजनमें खाया जा सकता है।

इनके अलावा उन दीर्घकालीन परीक्षण तथा अवलोकनसे यह भी पता चला है कि गाँठ गोभी, चनेका निस्सार तथा केफीनका ज्यादातर उपयोग करनेसे भी मधुमेह रोगकी तीव्रता कम हो जाती है। उदाहरणके लिए एक मधुमेहके रोगीको लें जिसपर इसका प्रयोग किया गया है। उक्त पदार्थोंको अपने आहारके साथ लेनेके पहले उस रोगीकी अनुसीलनकी आवश्यकता ४० यूनिट रही। परन्तु इन चीजोंका सेवन करनेके बाद उसी रोगीकी इनसुलीन लेनेकी आवश्यकता ४० से २० तक कम हो गयी। अतः उन दीर्घ प्रयोगोंके आधारपर प्रायोगिक रूपसे एक आहार तालिका बनायी गयी है जिसे नीचे दी जा रही है। परन्तु यह समझना नहीं चाहिये कि मधुमेहके उपचारके लिये यही अन्तिम निर्णय है। किसी अच्छे डाक्टरकी देखरेखमें यह आहार सेवन करना उत्तम है।

ध्यान देनेकी बात यह है कि इन भोज्य वस्तुओंका असर रोगकी तीव्रतापर निर्भर होता है। अतः रोगीको यह चाहिए कि पहले अपने रोगको किसी वैद्य या चतुर डाक्टरसे परीक्षा करवाकर रोगकी तीव्रता जान लेनी चाहिए। रोगकी तीव्रता "फास्ट ब्लड शुगर टेस्ट" और "ग्लूकोस टालरेन्स टेस्ट" से जानी जा सकती है। अगर उससे पता चले कि रोग बहुत तीव्र है तो डाक्टरकी सलाहके मुताबिक इंनसुलीन इंजेक्शन लेना ही पड़ेगा। इंजेक्शन लेते हुए भी इन पदार्थोंको खानेसे इनसुलीन लेनेकी मात्रा अपेक्षाकृत कम हो जायेगी। माने उतनी अधिक इनसुलीन लेनेकी जरूरत नहीं पड़ेगी।

मधुमेहके रोगियोंके लिए आहार तालिका

सबेरे : काफ़ी या चाय। आवश्यकतानुसार शकर भी मिलायी जा सकती है।

नौ बजे; नाश्ता : फलरस, अंडे, उपमा, इडली, टोस्ट, सैंडविच या अनाजके फ्लेक्स तथा दूध। काफ़ी या चाय। इस बार काफ़ी या चायमें अतिरिक्त दो चम्मच स्किम मिल्क पाउडर मिलाकर पीना चाहिए।

१२-३० बजे : प्लेन इनसुलेन इंजेक्शन।

१-०० बजे भोजन : चावल १५० ग्राम या चपातियोंको इच्छानुसार मांस या मछली (तली हुई नहीं) या चनेकी निचोड़ या गांठगोभी या सब्जी और दहीके साथ यथा रीति खाइये। रोजकी तरह भातके साथ घी का उपयोग भी कीजिये।

मांसाहारी तो अंशतः या पूरा अनाजके बदले कम फैटवाला मांस या मछली का उपयोग कर सकते हैं।

भोजनके बाद : वेरिन १०० मि. ग्रा. की एक गोली लीजिये।

४-०० बजे : एक प्याला काफ़ी या चाय; तथा खानेके लिए घी या तेलमें न तले हुए खाद्य व्यञ्जनः काफ़ी या चायमें शक्करका भी उपयोग कर सकते हैं।

रातके ८-०० बजे भोजन : दुपहरके भोजनकी तरह; सोनेके पहले एक प्याला दूध पी ले।

मधुमेहके रोगियों द्वारा खायी जानेवाली तरकारियाँ

कच्चा और न पका हुआ टमाटर, गांठ गोभी, फूल गोभी, पत्तीवाली तरकारियां जैसे चोलाईका साग, बाकलाकी कच्ची फलियाँ जिसमें अभी अभी दाने विकसित हो रहे हों; सेम तथा फूलगोभीके मिलानेवाले मौसमोंमें जरूर उन्हीं तरकारियोंका अधिक उपयोग अवश्य करें।

कसरत : हल्की कसरत जैसे घूमना।

इन वस्तुओंसे रोगी सावधान रहें : तेल या घीमें तले खाद्य पदार्थ, वसा, आलू, पके टमाटर, भिण्डी, गाजर, चुकन्दर, कद्दू और कच्चा केला तथा तूर दाल।

रोगपर पूरा नियंत्रण रखनेके लिए भोजनके बाद ढाई घंटोंमें और दूसरे दिन सबेरे पेशाबका परीक्षण करवाते रहना चाहिए।

विवरण पत्रिका

इनसुलीन : इंनसुलीन लेनेकी मात्रा बीमारीकी तीव्रतापर निर्भर है, जिसके लिए किसी डाक्टरसे सलाह लेना बहुत जरूरी है। यदि उपर्युक्त रीतिसे आहार सेवन करते हुए परहेजसे रहेंगे तो इनसुलीन लेनेकी मात्रा

कम होती जायेगी। अगर रोग अभी-अभी शुरू हुआ हो तो इस प्रकारके आहार सेवनसे ही रोग दूर हो सकता है, इनसुलीन लेनेकी आवश्यकता नहीं पड़ेगी।

चना : पूरे चनेको ही लीजिए। कूड़ा करकट साफ़ करके पानीसे धोइये। रातभर ठंडे पानीमें भिगोइए। गरम पानीमें भिगोया जाय तो दो ही घंटे काफी है। पश्चात् वैसे ही पकाइए। याद रहे जिस पानीमें भिगोया जाता है उसे न बदलना चाहिये, उसी पानीमें पकाना चाहिये। बादमें पके चनोंको निकालिये। उस पानी या निसारसे सूप या रसम, शोरबा बनाइये और भोजनमें इस्तेमाल कीजिये। घरमें निरोगी, पके चनोंका उपयोग कर सकते हैं।

गांठ गोभी : प्रयोगोंसे मालूम हुआ है कि मधुमेहके रोगियोंके लिए गांठ गोभी बहुत उपयोगी है। अतः उसे रोज लेना उत्तम है। कच्ची ताजी गोभीको ही भोजनमें इस्तेमाल करना चाहिए। तरकारीको काटकर, पकाकर, नमक तथा मसाला मिलाकर उपयोग किया जा सकता है।

कच्ची सेमकी फलियां : सेमकी कच्ची फलियाँ सभी मौसमोंमें प्राप्त नहीं होतीं। अतः वह जिस मौसममें उपलब्ध होती है उस समय इसका उपयोग रोज करना चाहिद।

उड़दकी दाल : उड़दकी दाल और चावलको बराबर मात्रामें लेकर इडली तैयार कीजिये। इडली बनानेके लिए सिर्फ अरवा चावल ही इस्तेमाल करना चाहिये न कि सेला चावल। यह तो ठीक है कि सेला चावलसे इडलियाँ तो अच्छी बनती हैं। फिर भी मधुमेह के रोगीके लिए वह उपयुक्त नहीं। हमारा यह अनुभव है कि सेला चावलके खानेसे वह शरीरमें अधिक ग्लूकोस पैदा करता है।

स्किमड मिल्क या और केसीन : इसे चाय या काफीके साथ मिलाकर सेवन करना चाहिए। नहीं तो स्किमड मिल्क पाउडरसे दूध बनाकर दही जमा सकते हैं और उसका उपयोग कर सकते हैं। इस प्रकार किसी न किसी रूपमें हर रोज मधुमेहके रोगीको ५-६ चाय चम्मच किस्म मिल्क पाउडरका सेवन करना चाहिए।

स्किमड मिल्क पाउडरकी अपेक्षा केसीन (दुग्ध प्रोटीन) का उपयोग अति उत्तम है। वह केसीन बाजारमें कई नामोंपर बिकता है जैसे मेसर्स ग्लास्को लेबोरेटरीका "केसिलान" उत्पाद है जो मुख्यतया कल्शियम केसिनेट ही है। यह दो किस्मका बिकता है। एक सादा और दूसरा बी १२ के साथ। "केसिलान प्लेन" ही मधुमेहके रोगियोंके लिए केसिलान बी १२ की अपेक्षा उत्तम है।

गन्नेकी शक्कर : चावल, चपाती, डबलरोटी आदिके द्वारा कार्बोहाइड्रेट लेनेके कारण चाय या काफीको शक्करके बिना पीनेकी जरूरत नहीं। सेकरीन तो दवा है। अतः उसे लेनेकी आवश्यकता नहीं।

रोज लिए जानेवाले कार्बोहाइड्रेटकी मात्राको कम किये बिना मधुमेहके रोगीके आहारमें कुछ किस्मके प्रोटीन बढ़ाना ही इस तालिकाका मुख्य उद्देश्य है।

वसा : वसाकी मात्रा आहारमें बहुत कम रहना चाहिये। जहाँतक हो सके तले हुए खाद्य पदार्थोंका उपयोग नहीं करना चाहिये।

('खाद्य विज्ञान'से साभार)

(पृष्ठ २० का शेषांश)

जन्म होनेके बाद गर्भाशयके संकुचन और रक्तस्राव बंद करनेके लिए पिटोसिन इस्तेमाल किया जाता है। पिट्रैस्सिन या वासोप्रैस्सिन रुधिर-पात्रोंको उत्प्रेरित करके धीरे-धीरे खूनका दाब बढ़ा देता है। कभी-कभी सदमेके मरीजका इलाज, एपिनेफ्रीनके बजाय इसी हारमोनसे किया जाता है, क्योंकि इसका असर ज्यादा देरतक रहता है। यही सूत्रका निर्माण नियन्त्रित करता है। यह भी ख्याल है कि गुर्दोंमें पानी जज्ब होनेमें भी यह हारमोन योग देता है।

● ● ●

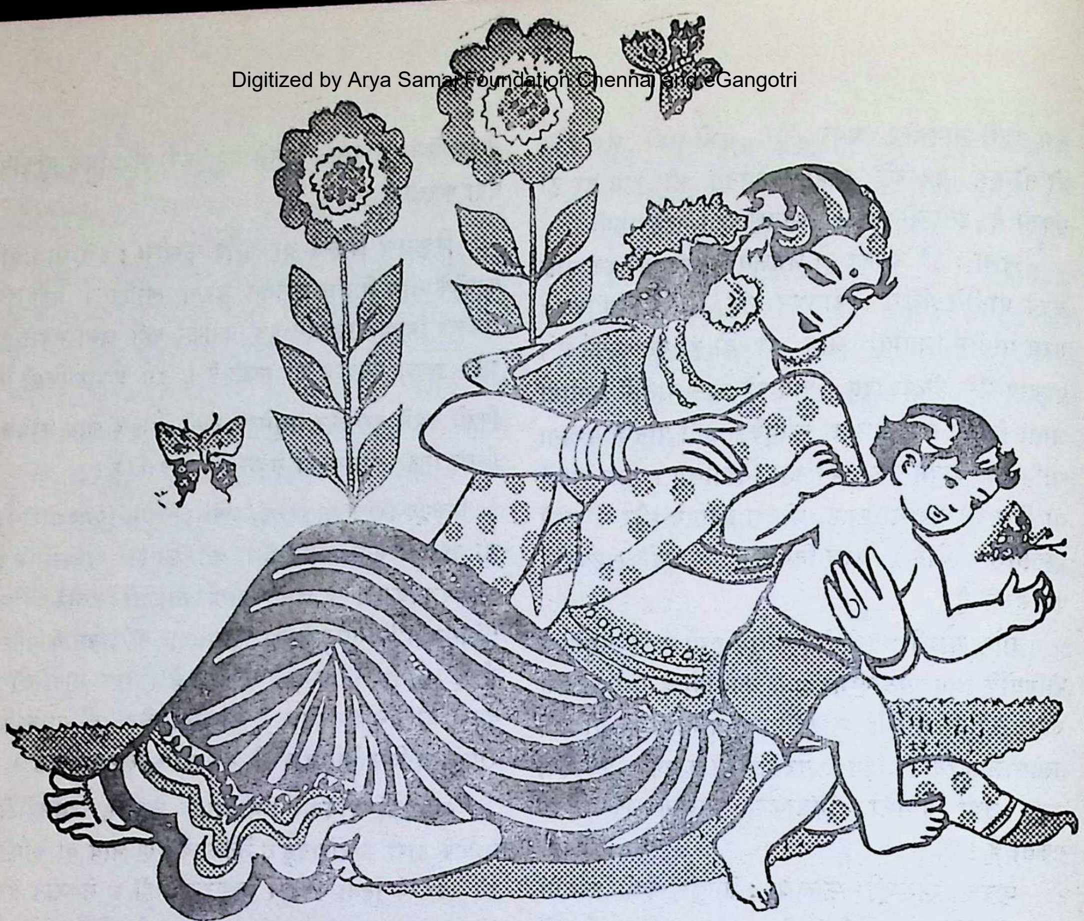

आपका अनमोल बच्चा

आपका प्यारा बच्चा। आप उसकी इच्छा पूरी करने के लिये आसमान के तारे भी तोड़कर लाने को तैयार हैं। लेकिन अगर आपके बच्चे बहुत ज़्यादा हों तो आप उनकी इच्छाओं और ज़रूरतों को पूरा नहीं कर सकते।

दूसरा बच्चा तीन साल बाद। अपने पास के परिवार कल्याण नियोजन केंद्र से सलाह लीजिये।

क्षय निवारक पूरक पृष्ठ

स्कूलोंसे यक्ष्माका प्रसार

—डाक्टर ए० आर० मेहता—

(गतांकसे आगे)

पाठशालाओंमें रोगोन्मुख बनानेवाले कारण

यक्ष्माके रोगोन्मुख बनानेवाले कारणोंका वर्णन किया जा चुका है। अब हमको देखना है कि शिक्षण संस्थाएं इस रोगको बच्चोंमें फैलानेमें किस सीमातक उत्तरदायी हैं।

विद्याके प्रेमियोंके जोश और खरोशका यह परिणाम हुआ कि बहुत सारी पाठशालाएं खोल दी गयी हैं। उनमेंसे बहुतोंका पास-पड़ोस घरोंके मुकाबलेमें अच्छा होता है, परन्तु ऐसी भी पाठशाला होती हैं विशेष करके लड़कियोंकी पाठशाला जो कि बहुत ही गन्दे स्थानोंमें निर्माण की गयी हैं। यह पाठशाला ऐसी घनी बस्ती और स्वास्थ्यके विपरीत होती हैं कि वहाँ रोग शीघ्र ही अपना अधिकार जमा लेते हैं।

यदि उस समय जबकि हम यक्ष्माकी छूतके कारण और इसकी वास्तविकता नहीं जानते थे। ऐसा होता तो हम कह सकते थे कि कुछ नहीं किया जा सकता। परन्तु अब जब कि हम शुद्ध और पवित्र वायु और व्यायाम आदिके लाभ जानते हैं; जिससे कि रोगको रोका जा सकता है, ऐसी पाठशालाओंको बन्द न करवाना बड़ा भारी पाप है। शिक्षा प्राप्त करना आवश्यक है परन्तु स्वास्थ्यकी ओर ध्यान देना इससे कहीं अधिक आवश्यक है, इसलिए शिक्षकों तथा माता-पिताको स्वास्थ्यपर अधिक ध्यान रखना चाहिये।

निम्नलिखित कुछ ऐसी बातें हैं जो यक्ष्माके रोगके प्रसारमें सहायता देती हैं—

१-रहनेके स्थानकी तब्दीली—भारतवर्षमें जन-संख्याका अधिकतर भाग देहातोंमें रहता है। गत कुल वर्षोंमें कस्बोंकी जन-संख्यामें अधिकवा होना लोगोंका कस्बोंमें आकर रहनेका ही परिणाम है। इसलिये हम देखते हैं कि दिनमें पढ़नेवाले बच्चे कस्बोंमें रहते हैं और जो बच्चे बोर्डिंग हाउसमें रहते हैं, वह देहातोंसे आये हुए होते हैं।

एक हिन्दुस्तानी बालक जो कि घरमें स्वतन्त्रता-पूर्वक रहता आया हो, पाठशालाका शिक्षण उसकी स्वतन्त्रतामें रुकावट पैदा करता है। हिन्दुस्तानी माता अति दयालु होती है और जबतक बच्चा घरमें रहता है, स्वतन्त्रता पूर्वक रहता है। उसके खाने और जागनेका समय नियत नहीं होता। परन्तु स्कूलों और बोर्डिंग हाउसमें इन नियमोंकी पूरी पालना करनी पड़ती है जैसा कि प्रायः अंग्रेजोंके घरों और स्कूलोंमें होता है। पशु आदि जो कि चिड़ियाघरोंमें रखे जाते हैं, यदि उनकी उचित देख-रेख न की जाय तो वह कारागार ही में यक्ष्मा हो जानेके कारण मर जाते हैं। स्वतन्त्रताका छीन लिया जाना यक्ष्माका एक कारण है।

प्रायः देखा जाता है कि अकाल पड़ जानेके एक दम बाद कई अनाथालय खोले जाते हैं। यदि बुद्धिमानीसे काम न किया जाय तो इनमें रहनेवाले बच्चे यक्ष्माके शिकार हो जाते हैं।

संक्षेप रूपसे कह सकते हैं कि बच्चेंके रहनेके स्थानमें सहसा तब्दीली हो जाना अति भयानक है और यह बात विशेष ध्यान देने योग्य है। तब्दीली शनैः शनैः होनी चाहिये और नवागतोंको शुद्ध वायु, स्वतन्त्रता, व्यायाम तथा भोजन पर्याप्त मिलना चाहिये।

२-पाठशाला और घनी बस्ती—इनका संक्षेप-रूपसे वर्णन किया जा चुका है, परन्तु यह अत्यावश्यक है और इनका अलगसे जिक्र करना जरूरी है। प्रायः देखा जाता है कि न केवल प्राईमरी और लोअर मिडिल स्कूल बल्कि हाई स्कूल भी शहरोंके ठीक मध्यमें निर्माण किये जाते हैं। इस प्रकार स्थानके बहुत थोड़ा होनेके कारण खेलनेके मैदान नहीं मिल सकते। स्कूलोंको इस भाँति निर्माण करनेका शायद यह उद्देश्य होगा कि

शिक्षाको फैलानेके लिए घरोंके समीप ही सुगमताएँ प्राप्त की जाय या बच्चोंको उष्ण ऋतुमें धूपसे बचनेके लिए स्कूल तक न जाना पड़े। परन्तु जो कुछ भी हो स्कूल बस्तीसे काफी फासलेपर होना चाहिये और खेलके मैदानके लिए अधिक जगह मिलनी चाहिये। धूपसे इस प्रकार बचाव हो सकता है कि स्कूलका समय बदल दिया जाय या छत्रीका प्रयोग किया जाय।

लड़कोंके स्कूल लड़कियोंके स्कूलोंके मुकाबलेसे अच्छे होते हैं। एक निरीक्षकने लड़कियोंके एक बोर्डिंग स्कूलको देखा जिसमें कि १३० लड़कियाँ रहती हैं। इसमें केवल दो कमरे १८×१६×१२ फुटके हैं जो कि दिनके समय तो पढ़नेके काममें लाये जाते हैं और रात्रिको हर एकमें ३० लड़कियाँ सोती हैं और खिड़कियों तथा परदोंको बन्दकर दिया जाता है। इस प्रकार प्रत्येक लड़कीके हिस्सेमें १५ क्यूबिक फुट या ९·६ मुरब्बा फुट रकबा आता है। ऐसी जगहोंमें रहनेवाले बहुत शीघ्र यक्ष्माके रोगी बन जाते हैं।

खिड़कियाँ और दरवाजे ऐसे होने चाहिये कि शुद्ध और पवित्र वायु अन्दर आती रहे, ऐसी अवस्थामें हर एक बच्चेके लिए ४५० क्यूबिक फुट और फर्शपरकी जगह ४० या ४५ मुरब्बा फुटसे कम नहीं होनी चाहिये।

स्कूलकी इमारतें सस्ती बनवानी चाहिये और उनकी जगहों और नक्शाके सम्बन्धमें स्थानीय महकमा सेहतके अधिकारियोंसे सम्मति लेनी चाहिये। संक्षेपसे स्कूलकी इमारतें ऐसी हो जिसमें कि वायु अच्छी तरह आती हो। प्रत्येक जमातके बाद खिड़कियाँ और दरवाजे खोल देने चाहिये जिससे शुद्ध वायु प्रवेश करे।

३–नियमित तथा पौष्टिक भोजन—यह बता दिया जा चुका है कि अनियमित तथा निर्बल भोजनका प्रयोग यक्ष्माका एक निमित्त कारण है। नियमित और पौष्टिक भोजन बड़ी आयुवाले आदमीकी निसबत बढ़ने वाले बच्चेके लिए अधिक आवश्यक है। जहाँ कहीं यक्ष्माका रोग हुआ, यह देखा गया कि अनियमित तथा निर्बल भोजनका प्रयोग किया गया था जिसको ठीक करवाना चाहिये। लोग निम्नलिखित बातोंमें भूल कर बैठते हैं—

(१) भारतवर्षमें लड़कोंके बोर्डिंग स्कूल ऐसे अध्यापकोंकी देख-रेखमें होते हैं जिनको न तो खाने पकानेका कुछ ज्ञान होता है और न ही यह पता होता है कि भोजन कैसा होना चाहिये, बल्कि यह कहना उचित होगा कि उनकी देख-रेख भी किसी कामकी नहीं होती। परिणाम यह होता है कि जो कुछ खाना बच्चोंको मिलता है वह किसी कामका नहीं होता। इसलिए ऐसे शिक्षकोंको ही भोजनका प्रबन्ध देना चाहिए जिनको कि उचित भोजन तथा खाना पकाने की शिक्षा मिल चुकी हो।

(२) आधुनिक सभ्यताके कारण लोगोंने दूधके बदले चाय पीनी शुरू कर दी है। विशेष करके हाई स्कूलकी लड़कियाँ ऐसा करती हैं ताकि वह पतली बनी रहें। इसका यह परिणाम होता है कि वह यक्ष्माका शिकार बन जाती है। इस बातको समझ लेना चाहिये कि स्कूल जानेवाला बच्चा न केवल दिमाग़के क़ाममें लगा रहे बल्कि आदतोंमें भी चुस्त और चालाक होना चाहिये, जिसके लिए उसको स्वास्थ्य-वर्धक भोजनकी आवश्यकता है।

(३) **भिन्न-भिन्न प्रकारका भोजन**—प्रायः यह कहा जाता है कि एक ही प्रकारका भोजन प्राप्त होता है। बच्चोंको भिन्न-भिन्न प्रकारके भोजनकी आवश्यकता होती है विशेष करके मैदानोंमें जहाँ कि गरमीके कारण बच्चे पानी आदिसे पेट भर लेते हैं। भोजनमें तब्दीली होनेसे भूख बढ़ती है और खानेमें स्वाद आता है। इसमें अधिक खर्च तो नहीं होता, परन्तु ध्यान देनेकी निस्सन्देह आवश्यकता है। निर्बल भोजनके विषयमें लोग यह कहते हैं कि धनकी कमी है। यह बात विशेषतः धार्मिक संस्थाओंके सम्बन्धमें कही जा सकती है जो कि बड़ी-बड़ी इमारतें बनवाती हैं और विद्यार्थियोंको अधिकसे अधिक संख्यामें उनके स्वास्थ्यपर ध्यान न देते हुए परीक्षाओंके लिए भेजती हैं और इनमें सफल होनेकी अधिकसे अधिक संख्यापर गुमान करती हैं।

ऐसी संस्थाओंको चाहिये कि वह विद्यार्थियोंकी संख्यामें कमी करें और इमारतोंपर जो धन व्यय किया जाता है उसको कम करके इस प्रकार बचे हुए रुपयेसे बच्चोंके लिए उचित भोजनका प्रबन्ध करें।

(४) **पाठ्य**—कुछ दिन हुए जनरल मेगाने एक लेक्चरमें कहा था कि शिक्षाका उद्देश्य जीवनमें सफलता प्राप्त करना है। लेडी भोरने यह बात कही थी कि बच्चोंको गूढ़ बातें बताकर, जिनकी कि आवश्यकता ही नहीं होती, उनके दिमाग़पर अधिक दबाव नहीं डालना चाहिये। मैं इन दोनोंसे सहमत हूँ। परन्तु मैं उन माता-पितासे सहमत नहीं हूँ जो पाठ्यकी अधिकताकी शिकायत करते हैं। एक स्वस्थ बच्चेके लिए पढ़नेमें समय व्यतीत करना कोई जियादती नहीं शिक्षाका दर्जा घटानेसे कठिनाइयोंका सामना करना पड़ेगा।

भूल है तो केवल इस बातकी कि पाठशालामें शिक्षा देनेकी विधि ठीक नहीं। कोमल बच्चोंको उनकी शक्तिसे बाहिर परिश्रम करनेपर मजबूर किया जाता है। लड़कियोंके लिए वही पाठ्य नहीं होने चाहिये जो लड़कोंके लिए रखे जाते हैं। इसके अलावा लड़कियाँ लड़कोंके मुकाबलेमें शीघ्र बढ़ जाती हैं। आठ और अठारह वर्षकी आयुके भीतर उनकी बहुत अधिक शारीरिक वृद्धि हो जाती है, जिससे शरीरपर बड़ा प्रभाव पड़ जाता है। हिन्दुस्तानी लड़कियाँ वास्तवमें बड़ी नाजुक होतीं हैं और उनकी परवरिश भली भाँति नहीं की जाती।

(५) **अनुचित आसन**—बचपन में हड्डियाँ बहुत नरम होती हैं। हड्डियाँ फेफड़ोंको चारों ओरसे घेरे हुए हैं। बुरे आसनका यह परिणाम होता है कि हड्डियाँ सिकुड़ जाती हैं और छाती बदशकल हो जाती है और अच्छी प्रकार नहीं फैल सकती। आक्सीजन की काफ़ी मिक़दार अन्दर प्रवेश नहीं होने पाती और खून साफ़ नहीं हो सकता। परिणाम यह होता है कि फेफड़े निर्बल हो जाते हैं, शरीरकी शक्ति घट जाती है और बच्चोंको प्रायः यक्ष्मा हो जाता है।

यक्ष्माकी परीक्षा

यक्ष्मा फेफड़ों तथा शरीरके किसी भागपर आक्रमण कर सकता है जैसे जिल्द, हड्डियाँ जोड़, गिल्टियाँ इत्यादि। यह रोग चाहे किसी अंगपर आक्रमण करे, इसके हो जानेके चिन्ह प्रगट हो जाते हैं, जैसे, उष्णता, भारमें कमी, रात्रिका पसीना, भूख और शक्तिका न रहना इत्यादि। यदि फेफड़ोंपर प्रभाव पड़ गया हो तो उसके चिन्ह जैसे खांसी होना और थूकके साथ खूनका आना आदि प्रकट हो जाते हैं। हड्डियों जोड़ों और गिल्टियोंपर प्रभाव होनेसे उन भागोंमें सूजन हो जाती है। रोग बहुत शनैः शनैः प्रभाव डालता है, यहां तक कि कुछ पता ही नहीं लगता और जबतक रोग बढ़ जाता है।

यह अत्यावश्यक है कि शीघ्र ही रोगकी परीक्षाकी जाय, आरम्भ ही में उपचार करवानेसे रोगका निरोध किया जा सकता है और प्रायः आराम हो जाता है।

यक्ष्माके मुख्य चिन्ह यह हैं

(१)–**भारमें न्यूनता**—प्राथमिक दर्जोंमें वजन प्रायः धीरे-धीरे घटता जाता हैं, परन्तु कई हालतोंमें रोगके बढ़ जाने तक वजन कम नहीं होता। उपचार कराते हुए वजनका बढ़ जाना विशेषतः जब टेम्परेचर कम हो या घटती जाती हो, रोगीके स्वस्थ हो जानेका एक चिन्ह है। रोगीका वजन करना चाहिये और इसकी स्मृति रखनी चाहिये।

(२)–**खाँसी**—खाँसी इस रोगकी एक ऐसी निशानी है जो सदा ही होती है, परन्तु विशेषतः सुबह जागते समय और भोजन करनेके पश्चात् ही जाया करती है। प्राथमिक अवस्थामें प्रायः सूखी, कष्टप्रद होती है। बलगम निकलता भी है तो बहुत कम, परन्तु लगातार होती है और साधारण कफ मिक्सचर कुछ लाभ नहीं कर सकता। रोगग्रस्त हो जानेपर खाँसी कम कष्टप्रद परन्तु अधिक जोरकी हो जाती

है और बलगम अधिक मिकदारमें निकलने लगता है।

(३)-ज्वर या उष्णता—रोगके प्राथमिक दर्जोंमें उष्णता प्रायः हो जाया करती है। इसलिये यह अत्यावश्यक है कि कई हफ्तों तक प्रति चार घण्टोंके पश्चात् उष्णता ली जाये और इस अरसेके भीतर कभी न कभी उष्णतामें ज्यादती हो जायगी। सुबह और शामकी टेम्परेचरमें बहुत अन्तर होता है। उग्र दशाओंमें एकसे लेकर पाँच या छः दर्जेका फरक पड़ता है। परन्तु ऐसा यक्ष्मा जो पुरातन हो गया हो या हलकी किस्मका हो, उसमें बहुत समय तक एक या दो दर्जेंका फरक पड़ता है। अधिक उलझनोंमें पड़कर या तो टेम्परेचर बढ़ जायेगी या वर्तमान टेम्परेचरमें फरक पड़ जायगा।

कुछ रोगियोंमें सुबह ही के समय टेम्परेचर बहुत अधिक हो जाती है। इस प्रकारकी टेम्परेचर यह प्रकट करती है कि रोगीकी अवस्था बहुत खराब होती जा रही है। उपचार करवाते हुए जबकि रोगी व्यायाम या काम काज करता हो टेम्परेचरका हो जाना एक संकेत है। यदि टेम्परेचर लगातार हो और बहुत अधिक हो जाय तो व्यायाम और काम काजको कम कर देना चाहिये।

(४)-थूकके साथ खूनका निकलना—यदि इसका कोई और कारण न हो तो ऐसा हो जाना एक असाधारण बात समझनी चाहिये। खून पेट, गले या मसूढ़ोंसे निकलता है। यदि मसूढ़ोंसे निकले तो परीक्षासे इसका कारण ज्ञात हो सकता है। यदि पेटसे निकले तो यह खाई हुई चीजोंके साथ बाहर उगला जाता है। यह लिथड़ोंमें बाहर निकलता है और इससे खट्टी बू आती है। खून जो कि छातीसे निकलता है वह खाँसी होनेपर आता है और प्रायः बलगमके साथ मिला हुआ होता है। यह खून झागदार और अधिक लाल होता है ऐसे रोगीको सांस लेते समय छातीमें कष्ट होता है।

(५)-रात्रिका पसीना—रोगीको रात्रिके समय पसीना आता है जो कि बहुत अधिक मिक़दारमें निकलता है और उसको रात्रिमें दो तीन बार कपड़े बदलने पड़ते हैं। इस प्रकार पसीनेका आना और चिन्होंके साथ उग्र यक्ष्मा हो जानेकी एक निशानी है।

(६)-शक्ति ह्रास—ऐसा प्रायः सदा ही होता है और इसका कारण यह बतलाया जाता है कि यह अधिक परिश्रमका परिणाम है। रोगी सहसा सुस्त और निर्बल होनेकी शिकायत करता है। जब एक ऐसे लड़केको जिसकी दिमाग़ी अवस्था ठीक हो, थक जाना, विचारकी परेशानी, भूखका न रहना तथा रात्रिको पसीनेके आनेकी शिकायतें हों तो समझ लेना चाहिए कि यह तीव्र यक्ष्माके चिन्ह हैं और शीघ्र ही डाक्टरी परीक्षा करवानी चाहिए। विशेषकरके ऐसी अवस्थामें जबकि यह चिह्न किसी और रोगसे सम्बन्ध न रखते हों, निर्बलता और थकावटका हो जाना यक्ष्मा हो जाना समझना चाहिए।

(७)-पाण्डुता—जिस रोगीमें यक्ष्माका रोग वृद्धि करता जा रहा हो, उसका मुख विशेष आकारका बन जाता है। यह पतला पड़ जाता है और इसपर सूखे हुए पत्तेके रंगकी जरदी छा जाती है। रक्तके घट जानेसे कपोलोंपर जरद लाली छा जाती है जिसे 'मालार पलश' कहते हैं।

स्वर भंग—रोगके प्राथमिक दर्जोंमें आवाजमें भारीपन आ जाता है जो कभी हट जाता और फिर शुरू हो जाता है। (शेष अगले अंकमें)

●

'अब मैं आप लोगोंको समूचा अजायबघर दिखला चुका। किसी महिलाको कुछ पूछना है ?' गाइडने कहा।

'हां' एक आवाज आयी, 'तुम लोग यह फर्श इतना चमकदार कैसे रखते हो ?'

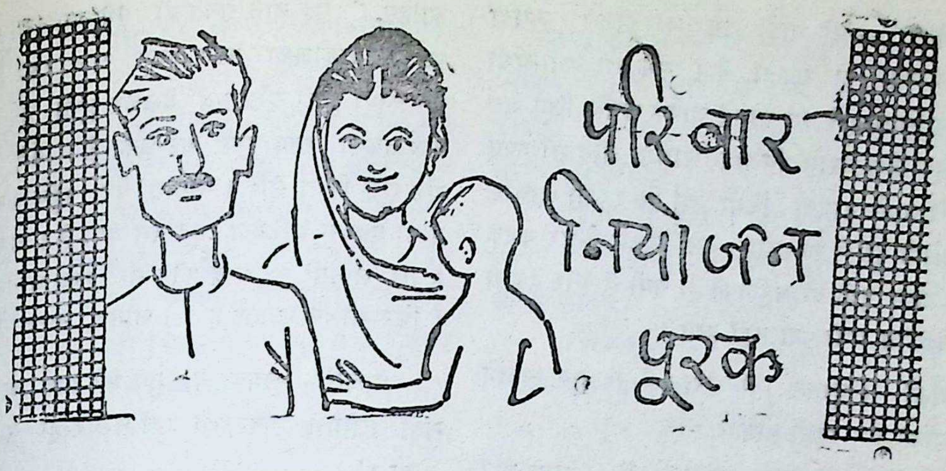

भुलक्कड़ मास्टर जी

श्री चिरंजीत

पात्र-परिचय

नंदकिशोर : स्कूलके मास्टर जी, उम्र कोई ३२ वर्ष ।
पार्वती : उनकी पत्नी, उम्र कोई ३० वर्ष ।
सरिता : उनकी बड़ी लड़की, उम्र कोई १० वर्ष ।
मुन्ना : उनका लड़का, उम्र कोई ६ वर्ष ।
मुनिया : उनकी नवजात छोटी लड़की, जो नेपथ्यसे रोकर ही अपनी भूमिका अदा करती है ।

(शहरमें एक साधारणसे मकानकी बैठक, जो मास्टर नंदकिशोरके लिखने-पढ़नेका कमरा भी है। बीचो-बीच एक पुराना-सा सोफा, एक तिपाई और दो कुर्सियाँ रखी हैं। सामनेकी दीवार किताबोंकी आलमारी और नये सालके कैलेंडरोंसे ढकी हुई है। एक कोनेमें किताबोंसे भरा हुआ रैक है, जिसपर अलार्म वाली घड़ी रखी हुई है। दायें-बायें दो दरवाजे हैं, एक अन्दरके कमरोंमें जानेके लिए।

जब पर्दा उठता है, तो घड़ी सबेरेके साढ़े दस बजा रही है। मास्टर नन्दकिशोर कुर्ता-पजामा पहने, ऐनक लगाये और हाथमें पेन उठाये सोचनेकी मुद्रामें सोफेपर बैठे हैं। उनके सामने तिपाई पर बड़ी-सी कापी रखी है और आस-पास बहुत-सी किताबें खुली-अधखुली पड़ी हैं। नेपथ्यसे एक बहुत छोटी बच्चीके रोनेकी आवाज सुनाई देती है। थोड़ी देर बाद बच्ची चुप हो जाती है।)

नंदकिशोर—(सोचते हुए) (अपने आप) लानत, लानत, लानत……… ।

(तभी अन्दरसे पार्वती आती है और घड़ीकी तरफ देखती है।)

पार्वती—मैंने कहा, साढ़े दस बज गये…। (कहते कहते रुक जाती है और नंदकिशोरके हाव-भावको गौरसे देखती है। एकाएक उनकी भौंहें तन जाती हैं।) यह किसको लानत भेजी जा रही है ?

नंदकिशोर—(जैसे पार्वतीकी बात सुनी ही न हो) लानत ? हाँ; लानतके बाद, लानतके बाद… ।

पार्वती—(झुँझलाकर) मेरा सिर।

नंदकिशोर—सिर ? नहीं, नहीं, 'ल' के खंडमें 'स' के खंड का शब्द कैसे आ सकता है ? पार्वती, तुम भी बस…… ।

पार्वती—मैं जो हूँ सो हूँ; लेकिन मैं पूछती हूँ, यह शब्दकोशका काम आज अचानक फिर कैसे शुरू कर दिया ? कुछ याद है, आज श्रीमान्ने स्कूलसे छुट्टी किस जरूरी कामके लिए ली है ?

नंदकिशोर—अरे भाई, इस शब्दकोशसे ज्यादा जरूरी काम क्या हो सकता है। मुझे तो अभी-अभी याद आया कि तुम्हारे इस तीसरे जापेके खर्चके लिए जब मैंने प्रकाशक खैरातीराम विलायतीरामसे तीन सौ रुपए लिए थे तो उससे वायदा किया था कि स्कूली छात्रोंके लिए उपयोगी गुटका शब्दकोश दस दिनमें तैयार करके दे दूंगा। आज मुन्नी दो महीनेकी हो गयी है और देखता हूँ कि शब्दकोश अभी पूरा नहीं हुआ।

पार्वती—(घूरकर) मैं हैरान हूँ कि तुम स्कूलमें विद्यार्थियोंको कैसे पढ़ाते होगे?

नंदकिशोर—(सटपटाकर) मैं कैसे पढ़ाता हूँ? बहुत अच्छा पढ़ाता हूँ। हर साल मेरी क्लासका बढ़िया नतीजा निकलता है। पार्वती, मैं हैरान हूँ कि तुम्हें मेरी योग्यतापर शक कैसे हुआ?

पार्वती—मास्टरजीकी स्मरण-शक्तिकी हालत देखकर।

नन्दकिशोर—मेरी स्मरण-शक्तिको क्या हुआ?

पार्वती—तुम कहते हो कि मुनिया दो महीनेकी हो गयी जबकि उसकी असल उम्र तीन महीने दस दिन की है।

नन्दकिशोर—ठीक है, ठीक है। बच्चोंकी उम्रका ठीक हिसाब बापको नहीं, माँ को ही मलूम होता है। हाँ, तो मैं शब्दकोशकी बात कर रहा था...।

पार्वती—मैं भी उसीकी बात कर रही हूँ। तुमने प्रकाशक खैरातीराम विलायतीरामसे तीन सौ रुपए लिए थे मुनियाके जन्मसे ठीक बीस दिन पहले। मतलब यह कि आज उस बातको पूरे चार महीने हो गये हैं। प्रकाशक तगादे करके हार गया, लेकिन तुमने उसे शब्दकोश तैयार करके नहीं दिया। मैं हैरान हूँ कि जिस कामको शुरू करके तुम तीन महीने पहले भूल गये थे, उनकी आज एकाएक कैसे याद आ गयी?

नन्दकिशोर—(परेशान सा) क्या बताऊं! कुछ देर पहले सरिता जब मुन्नेके साथ स्कूल जा रही थी तो बोली, 'पिता जी, आज हमारी टीचर कहती है कि हर स्टूडैन्टके पास एक छोटी-सी डिक्शनरी होनी चाहिए।' यह बात सुनते ही मुझे याद आया कि मैंने गुटका शब्दकोशका काम कबसे टाल रखा है। फौरन मैंने कापी ढूंढी और यह देखकर खुशी हुई कि मैं 'र' खंड तकका काम पूरा कर चुका हूँ। मैंने फ़ौरन 'ल' खंड शुरू किया लेकिन 'लानत' पर पहुँच कर दिमागका घोड़ा एकदम अड़ियल टट्टू बन गया है। सूझ नहीं रहा है कि 'लानत' के बाद कौन सा शब्द आना चाहिए। (फिर सोचने लगता है।) लानत, लानत, लानत...।

पार्वती—लगता है, तुम मेरे साथ आज भी वहाँ नहीं चलोगे। डॉक्टरको यहाँ घरपर ही बुलाकर लाना होगा।

नन्दकिशोर—(खुशीसे उछल कर) लाना? जिओ पार्वती। एकदम सही शब्द सुझाया। 'लानत' के बाद 'लाना' शब्द ही तो आएगा। (जल्दीसे कापीमें लिखता है।) और अब 'लाना' के बाद कौन सा शब्द आएगा?

पार्वती—(बिगड़ कर) शब्द, शब्द, शब्द! स्कूलमें शब्द और घरमें भी शब्द। ठोस कामकी बात तो कभी तुमने की ही नहीं।

नन्दकिशोर—(मुस्करा कर) मैंने कामकी बात कभी नहीं की? अरे, यह कैसे गलत आरोप लगा रही हो, मेरे बच्चोंकी माँ! तुम शायद जानती नहीं कि 'काम' शब्दके दो अर्थ हैं। संस्कृतमें 'काम' शब्दका जो मूल अर्थ है, उसे मैंने अपने जीवनमें कैसे सही रूपमें ग्रहण किया है, उसका प्रमाण है पिछले दस वर्षोंमें हमारे घर आए ये तीन बच्चे—सरिता, मुन्ना और मुनिया।

पार्वती—और अब तीनके बाद चाहते हो कि घर में पूरी लाम खड़ी हो जाए।

नन्दकिशोर—(खुशीसे उछल कर) लाम 'लाना' शब्के बाद 'लाम'? हाँ चलेगा। (कापीमें लिखता है और फिर सोचता है।) लेकिन...लेकिन इन दोनों शब्दोंके बीचमें एक-दो और शब्द...?

पार्वती—(निराश हो कर) हे भगवान, ऐसा लापरवाह मर्द…… ।

नन्दकिशोर—(खुशीसे उछल कर) लापरवाह ? मिल गया । 'लाना' और 'लाम' के बीच सही शब्द 'लापरवाह' ? (जल्दीसे कापीमें लिखता है ।) वाह, पार्वती, मुझे तो आज मालूम हुआ कि तुम्हारी जुबान पर सरस्वतीका वास है । तुम्हारे मुँहसे धारा-प्रवाह 'ल' खंडके सही शब्दोंकी लड़ी निकलती आ रही है । (कापी देख कर) 'लापरवाह' और 'लाम' के बीच एक और शब्द……ऐ, अब चुप क्यों हो गई ? बोलती जाओ, बोलती जाओ ।

पार्वती—(कठोर स्वरमें) मैं तुम्हारी तरह पागल नहीं, जो बेकार बोलती जाऊँ । जिस मर्दको अपनी पत्नीकी सेहत घरकी माली हालत और तीन बच्चोंके भविष्यका ख्याल नहीं, उसके साथ माथापच्ची करनेसे क्या लाभ ?

नन्दकिशोर—(खुशीसे उछल कर) लाभ ! बिल्कुल ठीक । 'लापरवाह' और 'लाम' शब्दोंके बीच 'लाभ' ही तो आएगा । (जल्दीसे कापीमें लिखता है ।) जिओ, पार्वती । कैसा सही शब्द-ज्ञान पाया है तुमने !

पार्वती—(गुस्सेसे) भाड़में गया शब्द-ज्ञान । अगर किसी लायक होती, तो मैं इस घरमें बेजान मशीनकी तरह इस्तेमाल न होती ।

नन्दकिशोर—लायक ? (खुश होकर) वाहवा 'लाभ' के बाद 'लायक' । एकदम सही शब्द । (जल्दीसे कापीमें लिखता है । षार्वती अगर तुम इसी तरह बोलती जाओ, तो यह गुटका शब्दकोश अभी-अभी दो घंटेमें पूरा हो जाएगा ।

पार्वती—(घृणासे) और तब तक आज वहां जानेका वक्त खत्म हो जाएगा । मैं अब तक समझती थी कि तुम भुलक्कड़ हो, लेकिन आज पता चला कि तुम बेहद चालाक और स्वार्थी हो । अच्छा तो कान खोलकर सुन लो । अगर अब तुम लार टपकाते हुए मेरे पास आए तो मैं लात मारकर…… ।

नन्दकिशोर—लार ? (खुश होकर) अरे वाह ! 'लायक' के बाद 'लार' शब्द ही तो आएगा । (जल्दीसे कापीमें लिखता है । तभी अन्दरसे मुनियाके रोनेकी आवाज आती है ।)

पार्वती—(झुँझला कर) ओह, फिर जाग गयी मुई । बड़ी मुश्किलसे सुलाया था…… । (कहती हुई अन्दर जाती है ।)

नन्दकिशोर—(स्वगत) कमाल हो गया । घण्टे भर माथापच्ची करके भी 'लानत' के बादके जो शब्द मुझे सूझ नहीं रहे थे, पार्वतीने मिनटोंमें ठीक-ठीक सुझा दिये । आज रहस्य खुला कि क्यों विवाहित मर्द ही अच्छी डिक्शनरियाँ बनाते हैं । पत्नी कुछ तेज मिजाज और झगड़ालू हुई तो तनिक छेड़नेसे उसके मुखारविन्दसे शब्दोंकी लड़ी अपने आप धारा-प्रवाह निकलती चली आती है । अगर यह रहस्य मुझे पहले मालूम होता, तो इस गुटका शब्दकोशको तैयार करनेमें चार महीने न लगते । खैर अब भी कोई ज्यादा देर नहीं हुई । अपनी पार्वती काफी तेज मिजाज और झगड़ालू है और फिर आज स्कूलसे छुट्टी तो ले ही रखी है । सरिता और मुन्ना स्कूल गए हुये हैं । बस, अभी पार्वती को बुलाकर छेड़ता हूँ…। (सोचते हुए) लेकिन आज यह छुट्टी काहे के लिए ली थी ? हाँ याद आया । यह पार्वती मुझे परिवारनियोजन केन्द्रमें ले जाकर मेरा आपरेशन कराना चाहती थी, ताकि तीन बच्चोंके बाद, बस…। लेकिन-लेकिन मैं समझता हूँ, उस आपरेशनसे अधिक महत्त्वपूर्ण है यह गुटका शब्दकोश, क्योंकि प्रकाशक खैरातीराम विलायतीरामका तीन सौ रुपयेका कर्ज इसे तैयार करके ही उतारा जा सकता है । हाँ तो 'ल' का खंड कहाँ तक पहुंचा ? (कापी देखकर) 'लार' तक । अब लारके बाद कौन सा शब्द आएगा ? 'लाल' । हाँ, ठीक है । लाल रंग । यह तो आसानीसे सूझ गया, लेकिन 'लाल' के साथ जुड़कर और भी तो कई शब्द बनते हैं । ओह, यहां आकर फिर गाड़ी रुक गयी ।

(तभी बाहरसे सरिता और मुन्ना आते हैं, दोनोंके कन्धोंसे किताबोंके बस्ते लटक रहे हैं ।)

सरिता—(आकर) पिता जी !

मुन्ना—(नंदकिशोरकी गोदीमें बैठकर) पिता जी ।

नंदकिशोर—(परेशान होकर) अरे, तुम दोनों आज इतनी जल्दी स्कूलसे कैसे लौट आए ? अभी तो ग्यारह भी नहीं बजे हैं । क्या छुट्टी हो गयी ?

सरिता : नहीं पिता जी । हम अभी फिर वापस स्कूल जाएंगे ।

मुन्ना : (तुतलाकर) दीदी आप तो तिताब दिथाने आ लही थी, मैं भी थात तला आया ।

नंदकिशोर : कैसी किताब ?

सरिता : (अपने बस्तेसे गुटके जैसी छोटी-सी पुस्तक निकालकर) पिताजी, मैंने आपसे आज सबेरे कहा था न कि हमारी टीचर डिक्शनरी खरीदनेको कहती है । आज जब मैं स्कूल पहुंची, तो टीचरने सारी क्लासके लिए बाजारसे ऐसे पचास गुठका शब्दकोश मँगवा रखे थे ।

नंदकिशोर : (चौंककर) गुटका शब्दकोश ? देखूँ ? (जल्दीसे पुस्तक लेकर उसके पन्ने पलटता है और टाइटल पढ़ता है ।) गुटका शब्दकोश—प्रकाशक—खैरातीराम विलायतीराम । (हैरान सा) ऐं, गुटका शब्दकोश तो मैं अभी तैयारकर रहा हूँ, खैरातीराम विलायतीरामने इसे पहले कैसे छाप लिया ।

(पार्वती अन्दरसे आती है । आते-आते वह नंदकिशोरकी बात सुन चुकी है । मुन्ना भागकर उससे लिपट जाता है ।)

सरिता : पिताजी ! टीचर कहती थी कि यह बड़ी ही अच्छा शब्दकोश है । मैं इसे खरीद लूँ न ? सिर्फ चार रुपएका है ।

नंदकिशोर : (बिगड़कर) कैसे खरीद सकती हो ? असली शब्दकोश तो मैं तैयार कर रहा हूँ । मैं अभी जाकर खैरातीराम विलायतीरामसे पूछता हूँ कि उसने यह जाली शब्दकोश……?

पार्वती : अरे, अब क्या पूछोगे ? उससे तीन सौ रुपए पेशगी लेते समय तुमने वायदा किया था कि तुम गुटका शब्दकोश दस दिनमें तैयार करके उसे दे दोगे । दस दिनकी बजाय आज चार महीने हो गये और तुमने अपना वायदा पूरा नहीं किया । जन्म-जन्मके भुलक्कड़ जो ठहरे । वह किताबोंका व्यापारी कबतक तुम्हारी इन्तजार करता । उसने किसी दूसरेसे शब्दकोश तैयार कराया और छाप दिया । तुम जैसे आलसी और भुलक्कड़ आदमीको ऐसी सजा मिलनी ही चाहिए ।

नंदकिशोर—(घबरा कर) सजा ?

पार्वती—तुम्हारा शब्दकोश छप जाता तो घरमें कुछ और पैसे आ जाते । अब उल्टे तीन सौ रुपए वापस लौटाने होंगे । कहाँसे लाओगे तीन सौ रुपए ? इस मुई महँगाईके जमानेमें तुम्हारी तनख्वाह तो तीन बच्चों और हम दोनोंके रोटी-कपड़ेके लिए भी पूरी नहीं पड़ रही ।

(तभी अन्दरसे फिर मुनियाके रोनेकी आवाज आती है ।)

सरिता—माता जी, मुनिया रो रही है । मैं उसे चुप कराऊँ ?

मुन्ना—मैं भी उथे तुप तलाऊँ ?

(बिना उत्तर पाए मुन्ना सरिताके साथ अन्दर जाता है ।)

पार्वती—(गुस्से से) अब तुम जाकर उसे चुप कराओ न । तुम्हारी भूलका तो परिणाम है वह । (जरा रुक कर) मैं जानती हूँ कि यह मुनिया बार-बार क्यों रो रही है । डॉक्टरने टॉनिक लिखकर दी थी, लेकिन घरमें इतने पैसे कहाँ हैं, जो…।

नंदकिशोर—इस खैरातीराम विलायतीरामने मेरे साथ धोखा किया है । मैं बदला लूँगा । मैं आज ही यह शब्दकोश तैयार करके किसी दूसरे प्रकाशकको देता हूँ और…।

पार्वती—भुलक्कड़ जी यह शब्दकोश बादमें तैयार होता रहेगा, पहले मेरे साथ उस डॉक्टरके पास चलो ।

नंदकिशोर—अरे, वह डॉक्टर कहीं भागा नहीं जा रहा । इस शब्दकोशका बहुत थोड़ा काम रह गया है । 'ल' का खंड पूरा होने ही वाला है । 'लाल' के आगे कुछ शब्द जोड़ने हैं, जैसे…जैसे… ।

(शेष पृष्ठ १५ पर)

पारिवारिक जीवनोपयोगी स्वास्थ्य साहित्य

लोकप्रिय स्वास्थ्य साहित्य

राजा बेटा कैसे बनायें ?	३.००
सुन्दर दांत और उनकी देखरेख	२.५०
आपके बच्चेकी खुराक	३.३७
भोजन क्या, क्यों और कैसे ?	४.००
विटामिन और हीनता जनित रोग	४.२५

यौन-साहित्य

यौन मनोविकार कारण और निवारण	४.२५
विवाहित जीवनमें यौन सम्प्रयोग	५.५०
नारीकी यौन समस्यायें	२.५०
सन्तति-निरोध कब और कैसे ?	४.००
गर्भवती स्त्री और प्रसवपूर्व व्यवस्था	२.५०

प्रकाशक

स्वास्थ्य सन्देश प्रकाशन,
पोस्ट–कालपी (उत्तर प्रदेश)

स्वास्थ्य का वृहद ज्ञान सागर

आपका स्वास्थ्य

१८ वर्षों की

पुरानी फाइलें

चौथे और सोलहवें वर्ष के अलावा प्रत्येक वर्ष की फाइलें प्राप्य हैं।

प्रत्येक वर्ष की फाइल ६ रु० में प्राप्य है फाइलें वी० पी० से नहीं भेजी जायेंगी। अग्रिम मूल्य भेजना अनिवार्य है।

आपका स्वास्थ्य कार्यालय
चेतगंज, वाराणसी–१

उद्यम

मासिक पत्रिका

'उद्यम' में निम्न विषयों पर लेख प्रकाशित होते हैं :

*लाभदायक उद्योग-धन्धोंकी व्यवहारोपयोगी जानकारी

*व्यवसायमें सफल व्यक्तियोंकी मुलाकातें और परिचय तथा मवेशियोंके रोगोंका निवारण।

*इंजिनियरिंग, यंत्र सामग्री और ग्रामोद्योग संबंधी लेख

*आरोग्य, संक्रामक रोग तथा घरेलू औषधियों संबंधी जानकारी।

*पंचवर्षीय योजनाओंके कारण होता हुआ ग्रामसुधार

*महिला विभाग : घरेलू उद्योग, मितव्ययिता, खाद्य पदार्थ आदि पर लेख।

*बालकोंका विश्व : बालक-बालिकाओंके लिए सुलभ भाषामें त्रैमासिक जानकारी।

*विद्यार्थियों के लिये : विशेषज्ञों द्वारा उपयुक्त लेख

*पाठकों द्वारा पूछी गई जानकारी।

'उद्यम' का वार्षिक मूल्य रु० दस भेजकर परिवारके प्रत्येक व्यक्तिके लिये उपयोगी यह मासिक पत्रिका अवश्य संग्रहीत करें।

उद्यम मासिक, धर्मपेठ, नागपुर-१

घर बैठे संगीत सीखिए

प्रतिमास घर बैठे गायन, वादन तथा नृत्य की ठोस जानकारी प्राप्त करने के लिए १५) भेजकर **'संगीत'** मासिक के वार्षिक सदस्य बन जाइए। नमूना चाहें तो १)५० के टिकिट भेजिए। फिल्मी गीतों के प्रेमी २०) भेजकर **'फिल्म-संगीत'** त्रैमासिक के वार्षिक सदस्य बनें। वर्ष में इसके कुल चार अंक (जनवरी. अप्रैल, जुलाई और अक्टूबर में) प्रकाशित होते हैं। प्रत्येक अंक में ३५ प्रसिद्ध फिल्मी गीत स्वरलिपि-सहित छपते हैं। हर प्रकार के संगीत-साहित्य की विस्तृत जानकारी के लिए हमारा बड़ा सूचीपत्र मुफ्त मंगाएं।

पता

संगीत कार्यालय, ६, हाथरस (उ. प्र.)

इंडियन मेडिकल असोसियेशनकी ओरसे डा० कोशलपति तिवारी द्वारा
संपादित, प्रकाशित और संसार प्रेस, वाराणसीमें मुद्रित।

HEALTH

is your most precious possession

Your Health

will help preserve it

Your Health aims to educate the common man on matters of health. It deals with day to day problems of sanitation and hygiene and presents the scientific side of preventing many bodily and mental ills.

Remember it is

A Publication of the Indian Medical Association.

SUBSCRIPTION RATES

(Post free)

Inland : 1 year Rs. 8/- ; 2 years Rs. 12/-

Foreign : 1 year Rs. 10/- ; 2 years Rs. 16/-

Members of I. M. A. ; 1 year Rs. 6/-

Remittances should be by money orders or postal orders payable to YOUR HEALTH

All business correspondence should be addressed to

Manager, YOUR HEALTH

23 Samavaya Mansion : Corporation Place

CALCUTTA-13

आपका स्वास्थ्य

इंडियन मेडिकल असोसियेशन की लोकोपयोगी मासिक पत्रिका

वरी, १९७३

हमारे तीन महत्वपूर्ण प्रकाशन

कहीं हवा न लग जाय

-कैप्टन शरत कुमार चौधरी-

इस पुस्तकमें मलेरिया, फाइलेरिया, चेचक आदि रोगोंसे बचनेके उपाय, रोगीकी परिचर्या सर्पदंश, प्राथमिक चिकित्सा सम्बन्धी अनेक महत्वपूर्ण समस्याओंकी चर्चा की गयी है।

मूल्य १५० पैसे

सुनो भाई पंचो

-डाक्टर कोशलपति तिवारी-

हिन्दीमें अपने ढंगकी सरल सुबोध शैलीमें लिखी गयी पुस्तक। रोग तथा स्वास्थ्य-सम्बन्धी उन सभी समस्याओं पर चर्चा की गयी है, जिनसे हमारे ग्रामीण भाइयोंको नित्य सामना करना पड़ता है।

पुस्तक दो भागोंमें प्रकाशित हैं।

प्रत्येक भागका मूल्य—१५० पैसे

गुजरात, मध्यप्रदेश, उत्तरप्रदेश, हरियाणा, राजस्थान सरकार, बिहार द्वारा नियोजन केन्द्रों, स्कूल-कालेजके पुस्तकालयों, राष्ट्रीय प्रसार सेवा खण्डों तथा ग्राम पुस्तकालयोंके लिए स्वीकृत।

डाक्टर के आने तक

- डाक्टर गोकुलदास अग्रवाल -

नागरिक सुरक्षाके संदर्भमें इस पुस्तकका विशेष महत्व है। देशके प्रत्येक नागरिकको प्राथमिक चिकित्सा सम्बन्धी ज्ञान प्राप्त करना आवश्यक है और इस पुस्तकमें विस्तृत ढंगसे इस विषयपर चर्चा की गयी है। प्राथमिक चिकित्सा (फर्स्ट एड और नर्सिग) की शिक्षा लेनेवाले छात्र-छात्राओंके लिए सर्वश्रेष्ठ पुस्तक। प्रस्तुत पुस्तक आपके परिवारके लिए 'घरेलू डाक्टर' का काम देगी।

दो सौ से अधिक चित्र — **मूल्य २७५ पैसे**

चारों पुस्तकें एक साथ मँगानेपर डाक खर्च माफ। आपका स्वास्थ्यके ग्राहकोंको २५ प्रतिशत छूट दी जाती है। चारों पुस्तकें एक साथ न मँगानेपर प्रत्येक पुस्तकके लिए १२५ पैसे अलगसे डाक व्यय लगेगा।

हमारे अधिकृत विक्रेता,

हिन्दी प्रचारक संस्थान, पो० बा० १०६, वाराणसी
पुस्तक भवन, कचहरी रोड, राँची।
श्री गंगा पुस्तकालय, गायघाट, वाराणसी–१
आपका स्वास्थ्य कार्यालय, लहुराबीर, वाराणसी–१

ESTD. 1928
INDIAN MEDICAL ASSOCIATION

आपका स्वास्थ्य

इंडियन मेडिकल एसोसियेशनका लोकोपयोगी प्रकाशन
वर्ष २०   फरवरी १९७३   अंक ५

अनुक्रमणिका

तब ते जीव भयउ संसारी ··· ··· ··· २
गलियोंमें पनपता बाल अपराध : दोषी कौन ? ··· ··· ··· ··· ३
दमा··· ··· ··· ··· ··· ६
अपने भलेके लिए हृदयकी रक्षा कीजिए ··· ७
भोजनमें लोहेका स्थान ··· ··· ९
नये व्यंजन ··· ··· ··· १२
स्ट्रेप्टोमाइसिनके आविष्कारक—डा० वेक्समेन १३
मधुमेह ··· ··· ··· १५
धरतीके मोती — मूंगफलीके दाने ··· २०
स्कूलोंसे यक्ष्माका प्रसार··· ··· ··· २४
बच्चोंमें भैंगापन ··· ··· ··· २७

परिवार नियोजन पूरक

परिवार नियोजन कार्यक्रम समय और लक्ष्य के अनुरूप है ··· ··· ··· २९
धार्मिक और आयुर्वेदिक ग्रंथोंमें परिवार नियोजन ··· ··· ··· ३१

कवर-चित्र
श्री पार्थ चटर्जी

● 'आपका स्वास्थ्य' में प्रकाशित प्रत्येक रचना और चित्रका कापीराइट प्रकाशकका है । इसलिए बिना आज्ञा कोई रचना या चित्र किसी प्रकार उद्धृत नहीं होना चाहिए ।

● 'आपका स्वास्थ्य' के लेखकोंके विचार पूर्ण रूपसे उनके अपने हैं आवश्यक नहीं है कि संपादक मंडल अथवा इंडियन मेडिकल एसोसियेशन उनसे सहमत हो ।

मूल्य—इस अंकका ५० पैसे
वार्षिक छः रुपये

आपका स्वास्थ्य कार्यालय
वाराणसी (बनारस—१)

सम्पादकीय-

तब तें जीव भयउ संसारी

कभी आपने सोचा कि लाखों प्रकारके प्राणी हैं, पशु-पक्षी, कीट-पतंग आदि, पर यह बीमारीका झमेला आदमीको ही क्यों लगा हुआ है ! आदमी विशेषकर सभ्य आदमीको प्रातः उठकर क्रमसे अनेक नित्य क्रम करने पड़ते हैं, सारा दिन वह नियमोंसे बंधा चलता है, रात गुदगुदे बिस्तरपर भी उसे नींद नहीं आती ! इसका मतलब यह कि आदमी अन्य प्राणियोंसे भिन्न हो गया है, वह प्रकृतिके नियमोंका पालन न करके अपने बनाये नियमोंपर चलता है । गोस्वामीजीके शब्दोंमें जीव संसारी हो गया है, जड़-चेतनमें गाँठ पड़ गयी है । प्रकृति परमात्मासे अलग हो मनुष्यने अपनी एक दुनिया अलग बना डाली है अतः उसके सुख-दुख भी स्वयं उसके अपने रचे हुए हैं । सही है कि प्रकृतिके नियमोंपर चलनेवाले प्राणी भी यदाकदा रोगाक्रांत होते हैं पीड़ित होते हैं पर उनके मन मुकुर स्वच्छ होते हैं, उनमें कुंठा, घृणा, द्वेष जैसे आवेग नहीं होते ।

आदमी जबतक स्वनिर्मित ग्रन्थियोंसे मुक्त नहीं होता तबतक वह सुखी नहीं हो सकता और कैसी विडंबना है कि समूची जीवन-यात्राका उद्देश्य सुख की शोध होता है । इस विषम परिस्थितिसे बचनेके लिए नाना प्रकारके सुझाव दिये गये हैं पर कारगर कोई नहीं होता । अपने आपको कमरेमें बन्दकर यदि कोई मुक्तिके लिए रुदन करे तो वह उसे कैसे मिल सकती है ?

मानवी-रचना और ईश्वरी-सृष्टिमें मौलिक अन्तर है कि प्राकृतिक सृष्टिमें क्रिया और क्रिया-फल सबका प्राविधान है एक स्थूल उदाहरण लें कि ईश्वरी सृष्टिमें करोड़ों प्राणी रहते हैं पर उनके लिए घर-रास्ते शौचालय-सीवर-जलव्यवस्था की कहीं आवश्यकता नहीं होती, पर आदमीके समाजमें इन प्रबंधोंके अभावमें जीना मुश्किल हो जाता है । काम तो आदमी कर देता है, पर उसके फल उसके लिए सिरदर्द बन जाते है । एक और उदाहरण, आदमीने बुद्धिके बलपर रोग उन्मूलनके उपाय दिये, लोग स्वस्थ हुए, दीर्घजीवी हुए तो फल हुआ जनसंख्या की वृद्धि जो उन्मूलित रोगसे बड़ा रोग बन गया !

कहनेका तात्पर्य यह कि संसारी जीवने छोटे-छोटे स्वर्ग बनानेके चक्करमें बड़े-बड़े नर्क बना डाले हैं और वह स्वनिर्मित बंधनोंमें ऐसा उलझ गया है कि सद्सलाहोंके बावजूद निकल नहीं पा रहा है। आज आवश्यकता है कि हम वासंती बयारमें शांति पूर्वक बैठकर विचार करें कि हम किन राहोंपर भटक गये हैं।

गलियोंमें पनपता बाल अपराध : दोषी कौन ?

—श्री चुन्नीलाल सलूजा—

भारतीय लोकतन्त्रके कल्याणकारी पक्षको दृढ़ करनेके लिए, हमारे संविधानमें जिन नीति निदेशक तत्त्वोंका उल्लेख किया गया है, वे समाज-कल्याण और समाजसेवाके क्षेत्रमें हमारे दिशा-निर्देशक हैं। इन्हीं मूलभूत सिद्धान्तोंसे प्रेरित होकर इस क्षेत्रमें अनेक शासकीय और अशासकीय संस्थाएँ कार्य कर रही है। इन संस्थाओंकी सुधारात्मक सेवाओंका प्रत्यक्ष लाभ समाजके उस वर्गको मिलता है जो भावनाओं अथवा परिस्थितियोंके वशीभूत होकर कुछ ऐसा आचरण कर बैठते हैं जो समाजकी मर्यादाओं और कानूनके विपरीत होता है। इसी प्रकारके आचरण अथवा व्यवहारको बालापराध कहते हैं। यदि इन बालापराधियोंको उचित समय उचित संदर्शन प्राप्त हो जाता तो वे इस आचरण अथवा व्यवहारसे बच सकते थे। बालापराधकी प्रवृत्ति कुछ इन्हीं परिस्थितियोंकी देन है।

बालापराधका अध्ययन आवश्यक—अनेक मनोवैज्ञानिक सर्वेक्षणों, अध्ययनों एवं प्रयोगोंसे यह निष्कर्ष निकाला गया है कि बालक मूल रूपमें अपराधी नहीं होते और यदि कहीं वंशानुक्रमका थोड़ा बहुत प्रभाव हो भी तो उसे सुधारा जा सकता है। बालकमें घृणा, हिंसा, चोरी आदिकी अपेक्षा प्रेम, दया, स्नेह, उदारता, आदि मानवीय गुण अधिक होते हैं। घृणा, हिंसा और चोरी जैसी वृत्तियोंका रूपान्तरण किया जा सकता है। स्कूलकी कई गतिविधियाँ केवल इन्हीं दुर्गुणोंको समाप्त करनेके लिए पाठ्यक्रममें रखी जाती हैं। दौड़ना, भागना, खेलना, छुपना-छुपाना आदि जितने भी खेल हैं, इन सब खेलोंका कुछ न कुछ मनोवैज्ञानिक औचित्य अवश्य है। 'हार' और 'जीत' बालकके लिए प्रेरक बन उसे उत्साह प्रदान करनेके लिए अच्छे माने जाते हैं। मतलब यह है कि जब बालक जन्मजात अपराधी नहीं होते और उनकी दुष्प्रवृत्तियोंके शमनके सभी साधन अपनाये जाते हैं, फिर भी बालापराध वृत्ति क्यों बढ़ रही है? इसका अर्थ यह है कि कहीं कोई कमी अवश्य ही है। अतः कमीका अध्ययन इस समस्याके व्यावहारिक पक्षके लिए उपयोगी सिद्ध होगा।

बालापराध विषयक पिछले आँकड़ोंकी अपेक्षा आजके आँकड़े अधिक भयानक हैं। भयानक इस विचारसे कि पिछले दो दशकोंमें इस क्षेत्रमें जो प्रयास किये गये हैं, उनके बावजूद इनकी संख्या बढ़ी है और लगातार बढ़ती जा रही है। इस समय देशमें ९० बाल अपराधी न्यायालय, ९३ विशेष स्कूल और लगभग १२० बाल अपराधी सुधार केन्द्र कार्यशील हैं। इतने प्रयत्नोंके बाद भी बालापराध वृत्ति लगातार बढ़ती ही जा रही है। एक विशेष बात जो इन बालापराधियोंके सम्बन्धमें कही जाती है वह यह है कि ये लड़के अपने अपराध-कौशलसे बड़े-बड़ोंके कान काटते हैं। जिन अपराधोंको बड़ेसे बड़ा कुशल अपराधी नहीं कर पाता या करनेमें घबराता है, उसे ये छोकरे अधिक साहसका काम समझ कर बड़ी निडरतासे कर लेते हैं।

शिक्षा और धनकी विकट समस्या—बालपराधकी बढ़ती हुई इस प्रवृत्तिसे हम इस निष्कर्षपर पहुँचते हैं कि हमारी सामाजिक व्यवस्थामें कहीं कुछ ऐसा अभाव अवश्य है जो हमारे बच्चोंको इस ओर बढ़नेके लिये प्रेरित और प्रोत्साहित करता है। एक ओर जहाँ

शिक्षा और आर्थिक समृद्धि बढ़ रही है, दूसरी ओर इस प्रकारकी वृत्तियाँ भी बढ़ रही हैं। वास्तवमें शिक्षा और आर्थिक समृद्धि जीवनके ऐसे पक्ष हैं जिनमें रहकर बालक अधिक सहिष्णु, उदार और सहृदय बनता है, किन्तु यह विरोधाभास क्यों ?

इन सब परिस्थितियोंमें हम इस बातको अनदेखा नहीं कर सकते कि स्वतन्त्रताके बाद हमारे जीवन-मूल्योंमें महान् परिवर्तन हुआ है। हमारी युवा पीढ़ी इसी स्वतन्त्र वातावरणमें जन्मी और पली है। इन बदलते हुए जीवन-मूल्योंका इनपर पूरा-पूरा प्रभाव पड़ा है। जहाँ लोगोंने आर्थिक समृद्धिको पाया है, वहीं उनमें फैशन, दिखावा, फिजूलखर्ची, झूठी शान, दुर्व्यसन आदि भी आये हैं। ये आचरण वस्तुतः हमारे परम्परागत आदर्शोंके विपरीत है। इसके बदले सदाचार, सादगी, त्याग, प्रेम आदि मानवीय गुणों और आदर्शोंका अभाव होता जा रहा है, जिसका प्रभाव बच्चोंपर पड़ा है। नैतिकता और धर्मके घटते हुए प्रभावको भी हम अनदेखा नहीं छोड़ सकते। परिवार हमारे नागरिक गुणोंकी पहली पाठशाला है जहाँ बालकको नैतिकता, उदारता, त्याग, सहिष्णुता, प्रेम आदि सिखाया जाता है। किन्तु अब परिवार ही टूट रहे हैं। वस्तुस्थिति यह है कि हमारे परिवारोंका ही वातावरण दूषित होता जा रहा है। देशकी बढ़ती हुई जनसंख्या जहाँ देशके आर्थिक प्रारूपको बिगाड़ रही है, वहीं परिवारका सुख भी इससे प्रभावित हुए बगैर नहीं रह सका है। अनचाही सन्तान परिवारपर अतिरिक्त बोझ बनी हुई है। उसे मां-बाप प्रेम और स्नेह कहाँसे दे ? परिवारकी सदस्य संख्या बढ़नेका मतलब है, उपलब्ध साधनोंका बँट जाना, अभाव और गरीबीका क्षेत्र बढ़ जाना। बच्चेपरसे 'पर्सनल केयर'का खत्म हो जाना।

माता पिताके ध्यानसे वंचित—मां-बापकी समुचित देखभालके अभावमें बच्चे गलियोंमें फिरा करते हैं। मुहल्लेकी ये गलियाँ ही बच्चोंको अपराधी बनाती हैं। बेरोजगारीके कारण कई बड़ी उम्रके लड़के इन छोटी उम्रके लड़कोंको दोस्त बनाते हैं। स्कूलमें चार-पाँच घंटे बितानेके बाद ये लड़के दिनमें भी मुहल्लेमें घूमते-फिरते रहते हैं। कोई काम नहीं होता, इसलिए मनका शैतान विचित्र कल्पना करता रहता है। कौड़ियोंसे जुआ खेलना, फिर ताशके पत्तोंसे जुआ खेलना, कभी बिना शराब पिये झूमनेकी ऐक्टिंग करना और फिर अपनी जिज्ञासा वृत्तिको शान्त करनेके लिए शराब पी कर झूमना, आदि इस प्रकारके व्यवहार है, जिन्हें वे देखादेखी ही करते हैं। प्रारम्भमें ये बालक सिगरेट केवल इसलिए पीते हैं कि वे 'दादा'के समान नाकसे धुआँ निकालना चाहते हैं। मतलब यह है कि जब उनके पास कोई काम नहीं होता तो वे तरह-तरहकी खुराफात सोचते और करते हैं।

अभिनय, शौक और अपराध—बालक जन्मसे साहसी, बीर और महत्त्वाकांक्षी होते हैं। उनमें कुछ मनोवैज्ञानिक प्रवृत्तियाँ होती हैं। जिज्ञासा, काम, आत्मप्रदर्शन आदि ऐसी मूल प्रवृत्तियाँ हैं जो बालकको कल्पना-लोकमें विचरने और दिवास्वप्नोंमें लीन रखती हैं। वह अपना अधिकांश समय घरसे बाहर व्यतीत करना चाहता है, इसलिए गली मुहल्ले या दोस्तोंके साथ रहता है। दोस्त यदि बड़ी उम्रके होंगे तो वह अपने आपको उनमें न मिला सकेगा। अपनेसे बड़ी उम्रके बच्चोंके बीच वह अपने आपको अकेला समझता है, इसलिए वह उनसे दोस्ती कर लेना चाहता है। उनसे दोस्ती करनेका मतलब है चाय, पान, बीड़ी, सिगरेट, ताश, सिनेमा आदिकी आदतोंमें अपने आपको ढाल देना। प्रारम्भमें तो खर्चा किसी प्रकारसे चल जाता है, किन्तु शीघ्र ही इसमें कमी पड़ने लगती हैं और ये बालक अपनी इस कमीको पूरा करनेके लिए पहले घरमें छोटी मोटी चोरी करते हैं, फिर किताबें बेचना, किताबें और अन्य वस्तुएं चुराना, स्कूलकी फीसकी हेरा-फेरी करना, स्कूलमें चन्देके नामसे घरवालोंसे पैसे लेना आदि ऐसे आचरण हैं जिनकी शुरुआत इन गलियोंमेंसे होती है। स्कूल समयमें सिनेमा जाना, घरवालोंके सामने नाना प्रकारके बहाने बनाना, कुछ ही दिनोंमें खर्चे और

बढ़ जाते हैं। फिर घरसे चुराई हुई वस्तुओंसे पूर्ति नहीं होती, इसलिए रिश्तेदारों, मित्रों और परिचितोंके यहाँ भी हाथकी सफाई दिखाई जाती है। इस प्रकारसे यदि अवसर और प्रोत्साहन मिलता रहे तो वे बड़ेसे बड़ा अपराध करनेमें भी नहीं हिचकते।

लड़कियोंको छेड़ना, आवाजें कसना, दीवारोंपर गन्दी-गन्दी बातें लिखना आदि ऐसे आचरण हैं जो बालकोंमें केवल असामंजस्यके कारण आते हैं। इस प्रकारके व्यवहारका शोधन किया जा सकता है, लेकिन दुष्प्रभावमें पला हुआ बालकका मन लगातार अपराधोंकी ओर अग्रसर होता है। उसे चिढ़ाना, तोड़ना, जलाना, रुलाना आदि अच्छा लगता है और इस प्रकारके व्यवहार से उसके हिंसक मनको सन्तोष मिलता है। यहाँ तक कि जब बालकमें शारीरिक और मानसिक परिपक्वता आ जाती है तब भी उसके व्यवहारमें कोई अन्तर नहीं आता। परिणामस्वरूप परिवारमें लड़ाई, झगड़ा, क्रोध, रोष, असन्तोष आदिका प्रभाव रहता है और इस प्रकारके वातावरणमें पला हुआ बालक कभी भी आदर्श व्यक्तित्वका निर्माण नहीं कर सकता।

कभी-कभी परिवारके मुखिया ही बच्चोंसे वे काम कराते हैं जिन्हें नहीं कराना चाहिए। बच्चोंसे शराब मंगाना- बच्चोंके सामने पीना आदि ऐसे आचरण हैं जिनका अनुकरण बालक करना चाहते हैं। बालक तो हर चीजको देखकर सीखता है। अच्छा हो या बुरा... यह बात अलग है कि बुरे संस्कार बालककी बुद्धि पर शीघ्र प्रभाव छोड़ जाते हैं जब कि अच्छे संस्कारोंको डालनेके लिए लगातार प्रयत्न करने की आवश्यक है।

हमारा दायित्व—उद्देश्य यह है कि हमारी ही गलियोंमें हमारे बच्चे अपराधी बनते जा रहे हैं जिसका सम्पूर्ण उत्तरदायित्व हमारी सामाजिक व्यवस्था और हमपर है। इनमेंसे अधिकांश परिस्थितियोंका निराकरण संभव है। वास्तवमें जिन शिक्षाको हमने रोजगारका माध्यम मान लिया है, उसका यही प्रयोग उसका जीवन-पद्धतिमें उपयोग करना है। शिक्षा और प्रशिक्षण द्वारा हमें बालककी वृत्तियों, आदतों और मनोवैज्ञानिक आवश्यकताओंका अध्ययन करना चाहिए ताकि हम अपने बालकको परिवार और समाजके लिए उपयोगी बना सकें। केवल इतना ही नहीं, बल्कि उसकी मूल प्रवृत्तियोंका रूपान्तरण कर उन्हें सृजनात्मक दिशा प्रदान की जा सके ताकि वह अपने व्यक्तित्व निर्माणमें इन वृत्तियोंका लाभ उठा सके।

गलियोंमें पनपते हुए बालापराधोंके विषयमें हम अपने दायित्वोंसे मुक्त नहीं हो सकते। यह शासकीय नहीं, बल्कि सामाजिक कार्य है, क्योंकि बालक समाज-की देन है और उसका आदर्श आचरण और व्यवहार समाजको ही लाभ प्रदान करेगा, इस दृष्टिकोणसे हमें इस समस्याके समाधानके लिए अपना सहयोग प्रदान करना चाहिए। मुहल्ला सुधार समितियोंका निर्माण करके हम इन बालकोंको रचनात्मक दिशा प्रदान कर सकते हैं।

हमें बालककी विद्यालयकी गतिविधियों भी पूरी रुचि रखनी चाहिए। उसके विद्यालयकी आवश्यकताएँ क्या और कैसी हैं, उसका संबंध किन मित्रों अथवा परिचितोंसे है, वह अपना अवकाशका समय कैसे और कहां बिताता है आदि ऐसे पक्ष हैं जो बालकके भविष्य-निर्माणमें सहयोगी बनते हैं। बालककी घरके प्रति कितनी रुचि है और यदि नहीं तो क्यों? क्या उसे पर्याप्त जेब खर्च मिलता है। इस प्रकारका मनोवैज्ञानिक अध्ययन बालापराधोंकी बढ़ती हुई संख्याको कम कर सकता है। बालककी देख-रेखका यह पहलू उसे घर और परिवारके प्रति आस्थावान बनाएगा। वह गलियोंमें आवारागर्दी करनेकी अपेक्षा घरको मधुर बनानेमें अपनी शक्ति खर्च करेगा। तब हमारा समाज अधिक सम्पन्न और समृद्धिशाली बनेगा।

* * *

दमा

क्या आपको कभी सांस लेनेमें घरघराहटका अनुभव हुआ ? यदि आपको सांस लेनेमें कभी-कभी कठिनाई भी होती रहती है तो शायद आपकी गिनती देशके ९० लाखसे १ करोड़ २० लाख दमाके रोगियोंमें की जा सकती है ।

अन्य बीमारियोंकी तरह दमा ऐसा रोग नहीं है जिसको विशिष्ट उपचारोंसे ठीक किया जा सकता हो । विख्यात वैज्ञानिक भी इस तथ्यको स्वीकार करते हैं तथा उन्होंने इस असफलताको चिकित्सा विज्ञानकी असफलता माना है । इस रोगके बारेमें काफी जानकारी होनेके बावजूद यह स्थिति है । एक विशेषज्ञका यह कथन कि "यह स्थिति ऐसी है जिसके बारेमें हम जानते तो बहुत कुछ हैं, लेकिन समझते अपेक्षाकृत कम हैं," कितना सही है । एक अन्य वैज्ञानिककी दमेके बारेमें एक और सटीक टिप्पणी पर ध्यान दीजिए—"इस जटिल रोगने डाक्टरोंको चक्करमें डाला है तथा रोगियोंको यातना दी है ।"

सामान्य रूपसे सांस लेनेमें किसी भी प्रकारकी कठिनाईको निश्चित ही दमा मान लिया जाता है । यदि सांस लेनेके साथ-साथ घरघराहटकी आवाज भी आती है तो फौरन ही सोच लिया जाता है कि दमेका दौरा पड़ा है । 'दमा' शब्द इतना प्रचलित हो गया है कि किसी भी बीमारीको दमा समझ लेना कोई हैरानीकी बात नहीं । दमामें प्रायः सांस भीतर लेनेसे अधिक सांस बाहर फेंकनेकी प्रक्रियामें कठिनाई होती है । इस रोगमें अनुवांशिकताका भी प्रभाव पड़ता है जिनके यहाँ परिवारमें दमा कभी भी किसीको हो चुका है, उसे यह रोग होनेकी संभावना बहुत ज्यादा है । दूसरे शब्दोंमें, यदि आपके पिता और पितामह दमेंके मरीज रहे हैं तो आपको भी यह रोग लगनेका डर बना रहेगा ।

कोई भी देश यह दावा नहीं कर सकता कि वहाँ दमा रोग है ही नहीं या उस देशमें निरोधात्मक तरीके या उपचार आदिसे इसका समूल नाश कर दिया गया है कि किसी भी देशकी दो प्रतिशत जनसंख्या तो अवश्य ही दमेंसे पीड़ित है । भारतमें इस सम्बन्धमें किये गये सर्वेक्षणोंके अनुसार दमेसे पीड़ित व्यक्तियोंका अनुपात जनसंख्याके १.७ और २.३ प्रतिशतके बीच निर्धारित किया गया है ।

लेकिन अभी भी दमेंको संसारमें उतना गंभीर नहीं माना गया है । इसका कारण यह है कि दमा मलेरिया और तपेदिक जैसा घातक रोग नहीं है । इस रोगसे पूरी तरहसे तो नहीं, लेकिन काफी हद तक रोगी अशक्त हो जाता है । कारखानों, खेतों और कार्यालयोंमें इस रोगके कारण भारी मात्रामें व्यक्ति-घंटोंका नुकसान हो रहा है । इस रोगसे दूसरी तकलीफ होनेके कारण रोगीकी मृत्यु भी हो सकती है । कितनी बड़ी बिडम्बना है कि कभी-कभी यह रोग नहीं बल्कि इस रोगका इलाज ही रोगीकी मृत्युका कारण बन जाता है । सूँघनेवाली आर्सेनिक दवाओंके गलत प्रयोगसे युवा मरीजोंके मरनेके समाचार भी मिले हैं । भारी मात्रामें आक्सीजनसे भी कई बार मौतें हुई हैं ।

दमेकी कोई अचूक दवा नहीं है, फिर भी दमेसे राहत देनेके लिए कई प्रकारकी दवाइयां विकसित की गयी हैं । निस्सन्देह ये दवाएँ दमेका दौरा पड़नेके दौरान काफी अरसे तक दी जाती है, लेकिन यह अवश्य है कि इनसे रोगीका जीवन जीने लायक बना रहता है । हाल ही में दो अत्यन्त लाभकारी दवाएँ प्रयोगमें लायी गयी हैं । एक दमेके दौरेके समय राहत पहुँचाती है और दूसरी इसको रोकती है ।

किसी खाद्य सामग्रीके प्रति एलर्जी या धूल, पराग तथा फँफूद जीवाणुओंके सांसके साथ चले जानेसे भी दमा हो सकता है । चमड़ीका परीक्षण करनेसे उन

(शेष पृष्ठ २८ पर)

अपने भलेके लिए

हृदयकी रक्षा कीजिए

बीमा कम्पनियों, अस्पतालों, महामारी सर्वेक्षणों और शव-परीक्षासे हृदय रोगोंके बारेमें जो जानकारी मिली है उसके अनुसार समस्त हृदय रोगियोंमेंसे ११.२० प्रतिशत हृदय रोगी हृद्धमनीसे संबंधित हृदय रोगोंसे पीड़ित होते हैं, ११ से २० प्रतिशत रोगी उच्च रक्तचापसे पीड़ित होते हैं, २२ से ४० प्रतिशत हृदय रोगी संधिवातिक हृदय रोगोंसे पीड़ित होते हैं; १३ से १८ प्रतिशत रोगी पुराने फुफ्फुस रोगोंसे पीड़ित होते हैं और १ से २ प्रतिशत रोगी जन्मजात हृदय रोगोंसे पीड़ित होते हैं।

हालके एक सर्वेक्षणसे पता चला है कि हृद्वाहिका रोगसे मरने वालोंका अनुपात फी एक लाख व्यक्ति पीछे १३७.३ है। यद्यपि स्वतन्त्रता प्राप्तिके बादसे सारे देशमें मृत्यु दर घटी है किन्तु, रक्त संचालन संबंधी रोगोंसे होनेवाली मौतोंकी दर २२० प्रतिशत बढ़ी है।

हृद्धमनी संबंधी हृदय रोग

यदि आप अधीर स्वभावके हैं, आपको जल्दी गुस्सा आ जाता है, आप उच्च मध्यम वर्गके हैं अथवा दिनभर कुर्सीपर बैठे रहते हैं और धूम्रपान करते हैं तो आप हृद्धमनी संबंधी हृदय रोगोंसे ग्रस्त होनेका खतरा मोल ले रहे हैं।

हृद्धमनी संबंधी हृदय रोगोंमें प्रमुख धमनियोंमें चर्बी भर जाती हैं जिसकी वजहसे धमनियाँ कड़ी हो जाती है, खूनके प्रवाहमें बाधा पड़ती है और इससे कभी-कभी दिलका दौरा पड़ सकता है। कसरत करने, वजन सामान्य बनाये रहने और धूम्रपान त्यागनेसे इस रोगसे बचा जा सकता है।

आनुवंशिकताका भी इस रोगमें बड़ा हाथ रहता है। यदि आपके पिता या पितामह हृदय रोगसे पीड़ित हैं तो आपको इससे बचनेके लिए अन्य लोगोंकी अपेक्षा ज्यादा सावधानी बरतनी पड़ेगी।

उच्च रक्तचाप

धमनियोंके सिकुड़नेके फलस्वरूप रक्तचापमें असाधारण वृद्धिको उच्च रक्तचाप रोग कहते हैं।

मनोवेगकी दशामें, दुख या अधिक परिश्रमकी स्थितिमें कभी-कभी सामान्य व्यक्तिको भी थोड़ी देरके लिए उच्च रक्तचापका अनुभव हो सकता है। लेकिन जब यह चाप लगातार ऊँचा बना रहता है तभी इसे रोग समझा जाता है।

सामान्यसे अधिक वजन, एक जगह बैठे रहनेवाला व्यवसाय, आधुनिक जीवनका तनाव आदि बातें भी इस रोगके कारण हैं। गुरदेके रोगोंसे भी यह स्थिति उत्पन्न हो सकती है।

यदि आपको चक्कर आते हों, हृदयमें धड़कन होती हो, कसरत करते समय या सीढ़ियां चढ़ते समय कठिनाई होती हो तब आपको अपने रक्तचापकी परीक्षा अवश्य करानी चाहिए। आधुनिक दवाइयाँ खानेसे इसपर काबू पाया जा सकता है। भारतीय औषधि 'सर्पगंधा'से भी कुछ लोगोंको लाभ हुआ है। भोजनमें नमक, चर्बी और कार्बोहाइड्रेटवाले पदार्थोंका त्याग करनेसे भी रोगीको आराम मिलता है।

संधिवातिक हृदय रोग केवल रईसोंके ही लिए नहीं हैं

यद्यपि आप रईस नहीं है फिर भी आप इस धोखेमें मत रहिए कि आपको हृदय रोग हो नहीं सकते। गंदी बस्तियोंमें आवास और पोषण ठीक न होनेके कारण आपको संधिवातिक हृदय रोग हो सकते हैं।

तीक्ष्ण आमवातिक ज्वरसे हृदयकी मांसपेशियोंको आघात पहुँचता है और इसीको संधिवातिक हृदय रोग

कहते हैं। यह तकलीफ बचपन और किशोरावस्थामें ज्यादा होती है। एक बारके आमवातिक ज्वरसे तो हृदयको कोई आघात नहीं पहुँचता, परन्तु ऐसा ज्वर बार-बार होनेपर हृदयके वाल्व, विशेषकर बायीं ओरके वाल्वको आघात पहुँचता है। इससे रोगी या तो जीवन भरके लिए काफी पंगु हो जाता है या कभी-कभी उसकी मृत्युतक हो जाती है। जिस बच्चेका गला बार-बार खराब होता है, उसकी डाक्टरी देखभाल अच्छी तरह की जानी चाहिए। इसको ठीक करनेके लिए लम्बे अरसे तक प्रति जीवाणु (ऐन्टीबायटिक्स) औषधियाँ सेवन करनी पड़ेंगी। हृदयके खराब वाल्वको शल्य क्रिया द्वारा ठीक भी किया जा सकता है।

फुफ्फुस रोग (कोर पन्ओलेन)

फेफड़ोंके रोगोंके कारण हृदयके दक्षिणी निलय (वेन्ट्रिकिल) के बढ़ जाने या काम करना बंदकर देनेको 'कोर पलमोनेल' की संज्ञा दी जाती हैं। छातीके रोगों और पुराने दमेसे हृदयको तकलीफ होती है। उत्तर भारतमें सर्दियोंके कोहरे तथा गोबरके उपलोंकी आगके धुएँसे श्वासनलीमें सूजन आनेकी शिकायत होनेका खतरा रहता है। छाती संबंधी रोगोंकी शुरुआतमें ही चिकित्साकी जानी चाहिए।

वायु दूषण चिमनीके धुएँ, मोटर-गाड़ियोंके धुएँ आदिसे बचे रहनेसे 'कोर पलमोनेल' रोगसे बचा जा सकता है।

जन्मजात हृदय रोग

गर्भावस्थामें हृदयका समुचित विकास न होनेके कारण जन्मजात हृदयरोग पैदा होते हैं। इस प्रकारकी गड़बड़ी काफी गम्भीर हो सकती है और किसी भी हदतक रोगीको पंगु बना सकती है।

हृदय रोगियोंके पुनर्वासकी समस्या, विशेषकर गाँवोंमें रहनेवालों रोगियोंकी समस्या ज्यादा विकट है। फिर भी देशके सभी प्रमुख अस्पतालोंमें हृदयरोगकी चिकित्साकी सुविधाएं उपलब्ध हैं। मेडिकल कालेजोंसे सम्बद्ध अधिकांश अस्पतालोंमें हृदय रोग विभाग हैं। हर मेडिकल कालेजके साथ एक सचल अस्पताल संवद्ध करनेका प्रस्ताव है और यह सुविधा शुरू होनेपर गाँवोंमें भी लोगोंको अपने घरके निकट ही हृदय रोगकी चिकित्साकी सुविधाएँ उपलब्ध होंगी।

◆

'आपका स्वास्थ्य' मासिक पत्रिकाके स्वामित्व तथा अन्य विवरणोंके सम्बन्धमें वक्तव्य अन्तर्गत फार्म ४ रूल ८ पत्र रजिस्ट्रेशन (केन्द्र) नियम १९५६

१—प्रकाशनका स्थान—वाराणसी
२—प्रकाशनकी अवधि—मासिक
३—मुद्रकका नाम—डा० कोशलपति तिवारी
राष्ट्रीयता—भारतीय
पता—७/३१ चेतगंज वाराणसी—१
४—प्रकाशक का नाम उपरोक्त नं० ३ के अनुसार
राष्ट्रीयता— ,,
पता— ,, ,,
५—संपादक का नाम—उपरोक्त नं० ३ के अनुसार
राष्ट्रीयता— ,, ,,
पता— ,, ,,
६—पत्रिकाके स्वामी व्यक्तियों हिस्सेदारों अथवा शेयर होल्डरों का नाम तथा पता जिनका पत्रिकाके समस्त पूंजीके स्वामित्वमें एक प्रतिशतसे अधिक का भाग है—

इंडियन मेडिकल असोसियेशन, मुख्य कार्यालय, आई० एम० ए० हाउस इन्द्रप्रस्थ मार्ग, नयी दिल्ली।

मैं डा० कोशलपति तिवारी ७।३१ चेतगंज वाराणसी—१, यह घोषित करता हूँ कि उपरोक्त विवरण मेरे उत्कृष्टतम ज्ञान और विश्वासानुसार सत्य है।

ह० (डा०) कोशलपति तिवारी

दिनांक २८ फरवरी, १९७३

भोजनमें लोहेका स्थान

—श्री० पी० एस० बालकृष्ण बालेन्दु—

शरीरकी वृद्धि और स्वास्थ्यके लिए प्रोटीन, विटामिन, चिकनाई, कार्बोहाइड्रेट आदि पोषकोंके समान खनिजोंका महत्त्वपूर्ण स्थान है। लगभग उन्नीस खनिज शरीरके लिए बहुत आवश्यक होते हैं, जैसे कैल्शियम, फासफोरस, पोटाशियम, गन्धक, सोडियम, मैगनीशियम, लोहा आदि। इनमेंसे कुछ तो बिलकुल तत्त्व रूपमें शरीरमें आते हैं और कुछ अन्य तत्त्वोंके साथ मिलकर लवणके रूपमें। यद्यपि ये शरीरके लिए अल्पमात्रामें आवश्यक होते हैं, फिर भी स्वास्थ्य रक्षामें उनका महत्त्वपूर्ण स्थान है। प्रस्तुत लेखमें भोजनमें लोहेका स्थान, उसकी अल्पतासे उत्पन्न रोग, उसकी रोकथाम आदि पर विचार किया जा रहा है।

हमारे बदनके सभी कार्योंका शिलाधार रुधिर (खून) है। रुधिर-निर्माणमें लोहेका विशेष कार्य होता है। शरीरके कुल खनिज तत्त्वोंका लगभग हजारवां हिस्सा लोहा होता है। उसका लगभग ५५ प्रतिशत खूनमें होता है। लोहा खूनके लाल कणोंके द्रव्य-विशेष 'हैमोग्लोबिन' का आवश्यक संरचक है। यह हैमोग्लोबिन 'ग्लोब्यूलिन' नामक प्रोटीन तथा लौहांशसे पूर्ण 'हेमटिन' के मिलनेसे निर्मित होता है। इसके द्वारा ही लाल कण फेफड़ोंसे ऊतियों तक आक्सिजन और ऊतियोंसे फेफड़ों तक कार्बनडाइ-आक्साइड ले जा सकते हैं। लोहेकी कमीसे स्वास्थ्य गिर जाता है और शरीर दुर्बल होता जाता है।

लोहेकी अल्पताका परिणाम

लोहेकी अल्पताके कारण शरीरमें एनीमिया (खूनकी कमी) रोग हो जाता है। भारत, अफ्रीका, मध्य और दक्षिण अमरीकामें किये गये हैमोग्लोबिन सर्वेक्षणसे पता चला कि एनीमिया रोग बहुत आम है। हमारे देशमें तो गर्भवती और स्तनपान करनेवाली स्त्रियाँ इस रोगसे अधिकतर पीड़ित रहती हैं। बालक व किशोर भी इस बीमारीके पंजेसे मुक्त नहीं। यह भी मालूम हुआ है कि इस बीमारीके कारण स्वास्थ्य ही नहीं बिगड़ता, वरन् कार्यदक्षता भी कम हो जाती है।

एनीमिया रोगके सामान्य लक्षण

एनीमिया रोगसे पीड़ित लोग सामान्यतया ओजहीन होते हैं। हल्का काम करनेपर भी जल्दी थक जाते हैं। शरीरमें अधिक कमजोरी नजर आती है। हृत्प्रवेग रोग हो जाता हैं। सिर चक्कर खाता रहता है। कभी-कभी रक्तचाप कम हो जानेसे बेहोशी हो जाया करती है।

एनीमिया-रोगीके खून तथा हड्डियोंके भीतर स्थित मुलायम वसीय पदार्थमें कुछ परिवर्त्तन दिखायी देने लगते हैं। इस बीमारीके साथ अन्य पोषकांशकी अल्पताकी बीमारियां भी मिली रह सकती है, जिससे प्रारंभिक अवस्थामें इस रोगकी पहचान कठिन हो जाती है। एनीमियाके कई प्रकार होते हैं जिसकी पहचान चतुर डाक्टर तुरंत कर सकता है।

एनीमिया रोगके कारण

१. आवश्यकतासे कम मात्रामें लोहेका सेवन। २. रक्तस्त्रावके कारण शरीरमें खूनकी कमी तथा उसकी पूर्ति समय पर न होना। ३. पेचिश और अतिसारके कारण लोहा शरीरमें जज्ब नहीं होता है तो हैमोग्लोबिनका निर्माण मन्द हो जाता है, फलस्वरूप एनीमिया हो जाता है। ४. गर्म देशके लोगोंके भोजनमें काफी लौहांश होनेपर भी वह आहारके अन्य पदार्थोंके साथ मिलकर अघुलनशील यौगिक बना लेता है। इसलिये आंतें उसे सोख नहीं पातीं। ५. आंतोंमें अंकुश-कृमियोंकी उपस्थितिसे रुधिरके लाल कण नष्ट होते रहते हैं। उस समय भोजनमें पर्याप्त लौहांश होनेपर भी, एनीमिया हो जाता है। ६, लौहांशके जज्ब होनेमें प्रोटीनको भी सहायक बताया जाता है। अभी इस दिशामें अनुसंधानकी आवश्यकता है।

रोकथाम

एनीमिया-रोगियोंकी डाक्टरी परीक्षा करनेके बाद उन्हें लौहांश युक्त खाद्य सेवन कराने चाहियें। इसके अलावा जिन प्रदेशोंमें यह बीमारी ज्यादा है, वहांके लोगोंको इस रोगके बारेमें सचेत करके उत्तम खाद्य पदार्थ इस्तेमाल करनेके लिए प्रोत्साहित करना चाहिये। उन प्रदेशोंमें भोजन पद्धति तथा देह-पोषणके बारेमें व्यवस्थित प्रचार भी करना चाहिये।

भारत जैसे देशमें, जहाँ गरीब लोगोंकी संख्या अधिक है, कम दामपर लोहेसे पुष्ट किये हुए खाद्य लोगोंको मिलने चाहियें। क्योंकि आर्थिक अवस्थाका हरा प्रभाव स्वास्थ्यपर पड़ता है। वस्तुएँ कितनी ही पौष्टिक व फायदेमन्द हों, अगर वे महँगी हैं तो उन्हें इस्तेमाल न करनेके कारण जनता अपनी गरीबीकी परवशताके कारण बीमारीमें घुलघुलकर मर जाती है। इनके अलावा एनीमिया रोगके अन्य कारणोंकी छानबीन करके इनकी रोकथामके लिए सावधानियां बरतनी चाहियें। अतः हमें यह जानना बहुत आवश्यक हो जाता है कि हरेक आदमीकी लौहांशकी दैनिक आवश्यकता क्या है और उसकी पूर्ति कैसे दैनिक व्यवहारमें लायी जानेवाली खाद्य वस्तुओंसे की जा सकती है।

हरेक व्यक्तिके लिए आवश्यक लौहांश

सब लोगोंकी लोहेकी आवश्यकताएँ एक सी नहीं होतीं। पुरुष और स्त्रियोंकी आयुके अनुसार यह परिमाण निर्भर है। बढ़नेवाले बच्चोंको लोहेकी आवश्यकता ज्यादा होती है। वयस्क पुरुषोंको कम लोहा भी पर्याप्त होता है। स्त्रियोंके लिए खासतौरपर गर्भवती और

KURAZOL
(Liquid & Tablet)

A Remedy for Asthma

● ● ●

ADIOL COMPOUND

A General Pick-up

● ● ●

HEMOGASTRIN

A Digestive & Haematinic Tonic

● ● ● ●

LYCOLIV

A Liver Tonic

● ● ●

Products of :
INTERNATIONAL CHEMICAL & BIOLOGICAL INSTITUTE
PRIVATE LIMITED
KURAZOL HOUSE, BANGALORE-4.

दूध पिलानेवाली स्त्रियोंको इसकी आवश्यकता अधिक होती है। जब कभी रक्तस्राव होता है तो शरीरमें लोहेकी हानि होती है। स्त्रियोंको निश्चित समयपर, मासिकधर्मके समय तथा बच्चोंको जन्म देते समय रक्तस्राव होता है। इसलिये स्त्रियोंके आहारमें काफी मात्रामें लोहेका होना बहुत जरूरी है। इसके अलावा जब स्त्रियां गर्भवती होती हैं तो गर्भमें स्थित शिशुके विकासके लिए सभी पोषकांश मांके शरीरसे मिलते हैं। इस दृष्टिसे माताओंको ज्यादा लोह संपन्न खाद्य खाने चाहियें। यह अतिरिक्त लोहांश यकृत, गुर्दो, हड्डियों वगैरहमें संगृहीत हो जाता है, जो आवश्यकता पड़नेपर काम आता है। इसके अभावमें मां और बच्चा दोनों लोहेकी कमीके कारण होनेवाले रोगोंके शिकार हो जाते हैं। नीचेकी तालिकामें पुरुष, स्त्री तथा बच्चोंकी लोहेकी दैनिक आवश्यकता दी जा रही है।

पुरुषोंको	१५	मि.ग्रा. प्रतिदिन
स्त्रियोंको :		
सामान्य स्त्रियां	२०	,,
गर्भवती ,,	३०	,,
स्तनपान करानेवाली ,,	२५	,,
बच्चोंको		
१- २ साल तक	८	,,
३- ४ ,,	९	,,
५- ६ ,,	१०	,,
७- ८ ,,	१२	,,
९-१० ,,	१२	,,
११-१२ ,,	१५	,,
लड़कों व लड़कियोंको (१३-२० साल तक)	२०	,,

लोहा किन खाद्यवस्तुओंमें अधिक होता है ?

अनेक खाद्योंमें लोहांश पाया जाता है; कुछ खाद्योंमें अधिक होता है, कुछमें बहुत कम। यह संभव है कि हम अपनी प्रतिदिनकी आवश्यकताकी पूर्ति खाद्य सामग्रियोंके उचित चुनावसे करें। आगेकी तालिकामें लोहेके उत्तम साधन देखिये :

लोहा (प्रति १०० ग्राममें)

अनाज	मि.ग्रा.	काष्ठफल	मि.ग्रा.
बाजरा	८.८	काजू	५.०
ज्वार	६.२	तिलहन	
रागी	५.४	तिल	१०.५
चावल (हाथ कुटा)	३.६	मूंगफली	१.६
,, (पालिश किया हुआ)	२.८	अन्य खाद्य	
		पानकी पत्तियां	५.७
,, (सेला)	३.२	गुड़	११.४
गेहूँ	५.३	पत्तीवाली तरकारियां	
		चौलाईका साग	२१.४
दालें		हरा धनिया	१०.०
चनेकी दाल	८.९	मेथीका साग	१६.९
उड़दकी दाल	९.८	पुदिना	१५.६
मूंगकी दाल	८.४	पालक	५.०
कुल्थी	७.६	अन्य तरकारियां	
मटर	४.४	करेला	९.४
अरहरकी दाल	८.८	खारकी फलियां	५.८
सोयाबीन	११.३	टमाटर	२.४

आमिष	मि.ग्रा.
अण्डा	२.१
मछली	२.३
यकृत (भेड़)	६.३
गोश्त ,,	२.५

नोट : दूधमें लोहेका अंश बहुत कम मात्रामें होता है। अतः शिशुओंको लोहांश संपन्न अन्य पदार्थ भी खिलाने चाहिये।

भोजनमें लोहेका संतुलन रखनेके लिए ऊपर वर्णित खाद्योंमें से, रुचिके अनुसार विवध खाद्य इस्तेमाल करने चाहियें। पोषणकी कमीसे होनेवाली बीमारियोंके बारेमें सदैव जागरूक रहना चाहिये और अपने ज्ञानसे अपने समाजको जागृत करना चाहिये। जब सब व्यक्ति जागृत होंगे तो खुद बखुद, बीमारियोंकी रोकथामके लिए आवश्यक सावधानियाँ बरतने लगेंगे।

('खाद्य विज्ञान'से साभार)

—श्री बालेंदु और रमेश नागर

श्रीखण्ड वड़ी

श्रीखंड वड़ी विशेषकर महाराष्ट्रकी आम प्रचलित मिठाई है। यह ९०% से अधिक ठोस पदार्थसे बनाया हुआ एक पौष्टिक मीठा खाद्य व्यंजन है।

विधि—अच्छी तरह जमाये हुए मीठे दूधके दहीको मलकर एक अच्छे साफ़ महीन कपड़ेसे छानिये ताकि उसका ज्यादासे ज्यादा पानीका अंश निकल जाय। यह दही खट्टा तो हो परन्तु अधिक खट्टा न होना चाहिये। इस छाने दहीको कढ़ाई या तवेपर डालकर आगपर चढ़ाइये और कलछुलसे बराबर चलाते रहिये। दहीको तबतक गरम करते रहिये कि जबतक वह खोवा जैसा गाढ़ा न हो जाय। अब बारीक पिसी शकर छाने दहीके वजनके बराबर मात्रामें लीजिये और दोनोंको अच्छी तरह मिलाइये। यदि वह मिश्रण बहुत सूखा हो तो उसमें उतना पानी डालिये कि वह रोटी बनानेके गून्धे आटेके समान हो जाय। अब उस तैयार पदार्थ को सुन्दर आकर्षक पीला रंग देनेके लिए उसमें प्रति पौंड तैयार पदार्थ १ से १½ ग्रेंसके अनुपातमें केशर मिलाइये। इसे चम्मचभर पानीमें घोलकर तैयार उत्पादमें मिला सकते हैं।

उक्त मिश्रणको तबतक आँचपर रखकर पकाते रहिये कि जब वह एकरस न जाय। तपाते समय उसे लगातार चलाते रहना चाहिये। पश्चात् उसे एक तश्तरीमें फैला दीजिये और चौकोर टुकड़िओंमें काट दीजिये। ठंडा होनेके बाद मोमी कागज या ग्लेसीन पेपरमें लपेटकर हवा बंद डब्बोंमें बहुत दिनों तक रखिये और खाइये।

ऊपर बतायी गयी विधिके अनुसार तैयार श्रीखण्ड वडियाँ बहुत पौष्टिक और स्वादिष्ट होती हैं। उसकी संरचना नीचे दी जाती है।

नमी	६·५	प्रतिशत	प्रोटीन	७·७	प्रतिशत
शकर	७७·८	,,	अम्ल	१·०	,,
चिकनाई	७५	,,	भस्म	०·८	,,

बेसन वड़ी

हमारे देशमें बेसन वड़ी एक मीठे व्यंजनके रूपमें जानी पहचानी वस्तु है। यह चने की दालका आटा जिसे बेसन कहते है, मक्खन, घी या वनस्पति जैसे चिकनाई पदार्थ और बारीक पिसी हुई शकरसे बनायी जाती है। यह बेसन वड़ी पौष्टिक और स्वादिष्ट होती है जिसे खानेसे हमें अपने शरीरके लिए आवश्यक पौष्टिक तत्व जैसे प्रोटीन, कार्बोहाइड्रेट, वसा आदि काफी मात्रामें प्राप्त होते हैं।

विधि—किसी भी चिकनाई पदार्थ जैसे घी, मक्खन या वनस्पतिमें से एकको ६ औंस लीजिये और उसे कढ़ाईमें डालकर गरम कीजिये। उस गरम किये गये चिकनाई पदार्थमें ब्यूटिलेटेड हाइड्रोक्सीनीसोल नामक रसायनिक वस्तुको 100 P. P. M. के अनुपातमें मिलाइये। इस रसायनिक वस्तुको मिलानेसे बेसन वड़ीको बहुत दिनों तक अच्छी तरह रख सकते हैं और उस समय किसी भी प्रकारकी बुरी बास नहीं आती। तत् पश्चात् १० औंस पिसा बेसन उस कढ़ाईमें डालिये और धीरे-धीरे चलाते रहिये कि जिससे वह जल न जाय और उसका

(शेष पृष्ठ १४ पर)

स्ट्रेप्टोमाइसिनके आविष्कारक – डॉ० वेक्समेन

रोगोंके उपचारमें प्रतिजीव भेषजोंका जो योग रहा है, वह औषध विज्ञानके इतिहासमें अत्यन्त महत्वपूर्ण है। पिछले सौ वर्षोंमें संभवतया प्रतिजीव भेषजोंका जो अद्भुत योग रोगोपचारमें तथा मनुष्य जीवनकी रक्षामें रहा है, संभवतया अन्य कोई भी औषधि इनका स्थान नहीं ले सकती है।

प्रतिजीव भेषजोंने मनुष्य जातिमें फैली हुई अनेक व्याधियोंके उपचारमें अद्भुत क्षमताके कारण एक नये युगका आरम्भ किया। यह नया युग पच्चीस वर्ष पूर्व सन् १९४८ में संयुक्त राज्य अमेरिकामें स्ट्रेप्टोमाईसिनके आविष्कारके साथ आरम्भ हुआ। यद्यपि स्ट्रेप्टोमाइसिन का उत्पादन बड़े पैमानेपर कई वर्षों बाद आरम्भ हुआ किन्तु व्याधियोंके नियंत्रणमें इसका प्रभाव बड़ा शीघ्र तथा चमत्कारी था। स्ट्रेप्टोमाइसिनसे जीर्ण व घातक व्याधियोंका उपचार तो संभव हुआ ही, साथ ही जिस प्रविधि द्वारा स्ट्रेप्टोमाइसिनको तैयार किया गया, उससे नयी अनुसंधान प्रविधियों द्वारा कई अतिरिक्त प्रबल प्रतिजीव भेषजोंका आविष्कार हुआ जिनसे मनुष्यको अनेक अन्य व्याधियोंसे छुटकारा दिलाना संभव हुआ।

इन्हीं नयी अनुसंधान प्रविधियोंसे निर्मित अनेक भेषजोंके कारण ही अनेक संक्रामक व्याधियोंको नियंत्रित करना संभव है और यही कारण है कि आज संसारके प्रौद्योगिक संपन्न राष्ट्रोंमें भी संक्रामक रोगोंके कारण मृत्यु संख्या नगण्य है तथा बिकासमान राष्ट्रोंमें भी संक्रामक रोगोंका प्रभाव धीरे-धीरे कम होता चला जा रहा है। प्रतिजीव भेषजोंने संसारमें व्याधियोंके प्रारूपको ही बदल दिया है। यही कारण है कि जन-स्वास्थ्य व जैविक अनुसंधानोंमें जीर्ण व्याधियोंके बारेमें अधिक कार्य किया जा रहा है।

स्ट्रेप्टोमाइसिनका आविष्कार डा० सेलमेन अब्राहम वेक्समेनने किया था। डा० सेलमेनका जन्म सन् १८८८ में रूसमें किएवके पास एक छोटेसे गांवमें हुआ था। २२ वर्षकी उम्रमें ये संयुक्त राज्य अमेरिकामें जाकर वस गये; वहींपर उन्होंने न्यू ब्रून्सविक न्यूजर्सीके रटगर विश्वविद्यालयमें अध्ययनकर बी. एससी. की उपाधी प्राप्त की। तत्पश्चात् केलिफोर्निया विश्व विद्यालयसे पी. एचडी. की उपाधि प्राप्तकर पुनः रटगर विश्व विद्यालय लौट आये तथा वहाँ मृदाअणु जैविकीका अध्यापन कार्य करने लगे।

रटगर विश्व विद्यालयमें अपने अनुसन्धान कार्योंके दौरान दो दृश्योंने इनको मोहितकर डाला। एक दृश्य था कुछ बिलकुल ही भिन्न अणुजीव शांतिपूर्वक साथ-साथ रहते थे। इन अणुजीवोंका सहजीवन कुछ विचित्र ही था जबकि अन्य अणुजीव लगातार वैमनस्यकी परिस्थितिमें रहते थे। डा० वैक्समेनने विचार आरम्भ किया कि ये अणुजीव जो एक दूसरेकी वैमनस्यताके कारण विष उत्पन्नकर एक दूसरेको हानि पहुँचाते हैं, संभवतया ये अणुजीव मनुष्य शरीरमें उत्पन्न करनेवाली अनेक व्याधियोंके अणुजीवोंको नष्ट करनेमें भी सक्षम हों?

वे और उनके सहयोगियोंने सहस्त्रों अणुजीवों व अणुजीवोंके उत्पादोंकी परीक्षा की। उन्होंने देखा कि अनेक अणुजीव पशुओं और मनुष्योंमें व्याधियाँ उत्पन्न करनेवाले अणुजीवोंको अवश्य नष्टकर डालते हैं, किन्तु साथ ही अनुसंधानमें काममें लाये गये पशुको भी ये विषालु बना देते थे।

विलम्बित प्रभाव

एक बार मृदा अणुजीवोंसे उत्पन्न भेषजसे संक्रामण ग्रस्त प्रयोगशालाके पशुओंका उपचार किया गया। पशु जीवित तथा स्वस्थ रहे। ऐसा लगा कि सफलता समीप

ही है किन्तु कुछ दिनों पश्चात् उन्होंने देखा कि इन पशुओंमें प्रबल विषालु प्रभाव उत्पन्न हुआ तथा भेषजके विलम्बित प्रभावसे पशु मर गये। अन्तमें जब यह घोषणा की गयी कि डा० वेक्समेनने 'अद्भुत भेषज' बना ली तो लोग और भी अधिक आश्चर्य चकित रह गये।

मनुष्यकी भयंकर व्याधि क्षयका अबतक कोई उपचार नहीं था। स्ट्रेप्टोमाइसिन क्षयके विरुद्ध अत्यन्त प्रभावशाली सिद्ध हुई। साथ ही वे अनेक संक्रामण व्याधियों, जिनमें पेनिसिलीन प्रभावशाली सिद्ध नहीं हो रही थी उनके विरुद्ध भी स्ट्रेप्टोमाइसिन अत्यन्त उपयोगी सिद्ध हुई।

डा० वेक्सनमेनको चारों ओरसे सम्मान व उपाधियाँ मिलीं। इन्होंने ही सबसे पहले अपने द्वारा आविष्कृत भेषजोंके समूहको ही 'प्रतिजीव' नाम दिया। स्टेप्टोमाइसिनके आविष्कारसे करोड़ों डालर रायल्टी मिल सकती थी, किन्तु इन्होंने दृढ़तापूर्वक इस धनराशिको अस्वीकारकर दिया तथा प्रोफेसरके रूपमें उन्हें जो वेतन मिलता था, उसीसे अपना कार्य चलाते रहे तथा रायल्टीसे आयी हुई धनराशिको भेषज अनुसंधान कार्योंमें खर्च किया। रायल्टीसे प्राप्त धनसे रटगर अणुजैविक संस्थानकी स्थापनाकी गई जिसके डा० वेक्समेन अब भी संचालक है। यहीं इनका कार्यालय तथा प्रयोगशाला है।

कुछ महीने पूर्व डा० वेक्समेनसे जब पूछा गया कि क्या अनेक वर्षोंके प्रयोगों और अनुसन्धानके बाद जब उन्हें स्ट्रेप्टोमाइसिन ढूढ़ निकाली तब आपको निश्चित ही परम आनन्दकी अनुभूति हुई होगी।

वे कहने लगे 'नहीं' मुझे आनन्द तब हुआ जब मैंने स्ट्रेप्टोमाइसिनसे मनुष्योंके जीवनकी रक्षा होते देखी।

सन् १९५२ में नोबेल पुरस्कार प्राप्त करनेके लिए स्टाकहोम यात्राका संस्मरण करते हुए कहने लगे "मैंने अपनी इस यात्राके दौरान विचारा कि नोबेल पुरस्कारसे सम्मानित होना दुनियाका सर्वश्रेष्ठ सम्मान है, किन्तु यह मेरी भूल थी।"

"स्टाकहोममें जिस दिन मुझे नोबेल पुरस्कार मिला उसके दूसरे दिन मेरे होटलके बरामदेमें एक मनुष्य अपनी पाँचवर्षीय पुत्रीके साथ मेरी प्रतीक्षाकर रहा था—लड़कीके हाथमें पाँच लाल रईसके फूलोंका एक गुलदस्ता था। वह पुरुष मुझसे कहने लगे "यह मेरी लड़की इवा है"—पाँच वर्ष पूर्व इसे मस्तिष्क छन्द कोप हो गया था। डाक्टरोंने इसके बचनेकी आशा छोड़ दी थी किन्तु उसी समय आप द्वारा आविष्कृत स्ट्रेप्टोमाइसिन की खबर हमें मिली। स्ट्रेप्टोमाइसिन लाकर हमने इस लड़कीको दी और यह लड़की अब भी जीवित है और तब उस लड़कीने मुझे वह गुलदस्ता दे दिया और कहने लगी कि आपने मुझे बचाया है, तबसे मैं जितने वर्ष जीवित रही हूँ उतने वर्षोंके लिए प्रत्येक वर्षका एक एक पुष्प आपको भेंट करती हूँ" यह नोबल पुरस्कारसे भी अधिक बड़ा पुरस्कार था।

सन् १९६८में स्ट्रेप्टोमाइसिनकी खोजके पच्चीसवें वर्षमें स्ट्रेटोमाइसिन और प्रतिजीव भेषजें जिनकी खोज इसीसे संभव हुई अब भी मानव जीवन रक्षामें लगी हुई हैं और आज पहलेसे भी अधिक मनुष्योंके प्राणोंकी रक्षा कर रही है।

('लोक विज्ञान' से साभार)

नये व्यंजन : [पृष्ठ १२ का शेषांश]

रंग चमकते सुनहरे रंगके समान हो जाय। अब उसमें ७ औंस बारीक पिसी शकरको अच्छी तरह मिलाइये और लगातार चलाते रहिते जब तक कि शकरका पानी न छंट जाय और वह मुलायम न हो जाय। अब आप कढ़ाईको आंचपरसे उतारिये और एक बड़ी चौड़ी तश्तरीमें इस प्रकार फैलाइये कि उसमें उसकी आधे इंचकी मोटी तह जम जाय। फैलानेके बाद उसे ठंडा होने दीजिये। अब आप इसे कतलियोंमें ($1\frac{1}{2}'' \times 1'' \times \frac{1}{2}''$) काटिये। लीजिये यह आपकी बेसन बड़ी तैयार हो गयी।

अब इस बेसन बड़ी की कतलियोंको कागजमें लपेट कर हवा बन्द कांचके जारोंमें रखिये। इस प्रकार तैयार की गयी बेसन बड़ी ६-८ महीनों तक अच्छी तरह रखी जा सकती है।

मधुमेह

—श्री रमेश प्रसाद शर्मा—

चिकित्सा-विज्ञानके अनुसार मानव शरीरका गर्भमें आना; उसका उत्पन्न होना, उसके शरीरका बढ़ना, युवावस्थामें शारीरिक एवं मानसिक परिवर्तन, प्रौढ़ावस्थाकी स्थिति एवं अन्तमें वृद्धावस्था ये सब शरीरमें स्थित कुछ विशेष ग्रंथियों द्वारा बनने वाले हारमोन्सकी समय-समयपर होनेवाली पृथक-पृथक क्रियाओंके परिणाम होते हैं। यदि शरीरकी वृद्धि किसी हारमोनके नियन्त्रणमें है तो युवावस्थामें स्त्री और पुरुषके शारीरिक एवं मानसिक परिवर्तनके कारण कुछ दूसरे ही हारमोन्स होते हैं।

उदरमें पैंक्रियाज नामक एक लम्बी सी ग्रन्थि होती है। इस ग्रन्थिसे इन्सुलीन नामका एक स्राव निकलता है। इस स्राव द्वारा हमारे शरीरमें शक्करका सदुपयोग होता है और उपयोगसे बची हुई शक्कर सुरक्षित रख ली जाती है। वास्तवमें भोजनका शक्कर तत्व शरीरमें ईंधनकी तरह जलता है जिससे शरीरको गर्मी और शक्ति मिलती है। कार्बोहाइड्रेट्स तत्व भी अंततोगत्वा शक्करके ही रूपमें परिवर्तित हो जाते हैं। अनेक कारणोंसे जब पैंक्रियाज ग्रन्थिके इन्सुलीन स्राव करनेवाले कोष निष्क्रिय हो जाते हैं तो शरीरमें शक्करका प्रयोग नहीं हो पाता। तब शक्कर खूनमें घूमने लगती है और पेशाबके साथ बाहर निकलने लगती है। फलतः रोगीको गर्मी और शक्ति नहीं मिलती और वह दुर्बल होता जाता है। इसी रोगका नाम मधुमेह या बहुमूत्र रोग है। इसके विपरीत यदि इन्सुलीनका स्राव अधिक होता है तो हाइपोग्लाइसीमिया नामक रोग हो जाता है। इस रोगका रोगी चिन्ताओंसे ग्रस्त हो जाता है। हाइपोग्लाइसीमिया रोगके व्यक्तियोंके स्वभावमें अचानक परिवर्तन हो जाता है। वे सायंकाल या चिड़चिड़ाहट होनेपर चाय, मीठी चीज आदि खाएं और अपनी डायरीमें ऐसा उल्लेख अवश्य रखें ताकि समय पर उन्हें इसी प्रकारकी चिकित्सा दी जा सके।

रोगका इतिहास

मधुमेह एक प्राचीन रोग है। प्राचीन भारतीय आयुर्वेदाचार्योंने इसे मधुमेह :अर्थात् मधुस्रावका नाम दिया है। इसका पाश्चात्य नाम डायबेटिस मेल्लिटस दो शब्दोंसे बना है, जिसमें डायबेटिसका अर्थ है स्रवित होना या बहना और लैटिनके मेल्लिटस शब्दका अर्थ है मधु। इस प्रकार दोनों शब्दोंका अर्थ मधुमेह ही बन जाता है।

अंग्रेज चिकित्सा शास्त्री विलिसने सन् १९७४ में सबसे पहले यह बतलाया था कि बहुमूत्रसे पीड़ित रोगीका पेशाब साधारण व्यक्तिके पेशाबसे अधिक मीठा होता है, जो कि शरीरकी अव्यवहृत शर्कराके फलस्वरूप होता है लेकिन इस तथ्यका पता १०० वर्ष पश्चात् ही चला। जिस शर्कराका उपयोग शक्ति और कार्यक्षमताके लिए होना चाहिए वह मूत्रके साथ धीरे-धीरे निकल जाती है और रोगीके शरीरकी शक्ति क्षीण होने लगती है।

यह रोग किसीको भी हो सकता है किन्तु कुछ व्यक्तियोंको अपेक्षाकृत इस रोगके होनेकी सम्भावना अधिक होती है। इसके विषयमें निम्नलिखित बातें महत्वपूर्ण हैं।

यह एक महत्वपूर्ण बात है कि यदि किसीके निकट संबंधियोंको मधुमेह रोग है तो उसे रोग लगनेकी सम्भावना अपेक्षाकृत अधिक रहती है। मधुमेहके रोग पति-पत्नीकी सन्तानमें चयापचयकी गड़बड़ी होनेकी आशंका अधिक रहती है।

अत्यधिक भोजन और मोटापा

मधुमेह रोग मोटे शरीरवाले उन व्यक्तियोंको होता है जो आवश्यकतासे अधिक भोजन करते हैं और किसी भी प्रकारका व्यायाम बिलकुल नहीं करते। ऐश्वर्यके

साथ-साथ मधुमेहका प्रकोप भी बढ़ जाता है। दूसरे विश्वयुद्धके पश्चात् इटलीमें मधुमेहके मामलोंकी बहुत अधिक वृद्धि हुई। १९५१-५४ के आर्थिक उन्नतिके चार वर्षोंमें ये मामले तीस प्रतिशत तक पहुंच गये थे। आरामसे बैठकर काम करनेवाले कर्मचारी जो मोटापेके शिकार आसानीसे हो जाते हैं, उनमें यह रोग अपेक्षाकृत अधिक होता है।

किस आयुमें होता है ?

वैसे तो यह रोग चालीस वर्षकी आयुके पश्चात् ही होता है लेकिन बच्चोंमें भी यह रोग पाया जाता है। रोगीकी आयुके अनुसार व्यक्तियोंमें दो प्रकारका मधुमेह देखा गया है।

यह रोग ३५ वर्षकी आयुके पूर्व किसी भी समय हो सकता है। ऐसे रोगियोंके उपचारमें इन्सुलीनके टीके प्रभावशाली होते हैं।

चालीस वर्षकी आयुके पश्चात्, प्रौढ़ व्यक्तियोंको होनेवाला रोग आहार-व्यायाम तथा खायी जानेवाली औषधियोंसे नियन्त्रित किया जा सकता है।

उक्त लिखित विवेचनसे हम कह सकते हैं कि अधिक मीठे पदार्थ खाने व्यायाम बिल्कुल न करने अथवा मानसिक विकारोंसे भी यह रोग हो सकता है। अति महत्वाकांक्षी व्यक्ति भी इस रोगकी चपेटमें आ सकते हैं।

मधुमेहके लक्षण

मधुमेहके सामान्य लक्षण निम्नलिखित है—

(१) अत्यधिक प्यास;
(२) बहुमूत्रता (अत्यधिक पेशाब आना);
(३) अत्यधिक भूख;
(४) वजनकी कमी;
(५) थकान;
(६) अनवरत खुजलाहट, विशेषकर जननेन्द्रिय पर;
(७) नेत्र ज्योतिमें तेजीसे गिरावट;
(८) शरीरमें पीड़ा एवं कष्ट;
(९) फोड़े और अन्य संक्रमण; तथा
(१०) युवावस्थामें आलस्य।

इनमेंसे केवल दो या तीन लक्षणोंके होनेपर तथा सामान्य परीक्षणसे ही मधुमेहका पता आसानीसे चल सकता है।

इस रोगमें रुधिरवाहिकाएं कठोर हो जाती हैं जो शरीरके किसी भी अंशमें हो सकती हैं। इस रोगके कारण हृदय या मस्तिष्कको रक्त पहुँचानेवाली वाहिकाओंके रुक जानेका खतरा भी रहता है। मोटे तौरपर इसे हृदय गतिमें गड़बड़ तथा पक्षाघात भी कहते हैं।

रक्त स्थित शर्कराकी मात्राका मानव स्वभावपर सीधा प्रभाव पड़ता है। रक्तके अन्दर इसकी अधिकता अथवा अभाव दोनो ही मानव शरीरके लिए अहितकर हैं। किसी कारणवश जब इसकी मात्रा रक्तके अन्दर कम हो जाती है तो इसका दुष्परिणाम सर्वप्रथम मस्तिष्कीय कोष्ठोंपर पड़ता है। ऐसा देखा गया है कि मस्तिष्कीय कोष्ठोंकी क्रियाको मिलनेवाली शक्तिका मूल स्रोत ग्लूकोज होता है। इस शक्तिको प्राप्त करनेके लिए ये कोष्ठ वसा एवं प्रोटीनका प्रयोग कम करते हैं। मिलनेवाली समूची शक्ति ग्लूकोजके जलनेसे प्राप्त होती है। अतः यदि रक्त स्थित ग्लूकोजकी मात्रा सामान्य से कम हो जाए तो इन कोष्ठोंकी सामान्य क्रियाओंमें बाधा पड़ जाती है। हमारे शरीरके लगभग सभी कार्योंका नियन्त्रण मस्तिष्क द्वारा ही होता है इस स्थितिमें कोष्ठोंके कार्यकी कमीका प्रभाव शरीरके सभी भागोंपर पड़ता है। यदि रुधिरस्थ शर्कराका अभाव शरीरमें अधिक समय तक रहे तो इन कोष्ठोंकी रचना भी बदल सकती है।

क्रियाशील हाइपोग्लाइसीमियामें पैन्क्रियाज (पाचक ग्रन्थि) में कोई भी परिवर्तन नहीं होता है। फिर भी किन्हीं कारणोंसे पैन्क्रियाजसे इंन्सुलीनकी मात्रा अधिक बनती है। जब इन्सुलीन अधिक मात्रामें बनती है तो रक्त स्थित शर्करा भी कम हो जाती है। प्रायः ऐसेमें कोष्ठ वसा एवं प्रोटीनका प्रयोग कम करते हैं। इनको मिलनेवाली सम्पूर्ण शक्ति ग्लूकोजके जलनेसे ही प्राप्त होती है। अतः यदि रक्त स्थित ग्लूकोजकी मात्रा कम

हो जाय तो देखा गया है कि इस रोगके कारण आंखोंमें मोतियाबिन्दका जल्दी बनना तथा आंखके भीतर अन्य रोगोंकी उत्पत्ति भी हो सकती है। इसके कारण शिरा रोग भी हो सकता है, जिससे अंग सुन्न हो जाने तथा पैरोंमें जलनका अनुभव होता है। मधुमेहके रोगियोंमें नपुंसकता तो आमतौरपर पायी जाती है। इस रोगमें गुर्दोंको भी हानि हो सकती है। इसके रोगियोंको मूत्रमार्गमें संक्रमण, पीठके फोड़े तथा क्षय रोगके संक्रमण की सम्भावना बनी रहती है।

मधुमेहका पता लगानेके लिए भर पेट भोजन करनेके दो घण्टे पश्चात् मूत्रका परीक्षण एक उपयोगी और सरल विधि है। खूब पेट भर भोजन करनेके उपरान्त रक्त शक्कर परीक्षणके द्वारा मधुमेहका पता लगानेमें सहायता मिलती है। मामूली किस्मके मधुमेह रोगमें १०० ग्राम ग्लूकोज देने या चार जलेबी खिलानेसे ऊंची रक्त शक्कर प्रकट हो सकती है। इस परीक्षणको जलेबी परीक्षण कहते हैं, इस परीक्षणसे रोगका पता लगाना आसान रहता है।

वंशानुगत रोग और विवाह

मधुमेह छूतका रोग तो नहीं है, परन्तु वंशानुगत अवश्य है। शिशु इससे सर्वथा मुक्त तो नहीं होता किन्तु इस रोगसे बहुत कम पीड़ित होता है। इस रोगके वंशानुगत होनेके कारण यह प्रश्न उठाया जा सकता है कि मधुमेहके रोगीको विवाह करना चाहिए या नहीं। यदि पति-पत्नी दोनों ही इस रोगसे पीड़ित हों तो उनकी संतानोंको भी जीवनमें इस रोगसे आक्रान्त होनेकी सम्भावना बनी रहती है। फिर पति-पत्नी रोगमुक्त हों पर उनके पूर्वजोंमें यदि किसीको यह रोग रहा हो तो उस दशामें उनकी चार सन्तानोंमें से एकको यह रोग पकड़ सकता है। यदि पति-पत्नीमें से किसी एकको यह रोग हो और उन दोनोंके वंशमें पहले किसीको यह रोग न हुआ हो तो उनकी रोगसे पूर्व हुई सन्तानोंको यह रोग होनेकी कोई विशेष आशंका नहीं रहती। पर विवाहसे पहले यदि किसीको यह रोग हो जाय और आवश्यक चिकित्सा तथा सतर्कता बरतनेपर भी उसका पेशाब स्थायी रूपसे शर्करा मुक्त न हो सके तो उसे विवाह करनेसे पहले यह निश्चित रूपसे समझ लेना चाहिए कि उसकी आयु लम्बी नहीं हो सकती और उसका यह रोग उसकी सन्तानोंमें संचारित हो सकता है। इस रोगसे पीड़ित किसी स्त्रीको यह विशेष रूपसे याद रखना चाहिए कि प्रभावसे समय उसकी जीवन-हानिकी आशंका अन्य स्त्रियोंको अपेक्षा बहुत अधिक है।

नियमित जीवनका महत्व

मधुमेहके रोगीके लिए कुछ नियमोंका पालन करना अत्यावश्यक है। उनके लिए रातको ८-१० घण्टे सोना बहुत जरूरी है और दोपहरको भोजनके पश्चात् भी थोड़ा विश्राम आवश्यक है। खुली हवा और सूरजकी रोशनी उनके लिए जरूरी है परन्तु सूर्यकी तीखी किरणें उनकी त्वचापर सीधी नहीं पड़नी चाहिए क्योंकि उनकी कमजोर चमड़ीमें प्रतिरोध-शक्ति बहुत कम होती है।

मधुमेहके रोगीके लिए धूम्रपान निषिद्ध तो नहीं है किन्तु अधिक धूम्रपानसे रक्त-संचालन प्रक्रियामें गड़बड़ी होनेकी सम्भावना रहती है। यह उनके लिए अत्यन्त हानिकारक सिद्ध हो सकती है। रोगीको डेंटिस्ट, डाक्टर नाई आदिको अपने रोगकी बात अवश्य बतला देनी चाहिए। बहुधा स्त्री-पुरुष दोनोंकी यौन-क्षमता कम हो जाती है। रोग-प्रतिरोध शक्ति इतनी कम हो जाती है कि रोगी किसी भी रोगका कभी भी शिकार हो सकता है। अतः जीवनमें बहुत ही सूझ-बूझ और समयकी आवश्यकता है।

शरीरकी खुजलाहटसे बचने और चमड़ीको मुलायम रखनेके लिए रोगीको क्रीमका प्रयोग करना चाहिए तथा कोई भी क्षार युक्त साबुन नहीं लगाना चाहिए। रोगीकी सूखी चमड़ीमेंसे बड़ी आसानीसे संक्रामक रोगके जीवाणु उसके शरीरमें पहुँच सकते हैं। पैरमें जख्म न हो जाए या गड्ढे न पड़ें, इसलिए इसके रोगीको हमेशा नरम और सुरक्षित जूते पहनने चाहिए। छोटे-छोटे घावोंमें भी आयोडीन या कास्टिक जैसी कोई चीज नहीं लगानी चाहिए।

इस रोगसे शरीरके विभिन्न स्थानोंमें खाज न होनेपर भी खुजली होती है और कुछ समय पश्चात् उस स्थानपर एक्जिमा हो जाता है। कभी-कभी रोगीको जैनथोमा नामक चर्म रोग, जिससे शरीरपर जगह-जगह पीले दाग पड़ जाते हैं, हो जाता है।

मामूली-सी चोट या खरोंच लगनेसे इस रोगके रोगीको ऐसे घाव हो जाते हैं जो अच्छे होनेका नाम नहीं लेते।

क्या खाएं और कितना खाएं ?

इन्सुलीनका आविष्कार न होने तक इस रोगकी चिकित्सा भोजनके नियन्त्रण द्वारा ही की जाती थी। रोगीको कार्बोहाइड्रेट्स वर्जित खाद्य देकर शर्करामुक्त करनेकी चेष्टा की जाती थी। इसपर भी बहुतोंके शरीरमें शर्कराकी मात्राके आधिक्यमें कभी नहीं आती थी। चिकित्साशास्त्रियोंने पता लगाया कि शरीर प्रोटीनसे भी शर्करा संग्रह कर सकता है, अतः परीक्षण किये गये और मधुमेहके रोगियोंको प्रोटीन ग्रहण करनेके लिए कहा गया किन्तु फिर भी रोगीको शर्करामुक्त नहीं किया जा सका। तब उन्होंने निर्णय लिया कि चिकनाई-वाले पदार्थ, कैलोरी, शरीरका वजन आदि भी मधुमेहमें सहायक हैं। अतः आवश्यक हैं कि मधुमेहका रोगी दीर्घकाल तक आहारके अनुशासनको माने और नियमोंका बड़े धैर्यके साथ पालन करे।

मधुमेहके रोगीको उम्र, कदके अनुसार शरीरका जो स्वाभाविक भार होता है, उससे वह अपने भारको कम रखनेकी चेष्टा करता रहे। रोगकी जानकारीके उपरान्त उसे चिकित्सकके निर्देशानुसार बिल्कुल नाप तौल कर भोजन करना चाहिए।

पेशाबको पूर्ण रूपसे शर्करामुक्त करनेके लिए सबसे पहले रोगीको लगभग १५० ग्राम ऐसी शाक-सब्जी लेनी चाहिए जिसमें पांच शतांशसे अधिक कार्बोहाइड्रेट न रहे। शलजम, पालक, फूलगोभी, टमाटर, पातगोभी, बैंगन, मूली आदिका प्रयोग रोगकी प्रथम अवस्थामें किया जा सकता है। इनमें पौष्टिक तत्व कम होनेपर भी भूख मिटानेके लिए इन्हें एक मिक़दारमें लिया जा सकता है और इनकी १५० या १०० ग्रामकी मात्रामें शर्कराकी मात्रा केवल पांच ग्राम रहती है। इस खाद्य व्यवस्थाके उपरान्त रोगीका पेशाब जब शर्करा मुक्त हो जाय तब उसके भोजनमें कार्बोहाइड्रेटकी मात्रा पांचसे बीस ग्राम तक बढ़ाई जा सकती है। खाद्यमें किसी नयी वस्तुके संयोजनके पश्चात् रोगीको एक बार अपने पेशाबकी जांच अवश्य ही करा लेनी चाहिए। अगर देखा जाय कि एकाएक चीनीकी मात्रा बढ़ गयी है तो उस नयी वस्तुको तत्काल छोड़ देना चाहिए। ऐसी दशामें आवश्यकतानुसार रोगीको उपवास भी कराया जा सकता है जिससे उसका पेशाब पहलेकी तरह पुनः शर्करामुक्त हो सके।

इसके रोगीको चीनी, आलू, चावल आदिका सेवन बिल्कुल बन्दकर देना चाहिए। उबली हुई सब्जियां, दूध, पनीर आदि इस रोगमें लाभप्रद हैं। मांसाहारीके लिए उबला हुआ मांस अच्छा रहता है।

आयुर्वेदिक चिकित्सामें तुलसी, बेलपत्र, नीम और गुड़मार इनकी पांच-पांच पत्तियोंको बारीक पीसकर गोलियां बनाकर प्रतिदिन प्रातःकाल पानीके साथ सेवन करते हैं। विजयसारकी लकड़ी एक तोलाको प्रातःकाल दो कप पानीमें भिगोकर और रात्रिको उसका काढ़ा बनाकर जब आधा कप रह जाए तो छानकर चन्द्रप्रभा वटीकी एक गोलीके साथ पिलाते हैं। त्रिबंग भस्म दो रत्तीकी मात्रामें प्रातःकाल दूधकी मलाईके साथ सेवन करते हैं। सुदर्शन चूर्ण और मंजिष्ठादि चूर्ण मिलाकर तीन ग्रामकी मात्रामें दिनमें दो बार देते हैं। इन औषधियोंको तीन माह तक प्रयोग करनेके पश्चात् परीक्षा कराते हैं।

आधुनिक चिकित्साकी प्रभावशाली औषधि इन्सुलीन है, जिसका अनुसंधान आजसे ५० वर्ष पूर्व ७ अप्रैल, १९२१ को कनाडाके दो डाक्टरों बैंटिग और बेस्टने किया था। इस औषधिसे मधुमेहके रोगियोंको भारी राहत मिली है।

आधुनिक चिकित्सा पद्धतिके अनुसार रोगीको कृत्रिम इन्सुलीनके इंजेक्शन दिये जाते हैं। फलतः शरीर की शर्कराके मुक्त भागका उपयोग होने लगता है और

रोगीकी दशामें कुछ सुधार दिखाई देता है। परन्तु इन्सुलीनके इंजेंक्शन पैन्क्रियाजके (पाचक ग्रन्थिके) प्राकृतिक इन्सुलीन स्राव करनेवाले कोषोंको पुनः सक्रिय या जीवित नहीं कर पाते। कुछ समय पश्चात् कृत्रिम इंजेक्शन अपना प्रभाव खोने लगते हैं और रोगीकी दशा दिन प्रति दिन बिगड़ती जाती है।

खानेकी रेस्टीनोनकी गोलियाँ भी लाभप्रद हैं लेकिन बिना डाक्टरकी सलाहके कोई भी इंजेक्शन या औषधि नहीं लेनी चाहिए।

अनजानेमें कभी-कभी मधुमेहका रोगी इन्सुलीनकी अधिक मात्रा प्रयोगकर जाता है तो उसे हाइपोग्लाईसीमियाँ हो जाता है। जो रोगी इन्सुलीनके टीके स्वयं लगाते हैं उन्हें निम्नलिखित बातोंका ध्यान रखना चाहिये—

(१) इन्सुलीनकी उतनी ही मात्राका प्रयोग करें, जितनी डाक्टरने बतलाई है।

(२) टीकेका स्थान बदलते रहें अन्यथा टीकेका स्थान पक सकता है।

(३) टीका लगाने वाली सिरिंज कृमिरहित (स्टेराइल) अवश्यकर लेनी चाहिए।

(४) इन्सुलीनके टीके तथा भोजनका समय निश्चित रखना चाहिए। इस विषयमें जो लापरवाही करते हैं, उनको हाइपोग्लासीमियाके दौरे पड़ सकते हैं।

योगासनोंकी पद्धतिसे जो आसन रोगियोंको कराये जाते हैं, उनसे पैन्क्रियाजके विभिन्न कोषोंमें पुनः हरकत पैदा होती है। वहाँ रक्तका संचार बढ़ता है और धीरे-धीरे वे निष्क्रिय कोष क्रियाशील होकर फिर स्वाभाविक इन्सुलीन स्राव करने लगते हैं। इन आसनोंमें पाद हस्तासन, पश्चिमोतानासन, पवन मुक्तासन, भुजंगासन, शलभासन और धनुरासन उल्लेखनीय हैं। योगासनोंके साथ-साथ भोजनका भी परहेज रखें। आवश्यकता होने पर प्राणायाम और प्राकृतिक स्नानों जैसे कटि स्नानका भी सहारा लिया जाता है। इन स्नानों तथा योगासनोंसे अधिक और शीघ्र काम होता है।

सम्पूर्ण भारतमें मधुमेहके रोगियोंकी संख्याका सही-सही अनुमान करना कठिन है। मोटे तौरपर यह अनुमान लगाया गया है कि शहरी जनसंख्याका १.५ से २ प्रतिशत तक तथा ग्रामीण जनसंख्याका ०.५ प्रतिशत इस रोगसे पीड़ित हैं।

दिल्ली शहरमें सम्भवतः मधुमेहके रोगियोंकी संख्या ६०,००० है और लगभग इतनी ही संख्या उन व्यक्तियोंकी है जिनमें इसकी सम्भावना वाला वह व्यक्ति होता है जो समय बीतनेपर या वंश परम्परागत संक्रमणके कारण रोगी बन जाता है।

इस रोगके संबंधमें इतनी जानकारी होनेपर भी अभीतक मधुमेहको पूरी तरहसे ठीक नहीं किया जा सका है। लेकिन भविष्यमें हो सकता है कि कोई ऐसी औषधि निकल आये और इस रोगकी पूर्ण रोकथाम हो सके।

मोटा आदमी व्यायाम करके और भोजनका नियंत्रण करके इस रोगके दवा सकता है। इसके बावजूद यदि रोगके लक्षण और रुधिरमें शर्कराकी ऊँची मात्रा बनी रहती है तो आजकी वर्तमान चिकित्सासे भी इस रोगपर नियंत्रण किया जा सकता है।

यद्यपि योगासन इस रोगके लिए सर्वोत्तम हैं फिर भी जीवनका ढाँचा ऐसा बनाया जाय कि यह रोग पास न फटकने पाये। प्रतिदिन हलका व्यायाम कीजिए, सादा भोजन कीजिए, जिसमें हरी सब्जियों और फलोंकी मात्रा अधिक हो। चीनी कम खाइए। यदि आपका वजन पहलेसे ही ज्यादा हो तो चीनी बिल्कुल बन्द कर देनी चाहिए और वजनको कम करनेका प्रयत्न करना चाहिए

मधुमेहके रोगीको नियमित जीवन व्यतीत करके इस तथ्यसे भी प्रेरणा लेनी चाहिए कि विश्वभरके लाखों रोगी चिकित्सा, भोजन, अनुशासन तथा व्यायामके फलस्वरूप सामान्य रूपसे स्वस्थ जीवन व्यतीत कर रहे हैं।

धरतीके मोती : मूंगफलीके दाने

सागरके मोती मँहगे होते हैं और खाये नहीं जा सकते, मगर धरतीके मोती सस्ते होते हैं और खानेके काम आते हैं। ये मोती हैं मूँगफलीके खूबसूरत दाने। इन दानोंसे एक-दो नहीं दर्जनों पौष्टिक खाद्य बनाये जा सकते हैं, अतः यह खाद्य साधन हमारे लिए वरदान है। हमारे देशमें सब देशोंसे ज्यादा मूंगफली पैदा होती है, लेकिन हम इसका पूरा फ़ायदा नहीं उठा रहे हैं। नये तरीकोंसे इसका सही उपयोग करके लाखों-करोड़ों देशवासियोंका भोजन पुष्टिकर बनाया जा सकता है। नन्हें-मुन्ने शिशुओं व बालकों तकके लिए सस्ते प्रोटीनवाले खाद्य-पदार्थ तैयार किये जा सकते हैं। इस तरह खानेकी कमी पूरी करनेमें मदद मिलेगी, स्वास्थ्य उन्नत होगा और राष्ट्रकी आमदनी बढ़ेगी, अर्थात् हमें नयी दिशामें नये विकासकी नयी-नयी बातें सुखी और समृद्ध करेंगी।

आइये, सबसे पहले मूँगफलीकी रासायनिक रचनापर विचार करते हैं। मोटेतौरपर कह सकते हैं कि मूँगफलीमें तेल और प्रोटीनकी अधिक मात्रा होती है इनके अलावा नमी, खनिज, कार्बोहाइड्रेट, तथा कुछ विटामिन होते हैं; सबकी अलग-अलग मात्रा आगे तालिकामें देखिये।

मूँगफलीकी रासायनिक रचना

नमी	७.९ %
प्रोटीन	२६.७ ,,
चिकनाई	४०.१ ,,
कार्बोहाइड्रेट	२०.३ ,,
खनिज पदार्थ	१.९ ,,
रेशा	३.१ ,,
कैल्शियम	०.०५ ,,
फासफोरस	०.३९ ,,
लोहा	१.६ मि.ग्रा. ,,
कैलोरी	५४९ प्रति १०० ग्राम
कैरोटिन (विटामिन 'ए' की अ. इ. प्रति १०० ग्राम)	६३
विटामिन बी^{1}	०.९ मि.ग्रा. %
निकोटिनिक एसिड	१४.१ ,,
रिबोफ्लेविन	०.१३ ,,

आजकल मूँगफली ऐसे ही खानेके काम आती है, या मिठाई आदिमें इस्तेमाल की जाती है; किन्तु मुख्य रूपसे खानेके तेलका साधन है। मूँगफलीका तेल आम तौरपर कोल्हूसे निकाला जाता है। गाँवोंमें चैक्कू या घानीके तेल-उद्योगोंका विस्तार हो रहा है। कारखानोंमें बड़े कोल्हुओं से तेल निकाला जाता है। खानेके इस्तेमालके लिए यह तेल यथाविधि साफ (परिशोधित) कर लिया जाता है। साफ तेल बहुत बड़े पैमानेपर तैयार करके वनस्पति घी बनानेके काम आ रहा है। बिना साफ किया हुआ तेल साबुन, ग्लिसरीन आदि बनानेमें इस्तेमाल होता है; इसके अलावा खनिज तेलोंके साथ मिलाकर ओंगनके रूपमें, या ऐसे ही जलानेके काम आता है।

आम तौरपर, तेल निकालनेके बाद बची हुई खली पशुओंको खिलाई जाती है अथवा खादका काम देती है। लेकिन मूँगफलीकी गिरियोंको अच्छी तरह साफ करके, लाल छिलका उतारकर, छांटकर तेल निकाला जाये तो शुद्ध खली प्राप्त होती है जो मानव-खाद्यके लिए निःसन्देह उपयुक्त होती है। इस तरह तैयार की हुई शुद्ध खली पीसकर मूँगफलीका आटा बन जाता है, इस आटेमें चिकनाई कम, पचास प्रतिशतसे ज्यादा प्रोटीन, बी समूहके विटामिन और खनिज, खासकर कैल्शियम और फासफोरस होते है। हमारे भोजनके लिए उपयुक्त कम चिकनाईवाले मूँगफलीके आटेकी रासायनिक रचना इस प्रकार है—

खानेके लिए उपयुक्त मूँगफलीके आटेकी रासायनिक रचना

नमी	११ %
प्रोटीन	५२.७ ,,
चिकनाई	७.१ ,,
राख	४.६ ,,
कैल्शियम	०.०७ ,,
फासफोरस	०.५ ,,
विटामिन बी^{1}	०.९५ मि.ग्रा. %
विटामिन बी^{2}	०.२५ ,,
निकोटिनिक अम्ल	१९.५ ,,

मूँगफलीके इस आटेसे अनेक पौष्टिक और स्वास्थ्य-वर्द्धक रुचिकर खाद्य पदार्थ तैयार करनेके विधायन केन्द्रीय खाद्य प्रौद्योगिक अनुसंधानशाला, मैसूरमें विकसित किये गये हैं। मुख्य-मुख्य खाद्य-पदार्थोंका संक्षिप्त परिचय यहाँ प्रस्तुत है।

(१) भारतीय बहुप्रयोजनीय खाद्य

हमारे देशके ज्यादातर नागरिक रोजाना जो खुराक खाते हैं उसमें प्रोटीन, विटामिन और खनिजों की बहुत कमी रहती है। नतीजा यह होता है कि देशवासी, खासकर कम आमदनीवाले लोग प्रोटीनकी कमीका शिकार रहते हैं या दूसरे अल्पतारोगोंसे दुःखी होकर अपना स्वास्थ्य खो बैठते हैं। इसलिये यह जरूरी समझा गया कि कोई ऐसा पौष्टिक खाद्य बनाया जाये जो सस्ता हो और जिसे रोजाना खानेमें आसानीसे शामिल किया जा सके। इस अनुसंधानशालामें ऐसा ही खाद्य जिसे बहुप्रयोजनीय खाद्य कहते हैं, तैयार किया है। यह खाद्य एक विशेष विधायनसे तैयार होता है। इसमें ७५% मूँगफलीका कम तेलवाला आटा और २५% चनेकी दालका आटा मिलाते हैं; यह मिश्रण विटामिन 'ए', बी, डी, खनिज (खासकर कैल्शियम) व रिबोफ्लेविनसे पुष्ट किया जाता है।

बहुप्रयोजनीय खाद्यकी रासायनिक रचना

(प्रति १०० ग्राम)

नमी	६.८ ग्राम
प्रोटीन	४१.८ ,,
चिकनाई	८.५ ,,
राख	७.० ,,
कार्बोहाइड्रेट	३५.८ मि.ग्रा.
खनिज	
कैल्शियम	०.६६५ ग्राम
फासफोरस	०.८२० ,,
लोहा	५.१ मि.ग्रा.
विटामिन	
थायामीन	१.३ मि.ग्रा.
निकोटिनिक एसिड	१४.० ,,
रिबोफ्लेविन	३.० ,,
विटामिन 'ए'	३००० अन्तरराष्ट्रीय इकाई
विटामिन 'डी'	३०० ,,

दो औंस (५६.४ ग्राम) बहुप्रयोजनीय खाद्यकी लागत सिर्फ ८ न० पै० होती है। हरेक बालिगको दो औंस और बच्चेको एक औंस बहुप्रयोजनीय खाद्यसे इतने प्रोटीन, विटामिन व खनिज मिलते हैं जिससे शरीरके लिए रोजानाकी जरूरतका एक तिहाई हिस्सा पूरा हो जाता है। यूँ तो दालोंमें प्रोटीन काफी होते हैं, मगर ब० प्र० खा० में दालोंकी अपेक्षा दुगुने प्रोटीन, ४-६ गुना कैल्शियम, थायामीन व निकोटिनिक अम्ल होता है। दालोंमें विटामिन ए, डी और रिबोफ्लेविन (बी^{2}) की कमी होती है. मगर इस खाद्यमें इन सब पौष्टिक तत्त्वोंकी काफी मात्रा रहती है।

बहुप्रयोजनीय खाद्य तीन किस्मका होता है: १. सादा २. मसालेदार ३. जिसमें ८० प्रतिशत सादा बहुप्रयोजनीय खाद्य और २० प्रतिशत मथित दूधका पाउडर मिला रहता है। सादा खाद्य मीठे व्यंजनोंके लिए, मसालेदार खाद्य हर तरहके नमकीन व्यंजनोंके लिए है और तीसरी किस्मका खाद्य सिर्फ उन मरीजोंके लिए जिन्हें प्रोटीनकी कमीके कारण शारीरिक दुर्बलताका रोग हो। यह जल्दी हज्म होनेवाला स्वादिष्ट खाद्य पदार्थ है। हम अपने घरोंमें सामान्य रूपसे जो प्रचलित भोजन खाते हैं, उन्हीं व्यंजनोंमें कोई परिवर्तन किये बिना, यह खाद्य आसानीसे मिलाया जा सकता है। इस तरह

हमारी खुराक ज्यादा पौष्टिक और स्वास्थ्यवर्द्धक बन जाती है। इस सस्ते और पौष्टिक खाद्यको बड़े पैमानेपर तैयार करनेकी सख्त जरूरत है ताकि सभी देशवासियोंको यह आसानीसे मिल सके।

इस अनुसंधानशालामें छोटासा उत्पादन विभाग है जहाँ प्रतिदिन आधा टन ब. प्र. खा. तैयार होता है। कोयम्बटूरमें एक व्यक्तिगत संस्थाने दो-तीन टन खाद्य रोजाना तैयार करनेवाला कारखाना इस अनुसंधाशालाके सहयोगसे चालू किया है।

मैसूर और मद्रास प्रदेशोंमें स्कूलके बच्चोंके खानेमें ब. प्र. खा. शामिल करके कुछ परीक्षण किये गये, यही निष्कर्ष निकला कि वृद्धि व उत्तम स्वास्थ्यके लिए यह खाद्य बहुत लाभदायक है। 'मील्स फार मिलियन्स एसोसिएशन आफ इण्डिया' काफी ब. प्र. खा. बाँट रही है और विदेशोंकी सेवा-संस्थाओंके लिए भी भेजा जा रहा है।

केन्द्रीय खाद्य प्रौद्योगिक अनुसंधानशाला, मैसूरसे यह खाद्य मंगाया जा सकता है। मालगाड़ीसे भेजनेपर इसकी कीमत केवल रु. १.६६ न. पै. प्रति किलोग्राम पड़ती है। सवारीगाड़ीसे मँगानेवालोंको किराये खर्चका फर्क और देना पड़ता है। २२५ कि. ग्रा. या इससे ज्यादा, ब. प्र. खा. की कीमत, मैसूरमें खाद्य लेनेपर, रु. १.३४ प्रति किलो है। रेलभाड़ा आदि खरीदारोंको ही देना होता है। अधिक जानकारी निदेशक, के. खा. प्रौ. अनुसंधानशाला, मैसूरसे प्राप्तकी जा सकती है।

(२) सस्ता माल्ट फूड (यव्य खाद्य)

एक तो देशमें दूधकी कमी, दूसरे कीमत ज्यादा, नतीजा यह होता है कि माँका दूध छोड़नेके बाद शिशुओंको पकाये हुए खाद्यान्न, दलिया आदि खिलाये जाते हैं जिनमें प्रोटीन, विटामिन और खनिज बहुत कम होते हैं। इस कठिनाईको दूर करनेके लिए सस्ता माल्ट फूट (यव्य खाद्य) बनानेकी विधि निकाली गयी है। इस खाद्यमें अनाजोंके माल्ट (यव्य), कम तेलवाला मूँगफलीका आटा, मथित दूधका पाउडर आदि मिलाये जाते हैं। इसमें सभी सस्ते पदार्थ इस्तेमाल किये जाते हैं और विधायनमें भी ज्यादा खर्च नहीं होता। इसलिये यह सबको हासिल हो सकता है। शिशुओंके स्वास्थ्य और उनकी वृद्धिके लिए यह बहुत फायदेमन्द है क्योंकि इससे उन्हें काफी प्रोटीन, विटामिन और खनिज मिलते हैं जो उनके लिए बहुत जरूरी हैं।

(३) पौष्टिक आटा

गेहूँका आटा ७५ भाग, टैपियोका आटा १७ भाग और मूँगफलीका आटा ८ भाग मिलाकर 'पौष्टिक आटा' तैयार किया जा सकता है। इस आटेसे चपाती, पूरी आदि सभी व्यंजन बन सकते हैं अर्थात् यह आटा गेहूँके आटेकी तरह प्रयोगमें लाया जा सकता है। गेहूँ खानेवाले नागरिक इसे चावसे खाते हैं। खालिस गेहूँके आटेके बजाय यह मिश्रण यानी 'पौष्टिक आटा' इस्तेमाल करनेपर २५ प्रतिशत अधिक लोगोंको खाद्य मिल सकता है। इस तरह खाद्य-समस्या हल करनेमें बहुत मदद मिल सकती है।

(४) 'मैसूर आटा'

'मैसूर-आटा' भी एक मिश्रित आटेका नाम है। इसमें ७५ प्रतिशत टैपियोकाका आटा और २५ प्रतिशत मूँगफलीका आटा मिलाया जाता है। इसमें १३.८ प्रोटीन तथा कैल्शियम और फासफोरस काफी होते हैं। 'मैसूर आटे'से चपाती, मांडी, मुड्ढे आदि बनाये जा सकते हैं।

(५) टैपियोका मैकरोनी

टैपियोका, शक्करकन्दकी तरहका एक कन्द होता है, केरल प्रदेशमें इसकी पैदावार बहुत है। इस अनुसंधानशालामें कम तेलवाला मूँगफलीका आटा, गेहूँकी सूजी और टैपियोकाका आटा मिलाकर मैकरोनी बनाई जाती है। मैकरोनी ऐसे खाद्यान्नको कहते हैं जिसका निर्माण वैज्ञानिक रीतिसे किया गया हो और जिसमें गेहूँकी सूजी और अन्य आटोंका मिश्रण हो। यहां टैपियोकाका आटा गेहूँकी सूजी और मूँगफलीका कम चिकनाई वाला आटा क्रमशः ६०:२५:१५ मिलाकर टैपियोका मैकरोनी बनायी जाती है।

ये तीनों रचक मिलाकर उबलते पानीमें मशीन द्वारा आटा गूंथा जाता है। फिर गुन्था हुआ आटा साँचे लगी हुई मशीनमें भेजा जाता है जहाँ कई तरहकी शक्लोंमें मैकरोनी बन सकती है। जैसे घरोंमें सेंवई बनाई जाती है कुछ-कुछ वैसा ही इस प्रेसका काम है। सेंवई केवल लम्बे डोरोंकी शक्लमें होती है, मगर मैकरोनी, चावल, नलिका शंख, छल्ले आदि अनेक आकारोंमें बनायी जाती है। पुष्टिकर मैकरोनी उत्पाद बहुत रुचिकर होते हैं। आशा है कि इन खाद्योंको सब लोग पसन्द करने लगेंगे और देशमें इनका काफी प्रचलन हो जायेगा।

शक्तिदायक मैकरोनी

गेहूँकी सूजी ८०°/॰, और मूंगफलीका आटा २०°/॰ मिलाकर मिश्रणको कैल्शियम व विटामिनोंसे पुष्ट करके शक्तिदायक मैकरोनी बनायी जाती है।

(६) न्यूट्रो बिस्कुट

बाजारमें आम तौरपर जो बिस्कुट मिलते हैं, उनमें सिर्फ़ ५-६ प्रतिशत प्रोटीन होते हैं। मगर इस अनुसंधानशालामें ऐसी किस्मके मीठे बिस्कुट बनानेका तरीका निकाला गया है जिनमें १५-१६°/॰ प्रोटीन, कैल्शियम और विटामिन ए, बी$_1$, बी$_2$, डी व निकोटिनिक अम्ल, होते हैं। मूंगफलीके आटेमें ४० प्रतिशत तक गेहूँका आटा मिलाकर न्यूट्रो बिस्कुट बनानेमें इस्तेमाल किया जाता है।

वनस्पति दही

हमारे देशमें दूधका उत्पादन बहुत कम है। हरेक व्यक्तिके हिस्सेमें औसतन ५.४ औंस दूध आता है जबकि कमसे कम १० औंस दूध रोजाना मिलना चाहिये। इस बातको ध्यानमें रखते हुए मूंगफलीसे दूध तैयार करनेकी विधि निकाली गयी है। इस दूधमें लगभग वे सभी गुण होते हैं जो गायके दूधमें पाये जाते हैं। इस वनस्पति दूधसे उम्दा दही तैयार होता है।

बनानेकी विधि

मूंगफलीकी गिरीको साफ करके भूनते हैं। भूननेके बाद लाल छिलका, सड़ीगली गिरियाँ और नन्हीं किनकी अलग कर दी जाती है। एक मशीनसे साफ गिरीकी पतली लुगदी बना ली जाती है। इस लुगदीमेंसे बीस प्रतिशत तेल निकाल देते हैं। अब लुगदीमें सात गुना पानी मिलाकर दूध बनाया जाता है; दूध कपड़ेसे छानते हैं ताकि मोटे कण अलग हो जायें। छना हुआ दूध भापसे उबाल जाता है और उसमें ३५-४० मिनट तक भाप बुलबुलाई जाती। इस तरह मूंगफलीके तेलकी बू निकल जाती है। ठण्डा करके दूधमें विटामिन, दूसरे पोषक पदार्थ व खनिज लवण मिलाये जाते हैं। सौ हिस्से दूधमें एक हिस्सा, गायके दहीका जामन लगाकर दही तैयार किया जाता है।

मूँगफलीके दूध और गायके दूधकी तुलना

		मूंगफलीका दूध	गायका दूध
प्रोटीन	°/॰	३.००	३.३०
वसा	,,	३.२०	३.७५
कार्बोहाइड्रेट	,,	३.०७	४.८५
राख	,,	०.८०	०.७२
कुल ठोस अंश	,,	१०.०७	१२.६२
कैल्शियम	मि.ग्रा.°/॰	११०	११०
फासफोरस	,,	१०२	७०
लोहा	मि.ग्रा.°/॰	१.४७	०.०२-०.०५
थायामीन	,,	०.६५	०.४५
रिबोफ्लेविन	,,	२.००	१.७०
निकोटिनिकएसिड	,,	११.१०	१.२६
एसकार्बिकएसिड	,,	१७.७	१५.९
विटामिन'ए'प्रति१००ग्रा.अ.इ.		१४००	१३२०
विटामिन डी		२००	२०

विशेषत: बच्चोंके भोजनमें वनस्पति दही शामिल करनेसे उनके स्वास्थ्यपर बहुत अच्छा असर पड़ता है। एक पौंड साफ गिरीसे ७-८ पौंड दही तैयार हो जाता है। इस दहीकी लागत सिर्फ़ २१ न० पै० प्रति पौंड पड़ती है।

वनस्पति-पनीर

पनीर दूधका एक उत्पाद होता है, इसमें प्रोटीन, चिकनाई, कैल्शियम और कई विटामिन मुख्य रूपसे होते

(शेष पृष्ठ २८ पर)

स्कूलोंसे यक्ष्माका प्रसार

—डाक्टर ए० आर० मेहता—

(गतांक से आगे)

निरोधके उपाय—विशेष और साधारण

यक्ष्मासे बचनेके दो विभिन्न उपाय हैं—

प्रथम—विशेष उपाय।

दूसरा—साधारण उपाय।

संक्षेपमें उन्हें इस प्रकार विभक्त कर सकते हैं—

१. **जन साधारणके लिए**

(अ) विशेष उपाय—

१. प्राथमिक रोगियोंका और उनके परिवारोंकी खोज करना और उनका उचित प्रबन्ध करना—यह काम औषधालयों अर्थात् डिस्पेंसरियोंके खोलनेसे हो सकता है।

२. साध्यरोगियोंका प्रबन्ध करना—या स्वास्थ्यागार अर्थात् सैनिटोरियमोंके खोलनेसे हो सकता है।

३. उत्कट और असाध्य रोगियोंका प्रबन्ध—अस्पताल अर्थात् चिकित्सालयोंके खोलनेसे हो सकता है।

४. जो रोगी कि अच्छे चुके हों, पर पूर्ण स्वस्थ होनेके लिए सुपथ्य और स्वास्थ्यकारी वातावरणमें रहनेकी आवश्यकता हो, उनका प्रबन्ध—कॉलोनी अर्थात् स्वास्थ्यकी दृष्टिसे शुद्ध जलवायु युक्त, सम्पूर्ण स्वच्छताके नियमोंको यथार्थ पालन करते हुए एक उपनिवेश स्थापित किया जाय, जहाँ कि ऐसे रोगमुक्त परन्तु दुर्बल और उचित पथ्यादि पालन करनेवाले रह सकें।

५. जिन लोगोंको इस रोगसे आक्रान्त होनेकी सम्भावना अधिक हो उनके लिए प्रबन्ध—प्रिवेन्टोरिया अर्थात् प्रतिकारी उपायोंके अवलम्बन करनेके लिए उपयुक्त निवास स्थान विशेषज्ञोंकी देखरेखमें रखे जायें।

(आ) साधारण उपाय—

१. निवास स्थानोंकी अवस्थाओंकी उन्नति करना।

२. साधारण स्वच्छता और स्वास्थ्यकी उन्नति करना।

३. खेल-कूदके स्थानोंका निर्माण और खुले मैदान, बाग इत्यादि बनाना।

४. खुली हवामें स्कूलोंका खोलना।

२. **विशेष व्यक्तियोंके लिए—**

(अ) विशेष उपाय—क्षयरोगके जीवाणुओंको शरीरके भीतर जाने से रोकना।

(अ) साधारण उपाय—शरीरकी प्रतिषेधक शक्तिका बढ़ाना। ऊपर लिखे हुए दोनों प्रकारके उपायोंका सविस्तार वर्णन नीचे दिया जाता है—

(अ) विशेष उपाय—

- १. क्षयरोगके जीवाणुओंको साक्षात् संक्रामक होनेसे रोकना
  - १. खांसी, छींक अथवा साँसके द्वारा एकसे दूसरेको लग जाने से।
  - २. चुम्बन अथवा प्यार करनेसे।
  - ३. खाने-पीनेके बर्तन जैसे ग्लास आदि के द्वारा।
  - ४. कीटाणु लगे हुए पाइप अथवा हुक्केकी नली द्वारा।
- २. क्षयरोगके जीवाणुओंको गौण रूपसे संक्रामक होनेसे रोकना।
  - १. जीवाणु मिश्रित धूल से।
  - २. जीवाणु मिश्रित खाद्य पदार्थों से।
  - ३. जीवाणु लगे हुए मक्खियों से।

(अ) साधारण उपाय—

१. स्वच्छवायु।

२. अच्छा भोजन।

३. व्यायाम।

४. उचित आसन व मुद्रा।

५. सफ़ाई।

६. परिमित परिवार।

७. सब कार्योंमें अति का त्याग।

८. निर्बल करनेवाली बीमारियोंसे बचाव ।

९. उपयुक्त वस्त्रादिका धारण ।

१०. हानिकारक परदा प्रणाली का बहिष्कार ।

इस लेख मालामें जन साधारणके लिए संघ बद्ध कार्योंका विशेष उल्लेख न किया जायगा। विशेष व्यक्तियोंके लिए जो उपाय बतलाए गए हैं उनपर ध्यान देना प्रत्येक व्यक्तिको उचित है ।

मनुष्यको क्षयरोग जीवाणुओं द्वारा होता है

एक तो क्षय-ग्रस्त मनुष्य और दूसरे क्षय-ग्रस्त गायके जीवाणुओंसे यह रोग होता है। भारतमें दूध भली प्रकार औटाकर पिया जाता है इससे इस प्रकारके संपर्ककी संभावना कम रहती है, क्योंकि औटानेसे दूधके क्षयरोगके जीवाणु मर जाते हैं। दूसरी बात यूरोपकी अपेक्षा भारतकी गायोंमें यह बीमारी कम होती है।

यह रोग भारतमें प्रधानतः निम्नलिखित कारणोंसे ही अधिक होता है :—

जब किसी मनुष्यके जिसको फेफड़ेका क्षय रोग हुआ हो शरीरके दूषित जीवाणु दूसरेके सांस द्वारा अथवा मुँहके द्वारा शरीरके भीतर प्रवेश करते हैं, तो उसे भी क्षय रोग ग्रस्त कर देते हैं।

जब कि फेफड़े या श्वासकी प्रणालियोंमें क्षय रोग उत्कट रूपसे हो जाता है तब उन विकार ग्रस्त स्थानोंसे जो जीवाणु निकलते हैं उनके लिए दो रास्ते हैं—

(अ) थूकसे जो कि रोगी थूके ।

(आ) और छोटे-छोटे थूकके परमाणुओंके द्वारा जो कि रोगीके बात करते समय, खाँसते व छींकते समय हवा फैलते हैं।

ये जीवाणु एकसे दूसरेके शरीरमें दो उपायोंसे पहुँचते हैं।

एक तो उन जीवाणुओंके निगलनेसे जो कि रोगीके विकार युक्त थूकमें होते हैं और जो हाथ में, खाने पीनेके बरतनोंमें लग गये हों। (आ) उस दूषित वायुमें श्वास लेनेसे जिसमें जीवाणु दूषित थूकके बिन्दु सूखकर अथवा धूलके रूपमें मिल गये हो ।

संसर्गसे बचनेके लिए निम्न सावधानी आवश्यक हैं—

(१) रोगीके जीवाणुओंको सांसके द्वारा अपने अन्दर न लेना । जिस कमरेमें यक्ष्मा-ग्रस्त पुरुष रहता हो उसमें कदापि न रहो । रोगीको बाहर खुलेमें, अथवा खुले बरामदेमें लिटाओ। उसके पास आवश्यकताके बिना न जाओ।

(२) यक्ष्मा पीड़ितका थूक और उसकी खाँसी एक रूमालमें ली जाय । उस रूमालको या तो उबाल लो और हो सके तो जला डालो। बाजारमें मिलनेवाले कागजी रूमाल अथवा अखबारोंके टुकड़े इस कामके लिए अच्छे हैं ।

(३) बीमारके चुम्बन और उसकी प्रेम चेष्टाओंसे बचो। बच्चोंको संसर्गका भय होता है, इसलिये उन्हें बीमारके पास कदापि न जाने दो ।

(४) बीमारके काममें आनेवाले बरतनोंमें जीवाणुओंके रहनेका डर रहता है । उन्हें सदा अलग रक्खो, बीमारके ग्लासमें कदापि जल मत पिओ।

(५) बीमारकी कली या उसके हुक्केको कभी मत पिओ इससे बीमारी लग जाती है ।

'गौण संसर्ग' थूकनेकी गन्दी आदतके द्वारा जीवाणुओंको हमारे पास तक पहुँचता है। इस बीमारीके फैलावमें इस गन्दी आदतका बहुत बड़ा हाथ है। इस प्रकारके संसर्गमें जीवाणुओंका प्रवेश द्वार वही है जो कि साक्षात् संसर्गके लिए अर्थात् नाक अथवा मुँह द्वारा । थूकके द्वारा बाहर जानेवाले जीवाणु छः मास तक अन्धकार कोनोंमें पड़े रह सकते हैं और अपनी जीवन शक्ति और दूसरोंको बीमार करनेकी शक्तिको बनाये रखते हैं। इस प्रकार बाहर फेंके गये जीवाणु धूलमें उड़ते रहते हैं और सांसके साथ हमारे भीतर चले जाते हैं अथवा मक्खियोंके द्वारा हमारे भोजनमें मिलकर हमारे पेटमें पहुँच जाते हैं।

प्रतिकारके उपाय निम्नलिखित है—

(१) यक्ष्माके रोगीको चाहिये कि वह सदा उस बोतल, चिलमची अथवा प्यालेमें थूके, जिसमें जीवाणु-मारनेवाली दवा अर्थात् 'कारबोलिक लोशन' (एक

हिस्सा—२० हिस्से पानीमें) पड़ी हो अथवा ऐसे रूमालमें थूके जिसे एक दम जला दिया जाय या खूब उबालकर साफकर लिया जाय ।

(२) जहाँ तक हो सके धूलसे बचो । मकानमें पक्का फर्श रखो और उसे रोज गीले कपड़ेसे रगड़ डालो । फर्श कच्चा हो तो झाड़ू देनेसे पहले थोड़ा पानी छिड़क लो जिससे धूल दब जाय ।

(३) भोज्य पदार्थोंको ढककर रक्खो, जिससे उनपर धूल या मक्खी न बैठ सके ।

(४) मक्खियाँ जीवाणुओंको थूक या गन्दगी परसे उड़ाकर भोजन तक पहुंचा देती हैं । यह गोबर जैसी चीजों कूड़े-करकट, और मैलेमें ही पलती हैं; इन सब कचड़ोंको जला डालो अथवा घरसे दूर गहरे गढ़ेमें दाब दो । रसोई, भोजनके स्थान और टट्टियोंकी खिड़कियों और दरवाजोंमें जाली लगाओ जिससे वहाँ मक्खियाँ न पहुंच सकें ।

प्रतिकारके साधारण उपाय

पहले बताया था कि यदि शरीरमें प्रतिरोधनी शक्ति रहे तो क्षयके जीवाणु उसमें प्रवेश पा जानेपर भी उसका कुछ नहीं बिगाड़ सकते ।

अब हमें देखना होगा कि स्वास्थ्यके वे कौनसे नियम हैं जिनपर चलकर पुरुष अपने आपको सुरक्षित बनाता हुआ इस कुत्सित बीमारीसे बच सकता है । निम्नलिखित क्रम ध्यान देने योग्य हैं—

साधारण प्रयोग:—

१. साफ वायु ।
२. अच्छा भोजन ।
३. व्यायाम ।
४. उचित आसन ।
५. पवित्रता ।
६. विवाह सुधार ।
७. 'अति' का त्याग ।
८. निर्बल करने वाले रोगोंसे बचाव ।
९. उचित वस्त्र ।
१०. परदेका त्याग ।

(१) पवित्र वायु—स्वास्थ्यके लिए आवश्यक है कि यथेष्ट। परिणाममें हम अधिकसे अधिक साफ वायुका सेवन करें और यह बात सबने देखी होगी कि स्वच्छ वायुमें रहनेवाले आदमी गन्दे और बेहवा कमरोंमें रहनेवाले आदमियोंसे कहीं हट्टे कट्टे और तन्दुरुस्त होते हैं । स्वच्छ वायु कैसी भी ठण्डी क्यों न हो, हानि नहीं पहुचाती । वे पुरुष और प्राणी जो ध्रुव प्रदेशोंकी खुली वायुमें रहते हुए ठण्डीसे ठण्डी वायुका सेवन करते हैं, कभी भी जुकाम, खाँसी या इस प्रकारकी और किसी बीमारीके शिकार नहीं बनते ।

वायुकी पवित्रताकी सामान्य और सीधी-सादी पहचान यह है कि आदमी बाहरकी और अन्दरकी वायुमें किसी भी प्रकारका अन्तर न पा सके । उस जगहकी, जहाँ कि भीड़ जमा हो–वायु गरम हो जाती है और उसमें एक प्रकारकी उत्कट और अरुचिकर गन्ध आने लगती है । ऐसी अवस्थामें सब दरवाजे और खिड़कियां खोल देनी चाहियें ।

हर समय साफ हवाका सेवन करो । हमें जितना भी हो सके बाहर रहना चाहिए । सोते समय मुँह ढकने की आदत बुरी है । सरदियोंमें ठण्डके और गरमियोंमें मच्छरोंके डरसे लोग बहुधा मुँह ढककर सोते हैं । सरदीके लिए ऊनी टोपी पहन सकते हो और गरमियोंमें मच्छरदानीसे काम ले सकते हो । याद रक्खो कि सरदीमें हमें गरम कपड़ों द्वारा अपने शरीरकी रक्षा करनी चाहिए और उसे भीगनेसे बचाना चाहिए नहीं तो सर्दी हो जानेका डर रहता है और निमोनिया भी हो सकता है । सदा नाकसे साँस लो । नाकके बाल धूल और बीमारीके जीवाणुओंको अन्दर आनेसे रोक देते हैं ताकि वे फेफड़ोंमें पहुँचकर नुकसान न पहुँचा सकें । नाक, फेफड़ोंकी ओर बहनेवाली वायुको गरम भी करती है । मुँहसे साँस लेनेवाले आदमी खाँसी, जुकाम, और गलेकी बीमारियोंसे परेशान देखे जाते हैं । यदि नाकसे साँस लेनेमें कष्ट हो तो डाक्टरसे सलाह लेना चाहिए । अकसर मुँहसे साँस लेना एक आदत सी हो जाती है जिसे प्राणायामके अभ्यास द्वारा दूर किया जा सकता है ।

(शेष पृष्ठ २८ पर)

बच्चोंमें भैंगापन

—श्री सत्यपाल मालिक—

यह देखनेमें आया कि हमारे देशमें आम जनता भैंगेपनके रोग की ओर अधिक ध्यान नहीं देती क्योंकि इससे रोगीको दर्द आदि नहीं होता है। अतः वह डाक्टरके पास जानेकी आवश्यकता महसूस नहीं करता। दूसरा, लोगोंको यह भी पता नहीं कि भैंगी आँखसे मनुष्यकी दृष्टि धीरे-धीरे कम होती चली जाती है इसके अतिरिक्त एक अन्य महत्वपूर्ण कारण यह है कि लोगोंमें यह विश्वास व्याप्त है कि ज्यों-ज्यों बच्चा बड़ा होगा उसकी आँख अपने आप ठीक हो जाएगी। इस प्रकार इन गलत धारणाओंके कारण प्रायः बच्चेका इलाज नहीं कराया जाता जिसके फलस्वरूप बच्चेका व्यक्तित्व पूर्णतया तथा सुचारु रूपसे विकसित नहीं हो पाता। स्कूलमें उसके सहपाठी 'भैंगा' या किसी अन्य नामसे पुकारकर उसे चिढ़ाते हैं। इस प्रकारकी परिस्थितियोंमें बच्चेमें हीन भावना पैदा हो जाती है। वह अपने साथियोंके साथ मिलकर पढ़ने व खेलनेसे हिचकिचाता है और उसमें दूसरोंसे अलग रहनेकी मनोवृत्ति बन जाती है।

वास्तवमें भैंगापन आँखकी अन्य बीमारियोंकी तरह एक बीमारी है जो प्रायः शिशुकालमें हो जाती है। यदि समयपर इसका इलाज कराया जाय तो इससे छुटकारा मिल सकता है।

भैंगापनका मुख्य कारण आंखकी मांस-पेशियोंका अपूर्ण व गलत विकास है। हमारी आंखको ठीक स्थितिमें रखनेके लिए तथा एक तरफसे दूसरी तरफ घुमानेके लिए छह मांस पेशियाँ होती हैं। प्रायः ऐसा होता है कि किसी-किसी बच्चेकी आंखकी एक या एकसे अधिक मांस-पेशी किसी कारण उचित प्रकारसे विकसित नहीं हो पाती जिससे आंखमें भैंगापन आ जाता है चूंकि भैंगापन होनेके कारण उस आँखका प्रयोग नहीं हो पाता, अतः धीरे-धीरे नजर कम होने लगती है।

भैंगापन मुख्यतः दो प्रकारका होता है घातज (पैरलिटिक) तथा आनुषंगिक (कानकमिटैंट) घातज भैंगापन प्रायः नेत्र मांस-पेशीके कमजोर या उसको लकवा हो जानेके कारण होता है। आनुषंगिक भैंगेपनमें मांस-पेशीको लकवा तो नहीं होता, बल्कि दोनों आँखोंकी गतियोंमें पूर्ण सहयोग नहीं रहता। साधारण व्यक्तिकी दोनों आँखें अपने कर्म-स्नायुकेन्द्रों (मोटर नर्व सेन्टर्ज) में इस प्रकार परस्पर समायोजित हुई रहती हैं कि उनकी गतियोंमें करीब-करीब पूर्ण सहयोग दिखाई देता है। परन्तु भैंगेपनसे यह सहयोग बिगड़ जाता है। जब एक आँख सामने देखती है तो दूसरी आँख अन्दरकी ओर चली जाती है या बाहरकी तरफ। इस प्रकार भैंगापनसे पीड़ित व्यक्ति एक समयमें एक ही आँखका प्रयोगकर पाता है। भैंगापन दोनों आँखोंमें भी हो सकता परन्तु ऐसे लोगों की संख्या कम है।

बचपनमें चश्मा पहननेकी आवश्यकता होनेपर उसका प्रयोग न करनेसे भैंगापन आ सकता है।

उपचार कैसे किया जाय ?

जैसा कि ऊपर बताया गया है बीमारी प्रायः बाल्यावस्थामें होती है, अतः बच्चेको स्कूलमें प्रवेश दिलानेसे पहले उसका इलाज करवाना ठीक रहता है। संयुक्त राज्य अमेरिकामें तो किसी भी ऐसे बच्चेको प्रवेश नहीं दिया जाता जिसकी आँखमें भैंगापन होता है अर्थात् बच्चेको स्कूल भेजनेसे पहले ही उसका इलाज कराना आवश्यक होता है क्योंकि बादमें इस रोगका इलाज कठिन हो जाता है। प्रारम्भमें इलाज करानेसे आँखका भैंगापन दूर हो जानेके साथ-साथ नजर भी बढ़ जाती है। परन्तु जब बच्चा ६-७ वर्षकी आयु पारकर जाता है तो समय इलाज करानेसे भैंगापनतो दूर हो सकता है परन्तु नजर बढ़ाना कठिन हो जाता है। दुर्भाग्यवश भारतमें बहुतसे लोग इस बीमारीका इलाज देरसे कराते हैं। उदाहरणतया, इर्विन अस्पतालके

स्क्विट क्लिनिकमें पिछले वर्ष ३७०९ नये रोगी इलाजके लिए आये, जिनमेंसे ३२१६ वयस्क थे।

भैंगापनके बहुतसे मरीज समयपर चश्मा पहनने मात्रसे ही ठीक हो सकते हैं। यदि छोटे बच्चेको भी डाक्टर चश्मेका प्रयोग करनेको कहे तो डाक्टरकी सलाह अवश्य माननी चाहिए। इस साधारण इलाजसे बच्चेको भैंगापन तथा नजर कमजोर होनेसे बचाया जा सकता है। कुछ मरीजोंकी ठीक आँखको कुछ दिनोंके लिए ढक दिया जाता है ताकि टेढ़ी आँखका प्रयोग अधिक हो सके और उस आँखकी नजर न गिरे। इसके अतिरिक्त नेत्र क्लिनिकमें मरीजोंको आधुनिक विशेष मशीनोंपर आँखकी कसरत भी कराई जाती है।

जिन मरीजोंको उपरोक्त उपायोंसे लाभ नहीं होता उनको आपरेशनकी सलाह दी जा सकती है। यह आपरेशन आँखके बाहर नेत्र मांस-पेशियों (मसल्ज) पर किया जाता है। इस आपरेशनसे मरीजकी आँख या जीवनको किसी प्रकारकी क्षति नहीं पहुँचती। यदि आपरेशनकी सलाह दी जाय तो वह जल्दी करा लेना चाहिए।

इर्विन अस्पतालके नेत्र विभागमें पिछले वर्ष भैंगापनसे पीड़ित १,६१,१५७ रोगियोंका ऊपर बताये गये तरीकोंसे इलाज किया गया।

मूंगफली (पृष्ठ २३ का शेषांश)

हैं। इस अनुसंधानशालामें किये गये प्रयोगोंसे ज्ञात हुआ है कि मूँगफलीसे उम्दा किस्मका पनीर तैयार किया जा सकता है।

मूँगफलीका मक्खन

अमरीकामें मूँगफलीका मक्खन बहुत प्रचलित है। विशेष किस्मकी उम्दा मूंगफलीके दाने इतने भूने जाते हैं कि भूरे होने शुरू न हों। लाल छिलका और नकुवे एक मशीन द्वारा अलग करके दुफाड़े दानोंकी पीठी (लुगदी) बना ली जाती है। उसमें स्वादके अनुसार नमक डालते हैं। और स्थिरता लानेके लिए २ प्रतिशत वनस्पति मिला देते हैं। यह मक्खन गाय या भैंसके दूधके मक्खनकी तरह ही इस्तेमाल कर सकते हैं, अर्थात् टोस्ट बिस्कुट, सैंडविच आदिमें इसका प्रयोग किया जाता है।

दमा : (पृष्ठ ६ का शेषांश)

चीजोंका पता लग जाता है, जिनके प्रति किसी व्यक्तिकी एलर्जी होती। इनका पता लगानेके बाद, रोगीको थोड़ी-थोड़ी मात्रामें एलर्जी पैदा करनेवाले तत्त्वोंसे बने इन्जेक्शन देकर रोगीकी उस वस्तुके प्रति एलर्जी समाप्त की जा सकती है। दूसरे शब्दोंमें रोगजनक पदार्थ ही रोगके निदानमें सहायक होता है।

इस रोगका उपचार काफी लम्बा है। यह भी आवश्यक नहीं कि प्रत्येक रोगी इससे लाभान्वित हो, क्योंकि दमेके अधिकतर रोगियोंको एकसे अधिक वस्तुके प्रति एलर्जी होती है। इसलिए केवल कुछ ही इस रोगसे मुक्ति पा सकते हैं और पहले कही गयी एक वैज्ञानिककी उक्ति कितनी सही दिखती है कि "दमाने डाक्टरोंको चक्करमें डाला है तथा रोगियोंको यातना दी है।"

यक्ष्मा (पृष्ठ २६ का शेषांश)

यक्ष्मा ग्रस्त पुरुषोंके बच्चोंके लिए तो स्वच्छ वायु परमात्माका दिया हुआ प्रसाद समझो। बुरे आसनोंसे बैठनेके कारण अथवा किसी और छातीकी कमजोरीके कारण क्षयरोग होनेकी जिन्हें सम्भावना हो उनके लिए भी स्वच्छ वायु अत्यन्त उपयोगी है।

स्कूल और कालिजोंमें हर घण्टेके बाद कमरेको थोड़ी देरके लिए खुला छोड़ देना श्रेयस्कर होगा। हो सके तो क्लास बाहर या बरामदेमें लो! खाँसी या और किसी संक्रामक बीमारीमें फँसे हुए छात्रको क्लास के साथ उसी कमरेमें न बैठने दो। (क्रमशः)

परिवार नियोजन कार्यक्रम समय और लक्ष्यके अनुरूप है

—श्री गोविन्द नारायण—

भारतके परिवार-नियोजन-कार्यने १९६६ से जोर पकड़ा है। पिछले बारह वर्षोंमें ४५ लाख व्यक्तियोंका अनुर्वरीकरण (ऑपरेशन) किया गया और २४ लाख स्त्रियोंमें लूप लगाये गये। इनमेंसे २७ लाख व्यक्तियोंका अनुर्वरीकरण और १५ लाख स्त्रियोंमें लूप लगानेका काम पिछले दो वर्षोंमें हुआ है। इस तरह परिवार-नियोजनके लिए पिछले दो वर्षोंमें जितना काम हुआ, वह उससे पहलेके दस वर्षोंमें हुए कुल कामसे अधिक है।

इस उपलब्धिका सबसे अधिक श्रेय निर्धारित समयमें निर्धारित लक्ष्य प्राप्त करनेके कार्यक्रम और उसका विकास-विस्तार करनेके लिए बनाये गये संगठन को है। इस संगठनकी जड़ें जगह-जगह फैली हुई हैं और इसे ऐच्छिक संस्थाओं, पेशेवर वर्गों और संगठित क्षेत्रोंका सक्रिय सहयोग भी प्राप्त है, जो उसकी शक्तिका प्रमुख स्रोत है। इसके अलावा यह संगठन कार्यक्रमको हर स्तरपर प्रभावकारी ढंगसे लागू करने से संबंधित फैसलोंको बढ़ावा देता है और मानवता तथा लोक-कल्याणकी भावनासे अनुप्राणित है। यह बहुत लचीला है और इसके ढांचेमें राज्यों तथा केन्द्र-शासित क्षेत्रोंको नये-नये काम करनेकी काफी गुंजाइश है।

परिवार नियोजन कार्यक्रमका अन्तिम लक्ष्य १९७८ तक जन्म-दरको घटाकर एक हजारकी आबादीके पीछे २३ करना है। इसके क्रियात्मक लक्ष्य है: जनसंख्याकी वृद्धि-दरमें कमी करना ताकि आर्थिक प्रगतिपर उसका बोझ घटे और बच्चे पैदा करनेकी दरको कम करके या छोटे परिवारके लिए प्रेरणा देकर सामाजिक परिवर्तन करना। अन्तिम लक्ष्य और क्रियात्मक लक्ष्योंकी प्राप्तिके लिए कार्यक्रमको स्वस्फूर्त प्रक्रिया बनाना होगा और इस उद्देश्यकी पूर्तिके लिए सभी उपाय करने होंगे।

इन उद्देश्योंकी प्राप्तिके लिए एक संगठन विकसित किया गया है, जिसे देशके ५,६०,००० ग्रामों और ३,००० कस्बों व शहरोंमें फैले बच्चा पैदा करने योग्य आयुके १० करोड़ जोड़ों तक पहुँचाना है। यह संगठन एक ऐसी आपातिक संस्थाके समान है, जो दीर्घ काल तक तेज गतिसे काम कर सकती है। यह संगठन रखरखावके दौरमें तभी प्रवेश करेगा, जब जन्म-दरको घटानेका लक्ष्य पूरा होगा और परिवार-नियोजनकी गतिविधियां चिकित्सा और स्वास्थ्यसेवाओंका अभिन्न अंग बन जाएंगी।

तरीकोंमें विविधता

जन्म-दरमें कमी करनेके लक्ष्यकी प्राप्तिमें समय लगेगा। संगठनको इस बातकी पक्की व्यवस्था करनी होगी कि जन्मदर बराबर घटती जाय और मृत्यु-दर न्यूनतम स्तर तक घट जाय। यह भी करना होगा कि आबादीकी वृद्धि आर्थिक उपलब्धियोंको बेमानी करनेकी बजाय अर्थव्यवस्थाको पुष्ट करनेमें सहायक हो। गर्भ निरोधकोंके व्यवहारसे बच्चे पैदा होनेमें कमी तभी सम्भव हो सकती है, जब लोगोंको अपनी अवस्थाके अनुसार गर्भ निरोधका तरीका चुननेकी सुविधा हो—इस धारणाके कारण ही लोगोंको परिवार नियोजनके आजमाये तथा जांचे हुए साधन सुलभ किये जा रहे हैं। अतः 'कंडोम' जैसे गर्भनिरोधके परम्परागत साधन यदि नव-विवाहितोंकी जरूरतें पूरी करते हैं तो 'लूप' दो गर्भाधानोंके बीच इच्छित अन्तराल देनेके लिए एक संतान वाले जोड़ेके कामकी चीज है। दो या तीन बच्चे वाले मां-बाप ऑपरेशन (अनुर्वरीकरण) का सहारा ले सकते हैं। लेकिन परिवार नियोजनके विभिन्न साधनोंमेंसे एकका चुनाव करना अन्ततः पति पत्नीका ही काम है।

कार्यक्रम-संगठनका उद्देश्य अनुशासित ढंगसे मिलकर काम करके और जन प्रतिनिधि-संगठनोंके सहयोगसे सभी लोगोंतक–चाहे वे जैसी भी स्थितिमें हैं—पहुँचाना है। कार्यक्रमको अमलमें लानेके लिए गठित संगठन परस्पर सहयोगकी भावनासे ओत प्रोत है और उसकी दृष्टि शुद्ध व्यावहारिक दृष्टि है।

विभिन्न स्तरोंपर

इस प्रकार ग्राम और खंड स्तरोंपर पंचायतके सदस्यों और अन्य विचारशील नेताओंकी क्रियान्वयन-समितियाँ हैं। जिला स्तरपर भी इस प्रकारकी समितियाँ हैं, जिनमें समाज कल्याण संगठनोंके प्रतिनिधि शामिल हैं और वे इन समितियोंका मार्ग निर्देशन करते हैं। राज्योंके मंत्रिमंडलोंकी भी परिवार-नियोजन उप-समितियाँ हैं। राज्य परिवार-नियोजन-परिषदें नीति सम्बन्धी फैसले करती हैं और उनके अमलपर नजर रखती हैं।

केन्द्रीय स्तरपर भी मंत्रिभंडलकी एक परिवार-नियोजन उप-समिति है, जिसकी अध्यक्षा प्रधानमंत्री हैं। यह समिति राष्ट्रीय दृष्टिसे परिवार नियोजन-कार्यक्रम पर राष्ट्रीय दृष्टिसे विचार करती है और राष्ट्रीय नीति तथा प्रशासनिक मामलोंका फैसला करती है। केन्द्रीय परिवार नियोजन-परिषदमें केवल राज्योंके स्वास्थ्यमंत्री और स्वयंसेवी संस्थाओंके प्रतिनिधि शामिल किये गये हैं। यह परिषद् हर कामपर विचार करती है और आगेके लिए निर्देश देती है। इसके अतिरिक्त, उच्चाधिकार प्राप्त एक मंडल भी गठित किया गया है। इसका काम कार्यक्रमकी अमल संबंधी समस्याओंपर विचार करने और उन्हें सुलझानेके तरीके सुझानेके साथ साथ ऐसी योजनाएँ मंजूर करनेका है, जिनसे कार्यक्रमको अमलमें लानेमें तेजी आये। इस तरहके मंडलकी स्थापना प्रशासनिक इतिहासमें एक अद्वितीय घटना है, क्योंकि इसे ऐसे असामान्य अधिकार प्राप्त हैं कि यह लाल फीताशाही दूर करके कार्यक्रमको सफलताकी दिशामें ले जा सकता है।

कार्यक्रम-संगठनका मौलिक गुण यह है कि यह लोक-कल्याणकी ओर उन्मुख हैं और इसमें तेजीसे अमल करनेमें सहायता देनेके लिए निर्णय करते चलनेकी भी व्यवस्था है। संगठनकी रचना लचीली है और उसमें कार्यक्रम निर्देशकों तथा क्षेत्रीय कर्मचारियोंके बीच नीति-निर्धारण तथा क्रियान्वयन सम्बन्धी सारी जानकारीके आदान प्रदानकी पक्की व्यवस्था है।

आपातिक स्तरपर कार्यक्रम लागू करनेके लिए वित्तीय बन्धनोंके झंझटसे मुक्ति आवश्यक है, लेकिन तब यह जरूरी हो जाता है कि निर्दिष्ट साधनोंसे अधिकतम काम करनेके सिद्धान्तको कसौटी माना जाय। इस कार्यक्रमके लिए आवश्यक आर्थिक साधन जुटाये गये हैं। पहली योजनामें ६५ लाख रुपये रखे गते थे। दूसरी योजनामें यह रकम बढ़कर ४ करोड़ ९७ लाख रुपया हो गयी। और तीसरी योजनामें यह बढ़ाकर २७ करोड़ रुपया कर दी गयी। अनुमान है कि चौथी योजनामें परिवार नियोजन कार्यक्रमपर कुल ५ अरब रुपये खर्च किये जाएंगे। लेकिन खर्चकी धनराशिसे अधिक महत्वपूर्ण यह है कि उसका इस्तेमाल किस तरह किया गया है, इसलिए कार्यक्रमकी प्रगतिकी नाप-जोख खर्चके औचित्य और मर्यादाके पैमानेसे की जाती है। खर्च जिम्मेदाराना ढंगसे हो रहा है या नहीं, इसकी जाँचके लिए विभिन्न प्रशासनिक स्तरोंपर लेखा-परीक्षा-दल तैनात किये जा रहे हैं।

ग्रंथोंमें परिवार नियोजन—(पृष्ठ ३२ का शेषांश)

इस समय हमारे सामने सुखी और सम्पन्न रहनेका एकमात्र विकल्प, बस, यही है कि किसी भी प्रकारसे जन्म-दर घटायी जाय। इसके लिए हम 'लूप' जैसे शक्तिशाली और सुलभ आधुनिक उपाय भी काममें ला सकते हैं या संयम और ब्रह्मचर्य जैसे भौतिक उपाय करके प्राचीन आयुर्वेदिक उपाय कर सकते हैं। परिवार नियोजनके मामलेमें पाप-पुण्य तथा धर्म-अधर्मकी बात करना वास्तवमें व्यापक मानव-धर्म और समयकी पुकारको ठुकराना है। वस्तुतः मूल कारण हमारा अज्ञान और निरक्षरता ही है। अतः हमें धर्मकी आड़में अपने पैरोंपर कुल्हाड़ी नहीं मारनी चाहिए और युगकी मांगको पूरा करनेके लिए हर संभव कदम उठाना चाहिए।

धार्मिक और आयुर्वेदिक ग्रन्थोंमें परिवार नियोजन

—श्री नरेन्द्र गोयल—

आर्थिक विकाससे देशको जो लाभ हुए हैं, वे सब जनसंख्याकी वृद्धिके कारण व्यर्थ हो गये हैं। उदाहरणार्थ १९५१ में देशमें ५ करोड़ ५० लाख मी० टन अनाज पैदा हुआ था, जबकि १९६५ में ७ करोड़ २० लाख टन अनाज पैदा हुआ और १९६७ में तो लगभग ९ करोड़ टन अनाज पैदा हुआ। किन्तु इस अवधिमें प्रति व्यक्ति खाद्यान्नकी उपलब्धि १२.८ औंससे घटकर १२.४ औंस ही रह गयी है। १९५१-५२ में बेरोजगारोंकी संख्या ३५ लाख थी। विकास-योजनानाओंके फलस्वरूप ३ करोड़ ७० लाख लोगोंके लिए अतिरिक्त रोजगारकी सुविधा उपलब्ध हुई, किन्तु तीसरी योजनाके अन्तमें बेरोजगार लोगोंकी संख्या बढ़कर १ करोड़ हो गयी है। इस प्रकार हम देखते हैं कि क्या शिक्षा, क्या आवास, क्या परिवहन—सभी क्षेत्रोंमें हमारे विकासके सभी प्रयत्न तेजीसे बढ़ रही जनसंख्याके कारण निष्फल हो गये हैं। अतः आज सबसे बड़ी आवश्यकता इस बातकी है कि जन्म-दर घटायी जाय।

परिवार नियोजनके राष्ट्रीय कार्यक्रमके प्रसारमें धर्मको एक बाधा माना जाता है, किन्तु यह सही नहीं है, क्योंकि हमारे प्राचीन धर्मपरायण जीवनकी यही मान्यता रही है कि देशकी सामाजिक एवं धार्मिक परम्पराओंके अनुसार प्रत्येक व्यक्तिके एक ही पुत्र होना चाहिए, ताकि वह उसे पितृऋणसे उऋण कर सके; श्राद्ध, पिण्ड और तर्पणसे पितरोंको परितुष्ट करे।

'मनुस्मृति' में भी अधिक सन्तानोत्पत्तिका विरोध किया गया है और कहा गया है कि मनुष्यको एक ही पुत्र उत्पन्न करना चाहिए, क्योंकि वही धर्मज होता है। यही नहीं, महात्मा मनुने शास्त्रीय मर्यादाका पालन करते हुए प्रजाको शारीरिक संस्सर्ग स्थापित करनेके संकेत भी दिये हैं। इसी तरह 'बृहदारण्यक उपनिषद्' ने योग तारिणी गर्भ-निरोधके लिए विशेष मंत्रोंकी सृष्टि करके प्रजाके कल्याणके लिए योग्य व कम सन्तानकी प्राप्तिपर बल दिया है। महाकवि कालिदासके इस श्लोकमें भी यही भाव प्रतिध्वनि होता है—

शैशवेभ्यस्त विद्यानाम्, यौवने विषयेषिणाम्।
वार्धक्ये मुनि वृत्तीनाम्, योगनान्तेतनुत्यजाम्॥

इसी प्रकार 'ऋग्वेद' में भी "बहु प्रजा निऋतिमा विशेष", अर्थात जहाँ प्रजा अधिक होंगे, कहकर स्पष्टतया अधिक सन्तानोत्पत्तिका विरोध व अनुकूलतम जनसंख्याका समर्थन किया है या मुक्त यौन सम्बन्धोंकी 'ऋग्वेद' में कड़ी आलोचनाकी गई हैं और कहा गया है कि "सना अत्र युवतयः, सयोनिरके गर्भ बधिरे सन्त्ववाणी", अर्थात विवाहित स्त्रियाँ ही अपनी शारीरिक अवस्थाको ध्यानमें रखते हुए कम-से-कम गर्भ धारण करें। 'महाभारत' में भी एक प्रसंग है ऐसा, जब चौथे पुत्रकी कामना महाराज पाण्डुने प्रकटकी तब देवी कुन्तीने शास्त्रोंका उदाहरण देते हुए उन्हें इस प्रकार समझाया था—

नातश्चतुर्थं प्रसवमापत्स्वपि वदन्युत।
अतः परं स्वैरिणी स्याद् बन्धुकी पंचमेभवेत्॥

अर्थात, हे आर्यपुत्र! आपत्ति-कालमें ही तीनसे अधिक सन्तानें पैदा करनेकी आज्ञा शास्त्रोंने दी है। उनके अनुसार तीनसे अधिक, मतलब कि चौथी सन्तान चाहनेवाली स्त्री स्वैरिणी (स्वेच्छा चारिणी) होती है और पाँचवे पुत्रके उत्पन्न होनेपर वह पूर्ण रूपसे कुलटा ही समझी जाती है।

लेकिन जब महाराज पाण्डुने अधिक आग्रह किया, तब पुनः सती कुन्तीने उनसे पूछा--

स त्वं विद्वज धर्ममिममधिगम्य कथं नु माम्।
अपत्यार्थं समुत्क्रम्य प्रमादादिव भाषसे॥

अर्थात् हे विद्वान् ! धर्मको जानते हुए भी धर्मका लोप करके प्रमादके वशमें होकर अब फिर सन्तनोत्पत्तिके लिए प्रेरित करके आप क्यों मुझे धर्मच्युत कर रहे हैं।

इस प्रकार हमारे धार्मिक ग्रंथोंमें यत्रतत्र सर्वत्र कम व उत्तम सन्तानोत्पत्तिका निर्देश है। ब्रह्मचर्य एवं संयमकी महिमा पग-पगपर गायी गयी है। आश्रम-व्यवस्था के अनुसार बाल-विवाह, मुक्त मिलन, सहशिक्षा जैसी दूषित पद्धतियोंका सदैव विरोध किया गया है। 'कामसूत्र' के प्रणेता मुनि वात्स्यायनने नर-नारीके सम्बन्धोंके लिए स्पष्ट निर्देश दिये हैं, जिन्हें आजके 'सेक्स साइकॉलोजिस्ट' भी मानते हैं। सामाजिक बंधनोंके प्रति दृढ़ निष्ठा, ब्रह्मचर्य, संयम, एक पति व एक पत्नीव्रतके पालन, मुक्त सम्बन्धोंपर रोक व बाल-विवाहके बहिष्कारको उन्होंने स्वस्थ समाजके निर्माणके लिए आवश्यक बताया है। अतः हमें पूर्वजोंके इन जीवनोपयोगी वचनामृतों और आदेशोंको अपने जीवनमें उतारकर 'कम व उत्तम' सन्तान पैदाकर राष्ट्रके नव निर्माणमें योग देना चाहिए।

आयुर्वेदमें परिवार नियोजन

प्राचीन भारतीय चिकित्सा-पद्धतिमें भी संतति-निग्रहके साधनोंकी कमी नहीं है। महर्षि सुश्रुतके कालमें भी गर्भक्रमका विस्तृत विवेचन हुआ था और स्त्रियोंके सुरक्षित कालको ही परिवार नियोजनका आदर्श साधन बताया गया था। ब्रह्मचर्यको ही आयुर्वेदने आदर्श जीवन बताया है और इसी संयमपूर्ण जीवनको परिवार नियोजनका श्रेष्ठतम साधन माना है।

आयुर्वेदके प्राचीन ग्रन्थोंमें परिवार नियोजनपर विस्तारसे उल्लेख मिलते हैं। आजसे करीब ११५ वर्ष पूर्व संवत् १९११ में प्रकाशित पुस्तक 'कोकका' में लिखा है कि यदि स्त्रीको एक तोला बाज पक्षीकी बीट लेकर उसमें दो तोला शराब मिलाकर दे दी जाए तो उसे कभी गर्भ नहीं रहेगा या गजपीपल व पिस्तेका छिलका समान मात्रामें लेकर ३-३ माशाकी मात्रामें एक माह तक तेल-खटाईके परहेजके साथ प्रयोग किया जाय, तो गर्भ नहीं रहेगा। इसी प्रकार रावणाचार्य-प्रणीत 'अर्कप्रकाश' में एक बहुत सामान्य नुस्खा इस प्रकार दिया गया है—गुड़हलके फूलोंको कांजीमें पीस अर्क निकाले, उसमें पुराना गुड़ मिलाकर गर्म कर लें और ऋतुमती स्त्रीको उसका सेवन कराएं, गर्भ नहीं रहेगा।

'बालतन्त्रम्' नामक ग्रन्थमें लिखा है कि स्त्री गर्भ धारण नहीं कर पाएगी, यदि वह इस उपचारको काममें लावे—पुराना गुड़ चार तोला लेकर चावलोंके मांड़में अवलेह करके ७ दिनों तक खाए। इसी प्रकार जो स्त्री वणीके फूलके मध्य हिस्सेको ३ दिनों तक कांजीके पानीमें घोंटकर पीए और ऊपरसे एक तोला पुराना गुड़ खाये, तो वह कभी भी गर्भ धारण नहीं कर पाएगी। महाराज हर्षकी स्मृतिमें रचित 'योग चिन्तामणि' नामक ग्रंथमें भी संतति-निग्रहका यह तरीका सुझाया गया है—ढाकके बीज तीन दिन ऋतुमती स्त्री घोंटकर जलमें पीए, तो वेश्या भी बंध्या हो जाए अथवा खीराके बीज ऋतुमती स्त्री सात-आठ दिनों तक ले या बेरकी लाखको औंटाकर तेलके साथ पीए तो उस स्त्रीको गर्भ नहीं रहेगा।

आयुर्वेदके महाउपाध्याय भागीरथ स्वामीने लिखा है कि काले सर्पकी त्वचा कैंचीसे काटकर एक माशा गुड़में लपेटकर ३ दिनों तक खानेसे कभी भी गर्भ-धारण संभव नहीं होता। आयुर्वेदके एक और महान प्रामाणिक ग्रंथ 'भैषज्य-रत्नावली' में गर्भ-निरोधका वर्णन इस प्रकार है—रसांजन, हरड़ और आमला—इनके चूर्णको एकत्र करके शीतल जलके साथ लेनेसे रजोदर्शन बंद हो जाता है और गर्भ ठहरनेकी कोई शंका नहीं रहती।

इस प्रकार हम देखते हैं कि 'लूप' और ऑपरेशन जैसे आधुनिक कृत्रिम साधन अपनाकर ही नहीं, वरन अपनी प्राचीन सरल आयुर्वेदिक पद्धतिको प्रयोग-व्यवहारमें लाकर भी हम परिवार नियोजन कर सकते हैं। 'सेक्स' की इच्छा मनुष्यकी स्वाभाविक इच्छा है, अतः उसे मिटानेका प्रयत्न करना अंधेरेमें भटकना ही होगा।

(शेष पृष्ठ ३० पर)

पारिवारिक जीवनोपयोगी स्वास्थ्य साहित्य

लोकप्रिय स्वास्थ्य साहित्य

राजा बेटा कैसे बनायें ?	३.००
सुन्दर दांत और उनकी देखरेख	२.५०
आपके बच्चेकी खुराक	३.३७
भोजन क्या, क्यों और कैसे ?	४.००
विटामिन और हीनता जनित रोग	४.२५

यौन-साहित्य

यौन मनोविकार कारण और निवारण	४.२५
विवाहित जीवनमें यौन सम्प्रयोग	५.५०
नारीकी यौन समस्यायें	२.५०
सन्तति-निरोध कब और कैसे ?	४.००
गर्भवती स्त्री और प्रसवपूर्व व्यवस्था	२.५०

प्रकाशक

स्वास्थ्य सन्देश प्रकाशन,
पोस्ट—कालपी (उत्तर प्रदेश)

स्वास्थ्य का वृहद ज्ञान सागर

आपका स्वास्थ्य

१८ वर्षों की

पुरानी फाइलें

चौथे और सोलहवें वर्ष के अलावा प्रत्येक वर्ष की फाइलें प्राप्य हैं ।

प्रत्येक वर्ष की फाइल ६ रु० में प्राप्य है फाइलें वी० पी० से नहीं भेजी जायेंगी । अग्रिम मूल्य भेजना अनिवार्य है ।

आपका स्वास्थ्य कार्यालय
चेतगंज, वाराणसी—१

उद्यम

मासिक पत्रिका

'उद्यम' में निम्न विषयों पर लेख प्रकाशित होते हैं :

★लाभदायक उद्योग-धन्धोंकी व्यवहारोपयोगी जानकारी

★व्यवसायमें सफल व्यक्तियोंकी मुलाकातें और परिचय तथा मवेशियोंके रोगोंका निवारण ।

★इंजिनियरिंग, यंत्र सामग्री और ग्रामोद्योग संबंधी लेख

★आरोग्य, संक्रामक रोग तथा घरेलू औषधियों संबंधी जानकारी ।

★पंचवर्षीय योजनाओंके कारण होता हुआ ग्रामसुधार

★महिला विभाग : घरेलू उद्योग, मितव्ययिता, खाद्य पदार्थ आदि पर लेख ।

★बालकोंका विश्व : बालक-बालिकाओंके लिए सुलभ भाषामें त्रैमासिक जानकारी ।

★विद्यार्थियों के लिये : विशेषज्ञों द्वारा उपयुक्त लेख

★पाठकों द्वारा पूछी गई जानकारी ।

'उद्यम' का वार्षिक मूल्य रु० दस भेजकर परिवारके प्रत्येक व्यक्तिके लिये उपयोगी यह मासिक पत्रिका अवश्य संग्रहीत करें ।

उद्यम मासिक, धर्मपेठ, नागपुर-१

घर बैठे संगीत सीखिए

प्रतिमास घर बैठे गायन, वादन तथा नृत्य की ठोस जानकारी प्राप्त करने के लिए १५) भेजकर **'संगीत'** मासिक के वार्षिक सदस्य बन जाइए । नमूना चाहें तो १)५० के टिकिट भेजिए । फिल्मी गीतों के प्रेमी २०) भेजकर **'फिल्म-संगीत'** त्रैमासिक के वार्षिक सदस्य बने । वर्ष में इसके कुल चार अंक (जनवरी, अप्रैल, जुलाई और अक्टूबर में) प्रकाशित होते हैं । प्रत्येक अंक में ३५ प्रसिद्ध फिल्मी गीत स्वरलिपि-सहित छपते हैं । हर प्रकार के संगीत-साहित्य की विस्तृत जानकारी के लिए हमारा बड़ा सूचीपत्र मुफ्त मंगाएं ।

पता

संगीत कार्यालय, ६, हाथरस (उ. प्र.)

इंडियन मेडिकल असोसियेशनकी ओरसे डा० कोशलपति तिवारी द्वारा
संपादित, प्रकाशित और संसार प्रेस, वाराणसीमें मुद्रित ।

HEALTH

is your most precious possession

Your Health

will help preserve it

Your Health aims to educate the common man on matters of health. It deals with day to day problems of sanitation and hygiene and presents the scientific side of preventing many bodily and mental ills.

Remember it is

A Publication of the Indian Medical Association.

SUBSCRIPTION RATES

(Post free)

Inland : 1 year Rs. 8/- ; 2 years Rs. 12/-
Foreign : 1 year Rs. 10/- ; 2 years Rs. 16/-
Members of I. M. A. ; 1 year Rs. 6/-

Remittances should be by money orders or postal orders payable to YOUR HEALTH

All business correspondence should be addressed to

Manager, YOUR HEALTH
23 Samavaya Mansion : Corporation Place
CALCUTTA-13

मूल्य—पचास पैसे

आपका स्वास्थ्य

इंडियन मेडिकल असोसियेशन की लोकोपयोगी मासिक पत्रिका

र्च, १९७३

हमारे तीन महत्वपूर्ण प्रकाशन

कहीं हवा न लग जाय

-कैप्टन शरत कुमार चौधरी-

इस पुस्तकमें मलेरिया, फाइलेरिया, चेचक आदि रोगोंसे बचनेके उपाय, रोगीकी परिचर्या सर्पदंश, प्राथमिक चिकित्सा सम्बन्धी अनेक महत्व-पूर्ण समस्याओंकी चर्चा की गयी है।

मूल्य १५० पैसे

सुनो भाई पंचो

-डाक्टर कोशलपति तिवारी-

हिन्दीमें अपने ढंगकी सरल सुबोध शैलीमें लिखी गयी पुस्तक। रोग तथा स्वास्थ्य-सम्बन्धी उन सभी समस्याओं पर चर्चा की गयी है, जिनसे हमारे ग्रामीण भाइयोंको नित्य सामना करना पड़ता है।

पुस्तक दो भागोंमें प्रकाशित है।

प्रत्येक भागका मूल्य—१५० पैसे

गुजरात, मध्यप्रदेश, उत्तरप्रदेश, हरियाणा, राजस्थान सरकार, बिहार द्वारा नियोजन केन्द्रों, स्कूल-कालेजके पुस्तकालयों, राष्ट्रीय प्रसार सेवा खण्डों तथा ग्राम पुस्तकालयोंके लिए स्वीकृत।

डाक्टर के आने तक

- डाक्टर गोकुलदास अग्रवाल -

नागरिक सुरक्षाके संदर्भमें इस पुस्तकका विशेष महत्व है। देशके प्रत्येक नागरिकको प्राथमिक चिकित्सा सम्बन्धी ज्ञान प्राप्त करना आवश्यक है और इस पुस्तकमें विस्तृत ढंगसे इस विषयपर चर्चा की गयी है। प्राथमिक चिकित्सा (फर्स्ट एड और नर्सिंग) की शिक्षा लेनेवाले छात्र-छात्राओंके लिए सर्वश्रेष्ठ पुस्तक। प्रस्तुत पुस्तक आपके परिवारके लिए 'घरेलू डाक्टर' का काम देगी।

दो सौ से अधिक चित्र

मूल्य २७५ पैसे

चारों पुस्तकें एक साथ मँगानेपर डाक खर्च माफ। आपका स्वास्थ्यके ग्राहकोंको २५ प्रतिशत छूट दी जाती है। चारों पुस्तकें एक साथ न मँगानेपर प्रत्येक पुस्तकके लिए १२५ पैसे अलगसे डाक व्यय लगेगा।

हमारे अधिकृत विक्रेता,

हिन्दी प्रचारक संस्थान, पो० बा० १०६, वाराणसी
पुस्तक भवन, कचहरी रोड, राँची।
श्री गंगा पुस्तकालय, गायघाट, वाराणसी—१
आपका स्वास्थ्य कार्यालय, लहुराबीर, वाराणसी—१

आपका स्वास्थ्य

इंडियन मेडिकल एसोसियेशनका लोकोपयोगी प्रकाशन

वर्ष २० मार्च १९७३ अंक ६

अनुक्रमणिका

इंद्री द्वार झरोखा नाना २
आवाजका जादू ३
अपनी खबर ७
दाने दानेपर लिखा है १२
किसिम-किसिमके डाक्टर १६
आधुनिक युगके अभिशाप १९
डाक्टर रम्पू २१
स्कूलोंसे यक्ष्माका प्रसार २३

परिवार नियोजन पूरक

हे प्रभू हमारे नगरकी रक्षा करो ... २९
हे प्रभू हमारे घरकी रक्षा करो ... ३१

होली-अंक

कवर-चित्र
सर्वश्री भानु—कांजिलाल

- ● 'आपका स्वास्थ्य' में प्रकाशित प्रत्येक रचना और चित्रका कापीराइट प्रकाशकका है। इसलिए बिना आज्ञा कोई रचना या चित्र किसी प्रकार उद्धृत नहीं होना चाहिए।
- ● 'आपका स्वास्थ्य' के लेखकोंके विचार पूर्ण रूपसे उनके अपने हैं आवश्यक नहीं है कि संपादक मंडल अथवा इंडियन मेडिकल एसोसियेशन उनसे सहमत हो।

मूल्य—इस अंकका ५० पैसे
वार्षिक छः रुपये

आपका स्वास्थ्य कार्यालय
वाराणसी (बनारस—१)

सम्पादकीय-

इंद्र द्वार झरोखा नाना

अगर शरीरको मकान मान ले तो इन्द्रियाँ दरवाजे हैं या झरोखे हैं! इन दरवाजोंपर अड्डा जमाये देवता लोग बैठे हैं! मगर ये महानुभाव 'तुम जानो तुम्हारा काम जाने' कि मुद्रामें थानेदारी करते हैं, चोरसे कहते हैं चोरी करो, सावसे कहते हैं जागते रहो। विषय रूपी हवा आती है तो ये मौज मजा लेनेके लिए जबरन ही दरवाजे खोल देते हैं।

अब हृदय कक्षमें ज्ञान दीपक जलता रहता है। इन्द्रीदेवताकी लापरवाहीसे कहीं खिड़की खुली रही, और हवाका झोंका आया कि दीपक बुझा। बात भी सच है कि इन्द्रियों और देवताओंको ज्ञान या अच्छी सलाह प्रिय नहीं लगाती। और अंधेरेकी तकलीफ जिसने भोगा है उसे वह अच्छी तरह जानता है।

इस रूपकमें गोस्वामीजीने बड़ी मार्के की बात कह दी है। यदि आप रूपको समझे बिना शरीरमें खिड़की दरवाजे या दिलमें दिया ढूंढेंगे तो वह मिलेगा नहीं। बात केवल इन्द्रियोंको काबूमें रखने और बुद्धिको ठीक रखने की है। जीभको चर्परी चाट अच्छी लगी तो खूब खा डाली और फिर जब मिर्चें लगीं तो कहने लगे कि क्या करें बुद्धि भ्रष्ट हुई थी जो इतती मिर्चों वाली चाट खा डाली। आदमी यदि खान-पानमें संयम रक्खे, विवेकसे काम ले तो वह स्वस्थ रहेगा और ऐसी दशामें उसकी बुद्धि भी जागृत रहेगा। अगर होलीके हुड़दंगमें, भंग की तरंगमें, कहा कुछ जाता है, किया कुछ जाता है, भूलकर की यह बसंत ऋतु है, पतझड़का मौसम! फल होता है कि द्वार खुले रहते हैं, लापरवाहीका पहरा पड़ता है, स्वास्थ्यके देवता पड़े सोते हैं और चोर मौजसे आकर लूट मचाता है। अरे बाबा, सोना है तो दरवाजे मूंदकर सोओ, कोई सजग पहरेदार द्वारपर बिठाकर सोओ। मगर नहीं बिना तेलके दिये जलाकर लोग घोड़े बेंचकर सोते हैं, चोर चांईयाँ ढोल बजाते आते हैं। चेताने वाला तब भी हाँक लगाता है 'तेरी गठरीमें लागा चोर, मुसाफिर जाग जरा,' मगर भला हो कम्बख्त लापरवाहीका कि न सुनने की कसम खा ली है कि लुटेंगे और तब रुदन करेंगे कि हाय लुट गये। यहाँ चोर पकड़ा नहीं जाता, माल वापस नहीं मिलता सिर्फ शेष रहता है पश्चाताप। तो भैये काहे को छीछालेदर कराते हो अपनी और अपने बाल-बच्चों की। उठो और विवेकके द्वार लगाओ और ज्ञान दीपकमें नया तेल डालो तभी होली मंगलमय होगी।

◆

आवाज का जादू

मनसा रामजी, मैं आपकी आवाज आपसे कुछ कह रही हूँ। इसके पहले कि मैं हारकर चुप हो जाऊँ कृपाकर मुझे सुन लीजिये।

श्रीमन्, भले ही आपकी रायमें मैं व्यर्थकी टें-टें होऊँ, पर ऋषियों विद्वानोंने सदा मेरा सम्मान किया है, मेरा महत्त्व जाना है। मुझे, नादको, ब्रह्मका दर्जा दिया गया है। सृष्टिका मूल बताया है। अपने मधुर परिवेशमें मैं अमृत हूँ, वशीकरणका मन्त्र हूँ। मैं आपकी सेवामें हूँ और आप मुझसे जैसा कहलाना चाहते कहलवा लेते हैं। अच्छी बातें, गंदी बातें, सरस सस्वर बातें, कर्कश कठोर बेसुरी बातें सभीमें मैं ढल जाती हूं। जलका गुण है कि जिस पात्रमें रक्खा जाता है उसीका रूप धारण कर लेता है, यही मेरा भी स्वभाव है, मेरा अपना कोई रूप नहीं है, आप जैसा पैमाना पेश करते हैं उसी रूपमें मैं सामने आती हूँ। आपने मेरा सद्उपयोग करनेका कभी प्रयास नहीं किया।

मुझे दुख है कि आप मुझे, अपनी आवाजको पहचानते तक नहीं, मेरे उपयोगका तरीका तक नहीं जानते। तभी तो तोतला कर, हकलाकर, अशुद्ध बोलकर, बेसुरी बाँसुरी बजाकर मेरी बदनामी करते हैं। आज आपसे अपना रहस्य कहती हूँ, कृपाकर सुन लें और ध्यान दे सकें तो आपका ही हित होगा।

मैं प्रकृतिका दर्पण हूँ अतः जब आप बोलते है तो आपको प्रकृतिकी मर्यादा भंग नहीं करनी चाहिए। आपके दुरुपयोगसे प्रकृतिका यह दर्पण धुंधला, मैला, विकृत हो गया है। प्रकृतिने इस दर्पणमें आपको सब कुछ प्रदान किया है--शीशा, पृष्ठ लेप, चाँदी, फ्रेम, पालिश और उपयोगकी कला। प्रकृतिका निर्देश स्पष्ट है--सहज बनो! बोलनेकी कला आकाशसे नहीं टपकी है, अनुभव और प्रेरणासे प्राप्त हुई है। बोलनेमें सहज उतार-चढ़ाव, सहज ठहराव, सहज मुद्राएँ और सहज ढंग बस इतना ही तो करना है।

आप शायद दर्पणकी तुलना समझे नहीं! यह जो आपकी श्वास है जिसपर मेरा निर्माण होता है वही पृष्ठ लेप है, शीशा ही मेरा सृजन है, चाँदी आपकी अभिव्यक्ति और फ्रेम बोलनेकी शक्ति या शब्द हैं, दर्पणकी पालिश है उसका सद्उपयोग।

अब मैं सबसे पहले आपको अपनी श्वासकी बात कहना चाहती हूँ। अगर मैं कहूँ कि आपको सांस लेना नहीं आता तो शायद आप नाराज हो जांय, किन्तु बात सच है! सांस का उपयोग है रक्तको प्राण वायु प्रदान करना और मेरा निर्माण करना। आपके साँसका उपयोग न जाननेका एक प्रमाण है आपको होनेवाला जुखाम, बढ़े हुए एडिनायड, नाक तथा गलेके रोग, बदहजमी आदि। आपका शरीर प्राण वायुके लिए तरसता रहता है। कारण है आपका आलस्य। और सांस लेनेके आलसमें आप जान दे सकते हैं पर दो चार लम्बी गहरी सांसे लेनेका कष्ट करना नहीं चाहते। यही नहीं आपको मुँहसे सांस लेनेकी गंदी आदत भी है तिसपर इधर आपको चुस्त कपड़े पहननेका शौक भी चर्राया है। श्रीमान् क्या वास्तवमें सांस लेना इतना कठिन और मेहनतका काम है? एक बार ध्यानसे सही ढंगसे सांस लेनेका तरीका सीख लें तो समझ लें जीवन सुखमय हो जायगा, मेरा कल्याण तो होगा ही।

अब आप पूछेंगे कि सही तरीका क्या है? अर्थात आपको आपकी ही मशीनके बारेमें समझाऊँ। आपने कभी 'प्राणायाम'का नाम सुना है, भारतकी, आपके देशकी महान उपलब्धि। तो 'प्राणायाम' कि कला सीख लें, जीवन सुधर जायगा। आपकी जानकारीके लिए श्वास क्रियापर कुछ विस्तारसे प्रकाश डालती हूँ।

सबसे पहले तो आपका यह वक्षपिंजर है पसलियों और मांस पेशियोंसे बना। इस पिंजरेमें आपके फेफड़े और हृदय सुरक्षित रूपसे अपना कार्य करते हैं। यह केवल पिंजरा नहीं है बल्कि श्वास यन्त्रका आवश्यक अंग है। पिंजरेका तला डायाफ्राम है जो वक्षगुहाको उदर भागसे अलग करता है। जब डायाफ्राम सिकुड़ता है तो यह चपटा होकर नीचे उतरता है जिससे पिंजरेका आयतन बढ़ जाता है। पिंजरेकी पसलियाँ और उन्हें जोड़नेवाली पेशियाँ श्वास अन्दर लेते समय ऊपर उठती हैं और बाहरकी ओर मुड़ती है तथा सांस छोड़ते समय ये नीचे गिरती और अन्दरको मुड़ती हैं। इनके अलावा श्वास यन्त्रमें फेफड़े, श्वास नलियाँ, कंठनली, ध्वनि-यन्त्र, नाक और मुंह सभी आते हैं। एक और महत्त्वपूर्ण चीज है उदर पेशी। आपको तो साँस लेनेका ज्ञान तोंदके फूलने पचकनेसे ही होता है, जब कि सही क्रिया में जब सांस अन्दर ली जाय या बोला जाय तो इसे स्थिर रहना चाहिये और श्वास छोड़ते समय इसे अंदर की ओर खिंचना चाहिये जिससे अन्य पेशियोंको मदद मिले। आप करते हैं इसका ठीक उलटा। सांस लेनेका काम करना हैं पिंजरकी पसलियोंको पर करती है उदरकी पेशी और डायाफ्राम। नतीजा होता है कि फेफड़ेके सिर्फ निचले भागको वायु मिलती है, बाकी भाग भूखे रहते हैं। इस डायाफ्रामी सांस लेनेके तरीकेमें डायाफ्राम सपाट रहता है, तोंद बाहर निकलती है, अंग नीचे उतरते हैं, फेफड़े बेमनसे खुलते हैं, पसलियां तमाशा देखती है, सांस लेने और छोड़नेके बीचका अन्तराल लम्बा होता है। आप पूछेंगे सही क्या है। सही है डायाफ्राम-पिजरा सांस जिसमें वक्ष पूरा फैले और फेफड़ेके कोने-कोनेमें प्राण वायु भर जायें। इस तरीकेमें सांस अन्दर लेते समय उदर पेशी स्थिर रहती है, डायाफ्राम किंचित सिकुड़ता है पसलियाँ बाहर और ऊपर उठती हैं, नाकके रास्ते शुद्ध हवा फेफड़ेमें भर जाती है, अब श्वास बाहर निकलतो है उदर पेशी अन्दरकी ओर सिकुड़ती है, डायाफ्राम ढीला पड़ता है और गुम्बदाकार रूपमें ऊपर उठता है, पसली ठहरो रहती है थोड़ी सांस निकल लेती है तो नीचे अन्दरको ओर आकर पूर्वस्थिति बनाती है।

जैसे गिलासमें पानी डाले तो वह तलसे भरता है उसी प्रकार हवा भी फेफड़ेमें नीचेसे भरती है। अतः जितना फेफड़ा वायु शून्य होगा, उतनी अधिक वायु पी सकेगा। मैंने देखा है कभी-कभी आपको कंठ पेशियोंको कड़ा करके सांस रोकते, यह हरकत सांस, सौंदर्य और मेरे अपने लिए बहुत ही खतरनाक है।

श्रीमान् नाक बनी है सांस लेनेके लिए, मुंह बना है बोलनेके लिए (और खानेके लिए भी)! मगर आप है कि सांस लेते हैं मुंहसे और बोलते हैं नाकसे। क्या यह तन्त्रका दुरुपयोग नहीं है। जब नाकसे सांस लेते हैं तो मुलायम तालू नीचे गिरता है और इस अवस्थामें बोलने भी लगें तो मुझे नकियानेकी उपाधि मिल जाती है। मुंहसे बोलते समय, सांस मुंहसे बाहर जाती है, मुलायम तालू ऊपर उठा रहता है, शब्द स्पष्ट शुद्ध निकलते हैं। बहुत बोलना हो तो नेक सलाह है कि बीचमें बराबर नाकसे सांस लेते चले, इससे आराम मिलेगा, तनाव नहीं होगा, न थकान लगेगी। नियम यह है कि बोलनेसे पूर्व ठहरिये, नाकसे सांस लीजिये, फिर मुंहसे सांस खींचिये (बोलनेमें ज्यादा वायु चाहिये) और तब बोलिये। मुलायम तालूपर नियन्त्रण करें तो नाकसे नहीं बोलेंगे। एक साथ दुनिया भरकी बातें बोल डालनेकी कोशिश गलत है जितनी सांस होगी उतनी ही तो बोल सकेंगे, इसके लिए मुंहसे शीघ्रतासे हवा खींच लेनेका अभ्यास करना चाहिये और धीरे-धीरे इसकी गति बढ़ानी चाहिये। बोलना और सांस लेना दो अलग काम हैं, यह आपको जानना चाहिये।

मैं आपको एक अभ्यास बताती हूँ, आलस छोड़कर कर सकें तो लाभ होगा। विश्रामकी मुद्रामें खड़े हों, नीचेकी पसलियोंपर हाथ रक्खें, सांस बाहर निकालें, उदरपेशीको अन्दर खींचे, सांस लें (नाकसे), अनुभव करें कि वक्ष पिंजर फैलता है। पाँच-छ बार दुहरायें फिर इस अभ्यासकी गति बढ़ायें। लम्बी सांस खींचे

और उसे मुँहसे सस्वर ओठपर कंपन सहित बाहर निकालें। फिर लम्बी सांस लें और गिनती या गीतकी कड़ी गुनगुनाते हुए उसे बाहर निकालें। देखें एक बारमें कितना गिन सकते। क्रमशः अभ्यास होनेपर गिनतीकी संख्या बढ़ेगी। और हाँ लम्बी सांस लेते समय पेट सिकोड़े नहीं, यह काम तो सांस निकालते समय करना है।

मैंने आपको मुलायम तालू पर नियन्त्रण करनेको कहा था तो उसके लिए नाकसे सांस लें, मुँहसे निकालें, फिर मुँहसे सांस लें, नाकसे निकालें और इस अभ्यासकी गति बढ़ाये। दर्पणमें मुलायम तालूके दर्शन करें।

देखिये मैं इतनी बातें कह गयी, पर आप अभी भी गलत सांस ले रहे हैं। जोहाँ यह गवैये जो नाभिसे स्वर निकालनेकी बात करते थे, उसका मतलब यह नहीं कि आप तोंदको सांस लेनेका काम सौंपे जिसमें सिर्फ फेफड़ेका निचला भाग काम करे। फिर इस तरह साँस लेनेमें साँस बाहर निकालनेपर आपका नियंत्रण कहाँ रहेगा, और यही साँस तो मेरा आधार है। वह लड़खड़ाया तो मेरा क्या होगा, सोचिये।

मुझे याद है एक बार आपने साँस लेनेका काम हँसली को सौंप दिया था (शायद पेटमें दर्द था), आप कंधे उठाते थे, ऊपरकी पसलियोंको उठाते थे, नीचेकी पसलियाँ विश्राम करतीं। इस प्रकार सिर्फ फेफड़ोंके ऊपरी हिस्सेमें हवा भर रही थी और फिर आपको जुकामने आ घेरा। आपकी साँस छोटी हो गयी। मैं हाँफने लगी, भर्राने लगी, मेरा सरस प्रकंपन लुप्त हो गया।

श्रीमान्, अब दर्पणका शीशा देखिये, यह मैं हूँ। मैं आपके चेहरेकी भाँति आपकी अपनी हूँ, आपकी पहिचान हूँ। आप बोल भले लें पर बोलनेकी तकनीक सीखनी पड़ती है। मेरा अप्रिय, कड़ा, कड़ुवा, अशुद्ध स्वर स्वयं मुझे नहीं भाता, मैं तो चाहती हूँ कि मैं कान तक पहुंचूं तो लगे कि शहद घुल गया है। इसके लिए सही सांस क्रियाके साथ आवश्यक है सिरका प्रकंपन, सही ठहराव, और माँसपेशियोंका तनावहीन रहना। मुँह खोलकर बोलिये या गाइये, पर मुंह खोलनेका यह अर्थ नहीं कि मुँह बाने लगे, स्वरके लिए मुँहका सही आकार आवश्यक है, और बोलते गाते समय शरीरको तनावहीन रखिये।

मैं क्या हूँ—वायु लहरियोंका कंपन मात्र। यह कंपन आपकी कंठनलीपर बैठे लैरिंक्समें स्थित दो पतली पत्तियोंसे उत्पन्न होता है, ठीक वैसे ही जैसे शहनाई बजती है। और कंपन होता हैं तो समूचा वायुपुंज सिरसे वक्षतक आंदोलित होता है और मेरा जन्म होता है। आपका यह विचार कि मैं लैरिंक्ससे निकलती हूँ सही नहीं, वहाँ मैं बहुत छोटी, लघु आकारकी होती हूँ, मेरा लाउडस्पीकर तो आपका कड़ातालु; फैरिंक्स, नाककी कंदराए, सिरकी हड्डीकी कंदराएं, सिर, मुंह, कंठ और नाक सब है। नाक बंद करके बोलिये देखिये मैं कैसी मर सी जाती हूँ, जुखाम या साइनस प्रदाह होनेपर कितनी भारी हो जाती हूँ। मगर आप भ्रमवश सारा ध्यान लैरिन्कसपर केन्द्रित करते हैं, चिल्लाते हैं। श्रीमान, मेरी जनक पत्तियाँ वोकल कार्ड बड़े ही कोमल और सूफियाना तंतु है, आपकी नाजायज हरकतसे ये आहत हो जाते हैं और आप शिकायत करते हैं कि गला बैठ गया है, बोला नहीं जाता। ऐसे की जाती है कीमती वस्तुकी संभाल ?

फिर आप क्या करते हैं, लार्जेजेस चूसने लगते हैं, ठंडा पानी पीने लगते हैं, शिकायत में सबको अपना दुखड़ा सुनाते चले जाते हैं (और कार्ड अधिकाधिक आहत होते जाते हैं) ! बहुत बोले हैं चुप हो जाइये, नाकसे सांस लीजिये, गर्म पेय लीजिये, गले को शीतसे बचाइये।

दर्पणका चौखटा भी देख लीजिये। ऐसा बोलिये कि सुननेवाला समझे कि आप क्या कह रहे हैं। यह दाँत पीसकर या बिना ओंठ हिलाये बोलना, गलेकी मांसपेशियोंको खींचकर चीखना एकदम अस्वाभाविक है।

स्वर और व्यंजन पहिचानिये। प्रत्येक स्वर व्यंजनाका शुद्ध उच्चारण सीखिये। शब्दमें किस स्वर या व्यंजनपर जोर देना चाहिये यह जानिये। बोलना, शुद्ध उच्चारण करना सीखकर ठीक लहजेमें कहना सीखिये। सही वाचन या भाषण वही है जिसमें सही स्थलोंपर जोर दिया जाय, सुउच्चरित स्वर व्यंजन हों, सही मात्रामें उतार चढ़ाव हो और सही भावाभिव्यक्ति हो। स्पष्ट वक्तृता एक कला है। बहुधा आप चबा चबाकर बोलते हैं, अनावश्यक स्वर लगा देते हैं। आपके बोलनेके दोष गिनाना कठिन हैं–आप स को श और श को स कहते हैं, फ को थ कहते हैं, संयुक्ताक्षर तो खैर आपके बसके नहीं, सांसकी कमीसे आपकी बोलीका जोर उसी प्रकार घट जाता है जैसे गुब्बारेकी हवा निकल जाय, परावर्तन, नकियाना, बंद नाकके कारण द को ज और न को ल कहना, उतार चढ़ाव ही न सपाट स्वरमें या अत्यधिक उतार चढ़ावके साथ रोब झाड़ना, तकिया कलामका प्रयोग, व्यंजन खा जाना, बीचमें बोली फँस जाना। आप नहीं जानते कि शब्दपर जोर और ठहराव गलत होनेसे अर्थ बदल जाते हैं—उदाहरणके लिये आप यह वाक्य देखें––

मैंने आपसे एक गिलास पानी माँगा था।

(दूध नहीं)

मैंने आपसे एक गिलास पानी माँगा था।

(और आप पाँच गिलास लाये)

मैंने आपसे एक गिलास पानी माँगा था।

(आप पूरा जग उठा लाये)

फिर आप बिना मेरा आयतन बढ़ाये सिर्फ उतार चढ़ावसे काम चला लेनेकी कोशिश करते हैं यह भी गलत है। बात प्रभावशाली ढंगसे कहनेका तरीका है, जहाँ शब्दपर जोर देना हो ठहरें, व्याकरणके ठहरावपर ध्यान दें (आप तो कभी-कभी मेल ट्रेनकी तरह सभी बड़े-छोटे स्टेशन भूलकर गड़ गड़ गड़ बोलते चले जाते हैं, जिसे कहते हैं कि न जाने क्या कहा कि 'कामा फुलिशटाप नदारद'।), भाषणमें महत्त्वपूर्ण नुक्तेपर ठहरते हैं कि बात श्रोताके दिमागमें उतर जाय। मैं पूछती हूँ जब आप बोलनेको खड़े हुए है तो फिर जल्दी किस बातकी है। इसके विपरीत कभी आप इतनी फुरसतसे बोलते हैं कि घंटोंमें भी एक वाक्य पूरा नहीं होता। बातमें उतार चढ़ाव बातको रंग देता है, भावार्थ, गूढ़ार्थ प्रगट करता है, यह मेरा कलात्मक शृङ्गार है, इसे किसी अच्छे अध्यापकसे सीखिये। सीखिये कि निवेदन, निराशा, अस्वीकृति, प्रश्न, उत्तर, कटाक्ष, दुविधा और भावोत्कर्षकी व्यंजना कैसे करते हैं। कब धीमें बोलना चाहिये, कब जल्दी, कहाँ शब्द दुहराने चाहिए, कहाँ नहीं। आदेश, विस्मय, संदेह, व्यंग, विरोध कैसे प्रगट करते हैं।

संगीतमें सप्तक होते हैं नीचेका, बीचका और ऊपरका। ऊपरके तार सप्तकमें या ऊँची पिचमें बोलना अच्छा नहीं लगता इससे स्पष्टता थोड़े आती है। संगीतमें गति और लयपर ध्यान देते हैं, शक्ति और तीव्रताका उपयोग भावव्यंजनाके लिए होता है। आप चाहते है कि आपकी बात सुनी जाय तो सामने देखकर, श्रोतासे आँख मिलाकर बात करें। अपने आपपर नियंत्रण रक्खें, बात करें, बकवास नहीं।

अन्तिम बात, बोलते समय आपकी मुद्रा, हावभाव और शरीरका पोज है। कितनी बार अच्छी बात अतिशय हावभावके चक्करमें बिगड़ गयी है। आपकी तो हाथ हिला हिलाकर बोलनेकी आदत है। बोलते समय खड़े होने या बैठनेका भी तरीका है, आप भाषण देने लगते हैं तो लगता है जैसे कथाकली नृत्य कर रहे हैं। चेहरा तो भगवान बचाये, आप बोलते समय ऐसा-ऐसा बनाते हैं कि बस और कभी ऐसा निर्विकार भाव अपनाते हैं कि पता चलता है कि मुर्दा बोल रहा है, या कि कोई काठका पुतला।

बहुत कुछ बक गयी श्रीमान। मगर कविकी वाणी में––

(शेष पृष्ठ ३२ पर)

अपनी खबर

—डा० बेखबर—

कहते हैं न 'हम वहाँ है जहाँसे हमको भी कुछ हमारी खबर नहीं आती' तो अब आज आपको अपनी खबर नहीं है तो सोचिये पुराने जमानेमें जब साईंस इस कदर आगे नहीं बढ़ी थी क्या आलम था ! 'अंधेरी कोठरी' कहते थे इस तनको ! शरीरका सारा व्यापार अदृश्य शक्तियोंके जिम्मे था, कहीं देवता थे, कहीं प्रेत तो कहीं आत्माराम ड्राइवर बने आदमीकी बैलगाड़ी हाँकते थे। इस खबरकी खबर बड़ी मजेदार है, देखना चाहे तो आइये पुरानी दुनियाकी सैरकर आयें।

एक देश था मिस्र। अब तो उसकी सभ्यताकी कहानी रह गयी है, और बच गये हैं विशाल स्मारक, परिक्षित शव (ममी) और कुछ पोथियाँ। अब इनसे पता चलता है कि ये लोग मानते थे कि कुदरतका हर काम दैवी शक्तियाँ चलाती हैं। यहाँ 'जो बाहर होता है वैसा ही अन्दर भी होता होगा' सिद्धांत चलता था। सितारों- ग्रहोंसे ज्यादा जोर नील नदीपर था। सब कुछ नीलकी बाढ़पर निर्भर था और नीलमें बाढ़ प्रभात बेला में लुब्वक नक्षत्रके उदयसे संबंधित थी अतः नीलकी बाढ़ दैवी और नक्षत्रीय शक्तियों और आदमीके तनकी हरकतोंका सिलसिला बैठ गया।

मिस्रमें एक 'प्रेत पोथी' थी, इसमें शरीरके ३६ भाग गिनाए गये। और हर भाग या अंगका नियंत्रण देवता विशेषके जिम्मे था। उदाहरणके लिए नेत्रके देवता थे हैथोर, कानके **अस्सुद**, ओठोंके **अमीबस**, केशवर्धनके नेई, मुखके **'रा'** आदि। और सबके गुरु गोबरधनदास थे देवता **'थोथ'**, ये सबके कार्योंपर निगाह रखते थे, संतुलन और सहकार बनाये रखते थे। आजकी भाषामें 'थाथ' मस्तिष्क और मेरुरज्जु (स्पाइनल कार्ड) थे। थोथ देवताका बंगला दिलमें था और यहींसे धक् धक् अपनी टेलीग्राफिक भाषामें वे समूचे शरीर और मातहत देवताओंको संदेश भेजते रहते थे।

पेपिरस (पोथी) थीबेथ (१५२२ ई० पू०) में लिखा है, 'हृदयमें शरीरके हर अंगको जानेवाली वाहिका है। यदि चिकित्सक अपनी अंगुली सिर, गरदन, हाथ, पैर, बाहु या शरीरमें कहीं रक्खेगा तो सर्वत्र उसकी हृदयसे भेंट होगी, क्योंकि हृदय हर सदस्य तक जाता है और हर सदस्यकी वाहिकामें उससे वार्ता करता है।'

'हृदय सभी वाहिकाओंका केन्द्र है ! चार वाहिकाऐं नासिका कक्षको जाती हैं इनमेंसे दो से श्लेष्मा और दो से रक्त पहुँचता है। खोपड़ीके कनपटी भागमें चार वाहिकायें हैं जहाँसे नेत्रको रक्त मिलता है। सिरमें चार वाहिकाएं विभाजित होती हैं और पृष्ट भागको जाती हैं।'

एबर्स पोथीमें फरऊ ऊषाफेइसका कथन उद्धृत है– 'आदमीमें १२ मुख्य वाहिकाएं हैं जो हृदयसे निकलती हैं और उसके शरीर तथा अंगोंको जाती हैं, दो वक्षको, दो प्रत्येक पैरको, दो प्रत्येक हाथको, दो सिरके पीछे जहाँसे दो शाखाएं नेत्रोंको और दो नाकको, दो शाखाएं दाहिने कानको जाती है जिनसे प्राण वायु प्रविष्ठ होती हैं, दो बायें कानको जाती हैं जिनसे काल वायु गुजरती है, और ये सब शाखाएं हृदयसे निकलती हैं।'

हृदयका काम था वायुवितरण ! हृदय ही जीवनका केन्द्र था। मिस्रमें ही नहीं और कहीं पहले पाषाण युगमें भी। पिंडल हाथीके चित्रमें हृदयका स्थान अंकित है, नीयूके बाईसनके हृदयमें तीर चुभे हैं। स्पष्ट है कि वह पूर्व पुरुष दिलकी कैफियत जानता था।

दिलकी धड़कन तो उस आदिम पुरुषने भी सुनी थी ! न भी कैसे सुनता प्रेम, भय, हर मौके बेमौके वह बोलने जो लगता था। उसके लिए यही आत्माका मंदिर था ! धड़कन आत्माका हरिकीर्तन था जो आत्माके निकल जानेपर मौन हो जाता था।

दिल आत्मारामका मंदिर था अतः भाव, उत्साह, संजीवनी शक्ति, बुद्धि, विद्या और शौर्य सभी यहीं रहते थे। प्रेत पोथीमें एक प्रेत कहता है 'मेरा दिल मेरी माता था, मेरा दिल धरापर मेरा अस्तित्व था, वह मेरे अन्दर रक्खा गया, मुझे मुख्य देवोंने उसे लौटा दिया और इसने मुझे देवोंके समक्ष ला रक्खा।' मृत्युके बाद हृदयको दिव्य तुलापर तोला जाता था और प्रेतात्मा का इसीके आधारपर भाग्य निर्णय होता था। एक

भीत्ति चित्रमें ओसिरिसके मंदिरका दृश्य अंकित है। ओसिरिस मृतकोंके न्यायाधीश और प्रेतलोकके शासन थे। चित्रमें वे ४२ असेसरोंके साथ विराजमान हैं, उनके सामने तुला है जिसके एक पलड़ेपर दिल रक्खा है जिसे 'सत्य' से तौला जा रहा है।

मिस्रवासियोंका विश्वास था कि जन्मसे पचास वर्ष तक हृदय भारमें प्रतिवर्ष दो दरभ बढ़ता जाता है और उसके बाद इसी रफ्तारसे हल्का होता जाता है और इसीका फल होता है बुढ़ापा और मृत्यु।

मिस्रके ममीकरण करनेवाले बड़ी सावधानीसे दिलको निकालकर अलग रख लेते थे, क्योंकि यही तो टिकट था जिसे तुआत देवताको दिखाकर स्वर्गमें प्रवेश मिलेगा। वे शरीरमें दिलके स्थानपर पवित्र भौंरा रख देते थे। क्योंकि दिल ही तो भ्रमर है। एक कोई 'अनी' थे उन्होंने बड़े मार्मिक शब्दोंमें दिलसे इल्तिजाकी है कि उनके खिलाफ गवाही न दे। 'ओ मेरे दिल, तू मेरे तनका अंग है, मेरे विरुद्ध गवाही न देना।' । और साहब दिलने दगा नहीं दिया। क्योंकि महान अमींदके दूतने ओसिरिसके दरबारमें कहा 'अब सत्य बचन सुनो। मैंने हृदय का मूल्यांकन किया है। अनीने अपने हृदयसे प्रार्थना की है कि उसे धोखा न दे। उसकी आत्मा उसकी साक्षी है। उसका चरित्र उत्तम निर्दोष था जैसा तुला कहती है। उसका कोई भी पाप ज्ञात नहीं हो सका।'

बड़ी इज्जत थी दिल की! एबर्सने अपनी पुस्तक 'उरादा' में मिस्री सर्जन नेब्सखतकी चर्चा की है, बेचारेको अध्ययनके लिए दिल नहीं मिला क्योंकि दिलपर सख्त पहरा था।

मिस्रवासी दिल नहीं खाते थे, यह पाप था। प्रेत पोथीमें आत्मा कहती है 'मैंने किसीका दिल नहीं खाया'। वे जब पशुका हृदय निकालते थे तो आवाज देते थे 'लो, अपना दिल संभाल लो'।

मिस्रमें देवताओंका राज्य था तो असीरिया बाबुलमें प्रेतोंका। बाबुलमें शरीर और आत्मा या आत्माएं होती थी। शरीरकी क्रिया आत्मा संचालित करती थी और आत्माकी रास ग्रहोंके हाथ होती थी। बुद्धिकी आत्मा हृदयमें निवास करती थी, गतिकी आत्मा लीवर में। रक्तकी बड़ी इज्जत थी क्योंकि इसका उद्गम लीवर था जहाँ चेतन आत्माका वास था।

बाबुलके बाद आये फारसी और इन्हें 'खल्दियाके ज्ञान' की विरासत मिली। फारसी मानते थे कि शरीर संचालन करने वाली शक्तियाँ रक्तमें निवास करती हैं। ये शक्तियाँ जन्मके साथ पैदा और मृत्युके साथ विनष्ट हो जाती हैं। वे शाश्वत आत्मका अस्तित्व मानते थे पर उसका स्थान स्पष्ट नहीं है।

भारत तो ज्ञानोदयका देश ही है। यहाँ शरीररूपी रथको परमात्मा ही चलाता है। त्रिदोष, सप्त धातुकी चर्चा सर्वविदित है। जब धातुओंका संतुलन रहता तो आदमी स्वस्थ रहता और दूषित होनेपर गाड़ी पटरीसे उतर जाती। इन परिवर्तनोंका नियन्त्रण करनेवाली शक्ति नाभि प्रदेशके नीचे स्थित थी। मिस्रवासियोंकी तरह यहाँ दिलपर नहीं वायुपर ज्यादा जोर था। लोग दिल लगानेके बदले प्राणायाम साधते थे। बच्चा पैदा होता है तो सहसा पहली सांस लेता है, आँख खोलता है और रो देता है, मृत्यु आती है तो सांस लड़खड़ाती है और फिर एक हिचकी आती है प्राण निकल जाते हैं। उन्होंने यह सब देखा था। वे मानते थे कि प्राण वायु परमात्माका अंश है। आदिम मानव भी श्वासको आत्मा का ही रूप मानता था। स्वास्थ्य और बीमारीमें श्वासके रूपमें परिवर्तन वे देखते थे, कहते थे 'जब तक सांस तबतक आंस'। बाइबिलका यह कथन 'और फिर उसने उसकी नासिकामें प्राण वायु फूंक दी' इसी विश्वासका समर्थन करता है। सभी प्राचीन भाषाओं सांस, प्राण, आत्मा, बहुत कुछ समानार्थक हैं।

प्राचीन रोममें मरणासन्नके निकटतम सम्बन्धीका यह धार्मिक कर्त्तव्य था कि वह उसकी अन्तिम श्वास ग्रहण कर ले जिससे आत्मा नष्ट न हो। यह प्रथा अन्यत्र भी मिलती है। ताईरोलके किसानोंका कहना था कि उन्होंने धुंएके रूपमें आत्माको निकलते देखा है। फूंकके रोग अच्छा करनेकी तरकीब तो आपने भी आजमाई होगी। बच्चेको चोट लगी और माँ उस स्थलपर फूंकने लगी, 'लो अच्छा हो गया', इसके पीछे यही चमत्कारी विश्वास है।

कुछ आदिम लोग आत्माका निवास वक्ष और उदरके बीच डायाफ्रामके निकट मानते हैं, क्योंकि अगर इस क्षेत्रपर घूंसा पड़ जाय तो सांस रुक जाती है, या ऊपरकी ऊपर, नीचेकी नीचे रह जाती है। मृतकसे नव-जात शिशुके मुँहमें फूँकनेकी परम्परा भी बहुत पुरानी है। इसमें औषजन पहुँचाने या शिशुका फेफड़ा चालू करने आदिके विचार नहीं है बल्कि यह कि आत्माहीन शिशुको आप अपनी प्राण वायु प्रदान करते हैं।

डायोजिनिस विश्वास करता था कि मानव की विचार शक्ति शरीर और रक्तमें वायुसंचारसे पैदा होती है! आदमी जानवरसे ज्यादा बुद्धिमान है वह इसलिए कि वह ज्यादा शुद्ध वायु ग्रहण करता है (जानवरका थूथन जमीनके पास रहता है) और पेड़को नाक नहीं है अतः बुद्धि होती ही नहीं।

मगर साँसकी साँस पकड़ी भारतके मनीषियोंने। उन्होंने वातके वर्गीकरण किये। प्रत्येक वातको अलग कार्य सौंपा। बड़ी सावधानीसे उन्होंने सांसे गिनीं, सांसोंका हिसाब किया अर्थात् हम हर रोज २२,६३६ वार साँस लेते है अर्थात् एक मिनिटमें १६ बार और यह गणना आधुनिक गिनतीसे मिलती है। महान् लोगोंने प्राणायाम विद्या बना डाली, उसे विज्ञानका पद दे दिया। यहाँ दृढ़ विश्वास है कि श्वासपर नियंत्रण किया जा सके जो शरीर और मनको काबूमें किया जा सकता है।

यूनानके लोग दार्शनिकसे ज्यादा कवि थे। अच्छे रचनाकार थे अतः अध्यात्मिक विश्वासोंको भी काव्यात्मकता प्राप्त हो गयी। ईश्वर कल्पनासे सृष्टि करता है, प्रकृति की हर वस्तुको नियंत्रित करता है; स्वास्थ्य, जीवन सब उसके इशारेपर चलते हैं। शरीरके अंगोंकी क्रियाओंका सम्पादन देवताओंके जिम्मे और रोग दुष्ट प्रेतात्माओंके जिम्मे। वे सुर-असुरमें अधिक भेद नहीं करते थे, दोनों ही अवतारी थे और आदमीसे बल-बुद्धिमें श्रेष्ठ थे। देवता जब चाहते आदमीके सामने प्रगट या अदृश्य हो सकते थे, वे नर, पशु या जैसा चाहते रूप धारण कर सकते थे। आदमी की भाँति उन्हें भी नित्य भोजन (एम्ब्रोसिया), पेय (अमृत) और निद्रा की आवश्यकता होती थी। मानवोंके बीच आकर वे उनका आहार और अतिथ्य ग्रहण करते थे। उनमें भी प्रेम, घृणा, ईर्ष्या और बदला लेने की भावानाएँ होती थी। वे भी आहत हो जाते थे, हाँ मरते नहीं थे। उनके अपने वैद्य थे।

ई० पू० छठी सदीमें जब पूर्वी आध्यात्मवाद की लहर यूनानपर छायी तो गहरी प्रतिक्रिया हुई। पिथागोरस (बुद्ध गुरू) के दर्शनमें पांडित्यवादका उदय हुआ जिससे बुद्ध और जरस्थ्रूके गणित-भौतिकी ब्रह्म धारणा और पिथोगोरसके रूपान्तारित मनोविक्षिप्तिके विचार मिले थे। इन बुद्धिमानोंने प्राचीन यूनानी पुराणों को पोंगापंथी करार दिया, अब देवताका स्थान एक परमात्माने ले लिया। कहते हैं कि सबसे पहले पिथागोरसने ही शरीरमें आत्माके अस्तित्वकी कल्पना की। इनके दर्शनमें शरीर तो सिर्फ पिंजरा था जिसमें आत्मा निवास करती थी अर्थात् शरीरका कोई महत्त्व नहीं था। भारतमें भी शरीर पुराना वस्त्र माना गया जिसे आत्मा उतारकर नया पहन लेती थी।

अब यह सिद्धान्त सभी धार्मिक दर्शनोंकी जड़में बैठ गया और प्लेटो (अफलातून) के दर्शनका आधार बना। आधुनिक चिकित्साके जनक हिपोक्रेटीज़ की मृत्युके समय प्लेटो किशोर था। वह हिपोक्रेटीज़के प्राकृतिक और नैतिक दृष्टिकोणसे बहुत प्रभावित हुआ। पर उसका शरीर क्रिया विज्ञान पिथागोरियन ही था, हिपोक्रेटीज़की तर्कसंगतता उसे नहीं भायी। प्लेटोने कहा ईश्वरने विश्रृंखलतामेंसे चार तत्वों छिति, जल, पावक और समीर की रचना की और इन्हींसे सब कुछ बना हैं, आदमी भी इन्हीं तत्त्वोंसे निर्मित हैं। उसके अन्दर बैठी क्रिया शक्ति—आत्मा उस परम-मेघा की ही एक किरण है। तन और आत्माका सेतु है मस्तिष्क जो आकाश सा गोलाकार है! आत्माके उपकरणके रूपमें सर्वप्रथम नेत्र बनते हैं। दृष्टि क्या है? नेत्रसे निकलती

अन्तर अग्नि की किरणोंका दृष्ट पदार्थसे मिलना । श्रवण पवनके कंपनसे लायी वस्तुका मस्तिष्क और रक्त-द्वारा ग्रहण करना है ।

शरीरका संचालन सिर करता है, इसीसे वह आदमीके शीर्षपर है और इसी सिरमें आदमीकी तर्क शक्ति भरी होतीं है । तिल्ली रोगका मैला धोती है । आँतें सर्पकुंडली आकार इसलिए हैं कि भोजन जल्दीसे निकल न जाय और तुरत फिर भूख न लगने लगे । आत्मा स्वचालित शक्ति है जो स्वयंको तथा अन्य चीजोंको चलाती है, स्वयं किसी अन्यके कहनेसे हिलती भी नहीं । आत्मा अमर, दिव्य और परमात्माका अंश है अतः किसी प्रकार भी पदार्थपर निर्भर नहीं है । अंगोंकी भौतिक क्रियाएं और नैतिक प्रवृत्तियाँ आत्मत्रयी द्वारा निदेशित होती है । आत्माका एक अंश तर्कसंगत है और यह सिरमें अवस्थित है, अपार्थिव अंश वक्षमें और काम अंश उदरमें रहता है ।

प्लेटोकी तर्कसंगत आत्मा ही सारथी है, विश्व आत्माका अंश है और इसीके माध्यमसे आदमी खुदा तक पहुंच सकता है । यह आत्मा निष्कलंक और नित्य सनातन है । आत्माके बाकी दोनों अंश पापमें लिप्त हो सकते है । इस प्रकार प्लेटोने आत्माको विज्ञान बना डाला और इस अफलातूनवादपर अनेक धार्मिक विश्वासों के महल बने ।

प्लेटोसे पचास वर्ष बाद पधारे अरस्तू । इनका भी कोई जोड़ा नहीं है । इन्होंने नये-नये तरीकोंसे प्राणियोंका अध्ययन किया । इनके लिए आत्मा सारथी मात्र है और बाह्य ब्रह्मप्रभाव विशेष ज्ञानेन्द्रियोंके माध्यमसे मार्ग दर्शन करते हैं । अरस्तुने मन और आत्मामें भेद किया, पदार्थ और रूपमें भेद किया, शरीर पदार्थ है आत्मा रूप, आँख यदि पशु है तो दृष्टि उसकी आत्मा । अरस्तुने कहा कि विश्व जीवित है और उसकी एक आत्मा है । प्रत्येक पदार्थका निर्माण सकारण होता है । पदार्थ पंच तत्त्वोंसे बनता है । प्रत्येक तत्त्व सजीव है, क्योंकि उसमें विश्व-आत्मा भरी है । इस प्रकार अरस्तुने तर्क और वैज्ञानिक तरीकोंके आधारपर शरीरकी क्रिया समझनेकी चेष्टा की । जितना शारीरिक ताप उतनी बुद्धि, अतः मछली मेढ़क बुद्धि हीन । तापका स्रोत रक्त जो हृदयसे निकलता है । चिंतन और अनुभूतिका स्थान मस्तिष्क नहीं हृदय है । मस्तिष्क तो ठंडा पानी बनाता है जो दैहिक तापको शांत करे । दिलकी धड़कन यानी गर्मीके कारण रक्तमें उठते बुलबुले । अर्थात अरस्तुने पुनः दिलको गद्दी पर बैठाया ।

अरस्तुका दिल चार खानेका था और एक तरहका चूल्हा था जहाँ फेफड़ेसे आयी हवा पकती थी । इसी दिलमें दर्द था, आनंद था, इच्छा थी । फेफड़ेकी धौंकनीमें जीवनकी अग्नि जलती रहती थी और खोपड़ीसे शीतलता बरसती रहती थी ।

अरस्तुने शरीरसे भिन्न आत्माका विरोध किया, उसकी आत्मा शरीरसे अविच्छिन्न थी । शरीरसे आत्मा अलग होनेपर दोनों ही निर्जीव हो जायँगे । आत्माका सबसे अधिक विकसित रूप है 'मन' । अन्य भी अनेक रूप है—(१) तर्कसंगत : विशुद्ध आध्यात्मिक और परमब्रह्मसे प्रेरित (२) कामात्मा : इच्छा और कामका स्रोत (३) चलात्मा : जो चलनेकी शक्ति प्रदान करता है (४) चेतनात्मा: अनुभूति और चेतनाका स्रोत जिससे चार तत्वोंका ज्ञान होता है (५) वनस्पति आत्मा: जो शरीरके पोषणसे उपजती है । वनस्पति आत्मासे शरीरकी वृद्धि होती है ।

विचित्र बात है कि प्राचीन हिब्रूमें भौतिक तथ्यके रूपमें आत्माका उल्लेख नहीं है । प्रारंभिक मसीहा और पेंटाटचूख आत्माकी चर्चा ही नहीं करते । वहाँ नेफेश, रूह, नेशमः आदिका जिक्र है जो आगे चलकर आत्माके पर्याय बन गये । शरीरकी सब क्रियाओंका संचालन परमात्माके जिम्मे था । 'किसने मुंह बनाया है, कौन मूक बधिर बनाता है या दृष्टि देता या अंधा करता है ? मैं, परमात्मा ।" 'मैं ही जख्म करता हूँ, मैं ही उसे भरता हूँ ।'

आगे चलकर हिब्रू लोगोंने प्लेटोका आत्मवाद स्वीकार लिया मगर शरीर क्रियामें वह फिर भी नहीं घुसी। हर धड़कनमें उसीका स्पंदन था। चौथी सदीका एक तालमदीय आचार्य कहता है 'उसकी इच्छा बिना एक अंगुली भी आहत नहीं होती' या बाल भी बांका नहीं होता।

नये टेस्टामेंटमें भी आत्माका कार्य स्पष्ट नहीं है। यह है कि वह परम चेतनका अंश है, तनसे अलग है और वह चिंतन कर सकती है। अगस्तीनका कहना है कि शरीर सोच ही नहीं सकता। सोचनेका काम आत्माका है। कैथोलिक चर्च मानता है कि (१) शरीरसे अविच्छिन्न आत्मा-शरीरका रूप है (२) आत्मा अपूर्ण पदार्थ है क्योंकि उसे शरीर संगकी स्वाभाविक आवश्यकता होती है (३) यह प्रसार रहित अपार्थिव है (४) प्राणिके विकासमें क्षण विशेषमें इसका आविमावि होता है।

आत्माकी खबर पाली हो तो चिकित्सा जगतमें आये। यहाँ हिपोक्रेटीज विद्यमान है जिसने चिकित्साको आध्यात्मिकतासे अलग किया। सीधी सादी बात कही कि तत्व चार हैं मिट्टी, हवा, आग और पानी, इन्हींका संतुलन स्वास्थ्य है। चार ही रस हैं—रक्त, कफ, काला पित्त और लाल पित्त। इनका उचित संम्मिश्रण और प्रमाण ही संतुलित क्रियाका आधार है। यह चतुर्दोष हजारों वर्ष तक चलाता रहा। हिपोक्रेटीज मूलतः प्रकृतिवादी था और उसे प्रत्यक्ष अनुभव, और तर्कसंगतता प्रिय थी।

इसके बाद डायोक्लीज आये। इन्होंने चिकित्सा शास्त्रके लिए शरीर रचना, भ्रूण विज्ञान, विष और औषधि शास्त्रको आधार बनाया। इनके लिए दिल रक्त और सर्वाधारा आत्माका निवास स्थान था। आत्मा 'न्यूमा' के माध्यमसे नियंत्रण करती थी।

फिर आये एपीक्यूरियन्स। ये चार्वाकी लोग थे। कहा कि हाँ आत्मा है, पर तनसे जुदा नहीं। वे डैमोक्रिटसककी बात मानते थे कि आत्मा सूक्ष्म कणोंसे बनी है। ये अविभाज्य अणु अत्यन्त सूक्ष्म, आग्नेय, आकाशी और वाष्पीय होते है, तनसे बिछुड़ते ही बिखर जाते हैं।

स्टोइक मानते थे कि आत्मा सागरसे बिछुड़े जलके बिंदुसी है और परमात्मा अदृष्ट दृष्टा, श्रवणहीन श्रोता, अज्ञात ज्ञाता है, शाश्वत है जिसमें विश्वका विस्तार निहित है।

सिकंदरियामें अरस्तु शिष्य सिकंदरने एक विशाल पुस्तकालय और विद्यालय बनाया था। यहाँ ज्ञात होता है कि वैज्ञानिक ढंगसे चिकित्साका अध्ययन होने लगा था। यहीं हिरोफिलस (हृदय रोग विशेषज्ञ, जिसने नाड़ीकी गति और स्वास्थ्यका सम्बन्ध जोड़ा) और एरासिसस्ट्रेटस जैसे विद्वान हुए। इन्होंने नाड़ीकी गति गिननेके लिए 'क्लेपसिड्रा' घड़ीका निर्माण किया था। एरासिसस्ट्रेटसका एक किस्सा बड़ा मशहूर है जब उसने प्रेम व्यथासे पीड़ित राजकुमारके प्रेमका रहस्य प्रेमिकाके आते ही नाड़ीकी गति बढ़नेसे जान लिया था।

मतलब यह कि अपनी खबरकी कहानी बहुत लम्बी है। आज तो बहुतसे यंत्र निकल आये हैं और आदमीको सूक्ष्म-दर्शकके नीचे चीर-फाड़कर बहुत रहस्य जान लिये गये हैं। मगर अभी भी कुछ और है जो कहा नहीं गया, इसके आगे भी जहाँ और है। आदमीकी अपनी शोध यात्रा जारी है, रोज नयी दुनिया, नये लोकके द्वार खुलते हैं, कुछ देर उनकी चकाचौंध और शोर रहता है फिर सवारी आगे बढ़ जाती है आज भी आत्मा परमात्माको तलाशती है और हताश शायर गुनगुनाने लगता है—'कोई उम्मीदबर नहीं आती, कोई सूरत नजर नहीं आती,।

(बेजामिन ली गोर्डनकी 'रोमांस आफ मेडिसिन'से साभार)

दाने दानेपर लिखा है

—डा० दाना—

'जो पिंडमें है वही ब्रह्मांडमें है' बड़ी पुरानी धारणा है। एक विश्वास है कि नीली छतरीवालेने मानवके लिए गुणकारी सभी औषधियों पर अपना ठप्पा लगा दिया है। चिकित्साके इतिहासमें 'चिह्नांकित' या ठप्पेका सिद्धान्त शायद सबसे पुराना और रोचक है। कहते हैं कि मानव शरीरके हर अंगका प्रतिसाम्य प्रकृतिमें विद्यमान है। अब अगर किसी अंगमें रोग हो तो अपनी प्रतिरूप औषधिसे जल्दी अच्छा हो जाता है। प्रतिसाम्य आकार या रचनामें वास्तविक, प्रतीकरूप या काल्पनिक हो सकता है। ठप्पा सिद्धांतका पूर्वाग्रह है कि हर रोगकी दवा ईश्वरने बनायी है आदमीको सिर्फ उसे ढूंढना भर है।

औषधि चयनमें दो मुख्य बातें हैं—रंग और रूप। रंग संकेतका बाबुली चिकित्सामें बड़ा महत्त्व था! आँखकी पुतलीपर पीली परत पड़ गयी है (माड़ा) तो पीले मेढकका पीला पित्त दहीमें मिलाकर लेप करें। पीलिया हो गया है तो हल्दी, केसरके फूल, रेवा चीनी की जड़ (पीत वर्ण) या अन्य पीली औषधि लें। दाई अपने साथ पीला सिक्का या पीला फीता लेकर चलती थी।

चेचक, खसरा, स्कार्लेट फीवर आदिमें त्वचा लाल हो जाती है अतः रोगीको लाल कंबल ओढ़ाते हैं, कमरेमें लाल रोशनी, लाल परदे लगाते हैं, चद्दर भी लाल बिछाते हैं और लाल अनारका लाल शरबत पिलाते हैं। सर्वत्र 'लाली मेरे लालकी जितदेखूं तित लाल' की बहार मिलेगी।

गठियामें जब जोड़ोंमें सूजन और लाली आ जाती है तो लाल फ्लैनेलकी नौ बार लाल रंगमें रंगी पट्टी बाँधते थे। ९ बार इसलिए कि नौ पवित्र संख्या है। अलबनियाके किसान घावपर लाल पत्थर छुलाते हैं जिससे खून बहना रुक जाय। रक्तकी कमी हो तो लाल मदिरा पिलाइये शीघ्र ही रोगी लाल बूंद हो जायगा। यही नहीं रक्त पीनेवाला प्रेत भ्रमसे मदिरा पीकर बेहोश हो जायगा और इस प्रकार रक्तपान करना भूल जायगा। गुलाबकी लाल पंखुड़ीपर रक्तका हस्ताक्षर है, चुकन्दरके लाल रससे अनेक रक्त रोगोंकी चिकित्सा की गयी है। लोकचिकित्सामें विशेषकर चीन और न्यूज़ीलैंडमें लाल वर्णका बड़ा महत्त्व रहा है क्योंकि लाल रंगसे भूत भागता है। लाल नेकलेस, लाल मनके, लाल फीते, लाल मूंगेकी अंगूठियां, लाल घंटियाँ और लाल गोलियोंका कभी अपना रंग था। जुखामसे बचना हो तो लाल स्वेटर पहनिये, गला खराब हो तो लाल मफलर बाँधिये।

लाल रंग लाल रक्तका मान्य एवज है। रोममें कैपिटालमें उत्सवके दिनों जीवकी प्रतिमाका मुख गहरे लाल रंगसे रंगते थे। यूनानी अपने मदिरा-देवता डायोनिससका चेहरा या समूचा विग्रह लाल रंगसे रंगते थे। सभी आदिम जातियोंमें आज भी जादुई क्रियाओंमें लाल रंगका प्रयोग होता है। चिकित्सामें भी लाल विशेष रूपसे प्रिय रंग है। चीनमें चिकित्सक लाल गोलियाँ देते थे, लाल पर्चेपर चिकित्साके तावीज लिखते थे और बच्चोंके बालोंमें लाल फीते बाँधनेकी सलाह देते थे।

एक पौधा है लीवरवर्ट (प्रहरिता)! इसे लीवरकी बीमारियों देते थे, क्योंकि इसकी पत्तियोंका आकार लीवरसे मिलता है। इसी प्रकार लंगवर्टकी पत्तियां

फेफड़ेके आकारकी होती हैं अतः फुफ्फुस रोगोंमें कारगर मानी गयी। हृदयाकार पत्तियाँ धात्री माताके दुखते स्तनोंपर रक्खी जाती थीं। आईब्राइटके फूल आँखसे होते हैं अतः इसका नेत्र रोगोंमें उपयोग होता था। पियोनियाकी कली आदमीके सिर जैसी लगती है अतः मिरगीकी अचूक दवा थी। किडनीवोर्ट (लोबिया) की पत्ती गुर्देके आकारकी होती है और मोथ (किडनी बीन) भी वृक्काकार अतः गुर्देके रोगोंमें इनका उपयोग हुआ। मोथका तो ज्योतिषमें भी महत्त्व था। ज्योतिषकी दृष्टिसे मोथका संबंध शुक्र ग्रहसे है अतः जब शुक्र चढ़ता होता तब इसका संग्रह करते थे। पोस्तेके डोटे शिर पीड़ामें, वासंतीलता लिली ऑफ द वैलीके पुष्प रक्त मूर्च्छामें इस्तेमाल होते थे।

ठप्पा सिद्धांतका एक तरीका यह भी था कि बीमारके जिस अंगमें व्याधि हो किसी पशुका वही अंग उसे खिलाया जाय। लीवर रोगमें कलेजी खिलाते हैं। कैंसरके लिए सूखा टोड मेढ़क वृद्धिपर रखते थे। आँतमें कीड़े हों तो उदर पर जिंदा कीड़ा रखते थे। दमाका एक इलाज था तेज भागनेवाली लोमड़ीका फेफड़ा।

कुछ पौधोंकी जड़ें देखनेमें मानवाकार होती हैं या किसी अंगके प्रतिरूप थीं। चीनी औषधि जेन् सेन्की जड़ आदमीके पैरोंसी होती है अतः पैरोंके लकवेमें दी जाती थी। जेन्सेन्की जड़ खौलाकर ताकतकी दवाके रूपमें इस्तेमाल होती है क्योंकि विश्सास था कि यह जिन्दा हो जा सकती है। जेन्सेन्की अनेक लोक कथाएँ है जिनमें विश्वास है कि तीन सौ वर्ष बाद यह एक दिन जीवित प्राणी बन जाता है। जेन्सेन्का रक्त श्वेत होता है जिससे सभी रोग दूर हो सकते हैं, पर श्वेत रक्त पाना बड़ा कठिन है। उसके लिए बड़े कठिन विधान हैं। जेन्सेन्की कुछ बूँदें (श्वेत रक्त) मुर्देको जिला सकती हैं।

एक और पौधा है शांगलुह ; यह भी जेन्सेन् सा करामाती है। इसकी जड़ें आदमीके आकारकी होती हैं और जब इन्हें उखाड़ा जाता है तो ये चीखती हैं। चीनमें यह पौधा जादूमें प्रयुक्त था। इसकी पुतली बनाकर इस्तेमाल करते थे। सांगलुह पीनेसे उन्माद और दृष्टिभ्रम होता है जिसमें भूतप्रेत दिखते हैं ! इसका उपयोग वशीकरण और पुत्रदाके रूपमें होता था। धतूरा भी बहुत पुराना पौधा है जिसमें रूहानी सिफत् देखी गयी। इसकी सूरत भी इन्सानी मानी गयी। सबसे अधिक रहस्यमय पौधा था मैनड्रेक (मन्द्रागोरा) था। इसमें महान आध्यात्मिक और औषधीय गुण माने गये थे। यह निद्राकारक और वाजीकरण करनेवाला माना जाता था। इसकी जड़ें भी मानवाकार होती हैं। कथा प्रचलित थी कि इसे उखाड़ते समय जड़ें चीखती चिल्लाती हैं और यदि कोई इसे सुन लेता तो मर जाता। अतः उखाड़नेवाले कानमें रुई ठूँसकर जाते थे। मैंड्रेक वास्तवमें शामक है। यह प्रसवको सरल बनाता है। दरअसल पुराने जमानेमें इसका उपयोग बेहोशीकी दवाके रूपमें होता था। कैम्पवेल थामसनने असीरियाके 'नामतर गिरा' को मैंड्रेक ही माना है। प्राचीन मिस्रमें इसका जादू और चिकित्सामें उपयोग होता था। वे इसे जीवनका रस मानते थे। कोलुमेलाने इसे अर्धमानव वताया है। हिल्डेगार्दकी रायमें ईश्वरने जिस मिट्टीसे आदमका निर्माण किया था, यह उसीसे बना है। हिपोक्रेटीज, अरस्तुने इसे शामक, निद्राकारी औषधि बताया है। यूनानी इसे उत्तेजक, वासनात्मक, प्रेमका प्रेरक और मदिराके साथ मिलाकर पिलानेपर स्त्रीको गर्भ धारण योग्य बनानेवाला बताते थे। रोमन सर्जन आपरेशनके समय इसका उपयोग करते थे।

मन्द्रागोराकी अनेक कथाएँ उपलब्ध हैं और अभी हालतक इसकी तूती बोलती थी, सभी रोगोंकी दवा, हिप्नोटिक और पुरुषत्व देनेवाली वशीकरण औषधि।

जर्मनीमें इसका तावीजके रूपमें उपयोग होता था। उन दिनों भी नकली मंद्रागोराकी जड़ें बिकती थीं। इंगलैंडमें रॉयल कालेज आफ सर्जनके संग्रहालयमें एक मैंड्रेक रक्खा है जो देखनेमें दो जुड़वा दाढ़ीवाले व्यक्ति सा लगता है। साहित्यमें भी मैंड्रेककी खूब चर्चा हुई है।

पोस्ते या पॉपीके पौधेका तो क्या कहना, कौन इसकी बेटी अफीमके चमत्कारसे परिचित नहीं है। हर अफीमची इसके गुन गाता है। पॉपी और मैंड्रेकके रस मिलाकर देते थे।

ईडेनके उपवनमें सेव खानेकी कथा बहुत प्रसिद्ध है। सेव खानेसे डाक्टर दूर रहता है। सेवका आँखके रोगोंमें उपयोग, अंग्रेजीमें प्रियको आँखका सेव कहना शायद सेव और आँखकी लालीके साम्यसे सम्बन्धित है।

भारतमें सोमरसका पान प्रसिद्ध है। यह दिव्य औषधि पूज्य थी, यज्ञमें पान की जाती थी और पीनेपर इन्द्र तथा मैत्रावरुणके दर्शन होते थे। सोमरस क्या था अब ज्ञात नहीं रहा।

मेक्सिकोके एजटेक तोर्नालोकाकी पूजा करते थे, इसमें निद्राकारक शामक स्कोपालएमीन तथा हायोसायमिन हैं; वे इसे 'हरित नारी ओलोलुइन्कीकी बहन' कहते थे! पीड़ा निवारणके लिए इसका आवाहन करते थे। इसी प्रकार भारतमें भाँग-धतूरा का, यूनानमें हिप्पोमेन्सका उपयोग होता था।

मानसिक रोगोंमें यूनानमें काला हेलेबोर (कुटकी, कटुश्रृङ्ग) का इस्तेमाल होता था। इसे पीनेपर जीर्ण अवसाद दूर होता था। इसे तीरपर विषके रूपमें लगाते थे। हेलेबोर दिसम्बरसे मार्चतक श्वेत पुष्प देता है अतः इन्हें क्रिसमस फ्लावर भी कहते हैं। पारासेल्सस इसे कायाकल्पके लिए देता था। पचाससे कम उम्रके लोगोंको श्वेत हेलेबोर और बूढ़ोंको काला हेलेबोर।

एक और सर्वरोग हरी थी 'अमरबेल'। पुराणोंमें इसकी चर्चा है। ड्रूइड इसे सभी रोगोंमें देते थे और इसे सभी विषोंकी काट मानते थे। कुछ ईसाई मानते थे कि ईसाकी सलीब इसीसे बनी थी।

एक और पौधा है 'हेमलाक' (विषगर्जर)। यूनानमें इसे राजनैतिक कैदियोंको मृत्यु दण्डके लिए विषके रूपमें पिलाते थे। सुकरातने हेमलाकका ही पान किया था। इसका एक विशेष प्रकार है जल-हेमलाक जिसे शैतानकी आंख भी कहते हैं, इसे खाकर पशु मर जाते हैं। कहते थे कि इनमें प्रेतोंका वास था।

एक ऐसा ही लोकप्रिय पौधा 'रेड़ी' है। मिस्री पेपिरसमें फोड़ोंपर और केशवर्धनके लिए इसके तेलका उपयोग बताया है। प्रसिद्ध रेचक तो है ही। इसके वृक्षको जलानेपर जो धुंआ उठता है, उससे भूत भाग जाते हैं। चूंकि इसमें दैवी गुण है अतः मिस्रमें इसे कब्रमें शवके साथ रखते थे जिससे आत्माको बल मिलता रहे। मिस्रवासी कितनी कदर करते थे इस रेड़के पौधेकी यह थीबेथमें उत्कीर्ण इस आत्मनिवेदनसे स्पष्ट है 'मैंने एक भी रेड़ीका पौधा जड़से नहीं उखाड़ा, न तो मैंने किसीको इसे उखाड़ते देखा, न मेरी किसी गौने इसका भक्षण ही किया।' नील नदीके तटपर यह पौधा खूब होता था और मिस्रवासी इसका तेल निकालकर नाना विधि उपयोग करते थे। वे इसे दीपकमें जलाते थे, हाँ इसकी दुर्गन्धकी शिकायत उन्हें थी। प्रथम सदीके यूनानी सैन्य शल्यक ने त्वक रोगों यथा मुहाँसों और एरीसिपेलसमें इसका इस्तेमाल करनेकी सलाह दी थी। इसे पीनेपर उसकी रायमें शरीरसे पित्त, कफ और जलका निष्कासन होता था।

प्लिनीकी रायमें रेड़ीका तेल उत्तम रेचक, केशतैल, और जलन तथा खुजलीकी उत्तम औषधि है।

जड़ी बूटियोंके गुणके सम्बन्धमें एक धारणा यह भी थी कि उनकी अपनी आत्मा होती है जो रोगीके शरीरमें प्रविष्ट दुष्टात्माको भगा सकती है। वनस्पति आत्मा स्वस्थ व्यक्तिको भी प्रभावित करती है। प्राचीन यूनानी अन्नकी पोषक शक्तिको उनके स्वामी देवी देवताओंकी कृपा मानते थे।

अमरीकी अदिवासी कैक्टसको अग्नि और प्रकाशके देवताका प्रतिनिधि मानते हैं। मेक्सिकन इण्डियन जब कैक्टस लाने जाते तो बड़ी श्रद्धासे नियमों और संयम पालन करते हुए उसे लाते थे। इनके भक्षणके एकाध घंटे बाद आँख बंद करनेपर रंगबिरंगे दृश्य दिखाई पड़ते हैं।

मक्केकी रूह बहुधा पालतु पशुका रूप धारण कर लेती है। पूर्वी योरपके किसान आज भी दावा करते हैं कि अलस भोरमें या शामके झुटपुटेमें उन्होंने उसे देखा था। यदि रूहसे सम्बन्धित पशु पकड़में आ जाता तो वे उसकी बलि चढ़ाकर उसका रक्त बीजमें मिला देते जिससे वृद्धिमें तेजी आये।

अनाजसे बनी शराबकी मादकताका कारण यही रूह बताते थे। आज भी मदिराको जो स्पिरिट कहते हैं वह इसी विश्वासकी देन है, इनमें 'डेमन रम' से लोग परिचित ही हैं।

आदमीके रहस्यवादी इतिहाससे पौधेका सदा रुहानी सम्बन्ध रहा है। वृक्ष पूजा इतिहाससे ज्यादा पुरानी है। आदिम मानवके लिए वनमें न केवल हिंस्र पशु रहते हैं बल्कि भूत, प्रेत, पिशाच, जिन्न और परियाँ रहतीं हैं। जंगलमें भटक जानेपर आदमी आज भयाक्रांत हो जाता है क्योंकि उसे केवल जंगली जानवरोंका खतरा नहीं, रातकी काली छायाओंसे भी भय है। दुर्बल डरपोक व्यक्तिको यह समझाना असंभव है कि ये आवाजें जंगली हवाकी सनसनाहट है। उसके लिए वायु और भूतमें कोई अन्तर नहीं होता। सच तो यह है कि अनेक भाषाओंमें दोनोंके लिए एक जैसे शब्द हैं।

कुछ आदिम लोग मानते हैं कि प्रत्येक पौधेकी अपनी आत्मा होती है। चीनमें मानते थे कि यह आत्मा पशु रूप धारणकर सकती है अतः चीनी व्यक्ति पेड़ काटते डरता था कि कहीं उस पेड़की आत्मा बैल बनकर उसपर आक्रमण न कर दे। कोरियाई विश्वास है कि प्लेग, दुर्घटना और प्रसवमें मरे लोगोंकी आत्मा पेड़पर वास करती है और इससे पेड़को भेंट-पूजा चढ़ाते थे। वृक्षका सदा आदर किया गया है। कुछ आदिवासी पेड़ काटते तो उसकी आत्माको कुत्ताकी बलि चढ़ाते। कुछ लोग पेड़ काटकर भागते कि कहीं वृक्षात्मा पकड़ न ले। वृक्षका विषैले रसका कारण भी उसमें रहनेवाली प्रेतात्मा ही मानी जाती थी। बहुतसे पेड़ोंके जैसे पीपल काटनेका निषेध है। ओक वृक्षको देव वृक्ष मानते थे। ओल्ड टेस्टामेंटमें दुश्मनके फलदार वृक्षोंके नष्ट करनेका निषेध है। अंजीर वृक्षपर रहनेवाली दुष्ट प्रेतमाओंकी तालमदमें चर्चा है। सामान्यतः वृक्षोंमें सदात्माएँ ही रहती है इसीसे चीड़की हवा खानेको कहा जाता था।

वनस्पतिकी वृद्धिने आदमीको आश्चर्यचकित किया है। आधुनिक मनुष्यने उसकी संजीवन आत्माको विटामिन बना डाला। आज कहते हैं पोषणमें नाना प्रकारके फलों और सब्जियोंकी आवश्यकता होती है। आदिवासीने अपने अनुभवसे अनेक जड़ी बूटियाँ खोज निकाली जैसे डिजिटैलिस या कुनैन। काफी आजका लोकप्रिय पेय है। यह काफी भी अपढ़ लोगोंकी भेंट है। सदियों तक तुर्की चरवाहे इसे बेकारकी घास-पात मानते थे। एक दिन एक चरवाहेने देखा कि उसकी बकरियां काफीकी फलियां खाकर प्रसन्न और खिलवाड़ी हो जाती हैं। उसने कुछ फलियाँ सुखाई और उन्हें उबालकर पिया तो बड़ा उत्साह और ताजगी मिली! उसने जुमाके रोज अपने मुसलमान दोस्तोंको (उस दिन शराब बन्द रहती है) काफी पिलाई और कहवा समस्त मुस्लिम देशोंका राष्ट्रीय पेय बन गया।

इसी प्रकार विगत सदीमें इप्सम साल्ट भी एक गड़ेरियेकी खोजसे प्राप्त औषधि है। गड़ेरियेने देखा कि उसकी भेड़ें एक कुँए का पानी नहीं पीतीं। उसने जानने के लिए एक प्याला जल पिया और देखा कि पानी कड़वा था और उसका प्रभाव तीव्र रेचक का था। औरोंने भी प्रयोग किया और इप्सम साल्ट चल निकला।

मतलब यह कि प्रभुने नाना प्रकारकी जड़ी बूटियाँ बनाई है, उनपर उनका नाम-गुण लिख दिया है। अब इन्हें खोजना आपका काम है।

(सामग्रीके लिए बेंजामिन ली गोर्डनकी पुस्तक 'रोमांस आफ मेडिसिन' का आभार)।

* * *

किसिम किसिम के डांगदर

—डा० डाक्टरवाला—

जी हाँ, मैं डाक्टर बेचता हूँ। नाना प्रकारके डाक्टर मेरे पास है। आपको जो पसंद आये लीजिये। आप ठीक कहते हैं कि इन सबका नाम 'डाक्टर' नहीं होना चाहिये परन्तु श्रीमान 'नाममें क्या रखा है', यह जो गुड़िया थी अब 'बेबी डॉल' कहलाती है तो इससे क्या कोई अंतर आ गया। भाई जो बीमारीमें इलाज करे वह 'डाक्टर' या देसी ढंगसे कहें तो 'डांगदर'। जानता हूँ, जानता हूँ भइया उन डाक्टरोंको भी जानता हूँ जो इलाज नहीं करते, बड़े ज्ञानी है, शास्त्रज्ञ हैं, विद्वान है; परन्तु इन्हें हम नहीं बेचते, न जनता ही इन्हें जानती है। मानते हैं कि कभी-कभी धोखा भी हुआ है (और आजकल तो धोखा हो ही जाता है, कोई बड़ी बात है क्या ?) और लोग इतिहास, भूगोल, या अपभ्रंशके डाक्टरके यहाँ इलाजके लिए चले गये। क्षमा माँग लेता हूँ उन अज्ञानियोंकी ओरसे जिन्होंने असली डाक्टरोंकी नींद हराम की। जो वे ही असली डाक्टर है, इलाज करनेवाले तो पेशेके नामसे 'डाक्टर' कहलाते हैं। खैर छोड़िये इस किचकिचको, आपको कौन सा वाला चाहिये ?

देखिये, जरूर देखिये, इसीके लिए तो हम दूकान खोलकर बैठे हैं। यह देखिये, ये अति प्राचीन 'आदिम डाक्टर' हैं इन्हें 'मेडिसिन मैंन' 'शामन' 'गुनिया' भी कहते हैं। ये आपका भूत झार देंगे, जड़ी बूटी खिलायेंगे, आपके तनमें घुसे पदार्थ चूसकर निकाल बाहर कर देंगे, जादू टोना करके, ढोल बजाकर महामारीको भगा देंगे। नहीं नहीं, इनके भेसको देखकर डरिये नहीं, यह आपको नहीं बीमारीके भूतको डरानेके लिए है। जानते हैं आपके दुश्मनने जो टोना किया है ये उसकी काट भी कर सकते हैं। दाम बहुत कम है, जैसा पंचाइत निर्णय करे।

और ये ओझाजी हैं, देखिये आपको फिर भ्रम हो रहा है; ये ओझा सरनेमवाले हेडमास्टर या बाबू नहीं है, नामसे तो ये 'सुखदेव प्रसाद तिवारी' हैं या ऐसा ही कोई और नाम हो सकता है दूबे, चौबे, छब्बे, वर्मा, शर्मा, या कुछ भी, ये तो 'ओझाई' करते हैं। जन्तर-मन्तर और झाड़-फूँक करके चंगा कर देते है, दान दच्छिन्ना उताराकी तरकीब भी बता देते हैं, गंडा या तावीज भी बना देते हैं। सस्ते हैं, करीब करीब उपकार या परमार्थके मोल मिल जायगे।

ये पगड़ी बांधे चंदन तिलक लगाये पंडित जी 'ज्योतिषीजी' हैं। ये आपके ग्रह विचारेंगे, रेखा देखेंगे, पूजापाठ, ग्रह शांतिकी व्यवस्था करेंगे, देवी देवताओंकी दिव्य सहायता दिलायेंगे; खानपानकी सावधानी, नाना प्रकारके विधान, कौन सी अंगूठी पहनें, कौन सा रत्न धारण करें, शुभाशुभ, शकुन अपशकुनका निर्णय करेंगे। इनसे आप अपना भाग्यशाली नंबर, रंग या दिन पूछ सकते हैं (लाटरी निकल आई तो पौबारह)। यदि कुंवारे हैं तो शादी हो जानेकी और शादी शुदा हैं तो कर्कशासे छुटकारेकी तिकड़म समझ सकते हैं। बच्चे न होते हों तो होनेका प्रबंध और अधिक हों तो परिवार नियोजनका नक्षत्री प्रबंध करवा सकते हैं। अतः आपकी ग्रहदशा बिगड़ी हो तो इन्हें ले जाइये, दाम न पूछिये बहुत सस्ते और बहुत महंगे हैं।

जी हाँ इनकी बहुत सी वेराइटी हैं। कहाँतक देखियेगा, ये सिर्फ कुण्डली देखते है, ये हस्तरेखा विशेषज्ञ है, ये भृगुसंहिता वाले हैं, ये सिर्फ मुंह देखकर बोल देते है, इन्हें सिर्फ संख्यासे काम है, ये नजूमी हैं उर्दूदां लोगोंके लिए बहुत मुफीद, ये न्यूमेरोलाजिस्ट, एस्ट्रोलाजर, साईकिक है जो अंग्रेजी पढ़े लोगोंके लिए है, ये देवज्ञ हैं, ये याज्ञिक हैं, ये मंत्रज्ञ हैं; अब कहाँ तक

देखियेगा। ये देहाती सा जो आदमी है—ये चलउवा कर रहा है, जो अंगूठा टेक लोगोंको पसंद आता है।

छोड़िये इन्हें। इधर आइये। ये मुल्ला साहब, ये अपने अरबी-फारसी ओझा हैं। ये जिन्नातोंसे ताल्लुक रखते हैं, चुडैलोंको काबूमें करते हैं, मजार, मन्नत, दरगाह, इत्र, गुलाबके फूल, चादर वगैरह इन्हींके विभागमें है। अगर आपपर खाँ साहबकी शै या सवारी आती है तो कौव्वाली सुनिये, इन्हें बुलाइये, ऊपरी फिसाद हुआ तो रफा दफा कर देंगे। दाम वही ओझाई वाला!

और ये बाबाजी, संत महात्मा, ये आशीर्वादसे, अपने योग बलसे, अपनी सिद्धीसे रोग भगा देते है, मुर्दे जिला देते हैं, ठूंठको हरा कर देते हैं, कुबड़ीको सुन्दरी बना देते हैं, यानी कि एक चुटकी भसमसे वह सब कुछ कर देते हैं जिसे चमत्कार कहा जाता है। इन्हें बस श्रद्धा चाहिये, भक्ति भाव से प्रणाम करें, खुश हो गये तो निहाल कर देंगे। वीतराग हैं धन-दौलत लेकर क्या करेंगे। इन्हींके प्रतिरूप ये औलिया, फकीर हैं और ये सेंट हैं इनसे भी दुआ मांगिये।

ये पुजारीजी हैं, आप मर रहे है तो महा मृत्युंजयका जपकर देंगे। पूजापाठ करा लीजिये, गीता, रामायण, दुर्गापाठ अर्थात् सभी धार्मिक कृत्य करा लीजिये, आप जजमान हैं आपसे क्या लेंगे, थोड़ी दक्षिणा और एक सीधासा सीधा पर्याप्त है। बाकी भाई जज्ञ जप और बड़ी पूजामें तो खर्चा होगा ही, वह रईसों, राजामहाराजाओंके लिए छोड़ दें। कलियुगमें नाम जप ही काफी है, वह भी ये आपकी एवजमें कर देंगे। प्रभु कृपासे सब कल्याण होगा।

ये 'एंटीक' हैं—पुराने जमानेके यूनानी पुजारी हैं 'अबातन' के। शयन मंदिर चिकित्साके आचार्य। आप मंदिरमें आइये और सो जाइये, स्वप्नमें चिकित्सा ज्ञात होगी और शायद रोग हर भी लिया जाय। जी हाँ प्राचीन युगके नाना प्रकारके डाक्टरोंका संग्रह हमारे पास है; हाँ अब नहीं चलते, मगर 'क्यूरियो वैल्यु' तो है ही।

आपको चालू डांगदर चाहिये, तो लीजिये। उसकी भी दर्जनों वेरायटी हैं। इस खानेमें देखिये वैद्य हैं—जी हाँ कई प्रकारके हैं ये काष्ट औषधिवाले हैं, ये कल्प कराते है, ये सिद्ध औषधि देते हैं और ये रस चिकित्सक हैं। ये सूटवाले आधुनिक वैद्य हैं, अंग्रेजीमें आयुर्वेदकी प्रैक्टिस करते हैं; ये मिश्र बंधु हैं इनके पास नया-पुराना दोनों ही ज्ञान है, चटनी, चूरन, मिक्सचर, काढ़ा सब मिलेगा।

इधर देखिये हकीम साहब आपके लिए 'जोशांदा' लिए खड़े है, बहुत सी हिकमत जानते हैं। इनकी परम्परा हकीम लुकमान की है, मुर्दोंको भी जिला देने वाली। इनकी शब्दावली अरबी-फारसी है, नब्ज और कब्ज, रूहानी और जिस्मानी, दवा और दुआ, गर्म-ठंडा, खुश्क और नम, तासीर और मिज़ाज सभी हैं। गुलरोगन और गुलबनफसा चाहिये तो इन्हें ले जाइये।

ये भलेमानुस होमियोपैथ हैं। आपको बहुत पसंद आयेंगे। बहुत सस्ते, बहुत सरल दवा। मीठी-मीठी सी नन्हीं गोलिया जीभपर रक्खी की गली। मगर पोटेंसी बस कुछ न पूछिये थट्टी तो मामूली है, थाउजैंड और मिलियन भी है, आप हैरान होकर आँख फाड़कर उस पोटेंसीकी तलाश करेंगे, पर ब्रह्म सी अव्यक्त वह कहाँ दिखेगी, वह तो जब शरीरमें प्रविष्ट होकर रोगको झकझोरेगी तब न पता चलेगा। हाँ 'एग्रेवेशन' होगा, टाइम भी लगेगा, मगर जड़से साफ होगा रोग। कम खर्च बालानसीं ट्राई कीजिये न। सवाल बहुत पूछेंगे, क्योंकि आपके उत्तर सागरमें गोता मारकर ही तो औषधि रत्न ढूंढ़ निकालेंगे। और खास बात यह कि जैसा रोग होगा, वैसी दवा देंगे—यानी विषके लिए विष, गुड़के लिए गुड़। भाई अपना-अपना रंग है।

इस ओर देखिये, ये महाशय और इनके साथ यह एनिमाकैन, यह मिट्टी, बाथटब, स्टीमकेटल सभी चीजें लें। ये 'नैचुरो पैथ' है। हवा, पानी, मिट्टी आदिसे चिकित्सा करते हैं। आपको प्राकृतिक सौंदर्यसे प्रेम है तो इन्हें ले जाइये। ये एनिमा देकर आपकी आँत साफ करेंगे, फिर आपको हिप-बाथ देंगे (कटि-स्नान), तब आप सिर-आँखपर ठंडी पट्टी रखकर बदनपर मिट्टी लपेट कर लेटेंगे और फिर वाष्प स्नान कराकर आपको दिव्य बनाया जायगा। हां, भोजनका झंझट है। ये आपको शाक भाजी, फल रस पिलायेंगे और जैसा मैं कहूँ वैंसा ही खाओ कहेंगे। मिर्च मसाला बंद, चाय बंद, पीना बंद, सिगरेट बंद, व्यायाम करो, ऐसा करो, वैंसा करो बहुतसे निदेश देंगे।

इस अलमारीमें हमने नाना प्रकारके आधुनिक डाक्टर आपके लिए रख छोड़े है। हर एककी अपनी अदा है—ये विजलीसे इलाज करते है, ये रंगीन पानीसे, ये रत्न चिकित्सा करते है, ये मूत्रपान (शिवाम्बु) कराते हैं। ये दूर चिकित्सा करते हैं, अपने सिरका एक वाल इन्हें भेज दें या अपना एक फोटो, ये शुष्क चिकित्सक है, ये भस्म खिलाते हैं। ये देखिये तरकीबसे इलाज करते है, नसोंके एक्सपर्ट है, हड्डी टूटी हो, जोड़ उखड़ा हो या मोच ये बस तरकीवसे बैठा देंगे। ये सिर्फ़ 'पाइल्स' का इलाज करते हैं। ये 'जर्राह' महाशय हैं चीरा नश्तरमें माहिर; बड़े-बड़े घाव अच्छे किये है। ये लंबा सा सूजा लिए महाशय 'सथिया' है, आँखसे मोतिया निकाल लेते है।

इधर आ जाइये, जी ये नयी चमक दमकवाले अपनेको आधुनिक विज्ञानी कहनेवाली डाक्टर हैं। इनकी भी बड़ी वेरायटी है। ये स्कूल पास हैं—लाइसेंसियेट हैं। ये एम. बी. बी. एस. है अपनेको जी. पी. कहते हैं—घरेलू चिकित्सक। ये नुस्खा-मिक्सचर-कैप्स्यूल-इंजेक्शन वगैंरह देते है। स्टीथोस्कोप लगाये घूमते है, ये आपका बी. पी. (ब्लड प्रेसर) लेंगे। ये पैथोलाजिस्ट है—खून, मलमूत्र आदि जांचते है। ये सर्जन हैं—आपरेशन करते हैं, इनकी भी कई वेरायटी है कोई हार्ट सर्जन है, तो कोई ब्रेन सर्जन, कोई जनरल सर्जन है तो कोई न्यूरो सर्जन। ये सुन्दर मुख प्लास्टिक सर्जन है यानी ये कुरूपको सुन्दर बनानेका दावा करते हैं। ये पीडियाट्रीशियन बच्चोंके डाक्टर है, ये जीरियाट्रीशियन बूढ़ोंके डाक्टर हैं। ये औरतोंकी डाक्टर हैं गायनेकोलाजिस्ट, ये आफथैलमोलाजिस्ट हैं—आँख देखते है, चश्मा निकालते हैं, आपरेशन भी करते है, ऐंचे तानेको सीधा बनाते हैं। ये ई. एन. टी. सर्जन है सिर्फ नाक, कान, गला देखते हैं। इनसे मिलिये ये हड्डी जोड़के विशेषज्ञ आर्थोपीडिक सर्जन है। ये दिलके डाक्टर है 'कार्डियो लाजिस्ट' और ये हैं नर्वके चिकित्सक 'न्यूरोफिजीशियन' इनके साथ है—न्यूरोसाइकियेट्रिस्ट-मनके चिकित्सक, ये बेहोशी सुंघानेवाले 'अनीसथिटिस्ट' हैं, ये दंत चिकित्सक है, दाँत उखाड़ भी देंगे, नकली दाँत बना भी देंगे। ये तपेदिक-टीबो स्पेशलिस्ट हैं और ये वीडी (यौन रोग) के। ये सिर्फ त्वचा देखते है—डर्मैटोलाजिस्ट है। ये आपका एक्सरे लेंगे—ये रेडियोलाजिस्ट हैं। ये डाक्टर हैं मगर इलाज नहीं करते—ये शरीर रचनाके जानकार 'एनांटमिस्ट' है, ये शरीर क्रिया विशेषज्ञ फिजियोलाजिस्ट, ये औषधिके ज्ञाता फार्मेकोलाजिस्ट हैं। ये कैंसरके डाक्टर है और ये परमाणुसे इलाज करनेवाले रेडियोथिरैपिस्ट है।

इनसे भी मिल लें, ये जनस्वास्थ्य चिकित्सक है, समाजिक और प्रतिषेध चिकित्साके क्षेत्रमें सेवा करने वाले। ये आदमीका नहीं समाजका इलाज करते हैं। पर्यावरणकी सफाई करते है, रोगका उपचार नहीं उन्मूलन करते हैं।

घबरा गये होंगे भाई साहब, अभी तो बहुत वेरायटी है। फिर इनके सहकारी भी है—कंपाउडर, दाई, बार्ड बाय, टेकनीशियन, न्यूट्रिशनस्ट, फिजियो

(शेष पृष्ठ २६ पर)

आधुनिक युगके अभिशाप

वायुमण्डल संदूषण

—श्री भानु मेहता—

मधु ऋतुका वर्णन करते हुए गोस्वामी तुलसीदासजीने एक अर्धाली लिखी है, 'शीतल, सुगन्ध, सुमंद मारुत अनल सखा सही'। अन्यत्र भी कहा है 'बन उपबन वापिका तड़ागा, परम सुभग सब दिशा विभागा' और 'झरना झरहिं सुधा समबारी, त्रिविध तापहर त्रिबिध बयारी'। तो देखिये कवि कल्पनामें कैसे मनोहर देश की सृष्टि हुई है ऐसा देश जो 'मंगलमय और अति पावन' है, और इस देशमें आपको 'खोजत कतहुं मिलइ न धूरी' या जहाँ 'पंक न' रेनु सोह असि धरनी'। किन्तु आज ऐसी धरनी, ऐसी वायुमंडल शायद आपको चश्मा लगाकर ढूंढना पड़ेगा। आधुनिक सभ्यताने इस अंदाजसे धराका श्रृङ्गार बदला है कि ऐसा प्रतीत होता है कि कलका बालक साहित्यमें 'हरित भूमि तृण संकुलिता' जैसी पंक्ति पढ़कर साश्चर्य अपनी माँसे पूछेगा कि 'माँ यह हरी भूमि कैसी होती है ?', 'यह शीतल मंद सुगंध पवन कैसा होता है ?', 'यह किस ग्रह नक्षत्रका वर्णन है ?' शायद मैंने अपनी रबरी कल्पनाको अधिक तान दिया है। शायद ऐसे प्रश्न पूछनेका की 'आगे क्या होगा ?' दिन कभी न आयेगा ? फिर भी एक शंका तो उत्पन्न होती ही है कि क्या होगा ? शहरीकरणकी अंधी दौड़मेंहरे-भरे बन उपवन कहीं खो गये हैं, सर्वत्र काले कुरूप फौलादी जंगल फैलते जा रहे हैं।

आप जानते है हम वायु सागरके तलमें रहते हैं। और इस सागरका क्या हाल है यह हमारे निजी स्वार्थका प्रश्न हैं। आजकी सभ्यताका तोहफा है कलंक, कालिमा, कलुष, कोलाहल और कड़ुवाहट। पीनेको दूषित जल, सूंघनेको सड़ांध भरी हवा, सुननेको कान फाड़ लाउड स्पीकरी संगीत। मुनियोंके आश्रम की शान्ति तो खैर अकल्पनीय ही है उलटे भारी मशीनोंके चलनेसे उत्पन्न कंपन नर और घर दोनोंको निरंतर थर्राते रहते है। अनजाने गपचुप रेडियो लहरियाँ—माइक्रोवेव्स, रेडियो सक्रिय किरणें और एक्स रश्मियाँ आजके इन्सानको घेर कर छेड़ रही हैं। आज शहर अपनी शोभासे नहीं, अपनी दुर्गन्ध से पहिचाने जाते हैं। मतलब यह कि हमारा वायुसागर बराबर दूषित होता जा रहा है। आप कहेंगे कि कहाँ भाई हमें तो कुछ पता नहीं चल रहा हैं। कैसे पता चलेगा ? इतना गुपचुप इतना धीरे-धीरे वायु मंडल दूषित होता जा रहा है एक आदत सी होती जा रही है कि 'गुलशन परस्त हूँ मुझे गुल ही नहीं अज़ीज, काँटोंसे भी निवाह, किये जा रहा हूँ मैं।' हाँ, कभी कदाच जब स्मॉग या धुंध भयंकर होता है, या कुछ लोग जहरीली गैससे मर जाते हैं, या जब यह खबर छपती है कि फलां मैदानमें हजारों चिड़िया मरी पड़ी मिलीं, या कि समुन्दरपर तेलकी परत छा जानेसे बहुत सी मछलियाँ मर गयीं, तब कुछ चर्चा होती है संदूषणकी नहीं तो 'मारे राम जियावे राम' की हालत ही चलती है।

मगर नहीं, आप गाँवके उन्मुक्त वातावरणसे शहर की ओर चलिये। क्या मिलता है पवनके झोंकेमें गर्द, गुबार, शोर, दुर्गन्धोंका मेला, भाप, सीड़न उमसभरी भारी हवा, आपको दम घुटता सा प्रतीत होगा, आँखों और गलेमें जलन सी होगी नाकमें सुरसुरी होगी, छींकें आयेंगी साफ सफेद कपड़े और घरके फर्श देखते-देखते ही मैले हो जायेंगे, सड़कोंपर तेलकी परत, नालियोंमें बजबजाती गंदगी, भोजन करते समय भय लगता है कि कहीं वह विषाक्त तो नहीं है, सार्वजनिक स्थान प्याज, लहसुन, बीड़ी, सिगरेट और सिगार की गंधसे बोझिल होते हैं, और इंसानियतके मुँहपर धुंआ फेंककर मोटर गाड़ी शोर मचाती आगे बढ़ जाती है। बद शकल लंबे आदमी सी चिमनियाँ निरंतर काला धुंआ उगलती रहती हैं।

आप जानते हैं कि जब कोयला जलता है तो विषाक्त कार्बन मोनोक्साइड गैस पैदा होती है, आपने पढ़ा होगा कि बन्द कमरेमें आग जलाकर सोये लोग कैसे इस गैसके कारण मर चुके हैं। अल्प मात्रामें यह गैस निरन्तर मोटरकारों, कारखानोंसे नगरके वातावरणमें फैलती रहती है, दीर्घकाल तक अल्पमात्रामें इस गैसके पानका असर क्या होता है यह हम नहीं जानते। फिर शहरमें जहाँ उद्योग-धन्धे हैं संदूषण की बहार है, धुंआ, धूलके साथ सल्फर डाई आक्साइड, हाइड्रोजन सल्फाइड, कार्बन मोनोक्साइड, ओजोन, नाइट्रोजनके आक्साइड, नेप्थलीन, पेराफीन, हाइड्रोकार्बन्स, पेट्रोल, अम्लयुक्त धुंआ जिसमें गन्धक, शोरेका तेजाब, टैनिक एसिड, फ्यूमारिक एसिड, सिरका और क्या-क्या हो सकता है। धूलके कणोंके साथ हानिकारक सीसा, पारा, बेरीलियम, एसबेस्टस जैसे हानिकारक तत्व भी हो सकते है। मिलोंकी चिमनियाँ, ताप—बिजलीघर, परमाणु भट्टियाँ फिज़ा गन्दी करते रहते हैं। भारतमें पहले बासंती बयार बहती थी, अब राजधानी दिल्लीमें प्रतिघनमीटर वायुमें ७०० माइक्रोग्राम धूल भरी होती है जबकि अन्य सम्पन्न समुद्र राजधानियोंमें यह १५० माइक्रोग्रामसे भी कम होती है। मतलब यह कि हमारे फेफड़े बाकायदा कतवारखाने बनते जा रहे हैं। उनके लिए बहती प्राण-वायु मोटर और वायुयान तथा भट्टियाँ पी जा रहीं हैं।

फिर शहरमें शोर पागल बनाये दे रहा है आदमी हदसे हद ६०–७० डेसिबेल शोर सह सकता है मगर शहरमें तो ट्राफिकका ११० डेसिबेल, ड्रिलका १२०, साइरनका १५०, राकेटका १७० डेसिबेल शोर त्रस्त किये रहता है बड़े-बड़े लाउडस्पीकर फुल वाल्यूमपर चलते हुए लोगोंको बहरा और स्नायुविकारका शिकार बनाये दे रहे हैं। और नयी पीढ़ी है कि उसे शोर ही पसन्द है—खेल-कूदमें भी, पढ़ाईमें भी और संगीतमें भी। अच्छा खासा दीवानगीका आलम है।

कभी 'गंध हीके भार से मन्द-मन्द पौन' बहता था, मगर आज तो बोझ इतना अधिक हो गया है कि पवन देवकी कमर ही टूट गयी है, बिना बिजलीके पंखे या एयर कंडीशनकी बैसाखीके वे चल ही नहीं पाते। फिर गंध भी कैसी-कैसी? रेयान फैक्टरीकी गन्ध, कागजकी मिलों, दवाके कारखानों, खाद्य पदार्थोंके कारखानोंकी गंधें, सड़े लीवर, सड़े अंडे, सड़ी मछलीकी गंधे। उफ्, नाक ही है जो बर्दाश्त करती है। धन्य है आदमी जो नीलकंठ बन जाता है। कहीं ऐसा न हो कि कलका आदमी खुली शुद्ध हवामें आनेसे घबराये, ताजी हवा उसके लिए जहर हो जाय।

यह क्या हुआ है? यह सब अनियंत्रित, त्वरित शहरीकरण, उद्योगीकरण, और मोटरीकरणका नतीजा है। भीड़ बढ़ी है, आवासकी समस्या पैदा हुई है। कल कारखाने और बिजलीघर जो पैसा कमाना तो जानते हैं, पर अपना मल जनताके सिर फेंककर अपने कर्त्तव्य की इतिश्रीकर लेते हैं। नाभिकीय परीक्षणकी तो चर्चा ही व्यर्थ है, क्योंकि वह तो धराका ही आचूल मुण्डन करनेके चक्करमें है। कहते हैं संदूषण सभ्यताका इकोनोमिक पार्टनर है, मगर यह मित्र अपने विषाक्त प्रभावसे कालान्तरमें क्या रंग लायेगा कौन बता सकता है। अभी तो हम देखते हैं **पीले उदास चेहरे, विकृत आचरण**, स्नायु विकारोंसे पीड़ित चिड़चिड़े लोग, सिरदर्द, मितली, दमासे पीड़ित लोग, बढ़ता हुआ उन्माद और पागलपन। गैसोंके विष, शरीरमें घुसके बैठे, पारद, सीसा, मैंगनीज़, टिन आदिके घातक कण, कैंसरकारक पदार्थ गुणाणुको बदल देनेवाले पदार्थ, गर्भके शिशुको विकृत करने वाले पदार्थ पर्यावरणमें मुक्त नर्तन करते हुए सभी तो चेतावनी दे रहे हैं कि संभलो। तिसपर इस **'गायन्ति देवाः किल गीतकानि धन्यास्तुये भारत भूमिभागे'** देशमें अपार गरीबी है, अकथ अज्ञान है, दुराहार और कुपोषण है, रोग जर्जर तन है और सही है कि दुर्देव दुबरेके घर ही न्यौता देता है, अतः संदूषण महाशय ही क्यों बाकी रक्खें। वे भी पूरे उत्साहसे सक्रिय हैं। आप जाते हैं मनोरंजनके लिए सिनेमा घरमें जहाँसे बीड़ी सिगरेटके धुएं और सड़ी वायुसे लेकर लौटते हैं सिर दर्द तथा रोग। अब तो पूरा शहर धीरे-धीरे खराब सिनेमाघर बनता जा रहा है।

(शेष पृष्ठ ३२ पर)

डाक्टर रम्पू

—डाक्टर बिल—

हर वर्ष हमने आपको नये डाक्टरों का, नयी पैंथियों-का तोहफा भेंट किया है। इसबार हम सगर्व आपकी सेवामें अपनी सरकार द्वारा निर्मित एक नयी पैंथी, एक नया डाक्टर भेंट कर रहे हैं।

हमारी माईबाप सरकारके सामने तीन बड़ी समस्याएँ प्रस्तुत थीं—एक तो यह है कि यह धर्म निरपेक्ष लोकतन्त्र है, इसमें किसी पैंथी विशेषको मान्यताका बढ़ावा देना असंवैधानिक होता, दूसरे यह कि गाँवमें जहाँ अस्सी प्रतिशत लोग रहते हैं चिकित्साका प्रबन्ध नहीं है (सरकारी तौरपर) और इससे अस्सी प्रतिशत वोटर अनुभव करते हैं कि इतने महत्वपूर्ण मामलेमें सरकार शिथिल है अतः जनसेवक सरकारका कर्त्तव्य है कि ग्रामीण क्षेत्रोंमें दवादारूका प्रबन्ध करे। तीसरी समस्या गरीबी की है जिसे हटानेके लिए भगीरथ प्रयास किये जा रहे हैं, मगर इस कदर बेहया है यह गरीबीकी बच्ची कि अंगद पाँव सी हटनेका नाम ही नहीं लेती। वह कहा है न गोस्वामीजीने कि 'जस-जस सुरसा बदन बढ़ावा—' तो जैसे-जैसे माई-बाप सरकार गरीबी भगानेके लिए प्रयास करती है, गरीबी दूना रूप दिखाती जा रही है। खैर तो बात गरीबीकी है, गाँवमें इलाजकी व्यवस्था करनी है, पर वह मंहगी नहीं होनी चाहिये क्योंकि धन है नहीं।

फिर सरकार सबकी है, उसे सबकी चिंता हैं। बेकारी बढ़ती जाती है। जो लोग रोजी-रोटीसे लगे हैं उन्हें उखाड़कर बेकारी और बवाल बढ़ाया नहीं जा सकता। अतः जो भी प्रबन्ध हो, उसमें इस नुक्तेको भी नजर अन्दाज नहीं किया जा सकता।

एक और साइड-समस्या भी है। जनसंख्या विस्फोट की। आबादी बढ़ती जा रही है, लोगोंकी संख्या बढ़ती जा रही है। और हर क्षण समस्याएँ गुब्बारे सी फैल रही है; और खाना, और कपड़े, और रोजगार, और घर चाहियें। स्कूलोंकी संख्या बढ़ाओ, यातायातका विस्तार करो—स्थान बढ़ाओ। गंभीर समस्या है। जमीन बढ़ नहीं सकती और इन्सान बढ़ते जा रहे हैं। यह इंसानकी कैंसर जैसी वृद्धि विज्ञानकी प्रगतिका कुफल है। उसे रोका भी नहीं जा सकता, क्योंकि लोग क्या कहेंगे। एक तो हम पिछड़े हैं और ऐसा करके और अधिक पिछड़े कैसे बनें। 'प्रेस्टिज' का प्रश्न है। सांप छुंछूदर सी गति हो रही है।

सरकारने प्रगति और फैशनकी होड़में सौ मेडिकल कालेज (बहुत मंहगे) खोल डाले और हजारों फैशनेबुल—सोफिस्टिकेटेड शहरी डाक्टर बनाने लगी। एक तो ये मंहगे हैं दूसर नखरे बहुत है तीसरे गाँवमें जाते नहीं, इन्हे सूट, सिनेमा और सिविक एमिनिटिज चाहिये। फिर इन लोगोंने सोचे समझे बिना उन्मूलनका राग अलापन शुरू किया, आबादी बढ़ा दी और अब कम करनेके लिए पैसे माँगते हैं।

तो सरकारी अनुसंधानशालामें इन सब मसालोंको घोंटकर 'लाख दुखोंकी एक दवा' तैयार की गयी है।

यह अविष्कार है 'डाक्टर रम्पू'। सस्ता धर्म निरपेक्ष, निःपैंथी या सर्व पैथिज्ञ, ग्राममुख (या उन्मुख), सीधा सादा भारती मिजाजका व्यक्ति और इसके निर्माणसे किसीकी रोजी जाना तो दूर अनेकको रोटी-रोजी मिलेगी। फिर लाखों रम्पू बनेंगे अर्थात लाखोंकी गरीबी दूर। यह रम्पू न फैशन परस्त होगा, न सिनेमा भक्त। न व्यर्थकी टेबुलकुर्सी, दवा औजारकी माँग करेगा, न फालतू रोग उन्मूलन ही। बल्कि सरकारी आदेशानुसार योजना कार्यान्वित करेगा। और योजनाका तो एकमात्र उद्देश्य है लोक कल्याण। अतः कल्याणकारी राज्यमें सबका कल्याण होगा। आइये हम सब मिलकर डाक्टर रम्पूका स्वागत करें। ये देशके भाग्यविधाता हैं, कलके भारतकी आशा हैं।

आपसे परिचय कराये। श्री डाक्टर रम्पूका जन्म साधारण देहाती परिवार में हुआ। मिडिल पास करके एक देहाती डाक्टरके यहाँ शोशी धोने लगे। तभी इनका ज्ञानोदय हुआ और ये मानव रोगोंमें दिलचस्पी लेने लगे। क्रमशः ये सीख गये कि किस रंगकी गोली देनेसे कौन सी शिकायत दूर हो जाती है। एक बार मेला तमाशा देखने शहर गये तो 'घर बैंठे डाक्टर बनिये'

नामक किताब प्राप्त हो गयी। बस, इसे घोंटकर वे अपने गुरूके भी कान काटने लगे।

ये एक बार पुनः शहरे गये और काया पलट करवा आये। गाँव लौटे तो इनके तनपर पतलून थी, गलेमें 'टीथोस्कोप', एक टार्च, सिरपर लगानेका आईना, सीरिंज-सुइयाँ और पेंसिलीनकी शीशी। नामके आगे डाक्टर लग गया। इनके शहरी मित्रकी कृपासे थोड़ा धन खर्चकर ये डाक्टरीका बड़का प्रमाण पत्र भी मढ़वाकर साथ लाये थे। इस प्रकार छोटकू—डा० छोटेलाल बन गये। अपने गुरूको गड्डो देकर ये गाँवके मसीहा बन गये। मगर यहाँ तक सरकारने इनकी कोई मदद नहीं की, बल्कि उपेक्षा करती रही। अक्सर हँसीमें डा० छोटेलाल कहते थे 'हाँ, भाई वे लोग सरकारके पोष्य लाड़ले है, स्वयंभू को वह क्यों पूछेगी।'

मगर भाई बारह बरस बाद तो घूरेके दिन भी फिरते हैं। यहाँ तो पच्चीस साल हो गये। समस्याओंसे त्रस्त सरकारका ध्यान स्वयंभूकी ओर गया। हाथ बढ़ा इन्हें उठानेको तो दुलरुवे चिल्लाये 'इसे नहीं—ये शिक्षित नहीं है, दीक्षित नहीं है।' शोध-विचार होने लगे। सरकारने एक बिल बनाया और उसमें प्रविष्ट कराकर छोटेलालको रजिस्टर्ड—पंजीकृत कर दिया, जैसे कोई अवैधपुत्रको वैध बना दे। किंवा सरकारकी नजरे इनायतने इन्हें समान अधिकार दिलाया। अब डा० छोटेलाल नामके आगे आर० एम० पी० लगा, अर्थात रजिस्टर्ड मेडिकल पैक्टिशनर हो गये।

मगर सरकार तो और आगेकी सोच रही थी। उसने छोटेलालको कहा कि थोड़ा पढ़ लिख लो, प्रबन्ध हम करते हैं। सो चार मासका चौमासा, एक कल्पवासका कार्यक्रम बना। छोटेलाल गाँवसे बिदा लेकर चार मासके लिए तहसील अस्पतालमें पधारे। दस सप्ताह तक होमियो पैथीके ज्ञानसागरमें नहलाये गये। चार सप्ताह उन्हें आयुर्वेदका अमृत और तिब्बीका आबेजमजम पिलाया गया। चार हफ्ते विज्ञानकी घुड़सवारी सिखाई गयी। दो हफ्तेमें आखिरी पालिश की गयी—प्रथम उपचार, परिवार नियोजन, चिकित्सा दर्शन आदि की। फिर उन्हें एक अत्यन्त सुन्दर किट बैग दिया गया जिसमें नाना प्रकारकी औषधियाँ थीं और चमड़ेकी एक थैली भी प्रदान की गयी जिसमें शेर छाप दो हजार चाँदीके रुपैय्ये थे। सरकारी गाड़ी इन्हें गाँव पहुँचा गयी। आपका नया नामकरण हुआ, डाक्टर रम्पू, ग्राम चिकित्सा विशेषज्ञ। एक साधारण व्यक्तिसे ये अपने कामसे सरकारी डाक्टरके पद तक पहुँचे। आगे ये निश्चित रूपसे सिविलसर्जनसे श्रेष्ठ पदोंपर भी पहुँच सकेंगे, देशकी चिकित्सा समस्या हल करनेमें महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा करेंगे। बढ़ती हुई आबादीके सागर और गरीबीके आवर्त्तसे बचानेके लिए ये ही नौका सिद्ध होंगे।

डा० रम्पूकी विशेषता यह है कि ये निरपेक्ष हैं—सभी पैथियाँ इनके मनके ज्ञान सरोवरमें खेलती है। इस प्रकार धर्म-जाति-वर्ग निरपेक्ष राज्यके आदर्शके सर्वाधिक अनुकूल हैं। सेवा ही धर्म है तो रम्पू डाक्टर दीनदुखी जनकी—ग्रामवासीकी सेवामें रत हैं। सरकारने उदारतापूर्वक निर्णय किया है कि इनकी सेवाओंको पूर्णरूपेण ग्रामवासियोंके लिए—गरीब भारतके लि सुरक्षित रक्खा जायगा। बड़े लोग, नेता मन्त्री इन्हें तंग नहीं करेंगे, उनके इलाजके लिए नगरों और राजधानीमें मंहगे डाक्टरोंके दवाखाने और अस्पताल छोड़ दिये गये है। आखिर उन्हें भी तो काम देना ही है।

डा० रम्पू अकेले नहीं, चार लाख व्यक्ति हैं। इनमें अनेक भूतपूर्व वैद्य, हकीम, होमियों, नैचुरोपैथ आदि हैं। यदि विज्ञानी डाक्टरोंको शिकायत हो बेरोजगारीकी तो वे भी अपना रम्पीकरण करा सकते है। द्वार खुले हैं भाई साहब, सेवाकी भावना होनी चाहिये।

जैसे जबसे राम ब्याह घर आये, अवधपुरीके हर घरमें मंगल गान गूंजते रहे, उसी प्रकार जबसे डा० रम्पू गाँवमें आये हैं बीमारी चली गयी है और गरीबी बेचारी भागनेको व्याकुल हो रही है। रामराज्य आ रहा है और उसके स्वागतके लिए सजावटका प्रबंध डा० रम्पूके जिम्मे है। आ रहा है वह युग जब आबादीकी समस्या नहीं रहेगी, निरपेक्षताका यह सफल प्रयोग अन्य क्षेत्रोंमें सफल हो चुका होगा, बीमारी-गरीबी-दुलरुआ डाक्टर और उनके मंहगे मेडिकल कालेज देश बदलकी सजा पा चुके होंगे और 'भारत भाग्य विधाता'के रूप में वायुमंडलमें डा० रम्पूका जयगान गुंजरित होगा। ●●

स्कूलोंसे यक्ष्माका प्रसार

—डाक्टर ए० आर० मेहता—

(गतांकसे आगे)

(२) अच्छा भोजन—वह भोजन जो पौष्टिक तथा स्वास्थ्यप्रद हो, चाहे वह मांस हो अथवा शाक-अच्छा भोजन कहलाता है। बढ़ते हुए बच्चोंके लिए आमिष भोजन आवश्यक है। जो मांस भोजनके विरोधी हों उन्हें दूध पीना चाहिए। दूध मांसका सर्वश्रेष्ठ प्रतिनिधि है और पाश्चात्य जगत्में दूधकी गिनती आमिष भोजनमें है।

भोजन सदा ताजा होना चाहिए। बासी भोजन कई कारणोंसे हानिकर है। चावल—यदि वह बहुत ज्यादा पालिश किये गये हों तो पौष्टिक नहीं रह जाते। खाली चावलपर जीनेवालोंका शरीर निर्बल रहता है और उन्हें "बेरी बेरी" नामकी बीमारी लग जानेका भय बना रहता है।

दूध पूर्ण भोजन है और शीघ्र पच जाता है, बच्चे और निर्बलोंके लिए तो यह अत्यन्त उपकारी है। दहीके रूपमें यह और भी जल्दी पच जाता है। शाकाहारियोंके लिए आवश्यक है कि वे दिनमें आधा सेर दूध अवश्य पीयें। इससे भोजन तत्वोंकी न्यूनता पूरी हो जाती है। दूधको बहुत अधिक नहीं उबालना चाहिए। उबाल आते ही उसे उतार लो और ठंडा करके एकदम पी जाओ।

भोजनको खूब चबाकर धीरे-धीरे खाना चाहिये। दाँतोंको साफ रक्खो। अधिक गरम भोजन मत करो। भोजनमें मसालोंकी भरमार करना उसे बिगाड़ देता है।

नियमसे भोजन करना, स्वास्थ्य तथा शक्तिकी वृद्धिमें बड़ा हाथ रखता है। बच्चोंके लिए दिनमें दो बार भर पेट खानेका अपेक्षा चार बार भूख रखकर खाना अच्छा है। भोजन करनेके उपरांत विश्राम करो। पेट भरते ही काममें लग जाना स्वास्थ्यके ऊपर अत्याचार करना है।

फल और शाकके बिना भोजन अधूरा है। पर्याप्त मात्रामें फल और शाक खाने वालोंको कब्ज और उसकी सम्बन्धित बीमारियाँ नहीं सतातीं।

भोजनकी खराबी और अनियमितासे कब्ज हो जाता है और अजीर्णताके कारण निर्बल होकर क्षयग्रस्त होने की सम्भावना हो जाती है।

स्कूलमें स्वच्छ पानीका समुचित तथा पर्याप्त प्रबन्ध होना चाहिए। हर बालकके लिए अलग-अलग ग्लास होना आवश्यक है। जिस भोजनमें आटा, दाल, दूध, ताजी सब्जियाँ नहीं, वह सच्चा भोजन ही नहीं है। माँसाहारियोंके मछली और मांस अच्छी चीज हैं परन्तु ताजी सब्जियाँ और फल साथमें होना आवश्यक है।

(३) व्यायाम—व्यायाम न केवल हमारे शरीरके लिए ही आवश्यक है बल्कि हमारे मन तथा मस्तिष्कके लिए भी आवश्यक है।

प्रकृतिने अवयवोंको व्यवहारमें लाकर दृढ़ होनेके लिए बनाया है नहीं तो सम्पूर्ण शरीरके निर्बल हो जानेका भय रहता है।

व्यायाम करते समय छाती फूलती तथा सिकुड़ती है। दूसरे शब्दोंमें कह सकते हैं कि ताजी हवा फेफड़ोंमें जाती है और खून स्वच्छ होता है। छातीके अवयव दृढ़ तथा स्वस्थ होते हैं।

व्यायाम खुली हवा अथवा बरामदेमें करना चाहिये। भोजनके उपरांत व्यायाम नहीं करना चाहिये, क्योंकि उस समय भोजन पचानेके लिए पेटको खूनकी आवश्यकता होती है। गरमियोंमें व्यायाम प्रातः और सायं ठंडेसमय करना चाहिए।

पर्याप्त व्यायामके पश्चात् पसीना आनेके उपरान्त स्नान करना और शरीरको सूखे तौलियेसे रगड़ना लाभ-

दायक है। उसके बाद पवित्र शुष्क वस्त्र पहनने चाहिए। व्यायामके बाद गीले कपड़ोंमें या गीले वायुमण्डलमें हरगिज न बैठो।

बच्चोंको व्यायामका शौक होता है। अध्यापकका कर्तव्य है कि वह उन्हें उचित मार्गपर चलता हुआ उन्हें लाभदायक व्यायामके लिए उत्साहित करे। उन बच्चोंपर जो व्यायामसे मुँह मोड़ते हों या व्यायाम करते थक जाते उनपर तुरन्त ध्यान देना चाहिये।

स्वास्थ्यको बनाये रखनेके लिए आवश्यक है कि बढ़ते शरीरको पर्याप्त भोजन मिले और व्यायामके पश्चात् शरीरको उचित 'ईंधन' मिले, क्योंकिं व्यायाम करनेसे शरीरके कई पदार्थ रक्तमें मिल जाते हैं जिनके स्थानमें खाद्य पदार्थोंकी आवश्यकता होती है। यदि भोजन पर्याप्त मिला तो व्यायाम शरीरको पुष्ट बनायेगा और यदि भोजनकी कमी रही तो बालक कमजोर होता चला जायेगा।

(४) उचित आसन—यक्ष्मा निवारणमें उचित आसनका बड़ा हाथ है। फेफड़ोंको भरपूर हवा खींचनेके लिए और छातीके भरपूर विकासके लिए आवश्यक है कि हम हर समय उचित आसनका प्रयोग करें।

सिरको सीधा रक्खो, कन्धोंको पीछे फेंककर ठोड़ीको आगे संभालो, और शरीरको सीधा रक्खो।

झुकनेकी आदत छातीको बिगाड़ देती है, लम्बे सांसको आने-जानेसे रोकती है, और ऐसा करनेवालोंको क्षय रोग हो जानेकी पूर्ण सम्भावना रहती है।

स्कूलमें डाक्टरी परीक्षा होनेके समय प्रत्येक छात्रके आसनकी ओर ध्यान देना आवश्यक है।

उचित आसनका अनवरत अभ्यास उतना ही आवश्यक है जितना विशुद्ध आचार का। यह कहावत सर्वथा ठीक है।

बैंच और डैस्क उपयुक्त होने चाहिये और ही सके तो हर बालककी ऊँचाई और लम्बाईको देखकर बनाये जाने चाहिये। पैंसेकी कमी कहकर बहुधा इन कार्योंको टाल दिया जाता है परन्तु इसे दूर करना नेताओंका धर्म है। यह चीजें प्रयत्न करनेपर थोड़ी लागत तैयार हो जाती हैं।

(५) पवित्रता—पवित्रता और आस्तिकतामें भारी भेद नहीं है। जहाँ गन्दगी है, वहीं बीमारीका बसेरा है। गन्दगी रोगके कीटाणु साथ-साथ चलते हैं। जीवनके प्रत्येक कार्यक्रममें सफ़ाई पर ध्यान दो।

निम्नलिखित अत्यावश्यक है—

(१) पवित्र तथा ताजी वायु।
(२) पवित्र भोजन और पान।
(३) पवित्र हाथ और शरीर।
(४) घर और उसके आस-पासके स्थान की पवित्रता।

पहले बताया जा चुका है कि यक्ष्मा निवारणमें पवित्र वायु और भोजनका क्या और कितना हाथ है।

हाथ तथा शरीरकी सफ़ाईसे कीड़े और मैल नहीं रह सकते और शरीरके रोम खुल जाते हैं।

गन्दे तालाबोंमें न नहाओ। पवित्र पानीमें स्नान करना लाभदायक है। अच्छा साबुन मैलको दूर करता है और रोगोंको स्वच्छ रखता है। स्नानके बाद शरीरको रगड़नेसे खून पैदा होता है।

स्कूल, छात्रावास और आसपासकी सफाईको कदापि न भूलो। इससे कूड़ा करकट और गन्दगी ही दूर नहीं होती, बल्कि मक्खियोंका बसेरा भी उजड़ जाता है। गन्दगीमें मक्खी पलती है और यक्ष्मा तथा और रोगोंके कीटाणुओंको दूर-दूर फैलाती है। यक्ष्माग्रस्त पुरुषका थूक सूखनेपर हवामें उड़ता रहता है और अपने आश्रित कीड़ोंको सांसके साथ हमारे फेफड़ों तक पहुँचा देता है।

पक्के फर्शको गीले कपड़ेसे रगड़ दो और फ़र्श कच्चा हो तो झाड़ू देनेसे पहले उसपर पानी छिड़क लो जिससे कि धूल उड़कर अन्य स्थानोंमें न फैल सके। पक्के फर्शको साफ करनेका सबसे अच्छा उपाय यह है कि उसे तारपीनमें भीगे कपड़ेसे पोंछकर कपड़ा निचोड़ डालो।

कुर्सी और मेजको दीवारोंसे न सटाओ, नहीं तो पीछे कूड़ा रह जायगा। झाड़ू देते समय मकानके कोने-कोनेको रगड़ डालो।

(६) विवाह सुधार–जनताको पौष्टिक भोजन करने

और अच्छे मकानोंमें रहनेके लिए उपदेश देना तब तक वृथा है, जबतक कि उनकी आयु कम है और उनके भाग्यमें रूखा सूखा भोजन करना और जैसे तैसे मकानोंमें दिन व्यतीत करना बदा है ।

जब तक कि रूढ़िका यह उपदेश रहेगा कि बालक-बालिकाओंका विवाह होना और उनके सन्तान होना परमावश्यक है तब तक भारतके नर-नारीसे आर्थिक सुधारकी आशा करना वृथा है । किसी भी देशके निवासियोंने अपने व्यक्तिगत जीवनको उन्नत बनाये बिना उन्नति नहीं की और भारतके नर-नारियोंसे इस ओर अग्रसर होनेकी तबतक कोई आशा नहीं जबतक कि वे मानव-समाजके प्राकृतिक नियमोंपर चलनेकी प्रतिज्ञा नहीं करते ।

हम उन देशोंसे जिनके नर नारियोंने अपने प्रयत्नोंसे जीवन और स्वास्थ्यके समतलको उन्नत बनाया है, बहुत कुछ सीख सकते हैं । उन देशोंके मनुष्योंने अपने जीवनको ऐसा बनाया है, जिससे उनकी आयुमें सन्तोषजनक वृद्धि हुई है और जिससे यक्ष्मा जैसी बीमारियोंके कीटाणुओंको भारी धक्का पहुँचा है । उन्होंने अपने प्रयाससे अच्छी फसलें काटी हैं, अच्छे डंगर पाले हैं, और बड़े व्यापारोंको जन्म दिया है । उन्होंने जबतक कि वे अपने सन्ततिको अपने जीवनमें ही सफल होना देखनेके योग्य न हों—विवाह करने तकसे हाथ खींच लिया है ।

अविकसित अबोध बालिकाओंको ऐसे बच्चे पैदा करनेपर बाध्य करना जो या तो जन्मते ही मर जांय या आजन्म रोगोंके चक्रमें फँसे रहें और अन्तमें क्षयरोग ग्रसित हो जाय, कोरा अन्याय ही नहीं बल्कि घोरतम पाप है । भारतमें ऐसे इने गिने प्रदेश होंगे, जो वर्तमानकी अपेक्षा अधिक नर-नारियोंका पालन कर सकें, अधिकतर स्थानोंमें पहले ही से इतने अधिक लोग विद्यमान हैं जिनका पेट भरना बिल्कुल दुःसाध्य है । ऐसे स्थानोंमें जन्मकी अधिक संख्याका आशय मृत्युकी अधिक संख्या और निर्बल समाजके सिवाय और क्या हो सकता है । दूसरे देशोंके सामने भी यह समस्या आई है और उन्होंने इसे या तो बड़ी अवस्थाके विवाह और ब्रह्मचर्यके द्वारा अथवा सन्तान निरोधक अन्य वैज्ञानिक उपायों द्वारा हल किया है ।

प्रत्येक समाज सुधारकका और हर उस पुरुषका जो बालकोंके शिक्षणका उत्तरदायी है, यह प्रथम कर्तव्य है कि जन संख्या और भोजन मात्राका, ध्यानके साथ अनुशीलन करे, इसके द्वारा, और केवल इसी बातके द्वारा वे इस योग्य बन सकेंगे कि वे अपनी सन्ततिको ऐसी दीक्षा दे सकें जो उन्हें स्वस्थ जीवनकी ओर अग्रसर करे और उन्हें यक्ष्मा जैसी नारकीय बीमारियोंसे बचने योग्य बनाये, जो कि बहुधा अपुष्ट लोगोंपर ही अधिक आक्रमण करती है ।

(७) अतिका त्याग—अति हर काममें बुरी है । वे लोग जो अधिक भोजन करते हैं, अपने पेटको ही आवश्यकतासे अधिक नहीं भरते, बल्कि पेट अवयव, हृदय तथा आपसाने अवयवोंपर बेजा भार डालते हुए उन्हें अपना काम करनेसे रोकते भी हैं । आवश्यकतासे अधिक भोजन करनेसे चर्बी और पानी बढ़ता है जिससे मधुमेह होता है और फिर यक्ष्मा हो जाता है । मद्यादि नशेके पानमें अधिकता करना अपने आपको जहर देना है । ऐसी अवस्थामें यदि मनुष्य मरे न भी तो उसके शरीर की अवस्था गिर जाती है और उसमें यक्ष्मा तथा ऐसे ही अन्य रोगोंके कीटाणु सहज प्रवेश पा जाते हैं ।

स्त्री सहवासके आधिक्यसे स्त्री-पुरुष दोनों की शक्ति क्षीण होती है और यह आदत अन्तमें यक्ष्माके द्वारपर ला पटकती है ।

(८) निर्बल बनाने वाली बीमारियोंसे बचना—तीव्र रोग जैसे निमोनिया और चेचक इत्यादि पर्याप्त हानिकर हैं किन्तु शरीरको चाटने वाली बीमारियाँ जैसे मलेरिया और संग्रहणी, जो शरीरके रसको धीरे-धीरे चूसकर उसे निर्बल बना देती हैं, यक्ष्माके कीटाणुओंको सहज ही अपने पास बुला लेती हैं ।

यक्ष्माके वह कीट—जो अबतक शरीरमें चुपचाप अक्रियात्मक अवस्थामें पड़े थे, इन बीमारियोंके बाद जाग जाते हैं और शरीरपर शनैः-शनै अधिकार प्राप्तकर लेते हैं ।

इन बीमारियोंसे बचना और बचनेके सामान्य नियमोंका अनुशीलन करना प्रत्येक पुरुषका मुख्य कर्त्तव्य है ।

(९) **उचित वस्त्र**—वस्त्रों की सफ़ाईका पहले जिक्र किया जा चुका है; किन्तु उससे भी कहीं अधिक मुख्य बात कपड़े पहननेके वेहूदा फैशनको दूर करना है ।

सटे कपड़े पहना, (विशेषतया छातीके चारों ओर) ताज़ी हवाके यातायातमें बाधा डालते हैं इससे रक्तके पवित्रीकरणमें रुकावट होती है । कसी पोशाकसे अङ्गके अन्दर खूनका दौरा बन्द हो जाता है और पसीना बाहर न निकलनेके कारण साधारण स्वास्थ्यको हानि पहुँचाती है ।

पोशाक हलकी और खुली होनी चाहिए जिससे वायु आती जाती रहे और चमड़ेसे सील बाहर निकलती रहे । इसमें सन्देह नहीं कि पोशाक जलवायुके अनुसार होनी चाहिए । किन्तु भारी और कसे हुए लङ्गर या पेटीकोट जैसी चीजोंका पहनना आवश्यक नहीं है । बहुत अधिक कपड़ा पहननेवालोंको जुकाम और सरदी आदि सहज ही में हो जाती है ।

यूरोप निवासी पोशाकके हानिकर फैशनको छोड़

किसिम-किसिमके— (पृष्ठ १८ का शेषांश)

थिरैपिस्ट वगैरह । ये नर्सें हैं इनकी भी कितनी हो किसिम है । आप बोलिये कि आपको चाहिये क्या । स्वस्थ्य लोगोंके लिए लेटेस्ट आया माडल है स्पोर्ट चिकित्सक और ये स्कूलका डाक्टर । यह पुनर्वास विशेषज्ञ है—रिहैबिलिटेशन एक्सपर्ट । ये वायुयानमें चिकित्सा करते है । और ये उससे भी ऊँचे अंतरिक्ष चिकित्सक हैं ।

ये इंसान नहीं यंत्र हैं—इन्हें संगणक कहते हैं--'कम्प्यूटर' । बम एक ले जाइयें--सारी डांगदरी सीख कर सबका काम कर देगा, मंहगा जरूर है, मगर लाजवाब । हाँ तो बोलिये क्या बजट है, किस किसिमका डांगदर चाहिये ।

नाराज न हो, अभी अभी पार्सल खुला है--ये अपनी सरकार द्वारा निर्मित स्वयंभू डांगदर है, देखिये कैसे सुनहरी लेबुल है--आर. एम. पी. । बहुत सस्ते हैं, ट्राई कीजिये न । नमूना मुफ्त ।

(पृष्ठ ३० का शेषांश)

आग बुझा लेते हैं, गंदी बदबूभरी ही सही हवा मिल तो जाती है, अभी नलमें थोड़ा ही सही पानी आता तो है, एक संकरे कमरेमें छः-आठ आदमी ही सही, पर सिरपर छाँव तो है पर कल क्या होगा ? कल जब यह भीड़, यह परवानोंका मेला और सघन होगा तब चलेंगे कैसे, रहेंगे कहाँ, खायेंगे क्या, पियेंगे क्या, साँस लेनेके लिए कहीं हवा की राशनिंग तो नहीं होगी और जहाँ जीवनके लाले पड़े हों वहाँ मस्तीकी तो बात ही मूर्खता होगी ।

हे प्रभू, अपना 'आबादी क्रांति' का अभियान बन्द करो । हम माने लेते हैं कि तुम चाहो तो लाखों करोड़ों अरबों प्राणी उत्पन्नकर सकते हो, तुम अनगिन, अपार हो । पर हे सीमाहीन, हम ससीम हैं हमें सीमामें रहने दो । बनारस लाख-दो लाख मस्त बनारसीयोंका नगर था—आठ-दस-बीस लाख नहीं संभाल सकता, अब दया करो । क्या तुम्हारे यहाँ 'नो एडमिशन' की तख्ती नहीं है ? तुम्हारे भैरव क्या करते हैं ? यमदूत इतने शिथिल क्यों हैं ? तुम्हारे निर्माण विभाग इतने सक्रिय क्यों हो गये हैं ? सारा सन्तुलन बिगड़ गया है । त्रस्त प्रताड़ित बनारसी आज खुलकर मस्तीसे तुम्हारा जयघोष तक नहीं कर पाता ।

हे अविमुक्तेश्वर, हमने तुम्हारा यह तमाशा, यह सृजन तांडव भी देख लिया, अब करुणावतार कृपा करो और अपने इस प्रिय नगरकी रक्षा करो । भीड़के मनहूस भस्मासुरसे अपने भक्तों को, उनकी विलोप होती 'मस्ती' की रक्षा करो । त्राहिमाम, त्राहिमाम ।

●

रहे हैं जबकि भारतके निवासी हानियोंपर ध्यान न देते हुए इसके पुजारी बन रहे हैं।

बचपनसे ही हलके और खुले वस्त्र पहनने की आदत डालनी चाहिए जिससे शरीरके विशेष करके छातीके पूर्ण विकासमें किसी प्रकार की बाधा न हो।

(१०) **परदा प्रणाली**—परदेकी प्रणालीने यक्ष्माके प्रचारमें खासा भाग लिया है। परदेकी प्रणाली में कई लाभ थे—जब कि सदियों पहले इसका प्रचार किया गया था—किन्तु आजकल जब कि इसकी आवश्यकता नहीं है, इसके द्वारा हजारों निष्पाप बालिकाओंका संहार करना और इससे भी कहीं अधिक बालिकाओंको मानसिक तथा शारीरिक पतनमें धकेलना घोर पापके अतिरिक्त और कुछ नहीं है।

यह तो केवल इने गिने धनिक परिवारोंमें ही सम्भव है, लड़कियाँ और स्त्रियाँ परदेमें रहकर भी स्वस्थ्य जीवन निवाह सकें; नगरोंमें तथा शहरोंमें परदा-जीवन सामान्यता शोक-जनक ही देखा जाता है। उदाहरणके लिये कलकत्तेमें, यदि १५ से लेकर ३० वर्षके भीतर की आयुका बालक यदि क्षयसे १ मरता है तो लड़कियाँ ३ मरती हैं।

बहुतसे शिक्षित परिवारोंने परदेको पहले ही त्याग दिया है और इस प्रणालीको दूरकर दिया जा चुका है और जितनी ही जल्दी इसके अन्त करनेमें होगी, उतनी ही शीघ्रताके साथ भारतीय समाजकी मानसिक और शारीरिक उन्नति होगी।

आज भारतकी स्त्रियां विद्या और स्वतन्त्रताकी मांग पेशकर रही हैं; हमें आशा है कि वे जिन्होंने परदा जेलकी चार दीवारीको तोड़ दिया वह अपनी अशिक्षित अभागिनी बहनोंको इससे मुक्त कराये बिना सांस न लेंगी। इसमें सन्देह नहीं कि परदेसे स्वतन्त्रता की ओर आनेके दिनोंमें कठिनाइयां होंगी, ऐसे उदाहरण भी सामने आयेंगे जिनमें परिवर्तन पतनका कारण होगा, किन्तु परदा प्रतीकारके विरोधमें चाहे जितनी भी आपत्तियां तथ आक्षेप क्यों न हों, इस बातके माननेमें किसीको भी शंका नहीं है कि परदा एक हानिकारक प्रणाली है, अब इसके दिन उठ चुके हैं और इसने भारतके स्वास्थ्य नाश और दारिद्रयवृद्धिमें खास भाग लिया है।

पाठशालामें निरोधके उपाय

रोगियोंको ढूँढना—कोई योग्य डाक्टर हर साल पाठशालामें जाकर डाक्टरी निरीक्षण करे। हर एक पाठशालामें वज़न करनेकी मशीन होनी चाहिये जो कि ठीक-ठीक वजन दिखाए। पाठशालाओंमें वजन करने की मशीनका प्रयोग आत्यावश्यक है। शिक्षक जिसकी देख-रेखमें पाठशालाके खेल हों और बोर्डिङ्ग हाउसके सुपरिन्टेन्डेन्ट, इन दोनोंको मिलाकर यह प्रयत्न करना चाहिये कि यक्ष्माके प्राथमिक दर्जोंके रोगियोंकी तलाश करें और संशय, निवारणके लिए डाक्टरी परीक्षा करवाएं।

प्राथमिक उपचार—जब कोई प्राथमिक दर्जोंका रोगी मिल जाये तो उसको सेनिटोरियममें भेजना चाहिये। आरम्भ ही में रोगकी परीक्षण कराना और रोगीको सेनिटोरिममें परिणाम दिखाता है इस प्रकार रोग भी फैलनेसे रुक जाता है।

सेनिटोरियमके उद्देश्य यह हैं—

(१)–रोगीका उसकी अवस्थाके अनुसार उपचार करना और उसको स्वस्थ परिस्थितियोंके सम्बन्धमें शिक्षा देना।

(२)–रोगीको इस बातकी शिक्षा देना कि यक्ष्माका रोग किन-किन कारणोंसे फैलता है।

गृह-चिकित्सा—यदि घरमें रहनेका उचित स्थान तथा डाक्टरी सहायता न मिल सके तो बच्चेको घर नहीं भेजना चाहिये। ऐसा किया जायगा तो सारे घरमें यह रोग फैल जायगा और बच्चेके स्वस्थ्य होनेकी भी आशा न रहेगी। यदि स्वस्थ बालकोंका बचाव न किया जाये जिनमें इस रोगके चिह्न प्रगट हो गये हों तो केवल डाक्टरी परीक्षणसे कुछ लाभ न होगा। घरमें उपचार करनेके यह अभिप्राय हैं—

(१)–रोगका निरोध और उसका उपचार।

(२)–वह लाभ जो सेनिटोरियमके उपचारसे हुए हों उनको जारी रखना।

(३)–रोग फैलनेसे रोकनेके उपायोंका प्रयोग करना।

खुली-वायु—खुली हवा अत्यावश्यक है। इसमें छूत लगनेका भय नहीं रहता। घरके अन्दरके मेल जोलसे परहेज करना चाहिये और रोगीको चाहिये कि वह अपने ही बरतनों आदिका प्रयोग करे।

भोजन—भोजन ऐसा होना चाहिये जो

(१) शक्ति और गरमी पहुँचाए।

(२) शरीर को बनाए।

(३) और जिसमें विटामिंस काफी मिकदार में हों।

दूध, मांस, अण्डे, मक्खन, पनीर, पिस्ता, बादाम, अखरोट, आलू, दलिया, मटर, पालक, बीन, गोभी, सलाद, टमाटर, शहद, आड़ू, खुबानी आलूबुखारा और ताजे फल जैसे सेव, केला, अंगूर, नारंगी, आम इत्यादि की एक काफी लम्बी फेहरिस्त बन जाती है जिससे चुनाव किया जा सकता है। दूध और मक्खन यक्ष्माके रोगीके लिए बहुत लाभदायक हैं। ऐसे रोगीके लिए जो कि धार्मिक कारणोंसे मांस नहीं खाता उसके लिए दूध और मक्खन आवश्यक भोजन हैं। भोजन भली प्रकार परोसा जाना चाहिए और रोगीको भोजन करनेके आध घण्टे पूर्व और आध घण्टे पश्चात् विश्राम करना चाहिये।

विश्राम—ज्यूंही रोगकी पहिचान हो जाय तो पढ़ाई और इम्तहानका काम छोड़कर विश्राम लेना चाहिए। विश्राम, शारीरिक और मानसिक दोनों प्रकारके होने चाहिये। जबतक २४ घण्टों तक और इसके पश्चात् कई हफ्तों तक टेम्परेचर ९९ दर्जेसे कम न हो और जबतक दूसरे ऐसे चिह्न प्रकट न हो जायें जो लाभदायक हों तबतक विस्तर ही में आराम लेना चाहिये।

व्यायाम—पूर्ण विश्राम लेनेके पश्चात् जिसकी अवधि रोगियोंकी शारीरिक अवस्था और रोगके दर्जाके अनुसार भिन्न-भिन्न होती है, नियमपूर्वक व्यायाम करनेकी आवश्यकता होती है। रोगीको डाक्टरकी आज्ञानुसार व्यायाम करना चाहिए और कदापि इससे अधिक न बढ़ना चाहिए।

मवादका नाश करना—यक्ष्माका एक बुद्धिमान रोगी इतना भयानक नहीं, यदि वह और उससे मेल जोल रखनेवाले ठीक तरीकेपर काम करें। रोगीको अपने ही बरतनों, प्यालों, चमचों इत्यादिका प्रयोग करना चाहिये और उनको प्रतिदिन एक घण्टे तक सोडा और पानीमें उबालना चाहिए। बलगम छूतका सबसे बड़ा कारण है, परन्तु मवाद जो कि हड्डियों, जोड़ों, गिल्टियों तथा दूसरे भागोंसे निकलती है उसमें भी ट्यूबर्कल बैसिलस होते हैं, गन्दी पट्टियाँ जला देनी चाहिये या साफ कर देनी चाहिये।

यक्ष्मासे बचनेके लिए स्वास्थ्यके निम्नलिखित नियमोंका पालन करना चाहिये—

यक्ष्मासे बचाव

१—उन सब कारणोंसे बचो जो इस रोगकी सहायता करते हों, जैसे अधिक भीड़ भाड़, घर तथा पाठशालामें स्वास्थ्यके नियमोंको पालन न करना, अर्थात् हर ऐसी बात जो शक्तिको घटाती है।

२—जिस व्यक्तिमें खाँसी, ज्वर तथा यक्ष्माके दूसरे चिन्ह हों उससे सावधान रहना चाहिये। उसके समीप या उसके साथ एक कमरेमें नहीं रहना चाहिये।

३—जहाँ तक हो सके खुली वायु और सूरजके प्रकाश में रहो। जब कमरेमें बैठना हो तो किवाड़ों और खिड़कियोंको खोल देना चाहिये जिससे कि शुद्ध वायु आती रहे। सोते समय मुखको न ढांपो। यदि मच्छर कष्ट देते हों तो मच्छरदानीका प्रयोग करो।

४—दूध काफी मात्रामें पियो। ताजे फलों और सब्जीका प्रयोग करो। जितना स्वास्थ्यवर्धक भोजन पचा सको खाओ।

५—नियम पूर्वक व्यायाम करो; प्रतिदिन स्नान करो और स्वस्थ रहनेके लिए दीर्घ दीर्घ श्वास लो।

समाप्त

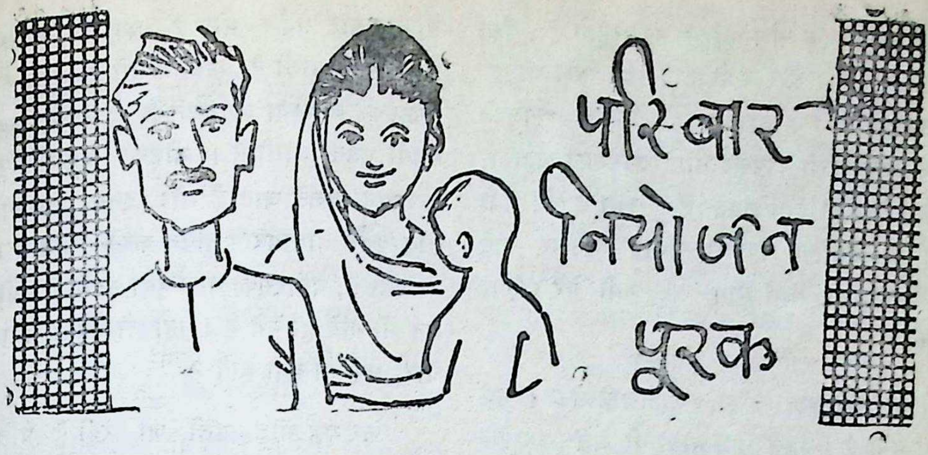

हे प्रभू, हमारे नगरकी रक्षा करो

प्रभू यह मेरा नगर, अलमस्तोंका शहर, भूतभावन शंकर भगवानकी तीन लोकसे न्यारी यह दुलारीपुरी, उत्तरी वाहिनी भगवती भागीरथीके तटपर धनुषाकार रूपमें लेटी भारतकी यह सांस्कृतिक राजधानी घुट-घुटकर मर रही है। सही है भगवन् कि भागीरथी अभी भी मंथरगतिसे बहती है, पारमें बालू पहलेसे अधिक गिरता है, यह भी सही है अभी भी बाबा विश्वनाथ और उनके गण यहाँ यथापूर्व विराजमान हैं, आनंदकाननका महाश्मशान पहलेसे अधिक जोर-शोरसे चल रहा है, यह भी मान लेते हैं कि यहाँ पहलेसे कहीं अधिक यात्री और टूरिस्ट आते हैं। बहुत कुछ सही है पर दीनानाथ, बनारस बिना रस हो चला है, अब वो बात नहीं है।

इस नगरकी आत्मा 'मस्ती' थी सो काफूर सी उड़ चली हैं। यह संतोषियोंका नगर था। कमरपर एक गमछा बाँधे, एक बोड़ा पान जमाये, चना-चबैनी गंगजल पर संतोष कर लेनेवाले लोगोंका यह शहर अब प्रच्छन्न असंतोषकी प्रचंडाग्निमें जल रहा है। कभी यहाँ विजयाकी गोली चलती थी, आज बंदूककी गोली चलती हैं। कभी यहाँ गजरे, गंडेरी और संगीतकी गमककी बहार थी, अब गटर, गुण्डई और गुल गपाड़ा व्याप्त है। कभी लोग मलाईके दोने लिए घर लौटते थे अब राशनसे मिला सड़ा आंटा लिए करम ठोंकते आते हैं। तर मालकी चर्चा गुनाह हो गयी है। गहरेबाज गायब हो गये हैं। छुटभइया रामनगरकी लीलाके बदले सेकेंड शो प्रेफर करते हैं, बहरी अलंगके बदले 'क्लब' जाना पसन्द करते हैं। कहाँ तक कहें भगवन्, शहर ही बदल गया है, लोग बदल गये हैं, संस्कृति बदल गयी है। सच पूछिये तो शहर नहीं है कबाड़ा हो गया है।

फिर नयी संस्कृति ही सही, पर उसमें भी तो चैन नहीं। सिनेमामें टिकट नहीं मिलते, टैक्सी-रिक्शाके भाड़े आसमान छूते हैं, सड़कपर भीड़ इतनी हो गयी है कि सवारी पर बैठकर जाना या पैदल रपेटनेमें कोई अंतर नहीं रहा है। लाउड स्पीकरोंका कान फाड़ शोर इतना है कि अच्छा संगीत भी सिर्फ शोर रह गया है। भीड़में चेहरे देखता हूँ ज्यादातर अपरिचित, अनजाने, किसीपर भी बनारसकी छाप नहीं। चेहरे अधिकतर सूखे, विवर्ण, चिन्ताग्रस्त, आशंकित, आतंकित। हँसते है कृत्रिम हँसी, वे उन्मुक्त ठहाके तो स्वप्न हो चुके हैं। लोग हँसते है, डरते-डरते, प्रेत जैसी हँसी। बात करते हैं, छलसे चुराकर, दिल खोलकर बात करनेका स्थान ही नहीं है।

पहले चले जाते थे बहरी अलंग, निछद्दम में। वहाँ शान्तिपूर्वक साफा-पानी होता था, रगड़ा लगता था, प्रेमसे सुख-दुखकी बातें होती थी, हंसी-दिल्लगी होती थी, गाना-बजाना होता था। अब न तो कहीं एकान्त है, न बैठनेका स्थान, समयका अभाव हो गया है, किसीको

फ़ुरसत नहीं, सबकी एक आँख घड़ीपर लगी रहती है । पैसा भी दुर्लभ हो गया है । और कभी कोई रईस मिल भी गये तो पैसा खरचके भी शुद्ध सामान नहीं मिलता, काजूकी ठढ़ाई और बेरकी पत्ती पीसकर भाँग छाननेका बहाना, मनको धोखा देना ही हाथ लगता है । जीभ इतनी पापी हो गयी है कि ब्लाटिंग पेपरको मलाई मानकर चाट लेती है । शिव शंभो कहाँ आग लग गयी मेरे रसिया बनारस को ।

पहले था जहाँ चाहो बैठो, जहाँ चाहे लेटो । अब कहीं स्थान नहीं है । पहले भीड़ होती थी मेले तमासेके दिन । मगर अब तो हर रोज, हर वक्त दस-दस मेले लगे रहते हैं । स्कूल कालेज में, बाजार दूकान में, दवाखानों अस्पतालोंमें, सड़क-गलियों में, रेल-बस में, थेटर सिनेमा में, घाटबाट सर्वत्र भीड़ है, कही स्थान नहीं है । फिर भीड़ खाती-पीती है, कूड़ा करती है, मैला करती है और सफाईकी व्यवस्था लंगड़ाती है । भीड़से कदम मिलाकर गंदगी बढ़ती जाती है । भीड़की जरूरतें पूरी करनेको कारखाने खुलते जाते हैं और इनसे निकला गंदा धुंआ, तीव्र दुर्गंध वातावरण दूषित करते रहते है । गंगा गंदी हो गयी है, बनारसकी मस्त हवा गन्दी हो गयी है । शायद मन भी गन्दे हो गये हैं । नहीं तो इतना अनाचार भ्रष्टाचार, अपराध क्यों होते ?

फिर यह भीड़ बढ़ती जा रही है प्रतिदिन, प्रतिसकेंड । सोचता हूँ आज तो घुसके तमासा देख लेते हैं, नकली, दरिद्र, और मँहगा सड़ा खाद्य खाकर पेटकी

(शेष पृष्ठ २६ पर)

KURAZOL
(Liquid & Tablet)
A Remedy for Asthma

ADIOL COMPOUND
A General Pick-up

HEMOGASTRIN
A Digestive & Haematinic Tonic

LYCOLIV
A Liver Tonic

Products of :
INTERNATIONAL CHEMICAL & BIOLOGICAL INSTITUTE
PRIVATE LIMITED
KURAZOL HOUSE, BANGALORE-4.

हे प्रभू, हमारे घरकी रक्षा करो !

प्रभू, आपकी कृपासे अपना निजी घर है ! दो मंजिलें, छः कमरे रहने सोनेको; अपार सुविधा ! वह दिन थे हम चार भाई दो बहनें—अम्मा, बाबू ! अनाज सस्ता था, सामान सस्ता था, बाबूकी तीन सौकी तनखामें भी मजे थे। फिर बड़े भइयाकी शादी हुई, मझले भइयाकी और मेरी भी शादी हो गयी ! हम तीन भाई कमाने लगे, बाबू रिटायर हो गये—पेंशन पाने लगे। छोटे पढ़ने बम्बई चला गया और वहीं शादी करके वहींका हो गया (अच्छा हुआ !) ! दोनों बहनें शादी करके ससुराल चली गयी। एककी तो शहरमें ही शादी हुई है अतः बाल बच्चोंको लेकर अक्सर हो नैहरमें अन्नध्वंस करती रहती है, दूसरेके पति कलकत्तेमें हैं अतः जब भी आती है कमसे कम तीन महीने जमी रहती है। हम तीन भाई मिलकर दो हजार रुपयेसे कम नहीं कमा लेते, पर लगता है जैसे पिछले दिनोंसे दो सौ भी मुश्किल से पाते हैं। पहले प्रति व्यक्ति पेंतीसकी आमदनी थी, बीसकी बचत (३५ × ८ = २८० + २०) और अब औसत आमदनी चौहत्तर रुपये, बचत शून्य है, बहनजी लोग और कानूनी-भाई लोग पधार गये तो समझ लें बजटमें ड्रास्टिक कट या कर्जके अलावा कोई रास्ता नहीं ! ताहूपर कछु और इनकम टैक्स, भवन भूमिकर, वृत्तिकर पानीकर, तिजारीकर, करोंपर कर, और सुपर टैक्सपर सुपर टैक्स ! इस सुपर-सुपरपर जले पर नमक सा सूफियाना उपदेश 'प्रत्येक नागरिककी' राष्ट्रीय बचती योजनामें भाग लेना चाहिये'। और भगवन यह ७४ पुराने पेंतीसका दूना नहीं है पंचमांश है, सात और चारके बीच दशमलव नामक एक रावण (मुद्रा अवमूल्यनका) आकर बैठ गया है। कुछ भी करो वह दस मुँहसे उसे खा जाता है। तिसपर बाबूजीका तबर्रा—चार-चार मुश्टंडे पैदा किये हैं पर घर नहीं चला पाते, एक हम थे कि अकेले पालपोसकर बड़ा किया, किसी चीजकी कमी नहीं होने दी। उन्हें तुम्हीं समझाओ प्रभूकि उनके यहाँ दूध रुपयेका सात सेर आता था और अब ढाई रुपयेमें एक सेर दूधिया पानी मिलता है। उनके सूट सिलते थे दस रुपयेमें, अब दरिद्र दर्जी भी सौका नोट उठाकर फेंक देता है। हम पढ़ते थे तो दस रुपयेमें चारों भाइयोंकी फीस हो जाती थी, अब एक एकपर पच्चीस-पचास पड़ जाते हैं और तिसपर सुरसा सी स्कूलोंकी मांगे बढ़ती ही जाती हैं। हम भी सनीमा जाते थे। पांच रुपयेमें सारा परिवार अपना मनोरंजनकर लेता था और अब भाई, अपना-अपना करो, सपरिवारका अर्थ है एक हरा नोट गायब ! यानी की भगवान् आप ही सोचिये क्या लाइफ हो गयी हैं। घरमें सोने-बैठनेका स्थान नहीं है, एक मंजिल और चढ़ने वाली है, पर स्थान की कमी ज्योंकी त्यों है। बच्चे पैदा हो गये सो तो ठीक अब ताड़की तरह बढ़ते भी चले जा रहे हैं। पहले एक थानमें कुरते-पैजामे बन जाते थे अब तो थोक भावसे दस थान भी कम पड़ते हैं। बड़े भइयाके छः बच्चे दो बेटे, चार बेटियाँ, मंझलेके तीन बेटे, पाँच बेटियाँ, और अपनी चार बेटियाँ एक बेटा—कुल मिलाकर घरमें २७ खानेवाले और साढ़े तीन (पिताजी आधे) कमानेवाले। समझ लीजिये कि बुद्धि भ्रष्ट है, क्या करें, कहाँ जाँय ! लड़कियोंकी शादी करनी है, लड़कोंको पढ़ा लिखाकर काम धंधा दिलाना है। कैसे होगा ? बच्चे हैं, इन्हें भी ओढ़ने-पहिननेका शौक होता होगा, मनोरंजनका मन करता होगा; संगी साथी ट्रांजिस्टर लटकाये, स्ट्रैच और स्लैक्स पहने घूमते हैं तो इन्हें भी युगकी फैशनमें घुल मिल जानेका जी चाहता ही होगा, पर बेचारे रोज डाँट-फटकार सुनते हैं, मन मसोसकर रह जाते हैं। अपनी कमजोरी, अपनी लाचारी छुपानेको हम उन्हें उपदेश देते हैं।

पुराना जमाना होता तो किरायेपर मकान ले लेते दस-बीस रुपयेमें तो अच्छे खासे दो कमरे मिल जाते थे, अब दो सौ तीन सौके फ्लैट और उनपर भी हरसाल पच्चीस प्रतिशतकी वृद्धि ! अफोर्ड ही नहीं कर सकते।

पहले घरमें रहते थे अब लगता है रेलगाड़ीके तीसरे दर्जेके डब्बेमें सफरकर रहे हैं ।

अब आज छोटकूका पत्र आया है कि बंबईमें रहना असंभव हो गया है अतः अपने तीन बच्चों, पत्नी और उसके दो छोटे भाई बहनके साथ वह घर आ रहा है । खोली खाली करनेके दस हजार मिले हैं उससे वह छोटा मोटा रोजगार शुरु करेगा और हम सबकी सेवा करेगा ।

हे प्रभू, हमें भाइ प्यारा है, सब प्रियजन पुरजन प्यारे हैं, पर अब पानी नाकके ऊपर आ गया है—हमारे घरकी रक्षा करो !

त्राहिमाम !

आवाजका जादू : (पृष्ठ ६ का शेषांश)

ऐसी बानी बोलिए, मनका आपा खोय ।
औरनको शीतल करे, आपौ शीतल होय ।

या किसी शायरके अल्फाज में—

इस गैरते नाहीद की हर तान है दीपक ।
शोलासा लपक जाये है आवाज तो देखो ।

या

तारीकियाँ चमक गई आवाजे दर्द से ।
तेरी आवाजसे रातकी जुल्फ संवर गयी ।

और

शहद सा घुल गया है तलखाब ए-तनहाई में
रंग सा फैल गया दिलके सियह खाने में

देर तक यूँ तेरी मस्ताना सदाएँ गूंजी
जिस तरह फूल चटकने लगें वीराने में ।

तो अब अपने आपपर ताला लगाती हूँ सिर्फ इस आखिरी प्रार्थनाके साथ कि मेरी बेकदरी न कीजिये, ऋषियोंकी यह वाणी मनन कीजिए--

न नादेन बिना ज्ञानं, न नादेन विना शिवः ।
नाद रूप परं ज्योति, नाद रूपी परो हरिः ॥

अब भी न सुनी तो फिर मैं चिर मौन धारण कर लूंगी और तब मुझे बुलाना असंभव होगा ।

सादर मैं हूँ आपकी

आवाज

वायु मंडल संदूषण : (पृष्ठ २० का शेषांश).

आप घबरा गये होंगे कि यह आदमी कितनी काली तस्वीर खींच रहा है हमारे जमाने की, मगर वक्तसे से चेतना अच्छा होता है । श्रोता बन्धु हमें वायु संदूषणसे बचनेके लिए तत्काल उपाय करने चाहिये । उद्योगोंको बस्तीसे दूर करना चाहिये, ईंधनोंका निर्गंधीकरण करना चाहिये, कारखानों की गंदी हवा धोकर शुद्ध करनी चाहिये, धुंआ न हो इसके उपाय करने चाहिये; मलबे या उच्छिष्टका सदुपयोग करना चाहिये, विद्युत फिलट्रों का इस्तेमाल करना चाहिये, जानना चाहिये कि जल विद्युतका अधिकाधिक उपयोग धुंआ धक्कड़ कम कर सकता है । सबसे बड़ी बात तो यह है कि निरंतर संदूषण की निगरानी, अनुवश्रण (मानोटरिंग) और आंकड़ा संकलन करते रहना चाहिये, जिससे वक्तसे उपाय किये जा सकें और हालत इस कदर बदतर न हो कि हाथसे बाहर हो जाय । माना की स्वच्छता मँहगी है पर सबके अस्तित्वके लिए वह अनिवार्य है—आदमी ही नहीं, पेड़-पौधे, जीव-जन्तु, और जलवायु सबके लिए कहा है—जान है तो जहान है । सौभाग्यसे नागपुर स्थित 'सीफेरी' जैसी संस्थाएँ इस दिशामें सक्रिय हैं । आज डाक्टरों, इंजीनियरों, स्वास्थ्य प्रशासकों सभीको यह बढ़ता सदूषण चुनौती दे रहा कि **'मैं दस शिरका रावण हूँ** मुझे मारकर धरती की हरियाली, जीवजन्तु, आर्थिक सम्पदा और सौन्दर्य बोधकी रक्षा करो' ! अब सोचना आपको है कि देश उपवन बनेगा या रौरव नरक ! संदूषण अभी, इसी समय सांझके कोहरेमें घुला आपको घेरे खड़ा है, आँख खोलकर देखिये तो !

('आकाशवाणी'के सौजन्यसे)

पारिवारिक जीवनापयोगी स्वास्थ्य साहित्य

लोकप्रिय स्वास्थ्य साहित्य

राजा बेटा कैसे बनायें ?	३.००
सुन्दर दांत और उनकी देखरेख	२.५०
आपके बच्चेकी खुराक	३.३७
भोजन क्या, क्यों और कैसे ?	४.००
विटामिन और हीनता जनित रोग	४.२५

यौन-साहित्य

यौन मनोविकार कारण और निवारण	४.२५
विवाहित जीवनमें यौन सम्प्रयोग	५.५०
नारीकी यौन समस्यायें	२ ५०
सन्तति-निरोध कब और कैसे ?	४.००
गर्भवती स्त्री और प्रसवपूर्व व्यवस्था	२.५०

प्रकाशक

स्वास्थ्य सन्देश प्रकाशन,
पोस्ट–कालपी (उत्तर प्रदेश)

उद्यम

मासिक पत्रिका

'उद्यम' में निम्न विषयों पर लेख प्रकाशित होते हैं :

★लाभदायक उद्योग-धन्धोंकी व्यवहारोपयोगी जानकारी

★व्यवसायमें सफल व्यक्तियोंकी मुलाकातें और परिचय तथा मवेशियोंके रोगोंका निवारण।

★इंजिनियरिंग, यंत्र सामग्री और ग्रामोद्योग संबंधी लेख

★आरोग्य, संक्रामक रोग तथा घरेलू औषधियों संबंधी जानकारी।

★पंचवर्षीय योजनाओंके कारण होता हुआ ग्रामसुधार

★महिला विभाग : घरेलू उद्योग, मितव्ययिता, खाद्य पदार्थ आदि पर लेख।

★बालकोंका विश्व : बालक-बालिकाओंके लिए सुलभ भाषामें त्रैमासिक जानकारी।

★विद्यार्थियों के लिये : विशेषज्ञों द्वारा उपयुक्त लेख

★पाठकों द्वारा पूछी गई जानकारी।

'उद्यम' का वार्षिक मूल्य रु० दस भेजकर परिवारके प्रत्येक व्यक्तिके लिये उपयोगी यह मासिक पत्रिका अवश्य संग्रहीत करें।

उद्यम मासिक, धर्मपेठ, नागपुर-१

स्वास्थ्य का वृहद् ज्ञान सागर

आपका स्वास्थ्य

१८ वर्षों की

पुरानी फाइलें

चौथे और सोलहवें वर्ष के अलावा प्रत्येक वर्ष की फाइलें प्राप्य हैं।

प्रत्येक वर्ष की फाइल ६ रु० में प्राप्य है फाइलें वी० पी० से नहीं भेजी जायेंगी। अग्रिम मूल्य भेजना अनिवार्य है।

आपका स्वास्थ्य कार्यालय

चेतगंज, वाराणसी–१

घर बैठे संगीत सीखिए

प्रतिमास घर बैठे गायन, वादन तथा नृत्य की ठोस जानकारी प्राप्त करने के लिए १५) भेजकर **'संगीत'** मासिक के वार्षिक सदस्य बन जाइए। नमूना चाहें तो १)५० के टिकिट भेजिए। फिलमी गीतों के प्रेमी २०) भेजकर **'फिल्म-संगीत'** त्रैमासिक के वार्षिक सदस्य बनें। वर्ष में इसके कुल चार अंक (जनवरी. अप्रैल, जुलाई और अक्टूबर में) प्रकाशित होते हैं। प्रत्येक अंक में ३५ प्रसिद्ध फिल्मी गीत स्वरलिपि-सहित छपते हैं। हर प्रकार के संगीत-साहित्य की विस्तृत जानकारी के लिए हमारा बड़ा सूचीपत्र मुफ्त मँगाएँ।

पता

संगीत कार्यालय, ६, हाथरस (उ. प्र.)

इंडियन मेडिकल असोसियेशनकी ओरसे डा० कोशलपति तिवारी द्वारा
संपादित, प्रकाशित और संसार प्रेस, वाराणसीमें मुद्रित।

HEALTH

is your most precious possession

Your Health

will help preserve it

Your Health aims to educate the common man on matters of health. It deals with day to day problems of sanitation and hygiene and presents the scientific side of preventing many bodily and mental ills.

Remember it is

A Publication of the Indian Medical Association.

SUBSCRIPTION RATES

(Post free)

Inland : 1 year Rs. 8/- ; 2 years Rs. 12/-
Foreign : 1 year Rs. 10/- ; 2 years Rs. 16/-
Members of I. M. A. ; 1 year Rs. 6/-

Remittances should be by money orders or postal orders payable to YOUR HEALTH

All business correspondence should be addressed to

Manager, YOUR HEALTH
23 Samavaya Mansion : Corporation Place
CALCUTTA-13

आपका स्वास्थ्य

इंडियन मेडिकल असोसियेशन की लोकोपयोगी मासिक पत्रिका

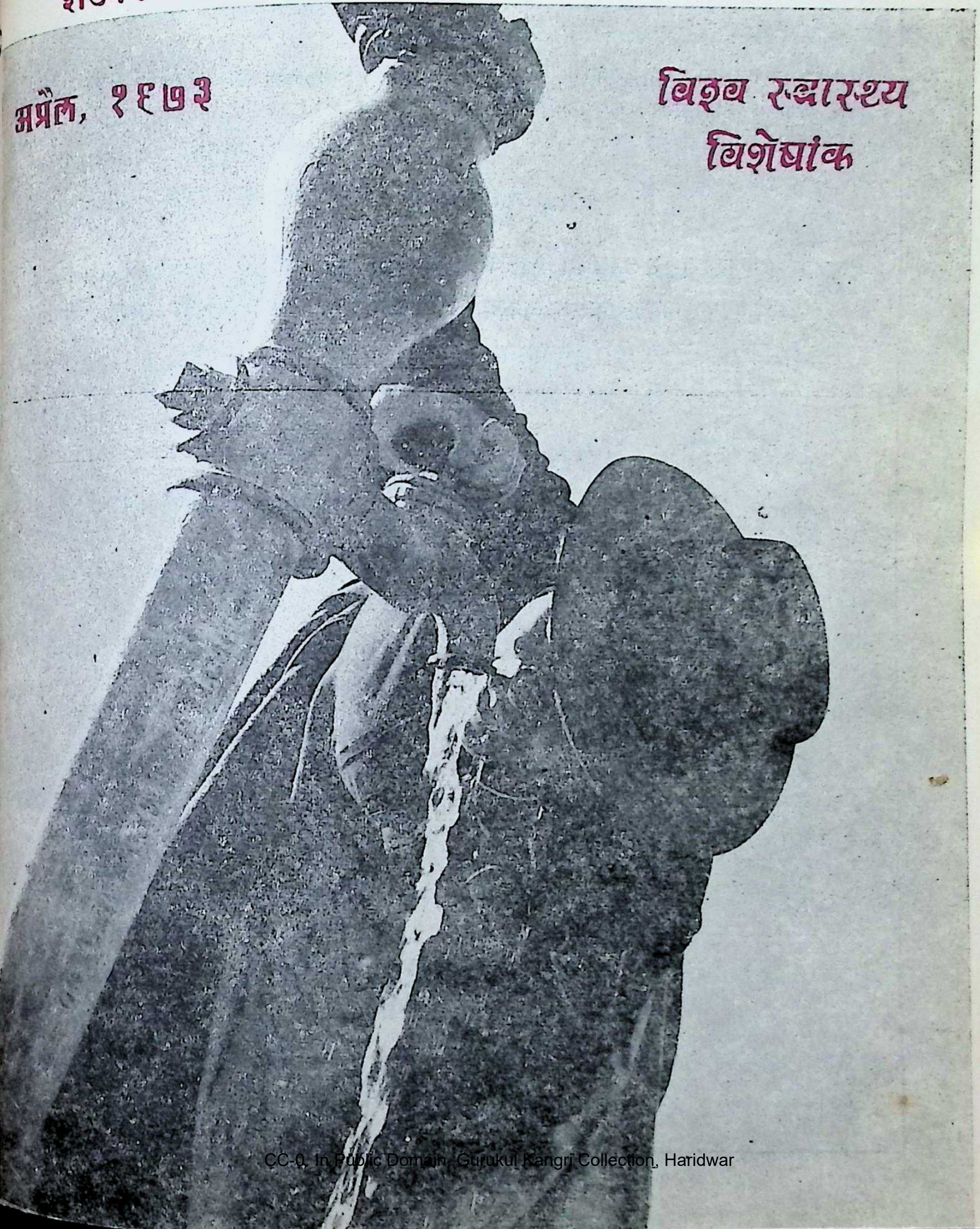

अप्रैल, १९७३

विश्व स्वास्थ्य
विशेषांक

हमारे तीन महत्वपूर्ण प्रकाशन

कहीं हवा न लग जाय

-कैप्टन शरत कुमार चौधरी-

इस पुस्तकमें मलेरिया, फाइलेरिया, चेचक आदि रोगोंसे बचनेके उपाय, रोगीकी परिचर्या सर्पदंश, प्राथमिक चिकित्सा सम्बन्धी अनेक महत्व-पूर्ण समस्याओंकी चर्चा की गयी है।

मूल्य १५० पैसे

सुनो भाई पंचो

-डाक्टर कोशलपति तिवारी-

हिन्दीमें अपने ढंगकी सरल सुबोध शैलीमें लिखी गयी पुस्तक। रोग तथा स्वास्थ्य-सम्बन्धी उन सभी समस्याओं पर चर्चा की गयी है, जिनसे हमारे ग्रामीण भाइयोंको नित्य सामना करना पड़ता है।

पुस्तक दो भागोंमें प्रकाशित है।

प्रत्येक भागका मूल्य—१५० पैसे

गुजरात, मध्यप्रदेश, उत्तरप्रदेश, हरियाणा, राजस्थान सरकार, बिहार द्वारा नियोजन केन्द्रों, स्कूल-कालेजके पुस्तकालयों, राष्ट्रीय प्रसार सेवा खण्डों तथा ग्राम पुस्तकालयोंके लिए स्वीकृत।

डाक्टर के आने तक

- डाक्टर गोकुलदास अग्रवाल -

नागरिक सुरक्षाके संदर्भमें इस पुस्तकका विशेष महत्व है। देशके प्रत्येक नागरिकको प्राथमिक चिकित्सा सम्बन्धी ज्ञान प्राप्त करना आवश्यक है और इस पुस्तकमें विस्तृत ढंगसे इस विषयपर चर्चा की गयी है। प्राथमिक चिकित्सा (फर्स्ट एड और नर्सिंग) की शिक्षा लेनेवाले छात्र-छात्राओंके लिए सर्वश्रेष्ठ पुस्तक। प्रस्तुत पुस्तक आपके परिवारके लिए 'घरेलू डाक्टर' का काम देगी।

दो सौ से अधिक चित्र

मूल्य २७५ पैसे

चारों पुस्तकें एक साथ मंगानेपर डाक खर्च माफ। आपका स्वास्थ्यके ग्राहकोंको २५ प्रतिशत छूट दी जाती हे। चारों पुस्तकें एक साथ न मंगानेपर प्रत्येक पुस्तकके लिए १२५ पैसे अलगसे डाक व्यय लगेगा।

हमारे अधिकृत विक्रेता,

हिन्दी प्रचारक संस्थान, पो० बा० १०६, वाराणसी
श्री गंगा पुस्तकालय, गायघाट, वाराणसी—१
आपका स्वास्थ्य कार्यालय, लहुराबीर, वाराणसी—१

आपका स्वास्थ्य

इंडियन मेडिकल एसोसियेशनका लोकोपयोगी प्रकाशन

वर्ष २०　　अप्रैल १९७३　　अंक ७

विश्व स्वास्थ्य दिवस

विशेषांक-७३

स्वास्थ्यकी हरबात घरसे शुरुआत

कवर-चित्र
"आखिर स्वच्छ जल मिल गया"

फोटो—वि० स्वा० सं०

अनुक्रमणिका

मंगलमय निज निज भवन लोगन्ह रचे बनाइ　२
हमारा घर　…　३
स्वास्थ्यकी हर बात, घरसे शुरुआत　…　४
घर दुर्ग नहीं होते　…　५
टीका—सर्वोत्तम चिकित्सीय बीमा　…　६
सजग माता　…　१४
माँ का दूध और दूसरे घरेलू आहार　…　२०
प्रथम पच्चीस वर्ष वि० स्वा० सं०　…　२५

परिवार नियोजन पूरक

परिवार नियोजनका आर्थिक आधार　…　२९

- 'आपका स्वास्थ्य' में प्रकाशित प्रत्येक रचना और चित्रका कापीराइट प्रकाशकका है। इसलिए बिना आज्ञा कोई रचना या चित्र किसी प्रकार उद्धृत नहीं होना चाहिए।
- 'आपका स्वास्थ्य' के लेखकोंके विचार पूर्ण रूपसे उनके अपने हैं आवश्यक नहीं है कि संपादक मंडल अथवा इंडियन मेडिकल एसोसियेशन उनसे सहमत हो।

मूल्य—इस अंकका ५० पैसे
वार्षिक छः रुपये

आपका स्वास्थ्य कार्यालय
वाराणसी (बनारस-१)

सम्पादकीय-

मंगलमय निज निज भवन लोगन्ह रचें बनाइ

देशमें हो या नगरमें या परिवारमें जब कोई मंगल प्रसंग आता है तो लोग बड़े उत्साहसे अपने घर सजाते हैं कलश, तोरण, झालरों, माला, हलदी, दूब, दही, अक्षतसे, गलियोंमें छिड़काव होता है। (प्राचीन युगमें यह छिड़काव चतुरसमसे होता था अर्थात् चन्दन, केसर, कस्तूरी और कपूरसे निर्मित सुगन्धित द्रवसे), चौक सजाये जाते हैं ! ऐसा प्रतीत होता है कि हमारे उल्लासमें स्वर मिलाकर सारी सृष्टि विहँस रही है।

घरका अर्थ केवल मिट्टी-ईंटोंकी चार दीवारें नहीं है, घरका अर्थ उसमें रहनेवाले प्राणी ही नहीं है, घर तो समाजकी सृष्टिकी इकाई है और प्रत्येक इकाईका मंगल ही समष्टिका मंगल बनता है।

कहते हैं घरमें दिया जलाकर तब मसजिदमें दिया जलाना चाहिये। स्वास्थ्यकी चिंता भी घरसे ही आरम्भ होनी चाहिए। प्रत्येक घर स्वस्थ हो तो फिर सारा देश स्वस्थ होगा। स्वास्थ्यके लाभ बतानेकी आवश्यकता नहीं है।

कैसे स्वस्थ हो घर ? स्वास्थ्यके ज्ञानसे, उत्तम आहार-विहारसे, स्वच्छतासे (अशुचिकर उच्छिष्ट पदार्थों और मलको सुव्यवस्थित ढंगसे विसर्जित करके निर्मल विमल पर्यावरणके निर्माणसे। मानव मरणधर्मा प्राणी है, जन्मसे मरणतक निरंतर यात्रा चलती रहती है अतः आनेवाली पीढ़ी, हमारे बच्चे सच्चरित्र, आत्मनिर्भर और सबल हों, हमारी प्रयाणमुख पीढ़ी, हमारे बड़े-बूढ़े सन्तुष्ट सुखी हों। जीवन पथ दुर्गम है, नाना प्रकारके रोग और दुर्घटनाएं सुख छीन लेनेका मौका ढूंढा करती है अतः इनके प्रतिषेत्रके सभी ज्ञात उपाय करनेसे यात्रा निर्विघ्न और आनन्द दायक होगी।

घर-परिवार अर्थात् समुदायकी इकाई ! आवश्यक है ये बर्तनों सी एक दूसरेसे टकरायें नहीं बल्कि ईंटोंकी भाँति एकजुट हो सुदृढ़ दीवारका निर्माण करें। समुदायको शुद्ध पेयजलकी, महामारियोंकी रोकथामकी, पर्यावरणकी शुद्धताकी, माताओं और शिशुओंकी उत्तम देखरेखकी आवश्यकता होती है। समुदाय चाहे तो जीवन शान्त, सुखद, और सुगम बना सकता है। (आज मानवता पीड़ित है शोरसे, संदूषणसे, भीड़भाड़से, कलह क्लेशसे)। मसीहा कह गये हैं पड़ोसीसे प्यार करो। पड़ोसीके सुखदुखमें शामिल हो, इस प्रकार विश्वको सुखी बनाओ ! पड़ोसी बीमार हुआ, बुरी आदतोंसे पीड़ित हुआ तो स्वस्थ परिवारको बिना मांगे दुख भोगना पड़ता है। हम विश्वको कुटुम्ब मानते हैं अतः सारे विश्वके समस्त लोगोंके लिए सुख स्वास्थ्य प्राप्त करनेके हित हमें अनेक सीढ़ियाँ तय करनी होगी और इनमें पहली सीढ़ी है 'घर' और आगे महल्ला, नगर-ग्राम, प्रदेश, देश महाद्वीप और संसार।

विश्व स्वास्थ्य दिवसका रजत जयन्ती संदेश है कि स्वाथ्यकी शुरूआत घरसे होती है। तो आइये निज-निज भवनको मंगलमय बनानेके उपाय करें।

हमारा घर

इमे गृहा मयोभुव ऊर्जस्वन्तः पमस्वन्तः ।
पूर्ण वामस्य तिष्ठन्तस्ते नो जानन्तु जानतः ॥
सूनृतावन्त सुभगा इरावन्तो हसामुदाः ।
अक्षुध्या अतृष्यासो गृहा मास्मद् बिभीतन ॥
येषामध्येति प्रवसन् येषु सौमनसो बहुः ।
गृहानुपह्‌वायाम यान् ते नो जानन्त्वायतः ॥
उपहूता भूरिधनाः सखायः स्वादुसन्मुदः ।
अरिष्टाः सर्वपूरूषा गृहा नः सन्तु सर्वदा ॥

—अथर्ववेद, ३।२६

[ये घर सुख देनेवाले हैं, धान्यसे भरपूर हैं, घी दूध से सम्पन्न हैं। सब प्रकार के सौंदर्य से युक्त ये घर हमारे साथ घनिष्ठता प्राप्त करें और हम इन्हें अच्छी तरह समझें। जिन घरों में रहनेवाले परस्पर मधुर और शिष्ट सम्भाषण करते हैं, जिनमें सब तरह का सौभाग्य निवास करता है, जो प्रीतिभोजों से संयुक्त हैं, जिनमें सब हँसी-खुशी से रहते हैं, जहाँ कोई न भूखा है न प्यासा है, उन घरोंमें कहीं से भयका संचार न हो। प्रवास में रहते हुए हमें जिनका बराबर ध्यान आया करता है, जिसमें सहृदयता की खान है; उन घरों का हम आवाहन करते हैं। वे बाहर से आये हुए हमको जानें। बहुत धनवाले मित्र इन घरों में आते हैं, हँसी-खुशी के साथ हमारे संग स्वादिष्ट भोजन में सम्मिलित होते हैं। हे, हमारे गृहो! तुममें बसनेवाले सब प्राणी सदा अरिष्ट अर्थात रोग रहित और अक्षीण रहें, किसी प्रकार उनका ह्रास न हो।

विश्व स्वास्थ्य संगठनके महानिदेशक, डाक्टर एम० जी कैण्डुका सन्देश

“स्वास्थ्यकी हर बात, घरसे ही शुरुआत”

●

जब विश्व स्वास्थ्य संगठन १९४८ में बना तभीसे इसने करोड़ों लोगोंके स्वास्थ्यपर असर डालनेवाली समस्याओंपर ध्यान केन्द्रित रखा है। फिर भी मुझे यही अधिक ठीक जँचता है कि विश्व स्वास्थ्य संगठनकी रजत जयन्तीके उपलक्षमें मनाये जानेवाले इस विश्व स्वास्थ्य दिवसके अवसरपर हम घर-बारकी नन्हीं-सी दुनियाके स्वास्थ्यकी ओर विशेष ध्यान दें। जिस प्रकार अन्तरराष्ट्रीय स्वास्थ्य-सुरक्षा विश्व समुदायके प्रत्येक देशके स्वास्थ्यके स्तरपर आश्रित है, ठीक उसी तरह किसी शहर, गाँव पुरवेका स्वास्थ्य भी उन घरोंके स्वास्थ्यपर ही निर्भर होता है, जिनको मिलाकर ही इनकी रचना होती है।

अच्छे स्वास्थ्यके लिए घरको एक बेहतर जगह बनानेके असंख्य उपाय हैं। इसके लिए स्वास्थ्यके बारेमें और अधिक जानकारी, उपलब्ध भोजन सामग्रीका यथासम्भव सबसे अच्छी तरह तरह उपयोग, स्वास्थ्यके लिए हानिकारक कूड़े-कचड़ेको ठीक तरहसे ठिकाने लगाना, शक्तिशाली और आत्म-निर्भर बननेमें बच्चोंकी सहायता करना, परिवारको इस तरहसे नियोजित करना ताकि हरेक बच्चेको उज्वल भविष्यके लिए सफलताके अवसर मिल सकें, आकस्मिक दुर्घटनाओंसे बचनेके लिए सतर्कता बरतना तथा वयोवृद्ध लोगोंकी प्रसन्नताकी रक्षा आदि कुछ थोड़ेसे सुझाव हैं।

इस प्रकारके कई कार्योंके लिए, परिवारको समुदायकी सेवाओंकी आवश्यकता होगी। जल-प्रदाय, संक्रामक रोगोंसे बचावके टीके, गर्भावस्थामें तथा प्रसवके समय माताओंकी सहायता – ये कुछ प्रत्यक्ष उदाहरण है। सामुदायिक सेवाएँ आज क्यों अधिक आवश्यक हैं, इसका एक कारण यह है कि आज जो बड़े-बूढ़े हैं, वे अपनी नौजवानीके वातावरणसे अलग एक ऐसी परिस्थितिमें रहते हैं जिनका उनको पहले आभास भी नहीं था। उदाहरणके तौरपर हम देख सकते हैं कि भीड़-भरे नगरोंमें पुराने अनुभवके आधारपर प्रमाणित तौर-तरीके आज उपयुक्त नहीं रहे। सामुदायिक कार्य इन बदले हुए तौर-तरीकोंको अपनानेकी प्रक्रियाको सरल और सुगम बना सकता है।

पड़ोसीके रोगी होने अथवा उसकी गन्दी आदतोंके कारण दरअसल स्वस्थ्य जीवन बिताने की हमारी कोशिशोंपर पानी फिर सकता है, लेकिन अगर कुछ रोग सम्पर्कसे फैल सकते हैं तो उसी तरह अच्छी आदतें और स्वथ्य तौर-तरीकोंका भी प्रसार हो सकता है। अपने घरसे ही स्वास्थ्यकी शुरुआत करके सब लोग विश्व स्वास्थ्यके लिए योगदान कर सकते हैं।

(वि० स्वा० सं० से साभार)

'घर दुर्ग नहीं होते'

—श्री मीरिश शैफर, डी० पी० ए०—

स्वास्थ्य व्यवस्थाके प्राध्यापक, स्कूल आफ पब्लिक हेल्थ, नार्थ कैरोलिना विश्वविद्यालय, चैपल हिल (यू० एस० ए०)

किसी भी व्यक्तिका घर वस्तुतः उस समुदायकी बनिस्बत, जिसका कि वह एक हिस्सा है, न तो अधिक सुरक्षित है और न अधिक स्वास्थ्यवर्द्धक ही। यह तो केवल सामुदायिक स्वास्थ्य कार्योंसे ही होगा कि प्रत्येक आदमीका घर वास्तवमें उसके पर्यावरणके जोखिमसे सच्ची सुरक्षा प्रदान करने वाला आश्रय दे सके।

भोजन और वस्त्रके अलावा सिर छुपानेके लिए आश्रयको भी बहुत पहलेसे ही मानव जीवनकी प्राथमिक आवश्यकता माना गया है। आदिम मानव अपनेको मौसमके अतिरेक, दूसरे मनुष्यों तथा खूंखार जानवरोंसे बचावके लिए भौतिक रुकावटें बना लेते थे। जैसे-जैसे सभ्यता आगे बढ़ी मकानोंको अधिक सुरक्षित, भव्य और संरधित बनानेका प्रयास किया गया है। बहुतसे समाजों में तो यह अवधारणा भी उठी 'घर' से बोध रहनेके मकानसे कुछ और अधिकका भी होता है, क्योंकि यह मानसिक एवं शारीरिक प्रश्रयके साथ-साथ परिवारके नियमित विकासका भी केन्द्र बिन्दु है।

संगठित समाजोंमें तो जीवनकी आज एक और ही आवश्यकताका केन्द्र बिन्दु भी घर ही बन गया है—पर्दादारी, जो कुछ भी है, उससे परिवार और व्यक्तिके आवश्यक अधिकारोंका बोध होता है। अनेक राष्ट्रोंके संविधान पर्दादारीके अधिकारकी बात कहते हैं और बहुतसे समुदायोंमें पुलिस सेवाओं द्वारा इसका ध्यान रखा जाता है कि लोगोंकी सुरक्षा और घरोंकी पर्दादारी बनी रहे। सम्भवतः इस सिद्धान्तका मूल आधार इस कानूनी उक्तिके अनुरूप है कि आदमीका घर ही उसका किला है।

इस विचारसे यह सुझाव मिलता है कि प्रत्येक परिवारको यह क्षमता प्राप्त है कि वह समुदायसे अलग होकर अपनेको घरमें किला बन्दकर ले, ताकि समुदायके साथ जो उसका सम्पर्क है, उसे कुछ समयके लिए अलग होकर अपने पड़ोसीके द्वारा दिये हुए गम और खतरेसे अपनेको एकान्तमें सुरक्षितकर ले। शायद बहुत-ही थोड़ी संख्यामें ऐसे लोग होंगे जो कि इतने अधिक धनी हो कि सब तरहसे सुरक्षित एवं अलग-अलग मकान ले सकें—ज्यादातर लोग ऐसे हैं, जिनके लिए इस तरहकी सम्भावना सपनोंके महलकी तरह है।

लोगोंकी पर्दादारीके अधिकारोंको मानकर भी, हमें समुदाय और सरकारके अधिकारोंके साथ समझौता करके ही चलना पड़ता है। अतः इतना तो कोई भी कह सकता है कि किसीका भी मकान कोई ऐसा किला नहीं है, जो कि उसे समुदाय द्वारा झेले जाने वाले खतरों और जीवनकी अन्य समस्याओंसे पूर्णरूपेण सुरक्षितकर दे। यह विचार स्वास्थ्यसे सम्बद्ध समस्याओंसे अधिक कहीं और खरा नहीं उतरता, क्योंकि स्वास्थ्यके स्तर और रोगपर समुदायकी अन्तर्क्रियाका प्रभाव पड़ता है।

यह अन्तर्क्रिया अनेक प्रकारसे घटित होती है। बहुत कुछ ऐसा भी है, जिनके लिए लोगोंको अपने घर की चहार दीवारीके बाहरकी दुनियापर आश्रित होना पड़ता है—उदाहरणके तौरपर आजीविकाके उपार्जन, भोजन और वस्त्रकी उपलब्धि, मनोरंजन और भावनाओंकी संतुष्टि तथा सामुदायिक निर्णयोंमें यथायोग हिस्सा लेना और ऐसे प्रयास करना जिनका सम्बन्ध किसी व्यक्तिके अपने ही हितसे होता है।

जब भी लोग समाजमें इनमेंसे किसी प्रकारका कार्य करते है तो उनके सामने कुछ जोखिम आते हैं। ये खतरे पर्यावरणसे सम्बधित हो सकते है जैसा कि खेत, खान और खलिहानमें तथा कल-कारखानों, नदी और समुद्रमें,

याता-यातके साधनों और तरीकोंमें, उस जलमें जो कि दूषित हो जाता है कुछ रसायनों और रोगके जीवाणुओं से वायुका दूषण जो कि कल-कारखानों तथा खेतोंसे निकलने वाली गन्दगीसे उत्पन्न होता है और जीवनके भीड़-भाड़, शोर-शराबे तथा गर्द गुब्बारसे उत्पन्न मानसिक तनाव। इसके अतिरिक्त कुछ ऐसे भी खतरे स्वास्थ्यके लिए होते हैं, जिन्हें हमारे घरमें ही जन्म मिलता है—घरमें काममें लाया गया जल तथा मल-मूत्र आदि, जो कि पड़ोसियोंके लिए ही नहीं, बल्कि अपने परिवारके लिए भी कष्टका कारण हो सकते है।

दूसरी ओर स्वास्थ्यके लिए जो जोखिमकी बातें हैं उनसे सुरक्षाके लिए किये गये सामाजिक क्रिया-कलापोंके प्रभावसे परिवारको लाभ होता है। ये कार्य ऐसे हैं जो कि समुदाय द्वारा अथवा उसके सहयोगसे ही किए जा सकते हैं। सामुदायिक स्वास्थ्य सेवाएं उस समय सुचारु रूपसे कार्य करती हैं, जब लोग उनके लिए आर्थिक एवं स्वास्थ्यके व्यावहारिक पहलूके साथ सहयोग देते हैं। दूषित जल एवं भोजनसे फैलनेवाले रोगोंसे सुरक्षा प्रदान करनेके लिए बहुत-सी सेवाएं संगठित की जाती हैं और चलायी जाती हैं। कामपर जानेवालोंको सुरक्षा देते हैं तथा मोटर चालकों और सड़कपर पैदल चलनेवाले और ऐसे किसी भी व्यक्तिको जो कि दूषित वायुमें सांस लेनेका जोखिम उठाता है, ये सेवाएं उनकी रक्षा करती हैं। रोगीकों उचित और प्रभावकारी सेवाएं ही नहीं दी जाती बल्कि संचारी रोगोंसे लोगोंको ग्रसित होने तथा रोगके प्रसारको रोकनेके लिए सफाई और टीकेका भी प्रबन्ध किया जाता है।

व्यक्ति और समाजके बीच अथवा छोटे वर्ग और बड़े वर्गोंके बीच जो अन्तर्क्रिया होती है, वह एक देशमें दूसरे देशसे भिन्न है, लेकिन सामाजिक और आर्थिक विकासके साथ-साथ विश्वके सभी भागोंमें इसमें वृद्धि हो रही है विकासशील देशोंमें औद्योगीकरण और नागरीकरण भी बढ़ रहा है, समाज जटिल बनता जा रहा है और नयी-नयी संस्थाओंका निरन्तर अभ्युदय हो रहा है—इनमें से जो कि जनसंचारके विभिन्न तरीकोंके लिए कृतसंकल्प हैं वे भी कम महत्वपूर्ण नहीं हैं। अपेक्षाकृत विकसित देशोंमें प्राविधिक विकासके कारण पर्यावरणसे सम्बन्धित बहुत-सी समस्याएं उत्पन्न हो गयी हैं, जिनको सुलझाना होगा। इस अनुभवका लाभ विकासशील देशोंपर प्रभावकारी ढंगसे ऐसा पड़ा है कि वे बढ़ते हुए आर्थिक विकासकी स्थितिसे उत्पन्न समस्याओंकी खाईमें न गिरें इसलिए पहलेसे ही सचेत हैं।

भला ऐसे घर कहाँ हैं जो इस प्रकार की समस्याओंसे अछूते रहें, जहाँ कि आत्मनिर्भरताका विचार आज भी बना हुआ हो? इस संदर्भमें बहुत कुछ हद तक उत्तर सकारात्मक हो सकता है—बस ऐमी आबादियोंमें जहाँ घनत्व अधिक नहीं है तथा प्राविधिक स्तर नीचा है और जहाँ परम्परागत तरीकोंसे बड़े-बड़े धरतीके चप्पोंपर खेती होती है और छिट फुट मकान हैं। ऐसी जगहोंपर सामाजिक प्रक्रिया और स्वास्थ्यपर प्रभाव बहुत कम है, क्योंकि ज्यादातर लोग स्पष्ट रुपसे आत्मनिर्भर हैं। एक घर दूसरे घरसे काफी फासलेपर होता है, जिससे घरसे निकले नालोंका पानी सुखा देनेके लिए धरती सक्षम हो जाती है और भोजनके लिए उपलब्ध खाद्यसामग्री और कपड़े-लत्तेके लिए निश्चिन्तताके कारण आश्रित होनेका स्तर भी नीचा ही होता है।

जहाँ तक कि रोगोंसे बचावकी बात है, गांवोंके परम्परागत जीवनका जो चित्र प्रस्तुत किया है, वह भी शायद ही नजर आये। इस प्रकारका ग्राम्य जीवनका प्रतिबिम्ब उस समय अनायास ही लुप्त हो जाता है, जबकि सामाजिक—आर्थिक और सांस्कृतिक परिवर्तन दिखाई देता है। व्यावहारिकताकी दृष्टिसे किसान गांव छोटे-छोटे पुरवेमें रहते हैं आस-पासके खेतोंमें काम करने जाते हैं। जब शिकारी लोग गाँवमें रहनेका निश्चय हैं तो लोगोंके हिस्सेमें भूमि कम होती जाती है और यह प्रभाव होता है जनसंख्या बढ़नेका और वस्तुतः उत्तराधिकारके कानूनके कारण। कृषिके उपयोगमें लाये जानेवाले रसायनोंको सुरक्षित ढंगसे प्रयोग न करनेसे धरती और जल दूषित हो जाता है। कल-कारखाने अपने

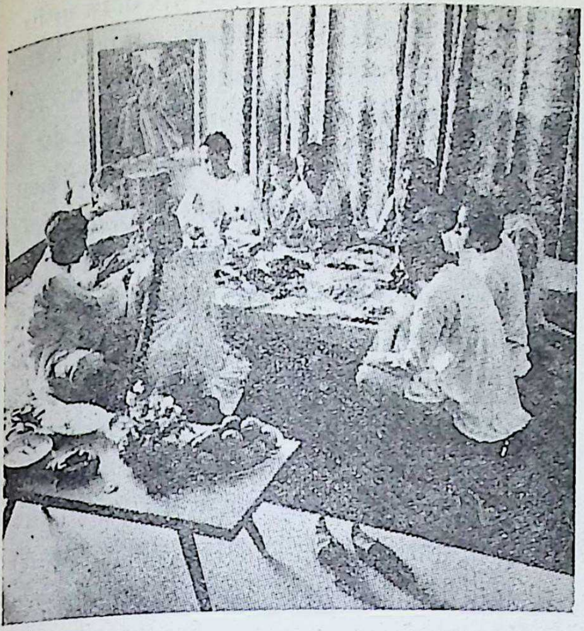

पाकिस्तानी पारिवारिक परिवेश-समन्वयका संसार

आस-पास दूषित पदार्थोंका निष्कासन इस प्रकार करते हैं कि इससे वायु और उस क्षेत्रके जल-स्रोत दूषित हो जाते हैं। इस प्रकारके परिवर्तनोंसे ग्रामीण वातावरण पर जबरदस्त प्रभाव पड़ता है। घर और पर्यावरणके बीचकी अन्तर्क्रिया बढ़ जाती है और स्वास्थ्य तथा लोगोंके भलेके लिए संगठित सामुदायिक कार्यकी आवश्यकता होती है।

आर्थिक और सामाजिक परिवर्तनके साथ-साथ ग्रामीण समुदायका भी जीवन बदला है। उद्योगोंसे सम्पन्न नगरी क्षेत्रोंकी ओर लोग काफी संख्यामें बेहतर जिन्दगीकी तलाशमें आ रहे हैं। तो भला हम आत्मनिर्भरताका दम्भ कहाँ तक भर सकते हैं? भौतिक और सामाजिक पर्यावरणसे प्रभावित होनेकी पूरी सम्भावना शहरके घरोंकी है। एक मकानसे दूसरेको अलग रखनेवाली खुली हुई जगह और धरतीकी वह क्षमता जो कि घरोंकी नालियोंसे निकाले हुए दूषित जलको सोख लेती है, यहां मुश्किलसे ही कहीं मिल सकती है।

बड़े-बड़े शहरोंके छोरपर गरीबोंकी घनी आबादीवाली गन्दी बस्ती होती है। यहाँका पर्यावरण विभिन्न प्रकारसे स्वास्थ्यपर गहरा प्रभाव डालता है। ऐसा केवल इसलिए है कि वहाँ स्वच्छ भोजन, शुद्ध वायु, और सफाई बहुत कम है। पर्दादारी, शान्ति, प्रश्रय, जलप्रदाय और दूषित जलके निकासकी समुचित व्यवस्थाका भी अभाव है। विकासशील देशोंकी बात तो जाने ही ही दीजिये, जहाँ कि लाखों लोगोंके पास सिर छुपाने तकके लिए मकान नहीं और उनके 'घर' सड़कके फुटपाथ या रेलवे स्टेशन ही हैं। शहरका निवासी आज किसी भी प्रकार आत्मपूरित नहीं है। जो शारीरिक एवं मानसिक जोखिम उठाता हैं उसमें भी परस्पर अन्तर. केवल उसकी गरीबी और उसके निवासके क्षेत्रमें आबादी घनत्वके मुताबिक ही होता है। यही नहीं बल्कि नगरोंमें रहनेवाले परिवार जो काफी धनाढ्य हैं, वे भी उद्योगों और यातायातसे उत्पन्न होनेवाले वायु दूषणमे. नहीं बच सकते है और ऐसे ही वातावरणमें वे भी सांस लेते हैं। वे भी अन्य परिवारोंकी तरह ही जल, गन्दगीको ठिकाने लगाने और सफाईकी सेवाओं तथा इनके निरन्तर सुलभ होनेपर ही निर्भर रहते हैं।

जैसे-जैसे नगरीय क्षेत्रोंका विस्तार और उनमें जनसंख्याका घनत्व बढ़ता जाता है, वैसे-वैसे स्वास्थ्य और रोगकी समस्याएं भी बढ़ती जाती है। शहर बढ़कर महानगर बन जाते हैं—हजारों वर्ग-मीलका पूरी तरह नागरीकरण हो जाता है और यहाँ बसनेवाले लोग उत्पादन, दूषण, यातायात और बाजारोंसे मानो एक सूत्रमें बन्ध जाते हैं। लेकिन ऐसे राजनीतिक संगठनके सूत्रों जो कि क्षेत्रीय आधारपर समस्याओंको सुलझानेकी छूट देते हों, उनसे कभी भी बंधकर वे :एकजुट नहीं हो पाते हैं।

चूंकि शहरोंमें अधिक जनसंख्या और रोगोंकी समस्या अधिक रही है, वहाँके जनजीवनको बनाये रखनेके लिए सुसंगठित स्वास्थ्य और सफाई सेवाओंका विकास अग्रगामी रहा है। जबतक खाद्य और जलकी सुरक्षा, मल व्ययन और दूषणके नियन्त्रणके विषयमें

कुछ नहीं कर लिया जाता तबतक रोग और विषाक्तताके खतरे, केवल उन्हीं लोगों तक सीमित नहीं हैं जो कि बहुत ही प्रत्यक्ष रूपमें ऐसी परिस्थितिमें हैं, बल्कि यह खतरा सभी लोगोंके लिए बना रहेगा। यही नहीं बल्कि आज तो संसारके करोड़ों नगरवासियोंको भौतिक खतरोंसे बचनेके लिए भी कमसे कम सुरक्षा भी तो सुलभ नहीं है। इससे भी अधिक खराब स्थिति उन मनोवैज्ञानिक और सामाजिक तनावोंकी है, जिनका सम्बन्ध मानसिक रोगों, अपराधों, कार्यकी अक्षमता और सामाजिक अलगावसे है।

विकासशील देशोंमें, जोकि अपेक्षाकृत निर्धन हैं, स्थिति और भी खराब है। वहाँ स्वच्छताकी छोटीसे छोटी सुविधाएँ जुटानेके लिए आर्थिक साधन नहीं मिल पाते। यह कठिनाई प्रायः उस स्थितिमें और भी अधिक होती है जब वहांकी आबादी तेजीसे बढ़ रही होती है और नागरीकरण अस्तव्यस्त ढंगसे हो रहा होता है। विकसित देशोंको भी ऐसी ही बहुत-सी समस्याओंका सामना करना पड़ता है। उनकी समस्याएं कुछ और भी होती हैं जो तकनीकी घुटन और ऐसी चीजोंके सामूहिक वितरणके कारण पैदा होती है, जिससे दूषण और गंदगीको ठीक ठिकाने लगानेकी समस्याएँ और भी उग्र हो जाती हैं। सभी प्रकारके लोगोंमें रोगों और अक्षमताओंकी रोकथाम उनके उपचार और आवश्यकता पड़नेपर उनसे उबरे हुए व्यक्तियों के पुनर्वास हेतु चिकित्सीय सेवाओंकी बड़ी ऊंची आकांक्षाएं और आवश्यकताएं होती हैं।

वस्तुतः सभी देशोंमें सरकारोंसे इस बातकी अपेक्षा की जाती है कि इन समस्याओंके समाधानमें अधिकाधिक हाथ बटायें। जब किसी स्वास्थ्य समस्याका समाधान व्यक्तिगत अथवा वर्गगत रूपसे प्राप्त साधनोंके बसके बाहर हो जाता है तो जन स्वास्थ्यकी परम्पराके अनुसार सरकारको बाकायदा मैदानमें उतरना पड़ता है। यदि वह ऐसा न कर पाये तो इसे उसके शक्ति और व्यवस्थाकी असफलता ही माना जायेगा। आबादीके बढ़ जाने और उसके इधरसे उधर आने-जाने, तथा तकनीकी विकासके परिणामस्वरूप उत्पन्न नयी और अधिक गम्भीर समस्याएं सरकारोंसे अधिक सक्रिय सहयोगकी अपेक्षा करती हैं। ऐसी समस्याओंके समाधानके लिए आवश्यक वैज्ञानिक साधन या तो केवल सरकारके पास होते हैं अथवा वही इन्हें कहींसे जुटा सकती हैं और जनता द्वारा केवल सरकारको ही इन समस्याओंसे निपटनेकी वैध शक्ति और अधिकार प्रदान किया गया है। आजके संसारकी कोई भी सरकार जनहितके लिए अपने साधनोंका उपयोग करनेकी चुनौतीके लिए सेवाओंको संगठितकर आधारभूत सुरक्षा साधनोंका विस्तार करने और आर्थिक एवं स्वास्थ्य सम्बन्धी आवश्यकताओंमें सन्तुलन बनाये रखनेके अपने उत्तरदायित्वको नजरअन्दाज नहीं कर सकती, क्योंकि वह जानती है कि अबेर या सबेर उसे इन तथ्योंका सामना करना ही होगा, क्योंकि जनस्वास्थ्यके ठीक होनेपर ही स्वस्थ अर्थव्यवस्था होगी, या यों कहिये कि जब लोग स्वस्थ होंगे तो अर्थ व्यवस्था सुधरेगी।

फिर भी यह तो मानना ही होगा कि सरकारका कार्य स्वास्थ्य और सफाईके लिए सुलभ सेवाओंके बारेमें बस कानून और नियम बनाकर ही समाप्त नहीं हो जाता। आज तो आवश्यकता इस बातकी है कि लोग जो भी कार्य अपने घरोंपर चला रहे हैं, उसमें उनकी सहायता कुछ इस प्रकारसे की जाय कि उन्हें अपनी सहायता आप करनेकी प्रेरणा मिले। करोड़ों माता-पिता आज उस घरेलू वातावरणसे बिल्कुल भिन्न वातावरणमें रह रहे हैं, जिसमें कि वे पले और बड़े हुए और काम करना सीखा। बच्चोंको तथा उनके इन अभिभावकोंको यदि अपने मकानके लिए स्वास्थ्यपूर्वक ढंगसे उपयोग करने तथा पड़ोसियोंके लिए निरापद बनाना है, तो उसके लिए उन्हें काफी शिक्षा और प्रेरणा देनी होगी। घरोंको स्वास्थ्यके लिए एक केन्द्रके रूपमें विकसित करनेकी आवश्यकता है, चाहे वह नगरके बीचोबीच हो या गाँवकी गलीमें या कहीं आबादी

(शेष पृष्ठ १३ पर)

टीका

सर्वोत्तम चिकित्सीय बीमा

—सुश्री नानसी रोजेन बर्ग—

बच्चा डाक्टरकी मेजपर लेटा प्रसन्नतापूर्वक खिलखिला रहा है। वह ड़ाक्टर और उसकी सुईसे अनजान है। एक कोनेमें उसकी स्नेहमयी माता अपनी आखोंको हाथसे ढंके हुए खड़ी है। कुछ ही मिनटका काम था। अब बच्चा चुप है। अब वह खिलखिला नहीं रहा है, पर उसकी मां आश्वस्त हो गयी है। उसका डर मिट गया है। सूई लगानेसे उसके लालको थोड़ा बुखार हो सकता है या वह थोड़ा घबड़ा सकता है। किन्तु यह तो केवल एक छोटी-सी कीमत है जो उसे अपंग बनानेवाले या घातक रोगसे सुरक्षा करेगी।

इस तरहके टीके सर्वोत्तम चिकित्सीय बीमा हैं। वे निश्चित रुपसे बहुत ही सस्ते हैं। ठीकसे लगाये जानेपर उनसे डिप्थीरिया (गलघोटू), कालीखांसी, टिटनस, पोलियो, खसरा, चेचक, कनपेड़ा, क्षय और और इसी तरहके अन्य भयानक रोगोंकी रोकथाम हो सकती है।

निवारात्मक आयुर्विज्ञानकी इसी आश्चर्यजनक वस्तुकी खोज लगभग २०० वर्ष पूर्व हुई थी। सबसे पहले यह जेम्स फिप्स नामक एक अंग्रेज बालकको दिया गया था। वह ग्लोसेस्टरशायरकी एक पशुशालामें रहता था। वहां १७७६ में एडवर्ड जेनरने उसे गोशीतलाका टीका लगाया ताकि उसे कभी चेचक रोग न लगे। गोशीतला एक मामूली रोग है और चेचक भयानक और प्रायः घातक रोग होता है। जब जेनरने जेम्स फिप्सको कुछ सप्ताह बाद चेचकके कीटाणुओंका टीका लगाया तो उसका विश्वास फलीभूत हुआ। इससे सावित हो गया कि बालकको चेचककी छूत लगना असम्भव है।

जेनरकी यह खोज गो (गाय) के लिये 'वैक्सा' लैटिन शब्दके कारण वैक्सीनेशन कहलायी। अपने समयकी यह एक महान सफलता थी! यह आज भी व्यवहारमें लाई जाती है। यद्यपि बच्चोंको चेचकसे तो सुरक्षा मिल गयी थी, परन्तु वे अन्य रोगोंसे काल-कवलित होते रहे। यह कुछ वर्षोंके बाद ही वैज्ञानिकोंको पता चला कि वेक्सीनेशन (टीका) इतनी अच्छी तरह काम क्यों करता है और वे अधिक बड़े पैमानेपर उसी सिद्धान्तको लागू कर सके।

शरीरकी सहज प्रतिक्रिया रोगाणुओंके आक्रमणके विरुद्ध शरीरमें ऐसी शक्ति पैदा करता है जिससे कि रोगोंसे बचाव हो सके। ये ऐसे प्रोटीन होते हैं जोकि रोगाणुओंको नकारात्मक बनाकर उन्हें हानिरहित कर देते हैं। प्रत्येक रोगाणुका अपना एक खास प्रतिपिण्ड होता जो उसमें उसी प्रकार ठीक वैंठता हैं जैसे तालेमें उसकी चाबी। उदाहरणके लिए खसरेके प्रतिपिण्ड खसरा-रोगाणुओंके विरुद्ध तो प्रभावी है, परन्तु चेचक या पोलियोके रोगाणुओंके लिए कारगर नहीं। जब शरीर एक बार किसी विशेष रोगाणुके विरुद्ध प्रतिपिण्ड पैदा कर लेता है तो वह उन्हें पैदा करनेकी बातको फिर कभी नहीं भुलाता। यदि कभी वह रोगाणु पुनः शरीरमें प्रवेश कर जाता है तो शरीरको कोई नुकसान पहुचानेके.पूर्व ही उसे नकारात्मक कर दिया जाता है, उन्हें वह रोग फिर दुबारा नहीं होता।

टीका वह उपाय है जिसके द्वारा प्राकृतिक सुरक्षा प्राप्तकी जाती है। जब बालक फिप्सको गोशीतलाके कीटाणुओंका टीका लगाया गया तो उसके शरीरमें उन्हें नकारात्मक बनानेके लिए गोशीतला प्रतिपिण्डोंका उत्पादन करनेकी प्रतिक्रिया हुई। सौभाग्यसे चेचकके कीटाणु गोशीतला उत्पन्न करनेवाले कीटाणुओंसे इतने मिलते जुलते हैं कि गोशीतला प्रतिपिण्ड उन्हें भी

नकारात्मक बनानेमें समर्थ हो जाते हैं। अहानिकर रोग गोशीतलाके कीटाणुओंकी सूई लगवानेकी सहमति देकर बालक फित्सने एक भयानक रोग (चेचक) के विरुद्ध सुरक्षा प्राप्तकर ली थी।

टीके आमतौरपर इसी सिद्धान्तपर कार्य करते हैं। प्रत्येक टीकेका निर्माण उस कीटाणुसे होता है जिसे इतना बदल दिया या कमजोरकर दिया गया है कि वह उस भयंकर रोगको तो उत्पन्न नहीं कर पाता, किंतु प्रतिपिण्डोंको उत्तेजित करनेकी उसकी क्षमता नष्ट नहीं होती। कुछ वैक्सीन तो मरे हुए कीटाणुओंसे तैयार किए जाते हैं। जब एक बार वैक्सीन शरीरमें पहुच जाती है तो हानिकारक कीटाणुओंके शरीरमें पहुंचनेके पूर्व ही प्रतिपिण्ड वहां उपस्थित हो जाते हैं और उस भयंकर रोगको पनपनेका अवसर नहीं मिल पाता। जेनर इस बातमें भाग्यशाली था कि उसने बनी बनायी चेचककी वैक्सीन खोज निकाला जो प्रकृतिने प्रदानकर रखी थी। अन्य रोगोंके लिये वैक्सीन तैयार करनेके लिए कठोर परिश्रम करते-करते वर्षों लग गये। वैज्ञानिकों ने रोगके कीटाणु पहचाने और प्रयोगशालाके उन जीव जन्तुओंपर जिन्हें रोग हो जानेकी सम्भावना थी, उस रोगके कीट णुओंकी वृद्धि की। फॅरेट (एक ध्रुव प्रदेशीय बिल्ली) में फ्लू, बन्दरोंमें पोलियो और खरगोशोंमें रेबीज के कीटाणुओंका प्रवेशकर उनकी वृद्धिकी जाती है। जब जन्तुओंपर प्रयोग करके वैक्सीनकी सुरक्षा और प्रभाव देख लिया जाता है, इसके बाद ही मनृष्योंपर पहले परीक्षण किये जाते हैं।

सभी वैक्सीन आमतौर पर एक ही तरीकेसे तैयार किये जाते हैं फिर भी हर सूक्ष्म जीवाणु अपने किस्म की समस्याएं खड़ीकर देता है। आधुनिक विषाणु-विज्ञान की एक महान विजय पोलियोके लिए टीका बनाना था। पोलियो एक ऐसा भयंकर रोग है जो मेरुदण्डको हानि पहुंचाता है जिससे लकवा और मृत्यु तक हो सकती है। पोलियोका कारण एक विषाणु होता है। यह एक अति सूक्ष्म जीव होता है जो कि जीवित कोषाणुके भीतर ही पनपता है। प्रयोगशालामें इन विषाणुओंको पैदा करनेके लिए वैज्ञानिकोंको ऐसे जीवित कोषाणु ढूंढ़ने होंगे जिनमें प्रयोगशालाके अन्दर उनको जीवित रखा जा सके और उसकी विधि जानी जा सके।

कई वर्षों तक तो प्रयोगशालामें पोलियो विषाणु पैदा करनेकी कोई विधि ही नहीं ढूंढी जा सकी। भारी मात्रामें विषाणु न मिलने पर वैक्सीन तैयार करने की कोई आशा नहीं थी। यह बांध १९४८ में टूटा जबकि जान एण्डर्स और उसके साथियोंने हार्वर्ड विश्वविद्यालय में अन्ततः समस्याका समाधान ढूंढ लिया। उनको अपने प्रयासोंके लिए नोबुल पुरस्कार प्राप्त हुआ। वे उन पोलियो विषाणुकों उन कोषाणुओंमें पैदा करनेमें सफल हो गये थे, जो स्वयं प्रयोगशाला फ्लास्कके शीशेकी दीवारोंपर बढ़ रहे थे।

जब विषाणु बड़ी मात्रामें मिलने लगा तो डा० जोनास ई० साल्कने 'मृत' विषाणु वैक्सीन बनानेका कार्य हाथमें लिया। यह एक ऐसा वैक्सीन होता है जिसमें विषाणुको 'फारमलडिहाइड' के द्वारा निष्क्रियकर दिया जाता है। इस कार्य को सम्पन्न करने और सुरक्षा और प्रभावोत्पादकताके लिए वैक्सीनके परीक्षणमें वर्षों व्यतीत हो गये थे, आज भी 'साल्क वैक्सीन' इंजेक्शन लगाते हैं। इसके अलावा डा० एलबर्ट बी० साबिनने 'जिवित' पोलियो वैक्सीन बनाया जिसमें विषाणुको 'मृत' करने की बजाय दुर्बल कर दिया जाता है। यह 'साबिन वैक्सीन' खिलाई जाती है। वैज्ञानिक दशाब्दियोंसे इन्फलूएंजा विषाणुके पिछे पड़े हैं। यह एक शीघ्र परिवर्तन-शील बहुत ही सूक्ष्म कलाविद है। यह अनेक विभिन्न रूपोंमें प्रगट होता है। इन सभी रूपोंमें अकस्मात ऐसे परिवर्तन हो जाते हैं जिनका अनुमान भी नहीं लगाया जा सकता। फ्लू विषाणुके वेश इतने भिन्न भिन्न होते हैं कि गत वर्षका फ्लू वैक्सीन कभी-कभी उस वर्षके विषाणुके लिए पूर्णतः व्यर्थ हो जाता है।

फ्लू विषाणु की निगरानीका काम विस्वासं द्वारा स्थापित चारों ओर फैले हुए इन्फ्लुएंजा केन्द्रोंका है। ये केन्द्र दूर-दूरसे इस रोगके सम्बन्धमें सन्देश ग्रहण करनेवाली चौकियाँ हैं। जब यह रोग महामारीके रूपमें फूट पड़ता है तो निकटतम इन्फ्लुएंजा केन्द्रोंमें उस महामारी फैलानेवाले विषाणुको छांट लिया जाता है, उसका ध्यानसे परीक्षण किया जाता है। यदि किसी भी प्राप्त वैक्सीनके द्वारा उस विषाणुसे सुरक्षा न मिले तो नये विषाणुके विषयमें सभी इन्फ्लुएंजा केन्द्रोंको सन्देश प्रसारित कर दिये जाते हैं। उस नये विषाणुके नमूने भी उन्हें भेज दिये जाते हैं। उस विषाणुको अधिक दूर तक फैलनेका मौका मिलनेसे पहले ही कोई नया वैक्सीन पैदा करनेके लिए अत्याधिक प्रयास किये जाते हैं।

जुकाम एक ऐसे विषाणुसे उत्पन्न होनेवाला रोग है जिसने वैक्सीन निर्माताओंको काफी परेशान किया है। जुकाम किसी एक विषाणु या विषाणुओंके किसी एक वर्गके कारण नहीं होता, बल्कि १०० से भी अधिक विषाणुओं द्वारा होता है। उन सभीको एक ही वैक्सीन में बांध देना मौजूदा तकनीकके लिए सम्भव नहीं है। जुकामसे सुरक्षा यदि कोई ढूंढ़ भी ली जाती है तो सम्भवतः वह औषधिके रूपमें होगी जिसका प्रभाव बहुत ही व्यापक रूपमें विषाणु-रोधी होगा।

हाल ही बनाये गये टीकोंमें एक टीका है जर्मन खसराके लिए जिसे रुबेल्ला भी कहते हैं। जर्मन खसरा एक ऐसा साधारण-सा रोग है कि १९४१ तक इसके लिए टीका प्राप्त करनेका कारण मुश्किलसे ही अनुभव किया गया था। १९४१ में एकाएक एक महत्वपूर्ण खोजकी गयी। आस्ट्रेलियामें तेरह बच्चे, सबके सब अन्धे, ऐसी माताओंसे पैदा हुए जिन्हें उनके गर्भ कालमें जर्मन खसरा हुआ था। आगेके अनुसन्धानोंसे पता चला कि जर्मन खसरा गर्भस्थ शिशुके लिए भयंकर खतरा होता है। उसके कारण उन्हें केवल अन्धापन ही नहीं, बल्कि बहरापन, जन्मजात हृद्-रोग और मानसिक पंगुता भी हो जाती है।

इस खोजके फलस्वरूप जर्मन खसराके लिए वैक्सीन बनानेके सघन प्रयास किये जाने लगे। २० वर्ष तक कार्यके पश्चात् जर्मन खसराका विषाणु पृथक कर लिया गया और फिर १९६९ में आवश्यक वैक्सीन प्राप्त हो गयी। कुछ देशोंमें यह टीका उनके छोटे बच्चों को नियमित रूपमें लगाया जाता है ताकि इस रोगकी छूतको विलुप्त करके होनेवाली माताओंको इस रोगसे सुरक्षा दी जा सके। अन्य देशोंमें यह टीका १२ से १९ वर्षकी लड़कियों और युवतियोंको दिया जाता है।

वैज्ञानिकों द्वारा किसी प्रभावशाली टीका बनाया जानेके बाद उसे जरूरतमंद तक पहुँचानेका काम सामने आता है। जहाँ बच्चोंकी नियमित रूपसे डाक्टरी देखभाल होती है, वहाँ यह कार्य अपेक्षाकृत आसान होता है। तथापि विश्वके उन विस्तृत क्षेत्रोंमें जहाँ मेडिकल सेवाएं अपर्याप्त हैं, वहाँ रोग उतने ही भयंकर महामारी बन जाते हैं जितने कि वे वैक्सीन बननेके पूर्वके दिनोंमें होते थे। आधुनिक आयुर्विज्ञानके लाभोंको प्रत्येक स्थानपर प्रत्येक व्यक्ति तक पहुँचानेका कार्य आजके संसारके सम्मुख एक बड़ी चुनौती है।

एक सुसंगठित विश्वव्यापी टीका लगानेके प्रयासों की क्या कुछ उपलब्धि हो सकती है, इसका एक उदाहरण विश्व स्वास्थ्य संगठनका चेचक उन्मूलन कार्यक्रम है। १९६७ में विस्वासंके सदस्य देश इस रोगको जड़से मिटानेके लिए एक सघन विश्वव्यापी कार्यक्रम में जुट गये थे। जिन देशोंमें यह रोग प्रायः होता रहा है उनमें सामूहिक टीका अभियान चलाये गये थे। टीका-उत्पादन को बढ़ाया गया और बहुतसे देशोंने विश्वसंके टीका बैंकको टीकोंका योगदान दिया।

टीका लगानेवालोंकी असंख्य टोलियोंको कार्यक्षेत्रमें उतारकर विभिन्न राष्ट्रीय अभियान चालू हो गये थे। उनमें बहुतसे लोगोंको नया-नया प्रशिक्षण दिया गया था। उन्मूलन कार्यक्रमके दूसरे वर्षमें रोगियोंकी संख्या में उल्लेखनीय कमी पायी गयी। दूर-दूर तक उष्णकटिबन्धके क्षेत्रोंमें और सुदूर ग्रामोंमें लोगों तक टीका भेजने

का काम भले ही अब सरल लगता हो, परन्तु १०-२० वर्ष पूर्व यह अत्यन्त कठिन रहा होगा । इसका कारण यह था कि टीकेकी क्षमताको बनाये रखनेके लिए उन्हें बराबर शीतकोंमें रखनेकी जरूरत पड़ती थी, वरना वे निष्प्रभावी हो जाते थे । अब जमाये हुए सूखे टीकेके फलस्वरूप वे सब बातें बदल गयी हैं । जब टीकोंको जमाते समय ऊंचे वैक्यूममें सुखा लिया जाता है तो उनकी क्षमता और शुद्धताको बिना किसी खतरेके उन्हें दीर्घकाल तक साधारण स्थितियोंमें रखा जा सकता है ।

टीका लगाने वालेका कार्य भी "जेट इन्जेक्टर गन" नामक यन्त्रके कारण सुविधाजनक हो गया है । इस यन्त्रमें टीकेकी ५० से ५०० खुराक तक आ जाती हैं और वे बिना किसी पीड़ाके त्वचाके भीतर प्रविष्ट की जा सकती हैं । दो मुंही सुईसे भी इस कार्यमें सहायता मिली है । टीका लगाने वाले इनके द्वारा एक दिन में १००० लोगोंको टीका लगा सकते हैं और वैक्सीन भी उतनी नहीं खर्च होती ।

चेचक उन्मूलन कार्यक्रमकी सफलता भी नाटकीय रही है । १९६७ में चेचककी सूचना ४२ देशोंने और १९७१ तक केवल १६ देशोंने सूचना दी थी । सूचित मामलोंकी संख्यामें भी कमी आयी है । १९६७ में यह संख्या १३१,१४० थी जो ४ वर्ष बाद ५२,००० रह गयी थी ।

कुछ देशोंमें तो टीका लगाने वाली टोलीने सभी आयुके लोगोंको टीका लगानेके अतिरिक्त यथासम्भव अधिकाधिक बच्चोंको खसरा-टीका भी लगाया है । बहुत से लोगोंमें इस रोगके मामूली रोग होनेकी मान्यताके बावजूद यह रोग मारक भी हो सकता है । अफ्रीकाके कुछ भागोंमें जहां यह रोग प्रायः छोटे बच्चोंपर आक्रमण करता है वहां शिशुओंकी आधे से भी अधिक मौतोंका जिम्मेदार खसरा ही है ।

पिछले कुछ वर्षों में टीकेने संसारके चिकित्सा क्षेत्रमें परिवर्तन लाना शुरू कर दिया है । बहुतसे रोग जो साधारणतया हो जाते थे, अब अनेक क्षेत्रोंमें अधिकांश रूपसे अपरिचित हैं । काश ! कोई बच्चा इनसे फिर कभी पीड़ित न होता, लेकिन दुर्भाग्यवश बहुतसे बच्चे इन रोगोंसे पीड़ित हो ही जाते हैं । इनमेंसे सभीके सभी बच्चे आधुनिक चिकित्सा सेवाकी पहुँचके परे भी नहीं हैं । कुछ अस्पतालों, डाक्टरों और चिकित्सा केन्द्रोंमें पहुँच जाते हैं फिर भी लापरवाही या जानकारी न होनेके कारण वे रोगके विरुद्ध बचावकी सहज शक्ति प्राप्त करनेसे वंचित रह जाते हैं । यह बचावकी शक्ति स्वयं उनके लिए ही नहीं, बल्कि उनके पास-पड़ोसके लिए भी उतनी ही जरूरी और महत्वपूर्ण है । पहलेसे की गयी प्रगतिको बनाये रखने और भविष्यमें उसमें और सुधार करनेके लिए सर्वत्र ही माता-पिताका सहयोग और उनकी समझ-बूझ जरूरी है ।

एक बच्चेको कौनसा टीका और कब दिया जाता है—यह बहुत कुछ इसपर निर्भर है कि वह बच्चा जिस स्थानमें रहता है वहाँ कौन-कौन रोग होते हैं और चिकित्सीय देखभालकी कैसी व्यवस्था है विशेषज्ञ इस बातमें सहमत है कि जिन स्थानोंपर चिकित्सीय देखभाल तुरन्त उपलब्ध है, वहाँ बच्चोंकी एक वर्षकी अवस्था तक गलघोटू, कालीखांसी और टिटनेससे सुरक्षाके लिए ट्रिपल वैक्सीनकी तीन खुराक दे देनी चाहिये । शिशुको शीघ्र ही पोलियो वैक्सीनका सेवन भी कराया जाता है । उसके बाद ही खसरा-वैक्सीन भी एक ही वर्षकी आयु तक दे दिया जाता है । कभी-कभी जर्मन खसरा या कनपेड़ा वैक्सीनके साथ मिलाकर भी दिया जाता है । विश्वके अधिकांश देशोंमें चेचकके टीकेकी सिफारिशकी गयी है या उसे अनिवार्य किया गया है । चेचका प्राथमिक टीका शिशुको शुरूमें ही लगा दिया जाता है ।

मानवताके लिए एक और अभिशाप तपेदिकके विरुद्ध अभियानकी रीढ़ भी टीका ही माना जाता है । सरकारों और कई स्वयंसेवी अभिकरणोंके प्रयासोंके बावजूद जन-स्वास्थ्य समस्याके रूपमें यह रोग विकासशील देशोंमें ही नहीं बल्कि तकनीकी रूपसे अधिक विकसित देशोंमें भी यह रोग ऊंचे स्तर पर है । इसमें विश्व स्वास्थ्य

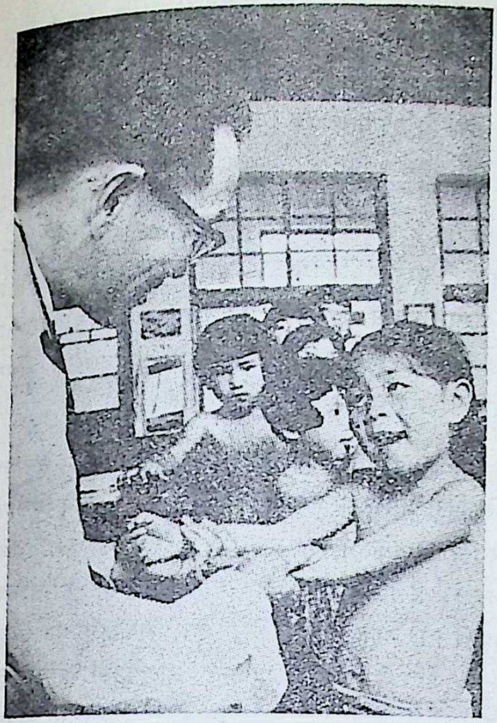

कुष्ठके चिह्नकी खोज

सगंठनका प्रमुख योग सलाह और बी०सी०जी० वैक्सीनके सुधार और उसके गुणोंको बनाये रखनेमें सहायता देना है। यह सहायता विशेषरूपसे सक्षम और किफायतसे चल रही राष्ट्रीय बी० सी० जी० उत्पादन प्रयोगशालाओंको दी जाती है। जिन देशोंमें राष्ट्रीय क्षय नियन्त्रण कार्यक्रम चलाये जा रहे हैं, उनमें बच्चोंको बी० सी० जी० टीका नियमित रूपसे लगाया जाता है।

टीकेसे टीका लगवानेवालोंकी सुरक्षाके अतिरिक्त और भी बहुतसे लाभ हैं। काफी बड़े पैमानेपर प्रयोग किये जानेपर उनसे पूरे समाजमें संचारी रोगोंसे लोग कम ग्रस्त होते हैं। जब-जब उन व्यक्तियोंकी संख्या कम हो जाती है, जिन्हें रोग लगनेकी सम्भावना होती है तो उसके साथ साथ ही एक रोगीसे दूसरे व्यक्तिको रोग लगनेके अवसर भी कम हो जाते हैं। इस सामूहिक प्रतिरक्षणके प्रभावसे जिन लोगोंने टीका नहीं लगवाया है, उनकी रक्षा भी हो जाती है। अतः यदि ८० प्रतिशत आबादीको टीका लगा दिया जाय तो चेचकको प्रायः नियन्त्रित किया जा सकता है। यही बात डिप्थीरिया (गलाघोटू) के विषयमें भी है।

जहाँ सामुदायिक सेवाओंको घरों तक निश्चय पहुँचाना है वहाँ टीका वास्तवमें स्वास्थ्यकी देखभालका एक पहलू है। सभी बच्चोंको थोड़ी आयुमें ही स्थानीय स्वास्थ्य अधिकारियों द्वारा बताये गये टीके दिये जाने चाहियें और फिर उनके शरीरमें रोग-प्रतिरक्षण शक्तिको बनाये रखनेके लिये बूस्टर खूराक देते रहना चाहिये। किसी भी स्थानपर किसी भी बच्चेको उस सुरक्षासे वंचित नहीं रखा जाये जिसके लिए चिकित्सा विज्ञानने इतने दीर्घकाल तक इतना कठोर संघर्ष किया है।

(वि० स्वा० सं० से साभार)

[पृष्ठ ८ का शेषांश]

से दूर खेतमें। जहाँ भी लोग रहते हैं वहाँ लोगोंका स्वास्थ्य एक दूसरेके स्वास्थ्य रहनेकी स्थितिसे आपसमें गुंथा हुआ है।

तो किसी भी व्यक्तिका घर वस्तुतः उस समुदायसे बनिस्बत जिसकाकी वह हिस्सा है, न तो अधिक सुरक्षित है और न अधिक स्वास्थ्यवर्धक ही। यह तो केवल सामुदायिक कार्योंसे ही होगा कि प्रत्येक व्यक्तिका घर वास्तवमें उसके पर्यावरणके जोखिमसे सच्ची सुरक्षा प्रदान करनेवाला आश्रय दे सके। नागरीकरण, भीड़, दूषण और तनाव तथा अन्य कारणोंसे उत्पन्न परेशानियों और खतरोंसे बचावके लिए केवल सामुदायिक कार्योंसे ही मानव बच सकता है। सामुदायिक कार्य तो सभी सम्भव होते हैं जब व्यापक रूपमें लोग नागरिकों और घरवालोंकी हैसियतसे उनमें जुट जाते हैं।

सजग माता

—श्री क्लेयर इस्बिस्टर—

यह तीव्र परिवर्तनों का युग है। एक ओर विज्ञान और प्रविधि हमें भविष्यकी ओर इतनी तेजीसे ले जा रहे हैं कि उसके साथ सामंजस्य बना पाना हमारे लिए कठिन होता जाता है तो दूसरी ओर नारी-मुक्ति आंदोलन नारीकी भूमिकामें प्रबल परिवर्तनकी मांग कर रहा है। ऐसी स्थितिमें यह आवश्यक हो गया है कि प्रत्येक नारी तटस्थ होकर, निष्पक्ष भावसे सोचनेकी चेष्टा करें कि मां होनेका अर्थ क्या है और उसके दायित्व क्या है।

परिवारमें 'मां' के महत्त्व पर विचार करनेके लिए आजसे कोई २० वर्ष पूर्व प्रकाशित प्रसिद्ध पुस्तक 'एक हजार परिवारोंका सर्वेक्षण' (वन थाउजैंड फेमिलीज सर्वे) के लेखक सर जॉन स्पेन्सके शब्द स्मरणीय हैं, "इन परिवारोंका अध्ययन करने और उनके पर्यायवरणों में बच्चोंके स्वास्थ्यसे सहसंबंध स्थापित करनेकी चेष्टामें एक प्रमुख तथ्य सामने आया—मां की क्षमता। यदि वह विफल रही, तो उसके बच्चोंको कष्ट झेलना पड़ा। यदि उसने समझदारी और हिम्मतके साथ जीवनका सामना किया तो वह उनके स्वास्थ्यकी कुशल रक्षिका सिद्ध हुई। भूलों और असफलताओंके बावजूद भी, पारिवारिक संरचनाकी कर्णाधार होती है। और हमारे अनुभव इस बातकी पुष्टि करते हैं कि समुदायके प्रत्येक भागमें वह बाल-कल्याणकी मुख्य अभिभाविका रहती है।"

इस प्रकार मां, बच्चोंके स्वास्थ्यकी अभिरक्षिकाके रूपमें दिखायी पड़ती है। यहां 'स्वास्थ्य' का अर्थ 'वि-स्वा-स' की परिभाषामें स्वीकृत शारीरिक, मानसिक और सामाजिक सम्पूर्ण स्वस्थता से है, केवल बीमारी या अशक्तताके अभाव मात्रसे नहीं। तन्दुरुस्तीकी इस स्थितिको आगे बढ़ानेमें मां और परिवारकी जिम्मेदारी तब सुस्पष्ट हो जाती है जब यह समझ लिया जाता है कि स्वास्थ्य तीन बड़े घटको पर निर्भर करता है—— आनुवंशिकता, पर्यावरण गर्भस्थापनाके समय से) और वातावरणको आवश्यकताओंके अनुकूल बनानेकी चेष्टा करनेवाले बालकके पालन-पोषणके लिए जिम्मेदार लोगोंकी योग्यता पर।

बच्चेकी आनुवंशिकता और पर्यावरण दोनों परिवारकी देन हैं, क्योंकि आधी आनुवंशिकता और गर्भाधानकाल में, संपूर्ण पर्यावरणकी उत्तरदायी मां ही होती है। जन्मसे कमसे ५ वर्षों तक बालकके पर्यावरणकी प्रमुख नियंत्रिकाके रूप में, बच्चेकी तन्दुरुस्तीके लिए सर्वाधिक दायित्व मां पर ही होता है।

'अटैचमेंट' नामक अपनी पुस्तकमें बॉब्लीने बताया है कि किस प्रकार मनुष्य और दूसरे प्राणी अपने विकास और अस्तित्वके लिए सामाजिक समूहको अनिवार्य मानते रहें हैं। परिवार, जो मानव जीवनमें सामाजिक समूहकी प्रारंभिक इकाई है, एक सुरक्षित पर्यावरण प्रस्तुत करता है जिसमें नवजात बालकोंका आवश्यकताएं पूरी हो सकें उनके स्वास्थ्य और विकासमें बाधक खतरे 'कमसे कम' हो जाय। इसमें वे स्वयंको बनाये रखना और अपना पुनरुत्पादन करना सीखते हैं, ऐसी आदतें और तरीके सीखते हैं कि पर्यावरणके साथ सामंजस्य स्थापित कर सकें। बाब्लीने बताया है कि सभी सामाजिक समूहोंमें मां-बच्चेका सम्बन्ध एक स्थाई सम्बन्ध है। मानव समूहोंमें जो जातियाँ जितनी ही अधिक विकसित होती हैं, उनमें माता-पिता-बालकका परिवार उतना ही अधिक सुगठित होता है और मां-बच्चेका संबंध उतना ही सघन होता है। एक लंबी अवधि तक, जबतक मानव-शिशु एक अस्पष्ट प्राविधिक संसारमें अपना स्थान ग्रहण नहीं कर लेता तबतक, परिवार ही उसे संरक्षण, निश्चितता और पोषण प्रदान करता है।

पिछले ५० वर्षोंमें परिवारकी संरचना और स्त्रीकी भूमिकामें बड़े-बड़े परिवर्तन दिखाई पड़े हैं। सभी परिवर्तन—जैसे स्त्रियोंकी शिक्षा, सामान्य कर्मशक्तिमें उनका समावेश, आधुनिक विवाहकी अस्थिरता और परिवारपर

पड़ने वाले भीतरी-बाहरी दबाव——इस अनिवार्यताको संकेतित करने लगे हैं कि मां-बाप दोनों बच्चोंकी आवश्यकताओं तथा उनके प्रति अपनी जिम्मेदारीको समझें।

संकट

आजकी दुनियामें बच्चोंके सामने कौनसे संकट हैं और उनके विषयमें मां क्या कर सकती है? विभिन्न देशोंसे प्राप्त आंकड़ोंसे एक बड़ी संख्यामें ऐसे बच्चोंका पता चलता है जिनके जीवनका प्रारंभ ही एक अड़चनके साथ होता है। लगभग ५ प्रतिशत बालक जन्मजात, और कुछ हदतक गंभीर, असामान्यताएं लिए पैदा होते हैं जिसमें श्रवण और दृष्टिकी ऐसी विकृतियां भी सम्मिलित हैं जिन्हें जन्मके समय जाना गया था, लगभग ५ प्रतिशत बालक मानसिक रूपसे मंद होते हैं (बुद्धि लब्धि ७५ से भी कम) और २ प्रतिशत बालकोंमें किंचित मात्रामें स्तब्धताकी विकृति होती है। बहुत सी जानें सौरी काल (जन्म के बाद, जीवनके प्रथम सप्ताह) में ही चली जाती हैं जिसके मुख्य कारण समय पूर्वका जन्म, जन्मकालमें उपस्थित असामान्यताएं और जन्म तथा नवजात जीवनसे जुड़ी कठिनाइयां जो मांसे अलग कर देखी जानी चाहिए थी। जिन देशोंमें चिकित्सा और उपचारकी पर्याप्त सुविधाएं हैं, वहां भी आशु-मृत्युओंकी संख्या प्रति हजार जीवित-जन्मोंमें ३० से अधिक हो सकती है। अन्य प्रमुख कारण संदूषण कुपोषण और रहस्यमय 'पालना मरण' (एस० आई० डी० एस०) हैं जो प्रायः जन्मसे तीन महीनों तक उभरते हैं। १-४ वय वर्गके बच्चोंके जीवनपर दुर्घटनाओं—जैसे विषाक्तीकरण, ऊंचाईसे गिर जाना, डूब जाना, और मोटरगाड़ी सम्बन्धी दुर्घटनाएं, हिंसा और साथ ही अनेक संक्रमण, खासकर श्वास तंत्रके संक्रमण——के भयंकर प्रभाव पड़ते हैं। विकासशील देशोंमें संक्रमण और कुपोषणका संयुक्त रूप ही बालमृत्युका मुख्य कारण है और यह उन दुर्घटनाओंसे भी, जो स्कूली उम्रकेबच्चोंकी मृत्युका एक कारण है——अधिक प्रभावक है।

चिकित्सकके ध्यानकी आवश्यकता

मृत्युके ये कारण मात्र बीमारीके प्रभावको या उन कारणों को ही नहीं बताते जिनसे बालकके लिए डाक्टरकी सहायता आवश्यक हो जाती है। आजसे १० वर्ष पहले आस्ट्रेलियाके राष्ट्रीय स्वास्थ्य एवं चिकित्सा शोध परिषद (एन० एच० एम० आर० सी०) ने सत्तर सामान्य चिकित्सकोंकी मददसे एक सर्वेक्षण पता लगानेके लिए किया कि किन मुख्य कारणोंसे बच्चे डाक्टरके पास लाये जाते हैं। ज्ञात हुआ कि जीवनके प्रथम वर्षमें, इसका मुख्य कारण प्रतिरक्षण अथवा नियंत्रण था। इस आयु वर्गमें कारणभूत मुख्य लक्षण थे—कफ, ठंढक, पाचन विकृति और चमड़ीपर उभरे दिदोरे। निदानकी प्रक्रियासे वर्गीकरण करनेपर उनमें एलर्जी, संक्रमण और मनोवैज्ञानिक तथा तंत्रिका सम्बन्धी विकृतियां निकलीं। १-४ वर्षके बच्चोंको डाक्टरके पास लाये जानेके मुख्य कारण श्वसनके लक्षण थे, इनके बाद थे प्रतिरक्षण और दुर्घटनाओं——विशेषतया कट जाने या घौंस खाने की। इसके बाद तंत्रिका सम्बंधी तथा भावात्मक समस्याएं आयीं और पाचनके लक्षण प्रकट हुए। साँस तथा पाचनकी गड़बड़ीके लक्षणवाले अनेक बच्चोंमें एलर्जी सम्बंधी विकृति पायी गयी पर प्रायः इन्हें पहिचाना नहीं गया।

बच्चे का पोषण

अपर्याप्त पोषण बालकके स्वास्थ्यपर भयानक प्रभाव डालता है—न केवल उन्हीं देशोंमें जहां खाद्य सामग्रीकी कमी होती है बल्कि उन देशोंमें भी जहां यह इफरात होती है। पोषण इतना आसान नहीं है कि जैसे-तैसे कर लिया जाय, या स्वतः हो जाय। खाद्य पदार्थोंसे भरे गोदाम भी इस बातका विश्वास नहीं दे सकते कि लोगोंको सर्वोत्तम अथवा पर्याप्त आहार मिल जाता है। खानेका समान खरीदनेवालेको जानना होता है कि परिवारके अलग-अलग सदस्योंकी विशिष्ट पोषणीय आवश्यकताएं क्या हैं और स्वास्थ्यकर आहार क्या है। जीवनके कुछेक प्रारंभिक महीनोंमें बच्चेको आहार देना तो इससे बहुत अधिक महत्वपूर्ण समस्या है। जीवरसायनमें हुई हालकी प्रगतिसे यह स्पष्ट हो गया है कि जीवनमें प्रारंभिक ६ महीनोंमें मस्तिष्कके सही विकासके

लिए समुचित पोषण आवश्यक है, और कि इस समयके असंतुलित तथा अपर्याप्त आहारसे आगेके जीवनमें रुग्णता बढ़ती है। इस संदर्भमें बच्चेको स्तन पान कराने की घटती प्रवृत्ति बहुत हद तक बच्चेको डाक्टरके पास लानेका कारण बन रही है। संयुक्त राज्य (ऑसबॉन) में हुई खोजोंमें देखा गया है कि उन किशोरों (जिन्हें कृत्रिम आहार दिया जाता है—अबोध बालकोंकी तरह) की रक्त-नलिकाओंमें ह्रासोन्मुख स्थितियां आती जा रही हैं। शैशवकी आकस्मिक मृत्यु (पालना-मृत्यु) ब्रिटेन तथा संयुक्त राज्य अमेरिकामें तीन महीनोंके भीतर होने वाली मृत्युके प्रमुख कारणोंमें एक कारण सिद्ध हो चुकी है। इससे संबद्ध मुख्य तथ्य कृत्रिम आहार है; संभवतः वास्तविक कारण एलर्जी और विषाणु संक्रमण हैं।

बच्चेको संक्रमणसे, विशेषतया आंतके संक्रमणसे, और आहारीय एलर्जीसे बचानेके लिए स्तन पिलानेके महत्त्वको हालमें उद्घाटित कोलॉस्ट्रमकी (बच्चेके जन्मके बाद और दुग्धस्राव शुरू होनेके पहले स्तनसे निकलनेवाले पीले द्रव) भूमिकासे भी बल मिला है। इससे यह स्पष्ट किया जा सकता है कि स्तन पिलाए हुए बच्चोंकी अपेक्षा कृत्रिम आहारसे पाले गये बच्चोंमें एलर्जीकी बीमारियां अधिक क्यों होती हैं। स्तनके दूधके स्थानपर कृत्रिम आहारोंका प्रयोग विकासशील देशोंमें, जहां संतोषप्रद अनुकल्प (प्रयोगमें लाये जानेवाले आहार) सदा उपलब्ध नहीं होते और जहां देशी लोगोंपर संकुचित व्यापारिक उद्देश्य तथा पश्चिमी करणका हानिकारक प्रभाव पड़ सकता है, विशेष रूपसे खतरनाक है। इसका प्रतिकार मां तथा स्वास्थ्यको लक्ष्य बनाकर शैक्षणिक कार्यक्रमोंको आयोजित कर तथा उसके संपर्कमें दूसरे कार्यकर्ताओंको लाकर किया जा सकता है। इस प्रकार शारीरिक तथा मानसिक विकासके प्रति अपर्याप्त पोषणके खतरोंसे सावधानीका प्रचार किया जा सकता है।

अधूरा मातृत्व

परिवारपर पड़नेवाले समाजके दबावसे माताकी योग्यता और बच्चेकी देखभाल करनेकी उसकी इच्छा प्रभावित होती है। विकृत बच्चोंकी बढ़ती संख्या आधुनिक जीवन प्रणालीका फल है। बच्चेको जन्म देनेके कुछ ही दिनों बाद स्त्रियोंका अपने कामोंमें लग जाना, विशेषतः विकासशील देशोंमें, बच्चोंको स्तन पिलानेमें बाधक हो रहा है। वे गलत तौरपर यह सोचती हैं कि नवजात शिशुको मांके दूधसे ही पालना पोसना ठीक नहीं है, क्योंकि यह दूध एक महीने तक ही दिया जा सकता है, क्योंकि कुछ देशोंमें मातृत्वकी इतने कालकी ही छुट्टी दी जाती है। यह स्थिति अनिवार्य रूपसे मां-बच्चेके संबंधपर भी बुरा असर डालती है और परिणाम-स्वरूप बच्चेके मानसिक स्वास्थ्यको तबतक प्रभावित किये रहती है जबतक मांके स्थानपर कोई दूसरी स्त्री नहीं आ जाती। कुछ विशेषज्ञ जीवनके पहले तीन वर्षोंतक बच्चेके मुख्य प्रतिपालनमें माँकी वांछनीयतापर जोर देते है भले ही इसके लिए उसकी आर्थिक क्षति पूरी करनी पड़े, वे तबतक बाहरी कामके लिए माँको अनुमति नहीं देना चाहते जबतक काम अंशकालिक न हो और अधिकतर आहारके समय माँको बच्चेके पास रहनेकी सुविधा नहीं।

माँकी भूमिका

बच्चोंके कल्याणके प्रति प्रमुख आशंकाओंके बारेमें आज जो कुछ ज्ञात है और वैद्यक तथा शल्यचिकित्साकी अद्यतन प्रगतिसे जो कुछ मदद मिल सकती है, उसे ध्यानमें रखकर, निश्चय ही बहुतसे कार्य ऐसे हैं जिन्हें एक सावधान मां, परिवारके अन्य सदस्योंकी सहायतासे, कर सकती है और अपने बच्चेमें बीमारी आनेसे रोक सकती है तथा उसे अच्छे स्वास्थ्यकी ओर प्रवृत्त करनेमें सक्रिय हो सकती है। वास्तवमें वह क्या कर सकती है, यह बात एक निश्चित सीमातक उस परिवेशपर निर्भर है जिसमें वह जीती है और कुछ हद तक इस बातपर भी कि अपने बच्चेको सुरक्षित रखने तथा उसकी आवश्यकताओंकी पूर्ति करनेमें वह परिवेशको कहां तक अपने अनुकूल मोड़ सकती है।

उसकी पहली जिम्मेदारी इस बातको समझ लेना है कि बच्चेका पालन-पोषण मां-बाप द्वारा ही हो सकता है, जो उसे प्राणसे ज्यादा चाहते हैं और उसे घर, प्रेम पूर्ण निगरानी तथा जीवनकी बुनियादी जरूरतें देनेके लिए तैयार हैं। बच्चेको, निर्धारित दीर्घकालीन संबंधमें, एक पिता और एक मांकी आवश्यकता होती है। एक मां-बापवाले परिवार, दयनीय सामाजिक स्थितियों और अत्यधिक आबादीके लिहाजसे कुछ देशोंके आंकड़ोंसे पता चलता है कि वहाँ बच्चोंमें शारीरिक और भावनात्मक बीमारी होती है। इन मसलोंका हल व्यक्तिगत. संबंधोंमें अधिक जिम्मेदारी, परिवार नियोजनकी बेहतर जानकारी और जीवनके लिए अधिक शिक्षा, जिसमें मानव जीवनके प्रति सम्मान भीं सम्मिलित है, में ही पाया जा सकता है।

इन्हीं मसलोंसे जुड़ा हुआ एक और मसला है—बच्चों और सयानोंके बीच व्यवहार गत विकृतियां। बढ़ती हुई व्यवहार गत समस्याओंसे बच्चोंको बचानेका सर्वोत्तम मार्ग उनके लिए यही है कि उन्हें संतुलित रूपसे उत्तरदायी मां-बाप वाला एक प्यारा परिवार मिल जाय। पूर्व चर्चित स्पेंसका अध्ययन इस संदर्भमें मां-बाप दोनोंके महत्त्वको प्रदशित करता है और प्रारंभिक वर्षोंमें मां तथा बादमें पिताकी भूमिकापर बल देता है। विकासशील देशोंके बड़े परिवारोंमें, परिवारके अन्य सदस्य भी महत्वपूर्ण भूमिकाएं निभाते हैं। किंतु कहीं-कहीं समकालीन समाजके बढ़ते हुए दबाव, बच्चोंपर सीधे पड़नेवाला औसत सामाजिक जीवनका भारी प्रभाव, और अपने समकक्ष समूहमें बालकका पूर्व-पाठशाला उम्रसे औपचारिक शिक्षा प्राप्त करने तक प्रारंभिक जलगाव परिवारिक प्रभावको व्यर्थ कर चुके हैं। इससे एक वात्सल्यमयी जिम्मेदार मांकी आवश्यकता और भी बढ़ जाती है। जो शुरूके वर्षोंमें अपने बच्चोंके साथ अधिक समय तक रह सकें। मांकी निगरानीसे वंचित बच्चोंके लिए जिम्मेदार लोगोंको भी उनके साथ प्रेम पूर्व संबंध स्थापित करनेके महत्त्वको स्वीकार कर लेना चाहिए ताकि भावनात्मक अभावसे होने वाली विकृतिकोको रोका जा सके।

पोलियो ग्रसित बालक चलने लगा

गर्भावस्थामें माँके स्वास्थ्का अत्यधिक महत्व अब सर्व स्वीकृति हो चुका है—विकासमान बच्चेके लिए। जबसे जर्मन 'मीसिल' और 'थालो डोमाइड' भयंकर रूपसे प्रकाशमें आये तबसे अन्य बीमारियों तथा उपचारों और पोषणकी विशिष्टताकी ओर भी जो गर्भाशयके संपर्कमें गर्भको प्राप्त होता है, ध्यान आकृष्ट हुआ है। गर्भाशयमें बच्चा आक्सीजन, पोषण-सामग्रियों, व्यर्थ पदार्थोंकी सफाई, गर्मी, सुरक्षा—शारीरिक और जैविक-रासायनिक दोनों प्रकारकी—हर बातके लिए माँ पर ही निर्भर रहता है। यह स्पष्ट है कि अनेक जन्मजात असामान्यताएं और बादकी मानसिक मंदता अनिवार्यतः उस हानिकारक प्रभावसे उत्पन्न होती हैं जो गर्भाशयमें ही बच्चे पर पड़ता है। शराब और तम्बाकू उतने खतरनाक नहीं हो सकते जितना 'हिरोयन' हैं, फिर

भी ये अधिक व्यापक स्तरपर प्रयुक्त होने वाली हानिकारक दवाएँ हैं जो खेड़ीको पारकर बच्चे तक पहुंच जाती हैं। समय-पूर्वका जन्म और जन्मकालका आघात दो मुख्य कारण हैं मानसिक विकृत के, और दोनोंको प्रसव-पूर्वकी सावधानी तथा विवेकपूर्ण प्रसवसे काफी हद तक कम किया जा सकता है। संभावित माँ-को इस बातपर ध्यान देना चाहिए कि उसका अपना स्वास्थ्य और भोजन यथासंभव अच्छा हो और बच्चेके जन्मसे पूर्व, जन्मकाल तथा जन्मके बाद भी उसकी सतत रूपसे देख-रेख होती रहे। अधिकांश देशोंमें इस बातकी कोशिश की जाती है कि ऐसे लोगोंको विशेष सुविधाएँ दी जायँ जो पर्याप्त डाक्टरी देख-रेख नहीं प्राप्त कर सकते। साथ ही जो अच्छे माँ-बाप बननेके लिए शैक्षणिक कार्यक्रमोंसे लाभ नहीं उठा सकते। ग्रामीण क्षेत्रोंमें खासकर विकासशील देशोंमें, स्वास्थ्य सेवाएँ प्रायः पर्याप्त नहीं होती।

उन क्षेत्रोंमें जहाँ उत्तमतर सावधानी वरती जा सकती हैं, अधिक समय पूर्व जन्मे बच्चे जी रहे हैं। जन्मकालका झटका कम गंभीर होता है और मानसिक विकृतके अल्प से अल्प लक्षणोंके भी अधिक महत्त्व दिया जाता है। अति चंचल शिशुओं, रोनेवाले बच्चों और अनुत्तेजित मिजाजके बच्चोंमें झल्लाहट, बिलंबसे बोलना, देरसे चलना और सीखनेकी कठिनाइयाँ पायी पायी जाती हैं।

अधिकांश प्रजनन-संबंधी स्थितियोंका उपचार और रोकथाम होने लगी है, जैसे उपापचय (रूपांतरण) की गड़बड़ीका, जिसमें बच्चा सामान्य आहारके किसी अवयवका उपयोग नहीं कर पाता जैंसे पीकु (फिनाइल किटो न्यूरिया) का, और जिसकी वजहसे बालकमें, बढ़नेमें पिछड़ापन और असमर्थताके लक्षण भी दीख सकते हैं। विकास संबंधी समस्यामें बादमें सीखनेकी कठिनाई तथा अन्यमनस्कतापूर्ण व्यवहारके रूपमें प्रकट होती है, किंतु एक चौकस माँ शिशुके भद्देपन, देरसे बोलने और निरन्तर दो हत्येपनकी भी सूचनाएँ दे सकती है।

आज अनेक जन्मजात असामान्यताओंको सुधारने के लिए चिकित्सककी बुद्धिका उपयोग संभव हो गया है। जहाँ पर्याप्त सेवा पहुँच सकती है, वहाँ किसी भी कुरचनाकी शीघ्र पहचान तथा विकार-ग्रस्थ स्वास्थ्य के प्राथमिक लक्षणोंको स्वीकारकर वे समस्याएँ सुलझायी जा सकती है जो उनसे उत्पन्न हो सकती है। कुछ विकलांगिक स्थितियाँ तो प्राकृतिक चिकित्सा और प्रारंभसे ही, जब हड्डियाँ मुलायम होती हैं, समुचित कसरतें सिखाकर ठीक की जा सकती हैं और शल्य-चिकित्साकी आवश्यकतासे बचा जा सकता है। निश्चय ही प्रथम वर्षमें डाक्टरसे जाँच करा लेना महत्वपूर्ण कार्य है क्योंकि माँ अपने बच्चेकी— विशेषकर यदि वह पहला बच्चा हो तब असामान्यताएँ और शारीरिक विकास करनेकी असफलताको स्वीकार ही नहीं करती। अपने दायित्वके प्रति सजग माँ सामुदायिक स्वास्थ्य सेवाओंसे लाभ उठाती हैं, अपने बच्चेको बीमारीसे बचाती है और आवश्यकता होनेपर अनुभवी लोगोंसे परामर्श लेती है।

किस प्रकारकी सामुदायिक सेवाएँ उपलब्ध हैं, यह बात निरर्थक होनेपर भी ऐसी कोई खराबी नहीं है जिसे अपने बच्चेके कल्याणका ध्यान रखनेवाली एक मांकी सजग निगरानी और दिन-प्रतिदिनकी सावधानीसे दूर न किया जा सके। अनेक माताएँ बहुत जल्दी अपने कामपर जाने लगती है और वास्तवमें अपने बच्चेको अथवा उसके रुग्ण स्वास्थ्यको जाननेकी चेष्टा ही नहीं करती। बालककी देख-भालके बारेमें उन्हें प्रायः जानकारी नहीं हो पाती, वैसे आधुनिक शिक्षा औरतको गृहस्थी चलाने और बाल-पालनके लिए तैयार नहीं करती। प्राविधिक तौरपर उन्नत समाजोंमें अनेक महिलाओंने वस्तुतः इतना ही सीखा है कि जीविकोपार्जन कैसे किया जाय, और वे पत्नी तथा माँकी भूमिकामें कुंठित तथा असंतुष्ट रहती है। वास्तवमें वे शारीरिक अर्थके अतिरिक्त दूसरे किसी भी मानेमें माँ नहीं हो सकती।

स्वास्थ्य और पोषणके विषयमें सीखनेके साथ ही मांके लिए बाल-विकास तथा बाल-व्यवहारको समझना भी आवश्यक है ताकि, यदि उसका बच्चा ठीकसे विकास नहीं कर रहा है या अनुभवी आदमीकी सहायता चाहता है तो वह इसे भली भांति समझ सके। एक सावधान सा ही है जो सबसे पहले हरनिया पेशाब आनेमें तनाव, खिलाते या कसरत कराते समयकी सांस-हीनता, प्राथमिक एक-दो महीनोंके बादसे दिखाई पड़ने वाले भैंगापन (ऐंचापन) सुननेकी गड़बड़ी, बोलने और चलनेमें बिलंब आदिको पहचानती है।

वह भी मां ही है जो किसी दुर्घटनाके समय सबसे पहले सामने आती है। उसे प्राथमिक उपचारकी कुछ जानकारी होनी चाहिए और उसके पास एक दवा की आलमारी होनो चाहिए जिसमें दिन-प्रतिदिनकी आवश्कताके सामान रखे हों। दुर्घटनाओंको बहुत हद तक रोका जा सकता है, बशर्ते मां-बाप अपने बच्चोंसे किसके व्यवहारसे परिचित हों और जानते हों कि कुतूहली तथा चंचल बच्चोंसे किस बातकी आशंका हो सकती है। मां जिसने उबलते पानीको वहां छोड़ दिया है जहां बच्चा उस पानी तक पहुंच सकता है, या पिता जो उद्यानमें दवा छिड़कते समय घातक कीटनाशककी बोतल फर्शपर छोड़ देता है, शायद वह खतरेसे असावधान नहीं है लेकिन उसने बच्चेकी गति और कुतूहलको निश्चय ही गलत समझा है।

यदि एक मां आनंद और संतोषके साथ अपना कार्य कर लेती है, यदि उसे ऐसा पति मिल गया है जो उसके बच्चोंके साथ प्रेमपूर्ण सम्बंध रखता है तथा बाहरी दुनियाके सामंजस्य स्थापित करनेमें उन्हें निर्देश देता है तो यह स्थिति उस मांके लिए बहुत सहायक होती है। किन्तु ऐसी सहायक स्थिति अधिकांश स्त्रियोंको प्राप्त नहीं होती और इसलिए उन्हें तथा उनके बच्चोंको उस समाजकी अधिक सहायताकी आवश्यकता होगी जिसमें वे रहते हैं। इस संदर्भमें सरकारोंके लिए यह आवश्यक है कि वे स्वास्थ्य निर्देशकों, स्वास्थ्य निरीक्षकों, बाल स्वास्थ्य-केन्द्रों और विशिष्ट सुविधाओंकी व्यवस्था कर, अपने बच्चोंके लिए आवश्यक कार्योंमें लगी माताओंकी मददके लिए सक्रिय युक्तियां अपनाएं।

मांके जरिए, बच्चा पहली बार प्यार करना और प्यारको स्वीकार करना सीखता है, जब वह रेंगता है, खड़ा होता है और उत्साहित किया जाता है तब वह सुरक्षा और आनन्दके अनुभवको जानता है। वह स्वयंको एक व्यक्तिके रूपमें समझने लगता है। क्योंकि मां उसे खतरेसे बचाये रखनेके लिए उसे निर्देश देती है, वह स्वतंत्र रूपसे कुछ हरकतोंका प्रयोग करता है। उसकी प्रेरणा ही है जिसके जरिए वह रंगों, आकारों और संगीतकी ध्वनियोंको पहचाता है और अपनी मांसे सीखे शब्दोंमें दूसरोंसे बतियाना शुरू करता है। जैसे-जैसे मांके साथ वह अपने दिन बिताता है और मां उसे खिलाती है, नहलाती सुलाती है, वैसे-वैसे वह जीवन, सचाई तथा दूसरे लोगोंके प्रति उसके (मांके) दृष्टिकोणका अधिकांश भाग आत्मसात करता जाता है। शिशु-निरीक्षण और शिशुकी आवश्यकताओंकी जानकारी वाली; तथा उनकी पूर्ति करनेकी इच्छा वाली मां, बालकके लिए महान उपलब्धि होती है। बालकके स्वास्थ्यकी मुख्य अभिभाविका वही है और बाल-व्यवहार एवं बाल-आवश्यकताओंके सम्बन्धमें उसकी जानकारी पर ही बालकका शारीरिक, मानसिक और भावात्मक स्वास्थ्य निर्भर करता है।

* * *

'मैंने सुना है कि आपकी पत्नी काफी किफायतसारी करती हैं।'
'हां, हमें जरूरतकी सारी चीजोंके बगैर ही रहना पड़ता है।'

●

मांका दूध और दूसरे घरेलू आहार

—श्री डेरिक बा० जैल्लिफे, एम० डी०—

[निदेशक, कैरेबियन आहार
और पोषण संस्थान,
किंग्सटन, जैमका]

◆

सभी समाजोंमें भोजन और भोजनकी आदतोंके बारेमें, सही और गलत दोनों तरहकी धारणा मौजूद हैं। उनके रीति-रिवाजके अनुसार रूढ़िवादी समुदायोंमें बच्चों और गर्भवती स्त्रियोंके आहारपर लगायी गयी जो रोक हम देखते हैं, उसके बावजूद भी यह कहा जा सकता है कि इनमें अधिकतर समाजोंमें हजारों सालके अनुभवके बाद अपनी भूलोंको सुधार-सुधारकर आज अपने वातावरण और सुलभ आहारसे लोगोंने बहुत-कुछ सामंजस्य स्थापित कर लिया है।

अभी तक हमारे जाने-पहचाने परम्परागत आहारों और औद्योगीकृत देशोंमें मिलनेवाले आहारोंमें सभी जगह पाये जानेवाले लगभग उन्हीं पदार्थोंका मिश्रण होता है जिन्हें जीवित रहनेकी कोशिशके दौरान लोगोंने ढूंढ निकाला हैं। बुनियादी आवश्यकताकी पूर्ति करनेवाले ये खाद्य-पदार्थ मकानके आस-पास पहले भी सामान्यतः उपजाये जाते थे और आज भी तैयार किये जाते हैं। फिर भी आजकी तकनीकी दुनियामें इनमेंसे बहुत-सी चीजोंका महत्व कम ही आंका जाता है।

इस सूचीमें मांका दूध सर्वोपरि आता है। असंख्य पीढ़ियोंसे मांका दूध पोषण और संक्रामक रोगोंकी रोकथामके लिए उपयोगी रहा है, क्योंकि समयकी कसोटीपर परखा हुआ यह शिशुके लिए एक आदर्श आहार है। इस विचारकी पुष्टि आधुनिक पोषण-विज्ञानने भी की है। लेकिन यह बहुत ही आश्चर्यकी बात है कि स्तनपान करानेकी प्रवृत्ति पश्चिमी देशोंमें इस शताब्दीमें कम होती जा रही है। ऐसा लगता है मानो लोग माताओंमें जो क्रान्तिकारी जैविक परिवर्तन होता है, उसे समझनेमें असमर्थ हैं। पिछले कुछ दशाब्दियोंमें तो विकासशील देशोंके शहरी क्षेत्रोंके समृद्ध घरानोंमें बच्चोंको स्तनपान न करानेका एक फैशन-सा चल पड़ा है और उनकी देखा-देखी निचले वर्गोंमें भी इसी प्रकारकी मनोवृत्ति फैल रही है। निश्चय ही यह आश्चर्यजनक है कि जहां वैज्ञानिक एक ओर तो बैक्टीरिया और जलकुम्भी आदिसे प्रोटीन-प्रचुर नये-नये खाद्य पदार्थोंकी खोज कर रहे हैं, वहीं दूसरी ओर शिशुओंके लिए उपयोगी उनका घरेलू पोषक आहार लोगोंकी लापरवाही नासमझीके कारण इस तरह छुड़ा दिया जाय।

शिशुओंके लिए मातृ-दुग्ध एक विशेष रूपसे उपयुक्त और प्राकृतिक रूपसे उपलब्ध आहार है, लेकिन इसमें काफी कमी आ रही है। इससे आज संसारके समक्ष एक प्रमुख पोषण समस्या खड़ी हो गयी है। मांका दूध अनुपम तो है ही साथ ही इसकी नकल करना भी असम्भव है, भले ही इस विषयमें दूधके निर्माता कुछ भी दावा करते रहें। विकासशील देशोंके सामान्य परिवारोंमें गायके दूधसे तैयार आहार भी जुटा पाना उनके बूतेके बाहरकी बात है। इसके साथ ही घरमें सफाईका स्तर, जिसमें जल सम्भरण और चीजोंका रख-रखाव भी शामिल है, ठीक नहीं होता है। इससे शिशुओंको जो भी कृत्रिम आहार मिलता है वह निश्चित रूपसे बहुत ही पतला और दूषित होता है। इसके फलस्वरूप शिशुओंमें विकासशील देशोंके अर्ध-शहरी क्षेत्रोंमें शिशुओंमें अतिसार रोगों और सूखा रोगकी बढ़ोतरी हो रही है।

इतनी ही तेजीसे अगर स्तनपान करानेकी प्रवृत्ति घटती रही तो एक ऐसा भी समय आयेगा जब इसके स्थानपर किसी दूसरे साधनके बारेमें सोचना पड़ेगा और राष्ट्रीय धनकी व्यवस्था करनी पड़ेगी, जो कि मांके

दूधका स्थान ले सकें, सम्भवतः गायका दूध उसका भी आधार होगा। अगर एशियाकी सभी स्त्रियां शिशुओंको अपना दूध पिलाना छोड़ दें तो ११४,०००,००० दूधारु पशुओंके झुण्डकी आवश्यकता माताओंके दूधकी पूर्तिके लिए होगी।

जितने भी परम्परागत आहार हैं वे चार प्रकारकी वस्तुओं — अन्न, फलियां, हरीपत्तोंवाली सब्जियां और पशुओंसे प्राप्त होनेवाले खाद्य-पदार्थोंके मिश्रणसे बनते हैं। सभी प्रकारके आहार उस क्षेत्रमें प्रयोग किये जानेवाली खाद्य-सामग्रीसे ही बनते हैं, जिनके इर्द-गिर्द जन-जीवन और सामाजिक रीति रिवाज पनपता है। 'एण्डीज'में रहनेवाली 'इनकास' प्राचीन जातिके लोग आलूकी देवीकी पूजा करते थे जिसे वे अपने शब्दोंमें 'एक्सो-मामा' कहते थे। पूर्वी अफ्रीकामें बागण्डाके लोगोंकी सांस्कृतिकका काफी सामंजस्य किलेके साथ है, जिसे वे लोग 'भटोके' कहते है। जीवनकी आवश्यकताके लिए योरोपमें भी अभी हाल तक गेहूंका कुछ ऐसा ही प्रभावशाली स्थान था।

अन्न कैलोरीके साथ-साथ प्रायः प्रोटीनका भी प्रमुख स्रोत है। विश्वके अधिकांश भागोंमें यह गेहूँ, चावल या मकईके रूपमें पाया जाता है। जिन क्षेत्रोंमें यह आहारके रूपमें प्रयोग किये जाते हैं, वे पोषणकी दृष्टिसे विशेषतः बच्चेके आहारके विषयमें लाभकर स्थितमें हैं। ये अनाज कैलोरीका अच्छा स्रोत तो हैं ही इसके साथ ही इनमें ७ प्रतिशत प्रोटीन भी होता है। विश्वके अन्य क्षेत्रोंमें जहां मूलवाले पदार्थ अर्थात् आलू, कसाव आदि मुख्य आहारके रूपमें प्रयोग किये जाते हैं वे क्षेत्र आधार भूत रूपमें हानिमें रहते हैं इसका कारण यह है कि इनमें प्रोटीन कम (१ प्रतिशत) होता है। इसी प्रकार इनमें कैलोरी भी कम होती है और रेशा और जल अधिक मात्रामें होते हैं।

अनेक प्रकारकी फलियां जैसे मटरकी फलियां सेमकी फलियां आदि कई क्षेत्रोंमें मुख्य आहारका एक अंग हैं। फलियां प्रोटीनका अच्छा स्रोत (२० प्रतिशत) तो हैं ही, किन्तु यदि इसे अन्नके साथ सेवन किया जाय तो इनसे प्रोटीनके सभी बुनियादी तत्व (आवश्यक एमिनोएसिड) जो कि जीवनके लिए आवश्यक मांस, दूध और अण्डों जैसे पदार्थोंमें होते हैं, वे भी मिल जाते हैं। भारतमें आमतौरसे सेवन किये जानेवाले चावल-दालका मिश्रण इसका एक अच्छा उदाहरण है। इसी प्रकारके अन्न और फलियोंके दानेके मिश्रण अन्य देशोंमें भी आम तौरसे प्रयोग किये जाते हैं। घरोंमें तैयार इन मिश्रणोंको देखकर ऐसा लगता है कि पुराने जमानेमें भी पोषणका अच्छा ज्ञान रहा होगा।

विश्वके अधिकांश भागोंमें गहरे हरे रंगकी पत्तेदार सब्जियां जैसे पालक, चौलाई, "मेनोइकलीब्जे" आदि पायी जाती हैं। इनको खनिजों एवं विटामिनोंका पूरक माना जा सकता है, ये तत्व अन्न और दालों (फलियों) के मिश्रणमें कम होते हैं। इनमेंसे बहुत-सी सब्जियां या शाक घरोंके आस-पास या बंगलोंमें आसानीसे उग आती है। तथापि यह एक खेदका विषय है यूरोप और उत्तरी अमेरिका सहित सारे संसारमें इस शताब्दीके आरम्भके दिनोंमें हरी पत्तेदार सब्जियोंका व्यापक रूपसे जो उपभोग होता आया है, वह अब कम हो रहा है। हालांकि ये शाक-सब्जियां आंगन-बाड़ीमें आसानीसे उगायी जा सकती हैं। किन्तु अब इनका स्थान बाजारमें खरीदी जा सकनेवाली सब्जियोंने ले लिया है, जो प्रायः अधिक खर्चाली और कम होती है। सलाद इसका एक उदाहरण है। यह भी एक तथ्य है कि कुछ हरे शाक-सब्जियोंको अब रूढ़िगत फैशन या केवल खर-पतवार समझा जाता है। यह भी एक आश्चर्य होगा कि लगातार बढ़ते हुए जीवन व्ययके कारण तथा कथित सम्पन्न देशोंमें भी आंगन-बाड़ी एक बार फिरसे आवश्यक और फैशन बन जायेगा भले ही उसका आधार पोषण सम्बन्धी बातें न हो।

मांस, दूध, घी, पनीर, मक्खन आदि पशुओंसे प्राप्त होनेवाले पदार्थ प्रोटीनके उल्लेखनीय स्रोत हैं। इनसे अनिवार्य "एमिनोएसिड" की श्रेणीके सभी तत्व मिल जाते हैं। किन्तु इनको प्राप्त करना कठिन है या

बहुत ही व्यय-साध्य है। सामान्य आहारमें इनका महत्व न जानने और बच्चोंके लिए इसका कम ध्यान रखते हुए विशेष अवसरोंपर ही इनको भोजनमें शामिल किया जाता है। मुर्गीके अण्डें, सुअरके बच्चे तथा मछलियां आदि जो पोषणकी दृष्टिसे स्वीकार्य सामिष खाद्य-पूर्तिमें तो सुधार होगा ही, इसके साथ ही स्थानीय आहारमें बहुत महत्वपूर्ण पोषण-तत्वकी भी बढ़ोतरी होगी। बढ़ते हुए बच्चोंको दिये जानेवाले आहार-मिश्रण, खासतौरपर मांका दूध छुड़ाते समय देनेके लिए उपयोगी होंगे।

कभी-कभी ऐसा लगता है कि हम यह बात भूल गये हैं कि इस संसारमें अधिकांश लोग केवल सब्जियोंके मिले-जुले आहार खाकर जी रहे हैं या अपना जीवन बिता चुके हैं। डेनमार्कमें सुरक्षित प्रागैतिहासिक कालके व्यक्तियोंके उदर-पदार्थोंके परीक्षणोंसे पता चला है कि वे लोग अन्न, फलियों और हरी पत्तेदार सब्जियोंका मिला-जुला आहार ही सेवन करते थे। इसी प्रकार यूरोप और उत्तरी अमेरीकाके निवासियों द्वारा उपयोगमें लायी जानेवाली बहुत सी चीजोंके पोषण मूल्यको ठीक-ठीक समझा और सराहा नहीं गया है। उदाहरणके लिए अमेरिकामें मूंगफलीसे बने हुए साधारण मक्खनके नाश्ते तथा ब्रिटेनमें "बीन्स आन-टोस्ट"—दोनों ही आहार अन्न और फलियोंसे बने अच्छे मिश्रण आहार हैं।

आधारभूत चार प्रमुख तत्वोंसे भरपूर घरमें बनाये हुए कई प्रकारसे उपयोगी परम्परागत आहारोंको और अच्छी तरहसे हमें ग्रहण करना होगा। उदाहरणके तौर पर इटलीमें प्रचलित "माइनस्ट्रोन" पोषणकी दृष्टिसे दूधके पनीर, अन्न इत्यादिसे बना हुआ एक रास्ता आहार है।

पोषणकी समस्याएं भिन्न-भिन्न क्षेत्रोंमें भिन्न-भिन्न होती हैं, किन्तु दो वर्ष तकके शिशुओं, गर्भवतियों एवं दूध पिलानेवाली माताओंमें कुपोषण लगभग सभी जगह एक-सा ही है। संसारके अनेक भागोंमें आधेसे अधिक बच्चोंमें कुछ न कुछ कुपोषण होता है, विशेषकर यह उनकी दूसरे वर्षकी उस अवस्थामें होता है जबकि वे मांका दूध छोड़ चुके होते हैं। इनमेंसे सैकड़ों बच्चोंको इससे "क्वाशियोरकर" नामक बीमारी भयंकर रूपसे लग जाती है और वह घातक भी सिद्ध होती है। इस आयुके बच्चोंके कुपोषणका कारण खनिजों और विटामिनों समेत भोजनमें पायो जानेवाली उष्मा अर्थात् "कैलोरियो' और अन्य पोषक तत्वोंकी कमी और प्रोटीनका अभाव होता है। अनुमान लगाया गया है कि संसारमें सदा ही एकसे दो करोड़ तक बच्चे, सूखे रोगसे पीड़ित होते हैं। जिसे डाक्टर "क्वाशियौरका" या "मारासमस" कहते हैं। यदि इन दोनों रोगोंका उपचार समयसे न हो पाये तो ये घातक हो सकते हैं। इसके अतिरिक्त कुल मिलाकर विकासशील जगतमें पांच वर्षसे कम आयुके ४० करोड़ बच्चोंमेंसे दो-तिहाई बच्चे अर्थात विश्वकी (दस प्रतिशत जनसंख्या), कुपोषण की शिकार है। यों तो इसके लक्षण कम नाटकीय ढंगसे प्रकट होते हैं, लेकिन इसका परिणाम यह होता है कि रोगोंकी छूतसे मुकाबला करनेकी सामर्थ्य ऐसे बच्चोंमें बहुत कम हो जाती है। इसके फलस्वरूप बच्चोंके शारीरिक और मानसिक विकासमें बाधा पड़ती है।

पिछले कुछ वर्षोंमें इन समस्याओंकी ओर अधिक ध्यान गया है। फिर भी इनका कोई विश्वव्यापी हल नहीं है। इसका इस सम्बन्धमें सही दृष्टिकोण तो यही होगा कि किसी क्षेत्रमें कुपोषण क्यों है इसका पता लगाया जाय और उस जानकारीके आधारपर कार्यक्रमको चलाया जाय।

बच्चोंमें कुपोषण अनेक ऐसे कारणोंसे होता है जो बराबर बने रहते हैं जैसे कि खसरा, पेटमें कीड़े, मलेरिया और अतिसार आदि संक्रामक रोगोंके कारण पोषणमें गड़बड़ी, शिशुओंको गलत आहार देना और उचित खान पानका अभाव। कुपोषणके अन्य कारण हैं—मंदाग्नि, बच्चोंको बड़ोंकी तरह गलत ढंगसे पकाया या अधकच्चा या कम खाना देना, गरीबी, बच्चोंके खान-पानपर रीति-रिवाजके कारण प्रतिबन्ध या इसी तरहके मिले-जुले कारण। मनोवैज्ञानक कारणोंका भी

इसमें हाथ हो सकता है। कभी-कभी जब बच्चेका दूध एकाएक छुड़ा दिया जाता है तो उसे मांकी कमी खलने लगती है—कभी-कभी इसके कारण भी उसकी भूख कम हो जाती है अथवा उसे उल्टी आती है। किसी भी क्षेत्रमें बच्चोंके भोजनको सुधारनेके जो उपाय किये जायँ, वे आहारके प्रति लोगोंकी परम्परागत विचार धारा और प्रवृत्तिपर आधारित होने चाहिए। आशय यह है कि इसका ध्यान रखना आवश्यक होगा कि परिवारमें भोजनका वितरण, खासतौरपर शिशुओंको खिलाने-पिलानेका तरीका कैसा है। बहुधा यह मान लिया जाता है कि बच्चोंके लिए निर्मित आहारके वितरण तथा उनके विक्रयपर ही शिशुओंका आहार निर्भर होता है। यह ठीक है कि इस प्रकारके बालाहार शहरी क्षेत्रोंकी आवश्यकताओंकी पूर्ति कर सकते हैं। जहां कि मुख्यत: नगद मुद्रा ही आर्थिक व्यवस्थाका आधार होती है। फिर भी विस्तृत ग्रामीण क्षेत्रोंमें तो इनका व्यावहारिक उपयोग सम्भव नहीं प्रतीत होता; क्योंकि इनके तैयार करने और डिब्बोंमें बन्द करने तथा वितरण इत्यादिपर बहुत खर्च आता है।

विश्वके विकासशील भागोंमें ज्यादातर लोग नगद आर्थिक व्यवस्थाके बाहर ही रहते हैं। यहांपर इस बातपर जोर देनेकी आवश्यकता है कि लोग ऐसी चीजें भोजनमें लें, जिन्हें कि सामान्यतः गांवोंमें खाया जाता है। ऐसा भोजन स्थानीय खाद्य-पदार्थोंकी उपज और घरेलू परम्परागत भोजनके विभिन्न रूपों तथा आवश्यकतानुसार आधुनिक विज्ञानसे प्राप्त ज्ञानसे कुछ हेर-फेर करके सुधार लेना चाहिए। इस प्रकारके आहार परिवारका पोषण स्तर ऊपर उठानेमें अपनी भूमिका निभायेंगे—खासतौरपर नवजात बच्चोंकी आवश्यकताओं की पूर्तिके लिए।

बहुतसे मिले-जुले आहार जो कि परम्परागत पदार्थोंसे बनाये जाते हैं आज पोषण-सम्बन्धी अनुसंधान द्वारा भी ठीक पाये गये हैं। इनमेंसे कुछ तो बच्चोंको जब मांका दूध छुड़ाया जाता है, उस अवस्थामें विशेष रूपमें कम खर्चपर मूल्यवान पाये गये हैं। इनको चौंकिके साधारण साज-समानसे बनाया जा सकता है। इनके लिए कहीं-कहीं तो स्वास्थ्य विभाग द्वारा थाली कड़ाही, चम्मच, छलनी इत्यादि देनेकी व्यवस्था की जा सकती है; जिससे कि लोग लाभ उठा सकते हैं।

घरके आसपास वाटिकामें हरी पैदावार सब्जियों, फलियों तथा फूलोंको उठानेके लिए लोगोंको प्रेरित करना चाहिए। जहां लोग डिब्बोंमें रखे भोजन निकालनेकी बात करते समय सुविधाकी दलील देते हैं, वहां यह भूल जाते हैं कि मकानके आसपास अगर खाद्य-सामग्री उपजानेवाले पेड़-पौधे हों, तो कितनी सुविधा होती है। वास्तवमें जो खाद्य-पदार्थ प्राकृतिक रूपसे उपजाकर ताजे ही मिल जाते हैं, उनसे हमें प्राकृतिक सुविधा भी तो मिलती है; क्योंकि वे दूषित नहीं होते, पहलेसे ही उपयोगके लिए तैयार होते हैं और बच्चोंके आहारके लिए बिना पकाये भी प्रयोगमें लाया जा सकता है। इस प्रकारकी भोजन सामग्रीमें हम पके केले, नाशपाती और कच्चे नारियलके बने पदार्थ शामिल कर सकते हैं।

जीवनमें अन्य बातोंकी तरह आज प्रावैधिक उपलब्धियोंसे हमें जरूरतसे ज्यादा चकाचौंध कर रही हैं, जबकि परम्परागत बौद्धिकताको हम किसानोंके जीवनयापनका ढंग कहकर नजरंदाज कर देते हैं, यह समाजकी प्राकृतिक कसौटीपर खरी उतर चुकी है। बहुत-से नये शहरी बाबू जो महानगरोंसे सटे छोटे-मोटे उपनगरोंमें रहकर अपनेको बड़े असमंजसमें पाते हैं कि दोनों प्रकारके जीवनमेंसे किसे अपनायें। उनके पास जमीन तो होती नहीं जिसमें परम्परागत भोजन-सामग्री वे उपजा सकें और न ही उनके पास इनमेंसे चुनाव करनेका ज्ञान ही होता है और न इतनी आमदनी ही कि ऐसे आहार पर्याप्त मात्रामें खरीद सकें जिनके कि वे अभ्यस्त नहीं होते। ऐसी स्थितिमें अगर आमदनी बढ़ रही हो तो भी अच्छा भोजन नहीं मिल पाता, क्योंकि प्रतिष्ठा प्रदान करनेवाले भोजनको पारम्परिक भोजनकी अपेक्षा अच्छा माना जाता है, जबकि वास्तवमें पोषणकी प्रचुरता पारम्परिक आहारोंमें ही होती है।

उन क्षेत्रोंमें जहाँ कि कुपोषण बहुत ही ज्यादा पाया जाता है, बाहर निर्मित आहार और घरेलू भोजन दोनोंको मिश्रित करके उपयोगमें लानेंकी बात सोचनी चाहिये। विश्वके अधिकांश भागोंमें आहारमें प्रोटीनकी कमी होनेके कारण बचपनकी प्रारम्भिक अवस्थामें ही कुपोषण हो जाता है। आहारमें 'कैलोरी' की बहुलताको उद्योगों द्वारा निर्मित आहारका व्यापक प्रयोग करके कम नहीं किया जा सकता, बल्कि इसके लिए तो आवश्यक यह है कि जो कुछ भी हमारे घरमें अथवा आस-पास उपलब्ध हैं, उसीका सदुपयोग करनेकी ओर ध्यान दें। माँका दूध नवजात शिशुको छः महीनेकी अवस्था तक दिया जाना चाहिये। बादमें घरमें बनाये हुए परम्परागत मिश्रित आहार दिया जाना चाहिए जो कि अपने बाग-बगीचोंसे मिल सकता है अथवा गाँवकी हाटसे खरीदकर लाया जा सकता है।

कुपोषणकी समस्याको सुलझानेके लिए इस प्रकार के हल तभी कार्यान्वित हो सकता है जबकि क्षेत्रकी स्थानीय आवश्यकताओं और साधनोंका उपयोग करते हुए प्रसूतिका और शिशु स्वास्थ्य सेवाओंका समुचित विस्तार हो। ये सेवाएँ रोगोंकी रोकथाम और चिकित्साके क्रिया-कलापों की पूरी जिम्मेदारी निभायें और इनमें ऐसे कर्मचारी कार्यरत हों जो केवल सैद्धान्तिक ज्ञान ही न रखते हों, बल्कि लोगोंकी घरेलू स्थितियोंका पूरा ज्ञान रखते हों और उन्हें व्यावहारिक रूपमें सहायता प्रदान कर सकें। इसके लिए यह आवश्यक है कि स्वास्थ्य कर्मचारियोंको इस प्रकारसे प्रशिक्षित किया जाय कि वे समुदायको और उसकी स्थानीय वास्तविकताको भली भाँति समझ सकें। स्वास्थ्य सम्बन्धी कार्योंके लिए घर पर जाना और वहाँ कि वस्तुस्थितिको देखना एक आवश्यक कर्तव्य माना जाना चाहिये। खासतौरसे इसकी आवश्यकता घरमें जीवनकी वास्तविकताके अनुरूप पोषण-सम्बन्धी शिक्षा और व्यवहारिक ज्ञान देनेके लिए तो नितान्त आवश्यक है। (वि० स्वा० सं० से साभार)

KURAZOL
(Liquid & Tablet)
A Remedy for Asthma
● ● ●

ADIOL COMPOUND
A General Pick-up
● ● ●

HEMOGASTRIN
A Digestive & Haematinic Tonic
● ● ● ●

LYCOLIV
A Liver Tonic
● ● ●

Products of :
INTERNATIONAL CHEMICAL & BIOLOGICAL INSTITUTE
PRIVATE LIMITED
KURAZOL HOUSE, BANGALORE-4.

प्रथम पच्चीस वर्ष

वि० स्वा० सं० द्वारा स्वास्थ्य संवारनेका प्रयास

—श्री जान मार्टिन—

सन् १९४८ ई०में जब विश्व स्वास्थ्य संगठनका जन्म हुआ तो इसके सम्मुख एक बहुत बड़ा काम था, किन्तु इसका अधिदेश बहुत विस्तृत था और दूसरे महायुद्धके खण्डहरोंपर संसारको सुन्दरतर बनानेकी आम लालसा थी।

आज २५ वर्षके पश्चात् इसके कार्योंका श्रीगणेश मामूली ही नहीं, बल्कि थोड़ा संकोचशील भी लगता है। यद्यपि इस नये संगठनका संविधान १९४६ में ही बना लिया गया था फिर भी विश्व स्वास्थ्य संगठनके जन्म दिवस ७ अप्रैल, १९४८ तक यह लागू नहीं हो सका। इस दिन राष्ट्रसंघके २६ सदस्य-राज्योंने इसके संविधानका अनुमोदन किया था। अब १३६ देश विश्व स्वास्थ्य संगठनसे सम्बन्ध जोड़े हुए हैं। जिन देशोंको आगे चलकर इसका पूर्ण सदस्य-राज्य बनाना था, उनकी नुमाइन्दगी औपनिवेशिक प्राधिकारी करते थे। जो सहाराके दक्षिणमें हैं, उन अफ्रीकी देशोंकी सदस्यता १९४८ में दी थी, जो १९५७ में पांच हो गयी और १९७१ में ३१ तक पहुँच गयी। १९४८ में इस संगठनका वार्षिक बजट ५० लाख डालर था जो कि इन २५ वर्षोंके दौरान १८ गुना हो गया है।

सन् १९७२ में चीनके जनवादी गणतन्त्रको विश्व स्वास्थ्य संगठनके वैध प्रतिनिधिके रूपमें जब मान्यता दी गयी तो विश्व स्वास्थ्य संगठनने अपने नामके अनुरूप विश्व सदस्यताकी दिशामें और आगे कदम बढ़ाया।

जो भी हो आकारके विस्तारका मतलब कुशलताका विस्तार नहीं होता। विश्व स्वास्थ्य संगठने अपने प्रबंध निकायों, क्षेत्रीय कार्यालयों विशेषज्ञ समितियों, प्रयोगशालाओं आदिके द्वारा कौन सी सफलता पायी? सम्पूर्ण मानव जातिके शारीरिक, मानसिक और सामाजिक सुखके धुंधले लक्ष्यकी ओर यह कितना बढ़ सका है?

संचारी रोग

विश्व स्वास्थ्य संगठनके प्रोत्साहनसे मलेरिया रोग पर विजय प्राप्त करनेमें प्रर्याप्त प्रगति प्राप्ति हुई है। १९७१ के अन्त तक कुल ३८ देश इस रोगके उन्मूलनका दावा कर चुके हैं। पहलेके मलेरिया क्षेत्रोंमें निवास करनेवाले लगभग १८२ करोड़ ७० लाख लोगोंमेंसे जिनके विषयमें जानकारी प्राप्त थी, १३४ करोड़ ६० लाख लोग (७४ प्रतिशत) उन क्षेत्रोंके निवासी थे, जहाँ मलेरिया उन्मूलन या तो हो चुका था या मलेरिया उम्मूलन कार्यक्रम चालू था।

विश्व स्वास्थ्य संगठन और संयुक्त राष्ट्र बाल आपात निधिकी सहायतासे दीर्घकालीन क्रियाशील पैनीसिलिन आन्दोलनके सामूहिक उपचारके परिणामस्वरूप 'याज' रोगमें नाटकीय ह्रास हुआ है। १९४९ से इन आन्दोलनोंके दौरान ४५ देशोंमें ४ करोड़ ६० लाख व्यक्तियोंके याज और अन्य स्थानिक भारी टिपोने (माटोसेस) रोगोंका उपचार किया जा चुका है। इन उल्लेखनीय तुरन्त परिणामोंके बावजूद, ये रोग फिर दीर्घकालीन जनस्वास्थ्य समस्या बने हुए हैं।

विश्व स्वास्थ्य संगठनने मलेरियाकी तरह चेचकके विरुद्ध भी विश्व व्यापी चेचक उन्मूलन कार्यक्रम चलाया है। १९६७ में जब इस रोगके विरुद्ध दस वर्षीय सघन आन्दोलन आरम्भ किया गया तब संसार भर में ८०,००० से भी अधिक चेचकके ऐसे रोगी थे जिनकी सूचना मिल गयी थी। कार्यक्रमके चौथे वर्ष ११७० में सूचना प्राप्त चेचकके कुल ३३,००० रोगी थे। रिकार्डमें इससे कम रोगी कभी नहीं थे। १९७१ में

यह सँख्या फिर ५२,००० हो गयी और १९७२ के पहले चार महीनोंके दौरानकी यह संख्या १९७१ की तुलना में कहीं अधिक थी । जो भी हो इसे सूचना देनेमें कुशलताका परिणाम माना गया, वैसे भी रोगियोंका पता लगाना उन्मूलन कार्यक्रमका एक महत्वपूर्ण पक्ष हैं । १९७२ में चेचकके कुल ७ देश स्थानिक भारी क्षेत्र थे, जबकि १९६७ में यह संख्या ३० थी । आज सभी स्थानिक भारी देशोंमें उन्मूलन कार्यक्रम चल रहे हैं और इस बातकी पूरी आशाकी जाती है कि कुछ ही वर्षोंमें संसार इस रोगसे मुक्त हो जायेगा । फिर भी इस आन्दोलनको तब तक अत्यन्त उत्साहके साथ चलाना होगा, क्योंकि अन्तिम चरण सबसे कठिन हो सकता है ।

विश्व स्वास्थ्य संगठनने अब तक बनायी गयी दो सबसे प्रभावकारी, पोलियो और खसरा रोगोंके टीकोंके विकास और परीक्षणमें अपना उल्लेखनीय सहयोग दिया है । विश्वके उन भागों में, जहां सुंसगठित कार्यक्रमोंके अन्तर्गत टीकोंका सघन उपयोग किया गया है, पोलियो पर नियन्त्रण कर लिया गया है । विश्वके गर्म ज़लवायु वाले और बहुतसे भागोंमें जहां स्वास्थ्य सेवाएं पूर्णतः विकसित नहीं हैं, रोगियोंकी सूचनामें बढ़ोतरी है ।

खसरेका टीका प्रभावशाली होते हुए भी अभी अधिक खर्चीला है । इस वजहसे अधिकांश देशों में, जहां खसरा अभी भी बहुतसे बच्चोंकी जान ले लेता है, इसका प्रयोग पूरी तरह नहीं हो पाता ।

श्रेष्ठतर स्वास्थ्य सेवाएं

विकासशील देशोंमें स्वास्थ्यकी दशा बुरी है और वहां बहुतसे रोग व्याप्त हैं । हमें पहले क्या करना चाहिए ? शुरूके दिनोंमें इसका एक उज्जवल आशाजनक उत्तर यह था कि जिस रोगके उपचारके लिए सबसे अधिक प्रभावी हथियार उपलब्ध हैं, उस रोगको छांट लें और उसके विरुद्ध सामूहिक अभियान चलायें । जब उसका सफाया हो जाय तो दूसरेके विरुद्ध कार्यवाई करें और ऐसा ही करते चलें जांय । मलेरिया, याज, चेचक, ज्वर, कुष्ठ, गलघोट्टू, काली खांसी, टिटनेस, टाइफस, फीलपांव, "स्किस्टोसोमियासिस"—ये सभी ऐसे रोग हैं जिनके खिलाफ विशेष अभियान चलानेकी आवश्यकता थी या है । किन्तु हमें यह कटु अनुभव भी उठाना पड़ा कि यह विधि भी रोगव्याधियोंके उपचारका पूरी तरह सही उत्तर नहीं है । सचल सामूहिक अभियान के द्वारा श्रेष्ठतर स्वास्थ्यके सुन्दर भवन-निर्माणके लिए स्थायी स्वास्थ्य सेवाएं बनानी होगी और वातावरणको सुधारना होगा । इन अदृश्य दीर्घ सूत्री कार्योंको और विश्व स्वास्थ्य संगठनकी अधिकांश शक्तियां क्रियाशील की गयी हैं । तदनुसार स्वास्थ्य सम्बन्धी व्यवसायोके लिए स्कूलोंको सहायता दी गयी, जो कि स्वास्थ्यके दीर्घकालीन प्रगतिका अनिवार्य अंग है । व्यक्तिगत अध्ययनके लिए स्वास्थ्य कार्यकर्ताओंको विदेशों में ४२,००० से भी अधिक शिक्षा-वृत्तियां दी जा चुकी हैं । परिचर्या सेवाओंको (विश्व स्वास्थ्य संघठनकी सहायता के पूर्व एक देशमें तो एक भी योग्यता प्राप्त पारिचारिका नहीं थी), मातृ-शिशु सेवाओंको, पारिवारिक स्वास्थ्य सुधारके साधनके रूपमें परिवार नियोजनको, जलपूर्ति और मल-व्ययन प्रणालियोंको, स्वास्थ्य प्रयोगशालाओंको तथा मेडिकल पुस्तकालयीयसे विकिरण सुरक्षा तक कई अन्य क्षेत्रोंमें ऐसी सहायता दी गयी है ।

विश्व स्वास्थ्य संगठन अन्तराष्ट्रीय तथा अन्तर-व्यवसायी उपयोगी सम्बन्ध बनानेमें बराबर लगा रहा है । विशेषज्ञ समितियोंने अनेक भिन्न-भिन्न क्षेत्रोंमें नयीसे नयी जानकारी एकत्र किया है । अध्ययन वर्गोंने अनेक विषयोंपर खोज किया है जो स्वास्थ्य विभागके लिए व्यवहारिक उपयोग के हैं । ऐसी गोष्ठियोंके प्रतिवेदनोंके अतिरिक्त (अक्तूबर १९७२ तक ५०० से भी अधिक विभिन्न प्रतिवेदन छापे जा चुके हैं) विश्व स्वास्थ्य संगठनने वैज्ञानिक निबन्ध और आधारभूत संदर्भ सामग्री का प्रकाशन भी किया है । इसमें शामिल है "इन्टरनेशनल डाइजेस्ट आफ हेल्थ लेजिस्लेशन", "इन्टरनेशनल फार्माकोपोइआ", "वर्ल्ड हेल्थ स्टेटिस्टीकलएनुअल", "इन्टरनेशनल स्टैण्डर्डस फार ड्रिंकिंग वाटर", स्वास्थ्य

व्यवसायियोंके लिए स्थूलोंके विश्व कोश, जलयानोंके लिए अन्तरराष्ट्रीय मेडिकल मार्गदर्शक (आई० एल० ओ० और आई० एम० सी० ओ० सहित) तथा रोगों-अन्तरराष्ट्रीय वर्गीकरण जिसे अब अधिकांश देश अपनी स्वास्थ्य सांख्यिकीका आधार बनाते हैं ।

समस्त विश्वमें रोगोंपर निगरानी

विश्व स्वाथ्य संगठनने अन्तरराष्ट्रीय स्वास्थ्य नियमोंके आधीन रोगों यानी चेचक, हैजा, प्लेग, पीतज्वरके होनेकी सूचना दी और अपनी परस्पर सहयोगी प्रयोगशालाओंका जाल बिछाकर इन्फ्लएंजा महामारीका रास्ता रोका है और अन्य अन्तरराष्ट्रीय महत्वके रोगों का सन्निरीक्षण किया है । इन रोगोंमें रेबीज् (आलर्क) दिमागके पास रीढ़की सूजन, रक्तस्रावात्मक ज्वर और सालमोनेल्ला संक्रमण भी शामिल हैं ।

गवेषणा

विश्व स्वास्थ्य संगठनके सभी क्रियाशील कार्यक्रमोंका गवेषणा एक मूल तत्व है । विश्व स्वास्थ्य संगठनका अधिकांश गवेषणा कार्यक्रम ऐसी प्रयोगशालाओं और संस्थाओंकी सहायतासे तथा संदर्भ केन्द्रोंके जाल द्वारा चलाया जाता है । विस्वासंके ऐसे संदर्भ केन्द्रोंकी संख्या अब २०६ है । जटिल स्वास्थ्य समस्याओंके समाधानमें ये महत्वपूर्ण कार्य कर रहे हैं । विभिन्न देशोंके गवेषणा कार्यकर्ताओंके लिए विभिन्न क्षेत्रोंका बढ़ता हुआ एक व्यापक "शब्दकोश" है । इसमें अर्बुद वर्गीकरण, हदतन्त्रिका रोग, प्रतिजैवी औषधियां और रक्तवर्ग शामिल हैं । मानसिक स्वास्थ्यके अन्तर्गत मनोविकारों, निदान और वर्गीकरणके विषयमें एक अन्तरराष्ट्रीय गवेषणा कार्यक्रम चालू है । यह उन ९५० सहयोगी गवेषणा प्रयोजनाओंमेंसे एक है जो १९७१ में क्रियाशील थीं । विस्वासंके गवेषणा प्रयासोंके फलस्वरूप विभिन्न टीकोंमें सुधार "एथेरोससिलेरोसिस" (धमनी काठिन्य) के विषयमें और अच्छी तरह समझ-बुझ, कैंसरके कुछ कारणों तथा बहुत सी पोषकीय कमियों (लौह तत्व, विटामिन बी १२ आदि) का पता चला है । प्रोटीन-वे लोगी कुपोषणसे निपटनेके लिए विश्व स्वास्थ्य संगठनकी सहायता द्वारा "इन्स्टीच्यूट आफ सेन्ट्रल अमेरिका एण्ड पनामा" ने एक सस्ता सब्जी प्रोटीन मिश्रण "इनके पेरीना" बनाया है जिसका १९६० से वाणिज्यके लिए उत्पादन हो रहा है ।

ऐसी ही वस्तुके उत्पादनके लिए विस्वासं उसी समयसे अन्य देशोंकी सहायता करता रहा है । रोगवाही कीट नियंत्रणके क्षेत्र में, विशेषत: पीतज्वर और डैंग्यू, रक्तास्रावात्मक ज्वर सम्बन्धित मच्छर रोगवाही कीटके विषय में, किसी भी क्षेत्रमें नियन्त्रणकी विधियांका अनुमान लगाना, रोगवाही कीटके सहनशीलता स्तरकी दृष्टिसे सबसे उपयुक्त कीटका चुनाव करना तथा विकासशील देशोंमें लागू करने वाली प्रभावकारी विधियोंका विकास करना सम्भव हो गया है ।

सन्तुलनके विषयमें

विस्वासंका जीवनक्रम सदा पूरी तरह सफल नहीं रहा है । उदाहरणके लिए इसकी उपलब्धि मलेरिया उन्मूलनमें यद्यपि प्रभावोत्पादक रही है तो भी प्रारम्भको आशावान आकांक्षाओंको पूरी नहीं कर पायी है । यद्यपि विश्व स्वास्थ्य संगठनकी स्थापना एक नितान्त तकनीकी अधिकरणके रूपमें की गयी थी, फिर भी राजनीतिक और प्रशासनकी बाधाओंने इसकी गतिको धीमाकर दिया है । उदाहरणके लिए हालके वर्षोंमें हैजा फैलनेके दौरान सदस्य देशोंने अपने देशोंमें रोगके प्रगट होनेकी सूचना देनेमें आलस्य किया जिसकी वजहसे विश्व स्वास्थ्य संगठन विश्वव्यापी महामारीके विषयमें संसारको सूचित करनेके कर्त्तव्यको पालन करनेसे वंचित रह गया ।

सक्रिय तपेदिकसे पीड़ित लगभग एक करोड़ ५० लाख रोगी इस वर्ष लगभग ५ करोड़ बच्चों और किशोरोंमें रोगकी छूत फैला देंगे । एक संक्रमक क्षय रोगीका पता लगाने और विकासशील देशमें उसके उपचारका खर्च घटकर १०–२० डालर हो गया है यानी एक औसत दर्जेके विकसित देशके मुकाबले ५०० गुना कम है, जहां रोगीका पता लगाना अधिक कठिन

है और अस्पतालमें इलाज कराना नियम है। रोग प्रतिरक्षणके लिए बी०सी०जी० टीकेमें केवल १०-२० सेंठ तक व्यय होता है। यदि इस समय अधिकांश विकासशील देशोंमें क्षय रोगपर प्रति व्यक्तिका ५–१० सेंट खर्चकर एक सुदृढ़ मूल्य लाभ विश्लेषणके आधारपर पूर्णतः क्षय रोग कार्य-क्रमोंके लिए निश्चितकर दिया जाये तो देशव्यापी रोगियों तक पहुंचना और अगली दो-तीन दशाब्दियोंमें क्षय रोगको अपेक्षाकृत अधिक मामूली जन स्वास्थ्य समस्या बना देना सम्भव हो जाना चाहिये। यद्यपि राष्ट्रीय स्तरपर महामारी समस्याके रूपमें इस रोगसे लड़नेके लिए कुछ शहरी केन्द्रोंमें एक चिकित्सीय समस्याके नाते क्षय रोगको धीरे-धीरे समाप्त करनेके लिए कुछ परम्पराओंमें परिववर्तन करनेके मार्ग रूढ़ीवादी आचार बाधा बन जाते हैं।

विश्व स्वास्थ्य संगठनके कार्योंके बावजूद भी समस्याएं और अधिक बिगड़ गयी है। हैजा एक बार फिर फैला और जिस देशोंने ५० वर्षसे हैजेका एक भी रोगी नहीं देखा था, वहाँ एक बार फिर हैजेका आक्रमण हुआ। इसमें सन्देह नहीं कि उपचारकी आधुनिक विधियोंसे यह रोग उतना गम्भीर नहीं रह गया है जितना यह हुआ करता था, बशर्ते कि उपचार उपलब्ध हो और शीघ्र आरम्भकर दिया जाय। रतिज रोग पांचवी दशाब्दिके आरम्भके वर्षोंमें कम हो जाने बाद अब विश्वके अनेक भागोंमें फिर बढ़ गया है। वातावरण संदूषणकी समस्याएं अब पर्याप्त शोचनीय हैं। १९५८ में जन स्वास्थ्य महत्वकी ३५ कीटोंमें कीट-मारकोंकी सहनशीलता विकसित हो जानेका पता चल गया था। १९७१ तक उनकी यह संख्या ११० हो गयी थी और उन भौगोलिक क्षेत्रोंमें भी वृद्धि हुई है जहाँ सहनशील जातियां पायी गयी है।

यद्यपि विश्व स्वास्थ्य संगठनकी स्थापना ऐसे प्राधिकरणके रूपमें हुई जो स्वास्थ्यके कार्योंका समन्वय और निर्देशन करे, किन्तु विकासशील देशोंको विभिन्न स्रोतोंसे मिलने वाली स्वास्थ्य सहायता व्यवहारिक दृष्टिसे व्यर्थ हो गयी है। इसका कारण समन्वयकी कमी और उन समुचित राष्ट्रीय विकास योजनाओंकी कमी है जिनमें सहायताके विभिन्न अंश समन्वित किये जा सकते थे। इसका एक उल्लेखनीय उदाहरण जंगलमें जगमगाता हुआ एक नया अस्पताल है, जो डाक्टरों और नर्सोंके अभावमें कार्य करनेमें असमर्थ है।

विश्व स्वास्थ्य संगठनने जलपूर्ति और मल-व्ययन के अनेक बड़े पैमानेके कार्य-क्रमोंमें हाथ बटाया है, परन्तु इन कार्य-क्रमोंको प्रायः गम्भीर आर्थिक और प्रशासनिक बाधाओंसे उलझना पड़ा है। इससे भी अधिक आर्थिक विकासकी बहुत सी जल-विद्युतीय और सिंचाई योजनाएं स्वतः इसलिए ठप्प हो गयी है, क्योंकि लोगोंके स्वास्थ्य बिगड़नेका कारण बन गयी थीं। 'स्किटोसोमियासिस' एक ऐसा ही महत्वका रोग हैं जो कि ताजे पानीके घोंघेसे फैलती है। अन्य रोगोंकी रोगी संख्या इस प्रकार है—

फीलपांव	२० करोड़
अंकुश कृमि	४५ करोड़
'आनकोकरसियासिस'	३ करोड़
घागाज़ रोग	७० लाख
कुष्ठ	१ करोड़ १० लाख
रोहा	४० करोड़

इनके अतिरिक्त हृद्-तन्त्रीका रोग, कैंसर, वातावरण संदूषण, दुर्घटना, मानसिक रोग, कुपोषण रोग मादक औषधियोंकी बुराईयां भी हैं विश्व स्वास्थ्य संगठनके सम्मुख अभी भी एक बड़ा काम है और वह किसी प्रकार उसके प्रयासोंको ढीला होनेकी इजाजत नहीं देता।

(वि० स्वा० सं० से साभार)

'क्या तुम्हारी शिक्षिता पत्नी कलाकी पारखी है?' श्यामने अपने नवविवाहित मित्रसे पूछा।
'पारखी ! वह इतनी पारखी है कि दालका रंग ही देखती है, स्वाद नहीं।'

●

परिवार नियोजनका आर्थिक आधार

—श्री पुरुषोत्तम पाण्डेय—

आज जनसंख्याके बढ़ावकी गति विश्वके पैमानेपर जिस ढंगसे हो रही है, उसे देखते हुए मानवके भावी जीवनके प्रति चिन्ताका होना स्वाभाविक है, क्योंकि कुल प्राकृतिक साधनोंकी उपलब्धि जितनी है, उसकी सीमित और निश्चित दशामें जनसमुदायकी अबाध वृद्धिका अर्थ होगा निजी अंशकी स्वल्पता और अन्तमें अभाव। प्रमुख ब्रिटिश अर्थशास्त्री टॉमस रॉबर्ट माल्थसने प्रकृतिकी सीमाबद्धता और जनवर्गके बेरोक बढ़ावको लेकर निराशा और चिन्ता व्यक्त की थी और मनुष्य-जीवनकी दुर्दशा भविष्यवाणी की थी।

आज परिस्थितिकी गम्भीरता इस रूपमें बढ़ी हुई दिखलाई देती है कि विश्वके पैमानेपर जनसंख्याका असन्तुलित वितरण हुआ है तथा इसे हल करनेका कोई उपाय व्यावहारिक नहीं दीख रहा है। जनसंख्याके वितरणसे स्पष्ट है कि विश्वकी कुल जनसंख्याका दो-तिहाई भाग कुल भूमिके लगभग एक-तिहाई भागपर बसा हुआ है, जहाँ बेवरिज द्वारा उल्लिखित अभिशाप—'गरीबी, बेरोजगारी, बीमारी और गन्दगी'—का व्यापक साम्राज्य छाया हुआ है। आर्थिक दृष्टिसे घने बसे हुए भूखण्ड ही दुनियाके पिछड़े राष्ट्रोंकी श्रेणीमें बने हुए हैं और इनकी दीनताके प्रति समुन्नत राष्ट्रोंमें भी सहानुभूति उमड़ती हुई दिखलाई देती है।

यह सही है कि वैज्ञानिक चमत्कार और मानवीय दक्षताने अब तक माल्थसकी भविष्यवाणीको दूर रखा है और उसके विपरीत मनुष्यके लिए सुख-समृद्धिका अपार वैभव उपलब्ध किया है, लेकिन एक तो विज्ञान-संभव सम्पन्नता कुछ ही भूखण्डों तक सीमित है और दूसरे, विज्ञान अधिक-से-अधिक प्रकृतिके रहस्योद्घाटन और उसके शोषणकी दशाको सम्भव बना सकता है, उसकी सीमाबद्धता-दुर्लभताको दूर करनेका कोई जादू उसने नहीं खोजा है। उत्पादनके 'द्वितीयक एवं तृतीयक' खण्डमें प्राकृतिक सीमाओंपर काबू पानेके कारण घटती दर पर उत्पादनकी प्रवृत्ति को, जिससे माल्थसको बड़ा भय था, कम किया जा सका है, लेकिन भूमिको बढ़ा देनेवाली कोई रासायनिक क्रिया मालूम नहीं की जा सकी है। इस कमजोरीके कारण ही विज्ञान दूसरे लोकके रहस्य जानने और वहाँ पहुँचनेके प्रयासमें दत्तचित्त है। फिर, भी अगर वह दूसरे लोक तक मनुष्यको पहुँच कर भी दे, तो क्या दुनियाके घने बसे हुए दुर्दशा-ग्रस्त लोगोंके लिए कोई सुविधा मिलेगी? इसकी आशा बहुत कम दिखाई देती है।

औद्योगिक राष्ट्रोंमें पिछड़े देशोंकी निर्मित वस्तुओंके आयातके प्रति भय तो दिखलाई देती ही है (अमेरिका और यूरोपीय देशोंमें एशियाई देशोंके सूती वस्त्रके निर्यात पर अपभ्रंश लगाये गये हैं) साथ ही यहांके लोगोंके प्रति छूत-भावना भी कम नहीं है। उन राष्ट्रोंमें आवास रोकनेके लिए आवास-कानून सख्त किये जा रहे हैं। तब पिछड़े देशोंमें जनसंख्या और भूमिके वर्तमान असन्तुलनके निराकरणकी कोई सम्भावना कैसे हो सकती है? इतना ही नहीं, एशियाई-अफ्रीका देशोमें भी देशीयता-साम्प्रदायिकताका जोर बढ़ता ही जा रहा है। लंका, बर्मा तथा अन्य देशोमें बसे भारतीयोंकी वापसी उन देशों द्वारा की जा रही है। राष्ट्रीयताकी साम्प्रदायिकता परिस्थितिको और जटिल बना रही है।

आदर्शातिरेकसे बचाव आवश्यक

मानव-जीवनका रहस्य, बस, जीने-भर तक सीमित नहीं है, बल्कि अच्छे और समुन्नत जीवन तक है। समृद्ध और समुन्नत जीवन एक ओर तो प्राकृतिक

सम्पत्तिकी उपलब्धि और दूसरी ओर मानवी श्रमकी कुशलता-क्षमतापर निर्भर करता है। यह सही है कि मनुष्य अपने साथ कार्य करनेके लिए 'दो हाथ' लाता है, लेकिन इन दो हाथोंके लिए कार्यके अवसर अन्ततः प्रकृति ही प्रदान करती है। मनुष्यकी कला-चातुरी मूलतः प्रकृतिके सहयोगसे प्रकट और प्रस्फुटित होती है, प्रकृतिकी उदारता और विविधता ही उसे इस लायक बनाती है कि वह जीवनके साधन जोड़ सके। तो निश्चय ही एक ओर 'दो हाथ' की उपादेयता प्रकृतिकी प्रचुरताके सापेक्ष रूपमें दिखलाई देती है और तभी इनकी करामात भी हमारे सामने आती है। उत्पादन बढ़ता है और प्रति व्यक्तिका भाग भी, जिसपर जीवनकी सुख-सुविधा निर्भर करती है, बढ़ता है। पर एक अवस्था ऐसी आती है, जबकि मानवी हाथों और प्रकृतिकी उदारताके मेलसे भी उत्पादनकी वृद्धि सम्भव नहीं हो पाती और तब उपलब्ध उत्पादनमें बढ़ते हुए हाथ कुछ जोड़ते नहीं, बल्कि बाँटनेके लिए आते हैं—और ऐसी स्थिति आती है कि अन्तमें, बंटवारा सम्पन्नता और वैभवका नहीं, बल्कि विपन्नता और अभावका होता है, गरीबी और बेबसी का। इसीको तकनीकी शब्दावलीमें 'अधिकतम बिन्दु' या आदर्श अवस्था कहते हैं, जबकि प्रकृतिके साधन और मानवी कौशलके मेलसे आदर्श उत्पादन सम्भव हो पाता है और प्रति व्यक्तिका भाग अधिकतम होता है।

आजकी परिस्थितिमें, जब कि क्षेत्रीय या देशीयताका जोर बढ़ रहा है, आदर्श स्थिति या अधिकतम उत्पादनकी दशाको इसी परिधिमें विचारना पड़ता है। इसका अर्थ यह है कि विश्व-स्तरपर प्राकृतिक सम्पदा और मानवी शक्तिके सन्तुलित संयोगकी दशा बननेके पहले ही किसी देश या क्षेत्रमें यह दशा सन्तुलनके बिन्दुका अतिक्रमण कर सकती है और विश्वकी दृष्टिसे 'अधिकतम' या 'आदर्श' दशाके न होते हुए भी, किसी देशके लिए अनातिरेक या 'आदर्शातिरेक' की अवस्था पारकर चुकती है।

बुद्धिजीवियोंमें यह बहस अक्सर चल पड़ती है कि किसी देशमें जनाधिक्य है या नहीं—और पक्ष और विपक्षमें कभी-कभी बुद्धिपरक तर्क प्रस्तुत किये जाते हैं। आदर्श अवस्था कब और कहाँ पहुँच चुकी है और इसके लिए क्या मानदण्ड हों, इसपर तो बहुत विवाद चला हैं और चल सकता है। लेकिन इस बातपर तो शायद ही मतभेद हो कि 'आदर्शातिरेक' की दशा एक भयावह स्थिति है, जिससे बचनेकी कोशिश की जानी चाहिए। इस दुर्दशाकी कल्पनाने ही प्रायः यह मतैक्य कायमकर दिया है कि हर हालतमें उससे बचनेका प्रयास प्राथमिक और जोरदार रूपमें होना चाहिए।

इसके बचावका रास्ता तब यही दिखाई देता है कि अगर प्राकृतिक सुविधाओंमें कोई विस्तार सम्भव नहीं है और मानवजीवनको समुन्नत और सुखी बनाना है, तो साधन और श्रमका संयोग सन्तुलित रूपमें रखा जाय। यह संयोग वहाँपर जाकर रुक जाय, जिसके बाद उत्पादन या उपभोगकी सुविधाओंमें कोई वृद्धि सम्भव नहीं हो पाती, जहाँपर श्रमका संयोग उत्पादनवर्द्धक नहीं सिद्ध होता और अतिरिक्त कमाई नहीं करता, बल्कि पिछले उत्पादनमें हिस्सा बंटानेके लिए दिखावटी रूपमें अपनेको काममें व्यस्त रखता है। इसे तकनीकी शब्दावलीमें अर्थशास्त्रियोंने 'प्रच्छन्न रोजगार' या 'छिपी बेकारी' की संज्ञा दी है। छिपी बेकारी प्राथमिक धंधोंमें तो अर्थ-व्यवस्थाके ढांचेगत असन्तुलनका द्योतक हो सकती हैं, जिसका आशय यह होगा कि उद्योग-धंधे तथा सेवा-खण्डोंके विकासके अभावमें यह स्थिति है।

पिछड़े देशोंकी कठिनाई एवं रोजगारकी दशाके सम्बन्धमें यही कहा जाता है कि यहाँ पर अभावको संरचनात्मक सुधारपरिष्कार द्वारा दूर किया जा सकता है। इसीलिए इन देशोंको आर्थिक विकास, मुख्यतः औद्योगिक विकासकी सलाह दी जाती है, और इसके आधारपर समुन्नत जीवनकी आशा बंधाई जाती है। लेकिन अन्ततः वहाँ भी प्राकृतिक सीमाके कारण जब रुकावट उपस्थित होगी, तो 'छिपी बेकारी'के रूपमें

नर्कसे द्वारा उल्लिखित उपभोग-हिस्सेदारीकी ही अवस्था लागू होगी और जनसंख्याके आदर्शवादी सैद्धान्तिकोंके अनुसार जनाधिक्यकी दशा लागू मानी जा सकती है। यह बात दूसरी है कि नये सुधारकी खोजके बलपर उत्पादनकी दशाको परिवर्तित करनेकी सम्भावना बना ली जाय, लेकिन अन्तिम स्थितिको टाला भर जा सकता है, आमूल समाप्त नहीं किया जा सकता।

परिवार नियोजनकी अनिवार्यता

भारत आर्थिक विकासकी दशासे गुजर रहा है और विकासशील दशामें अपनी प्राकृतिक सम्पदा और श्रमके संयोगसे अधिकतम उत्पादनकी दशाको प्राप्त करना चाहता है—दूसरे शब्दों, में सुखी और समुन्नत जीवनकी कल्पनाको सम्भव बनानेके प्रयासमें उत्पादनको अधिकतम बनाना चाहता है ताकि प्रति व्यक्ति हिस्सा भी अधिकाधिक पड़े। इसके लिए यह आवश्यक है कि रोजगारकी सम्भावनाएँ बढ़ाई जायँ।

योजनाबद्ध आर्थिक विकासके सिलसिलेमें दूसरी पंचवर्षीय योजनाका हमारा अनुभव यह है कि सभी प्रयासोंके बावजूद, बेरोजगारी बढ़ी और इसके लिए हमें विशेष प्रयास करना पड़ा। इससे हमारा यह अनुभव रहा है कि अगर सभीकी सुख-सुविधाका मन्तव्य सिद्ध करना है तो श्रम तथा रोजगारके अवसरों और उत्पादन तथा उपभोगमें सन्तुलन होना चाहिए। रोजगारके अवसरोंकी सीमा तथा उत्पादन-क्षेत्रकी विवशताको देखते हुए यह मानना पड़ता है कि सुखीजीवनका रहस्य इस बातमें है कि उपलब्ध उत्पादनमें भावी भागीदारोंको सीमित रखा जाय, ताकि हर व्यक्तिको उपभोगके साधन पर्याप्त रूपमें मिल सकें।

उत्पादक और अनुत्पादक (नाबालिग, बीमार, अपाहिज आदिको शामिल करते हुए) जनवर्गको देखते हुए यह मानना पड़ता है कि सुख-सुविधाकी अभिवृद्धि उत्पादक जनवर्गोंके अधिक अनुपातपर निर्भर करती है। पिछड़ापन और गरीबी उन जगहोंमें अधिक होगी, जहाँपर अनुत्पादक या काम न करनेवाले लोगोंकी संख्या अधिक होगी। ऐसी हालतमें यह आवश्यक ठहरता है कि एक तरफ तो जीवनोपयोगी वस्तुओंकी मात्रा बढ़ानेके हर सम्भव प्रयास किये जायँ और दूसरी तरफ जनसंख्याको भी उस हद तक सीमित करनेका प्रयास हो, जिसके लिए समुचित व्यवस्था नहीं हो सकती। इसी सन्दर्भमें परिवार नियोजनकी अनिवार्यता हमारे सामने आती है।

थोड़े-से उत्पादक वर्गकी कमाईको बाँटनेवाले अगर निर्बाध रूपमें बढ़ते रहे, तो कमानेवालेकी भी दुर्दशाकी कल्पनाकी जा सकती है। विकासशील देशोंमें इसीलिए आर्थिक विकासके प्रयत्नोंके साथ-साथ जन-नियोजनकी आवश्यकतापर भी बल दिया जा रहा है और उपभोगके अवसर बढ़ानेके साथ-साथ उपभोक्ताओंको सीमित करना भी आवश्यक बतलाया जा रहा है। भारत जैसे देशोंमें, जहाँ पर बेकार जनसमूहको भीड़ पहले ही से अधिक दिखलाई दे रही है, जनसंख्याकी वृद्धिकी छूट तो कष्टकारक हीं सिद्ध होगी।

भारतीय जनसंख्याकी प्रवृत्तियाँ

भारतीय जनसंख्याकी प्रवृत्तियोंके अध्ययनसे स्पष्ट होता है कि १९०१-२१ के बीच वृद्धिकी दर चिन्ताजनक नहीं थी, बल्कि इस बीच इसमें कमी ही रही। इसके बादसे वृद्धिका क्रम बढ़ता गया। इस वृद्धिसे क्रमसे ही माल्थसके निष्कर्षके लागू होनेकी सम्भावना बढ़ती ही गयी और यहाँपर १९३० से ही मद्रासमें व्यक्तिगत तथा निजी संस्थागत आधारपर परिवार नियोजनकी बात शुरू की गयी। इस समस्याके प्रति जागरूता इस प्रकार अपने यहाँ बहुत पुरानी दिखलाई देती है।

१९५१-६१ के बीच जनसंख्यामें वृद्धिकी गतिको देखते हुए यह मानना पड़ता है कि वर्तमान आर्थिक स्थितिमें सुधारकी आशाको पूरा करनेके निमित्त इसको रोकनेकी आवश्यकता है। १९५१ के पहले जनसंख्यामें वृद्धिकी दर १३.३ प्रतिशत थी, जबकि १९६१ तकके दशकमें यह दर २१·५० प्रतिशत हो गयी और इससे १९६१ में जनसंख्या ३६ करोड़से बढ़कर ४३ करोड़

९० लाख तक पहुंच गयी। अभी जनसंख्यामें ८० लाख की वार्षिक वृद्धि हो रही है, आज यह ५२·५० करोड़ तक पहुंच चुकी है। इसका अर्थ यह है कि वर्तमान लोगोंके लिए साज-सामाज और भोजनकी व्यवस्था अभी हो नहीं पाती, उन्हें रोजगार मिल नहीं पाता कि प्रति वर्ष नये लोग आबादीमें जुड़ जाते हैं। इसके अलावा जन्म-दर और मृत्यु-दरमें भी बेमेल परिवर्तन हो रहे हैं, जिससे जनसंख्याके बढ़ावकी गति तीव्र होती जा रही है।

जन्म-दर और मृत्यु-दरकी निम्नलिखित प्रवृत्तियोंसे यह स्पष्ट होता है कि इनमें परिवर्तन किये बिना जनसंख्याकी समस्या कितना उग्र रूप धारण कर सकती है : सभ्य समाजमें मृत्यु-दरकी कमी आवश्यक होती है और आर्थिक विकासके सिलसिलेमें जैसे-जैसे सुविधाएं उपलब्ध होती जाती हैं, उससे मृत्यु-दरकी गिरावट स्वाभाविक होती है। लेकिन इसके साथ ही जन्म-दरकी वृद्धि जीवन-मानके सुधारके नाते उपयुक्त नहीं हो सकती। इसलिए उपलब्ध सुविधाओंसे अधिक लाभ प्राप्त करनेके लिए यह आवश्यक होता है कि मृत्यु-दरमें कटौती लाने वाली सम्भावना बढ़ानेके साथ-साथ जन्म-दरको भी सीमित करनेके उपाय किये जायें। पिछला अनुभव यही दिखलाई देता है कि स्वास्थ्य तथा सुरक्षाकी बढ़ती हुई व्यवस्थाके साथ-साथ मृत्युकी दर घटती जाती है, लेकिन जन्म-दरमें मामूली गिरावट या वृद्धिसे परिस्थितिमें सुधार (प्रति व्यक्ति आयमें वृद्धि) की सम्भावना समाप्त हो जाती है। इसीलिए उत्पादनमें वृद्धि होने पर भी प्रति व्यक्ति आयमें गिरावट या मामूली वृद्धिकी स्थिति दिखलाई देती है। परिवार नियोजनका औचित्य इसी सन्दर्भमें दिखलाई देता है।

पंचवर्षीय योजनाएं और परिवार नियोजन

परिस्थितिकी गम्भीरताको देखते हुए ही यहां पर परिवार नियोजनके आन्दोलनको व्यक्तिगत आधारपर न छोड़कर इसके लिए सरकारी प्रोत्साहन-संरक्षण अनिवार्य माना गया है। अन्तरराष्ट्रीय संगठनमें जनसंख्याको सीमित करनेवाले उपायोंको लागू करनेपर जोर प्रायः दिया जाता है और सरकारी देखरेखमें इसे प्रोत्साहित करनेपर भी बल दिया जाता है। देशमें परिवार नियोजनकी अनिवार्यताको महसूस किया गया और योजनाबद्ध आर्थिक समारम्भ से ही इसपर अधिक बल दिया गया है।

पहली पंचवर्षीय योजनाके प्रारम्भसे ही परिवार नियोजनकी आवश्यकताको माना गया और इसके लिए ६५ लाख रुपए खर्चकी व्यवस्था की गयी थी। उसके बादके अनुभवके आधारपर इस मदपर होनेवाले खर्चमें क्रमशः वृद्धि की जाती रही। दूसरी योजनामें इस मदके अन्तर्गत ५ करोड़की व्यवस्था रखी गयी। तीसरी योजना कालमें यह राशि २५ करोड़से बढ़ाकर ५० करोड़ रुपए तक कर दी गयी। चौथी योजनाके प्रारूप में, जिसमें अब परिवर्तन होनेकी सम्भावना है, इस रकमको बढ़ाकर २२९ करोड़ रुपए तक कर देनेकी व्यवस्था है।

पहली पंचवर्षीय योजनामें इसके प्रति बहुत विशेष आकर्षण नहीं दिखलाई पड़ा। कुल मिलाकर जिस प्रकार पहली योजना एक संक्रमण कालीन योजना थी, उसी प्रकार परिवार नियोजनके सिलसिलेमें भी वह एक प्रयोगकी योजना थी। पहली योजनाकी अवधिमें इसके सम्बन्धमें अधिक झुकाव या प्रोत्साहनकी शिथिलता शायद इस कारण भी थी, क्योंकि तब व्यवस्थित जानकारी और अनुभवका अभाव था। जिस प्रकार समग्र रूपमें पहली पंचवर्षीय योजनाको हम युद्ध और विभाजनजन्य परिस्थितियोंसे उत्पन्न अभावोंके निराकरणकी योजना मानते हैं, उसी तरह परिवार नियोजनकी दृष्टिसे इसे हम अनुभव-प्राप्तिका प्रयास कह सकते हैं। उस कालमें इसका कार्यक्षेत्र नगरी क्षेत्रों तक सीमित रखा गया था और शहरी अस्पतालोंमें परिवार-नियोजनकी सुविधाएं उपलब्ध करनेकी व्यवस्था की गई थी। फलतः इसका प्रचार-प्रसार बहुत कम ही हुआ।

पारिवारिक जीवनोपयोगी स्वास्थ्य साहित्य

लोकप्रिय स्वास्थ्य साहित्य

राजा बेटा कैसे बनायें ?	३.००
सुन्दर दांत और उनकी देखरेख	२.५०
आपके बच्चेकी खुराक	३.३७
भोजन क्या, क्यों और कैसे ?	४.००
विटामिन और हीनता जनित रोग	४.२५

यौन-साहित्य

यौन मनोविकार कारण और निवारण	४.२५
विवाहित जीवनमें यौन सम्प्रयोग	५.५०
नारीकी यौन समस्यायें	२ ५०
सन्तति-निरोध कब और कैसे ?	४.००
गर्भवती स्त्री और प्रसवपूर्व व्यवस्था	२.५०

प्रकाशक

स्वास्थ्य सन्देश प्रकाशन,
पोस्ट—कालपी (उत्तर प्रदेश)

स्वास्थ्य का वृहद ज्ञान सागर

आपका स्वास्थ्य

१८ वर्षों की

पुरानी फाइलें

चौथे और सोलहवें वर्ष के अलावा प्रत्येक वर्ष की फाइलें प्राप्य हैं।

प्रत्येक वर्ष की फाइल ६ रु० में प्राप्य है फाइलें वी० पी० से नहीं भेजी जायेंगी। अग्रिम मूल्य भेजना अनिवार्य है।

आपका स्वास्थ्य कार्यालय
चेतगंज, वाराणसी—१

उद्यम

मासिक पत्रिका

'उद्यम' में निम्न विषयों पर लेख प्रकाशित होते हैं :

- ★लाभदायक उद्योग-धन्धोंकी व्यवहारोपयोगी जानकारी
- ★व्यवसायमें सफल व्यक्तियोंकी मुलाकातें और परिचय तथा मवेशियोंके रोगोंका निवारण।
- ★इंजिनियरिंग, यंत्र सामग्री और ग्रामोद्योग संबंधी लेख
- ★आरोग्य, संक्रामक रोग तथा घरेलू औषधियों संबंधी जानकारी।
- ★पंचवर्षीय योजनाओंके कारण होता हुआ ग्रामसुधार
- ★महिला विभाग : घरेलू उद्योग, मितव्ययिता, खाद्य पदार्थ आदि पर लेख।
- ★बालकोंका विश्व : बालक-बालिकाओंके लिए सुलभ भाषामें त्रैमासिक जानकारी।
- ★विद्यार्थियों के लिये : विशेषज्ञों द्वारा उपयुक्त लेख
- ★पाठकों द्वारा पूछी गई जानकारी।

'उद्यम' का वार्षिक मूल्य रु० दस भेजकर परिवारके प्रत्येक व्यक्तिके लिये उपयोगी यह मासिक पत्रिका अवश्य संग्रहीत करें।

उद्यम मासिक, धर्मपेठ, नागपुर-१

घर बैठे संगीत सीखिए

प्रतिमास घर बैठे गायन, वादन तथा नृत्य की ठोस जानकारी प्राप्त करने के लिए १५) भेजकर **'संगीत'** मासिक के वार्षिक सदस्य बन जाइए। नमूना चाहें तो १)५० के टिकिट भेजिए। फिल्मी गीतों के प्रेमी २०) भेजकर **'फिल्म-संगीत'** त्रैमासिक के वार्षिक सदस्य बनें। वर्ष में इसके कुल चार अंक (जनवरी, अप्रैल, जुलाई और अक्टूबर में) प्रकाशित होते हैं। प्रत्येक अंक में ३५ प्रसिद्ध फिल्मी गीत स्वरलिपि-सहित छपते हैं। हर प्रकार के संगीत-साहित्य की विस्तृत जानकारी के लिए हमारा बड़ा सूचीपत्र मुफ्त मंगाएं।

पता

संगीत कार्यालय, ६, हाथरस (उ. प्र.)

इंडियन मेडिकल असोसियेशनकी ओरसे डा० कोशलपति तिवारी द्वारा
संपादित, प्रकाशित और सुदर्शन मुद्रक वाराणसीमें मुद्रित।

HEALTH

is your most precious possession

Your Health

will help preserve it

Your Health aims to educate the common man on matters of health. It deals with day to day problems of sanitation and hygiene and presents the scientific side of preventing many bodily and mental ills.

Remember it is

A Publication of the Indian Medical Association.

SUBSCRIPTION RATES

(Post free)

Inland : 1 year Rs. 8/- ; 2 years Rs. 12/-
Foreign : 1 year Rs. 10/- ; 2 years Rs. 16/-
Members of I. M. A. ; 1 year Rs. 6/-

Remittances should be by money orders or postal orders payable to YOUR HEALTH

All business correspondence should be addressed to

Manager, YOUR HEALTH
23 Samavaya Mansion : Corporation Place
CALCUTTA-13

आपका स्वास्थ्य

इंडियन मेडिकल असोसियेशन की लोकोपयोगी मासिक पत्रिका

मई १९७३

हमारे तीन महत्वपूर्ण प्रकाशन

कहीं हवा न लग जाय

-कैप्टन शरत कुमार चौधरी-

इस पुस्तकमें मलेरिया, फाइलेरिया, चेचक आदि रोगोंसे बचनेके उपाय, रोगीकी परिचर्या सर्पदंश, प्राथमिक चिकित्सा सम्बन्धी अनेक महत्व-पूर्ण समस्याओंकी चर्चा की गयी है।

मूल्य १५० पैसे

सुनो भाई पंचो

-डाक्टर कोशलपति तिवारी-

हिन्दीमें अपने ढंगकी सरल सुबोध शैलीमें लिखी गयी पुस्तक। रोग तथा स्वास्थ्य-सम्बन्धी उन सभी समस्याओं पर चर्चा की गयी है, जिनसे हमारे ग्रामीण भाइयोंको नित्य सामना करना पड़ता है।

पुस्तक दो भागोंमें प्रकाशित है।

प्रत्येक भागका मूल्य—१५० पैसे

गुजरात, मध्यप्रदेश, उत्तरप्रदेश, हरियाणा, राजस्थान सरकार, बिहार द्वारा नियोजन केन्द्रों, स्कूल-कालेजके पुस्तकालयों, राष्ट्रीय प्रसार सेवा खण्डों तथा ग्राम पुस्तकालयोंके लिए स्वीकृत।

डाक्टर के आने तक

– डाक्टर गोकुलदास अग्रवाल –

नागरिक सुरक्षाके संदर्भमें इस पुस्तकका विशेष महत्व है। देशके प्रत्येक नागरिकको प्राथमिक चिकित्सा सम्बन्धी ज्ञान प्राप्त करना आवश्यक है और इस पुस्तकमें विस्तृत ढंगसे इस विषयपर चर्चा की गयी है। प्राथमिक चिकित्सा (फर्स्ट एड और नर्सिंग) की शिक्षा लेनेवाले छात्र-छात्राओंके लिए सर्वश्रेष्ठ पुस्तक। प्रस्तुत पुस्तक आपके परिवारके लिए 'घरेलू डाक्टर' का काम देगी।

दो सौ से अधिक चित्र मूल्य २७५ पैसे

चारों पुस्तकें एक साथ मँगानेपर डाक खर्च माफ। आपका स्वास्थ्यके ग्राहकोंको २५ प्रतिशत छूट दी जाती है। चारों पुस्तकें एक साथ न मँगानेपर प्रत्येक पुस्तकके लिए १२५ पैसे अलगसे डाक व्यय लगेगा।

हमारे अधिकृत विक्रेता,

हिन्दी प्रचारक संस्थान, पो० बा० १०६, वाराणसी
श्री गंगा पुस्तकालय, गायघाट, वाराणसी–१
आपका स्वास्थ्य कार्यालय, लहुराबीर, वाराणसी–१

ESTD.1928
INDIAN MEDICAL ASSOCIATION

आपका स्वास्थ्य

इंडियन मेडिकल एसोसियेशनका लोकोपयोगी प्रकाशन

वर्ष २०　　मई, १९७३　　अंक ८

अनुक्रमणिका

इंद्रिन्ह सुरन्ह न ग्यान सोहाई ... २
शिक्षारंभ जन्मके साथ ... ३
घरमें नया आगन्तुक—शिशु ... ५
बच्चोंके प्रति माता-पिताका दायित्व ... ८
बच्चोंको अनुशासनमें कैसे रखें ... ११
कुष्ठ रोगकी स्थिति क्या है ... १४
क्षय रोग और मधुमेह ... १७
आमके उत्पाद १९
मंदित बच्चोंमें नेतृत्वकी संभावना ... २२
चेचक उन्मूलन क्या, क्यों, कैसे ? ... २५
हृदयवाहिका रोगोंकी रोकथाम युवावर्गकी आदतें ... २८

परिवार नियोजनपूरक

जनसंख्याकी समस्या २९

कवर-चित्र
फोटो—श्रीमती हवा नाथन्
(इसरायल दूतवासके सौजन्यसे)

- ‘आपका स्वास्थ्य’ में प्रकाशित प्रत्येक रचना और चित्रका कापीराइट प्रकाशकका है। इसलिए बिना आज्ञा कोई रचना या चित्र किसी प्रकार उद्वृत नहीं होना चाहिए।
- ‘आपका स्वास्थ्य’ के लेखकोंके विचार पूर्ण रूपसे उनके अपने हैं आवश्यक नहीं है कि संपादक मंडल अथवा इंडियन मेडिकल एसोसियेशन उनसे सहमत हो।

मूल्य—इस अंकका ५० पैसे
वार्षिक छः रुपये

आपका स्वास्थ्य कार्यालय
वाराणसी (बनारस–१)

इंद्रिन्ह सुरन्ह न ग्यान सोहाई

●

किसी भी प्राणीका बाह्य जगतसे संपर्क उसकी इंद्रियों द्वारा होता है। इंद्रियोंसे ही वह जगत्की खबर पाता है और इंद्रियोंसे ही जगतमें कर्म करता है। अतः प्राणिके अस्तित्वमें सूचना-निदेश केन्द्रका बड़ा महत्त्व है। यदि किसीके मस्तिष्क और तनका संबंध काट दिया जाय तो निश्चित रूपसे वह प्राणी जीवित नहीं रह सकेगा। एक इन्द्रीका अभाव भी स्पष्ट रूपसे जीवन मार्गमें बाधाएं उपस्थित करता है।

हमारे देव प्रधान देशमें प्रत्येक इंद्रीके संचालक निरीक्षक एक देवता माने गये हैं और इस समस्त इंद्रियोंको चलानेका, उनके कार्योंके समन्वयका काम मन का है और मन पर भी इष्ट देवताका नियंत्रण होता है, मनसे ऊपर आत्मा है जो जगतसे निर्लिप्त रहकर 'मन' को प्रकाश प्रदान करता है और आत्मा-परमात्माका अंश हैं। अर्थात शरीर एक सोसायटी है जिसमें परमात्मा संरक्षक, मनके देवता अध्यक्ष, इंन्द्रियोंके देवता कार्यकारिणीके सदस्य होते हैं। इस प्रकार प्रत्येक व्यक्ति या संगठन सुचारु रूपसे कार्य करता है।

हमारा संरक्षक निर्दोष है वह मनसा रामको सद्निदेश, ज्ञानका प्रकाश देता है। किन्तु मनके राम और इन्द्रियोंके देवता बहुत भटक जाते है, प्रकाशकी उपेक्षा करके अंधकारमें आनंद लेते हैं। उनको निषेधित कार्य करनेमें बड़ा रस मिलता है। इसीसे गोस्वामीजीने लिखा है 'इंद्रियों और उनके देवताओं को ज्ञान नहीं सुहाता'। एक और रूपकमें इन्द्रियोंकी तुलना जंगली घोड़ोंसे की गयी है और जरा सोचिये उस रथकी हालत जिसमें दस-दस घोड़े जुते हों और सबके सब मन-मानी करें। न रथ आगे बढ़ेगा, न सुरक्षित रहेगा। इसीसे मनको सारथी पदपर बैठाकर इन बावले घोड़ोंका नियंत्रण करनेको कहा गया है। पर जहाँ मन भी बावला हो, वहाँ तो नियंत्रणकी बात ही व्यर्थ है।

गंभीरता पूर्वक विचार करेंगे तो मन और इन्द्रियोंको नियंत्रण करनेकी बात उचित प्रतीत होगी क्योंकि इसीसे आरोग्य, आनन्द और कल्याणकी प्राप्ति हो सकती है। सुमार्ग ज्ञात हैं, ज्ञानप्रदीप उपलब्ध हे, मार्ग निदेश दिये हुए हैं, फिर भी यदि आप चटपटे इन्द्रिय सुखके चक्करमें पड़े रहें तो दोष किसे दिया जाय ?

गोस्वामीजीने जीवको दुखी करनेवाले मानस रोगोंसे बचनेका अचूक नुस्खा प्रदान कर दिया हैं, ऐसा नुस्खा जिससे विष अमृत हो जाता है, शत्रु मित्र बन जाता है। अब यह आप पर निर्भर है कि आपचेतन बनेंगे या जड़।

शिक्षारंभ—जन्मके साथ

—श्री जी० जे० इब्राहिम—

जिस पर्यावरणमें व्यक्ति जन्म लेता है उसके दो पहलू हैं—भौतिक और सामाजिक-सांस्कृतिक। पहलेमें आवास तथा उसके चारों ओरकी प्रत्यक्ष वस्तुएं होती हैं—क्षेत्रीय भूगोल, जलवायु, मिट्टी आदि। दूसरेमें, जिसे परिभाषित करना सरल नहीं है, प्रवृत्तियाँ, विश्वास, सामाजिक संगठन, धार्मिक आचरण आदि सम्मिलित हैं। बालक ज्यों-ज्यों बढ़ता जाता है, चलने-फिरने और अपने परिवेशका निरीक्षण करने योग्य होता है, त्यों त्यों वह अपने आस-पासके भौतिक संसारको समझने लगता है। इसी समय, अपने परिवारके सदस्योंका व्यवहार देखकर और दैनंदिन स्थितियोंमें उनके साथ सक्रिय रहकर वह धीरे-धीरे अपने चारों ओरके सामाजिक संगठनके विषयमें जानकारी प्राप्त कर लेता है। यह जानकारी परिवार और समुदायकी सामाजिक एवं सांस्कृतिक आधार शिलापर बने प्रतिमानके साथ विकसित होती है। स्वास्थ्य और बीमारी, भोजन, परिवार और समाजमें सयाने लोगोंकी स्थिति और जीविकोपार्जनके तरीकोंके प्रति उसकी सारी धारणाएं और प्रवृत्तियां प्रारंभिक जीवनके सामाजिक-सांस्कृतिक पर्यावरणसे अनुबंधित होती हैं। विक्टोरिया झीलके किनारोंपर जन्मा एक बालक केलेको ही सर्वोत्तम आहार समझ सकता है। दक्षिण भारतके बालकके लिए चावल ही महत्वपूर्ण है—न केवल भोजनके रूपमें बल्कि देवी-देवताओंको चढ़ाए जानेवाले सामान्य नैवैद्यके रूपमें भी। दोनों बालक अपनी गर्दनोंमें, बीमारियोंसे सुरक्षात्मक युक्तिके रूपमें ताबीज पहन सकते हैं, यद्यपि ताबीजोंकी सार्थकताएं भिन्न-भिन्न हो सकती हैं, और दोनोंके मां-बाप उन्हें चेचकका टीका लगानेका विरोध कर सकते हैं—एक ओर इसलिए कि ऐसा करना अपने पुरखोंकी आत्माओंको चिढ़ाने जैसा है, और दूसरी ओर इसलिए कि टीकेकी दवामें गायकी लसिका होती है।

जीवनके प्रथम ६ महीनों तक बालक अपनी मांके साथ पूरी तरह तादात्म्य स्थापित कर लेता है और शैशवके अगले चरणमें ही वह अपने व्यक्तित्वको मांके व्यक्तित्वसे अलग समझना शुरू करता है। व्यक्तित्वकी प्रारंभिक समरूपता मां और बालकके बीच एक मजबूत प्रेम-संबंधके रूपमें बदल जाती है और बादमें पिता भी इस संबंधमें सम्मिलित हो जाता है क्योंकि बच्चेकी देख-रेखमें जो भूमिका वह अदा करता है, वह अधिक महत्त्वकी हो जाती है। बालक जैसे-जैसे बड़ा होता है, वैसे-वैसे उसमें एक दृढ़ हार्दिक इच्छाका विकास होता है—मां-बापका अनुकरण करनेकी इच्छाका विकास। उन्हें खुश करना और अपने कार्यों तथा व्यवहारोंके लिए उनका समर्थन प्राप्त करना उसका प्रमुख उद्देश्य हो जाता है। वह ध्यानसे देखता है कि वे क्या करते हैं, सुनता है कि वे क्या कहते हैं और कैसी बातें करते हैं, सामने आयी परिस्थितियोंमें उनकी प्रतिक्रिया देखता है और उन्हें सभी वयस्क व्यवहारके आदर्श पुरुषके रूपमें मानता है। इस प्रकार प्रारम्भिक शैशवमें पारिवारिक पर्यावरणमें अनुभव प्राप्त करनेकी एक विविधता होती है—एक दीर्घकालीन प्रभाववाला अनुभव और एक ऐसा अनुभव जो अन्ततः बालकके व्यक्तित्वका स्वरूप निर्धारित करता है। स्तन-पानके प्रति मनोवृत्ति इसका एक अच्छा उदाहरण है। परंपरावलंबी समाजोंमें, जहां स्तन-पान स्वाभाविक है और जहाँ बच्चे छातीपर अपने शिशुओंको दूध पिलाती माताओं देखते-देखते ही बड़े होते हैं, इस विषयमें उन्हें किसी निर्देशकी कभी जरूरत ही नहीं पड़ती, दूसरी ओर जहां स्तन-पान अपेक्षाकृत सामान्यतः प्रचलित नहीं होता, वहां इस शैशवके अनुभवका अभाव होता है। इस तरह स्वयंके दृष्टांत और निर्देशसे तथा उपयुक्त घरेलू पर्यावरणका निर्माण कर माता-पिता अपने बच्चोंको सही मनोवृत्तियों तथा स्वस्थ आदतोंका विकास करनेमें बहुत दूरतक मददगार हो सकते हैं। स्वास्थ्य और स्वास्थ्य विज्ञानके सामान्य

सिद्धांतोंकी माता-पितासे प्राप्त जानकारी अद्भुत रूपसे महत्त्वपूर्ण होती है, यदि वे प्रभावपूर्ण ढंगसे यह भूमिका पूरी करें तो।

बालक जब कुछ बड़ा हो जाता है तो मां अपने दिनके रोजमर्रेमें इधर-उधर जाते वक्त बच्चेको पीठपर लादकर अथवा पहियावाली गाड़ीमें ले जा सकती हैं। इस प्रकार मां और परिवारके दूसरे सदस्य धीरे-धीरे बाहरी दुनियासे विकासमान बालकका परिचय कराते हैं जो परिवारको एक पुलकी तरह इस्तेमालकर समाजकी; उसके सामाजिक, सांस्कृतिक और धार्मिक पहलुओं में, व्यापक जानकारी प्राप्त करता है। परिवार शिक्षाके लिए, भावात्मक अपेक्षाओंकी संतुष्टिके लिए और व्यवहार-शोधनके लिए बालकको लगातार फैलता हुआ क्षेत्र प्रदान करता है। इसके साथ ही बालक अचेतन रूपसे भी घटनाओं और वस्तुओंके विषयमें सूचना प्राप्त करता चलता है और इन सूचनाओंके अनुरूप चलायी जाती अनेक प्रकारकी कार्य-विधियोंको देखता है। इस प्रकार मनोवृत्तियां, आस्थाएं और अन्धविश्वास एक पीढ़ीसे दूसरीको हस्तांतरित होते रहते हैं।

ऐसा विश्वास किया जाता है कि विकासशील देशोंमें ग्रामीण जनताका स्वास्थ्य व्यवहार साक्षरता और शैक्षणिक कार्यक्रमोंके प्रभावसे बदल जायगा। अनेक देशोंमें नारी-शिक्षा, तथा अल्प सुविधा प्राप्त समुदायोंके वयस्क-साक्षरता अभियानों एवं शिक्षाके अन्य कार्यक्रमोंने गति प्राप्त की है। विवेक पूर्वक आयोजित होनेपर ऐसे कार्यक्रमोंने स्वस्थता तथा स्वास्थ्य-नियमोंके प्रति बढ़ती हुई सतर्कताके निर्माणमें बड़ी सहायता की है और स्वास्थ्यके प्रति परंपरागत मनोवृत्तियों तथा अवधारणाओंको परिवर्तित करनेमें भी योगदान किया है। फिर भी, समुदायके व्यक्तिगत स्वास्थ्याचरणको सुधारनेमें ग्रामीण विद्यालयकी प्रभावकता बहुत हद तक शिक्षणार्थियोंके घरमें इन नयी धारणाओंको मिले समर्थनपर ही निर्भर करेगी। ग्रामीण बालक दो विभिन्न संसारोंमें जीता है। घरपर स्वास्थ्य, बीमारियों तथा दूसरी प्राकृतिक क्रियाओंको परंपरागत धारणा होती है। बुजुर्गोंका वचन ही यहां सर्वोपरि है और दैनिक अस्तित्वका प्रमुख उद्देश्य पुरखोंकी आत्माओं तथा स्थानीय देवी-देवताओंका प्रसादन है। विद्यालयमें, सारी घटनाओंके प्रति कार्य-कारणका दृष्टिकोण रखने वाला वैज्ञानिक संसार होता है। संभव है कि बच्चेके दिमागमें, अनिवार्यतः संघर्षके बावजूद, शिक्षाके सैद्धांतिक पक्ष भली-भाँति समा जांय। लेकिन जीवनके शारीरिक पक्षके वैयक्तिक अर्थ इतने विकृत हो जा सकते हैं कि दी गयी शिक्षाका कुछ अंश व्यावहारिक परिवर्तनके रूपमें इच्छित प्रभाव न उत्पन्न कर सके। प्रभावोत्पादक होनेके लिए आवश्यक रूपसे इस तरहकी संपूर्ण शिक्षापर घरमें मां-बाप तथा दूसरे सयाने लोगोंके व्यक्तिगत दृष्टांत द्वारा फिरसे बल दिया जाना चाहिए।

बालककी मनोवृति और व्यवहारके निर्माणमें आहारकी आदतें और भोजनके प्रतिमान पारिवारिक प्रभावोंका दूसरा दृष्टांत प्रस्तुत करते हैं। प्राचीनकालसे अनेक प्रकारके भोज्य पदार्थ शरीरपर भिन्न-भिन्न प्रभावों सहित सुझाये गये हैं। शरीरमें 'गर्मी' और 'सर्दी' के असर उत्पन्न करनेमें समर्थ भोजनोंके विषयमें एशिया और दक्षिण अमेरिकामें कई तरहके विश्वास व्यापक रूपसे प्रचलित हैं। उष्ण कटिबंधी अफ्रीकाके कई भागोंमें छोटे बच्चों और गर्भवती स्त्रियोंके लिए अण्डे हानिकारक माने जाते हैं। कुछ अफ्रीकी देशोंमें बच्चोंको मांके दूधसे अलग रखनेके उद्देश्यसे, बच्चोंको मांसे अलग दादा-दादीके साथ रहनेके लिए दूर भेज देनेकी परिपाटी है। ये तथा इस तरहकी काल-मर्यादित प्रथाओंका पालन परिवारके बड़े-बूढ़ों तथा कुल-नायकोंकी दूरदृष्टिके अधीन होता है, कि उनकी दृष्टिमें किस प्रकारका शिशुपालन उपयुक्त है। कच्चे दिमागमें अंकित ऐसे अनुभव अपने पीछे एक मानसिक मनोवृत्ति और एक व्यक्तित्व छोड़ जाते हैं जो अति प्राकृतिक क्रियाओं और

(शेष पृष्ठ ७ पर)

घरमें नया आगन्तुक—शिशु

— श्री प्रोफेसर मित्रोफन स्टुजेनिकिन —

सोवियत संघमें प्रति वर्ष चालीस लाख या प्रति हजार जनसंख्यापर लगभग १७ बच्चे पैदा होते हैं। लगभग सभी बच्चोंका जन्म जच्चा घरमें डाक्टर या दाई द्वारा कराया जाता है और प्रायः सभी माताएँ नियमित रूपसे गर्भधारणकी पूरी अवधिमें, प्रसवपूर्व व्यवस्था चिकित्सालयोंमें जाती रहती हैं। अपने बच्चेके साथ माँके घर आ जानेपर, उसी दिन या अधिक से अधिक दूसरे दिन, जच्चा-बच्चा-स्वास्थ्य-सेवाकी जिला-नर्स आकर उसका निरीक्षण करेगी। माँ को शिशुकी देख-भालकी शिक्षा देनेके लिए ये निरीक्षण आगे भी चलते रहते हैं। यह निरीक्षण व्यवस्था इस वर्ष विश्व स्वास्थ्य दिवसके चिंतन विषय 'स्वास्थ्यका प्रारंभ घरसे होता है' का एक अच्छा उदाहरण है। ज०ब० स्वा० (जच्चा-बच्चा-स्वास्थ्य) की यह नर्स, शिशुके जीवनके पहले महीनेमें प्रति सप्ताह कम से कम एक दिन आकर उसे देख जाती है।

निरोग बच्चा—माँ द्वारा जच्चाघर छोड़नेके तीन दिनोंके भीतर जिला-बाल-विशेषज्ञ भी बच्चेको देखनेके लिए घर आता है। वह बच्चेकी जाँच करता है और माँको बच्चेके स्वास्थ्य पालन और आहारकी बाबत सलाह देता है। वह बच्चोंके पॉली क्लिनिकमें माँके प्रथम परामर्शका समय भी निश्चित करता है।

इसके बाद, यदि बच्चा पूर्ण स्वस्थ हो तो भी, महीनेमें कम से कम एक बार अवश्य उसे पॉली क्लिनिक (बहुरोग चिकित्सालय) में लाया जाना चाहिए। यदि माँ इतना भी नहीं कर पाती तो जिला-नर्स ही उसके घर जाती है और नियमित रूपसे चिकित्सालय जानेको प्रेरित करती है। हर जाँचमें डाक्टर बच्चेका भार लेकर, उसकी ऊँचाई मापकर, उसके दांत-निकलनेकी स्थिति देखकर और उसके व्यवहारका निरीक्षण कर बच्चेकी वृद्धि और मानसिक विकासकी पड़ताल करता है। वह बच्चेकी उम्र तथा वृद्धि-दरके अनुरूप आहार-विधि निश्चित करता है, एक निश्चित समय-क्रमके अनुसार अनेक तरहकी टीके लगाता है और दूसरी निवारक युक्तियाँ भी निर्धारित करता है जैसे—विटामिन चिकित्सा, पराबैंजनी किरण उपचारकी व्यवस्था, और कभी-कभी दंतोपचार। आरंभसे ही शारीरिक शिक्षा पर विशेष ध्यान दिया जाता है।

इस प्रकार शिशुके स्वास्थ्यकी जाँच होती है और इन निरीक्षणोंका प्रमुख उद्देश्य माँको निर्देश देते रहना तथा निश्चय करना है कि बच्चेकी देख-रेख ठीकसे हो रही है।

बीमार बालक

इस समूची अवधिमें डाक्टर बच्चेकी तंदुरुस्तीका जिम्मेवार होता है, किसी भी तरहकी अस्वस्थताके प्रथम लक्षणोंपर वह नजर रखता है। आवश्यक होने पर वह घर या अस्पतालमें इलाजका भी प्रबंध करता है। निरंतर सतर्कता और निवारक उपायोंकी बदौलत ही वहाँ बच्चे शायद ही कभी अस्वस्थ होते हैं और अस्पतालके शिशु-चिकित्सा विभागोंमें कार्याधिक्य नहीं होने पाता।

इसके बावजूद जब बच्चा बीमार पड़ता है तो वह स्वास्थ्य केंद्रमें लाया जाता है, या आवश्यक होनेपर, जिला बाल रोग-विशेषज्ञ उसे देखनेके लिए घर आता है। आवश्यकतानुसार उसका आना-जाना बार-बार होता है। बालरोग-विशेषज्ञकी सहायता जिला-नर्स करती है जो उपचार-कार्य करती है और उसके निर्देश पर घर आती जाती रहती है। वह किसी भी समय स्वास्थ्य केंद्रके कार्याधिकारी डाक्टरकी सहायता माँग सकता है, या वहाँ कार्य करनेवाले किसी भी विशेषज्ञको बुला सकता है। हल्की और गैर संक्रामक बीमारियोंका इलाज स्वास्थ्य केंद्र अथवा घरपर ही किया जा सकता है, लेकिन गंभीर स्थितिमें बालक अस्पतालमें भरती कर दिया जाता है जहाँ उनके साथ रहनेके लिए उसकी माँको अनुमति दी जा सकती है।

बच्चेके जीवनका पहला साल सबसे ज्यादा नाजुक होता है, माँ पर सर्वाधिक दायित्व डालता है। इस काल-में बालकके भावी स्वास्थ्य और उसके शारीरिक एवं मानसिक विकासकी नींव डाली जाती है। उसकी संतुलित वृद्धि प्रथम वर्षमें प्राप्त आहार, देख-रेख और प्रशिक्षणपर निर्भर करेगी अतः उचित ही है कि स्वास्थ्यकर वृद्धिके लिए बच्चेको सही आहार देना अनिवार्य माना जाता है। स्तन-पान करानेका वही नियम है और सोवियत संघमें ९५ प्रतिशत बच्चे स्तन-पायी हैं। आँकड़े बताते हैं कि वहाँ स्तन-पान करनेवाले बच्चोंकी बोतलकी दूधपर पले बच्चोंकी तुलनामें मृत्यु दर $\frac{१}{६}$ से $\frac{१}{४}$ होती है।

माँका दूध भी एक सुविचारित समय-सारिणीके अनुसार दिया जाता है ताकि सर्वोत्तम परिणाम प्राप्त किया जा सके। दो और तीन महीनोंके भीतर यदि माँ-का दूध पर्याप्त नहीं पड़ता तो डाक्टर दूध-औषधालयोंमें तैयार दूधवाले पूरक 'बोतल-आहार' निर्धारित करता है। चार या पांच महीनेकी उम्रसे बच्चेको अतिरिक्त आहार भी दिया जाता है—जैसे कूची सब्जी, विभिन्न अनाजोंसे बने चूर्ण, क्रीम, पनीर, रोटी, मांस, अंडे आदि। इन आहारोंमें खनिज लवण होते हैं जो रक्तक्षय और उपापचयकी विकृतियोंका निवारण करते हैं। पहले सालके अंत तक बच्चा विभिन्न प्रकारके और संतुलित भोजन लेने लगता है, अतः बिना कठिनाईके उसका दूध छुड़ाया जा सकता है।

"स्वास्थ्यका प्रारम्भ घरपर और (शिशुके) जन्मके समय ही होता है।" सोवियत अधिकारी इस कथनके इतने कायल हैं कि संभावित माताओंके लिए पूर्ण वेतन सहित ११२ दिनों—४० दिन जन्म पहले और ७२ दिन प्रसवके बाद—की छुट्टीकी सुविधा वैधानिक बना दी गयी है। कुछ परिस्थितियोंमें तो सुश्रुषारत माँ अपनी छुट्टीको अपने बच्चेके प्रथम जन्म दिन तक बढ़ा सकती है। प्रत्येक स्थितियोंमें वह कम घंटे ही काम करती है।

स्वस्थ रहनेके लिए बच्चेको उपयुक्त आहार मिलना और रोगोंसे उसका बचाव होना अनिवार्य है। पहला खतरा, जिससे बचाव होना चाहिए, वह है सुखंडीका खतरा। इससे निवारणके उपाय तभी किये जाते हैं जब बच्चा एक महीनेका हो जाता है। डाक्टर विटामिन डी का नुस्खा या परा बैंजनी प्रकाशका उपचार निश्चित करता है और मां-बापको समझाता है कि बच्चेको अधिक तगड़ा तथा शीत-प्रभावको झेलनेमें समर्थ बनाने के लिए किस प्रकार ताजी हवा और धूपसे लाभ उठाया जाना चाहिए। टी०बी० पोलियोमायलाइटिस, चेचक, खसरा, कुक्कुर खांसी, डिप्थीरिया और टिटनस आदि अनेक रोगोंसे बचावके लिए बच्चोंको टीका लगा दिया जाता है। टीका लगानेका कार्य बच्चोंके बहुरोग-चिकित्सालयोंमें, पूर्व-पाठशालाके बच्चोंको शिशु गृहों और बाल-बिहारोंमें तथा विद्यालयोंमें होता है। परिणाम स्वरूप बच्चोंकी बीमारियोंकी आशंका बहुत घट जाती है और कुछ संक्रामक बीमारियाँ तो व्यवहारतः लुप्त ही हो गयी हैं। टीका केवल पूर्णतः स्वस्थ्य बच्चोंको ही लगाया जाता है। बीमारीकी हालतमें एक या डेढ़ मास, बच्चेके स्वास्थ्य-लाभके बाद तकके लिए टाल दिया जाता है।

संतुलित विकासके लिए बच्चोंको व्यायाम उम्र-के अनुसार आवश्यक मात्रामें नींद, और प्राकृतिक साधनों – हवा, धूप और जल—से लाभ उठानेके लिए अवसरकी आवश्यकता होती है। सम्यक् रूपसे शारीरिक और मनोप्रेरक विकासके लिए कसरत और मालिश दोनों बहुत सहायक होते हैं। विशेषतः गहरी और अबाध नींद प्रदान करनेमें कसरतें बहुत मूल्यवान होती हैं। एक महीनकी उम्रसे बच्चोंकी मालिशकी जाती है। और दो महीनेपर उनसे प्रतिदिन और हर बार एक ही समयपर, कसरत करायी जाती है। इससे उनकी मांसपेशियाँ खड़े होने और चलनेमें सक्षम होती हैं। कसरतें भी हृदय, फेफडों, पाचन तन्त्र और दूसरी शारीरिक क्रियाओंके बेहतर कार्य करनेमें सहायक होती

हैं और चिपटे पाँव तथा रीढ़की वक्रताके निवारणमें महत्वपूर्ण हैं ।

बालकके अवयवोंको शक्तिशाली बनानेके लिए बाल विशेषज्ञ द्वारा नियत किये गये सारे उपाय शीघ्र ही शुरू किए जाते हैं और सतत तथा व्यवस्थित रूपसे चलाये जाते रहते हैं, और साथ ही प्रत्येक बच्चेकी वैयक्तिक विशेषताओंका ध्यान भी रखा जाता है ।

बच्चेका स्वास्थ्य साधारण तरीकोंसे भी, जो हर एकको सहज सुलभ सुदृढ़ किया जा सकता है । स्वच्छ वायु-स्नान—जो घरके भीतर या गर्मीमें, खुली हवामें कराया जाय—सर्वाधिक लाभदायक होता है । धूप भरे दिनोंमें बच्चेको किसी पेड़की छायामें या सायबान (अथवा तिरपाल) के नीचे रखा जाता है ताकि वह परावैंगनी किरणोंसे घनीभूत विकीर्ण प्रकाशके संपर्कमें आ जाय ।

बच्चोंको धीरे-धीरे पानीकी आदत लगानेमें भी सावधानीकी आवश्यकता है । नहलाना, पांव धोना, बदन पोंछना—सब लाभदायक हैं और स्वास्थ्यकर आदतोंकी उपलब्धि कराते हैं जो जीवन पर्यन्त बनी रहती हैं ।

स्वास्थ्यके नियमोंका पालन, टीका, स्वस्थ आहार और नियमित शारीरिक व्यायाम—ये सब ऐसे कारक हैं जो सुव्यवस्थित विकास और जीवनकी अच्छी शुरुआतका विश्वास दिलाते हैं । तब बच्चा तगड़ा, छलकते स्वास्थ्यवाला तथा परिवार एवं अपने आस-पासके सब लोगोंके लिए आह्लादकारी होता है । (वि० स्वा० सं०)

[पृष्ठ ४ का शेषांश]

शक्तियों, जीवनके महत्वपूर्ण संदर्भोंमें कर्मकाण्डोंको पूरा करनेमें विश्वास करता है । ये संस्कारपर नियंत्रण रखते हैं और पारिवारिक प्रभावके जरिये एकसे दूसरी पीढ़ीको हस्तांतरित होते रहते हैं । इस प्रकार परिवार और उसका प्रत्यक्ष सामाजिक परिवेश एक सतत शिक्षा अनुभव प्रदान करते हैं जो किसी भी शिक्षण व्यवस्थासे संतुलित नहीं हो सकता ।

समस्याका निदान एक भली भाँति स्वतंत्र रूपसे संगठित स्वास्थ्य योजना ही है जिसमें समुदायके साथ संपर्कके प्रत्येक बिंदुपर स्वास्थ्य सेवा-दल 'सम्पूर्ण स्वास्थ्य अवधान' प्रस्तुत करता हो । इससे न केवल दवाकी सामान्य बोतल अथवा रोगीके लिए सूई या स्वास्थ्यके लिए प्रतिरक्षण और आहार-पूर्ति, बल्कि सामाजिक स्थिति और स्वास्थ्यके पूर्ण मूल्यांकनका भी अर्थ लिया जाता है ताकि स्वास्थ्य-प्रशिक्षण, पारिवारिक अंतराल, घरेलू स्वास्थ्य-नियमों और अति संवेदनशील समुदायोंके स्वास्थ्य निरीक्षण सभीकी सुविधा हो । सामुदायिक विकास योजनाके साथ-साथ कार्य करनेवाली जच्चा-बच्चा स्वास्थ्य-योजना समुदायमें परिवर्तनका मूलाधार हो सकती है । जन्म-पूर्वका उपचार, पांच मास तक के शिशुके चिकित्सालय, संकटापन्न समूहका उपचार गृह, स्वास्थ्य-निरीक्षण-कार्यक्रम, व्यावहारिक पोषण योजनाएं (विद्यालयोंमें), पोषण-पुनःस्थापना-केंद्र आदि सब माँ-बापसे व्यक्तिगत संपर्क बनाने, बाल-स्वास्थ्य तथा पोषणकी नयी धारणाओंको आगे बढ़ाने और घरमें स्वास्थ्याचरणके नये प्रतिमान स्थापित करनेमें सहायक होते हैं । जो कार्यक्रम सही और जिम्मेदार माता-पिताके निर्माणमें सहायक होता है, उससे अधिक कोई भी कार्यक्रम बच्चोंको लाभ नहीं पहुँचा सकता क्योंकि ये माँ-बाप और परिवार ही हैं जो बालकके भावी स्वास्थ्य कल्याणके बीज बोते हैं ।

(वि० स्वा० सं० के सौजन्य से)

बच्चोंके प्रति माता-पिताका दायित्व

— श्री श्याम नारायण मालवीय —

जब बच्चा जन्म लेता है, वह बहुत ही निर्दोष एवम् अनजान होता है। धीरे-धीरे माता-पिता और उसके परिवार वाले उसको संसारसे परिचित कराने लगते हैं। वह इस संसारकी प्रत्येक वस्तु, व्यक्ति तथा परिस्थितिसे अपरिचित-सा रहता है, घर वाले धीरे-धीरे बच्चेको उसके आस-पासको सभी वस्तुओंसे परिचित कराते रहते हैं। बालककी उस असहायावस्थामें उसकी आवश्यकताओंकी पूर्ति ही उसके लिए बहुत महत्व रखती है। जिस बालककी आवश्यकताओंकी पूर्ति जितनी ही अच्छी तरह और सहज तरीकेसे की जाती है उसका शारीरिक, मानसिक तथा साँवेगिक विकास भी उतना अच्छा होता है। बच्चेकी आवश्यकताओंकी पूर्ति सही तरीकेसे न होना ही बादमें एक समस्या बन जाता है। इसके भी दो पहलू हैं—एक तो बच्चेकी आवश्यकताओंकी पूर्ति जरूरतसे ज्यादा मात्रामें करते हुए उससे अनुचित लाड-प्यार करना तथा दूसरे उसकी आवश्यकताओंकी पूर्तिकी बिल्कुल उपेक्षा करते हुए उसे स्नेह की ऊष्मासे वंचित रखना।

शुरू-शुरूमें बच्चा यह नहीं जानता कि मां कौन है और कैसी होती है तथा पिता कौन है और कैसा होता है। धीरे धीरे मांको किसी द्वारा बुलाए जाने, पिताजीके बारेमें किसीको यह कहते हुए सुनने कि पिताजी आ गये, बच्चा समझने लगता है कि यह मां हैं या पिताजी हैं। बड़े लोग भी किसी व्यक्तिका नाम पूछते हैं, बादमें उसको उसी नामसे पुकारने लगते हैं। इसी प्रकार धीरे-धीरे बच्चा संसारकी अन्य वस्तुओंसे परिचित होता है और इसमें उसके माता-पिताका सहयोग महत्वपूर्ण माना जाता है।

बच्चेके समुचित विकासमें निम्न दो बातोंका बहुत महत्व होता है—

१. माता-पिता का व्यक्तित्व व मनोवृत्ति।
२. बच्चेका स्वभाव व मनोवृत्ति।

जैसा कि अनेकानेक मनोवैज्ञानिक प्रयोगोंके आधारपर ज्ञात हुआ है कि प्रत्येक व्यक्तिका व्यवहार काफी हद तक उस व्यक्तिके अन्दरकी अपनी विशेषताओंसे प्रभावित होता है और उसीसे व्यक्तिके स्वभाव व आदतोंका निर्माण होता है। दूसरे बच्चा यदि देखनेमें सुन्दर है, स्वस्थ एवम् चंचल है तब न चाहते हुए भी माता-पिता व दूसरे लोग उसे गोदमें उठा लेते हैं और उससे प्यार करते हैं। ऐसे बच्चोंका विकास जिन्हें माता-पिता तथा अन्य परिजनोंका स्नेह भरपूर मात्रामें मिलता है, सही दिशामें होता है।

किसी बच्चेका उसके माता-पिताके साथ जितना ही सुन्दर एवम् स्वस्थ संबन्ध होगा, उसका मानसिक व सांवेगिक विकास भी उतना ही अच्छा होगा। अच्छे संबंधके फल-स्वरूप ही बच्चेको इस संसारकी अनेकानेक वस्तुओं व परिस्थितियोंको समझने, सीखने व उनसे समायोजन स्थापित करनेका सुअवसर प्राप्त होता है। इसके विपरीत बच्चेमें अनेकानेक छोटी-छोटी बातोंको लेकर ग्रन्थियां बनती जाती हैं, जिसके परिणामस्वरूप उसके व्यवहारमें भी विकार आता जाता है और समाजमें उसका समायोजन ठीक ढंगसे नहीं हो पाता। परिणामतः बच्चा आवारा और अपराधी बन जाता है। हमारे यहाँ अनेकानेक अपराधी जातियाँ हैं जिनमें माता-पिताका बच्चेके साथ अच्छा संबंध न होनेके कारण वे अपराधों की ओर प्रवृत्त होते हैं।

मन्दित बच्चोंके प्रति माता-पिताका दायित्व

खास तौरसे मानसिक रूपसे मंदित बालकों और उनके माता-पिताओंके संबंधमें देखने आता है कि अधिकांश माता-पिता अपने बच्चोंको भार-स्वरूप समझते हैं क्योंकि उनकी सारी विकासात्मक क्रियाएँ देरसे होती हैं। मंदित बच्चेके अन्य छोटे भाई-बहन उसकी अपेक्षा कम उम्रमें ही उससे अच्छा व्यवहार

करते हैं, फलस्वरूप माता-पिताकी ममता उनके प्रति कम होती जाती है क्योंकि वे यह सोचते हैं कि यह तो बेकार है, उससे कोई कार्य नहीं हो सकता। इसके विपरीत कुछ माता-पिता ऐसे भी होते हैं जो बच्चेके मंदित बुद्धि वाला होनेके कारण उसके हर कार्यमें पिछड़े होनेपर यह मान लेते है कि उसका कोई भी दोष नहीं है और उसको समुचित देखभाल करते हैं तथा उससे प्यार करते हैं। इस प्रकार बच्चोंके साथ माता-पिताके सम्बन्ध कुछ कारणोंसे भिन्न हुआ करते हैं।

बच्चेके साथ माता-पिताके संबंध अच्छे न होनेके निम्न परिणाम देखनेमें आते हैं।

१. प्यारके अभावमें बच्चा माता-पितासे भयभीत-सा रहता है और उनसे वह दूर रहना चाहता है। जहाँ तक बनता है, उनसे बचकर कार्य करनेके लिए उनकी अवज्ञा भी कर देता है।

२. अच्छे सम्बन्ध न होनेसे वह जिद्दी बन जाता है।

३. कुछ खास प्रकारके चमत्कारिक व्यवहार करके उनका ध्यान अपनी ओर आकर्षित करना चाहता है, इसमें प्रायः वह बुरे कार्य ही करता है।

४. वह हर बातकाको छिपानेकी कोशिश करता है, इसलिए वह झूठ भी बोलता है।

५. माता-पिता के साथ उनका संबंध ठीक न होनेपर, वह चिड़चिड़ा या उदास रहने लगता है। उदासी के फलस्वरूप उसकी कार्यक्षमता भी घटती चली जाती है।

६. किसी भी कार्यको वह आसानीमें नहीं सीख पाता।

७. अधिक लाड़-प्यारमें पोषित बच्चा बड़ा होनेपर भी दूसरोंके ही सहारे रहता है।

८. माता-पिता पर काफी हद तक आश्रित रहने वाले बच्चे उनके बिना स्कूल या घरसे बाहर कहीं भी नहीं जा पाते।

९. अधिक भयभीत बच्चोंमें कुछ विशिष्ट प्रकारके व्यवहार भी दिखाई पड़ने लगते हैं, जिनसे उनके समायोजनमें कठिनाई उत्पन्न होने लगती हैं।

१०. माता-पिताके प्यारके अभावमें बहुतसे बच्चे अपने जीवनमें काफी निराशावादी व हीन प्रकृतिके बन जाते हैं।

११. बच्चोंकी अपराधी वृत्तिका मुख्य कारण माता-पिताके साथ उनके अच्छे सम्बन्धोंका न होना है। माता पिता बच्चेकी जब आवश्यकताओं की पूर्ति नहीं कर पाते तब वह उनसे दूर होकर किसी भी प्रकारकी संगतिमें पड़कर अपनी आवश्यकताकी पूर्ति करना चाहता है, प्रायः बुरी संगति आसानीसे उसे प्राप्त हो जाती है।

१२. बाल्यावस्थामें जिस बच्चेके साथ सुन्दर ढंगसे व्यवहार नहीं किया जाता, वह आगामी जीवनमें भी अपने सहयोगियों और मित्रोंके साथ ढंगसे समायोजन नहीं कर पाता।

बच्चेके माता-पिताके साथ अच्छे सम्बन्ध न होनेपर बच्चा खुलकर कोई भी कार्य नहीं कर पाता। यहाँ तक कि माता-पिताकी अनुपस्थितिमें, वह जो कार्यकर रहा होता है उसे भी बन्दकर देता है। मां-बापसे भयभीत बालक बिस्तरपर पेशाब करना, दांत पीसना, रातमें कुछ अनाप-शनाप बोलना इत्यादि क्रियाओंका प्रदर्शन करता हुआ पाया जाता है। जो माता-पिता अपने बच्चोंको हमेशा डांटते रहते हैं, उनके बच्चे हमेशा डरे-डरे और सहमे-सहमे से रहते हैं। उन बच्चोंको सरदर्द, बुखार एवम् पेट दर्द प्रायः हुआ करता है। उस समय थोड़ी तकलीफमें भी वे बहुत रोते-चिल्लाते हैं, क्योंकि उसी तरीकेसे उन्हें माता-पिताकी थोड़े समयके लिए सहानुभूति प्राप्त करनेका मौका मिल जाता है। ऐसे माता-पिता अपनी इस कमजोरीको स्वीकार नहीं करते और उनकी तानाशाही बराबर अपने बच्चेपर बनी रहती है, परिणाम यह होता है कि उस बच्चेकी समस्या और भी जटिल होती जाती है।

माता-पिताके पारस्परिक संबंध

कभी-कभी माता-पिताके आपसी संबंध भी बच्चेके व्यवहारको काफी दूषितकर देते हैं। घरमें बार-बार

होनेवाले कलहों आपसी बोलचाल बन्द होनेसे बच्चा प्रभावित हुए बिना नहीं रहता। वह तरह-तरहकी गालियाँ सीखजाता है, बात-बातमें उसको भी गुस्सा आ जाता है, उसमें चिड़चिड़ापन पाया जाता है, साथियोंके साथ हमेशा उलझन सी बनी रहती है। यदि माता-पिता बच्चेके सामने ठीक ढंगसे व्यवहार करते हैं तो उसे परिवारके बाहरके वातावरणके साथ समायोजन करनेमें काफी सहायता मिलती है।

सौतेली मांका व्यवहार

यदि बच्चेकी मां मर चुकी हो और सौतेली मां हो, उस स्थितिमें तो सामान्य बच्चोंको भी काफी मुसीबतें झेलनी पड़ती हैं, मंदित बच्चोंको तो और भी कष्ट उठाना पड़ता है। यदि परिवार अधिक पढ़ा-लिखा न हो, रहन-सहनका स्तर भी अधिक ऊंचा न हो और पत्नी भी पढ़ी-लिखी न हो, शौक-श्रृङ्गार अधिक करती हो, तब उसका संबंध सौतेले बच्चेके साथ घृणाका हो जाता है, साथ ही वह अपने पतिसे भी उसी प्रकारका व्यवहार करवानेकी कोशिश करती है। ऐसी परिस्थितिमें बच्चेके पिताके सामने एक अजीब सी समस्या उठ खड़ी होती है। एक ओर तो वह उस बच्चेको दिलसे प्यार करता है और दूसरी ओर उसे पत्नीको खुश करनेके लिए घृणा भी करनी पड़ती है।

सांवेगिक आवश्यकताओंकी पूर्ति और दिवास्वप्न

प्यार न मिलनेसे बच्चेकी सांवेगिक आवश्यकताएं भी संतुष्ट नहीं हो पातीं। उस संतुष्टिके लिए वह हमेशा हवाई किले बनाता है, कुछ न कुछ सोचता रहता हैं। इसके परिणामस्वरूप वह अन्य आवश्यक कार्योंको नहीं कर पाता, तब उसमें कार्यके प्रति निराशा व दुःख होता है और दिवास्वप्न की भावना निरंतर बढ़ती जाती हैं। दिवास्वप्नमें हमेशा डूबे रहनेसे बच्चेका मन पढ़ाई-लिखाई व अन्य प्रकारके कार्योंमें नहीं लगता है। वह स्कूलसे भागने लगता है। एक ही कक्षामें बार-बार फेल होता है। धीरे-धीरे बालककी परेशानियां बढ़ने लगती हैं और वह एकांतप्रियत होने लगता है क्योंकि एकान्तमें वह अपनेको अन्य लोगोंसे सुरक्षित पाता है दिवास्वप्नोंके माध्यमसे अपने मनके मुताबिक इच्छाओंकी पूर्ति करता रहता है।

हीनताकी भावना

जिन बच्चोंको समुचित प्यार नहीं मिलता, उनमें आत्मग्लानि व हीनता भी काफी पाई जाती है। शैशवावस्थामें प्रायः ऐसे बच्चे घरसे बाहर भागने लगते हैं और फिर लौटकर न आनेकी ठान लेते हैं। उनके माता-पिता भी उनको फिर वापस बुलानेके लिए विशेष चिंतित नहीं होते हैं। बहुतसे बालकतो ऐसी अवस्थामें ही आत्महत्या भी कर लेते हैं क्योंकि वे वर्तमान परिस्थितियोंके साथ अपनेको समायोजित नहीं कर पाते। बार-बार असफलताके कारण उनमें धीरे-धीरे आत्मविश्वासका भी अभाव होता जाता है।

इस प्रकार उपर्युक्त परेशानियोंसे बचनेके लिए आवश्यक है कि माता-पिता बच्चेके साथ अच्छे संबंध बनाये रखें। बच्चेके प्रति उनका प्यार न तो आवश्यकता से अधिक हो और न आवश्यकतासे कम, क्योंकि दोनों ही स्थितियाँ दुःखदायी होती हैं। यदि बच्चेमें किसी प्रकारकी बौद्धिक मंदता या उदासी होगी तो माता-पिताके अच्छे संबंधके आधारपर उसमें काफी सुधार व परिवर्तन पाया जा सकता है। सांवेगिक रूपसे मंदित बच्चोंके उपचारके लिए बच्चेके माता-पिताके व्यवहार व आदतोंमें परिवर्तन लाना तथा माता-पिताको बच्चेकी कमजोरियों एवम् सीमाओंसे अवगत करना और उसमें बच्चोंके प्रति समझकर सहज स्नेहकी धारा प्रवाहित करना नितान्त आवश्यकता है। इस दिशामें वास्तविक सफलता तभी मिलेगी जब बच्चेका अपने माता-पिता तथा परिवारके अन्य व्यक्तियोंके साथ समायोजन होगा। माता-पिता द्वारा बच्चेको स्वीकृति मिलना उनके समुचित एवं सर्वांगीण विकास व सुधारके लिए नितांत आवश्यक है।

बच्चोंको अनुशासनमें कैसे रखें ?

—श्री विश्वम्भर नाथ शुक्ल—

यदि आपका नन्हा-मुन्ना कोई अनुचित कार्य जिसके करनेसे उसे हानि पहुँच सकती है, कर रहा है तो उसे मना करना आपका कर्तव्य है। किन्तु उसे जबरदस्ती बलपूर्वक वैसा करनेसे वंचित रखना मनोवैज्ञानिक दृष्टिसे अहितकर हैं और उससे उसकी मनोभावनाओंको ठेस पहुँच सकती है। अनुशासनका अत्यंत कठोर रुख बालकोंकी विकासशील भावनाओंको आरम्भ में ही मृतप्राय कर देता है तथा उनको असामान्य व्यवहार तथा स्वभावका बना देता है। उदाहरणार्थ यदि कोई बच्चा चाकू या दाढ़ी बनाने वाले रेजर ब्लेडसे खेलता है तो आपका यह सोचना कि इन दोनों वस्तुओंसे वह अपना हाथ काट लेगा स्वाभाविक है, इसलिए उसे मना करना आपका कर्तव्य है। किन्तु इस मना करनेकी दो विधियाँ होंगी। एक तो आप उसके हाथसे लपक कर चाकू या ब्लेड छीन लेंगे और यदि वह विरोध करेगा तो आप उसे डाटेंगे और आवश्यकता हुई तो एकाध हाथ भी लगा देंगे। दूसरे रूपमें आप सस्नेह पुचकार कर उससे वे वस्तुएँ अपने स्नेहिल शब्दोंके जादुई प्रभावसे प्राप्त कर लेंगे और बदलेमें उसे कोई खिलौना अथवा ऐसी वस्तु दे देंगे जिसे वह अपनी क्रीड़ाका सुरक्षित माध्यम बना लेगा।

उपर्युक्त दोनों क्रियाओंका बच्चेपर पृथक्-पृथक् प्रभावपड़ता है। प्रथम क्रिया उसे यह सोचनेको बाध्य करती है कि आप उससे असहयोग करते हैं, उसके शत्रु हैं और इसके फलस्वरूप उसकी अन्तरात्मामें आपके प्रति घृणा एवं विद्रोह पनप उठेगा। कालान्तरमें इसका प्रभाव यह होगा कि वह अपने प्रति आपके हर व्यवहारको शंकाकी दृष्टिसे देखेगा और यदा-कदा आपसे खुला विद्रोह करनेको भी तत्पर रहेगा। फलतः आप और आपके बच्चेके बीचकी दूरी दिन प्रतिदिन बढ़ती जायेगी और वयस्क होनेपर आप और आपके बच्चेके बीच व्याप्त यह दूरी पारिवारिक विघटनका माध्यम भी बन सकती है।

मनोवैज्ञानिक पहलूको नजरंदाज न करें

दूसरी क्रियाका परिणाम उपर्युक्तका सर्वथा उल्टा होगा। बच्चा आपके स्नेहपूर्ण व्यवहारका आदर करेगा और यह अनुभव करेगा कि आप उसके हितोंके प्रति सदैव सचेत रहते हैं, इसलिए वह अपना प्रत्येक व्यवहार आपकी इच्छानुसार ढालनेका प्रयत्न करेगा तथा आज्ञाकारी बालक बनेगा। तात्पर्य यह कि आप अपने बच्चेको किसी अहितकर कार्यके करनेसे रोकने हेतु यदि वस्तुस्थितिके मनोवैज्ञानिक पहलूका समुचित ध्यान रखते हैं तो इस क्रियासे बच्चेका बहुत कुछ हित साधन होता है।

बाल-जीवनके प्रारम्भिक वर्ष 'देखो और सीखो' पर आधारित होते हैं और इस आयुमें ही बच्चा सारी मानवीय क्रियाओं एवं व्यवहारोंका ज्ञान प्राप्त कर लेता है। इस तथ्यको दृष्टिमें रखते हुए यह बात सदैव ध्यानमें रखनी चाहिए कि यदि किसी बच्चेको अनुचित कार्य करते देख उसे मना करनेके साथ ही साथ उसीसे मिलता जुलता कोई हितकर कार्य उसे सिखा सकें अथवा बता सकें तो हमारा यह प्रयास उसके भावी जीवनकी निधि होगा।

उपर्युक्त तथ्यको विस्तारपूर्वक समझने हेतु हमें यह कल्पना करनी होगी कि यदि एक चार-वर्षीय बालक 'अ' आपका फाउन्टेनपेन ले इधर-उधर लकीरें खींच रहा है जिससे उसकी निब टूट सकती है, तो आप उद्विग्न न हों। उसे पेंसिल और कागज देकर 'अ', 'आ', आदिका अक्षर ज्ञान कराइए और उसे लिखना सिखाइए। वह आपका कलम छोड़ फौरन कागज-पेंसिलमें उलझ जाएगा। इसके विपरीत यदि आप डांट-डपट कर अपनी कलम उससे छीन लेते हैं तो वह आपसे रूठ जाएगा, आपको अपना हितकारी नहीं मानेगा और हो सकता है

कि अवज्ञा आंदोलन ही कर बैठे। इसलिए किसी निरर्थक, हानिकारक कार्यमें व्यस्त बच्चेको मना करते समय इस बातका सदैव ध्यान रखें कि जिस क्रियासे आप उसे वंचित करते हैं, उसका ज्ञानवर्द्धक प्रतिरूप उसे प्रस्तुत कर देते हैं जिससे वह खेल-खेलमें ज्ञानार्जन कर सके।

बच्चोंकी जिद्के कारण

बच्चोंको बात-बात पर डांटना, उनकी हर क्रियामें बाधा उपस्थित करना और उन्हें हर कामसे मना करना बालकोंको जिद्दी, चिड़चिड़ा तथा परिवारके प्रति उदासीन बना देता है। इस समस्याका सर्वोत्तम हल यह होता है कि बच्चा जो कुछ करता है उसे करने दें और जहाँ उसके द्वारा सम्पादित कार्य औचित्यकी सीमामें लाने हेतु प्रयत्न मात्र करना आपको सुखकर अनुभूति देनेमें सहायक होगा।

यदि आप किसी ऐसे परिवारके सम्पर्कमें आए हों जिसे माता-पिता बच्चोंकी बात-बातमें यह कहते हों, 'यह मत करो, वह मत करो' तो आपने अनुभव किया होगा कि बच्चे बार-बार वही काम करनेका, वही शरारत दोहरानेका प्रयास करते है जिसके लिए उन्हें मना किया जाता है। बार-बार टोके जानेसे बच्चा आपकी बातें सुननेका अभ्यस्त हो जाता है। नतीजा यह होगा कि आप मना करते रहेंगे वह सुनता रहेगा। स्थिति स्थाई ही बनी रहेगी। अतः इस प्रवृत्तिसे बच्चोंको बचाने हेतु बच्चोंको बार-बार मना करनेसे अच्छा यही होगा कि आप एक बार जिस कार्य हेतु उसे मना कर दें, उसकी पुनरावृत्ति पर तनिक कठोर स्वरमें उसे डांटकर सचेत कर दें, वह मान जायेगा।

एक रोचक एवं शिक्षाप्रद उदाहरण

यदि बच्चा किसी ऐसे कार्यमें रुचि लेता है जो कि उसे हानि पहुँचा सकता है तो उसे मना करें और यदि वह न मानें तो उसे ऐसा दंड दें जिससे वह पुनः उस क्रियाके प्रति आकर्षित न हो सके। इस सम्बन्धमें मुझे अपने एक मित्र द्वारा अपनायी गयी विधि बहुत अच्छी लगी। मेरे मित्रका तीन वर्षीय पुत्र बार-बार गरम चायसे भरी केतलीसे खेलनेका प्रयासकर रहा था। पहले तो हम दोनों ही उसे समझाते रहे, किन्तु जब वह नहीं माना और चाय भी तब- तक काफी ठंढी हो गयी थी। उन्होंने केतलीको बच्चेके हवाले कर जमीन पर रख दिया। थोड़ा हिलाते डुलाते ही मामूली सी गर्म चाय केतलीकी टोंटीसे निकल उसके पाँवपर गिर पड़ी। बच्चा तुरंत "मैं जल गया" चीखते हुए केतली छोड़ मम्मीके पास भाग गया। उस दिनसे आजतक मैंने मित्रके बच्चेको चायकी केतली अथवा कपसे खेलनेका प्रयास करते नहीं पाया। उपर्युक्त विधि परिवारके अलावा अन्य क्षेत्रोंमें भी अपनायी जा सकती हैं। बस आप केवल इतना ध्यान रखें कि दंड विधि बच्चेको वास्तविक हानि न पहुँचा कर उसे केवल हानिकी अनुभूति मात्र ही कराये।

माताकी अत्यधिक व्यस्तता और बच्चे

सुबहसे शाम तक घरेलू काम-काजमें उलझी हुई माताओंके पास बालकोंके साथ मगजपच्ची करनेके लिए काफी कम समय रहता है और यदि फिर भी बच्चे मांके पीछे-पीछे किसी कार्यवश लगे रहते हैं तो मांका चिड़चिड़ा हो जाना और मस्तिष्क तनावका बना रहना स्वाभाविक है। ऐसी स्थितिमें माता बालकोंकी कोई भी बात सुनने और उसपर ध्यान देनेकी आवश्यकता नहीं समझती। इसका फल यह होता है कि बच्चोंकी फरियाद उचित सुनवाई न होनेके कारण अतृप्त आकांक्षा का रूप ले लेती है और बच्चे 'मातृ-स्नेहकी अतृप्ति' का अनुभव करने लगते हैं। दीर्घकालमें यही अनुभूति उन्हें अन्तर्मुखी बना देती है और वे अपनी किसी समस्याके समाधानमें अपनी माताको साझीदार बनाना आवश्यक नहीं समझते।

यह बाल्यकालीन प्रवृत्ति दीर्घकालमें बल पकड़कर किशोरों तथा वयस्कोंमें विघटनकारी मनोवृत्तिको सशक्त बना देती है, जिसका फल यह होता है कि वे शीघ्रातिशीघ्र माता-पिताके चंगुलसे मुक्ति पा अलग गृहस्थी बनाने हेतु

प्रयत्नशील पाये जाते हैं। इसका सर्वोत्तम हल यही है कि कितनी भी व्यस्तता क्यों न हो, प्रत्येक मांको अवकाशका कुछ समय अपने बच्चोंके लिए सुरक्षित रखना चाहिए जिसमें बच्चे अपना सुख-दुःख, हित-अहित और अपनी वे समस्याएं जिन्हें हल करनेमें वे स्वयंको असमर्थ पाते हैं, अपनी मातासे कह सकें और अपना मानसिक बोझ हल्का कर सकें। बालक जब आपके निकट आता है तो इस विश्वासके साथ आता है आप उसकी बातें सुनेंगी और उसकी सहायता करेंगी। यदि आप अपनी झुंझलाहटमें उसे दुत्कार कर अपनेसे दूर रखनेका प्रयास करती हैं तो यह अहितकर होगा। अतः आवश्यक यह है कि अपनेको बदलें और बच्चेको अपने निकट आनेका अवसर दें।

आदेशोंका पालन करवानेमें दृढ़ता

बालकोंको दिये गये अपने आदेशोंको स्थाई बनाइये। आप जिस कार्य-विशेषको करनेके लिए बालकको एक बार मना कर चुके हैं, दुबारा उसी कार्य हेतु उसे अनुमति कदापि न दें। उसकी जिस मांगको एक बार ठुकरा चुके हों, दूसरे क्षण उसकी पूर्ति किसी मूल्य पर भी न करें। यदि आप ऐसा करते हैं तो बच्चोंको स्वयं ही हठधर्मी और अपना पिछलग्गू बनानेमें सहायक होंगे क्योंकि आपके बच्चेको यह विश्वास हो जायगा कि आप मना करनेके बाद भी उसकी मांग अवश्य पूरी करेंगे। इसलिए आपके मना करने पर भी वह उस समय तक आपके पीछे लगा रहेगा जब तक कि उसकी मांग पूरी नहीं हो जाती या उसकी बात आप नहीं मान लेते। उदाहरणार्थ यदि बालक 'अ' अपने पितासे कुछ पाना चाहता है तो वह उनसे फरियाद करेगा। यदि वह उसकी मांगको उचित नहीं समझते तो उसे मना कर देते हैं। फलस्वरूप बच्चा उदास हो जाएगा, रोने लगेगा और पूरा घर सिर पर उठा लेगा। यदि उसका यह नाटक पिताजी न सह सके और उसकी मांग पूरी करके शांति-संधि कर लेते हैं तो यह शांति-संधि 'अ' को इस बातकी अनुभूति कराएगी कि भविष्यमें भी जब कभी उसकी कोई मांग होगी, कोई आवश्यकता होगी और उसके पिताजी मना करेंगे तो उस समय भी इस प्रकारका नाटक रचकर वह अपने पिताजीसे अपनी बात मनवा लेगा। फलतः बच्चा हठी बन जायगा और उसे किसी बातके लिए मना करना मुश्किल हो जायगा। इसलिए बच्चोंकी कोई भी अनुचित मांग जब आप अस्वीकृत कर दें तो उन्हें हठधर्मीसे बचानेके लिए यह अत्यन्त आवश्यक होगा कि भविष्यमें उस मांगको किसी भी मूल्य पर स्वीकृत न करें।

अनुशासनके संबंधमें ढील न दें

इस प्रकार अनुशासनके संबंधमें कड़ा रुख अपना कर आप बालकोंमें अनिश्चितताकी भावनाका भी दमन कर सकते हैं यदि आप किसी भी समस्याके हल हेतु बच्चोंसे कभी एक बहाना बनाते हैं और कभी दूसरा तो इससे बच्चे यह सोचनेको बाध्य हो जाते हैं कि आप जो कुछ कहते हैं, उस पर स्वयं आपको ही विश्वास नहीं है। अतः वे आपका हर आदेश सुननेके बाद, उसका पालन करनेके बजाय, यह प्रतीक्षा करेंगे कि आप अपने पूर्व आदेशके बदले कोई दूसरी बात कहने वाले हैं। फलस्वरूप आपकी कोई सलाह, आदेश अथवा निर्देश वे नहीं मानेंगे और सदा ही अनिश्चित वातावरणमें भटकते रहेंगे। इसलिए बालकोंको जब भी एक बात कही जाय तो वह इतनी निश्चित हो कि उसमें स्वयं आप भी फेरबदल न कर सकें। ऐसा करनेसे बच्चोंमें स्थायित्वका भाव उत्पन्न होता है और वे आपके हर आदेश का अक्षरशः पालन करने हेतु तत्पर रहेंगे।

परिवारमें हर बच्चेका शारीरिक एवं मानसिक स्तर दूसरे बच्चेसे भिन्न होता है और प्रत्येककी अलग-अलग रुचि होती है। ऐसे वातावरणमें यदि माता-पिता सभी बच्चोंके साथ एक-सा व्यवहार करें तो यह उनके विकासके लिए अहितकर होगा। इसी सिद्धान्तको ध्यानमें रखते हुए जहां हमारा व्यवहार एक बच्चेके प्रति कोमलता एवं स्नेहके साथ निभ सकता है वहीं दूसरे बच्चेके साथ हमें कुछ कड़ा तथा अनुशासनात्मक

(शेष पृष्ठ १८ पर)

कुष्ठ रोगकी स्थिति क्या है ?

डा० लुइज बेकेली

(वि० स्वा० सं० के कुष्ठ रोग विभाग के अध्यक्ष)

यद्यपि आदमी चन्द्रमापर चल चुका है और मंगल व शुक्रकी खोजकी योजना बना रहा है, पर उसके प्राचीन दुश्मन—कुष्ठ, तपेदिक, हैजा, प्लेग और अन्य रोग उसको अब भी घेरे हुए हैं। इनके कारण लाखों लोग मरते हैं या अपंग हो जाते हैं। स्पष्ट है कि स्वास्थ्यकी तुलनामें अन्तरिक्षकी समस्या हल करना आसान है। स्वास्थ्यकी समस्याएं लोगोंकी सामाजिक, आर्थिक तथा सांस्कृतिक परिस्थितियोंसे बंधी हुई हैं। या फिर क्या यह बात सही है कि कतिपय रोगोंके नियंत्रणके लिए पूरी मात्रामें धन नहीं दिया गया, कर्मचारी मुहैया नहीं किये गये या प्रयत्न नहीं किये गये।

अधिकांश देशोंमें या तो लोगोंको कुष्ठ रोगके बारेमें सही स्थितिका ज्ञान नहीं है, या वे सोचते हैं कि आजकी तकनीकी प्रगतिको देखते हुए यह कोई समस्या नहीं है। कुष्ठ रोगके बारेमें साहित्य, फिल्मों, प्रेस, धार्मिक भाषणों और अन्य आन्दोलनके द्वारा जानकारी दी गयी है। बहुत बार कुष्ठ रोगको बहुत बुरे रूपमें रखा गया है, जिससे रोगियोंकी स्थिति और भी खराब हुई है।

सभी कुष्ठ रोगी एकसे नहीं होते। इनमेंसे काफीका तो तपेदिककी ओर रुझान होता है। अफ्रीकामें ७० प्रतिशत रोगी इसी तरहके होते हैं। कोढ़की जगह दादकी तरह लगती है। कुछ रोगियोंपर बड़ा बुरा प्रभाव पड़ा होता है, और यदि उनका इलाज न हो तो रोग बढ़ता जाता है। इनसे दूसरोंको भी रोग होनेका खतरा रहता है। कुछ ऐसे रोगी भी होते हैं, जो इन दोनोंके बीचके हैं।

रोगका फैलाव रोका जा सकता है, लेकिन स्थानीय, सामाजिक, आर्थिक व सांस्कृतिक परिस्थितियोंके कारण आवश्यक कारवाइयाँ पूरी तरह नहीं हो पातीं।

वि० स्वा० सं० कुष्ठ रोगकी समस्याकी ओर पूरी तरह ध्यान दे रहा है। वह देख रहा है कि कितने लोगोंको यह रोग होता है और काररवाईके क्या-क्या साधन हो सकते हैं।

कुष्ठ रोग कब होता है ?

कुष्ठ रोग किसी भी अवस्थामें और किसी भी जातिमें हो सकता है। वि० स्वा० सं० ने अनुमान लगाया कि १९६५ में संसारमें कुष्ठ रोगियोंकी संख्या एक करोड़ ७ लाख ८६ हजार थी। इनमेंसे ३८ लाख ७२ हजार कुछ हद तक अपंग हो चुके थे। महाद्वीपवार इनकी संख्या इस प्रकार थी; अफ्रीका—३८ लाख ६८ हजार, अमरीका—३ लाख ५४ हजार, एशिया—६४ लाख ७५ हजार, यूरोप—५२ हजार, सागरीय क्षेत्र—३३ हजार।

गत पाँच सालमें, पाँच लाखसे अधिक रोगी पहचाने जा सके हैं और ७५ देशोंमें दर्ज हो चुके हैं, लेकिन मौतों और नियंत्रणसे छूटको ध्यानमें रखते हुए, १९७० में कुष्ठ रोगियोंकी संख्या १९६५ की अनुमानित संख्याके लगभग बराबर ही थी। ऐसा अनुमान है कि अधिकांश देशोंमें रोगियोंकी संख्या उतनी ही रहती है।

देशीय या स्थानीय कुष्ठ रोगकी गंभीरता केवल इस रोगके फैलने, इसके बढ़ने तथा कुष्ठ रोगियों और उनके परिवारोंके मानवीय और सामाजिक परिणामोंसे नहीं मालूम हो सकती। आर्थिक बातोंको भी ध्यानमें रखना होगा। रोगको नियंत्रणमें करनेके लिए सरकारोंका यह दायित्व है कि वे लम्बे समय तकके लिए कार्यक्रमोंपर काफी धन खर्च करें। अनेक अपंग रोगी अनेक देशोंके लिए जनशक्तिमें कमी पैदा कर देते हैं। कुष्ठ रोगके बारेमें पुरानी बातें भी चली आ रही हैं, लेकिन स्वास्थ्य शिक्षाके साथ-साथ ये समाप्त हो रही हैं।

विश्वास किया जाता है कि कुष्ठ रोगका कारण बैसीलस माइकोबैंकटीरियम लेप्रे हैं, जिसको बढ़ाना मुश्किल हो रहा है। न इस रोगको प्रयोगशालाके पशुओंपर फैलाया गया है। हालके वर्षोंमें अनुसंधानकर्त्ताओंने चूहोंमें इस बैसीलसको स्थानीय रूपसे (प्रारंभमें अमरीकामें) बढ़ाया और टीके लगे पशुओं (ब्रिटेन व रूस) में बैसीलसको फैलाया गया।

लेप्रोमेटस कुष्ठ रोग सबसे अधिक लगनेवाला होता है। एक जाँच-पड़ताल करनेवालेके अनुसार एक ग्राम लेप्रोमेटस टिशूमें सात अरब बेसीलस हो सकते हैं। तपेदिक वाले रोगमें छूतकी मात्रा कम होती है। फिलीपीनमें तपेदिकवाले रोगियोंकी अपेक्षा लेप्रोमेटससे चार गुना अधिक रोगी होते हैं। कुष्ठ रोगके लगनेकी पड़ताल मुश्किल हो जाती है, विशेषतः बच्चोंमें, जिनमें रोग फैलते-फैलते तीनसे पाँच साल लग जाते हैं।

यहाँ इस बात पर बल दिया जाना चाहिए कि अधिकांश लोग कुष्ठ रोगको नहीं पकड़ सकते। इसलिए किसी आबादीमें रोगका फैलाव सीमित होता है। यह भी मालूम हुआ है कि पति-पत्नियोंमें आपसमें रोग कम फैलता है और कुछ ही बच्चोंके कुष्ठ रोगियोंके संपर्कमें आनेपर रोग होता है। फिलीपीनके एक कुष्ठ आश्रममें कुछ बच्चोंको रखा गया, जिनमेंसे ३६·२ प्रतिशतको रोग हुआ।

पचास साल पहले सबसे भयंकर कुष्ठ रोग प्रशांत सागरके नौरन द्वीपमें हुआ। इस द्वीपकी १,५०० की आबादीमेंसे ३० प्रतिशत लोगोंमें कुष्ठ रोगके लक्षण आये। फिर भी जिन देशोंमें कुष्ठ रोग सबसे अधिक होता है, उनमें यदि एक हजार की आबादीमें ५० भी रोगी हो जायँ, तो बहुत बड़ी बात है।

कभी-कभी ऐसा भी होता है कि कुष्ठ रोगके दाग मिट जाते हैं। फिलिपीनमें जिन ७७ प्रतिशत बच्चोंका इलाज नहीं किया गया, वे बड़े होने तक बिलकुल ठीक हो गये। भारतमें किये गये एक अध्ययनके अनुसार लगभग ६५ प्रतिशत रोगियोंमें रोग एकाएक रुकते देखा गया।

कुछ अध्ययनोंके अनुसार कुष्ठ रोग कुछ परिवारोंमें ज्यादा होता है। कुछ देशोंमें यह गरीबोंमें ज्यादा होता है।

रोगका इलाज

इलाजके लिए इस समय जो दवा इस्तेमालकी जाती है, उसे 'डैपसोन' कहते हैं। इसे खाया जाता है। कुछ और दवाइयोंकी परीक्षाकी गयी है, जिनमेंसे कुछसे लाभ भी हुआ है। कुष्ठ रोगपर वि० स्व० सं० की १९७० की विशेषज्ञ समितिका मत है कि दवाको लोकप्रिय बनानेके लिए डैपसोनको खिलानेकी विधि सबसे अच्छी है।

अनेक केन्द्रोंमें अनुभवोंसे मालूम हुआ है कि दस साल तक उक्त दवाके प्रयोगसे कुष्ठ रोग ठीक हो जाता है। जिन व्यक्तियोंमें कुष्ठ रोगके चिह्न देखे जाते हैं, उनमेंसे पाँच साल बाद ९० प्रतिशत रोगी ठीक हो जाते है। वास्तवमें किसी कुष्ठ रोग नियंत्रण कार्यक्रममें यदि मरीजोंकी देखभाल ठीकसे की जाय तो बहुत थोड़े समयमें ही रोग फैलनेकी संभावनाबहुत कम हो जाती है। फिर भी कुष्ठ रोगके बहुत गम्भीर मामलोंमें डैपसोनका असर कम होता है। यही इसकी कमी है।

कुष्ठ रोगियोंके इलाजमें बहुत समय लग जाता है, इसलिए अधिकांश रोगी अपना इलाज नियमित रूपसे नहीं करा पाते। अनेक इलाज कराते ही नहीं और ऐसे मामले नियंत्रणसे बाहर हो जाते हैं। इसके अतिरिक्त जिन व्यक्तियोंका कोढ़ नियंत्रण में आ गया होता है, उनका कोढ़ फिर वापस आ जाता हैं क्योंकि वे अपना इलाज नियमित रूपसे नहीं कराते। लगभग ५० प्रतिशत रोगियोंका रोग नौ सालके बाद फिर लौट आता है। रोगी लम्बे समय तक रोग फैलानेकी क्षमता रखते हैं, इसलिए कतिपय क्षेत्र अनेक दशकों तक रोगके शिकार रहते हैं।

कुष्ठ रोगकी रोकथामके लिए डैपसोनका असर मालूम करनेके लिए भारत और फिलिपीनमें वि० स्वा० सं०

की सहायतासे जाँच-पड़ताल की गयी है। जो बच्चे छूतके रोगियोंके संपर्कमें आये और जो बच्चे कुष्ठाश्रममें रहे, उन्हें डैपसोन दवा दी गयी। दोनोंमें ५० प्रतिशत बच्चोंको कुष्ठ रोग होनेसे बचाया गया।

तपेदिककी रोकथामके लिए टीका बी० सी० जी० के तीन नियंत्रण परीक्षण हो रहे हैं। इस टीकेको दो फ्रेंच वैज्ञानिकोंने बनाया था जिनका नाम काल्मे और गुइरीं था। पहला परीक्षण १९६० में यूगांडा, दूसरा १९६२ में पूर्वी न्यू गिनीमें और तीसरा बर्मा में १९६४ में वि० स्वा० संगठनने आरम्भ किया था। यूगांडाके परीक्षण बड़े अजीबो-गरीब हैं। आशाकी जाती है कुष्ठ रोगकेविरुद्ध बी० सी० जी० की उपयोगिता जल्दी मालूम हो जायगी। इसीलिए १९७० की वि० स्वा० संगठनकी कुष्ठ रोग समितिने कुष्ठ रोगकी रोकथामके लिए बी० सी० जी० की सिफारिश करना ठीक नहीं समझा। परीक्षण १० साल तक बढ़ाये जा सकते हैं। बहुत छोटे बच्चों, विशेषतः हालके पैदा हुए बचों, पर बी० सी० जी० का असर देखा जायगा।

जहाँ कुष्ठ रोग फैला होता है, उन क्षेत्रोंकी सामाजिक आर्थिक, स्वास्थ्य संबंधी और सांस्कृतिक स्थिति अच्छी नहीं होती। डाक्टरोंकी कमी होती है और अनेक डाक्टर कुष्ठ रोग नियंत्रण योजनाओंपर काम नहीं करना चाहते। एक क्षेत्रमें पाँच लाख कुष्ठ रोगी दर्ज थे, तब भी वहाँ केवल पाँच ही डाक्टर थे। कुष्ठ रोगियोंमें काम करनेके लिए वेतन अधिक नहीं है, इसलिए डाक्टर अन्य काम करना पसन्द करते हैं या अपनी प्राइवेट प्रैक्टिस करते हैं। कुष्ठ रोग कार्यक्रमोंमें कुछ ऐसे लोग भी आ गये हैं, जिनमें कोई तकनीकी योग्यता नहीं है। राजनीतिक अस्थिरताके कारण भी स्वास्थ्य कार्यक्रमोंके विकासमें बाधा पड़ी है।

अनेक देशोंमें कुष्ठ रोगोंको अन्य रोगोंकी तुलनामें बहुत कम तरजीह दी गयी है। उन देशोंमें जहाँ यह फैला होता है, स्वास्थ्य सेवाएं उन अधिक गंभीर रोगोंमें लगीं होता हैं, जो अधिक व्यापक हैं और जिनके कारण अधिक मौतें होती हैं। अनेक देशोंमें स्वास्थ्य सेवाओंका ढांचा ढीला है और कुछ ही में ठीक है। फलस्वरूप कुष्ठ नियंत्रणके प्रति स्वास्थ्य इकाइयोंका योग असंतोषजनक या सीमित ही है। अनेक मेडिकल स्कूलोंमें कुष्ठ रोगके विषयमें नहीं पढ़ाया जाता। धन भी बहुत सीमित होता है और आयोजन व कार्यक्रमोंके अभावमें साधनोंका भी पूरा-पूरा लाभ नहीं उठाया जाता।

जब रोगियोंकी पहिचानका काम तेजीसे शुरू होता है, तो अनेक रोगियोंके बारेमें मालूम होता है, और कुछ समय तक साल-दर-साल रोग बढ़ता जाता है। यह इसलिए कि (१) नये पहिचान वाले मामलोंकी संख्यामें वृद्धि होती है, (२) कुष्ठ रोग पुरानी बीमारीसे पनपता है, (३) किसी रोगपर नियंत्रण करनेके लिए वर्षों लग जाते हैं, और (४) सल्फोनोंकी सहायतासे कुष्ठ रोगसे मौतें बहुत कम कर दी गयी हैं।

नये रोगियोंकी पहिचानसे अनेक समस्याएं उत्पन्न होती हैं। हर रोगीसे प्रभावित कमसे कम चार व्यक्तियों-की जांच-पड़ताल करनी पड़ती है, जिससे काम बहुत बढ़ जाता है, और दवाइयों, डाक्टरों अन्य कर्मचारियों, बाहरी रोगियोंके लिए दवाखानों और साजसामान पर खर्च भी अधिक होता है। अधिकांश सरकारें यह खर्च बर्दाश्त नहीं कर पातीं। इसके अतिरिक्त कर्मचारियों और सुविधाओंके अभावमें स्वास्थ्य सेवाओंके लिए सभी रोगियोंपर नियन्त्रण करना मुश्किल हो जाता है और भारी जनसंख्यावाले विशाल क्षेत्रोंमें कुष्ठ रोगियोंके संपर्कमें आनेवाले व्यक्तियोंकी जाँच-पड़ताल भी नहीं हो पाती। सीमित धनपर काम करनेवाली सरकारें यह अनुभव कर सकतीं हैं कि कुष्ठ रोग कार्यक्रम एक बोझ है और इसके सम्बन्धमें परिणाम इतनी जल्दी नहीं मिलते, जितने और रोगोंमें मिल जाते हैं।

संसारके अनेक देशोंमें कुष्ठ रोगके प्रति प्रतिकूल भावना है। इसके कारण अनेक मामले स्वास्थ्य अधि-कारियोंके सामने आनेसे रह जाते हैं। फिर कुष्ठ रोगके मामले बहुत देरसे पहिचानमें आते हैं। जिनको घरोंमें रोग नहीं पकड़ता उनकी पहिचान और भी मुश्किल है।

(शेष पृष्ठ २१ पर)

क्षय रोग एवं मधुमेह

—डा० (कु०) सन्दोहन रस्तोगी—

क्षय रोग जीवाणुओं द्वारा फैलनेवाला एक संक्रामक रोग है जो कि रोगसे पीड़ित व्यक्ति के बलगममें पाये जाते है । अधिकतर इस रोगके जीवाणु रोगी द्वारा थूकने व खांसते इत्यादिके कारण वायुको दुषित करके स्वस्थ्य व्यक्ति हींमें प्रवेशकर रोग फैलाते है । इसके विपरीत मधुमेह न तो जीवाणुओं द्वारा उत्पन्न होता है और न ही संक्रामक है, तथापि यह क्षय रोगके समान ही काफी जटिल एवं घातक है । मधुमेह रोगियोंके शरीरमें कुछ इस प्रकारके जीव रसायनिक परिवर्तन होते हैं कि उनके रक्तमें शक्करकी मात्रा सामान्यसे अधिक हो जाती है । रोग बढ़नेपर मूत्रमें भी थोड़ी या अधिक मात्रामें शक्कर पायी जाती है । माता या पिताको यह रोग होनेपर बच्चोंमें भी इसकी काफी संभावना रहती है । इसके अतिरिक्त अन्य शारीरिक कारण भी हो सकते है । संतुलित भोजन एवं दवाओं द्वारा मधुमेह पर नियंत्रण तो जीवन पर्यन्त रखा जा सकता है लेकिन निदान संभव नहीं है । इसके विपरीत क्षय रोगका पूर्ण निदान दवाओं द्वारा सरलता से किया जा सकता है ।

क्षयरोगसे पीड़ित व्यक्तियोंमें मधुमेह होना या विपरीत स्थिति एक जटिल समस्या है । मधुमेहके कारण हुए शारीरिक परिवर्तनोंसे शरीरकी क्षयरोगसे लड़नेकी शक्ति क्षीण हो जाती है जिससे रोगके तेजीसे बढ़नेकी आशंका रहती है । इसके अतिरिक्त क्षयरोगका उपचार एवं निदान भी कठिन हो जाता है । ऐसी अवस्थामें यदि मधुमेहपर ठीक प्रकार नियन्त्रण न रखा जाय तो क्षयरोगसे लड़नेकी शक्ति क्षीण हो जाती है जिससे रोगके तेजीसे बढ़नेकी आशंका रहती है । इसके अतिरिक्त क्षयरोगका उपचार एवं निदान भी कठिन हो जाता है । ऐमी अवस्थामें यदि मधुमेहपर ठीक प्रकार नियन्त्रण न रखा जाय तो क्षयरोगका उचित रूपसे उपचार करने पर भी रोग ठीक न होनेके साथ ही बढ़नेकी सम्भावना भी हो सकती है । इसी प्रकार क्षयरोगका ठीक उपचार न होनेपर मधुमेहका नियन्त्रण भी कठिन हो जाता है । अतः दोनों रोगोंका उपचार एवं नियन्त्रण आवश्यक है ।

रोगकी पहचान

जिस प्रकार क्षयरोगकी निश्चित पहचानके लिए शारीरिक लक्षणों एवं अन्य जाचोंमें रोगके जीवाणुओंकी खोज सबसे महत्वपूर्ण है, उसी प्रकार मधुमेहके लिए रक्त तथा मूत्रमें शक्करकी मात्रा मापना आवश्यक है । मूत्रमें शक्करकी थोड़ी मात्रा भी मधुमेहकी निश्चित पहचान है । रक्तमें शक्करकी मात्राके आधारपर मधुमेहकी साधारणतया तीन अवस्थाएँ ही सकती है—

(१) **आरम्भिक अवस्था**—प्रातःकाल बिना कुछ खाये रक्त परीक्षामें शक्करकी मात्रा ८० से १२० मिलीग्राम प्रतिशत तथा भोजनके लगभग २ घंटे बाद रक्त परीक्षा में १४० से २०० मिलीग्राम प्रतिशत ।

(२) **तीव्र अवस्था**–प्रातःकाल रक्त परीक्षामें १२० से १४० मिलीग्राम प्रतिशत एवं भोजनके पश्चात् २०० से ३०० मिलीग्राम प्रतिशत शक्कर की मात्रा ।

(३) **अतितीव्र अवस्था**—प्रातःकाल रक्त परीक्षा में शक्करकी मात्रा १८० मिलीग्राम प्रतिशतसे अधिक तथा भोजनके बाद ३०० मिलीग्राम प्रतिशत से अधिक ।

उपचार एवं नियंत्रण

साधारणतया केवल क्षयरोगके लिए दवाओंका प्रयोग लगभग १½ वर्ष तक करनेकी राय दी जाती है । लेकिन मधुमेहके साथ क्षयरोग होनेपर इन दवाओंका सेवन कमसे कम २ वर्ष तक करना आवश्यक है । इसके साथ ही मधुमेहपर नियंत्रण भी नितान्त आवश्यक है । क्षयरोगके उपचारके पश्चात् भी मधुमेहपर नियंत्रण जीवन पर्यन्त होना चाहिये । क्षयरोगके उपचारके साथ मधुमेहपर नियंत्रण निम्न प्रकार किया जा सकता है—

(१) मधुमेहपर नियंत्रणके लिए इन्सुलिन इन्जेक्शनका प्रयोग किया जाता है। केवल आरम्भिक अवस्थामें ही मधुमेह नियंत्रणके लिए मुँह द्वारा लेनेवाली गोलियोंका प्रयोग किया जा सकता है।

(२) इन्सुलिनकी मात्रा तबतक धीरे-धीरे बढ़ानी चाहिये जबतक कि भोजनसे पहले एवं बादमें की गयी मूत्र परीक्षामें शक्करकी मात्रा बिल्कुल न रहे।

(३) मधुमेहपर नियंत्रणकी निश्चित पहचान भोजनसे पहले व भोजन के १½ घंटे बाद रक्त परीक्षा द्वारा की जानी चाहिये। दोनों ही रक्त परीक्षाओंमें शक्करकी मात्रा सामान्य होनेपर यह कहा जा सकता है कि मधुमेह पूर्णतया नियंत्रित है।

(४) इस प्रकार नियंत्रणके लिए घुलनशील इन्सुलिनके इन्जेक्शन प्रतिदिन सुबह एवं शामको लगाये जाते हैं। नियंत्रण निश्चिंत होनेपर इसके स्थानपर अधिक समय तक कार्य करने वाली लेन्टे-इंसुलिन प्रतिदिन एक बार प्रयोग की जा सकती है। इसके कुछ समय पश्चात् इन्सुलिनकी मात्रा आंशिक रूपसे कम करके या पूर्णतया समाप्त होने पर इसके स्थानपर मुँह द्वारा लेने वाली गोलियोंका प्रयोग करनेका प्रयत्न करना चाहिये।

(५) प्रारम्भसे ही क्षयरोगकी दवाओंका प्रयोग ठीक प्रकार करना चाहिये एवं कमसे कम २ वर्ष तक ये दवाएं अवश्य ही लेनी चाहिये।

(६) उपचारकी सफलता आंकने एवं संभावित शल्य क्रियापर विचार करनेके लिए समय-समयपर रोगी की जांच अवश्य होनी चाहिये। मधुमेहपर पूर्ण नियंत्रण रखते हुए आवश्यकता होनेपर शल्य क्रिया बिना किसी भयके की जा सकती है।

(७) मधुमेह नियंत्रणकी जांच प्रति तीन माह पश्चात् रक्त परीक्षाओं द्वारा करते रहना चाहिये।

(८) सुनिश्चित भोजन समयानुसार करना चाहिये एवं भोजनमें कार्बोहाइड्रेट पर विशेष प्रतिबन्ध नहीं होना चाहिये। रक्तमें शक्करकी मात्राका नियंत्रण भोजनपर प्रतिबंधकी अपेक्षा दवाओं द्वारा करना चाहिये।

रोकथामके उपाय—

(१) सभी मधुमेह रोगियोंकी कमसे कम प्रतिवर्ष एक बार वक्ष-एक्सरे परीक्षा अवश्य होनी चाहिये तथा अधिक शारीरिक भारवाले व्यक्तियोंमें इससे भी शीघ्र होनी चाहिये।

(२) सभी मधुमेह रोगियोंको बी० सी० जी० का टीका लगाना चाहिये। ट्यूबरकुलिन पोजिटिव मधुमेह रोगी जो किसी क्षय रोगीके संपर्कमें रहते हों, उनकी आई० एन० एच० दवा द्वारा रक्षा करनी चाहिये।

(३) किसीमधुमेह रोगीका वजन कम होने, खांसीकी शिकायत होने या नियंत्रणके लिए अधिक इन्सुलिनकी आवश्यकता होनेपर उसका वक्ष एक्सरे तथा बलगमकी जांच क्षयरोगके संदेहको दूर करनेके लिए शीघ्र होना चाहिये।

यद्यपि तीव्र मधुमेहके साथ क्षयरोग होनेपर परिणाम भयंकर होता है, तथापि मधुमेहपर पूर्ण नियंत्रणके साथ क्षयरोगका तीव्र उपचार करनेपर परिणाम बहुत ही संतोषजनक होते है।

(शेष पृष्ठ १३ का शेषांश)

व्यवहार भी करना पड़ सकता है। इसलिए बच्चोंको किसी अहितकर कार्यसे वर्जित करते समय हमें दोनों प्रकारके व्यवहारका सहारा लेनेको तत्पर रहना चाहिए।

बच्चोंपर अपनी पसंद थोपना अहितकर

बच्चोंको किसी कार्य-विशेषके करने न करनेकी आज्ञा देनेके लिए आपको बच्चोंकी प्रत्येक मनोवृत्तिके प्रति सजग रहना होगा, उन्हें उचित पथ-निर्देशन देने हेतु तत्पर रहना आवश्यक होगा। आप अपने इस कर्तव्यको कितनी तत्परतासे निभाते हैं, इससे आपकी बुद्धिमत्ताका प्रत्यक्ष प्रदर्शन होगा। इस सम्बन्धमें यह भी ध्यान रखें कि बच्चोंको आप केवल उन्हीं कार्योंके लिए मना करें जो वास्तवमें उनके लिए अहितकर हैं, उन कार्यों के लिए न वर्जित करें जो जो कि बच्चोंके लिए तो हितकर हैं किन्तु आपको पसन्द नहीं हैं। अपनी पसन्द बच्चोंपर थोपकर आप उन्हें अन्तर्मुखी प्रकृतिका न बनायें।

आम के उत्पाद

आम देशभरमें उत्पादित फलोंमें सबसे मुख्य फल है। भारतमें पैदा होनेवाले आमोंकी करीब ४४ मुख्य व्यापारिक किस्मोंमें ३५ किस्मके आम सिर्फ खानेके काम आ सकते हैं। आमकी असंख्य भारतीय किस्मोंमें उत्तर प्रदेशका सफेदा सरौली और दसहरी, रत्नगिरिका आलफोंजो, मैसूरका बादामी, आंध्र प्रदेशका बैंनिशान, मद्रास व मैसूरका नीलम, रसपुरी तथा मुलगोआ, डिब्बा- बन्द उत्पाद तैयार करने और परिरक्षित करनेमें अति उत्तम रहते हैं। बंगलोरा किस्मका आम भी काफी उपयुक्त रहता है। अधिक रसदार या रेशेदार आम डिब्बाबन्दीके लिए अच्छे नहीं रहते।

आमका स्क्वैश

ताजे, अच्छी तरह पके, रसीले तथा स्वस्थ आम लीजिये और ताजे पानीसे अच्छी तरह धोइये। फलोंको दोनों हथेलियोंसे मलमलकर गूदेको पिलपिला कर दीजिये। फलोंके डंठल निकालकर, हाथोंसे भींचकर रस निचोड़िये। रस निचोड़ते समय रबड़के दस्ताने अवश्य पहनिये। इस कार्यके लिए फलोंसे गूदा निकालने की मशीन भी काममें लायी जा सकती है।

आवश्यक परिमाण

फलका गूदा	१ कि० ग्रा०
पानी	१ ,, ,,
शक्कर	१ ,, ,,
साइट्रिक अम्ल	३० ग्रा०
खानेका नारंगी रंग	स्क्वैशको आकर्षकबनाने केलिए इच्छानुसार

ऊपर लिखी सामग्री सही परिणाममें लेकर अच्छी तरह मिलाइये। जहाँतक संभव हो, गर्म मत कीजिए। महीन कपड़ेसे छानकर उसमें प्रति किलोगाम रसमें, ७१५ मिलीग्रामके हिसाबसे 'पोटाशियम मैटाबाईसल्फाइट' नामक रासायनिक पदार्थ मिलाइये। इसे मिलानेसे स्क्वैशकी परिरक्षामें सहायता मिलती है। परिरक्षामें सहायक पदार्थोंको परिरक्षी कहते हैं। पोटाशियम मैटाबाइसल्फाइट किसी कैमिस्टकी दूकानपर मिल सकता है। सही मात्रामें लेकर इसे थोड़ेसे स्क्वैशमें घोलिये और फिर सारे स्क्वैशमें मिला दीजिए।

इसके बाद, १५-२० मिनट तक पानीमें उबाली हुई साफ, सूखी बोतलोंमें, गर्दनके पास २.५-३७५ सें. मी. जगह खाली छोड़कर, स्क्वैश भर दीजिये। क्राउन कार्कके बजाय मामूली कार्कको पानीमें भिगोकर लगा सकते हैं। इन स्क्वैश भरी बोतलोंको सूखे व ठंढेस्थानपर रखिये।

आमका मुरब्बा

पूर्ण विकसित, कड़े पीले गूदेवाले गद्दर आम लीजिये ढीले गूदेवाले आम इस्तेमाल न कीजिये। स्टेनलेस स्टीलके चाकूसे लम्बी फांकें या मनपसंद आकारके टुकड़े काट लीजिये। इसके बाद नमकके मन्द घोल या पानीमें रखिये। ऐसा करनेसे फल काले नहीं पड़ते। अब फांकोंको महीन कपड़ेमें लपेटकर उबलते पानीमें ५-१० मिनट रखिये, जिससे वे मुलायम पड़ जायें। बादमें साफ कपड़ेपर बिछा दीजिये, और कांटों या बाँसकी नुकीली खपच्चियोंसे गोदिए। फांकों या टुकड़ोंके बराबर तोलकी शक्कर लीजिये। शक्करमें तीन गुना पानी मिलाकर उबालिये और चाशनी तैयार कीजिए। उसमें प्रति कि०ग्रा० शक्करके लिए १.५-२ ग्राम साइट्रिक अम्ल मिलाइये। चाशनी कुछ गाढ़ी होनेपर आमकी फांकें उसमें डाल दीजिए, और ढक दीजिए। चाशनीका ताप १०६°-१०७° सें० (समुद्रतल पर) होनेतक अथवा तीन तारकी चाशनी बननेतक गर्म करते रहिए। समुद्रतलसे अपने स्थानकी ऊंचाई ज्ञात करके, प्रति १५० मीटरकी अधिकताके लिए उक्त तापमें ०.६° सेण्टीग्रेड कम कर देना चाहिए। मुरब्बा तैयार हो गया। इसे ठंडा कीजिये; उबलते पानी में १५-२० मिनट गर्म करके साफ किए हुए चीनी मिट्टी या कांचके मर्तबानों में भरिए।

सेब आदि फलों और गाजरोंके मुरब्बे भी इसी प्रकार तैयार किये जा सकते हैं ।

अमावट बनाना

पूरी तरह पक्के, रसदार, चूसनेके काम आनेवाले आम छांटिए । ज्यादा पके, दगीले, सड़े गले फल काममें मत लाइये, क्योंकि उनके इस्तेमालसे अमावट बदबूदार हो जाती है । आमोंको ताजे पानीसे साफ़ कीजिये । हाथोंसे मलमलकर आम पिलपिलाइए और फिर रस (गूदे सहित) निकालिये । रस निकालनेसे पहले हाथोंमें रबड़ दस्ताने पहनने जरूरी हैं । मशीनसे भी रस प्राप्त किया जा सकता है । प्राप्त रसको जालीदार कपड़ेसे छान लीजिये । छाननेके लिए मच्छरदानीका कपड़ा काफ़ी है । इस तरह मोटे रेशे निकल जाते हैं और गूदे व रसका एकरूप मिश्रण प्राप्त हो जाता है । ८४ सें०मी० × ६० सें०मी० आकारवाली तांबे या पीतलकी (कलईदार) ट्रेओंमें आमके इस मिश्रणकी एक परत फैला दीजिये । ट्रेओंका भीतरी भाग कलईदार होना जरूरी है; इससे आमका रस ट्रेके धातुसे कोई रासायनिक क्रिया नहीं कर सकेगा । थाली या ट्रेमें चिकना कागज (बटर पेपर) बिछानेसे अमावट उसमें चिपकती नहीं है और आसानीसे निकल आती है । जालीदार कपड़ेसे ट्रेको ढककर धूप में रखिए । इस तरह, एक परत सूख जानेपर दूसरी परत, तीसरी परत, और परत पर परत जमाते जाइये ताकि मोटाई ०.६ से १.२५ सें०मी० हो जाय । यह मोटे पापड़ जैसी चीज ही अमावट कहलाती है । अमावटकी उसी सूखी परतको गंधकके धुयेंमें थोड़ी देर रखिए । ऐसा करनेसे अमावटका रंग काफी दिन तक आकर्षक रहता है । बन्द बक्समें गन्धक जलानेसे धुआं प्राप्त हो सकता हैं । अमावटको छोटे-छोटे टुकड़ोंमें, पंजीरीकी तरह, काटकर चिकने कागजमें लपेटिये और कांचके मर्तबानोंमें संगृहीत कीजिये ।

आमकी मीठी चटनी

कच्चे, कड़े, पूरे विकसित, पीले गूदेवाले आम लेकर ठण्डे पानीसे धोइये । स्टेनलेस स्टीलके चाकूसे ऊपरी हरा छिलका उतारकर आमोंको कस लीजिये या बहुत महीन टुकड़ोंमें काट लीजिये । गैर मौसममें आमकी चटनी बनानेके लिए, ५-६ महीने, ६ प्रतिशत नमक घोलमें परिरक्षित छिलकेरहित फांकें इस्तेमाल की जा सकती हैं । चटनीके लिए आगे लिखी चीजें सही मात्रामें लीजिये ।

फांकोंके महीन टुकड़े	१ कि०ग्रा०
शक्कर	१ ,,
नमक	५० ग्रा०
मसाले (दालचीनी, बड़ी इलायची, आदि)	३० ,,
लाल मिर्च	१५ ,,
अदरक	१५ ,,
प्याज कटा हुआ (ऐच्छिक)	६० ,,
लहसुनकटा हुआ ,,	१५ ,,
सिरका	१८० ,,

थोड़ेसे पानीमें गर्म करके टुकड़ोंको मुलायम कीजिये । उसमें उपर्युक्त अनुपातमें शक्कर और नमक डालिये । मिश्रणको थोड़ी देर वैसे ही छोड़ दीजिए ताकि शक्कर और नमक घुल जायें । इसके बाद मिश्रणको गर्म कीजिये । ऊपर लिखे सभी मसाले महीन कपड़ेकी पोटलीमें बांधकर मिश्रणमें लटका दीजिये और गर्म करना जारी रखिये । कलछीसे चलाते रहिये और जब चटनी कुछ गाढ़ी होने लगे, उसमें मसालोंकी पोटलीका सत निचोड़ दीजिये । सिरका मिलाकर, अपेक्षित गाढ़ी होनेतक पकाइये । कुछ ठण्डी करके चटनी बड़ी बोतलों में भर दीजिये, भरनेसे पहिले बोतलें १५-२० मि० पानीमें उबालिये और पोंछकर सुखा लीजिये । हवामें ठण्डी करके भरी हुई बोतलोंपर कार्क लगा दीजिये । चटनी चिकने मर्तबानों में भी रखी जा सकती है ।

तेलमें आमका आचार

कच्चे, निरोग व पूर्ण विकसित आम छांटिये । खासकर खट्टी किस्मके आम इसके लिए अधिक उपयुक्त होते हैं । फलोंको पानीसे धोकर, स्टेनलेस स्टीलके चाकूसे लम्बी-

लम्बी फांकें उतार लीजिये। २३ प्रतिशत नमक घोलमें रखिये जिससे टुकड़े काले न पड़ें। नीचे लिखी सामग्री सही मात्रा में लीजिये—

आमकी फांके	१ कि०ग्रा०
नमक (पिसा हुआ)	२५० ग्राम
मेथी (मोटी पिसी हुई)	१२५ ,,
कलौंजी ,,	३० ,,
हल्दी	३० ,,
लाल मिर्च (पिसी हुई)	३० ,,
काली मिर्च ,,	३० ,,
सौंफ	३० ,,
सरसोंका तेल	इतना कि आचार उसमें डूब जाये

आमकी फांकोंको काफ़ी पिसे नमकके साथ खूब मिलाकर कांच या चीनी मिट्टीके मर्तबानोंमें भरिये और चार-पांच दिन धूपमें रखिये। इस अवधिमें फांकोंसे पानी रिसता रहता है और उनका हरा छिलका पीला पड़ जाता है। इसके वाद शेष सब चीजें मिलाकर थोड़ा तेल मिला-दीजिये। अचार ऐसे दवाकर भरना चाहिए कि उसमें भीतर हवा न भरी रहे। अब उसपर तेल तिरा दीजिये। दो तीन हफ्ते रखिये, फिर इस्तेमाल कीजिये। इस बीच दूसरे-तीसरे दिन देख लेना चाहिये। अगर आवश्यकता हो तो और तेल डाला जा सकता है।

(खाद्य विज्ञानसे साभार (

(पृष्ठ १६ का शेषांश)

छूतका हर रोगी कुछ लोगोंके सम्पर्कमें आता है। इनमेंसे तीनसे पाँच फीसदी और यहाँ तक कि अधिक (कुछ क्षेत्रों में १२ प्रतिशत) लोग तीनसे पाँच सालकी अवधिमें कुष्ठ रोग पकड़ सकते हैं। यदि इनका इलाज न किया जाय तो अनेक नये रोगी छूतके रोगी बन जाते हैं और इस प्रकार छूतकी नयी कड़ी शुरू कर देते हैं, जिनमें और अधिक लोग रोग की चपेटमें आ सकते हैं। अन्तमें एक जगहसे दूसरी जगह जाने और शहरीकरणके कारण कुष्ठ रोगके फैलनेका खतरा और बढ़ गया है।

विश्व स्वास्थ्य संगठन विभिन्न देशोंको तकनीकी सहायता देता है, जिनमें स्थायी सलाहकार, क्षेत्रीय सलाहकार और जेनेवामें सदर मुकामके कर्मचारी शामिल हैं। संगठनके आगे रहनेसे कुष्ठ रोगपर नियंत्रणकी विधियोंमें सुधार किया गया है। संगठनने इस बात पर जोर दिया है कि अस्पतालोंमें रोगियोंकी संख्या कम की जाय। वह कुष्ठ रोगियोंके वच्चोंके लिए विशेष संस्थानोंकी जरूरतको नहीं मानता। छूतके रोगियोंके उपचार तथा उनके संपर्कमें आनेवाले व्यक्तियोंकी जाँच-पड़तालको तरजीह देनेकी कोई प्रणाली होनी चाहिए। कुष्ठ रोग नियंत्रण कार्यक्रम आम स्वास्थ्य सेवाओंके साथ चलने चाहिए। किसी विशेष कानूनकी जरूरत नहीं है। जिस तरहके कानून महामारी रोगोंके लिए हैं, वैसे ही कुष्ठ रोगके लिए हो सकते हैं। कुष्ठ रोग योजनाओंके आयोजन, कार्यक्रम बनाने और मूल्यांकन करनेमें सुधार होना चाहिए। अंतमें नियंत्रणके लिए धन शल्य-चिकित्सामें नहीं लगाना चाहिए। नियंत्रण का उद्देश्य जल्दी जाँच-पड़तालके द्वारा अपंग होनेसे बचाना होना चाहिए।

●

अस्पतालमें एक नयी नर्सने पूछा, 'किसका आपरेशन किया जा रहा है?'

'एक राहगीरका, दुर्घटनावश जिसके गलेके नीचे एक गोल्फ बाल चला गया।'

'ओफ! तो क्या उसका ही कोई रिश्तेदार परेशान होकर हालमें इन्तजारकर रहा है?'

'नहीं, वह तो गोल्फका खिलाड़ी है। अपना बाल पानेके लिए बैठा है, ताकि खेल जारी रखा जा सके।'

मंदित बच्चोंमें नेतृत्वकी संभावना

—श्री राम सुरेश लाल—

किसी ज्ञात या अज्ञात, जन्मजात अथवा अन्य कारणों या विधिके विधानसे ही, एक मंदित बालक समाजमें उपेक्षा, अनादर और दयाका पात्र इसलिए बन जाता है कि उसके पास सामान्य मानव बननेकी न्यूनतम संभावनाएं ही होती हैं। जहां सामान्य अथवा उससे ऊंचे बुद्धि-स्तरवाले बालक अपनी किलकारियों, हाव-भाव, प्राकृत चंचलता तथा अर्थपूर्ण दृष्टिपातसे दर्शकको मुग्ध कर लेते हैं, वहीं मंदित बालक उपर्युक्त गुणों अथवा लक्षणोंसे रहित होकर चिन्ता, आत्मग्लानि तथा उपहासके पात्र बन जाते हैं, माता-पिता अपने भाग्यको कोसते हैं तथा अपने कृत्योंके लिए पश्चात्ताप करते हैं।

ऐसे बच्चोंमें मानसिक मंदताके लक्षण प्रथम वर्षके अन्दर ही दृष्टिगत हो जाते हैं। दूसरे वर्षमें बालक ज्यों ही प्रवेश करता है, उससे अपेक्षित सामान्य व्यवहारोंके अभिभावक चिन्तित हो उठते हैं। बच्चेमें आत्म-साक्षात्कारकी भावना बिल्कुल नहीं रहती। वह न तो अपनी विकसमान अहंकी शक्तियोंका ही प्रयोग कर सकता है, न ही वह अभाव, निराशा अथवा निरादरकी भावनाके प्रति विद्रोहात्मक व्यवहार प्रदर्शित कर पाता है। प्रथम वर्षके प्रारम्भ में ही जहाँ विश्वास और सामाजिक आस्था अथवा 'तोष' की भावना परिलक्षित होना चाहिए, वहां इसका सर्वथा अभाव ही दिखता है।

इसका सर्वप्रथम कारण यह है कि बालकमें अनुभूति एवं प्रतिरोधकी भावनाएं निर्मित नहीं हो पातीं। मानसिक मंदताके कारण उन्हें कठिनसे कठिन उपायों द्वारा शौच प्रशिक्षण मिलता है। उसका फल कुछ भी नहीं होता अथवा तुलनात्मक दृष्टिसे बहुत कम होता है। फलस्वरूप अभिभावकोंकी कठिनाइयां तथा बालकोंकी समस्याएं बढ़ने लगती हैं। मंदित बच्चोंकी सबसे बड़ी समस्या यह होती है कि जहां उनकी कार्य-संपादन क्षमता अपेक्षाकृत न्यून होती है वहीं उनके माता-पिता स्पर्धा-ग्रस्त होकर अन्य सामान्य बच्चोंके समकक्ष ही उनसे अपेक्षाएं करने लगते हैं। इसी प्रकार आगामी वर्षोंमें विषमलैंगिक अभिभावकीय प्यारका निर्माण तथा कामनासृजन भी बालकोंमें नहीं हो पाता। बालकोंकी भावनाओं, इच्छाओं और क्रियाओंमें कोई समन्वय नहीं होता।

बालक क्या चाहता है, क्या सोचता है तथा उसकी क्रियाओं एवं आन्तरिक उथल-पुथलमें कौन सा सम्बन्ध है, यह समझ में नहीं आता। इसी प्रकार वह जो चाहता है वह मिल नहीं पाता। जो सोचता है वह हो नहीं पाता और जो करना चाहता है वह न होकर दूसरा हो जाता है, इसे मनः सामाजिक असन्तुलन कहें, असंगत व्यक्तिगत क्रियाकलाप कहें अथवा सभी पहलुओंके प्रति नकरात्मक दृष्टिकोण ही अपना लें—कोई गलत न होगा। बड़ा होनेपर यही बालक आत्मनिर्देश रहित होकर पूर्णतया परावलम्बी तथा परमुखापेक्षी हो जाता है। ऐसी स्थितिमें उसके लिए दया मिश्रित घृणाभाव बनता जाता है जो बढ़ते-बढ़ते वैयक्तिक स्तरसे सामूहिक स्तरपर व्याप्त हो जाता है। साधारणसे साधारण खेलकूदके नियमोंको भी वह नहीं समझ पाता। समवयस्कों द्वारा बार-बार अयोग्य करार दिया जाता है। इस प्रकार, समूहके अन्तर्गत उसके लिए कोई भी सम्माननीय स्थान या उत्तरदायित्वपूर्ण कार्यकी सुविधा नहीं रह जाती।

आवश्यक परिस्थितियाँ

आंकड़ोंके अनुसार तीन प्रतिशत लोग मानसिक बाधासे किसी न किसी स्तरपर ग्रस्त है। अतः मोटे तौरपर सौ बच्चोंमें तीन बच्चे मंदित बालक कहे जा सकते हैं। किन्तु यह विवरण सही भी हो सकता हैं, गलत भी। किसी-किसी मुहल्लेमें २० बच्चोंमें भी तीन बच्चे मंदित बालक हो सकते हैं और किसी दूसरे मुहल्लेमें सौ में एक भी न मिले। अतः सर्वप्रथम ऐसे बच्चोंका

सर्वेक्षण होना चाहिए। जो बच्चे मंदित हों उनके नामों के आगे उनकी मंदताका प्रकार या स्थिति, उनकी बुद्धि लब्धि तथा उनके लिए आवश्यक वातावरण निर्माणकी योजना, उपचारकी व्यवस्था तथा उचित निर्देशोंका निश्चय होना चाहिए। मनोवैज्ञानिक परीक्षणों द्वारा उनकी अधिकतम क्रियाशीलताका पता लगाना चाहिए तथा उनकी अभिरुचि एवं सामाजिक प्रौढ़ताको बनाने वाले तत्वोंका विश्लेषण होना चाहिए। यह कार्य जितना ही व्यापक एवं सघन होगा उतना ही मंदित बालकोंका कल्याण होगा। इस प्रकार अनुकूल परिस्थितियोंके निर्माणके अतिरिक्त भले ही उनकी बुद्धि लब्धिमें महान अन्तर न आये, फिर भी उनकी कार्यक्षमता, कार्य-कुशलता तथा अभिरुचिके अनुसार मार्गदर्शनको दिशा दी जा सकती है। यहां मानसिक रूपसे बाधित बच्चोंके लिए परिस्थिति-निर्माणमें सहायक मूलभूत मान्यताएं दी जा रही हैं—

१. मंदित बच्चे अपनी क्रियाओंका विस्तार तथा क्रिया-शीलताका विकास सामान्य (१०० बुद्धि लब्धि या इससे ऊपर वाले) बच्चोंके साथ नहीं कर सकते।

२. मंदित बच्चोंको सामान्य बच्चों (१०० बुद्धि लब्धि या इससे ऊपर वाले) के साथ कोई भी कार्य करना या शिक्षा-ग्रहण करना नहीं सिखाया जा सकता।

३. मंदित बच्चोंका विकास उनके समान स्तरकी बुद्धि लब्धि वाले बच्चोंके समूहमें ही संभव है।

४. मानसिक रूपसे बाधित बच्चोंको निर्देशित करने, शिक्षा-ग्रहणकी सुविधा प्रदान करने एवं उनमें सामूहिक जीवन विकसित करनेके लिए किसी ऐसी संस्थाका होना आवश्यक है जिसके अधिकारी तथा कार्यकर्ता 'मानसिक मंदता' के क्षेत्रमें प्रशिक्षित हों।

यह नहीं कहा जा सकता है कि मंदित बच्चोंकी क्रियाएँ उनके समूहोंमें ठीक वैसी ही होंगी जैसी सामान्य बुद्धि वाले बच्चोंकी क्रियाएँ अपने समूहोंमें हुआ करती हैं अथवा दोनों ही क्रियाएँ ठीक एक दूसरेके विपरीत होंगी। साधारणतया मंदित बालक मानसिक शक्तियोंके अवरुद्ध हो जानेसे यह नहीं समझता कि उसे क्या करना चाहिए और क्या नहीं। वह सामने वाले बच्चेको गिरा भी सकता है। इन दोनों ही परिस्थितियोंमें दो विपरीत भाव आकर्षण स्पष्ट रूपसे दृष्टिगोचर होते हैं। सामान्य बच्चे ऐसा नहीं करते। एक सामान्य बच्चा दूसरे सामान्य बच्चेको देखकर या तो चुप लगा रहेगा, या अपने हाव-भाव एवं नेतृत्व शक्तिके माध्यमसे अथवा समान अभिरुचियोंके आधारपर आकर्षित करनेका प्रयत्न करेगा। मंदित बच्चे भी कभी-कभी संस्कारगत सामाजिक क्रिया-प्रतिक्रियाएँ प्रदर्शितकर सकते हैं। उदाहरणार्थ यदि कोई मानसिक-बाधित बालकको मारे और मार खानेवाला बच्चा रोना चिल्लाना प्रारंभ करे तो अन्य दर्शक तथा मंदित बच्चे उसकी उनकी सहायता कर सकते हैं। उसके आंसुओंको देखकर द्रवित हो सकते हैं तथा आतंक मचानेवालेसे भयभीत एवं आतंकित हो सकते हैं।

इस प्रकारकी मिली-जुली प्रतिक्रियाएं दिखाई पड़ती हैं। परिणामतः आक्रान्ताके साथ अन्य बच्चोंका विकर्षण भी हो सकता है। इस संदर्भमें एक संक्षिप्त विवरण दिया जा सकता है। यहाँ ज्ञानचन्द मुरव्वे वाला मंदित बाल विद्यालयमें एक मंदित छात्रने विद्यालयकी आया को पीटना शुरू कर दिया। आया रोने-चिल्लाने लगी। कठिन प्रतिशोधके पश्चात् उससे आयाको छुटकारा मिला। इसके पहले भी एक घटना घट चुकी थी। अतः बच्चे आक्रान्तासे घबराने और भयभीत होने लगे हैं। जो बच्चे कुछ समझ वाले हैं वे उससे असहयोग भी करते हैं। अक्रान्ता बालककी क्रिया-प्रतिक्रियाओंका विश्लेषण करनेपर पता चला कि वह बालक नेतृत्वकी इच्छासे पीड़ित है।

अतः यह सिद्ध हो चुका है कि किसी न किसी स्तर पर इन बच्चोंमें भी नेतृत्वकी इच्छा रहती है। मंदित बालक उनका उपयोग करना तो चाहते हैं, किन्तु कैसे करें यह वे नहीं समझ पाते। उचित दिशा-निर्देशके अभावमें उनकी नेतृत्व-भावना सृजनशील न होकर विनाशकारी बन जाती है। यदि वास्तवमें मंदित बच्चोंके अन्तर्गत नेतृत्वकी भावना हो तो समय पाकर वह पनप सकती है। वे बच्चे भी अपने-अपने समूहोंमें

(समान स्तरीय बुद्धि वाले बच्चोंके बीच) विकासात्मक सहयोग दे सकते हैं।

मंदित बच्चोंमें नेतृत्वकी पहचान

मंदित बच्चोंकी अन्तिम श्रेणियोंमें नेतृत्वकी अपेक्षा रखना भूल है क्योंकि वे मंदित बालक जीनेको सभी परिस्थितियोंके लिए परमुखापेक्षी होनेके उपरांत ही जीवन-यापनक लिए आंशिक योग्य बनाये जा सकते हैं। किन्तु प्रथम दो श्रेणियों (न्यून रूपसे बाधित हो और माध्यम रूपसे बाधित) में आने वाले बच्चे शिक्षण अथवा प्रशिक्षणसे लाभ उठा सकते हैं। इन बालकोंमें नेतृत्वकी पहचानके लिए विभिन्न प्रकारके कार्यक्रमोंको माध्यम बनाया जा सकता है। इनमें अंतरंग तथा बहिरंग दोनों ही प्रकारके कार्यक्रम समन्वित किये जा सकते हैं। समूहका निर्माण करते समय यह ध्यान देना आवश्यक है कि बालकोंकी उम्र, बुद्धि-लब्धि, अभिरुचि तथा शारीरिक क्षमतामें अधिक अंतर न हो।

समय-समयपर सांस्कृतिक कार्यक्रम, समूह गान, समूहनृत्य अथवा मुक्त क्रियाकलाप इत्यादिके माध्यमसे उनमें नेतृत्वकी पहचान सरलतासे कर सकते हैं। इन कार्यक्रमोंमें मंदित बाल-नेता सर्वाधिक सहयोग अथवा असहयोग दोनों ही कर सकता है। किन्तु जो बालक नेतृत्व शक्तिसे रहित होंगे, वे स्वतः आगे न आकर अनुकरण ही करना चाहेंगे। जिनमें नेतृत्वके अंकुर होंगे वे मनोनुकूल परिस्थितियोंमें मनोनुकूल कार्यक्रमोंके आधारपर नेतृत्वका प्रदर्शन करेंगे तथा प्रतिकूल परिस्थितियोंमें वे तत्काल दूर हट जानेकी उत्सुकता लिए होंगे। इसका सर्वप्रमुख निदान यह है कि मानसिक बाधाके कारण उन बच्चोंमें सामाजिक बुद्धिका विकास नहीं हो पाता, उनमें अपनी भावनाओंको नियंत्रित करनेकी शक्ति नहीं रहती। वे अपने क्रियाकलापोंको सामाजिक दृष्टिसे अर्थपूर्ण बना नहीं सकते। वे अपने 'स्व' के आसपास भटकते रहते हैं। उनका 'स्व' अथवा इदम् मानसिक स्तरकी सापेक्षतामें स्पष्ट दृष्टिगोचर होने लगता है।

अतः पारस्परिक हितोंकी चिन्ता एवं दूसरोंके लिए त्यागकी भावना उनमें नहीं पायी जाती। मंदित बच्चोंकी इस टोलीमें भी कुछ संस्कारगत या वंश परंपरागत लक्षणोंसे युक्त बच्चे सामान्य बच्चोंको भांति व्यवहारोंका प्रदर्शन कर सकते हैं। वे किसी अन्य बालकको पीड़ा पहुँचानेपर विचलित हो उठते हैं। वे स्वयं कभी ऐसे प्रयास नहीं करते जिससे दूसरे बच्चे दुःखी हों। इस प्रकार उनके नियन्त्रित तथा समाजपयोगी व्यवहारोंका दर्शन किया जा सकता है। कार्यकर्ता भी स्वतः उनकी ओर आकृष्ट होता है तथा उन्हें उत्साहित करता है।

संतुलनकी आवश्यकता

नेतृत्व विकासके लिए शारीरिक तथा मानसिक दोनों हीं दृष्टियोंसे अपेक्षाकृत सक्षम बालकोंका चयन सुविधाजनक होगा। कुछ बच्चे मानसिक दृष्टिसे श्रेष्ठतर होते हुए भी शारीरिक दृष्टिसे असंतुलित होते हैं। वे वाक्-चक्षु श्रवणादि दोषोंसे युक्त होते हैं। ऐसे बालककों लिए सामाजिक कार्यकर्ता सम्बन्धित विशेषज्ञोंकी सहायता लेकर उनको एक सीमा तक स्वस्थ बनानेमें सहायक हो सकता है। शारीरिक तथा मानसिक दोनों ही दृष्टियोंसे संतुलित बच्चे ही नेतृत्वके लिए विशेष उपयोगी सिद्ध हो सकते हैं। अतः नेतृत्व विकासका आधार उनकी बुद्धि-लब्धि, शारीरिक तथा मानसिक शक्तियोंका संतुलन एवं उनकी विशिष्ट अभिरुचियोंको ही बनाया जा सकता है।

मंदित बच्चोंका विकास कार्यकर्ताकी इच्छापर आधारित न होकर उनकी आन्तरिक क्षमताओं तथा विशिष्ट अभिरुचियोंपर आधारित होना चाहिए। वे बच्चे इतनी क्षमता नही रखते कि अपनी क्षमताओंपर बच्चोंका नेतृत्व संभाल सकें वरन् यह विकास उनके अपने समूहमें ही कारगर सिद्ध हो सकता है। साथ ही प्रत्येक मंदित बच्चेमें नेतृत्वकी परिकल्पना भी अदूरदर्शिताकी परिचायक होगी। यदि सीमित क्षेत्रों—जैसे संगीत, नृत्य, भाव-नाट्य क्रीड़ा तथा पुनर्वासमूलक व्यावसायिक प्रशिक्षणोंके माध्यमसे उनमें नेतृत्वकी पहचानके द्वारा उन्हें प्रोत्साहित करनेका प्रयत्न किया जाय तो अवश्य यह प्रयास सफल होगा।

चेचक उन्मूलन—क्या, क्यों और कैसे?

—डॉ० के. एल. झालानी—

चेचक रोगको कौन नहीं जानता? अपने देशमें इसे चेचक या शीतला माता कहते हैं और राजस्थानमें तो यह महाम्माई कहलाती है जिसकी होलीके बादकी अष्टमीको पूजा की जाती है व जगह-जगह मेले लगते हैं। एक समय था जबकि राजस्थानकी अधिकांश जनता इस विषयमें अन्धकारमें ही थी, परन्तु फिर भी इस रोगकी भयानकतासे लोग अच्छी तरह परिचित थे एवं अब भी जिस किसीको चेचक निकल आती है उसके सुन्दर चेहरेको हमेशाके लिए कुरूप बना ही देती है और किन्हीं-किन्हींको अन्धा भी कर देती है व कुछ मृत्युकी गोदमें भी चले जाते हैं। अब लोग इस रोगके विषयमें सही जानकारी रखते हैं व पुराने अन्धविश्वास बहुत कुछ कम हुए हैं।

प्रश्न यह उठता है कि इतना होते हुए भी नागरिक इस रोगके उन्मूलनमें टीका लगवाकर अथवा चेचकके रोगीकी तुरन्त सूचना चिकित्सक व स्वास्थ्य विभागको देकर सक्रिय सहयोग क्यों नहीं दे पाते? आज भी ग्रामीण जनता इस रोगसे बचावके एकमात्र उपाय टीका लगवानेके प्रति उदासीन ही है। रोगसे पीड़ित होनेपर रोगीके परिवारवाले या पड़ौसी स्वतः अस्पताल या डिस्पेन्सरीमें सूचना नहीं देते और इस प्रकार पूरे गांवको जोखिममें डालते हैं। यद्यपि टीकेको सहर्ष स्वीकार करनेवाले लोगोंकी संख्या बढ़ी है, परन्तु चेचकके रोगीकी तुरन्त सूचना देनेमें अपेक्षित जाग्रति नहीं आयी हैं। यहां यह बतला देना आवश्यक है कि देशसे चेचकको मिटानेके लिए सभी लोगों को समय-समयपर टीके लगवानेके साथ-साथ यह भी आवश्यक है कि यदि चेचक रोगसे कोई पीड़ित हो जाय तो उसकी सूचना तुरन्त स्वास्थ्य विभागको दे दें ताकि रोगको दूसरे लोगोंमें फैलनेसे रोका जा सके।

अतः चेचकके विभिन्न पहलुओंपर विचार करना उपयुक्त होगा। जैसा कि सभी जानते हैं यह भयानक संक्रामक रोग है जो वेरियोला वाइरस नामके अति सूक्ष्म विषाणुओंसे उत्पन्न होता है। किसी भी आयुके पुरुष या स्त्रीको जिसने टीका नहीं लगवाया है, उसे इस रोगकी छूत लग सकती है। इस रोगके विषाणु केवल मनुष्यमें ही केन्द्रित रहते हैं। इसकी छूत बीमार व्यक्तिकी खांसी तथा छींकोंके द्वारा एक व्यक्तिसे दूसरे व्यक्तिमें फैलती हैं। इसके अलावा यह अप्रत्यक्ष रूपसे रोगीके कपड़ों और अन्य वस्तुओं तथा पपड़ी एवं खुरण्डसे भी फैल सकती है।

किसी व्यक्तिको छूत लगनेपर भी कई दिन तक उसे इसका पता नहीं चलता क्योंकि ७ से १७ दिन तक उसे रोगके कोई स्पष्ट लक्षण दिखायी नहीं पड़ते। इसके बाद अकस्मात उसे तेज बुखार हो जाता है एवं सिर, कमर तथा जोड़ोंमें तेज दर्द होता है। उसे मतली और उल्टी भी हो सकती है। ये लक्षण दोसे चार दिनतक रहते हैं। सामान्यतः बुखारके तीसरे दिन उसके चेहरे, गर्दन तथा छातीके ऊपरी भागपर और हाथों व बाहों पर चेचकके दाने निकलने लगते हैं। इन दानोंके निकलनेके साथ-साथ बुखार तथा अन्य लक्षण समाप्त होने लगते हैं। इसके दाने पहले लाल चकतोंके रूपमें निकलते हैं और फुन्सीकी तरह बढ़ने लगते हैं। तीसरे दिन उनमें पानी भर जाता है, जिन्हें फफोले कहते हैं। छठे दिन तक सारे फफोलोंमें मवाद भर जाता है और उन्हें फुन्सी कहते हैं। आठवेंसे दसवें दिन तक ये फुन्सियां सूखने लगती हैं तब उन्हें पपड़ी कहते हैं। बारहवें दिनसे बीसवें दिन तक ये सब पपड़ियां उतर जाती हैं और रोगीके त्वचापर चेचकके स्थायी प्रमाणके रूपमें चेचकके दाग बने रहते हैं।

इस रोगकी छूत लगा व्यक्ति बुखार आनेके कुछ दिन पहिलेसे रोगकी छूत दूसरे व्यक्तियोंमें फैलाने लगता है तथा तब तक फैलाता रहता है जब तक वह पूर्णतः

स्वस्थ्य नहीं हो जाता। रोगीके शरीरसे दाने निकलनेके दौरान तथा पपड़ी उतरने तक इसकी छूतकी संभावना बनी रहती है।

अत: बीमार होने वाला व्यक्ति स्वयं कई दिन तक इस बातसे बेखबर रहता है कि उसको इस भयानक रोगकी शुरुआत हो चुकी है तथा चेचकके लक्षण प्रकट होनेसे पूर्व भी वह दूसरे मनुष्योंको यह रोग दे सकता है।

इस रोगके विषयमें दूसरी सबसे महत्त्वपूर्ण बात यह है कि इसका कोई विशेष उपचार नहीं है। छूत लगनेके बाद चेचक निकलती ही है तथा इससे पीड़ित व्यक्तिको कष्ट झेलना ही पड़ता है। रोगीकी तुरन्त व समुचित देख-रेख करनेसे आंखोंके खराब होने तथा अन्य जटिलताओंके उत्पन्न होनेके खतरोंको कम किया जा सकता है। किन्तु यदि ठीकसे देखभाल न की जाय तो रोगीके अन्धे होनेकी बहुत आशंका रहती है एवं १५ से ३० प्रतिशत रोगियोंकी मृत्यु भी हो जाती है।

चेचकसे बचावका केवल मात्र उपाय टीका लगवाना ही है। यह एक ऐसा उपाय है जिसके द्वारा हमारे शरीरमें चेचक विषाणुओंके अतिक्रमणको रोकनेकी अस्थायी क्षमता आ जाती है। बच्चेको उसके जन्मके ८ दिनके भीतर निश्चित रूपसे टीका लगवा देना चाहिए और किसी भी हालतमें पहला टीका लगवानेमें ३ माहसे अधिकका विलम्ब नहीं करना चाहिए। इससे नवजात शिशुको कोई भो नुकसान नहीं होता। इसके बाद बच्चेके जन्म दिवसपर पुनः टीका लगवाना चाहिये। तदुपरान्त ३ से ५ सालके अनन्तरसे पुन: टीका लगवाते रहना चाहिए। जब किसी समुदायके लोगों या उसके आसपास रहने वाले किसी व्यक्तिको चेचक हो तो पूर्वमें लगवाये गये टीकेका विचार न करते हुए, परिवारके सभी सदस्योंको पुनः तुरन्त टोका लगवा लेना चाहिए। चिकित्सालयोंके कर्मचारियों, अध्यापकों, घरेलू कर्मचारियों और ऐसे अन्य लोगोंको जिन्हें चेचकके छूत लगनेकी काफी सम्भावना रहती है, उन्हें हर तीसरे वर्ष टीका लगवाते रहना चाहिए।

अब प्रश्न यह उठता है कि टीका लगवानेके बाद भी क्या किसीको चेचक निकल सकती है? जी हां! अगर वह टीका लगवानेके पहले सातसे सत्रह दिन तकके अन्दर चेचककी छूतसे प्रभावित हो चुका हो। सफल टीका लगानेके १० दिनके बादसे तीन वर्ष तक चेचक होनेकी सम्भावना नहीं रहती है, परन्तु चेचकके टीकेसे छोटी माता या खसराकी रोकथाम नहीं होती। कभी-कभी गलतीसे छोटी माता व खसराको चेचक समझ लिया जाता है एवं टीकेकी उपयुक्तताके बारेमें संदेह किया जाता है जो कि उचित नहीं है।

बचपनमें एक बार लगाया गया सफल टीका जीवनभर सुरक्षाके लिए पर्याप्त नहीं है क्योंकि टीकेके माध्यमसे हमारे शरीरमें आयी हुई चेचक विरोधी क्षमता समयके गुजरनेके साथ-साथ कम होती जाती है। इसलिये सुरक्षा स्तरको बनाये रखनेके लिए हर तीन सालमें दुबारा टीका लगवाते रहना चाहिए। चेचकके टीकेको और दूसरे रोगोंके निरोधक टीकोंके साथ लगानेमें भी कोई नुकसान नहीं है बशर्ते कि वह शरीरके दूसरे हिस्सेमें लगाया जाय जैसे कि पोलियों, डिप्थिरिया, कुक्कुर खांसी, टिटनस, मोतीझरा, हैजा आदि।

टीका लगवानेके बाद कुछ विशेष बातोंका ध्यान रखना आवश्यक है ताकि टीका सफल हो सके। शरीरके उस स्थानको जहाँ टीका लगवाया गया हो न तो ढक कर रखना चाहिए और न उस समय तक धूप ही लगने देनी चाहिए जब तक कि वह सूख न जाय। जिस स्थान पर टीका लगाया गया हो, वहाँसे टीकेके वेक्सीनको पोंछना नहीं चाहिए। टीके स्थानपर तेल या मरहम, पाउडर आदिका प्रयोग नहीं करना चाहिए।

तेज बुखार, चर्म रोग, शरीरमें खूनकी अत्यधिक कमी तथा कतिपय अन्य रक्त विकार होनेपर टीका लगवानेसे पहिले डाक्टरकी सलाह ले लेनी आवश्यक है।

अब प्रश्न यह आता कि घरमें किसीको चेचक निकलनेकी आशंका होनेपर क्या करना चाहिए? ऐसी स्थितिमें निम्न बातोंपर ध्यान दिया जाना अति आवश्यक है।

(१) सुरक्षाकी दृष्टिसे यह ध्यान रखा जाय कि किसी व्यक्तिको बुखारके बाद दाने निकलनेकी अवस्थामें चेचक होनेकी संभावना रहती है ।

(२) चेचकके रोगीकी सूचना शीघ्र हो अपने क्षेत्रमें स्थित अस्पताल, प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र, जिला स्वास्थ्य अधिकारी, ग्राम पंचायत, अध्यापक तथा सामुदायिक नेताको तुरन्त देवें ।

(३) रोगीको फौरन संभवतः किसी अलग कमरेमें रखा जाना चाहिए । आगन्तुकों तथा बच्चोंको रोगीके पास नहीं जाने देना चाहिए ।

(४) पहले लगाये गये टीकेका विचार किये बिना घरके सभी सदस्योंको पुनः टीका लगवा लेना चाहिए ।

(५) रोगीके मुँहसे निकलनेवाले सभी स्रावोंको किसी उपयुक्त वर्तनमें रखा जाना चाहिए और उन्हें जला देना चाहिए । रोगीके सम्पर्कमें आने वाली सभी वस्तुओंको यथा संभव उबालकर जीवाणुरहित कर लेना चाहिए ।

ऊपर वर्णित चेचकके भयानक परिणामोंसे बचनेके लिए चेचकके रोगीकी तुरन्त सूचना देना एवं तत्काल टीका लगवाना ही अति आवश्यक हैं । सभी नये जन्मे बच्चोंको ३ महीनेकी आयुसे पूर्व जितना शीघ्र हो सके टीका लग जाय व इसके बाद समय-समयपर पुनः टीका लगता रहे ।

अब केवल विश्वके केवल ७ देशोंमें ही जिनमें भारत, पाकिस्तान, बंगला देश, नेपाल, अफगानिस्तान, इथोपिया व सूडान हैं, चेचकके रोगी होते पाये जाते हैं । विश्व स्वास्थ्य संगठनके अनुसार जनवरीसे सितम्बर १९७२ तक इन देशोंमें कुल ५३.१०२ चेचकके रोगी दर्ज किये गए । इनमेंसे भारतमें २२.४४७ हुए जो कुलका ४२ प्रतिशत है । राजस्थानमें इस अवधिमें कुल १,६५८ चेचकके रोगी दर्ज हुए, जिनमें भरतपुर, जयपुर, अलवर, वाडमेर, बाँसवाड़ा जिले प्रमुख हैं । संसारके अन्य देशोमें इस बीमारीपर काबू पा लिया गया है । भारतमें भी अधिकांश राज्योंने बीमारीपर नियंत्रण पा लिया है, परन्तु चेचकसे मुक्त इन राज्योंको चेचकसे बचे रहनेके लिए यह आवश्यक है कि भारतके अन्य राज्य भी चेचकसे मुक्त हों क्योंकि जैसा कि ऊपर वर्णित किया गया है कि चेचककी छूत लगा व्यक्ति यह बीमारी दूसरोंको भी लगा सकता है एवं वर्तमानमें परिवहनके द्रुतगामी साधनोंके कारण इस बीमारीकी छूत फैलनेकी सीमा निश्चित नहीं है ।

विकसित देशोंके उदाहरणका अनुसरण करते हुए जिन्होंने इस रोगका उन्मूलनकर लिया है, भारतने भी चेचक उन्मूलनका देश-व्यापी अभियान शुरूकर दिया हैं । राजस्थानमें भी यह कार्यक्रम चलाया जा रहा हैं । इस कार्यक्रमकी सफलताके लिए यह आवश्यक है कि आम लोगोंमें इस भयानक रोगके उन्मूलनके लिए और जागरूकता आये व इससे सदैवके लिए छुटकारा पानेके लिए प्रयत्नशील हों । यदि चेचक और उसकी सम्भावत हर घटनाकी सूचना नजदीकके स्वास्थ्य केन्द्र या स्वास्थ्य कार्यकर्त्ताको दे दी जाय तो हम भी चेचकको फैलनेसे रोकनेकी स्थितिमें हो जायेंगे । इसके संघर्ष हो प्रत्येक नवजात शिशुको प्राथमिक टीका व समय-समयपर पुनः टीका लगवानेकी सावधानी हर व्यक्ति रखे तो चेचककी छूत फैलनेका कोई आधार हो नहीं रहेगा और हमारे देशसे भी इस रोगका उन्मूलन किया जा सकेगा ।

लोगोंमें चेचकके रोगियोंकी शीघ्र सूचना स्वास्थ्य विभागको देनेके विषयमें जाग्रति लाने व चेचकके ऐसे रोगियोंको, जितनी सूचना विभागको नहीं दी गयी है, ढूंढनेके उद्देश्यको लेकर समूचे राज्यमें चेचकका सक्रिय सर्वेक्षण अभियान ३ अक्टूबर १९७२ से चलाया जा रहा है ।

विश्व स्वास्थ्य संगठन भी इस ओर अधिक प्रयत्नशील है और यह एक ऐतिहासिक महत्त्वकी घटना है कि उसने उपरोक्त सभी देशोंकी सरकारोंके सहयोगसे इस भयंकर बीमारीका उन्मूलन करनेका बीड़ा उठाया है और १९७३-७४ तक इस रोगके उन्मूलन करनेके लक्ष्यको सामने रखा गया है ।

(लोक विज्ञानसे साभार)

हृदयवाहिका रोगोंकी रोकथाम युवावर्गकी आदतें

—डा० जैड० फैजफर—

बहुतसे लोग यह समझते हैं कि हृदयवाहिका रोग मध्यम व बुढ़ापेकी उम्रमें ही होते हैं। यह बात दो कारणोंसे गलत है। यह रोग बच्चोंको भी होता है। आजके संसारमें अन्य समस्याओंकी तरह कई हृदयवाहिका रोग अल्पावस्थामें ही शुरू हो जाते हैं। इनमें अनेक रोग जन्मजात होते हैं। बच्चोंमें डिप्थीरिया जैसे सामान्य संक्रमण रोगके साथ-साथ भीषण हृदय रोग हो जाता है। ऐसा महामारीके समयमें होता है।

रुमेटिक हृदय रोग की जड़ें बच्चोंके स्ट्रैप्टोकाकसी खराब गलेमें होती है। कुछ गरम व मध्यम गरम देशोंमें विशेषतः भीड़भाड़वाले तथा सफाईकी कमीवाले इलाकेमें बच्चों व युवावर्गमें रुमेटिक हृदय रोग बहुत होता है। इन क्षेत्रोंमें विभिन्न प्रकारके हृदय रोग, जैसे चामास हृदय रोग, बचपनमें ही शुरू हो जाते हैं और कभी-कभी बालिग होनेसे पहले ही अपरावर्ती दिलके दौरेके शिकार हो जाते हैं।

हृदयके क्रियात्मक दोष, जैसे हृद्‌विक्षिप्ति, यदाकदा बच्चों व किशोरोंमें होते हैं। यदि यह गलतीसे हृदय रोग मान लिया जाय तो इसका डर जीवनभर रहता है। विक्षिप्ति सामान्यतः बच्चेकी अतिसंवेदनशीलतामें प्रकट होती है और इसके साथ-साथ परिवारमें विक्षिप्त वातावरण रहता है।

अब इस आशयके प्रमाण अधिकमात्रामें मिल रहे हैं कि "मध्यम उम्र" के हृदय-दोषोंकी जड़ें भी बचपनमें होती हैं। मसलन, यह बात अतिरिक्त दाबके बारेमें सच है, जिसके साथ वृक्क (रीनल) रोग भी हो जाते हैं। इनमें गरम देशोंमें त्वचाके संक्रमणसे उत्पन्न स्तवक-वृक्कशोथ जैसे रोग हैं।

कारोनरी हृदय-रोग वर्तमान उद्योग प्रधान समाज की देन हैं। ये रोग बचपनसे अस्वास्थ्यकर आदतोंके कारण हो सकते हैं। इस विश्वासके अनेक कारण हैं। इस रोगके कारण बहुत अधिक संख्यामें युवावर्गके व्यक्ति मरते हैं। जिन देशोंमें कारोनरी रोग अधिक होते हैं, उनके बच्चोंमें रक्त कालेस्ट्राल स्तर भी ज्यादा पाया जाता है। इन आदतोंमें ज्यादा खाना, विशेषतः चिकनाईवाले पदार्थ तथा विशुद्ध कार्बोहाइड्रेटका भोजन करना, बैठे रहना तथा धूम्रपान करना शामिल है।

बच्चों व किशोरोंका सामाजिक वातावरण भी ऐसा होता है जिससे आधुनिक समाजमें बड़ी उम्रमें हृदय-रोग हो जाता है। दैनिक जीवनकी गति ऐसी हो जाती है कि आदमीको मौतका शिकार होना पड़ता है। मसलन, बहुतसे बच्चोंको माता पिताकी ओरसे स्वास्थ्य-सुरक्षा नहीं मिलती और बादमें ऐसे ही बच्चोंको रोग हो जाते हैं।

इनमेंसे कुछ परिस्थितियोंपर नियन्त्रण कठिन है, अन्य पर आसानीसे नियंत्रण हो जाता है, यद्यपि जीवनकी आदतोंमें परिवर्तन करनेमें किसी औषधिसे रोगके लक्षणोंको दूर करनेकी अपेक्षा अधिक प्रयत्न करने पड़ते हैं।

स्कूलोंमें बच्चोंकी स्वास्थ्य-परीक्षा तथा बच्चों व माता-पिताकी शिक्षासे रोगके प्रति जागरूकता बढ़ती है। फिर भी रोगोंके कारणोंकी खोजपर बल दिया जाना चाहिए। और बच्चों व किशोरोंका वातावरण स्वस्थ रखना चाहिये। बचपनसे ही जितनी स्वस्थ आदते हों उतना अच्छा।

बच्चे स्कूलमें बैठते हैं, इसलिए उनके लिए शारीरिक शिक्षा बहुत जरूरी है। उन्हें खूब खेलना चाहिए। इसके अलावा, युवा-खिलाड़ी धूम्रपानके प्रति आकर्षित नहीं होता और न हर समय कारमें यात्रा करना चाहता है। वह अपने युवा जीवनके लिए अधिक अच्छा स्वास्थ्य ले जाता है और इसलिए वह अप्रशिक्षित 'कोमल' व्यक्ति सेअधिक लंबा जीवन जी सकता है।

आजका अशांत युवक स्पष्टतः हमारी सभ्यताकी सफलताओंसे पीड़ित है। इसलिए हृदयवाहिका रोगका बोझ उस समयतक नहीं उठ सकता जबतक कि समाज का परिस्थितिकी संतुलन नहीं लौटता और अपने वातावरणके प्रति आदमीका तालमेल नहीं होता।

बचपनकी आदतें बहुधा जीवन पर्यन्त रहती हैं।

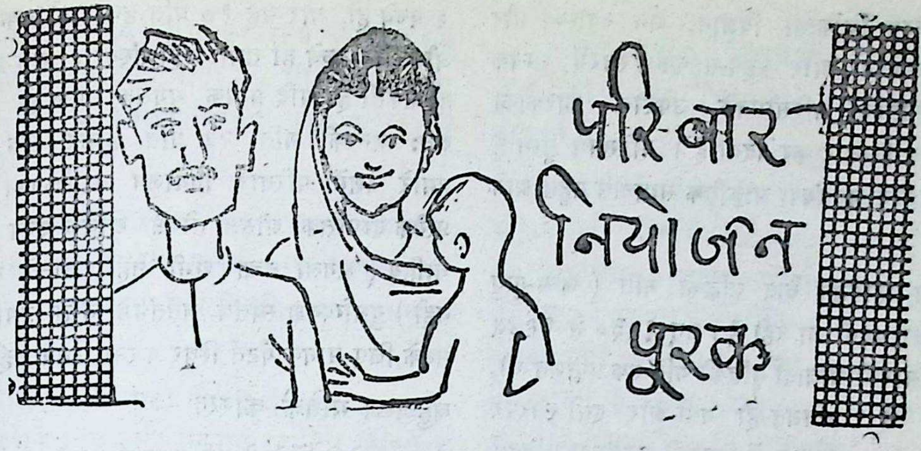

जनसंख्याकी समस्या।

—डा० बी० सी० श्रीवास्तव—

(रीडर, सोशल एंड प्रिवेंटिव मेडिसिन, मोतीलाल नेहरू मेडिकल कालेज, प्रयाग)

सन १७९८ में थामस रावर्ट माल्थमने जिन्हें आज आधुनिक जनसांख्यिकी अध्ययनका जनक कहा जाता है, जनसंख्याकी समस्यापर अपनी प्रथम लेखमाला प्रकाशित की थी। इसमें उसने लिखा था—

'मैं सोचता हूँ कि मैं दो स्पष्ट प्रतिस्थापनाएं कर सकता हूँ। पहली तो यह कि आदमीके अस्तित्वके लिए भोजन अनिवार्य आवश्यकता है। दूसरी यह कि नर-नारीके बीच यौन संपर्क आवश्यक है और वर्तमान स्थितिमें आगे भी बना रहेगा। अब यदि मेरी प्रतिस्थापनाएँ सही है तो जनसंख्याकी शक्ति धरती द्वारा आदमीके लिए पोषाहार पैदा करनेकी शक्तिसे कहीं अधिक है। जब अबाध गतिसे जनसंख्या बढ़ती है तो यह वृद्धि गुणोत्तर अनुपातमें होती है जबकि पोषाहारकी वृद्धि समांतर अनुपातमें होती है। यदि आपका संख्या शास्त्रसे तनिक भी परिचय हो तो आप प्रथम शक्तिके दूसरीकी तुलनामें प्रचण्डताका अनुमान कर सकेंगे।'

गुणोत्तर अनुपात १–२–४–१६–२५५–६५५१६
ममांतर अनुपात १–२–४–८–१६–३२–६४–१२८

यद्यपि माल्थससे पूर्व कनफूशियस, प्लेटो और अरस्तुने भी किसी समूहकी जनसंख्याके आकार पर अपने विचार प्रकट किये थे और जनसंख्या नियंत्रणके कुछ उपाय भी प्रचलित किये थे, पर ये लपलब्व साधनोंके अनुरूप संख्या नियत करनेकी दृष्टिसे अनजाने किये गये उपाय थे। माल्थस प्रथम व्यक्ति था जिसने संसारका ध्यान जनसंख्याकी ओर आकर्षित किया। उस समय इस सिद्धांतको बहुत प्रश्रय नहीं मिला, पर बादमें तो उसका सिद्धांत संसारकी जनसंख्या वृद्धिके आंकड़ोंसे पूर्णरूपेण सिद्ध हो गया है। आप भी आंकड़ोंका अवलोकन करें।

वर्ष	जनसंख्या (करोड़ोंमें)	जनसंख्या दूनी होने में कितने वर्ष लगे
ईसा युगके आरंभमें	२५	—
ईस्सी सन् १६००	५०	१६००
,, १८००	१००	२००
,, १९३०	२००	१३०
,, १९०५	४००	४५
,, २०००	८००	२५

मानवी सृष्टिके अतीतमें जनसंख्या परिसीमन होता था मरकों और महामारियों, युद्धों और प्राकृतिक अपराधों तथा अकाल, बाढ़, भूकम्प द्वारा। किन्तु विगत

अर्ध शताब्दिमें चिकित्सा विज्ञान, जन स्वास्थ्य और कृषिकी उपलब्धियों और रहन-सहनके स्तरमें सम्यक सुधारोंने जनसंख्या परिसीमनके उपरोक्त कारकोंका बहुत हद तक निस्तार कर दिया है। परिणाम हुआ है कि अनेक देशोंमें जनसंख्या प्राकृतिक साधनोंसे बहुत आगे बढ़ गयी है।

द्वितीय महायुद्धके बाद वृद्धिकी गति (जन्म-मृत्यु गति) निरंतर बढ़ती जा रही है। सन् १९३० से १९४५ के बीच संसारकी आवादी वृद्धिकी गति एक प्रतिशत थी, १९६० से यह २ प्रतिशत हो गयी और इसी स्तरपर विद्यमान है। सन् १९५२ में विश्वकी जनसंख्या प्रतिवर्ष २·२ करोड़की गतिसे बढ़ रही थी और सन् १९७० में परिवार परिसीमिनके सभी प्रयासोंके बावजूद जनसंख्या ७·२ करोड़ प्रति वर्षकी गतिसे बढ़ी।

भारतमें जनसंख्याकी समस्या

विश्वके देशोंमें जनसंख्याकी दृष्टिसे भारतका स्थान दूसरा है और क्षेत्रफलके विचारसे सातवां। इसे यों कहें कि संसारकी २·४ प्रविशत भूमिपर भारतको संसारकी १५ प्रतिशत जनताका भरण पोषण करना पड़ता है। इस समय भारतकी जनसंख्या संयुक्त-राज्य अमेरिका, सोवियत रूस और जापानकी संयुक्त जनसंख्याके बराबर है। अनुमान किया जाता है कि भारतमें प्रतिदिन ५५००० बच्चे पैदा होते हैं। प्रतिवर्ष जनसंख्यामें १·३ करोड़की वृद्धि होती है जो आस्ट्रेलिया महाद्वीपकी आवादीके बराबर है।

भारतमें इस समस्याका रहस्य यह है कि यहाँ मृत्यु संख्या बहुत घटी है, पर समानुपातमें जन्म संख्या नहीं घटी। वर्तमान जनसंख्या प्रति हजारपर ३७ और मृत्युकी गति प्रति हजार जनसंख्या १५ ९ बतायी जाती है। इस कारण जनसंख्या नियंत्रण अविलंब हल करनेका मसला है, न केवल सामाजिक-आर्थिक विकासके लिए बल्कि जीवनके गिरते हुए स्तरको रोकनेके लिए भी।

जनसंख्याकी भविष्यवाणीके अनुसार जन्मकी गति २५ प्रति हजार तक गिर सकती है, यदि प्रति दम्पत्ति ३ बच्चे हों, और यह १७ प्रति हजार हो सकती है यदि औसत दो बच्चे हों तथा यही संख्या ९ प्रति हजार भी हो सकती है यदि प्रत्येक युगलको एक ही बच्चा हो। अतः जन्मकी गति २५ प्रति हजार तक लाना ही हमारे देशमें परिवार नियोजन कार्यक्रमका लक्ष्य है, प्रत्येक दम्पत्तिको औसत तीनसे अधिक बच्चे नहीं होने चाहिये (अगला बच्चा अभी नहीं, तीनके बाद कभी नहीं) दुर्भाग्यवश स्वतंत्र जनतंत्रमें जैसा हमारे देशमें है सबके लिए मानक पैटर्न स्थिर करना संभव नहीं है।

बहुजन्म गतिके कारण

हमारे देशमें बढ़ी हुई जन्मगति और प्रजनन गतिके लिए कुछ सामाजिक सांस्कृतिक तत्व जिम्मेदार हैं।

(१) विवाहकी सार्विकता—देर-अबेर सबकी शादी हो जाती है और वे बड़े उत्साहसे प्रजनन प्रक्रियामें भाग लेने लगते हैं। व्यक्तिकी आर्थिक सुरक्षा या भावात्मक प्रौढ़ता शायद ही कभी विवाहकी पूर्वापेक्षा होती है। आपको जानकर आश्चर्य होगा कि संयुक्तराष्ट्र अमेरिकामें ३० प्रतिशत औरतें प्रजनन योग्य उम्रमें विवाह करती ही नहीं। अतः यदि दोनों देशोंमें प्रजननकी गति एक जैसी हो तो भी प्रति हजार जनसंख्यापर जन्मकी गति अमेरिकामें भारतकी अपेक्षा ३० प्रतिशत कम होगी। विवाहकी व्यापकताका एक लाभ भी है कि अन्य विकासशील देशोंकी अपेक्षा हमारे देशमें अवैध बच्चोंकी संख्या बहुत कम है।

(२) शीघ्र विवाह—हमारे देशमें १५ वर्षकी उम्रसे पूर्व ५० प्रतिशत लड़कियोंका विवाह हो जाता है। १९६१ को जनगणनासे ज्ञात हुआ कि हमारे देशमें १० से १९ वर्षके उम्र वर्गकी २ करोड़ विवाहित लड़कियाँ थी और यह संख्या इस उम्रवर्गकी ४० प्रतिशत है। हमारे देशमें लड़कियोंके विवाहकी औसत उम्र १६·२ वर्ष है। अनुमान किया गया है कि यदि विवाह १६ से २० वर्षकी उम्र तक टाल दिया जाय तो जनसंख्यामें २५ से ३० प्रतिशतकी कमी हो जायगी और यदि २५ वर्षकी उम्र तक स्थगित रक्खा जाय तो ५० प्रतिशत जन्म नहीं होंगे।

(३) शीघ्र यौवनागम—भारतमें अपेक्षाकृत कम उम्रमें लड़कियाँ जवान हो जाती हैं। शीतोष्ण कटिबन्ध के देशोंकी १५-१६ वर्षकी तुलनामें यहाँ उम्र १२ से १४ वर्ष है।

(४) जीवनका स्तर—राष्ट्रीय नमूना सर्वेक्षणसे प्रगट हुआ है कि प्रति व्यक्ति खर्चकी मात्रा बढ़नेसे साथ प्रजनन क्षमता घटती है। अन्य विकसित देशोंका अनुभव भी यही रहा है।

(५) शिक्षा—माता पिताके शैक्षणिक स्तर और बच्चोंकी संख्याके बीच उल्टा अनुपात रहा है। अशिक्षित स्त्रियोंको औसत ६ ६ बच्चे पैदा हुए जबकि विश्वविद्यालय तक शिक्षा प्राप्त स्त्रीमें यह संख्या २ थी।

(६) परम्परा और विश्वास—हर स्त्रीको विवाह करना चाहिये और उसे एक पुत्र उत्पन्न करना ही चाहिये। बच्चे भगवानका वरदान है।

(७) पोषण—विभिन्न देशोंके राष्ट्रीय आंकड़ों का अवलोकन स्पष्ट करता है कि जहाँ आहारमें प्रोटीन अधिक खायी जाती है जन्मकी गति धीमी है। चूहोंपर किये गये प्रयोगिक अध्ययनोंसे भी यही प्रकट हुआ है कि उनके आहारमें प्रोटीनकी मात्रा दढ़ा देनेपर उनकी प्रजनन क्षमतामें कमी हुई।

(८) परिवार नियोजनकी आदतका अभाव—परिवार नियोजनकी धारणा अर्वाचीन है और इसे अभी लोगोंके दाम्पत्य जीवनका अंग बनाना बाकी है।

मृत्यु-गतिमें कमीके कारण

१. **प्राकृतिक आपदाओंका विलोपन**—यथा अकाल और व्यापक महामारियाँ

२. **रोगोंका सामूहिक नियंत्रण**—विभिन्न राष्ट्रीय स्वास्थ्य कार्यक्रमोंके माध्यमसे अनेक बड़े घातक रोगों यथा मलेरिया, प्लेग, हैजा चेचक आदि व्यापक पैमाने पर नियंत्रण कर लिये गये हैं।

३. चिकित्सा विज्ञानकी प्रगति

४. उत्तम स्वास्थ्य सुविधाएं

५ अंतरराष्ट्रीय सहायता—तकनीकी ज्ञान, साधन और अनेक दिशाओंमें अंतरराष्ट्रीय सहायता प्राप्त हुई।

जनसांख्यकी विशेषज्ञोंका कहना है कि मृत्यु दरमें और कमीकी भविष्यमें संभावना नहीं है। कारण यह कि मृत्युके सरल कारणोंपर जीवावसादकों, कीटनाशकों और अन्य प्राण रक्षक उपायोंके व्यापक उपयोग द्वारा विजय पायी जा चुकी है। अब तो बहुत कठिन कार्य ही बच गये है, वे साधनकी उपलब्धि जैसे पर्यावरण स्वच्छता, पोषणकी उन्नति पर निर्भर हैं।

जहाँ मृत्युगतिमें त्वरित कमी हुई जन्मगति सकल प्रयासोंके बावजूद अपरिवर्तित ही रही है

(१) आजके विकासशील देशोंमें सौ वर्ष पूर्व जो जन्म मृत्युकी गतिकी स्थिति थी, सन् १९४० में भारत में वही अवस्था थी। उनके यहाँ मृत्युकी गति शनैः-शनैः घटी-चिकित्सा विज्ञानकी प्रगतिसे चरण मिलाकर, किंतु हमें वर्षोंके अनुसंधानसे सुविकसित चिकित्साकी प्रगतियाँ अनायास ही प्राप्त हो गयीं। नतीजा यह हुआ कि मृत्युकी गतिमें तो कुछ ही वर्षोंमें उतनी ही कमी आ गयी जितनी विकसित देशोंने पचास वर्षोंमें प्राप्त की थी।

रोगोंकी रोकथाममें कुछ ही लोगोंके प्रयास महत्त्व पूर्ण परिणाम प्राप्त कर सकते हैं जब कि जन्म-नियंत्रणमें प्रत्येक व्यक्ति, दस करोड़ दम्पतियोंमेंसे हर एकका सहयोग अपेक्षित है तभी जन्मकी गतिपर कोई प्रभाव हो सकता है।

जनसंख्याकी अबाध वृद्धिका निहितार्थ

(१) राष्ट्रीय विकासमें बाधा: जैसा पहले कहा जा चुका है कि जीवन स्तरकी उन्नति जन्मसंख्यामें कमीसे संबंधित है। जीवन स्तरमें उन्नति तभी हो सकती है जब प्रति व्यक्ति आयमें पर्याप्त वृद्धि हो।

१९४८-४९ से १९६३-६४ के बीच राष्ट्रीय आयमें ११० प्रतिशतकी वृद्धि हुई है जबकि प्रति व्यक्ति आयमें केवल ४८.८ प्रतिशतकी ही वृद्धि हो पायी। चिंताकी

बात तो यह है कि राष्ट्रीय आय और प्रतिव्यक्ति आयका यह अंतर निरंतर बढ़ता जा रहा है ।

राष्ट्रीय आयमें एक रुपये वृद्धि करनेके लिए उद्योग उत्पादन क्षेत्रोंमें दो रुपया लगानेकी आवश्यकता होती है । इस पूंजी निदेशके लिए राष्ट्रीय बचत या पूंजी होनी चाहिये किंतु हमारी अधिकतर पूंजी तो बढ़ती हुई आबादीकी बुनियादी जरूरतें पूरी करनेमें ही खर्च हो जाती है । इस प्रकार एक कुचक्र चलता है जिससे किसी उल्लेखनीय राष्ट्रीय विकासकी संभावना नहीं रहती ।

(२) त्वरित गतिसे बढ़ती जनसंख्यामें बच्चोंका अनुपात अधिक होता है । भारतमें ४० प्रतिशत लोग १५ वर्षसे कम उम्रके हैं और इससे निर्भरताका बोझ बढ़ा है । एक ओर तो यह उत्पादन अक्षम संख्या है दूसरी ओर हमें इनके भरणपोषण, वस्त्र शिक्षाका प्रबंध करना है इस प्रकार हमारी राष्ट्रीय आयका २२.५ प्रतिशत इनपर खर्च होता है और इस पोषण प्रशिक्षण अवधिमें हमें खर्चका कोई लाभांश प्राप्त नहीं होता । इसको ध्यानमें रखते हुए योजना आयोगने अनुमान लगाया है कि हमारी राष्ट्रीय आयका जहाँ इस समय दस प्रतिशत इस्तेमाल होता है, वहाँ आगे चलकर २० प्रतिशत औद्योगीकरणके लिए आवश्यक होगा ।

(३) **आहार पूर्ति :** भारत में सन् १९५१-६६ की अवधिमें खाद्य उत्पादन १.७ करोड़ टन बढ़ा है, किंतु प्रति व्यक्ति आहार उपलब्धि १२.८ औंससे घटकर १२.४ औंस हो गयी है । इसका कारण है कि इस अवधिमें हमारी जनसंख्या १४ करोड़ बढ़ गयी ।

KURAZOL
(Liquid & Tablet)
A Remedy for Asthma

ADIOL COMPOUND
A General Pick-up

HEMOGASTRIN
A Digestive & Haematinic Tonic

LYCOLIV
A Liver Tonic

Products of :
INTERNATIONAL CHEMICAL & BIOLOGICAL INSTITUTE
PRIVATE LIMITED
KURAZOL HOUSE, BANGALORE-4.

पारिवारिक जीवनोपयोगी स्वास्थ्य साहित्य

लोकप्रिय स्वास्थ्य साहित्य

राजा बेटा कैसे बनायें ?	३.००
सुन्दर दांत और उनकी देखरेख	२.५०
आपके बच्चेकी खुराक	३.३७
भोजन क्या, क्यों और कैसे ?	४.००
विटामिन और हीनता जनित रोग	४.२५

यौन-साहित्य

यौन मनोविकार कारण और निवारण	४.२५
विवाहित जीवनमें यौन सम्प्रयोग	५.५०
नारीकी यौन समस्यायें	२.५०
सन्तति-निरोध कब और कैसे ?	४.००
गर्भवती स्त्री और प्रसवपूर्व व्यवस्था	२.५०

प्रकाशक

स्वास्थ्य सन्देश प्रकाशन,
पोस्ट—कालपी (उत्तर प्रदेश)

उद्यम

मासिक पत्रिका

'उद्यम' में निम्न विषयों पर लेख प्रकाशित होते हैं :

*लाभदायक उद्योग-धन्धोंकी व्यवहारोपयोगी जानकारी
*व्यवसायमें सफल व्यक्तियोंकी मुलाकातें और परिचय तथा मवेशियोंके रोगोंका निवारण।
*इंजिनियरिंग, यंत्र सामग्री और ग्रामोद्योग संबंधी लेख
*आरोग्य, संक्रामक रोग तथा घरेलू औषधियों संबंधी जानकारी।
*पंचवर्षीय योजनाओंके कारण होता हुआ ग्रामसुधार
*महिला विभाग : घरेलू उद्योग, मितव्ययिता, खाद्य पदार्थ आदि पर लेख।
*बालकोंका विश्व : बालक-बालिकाओंके लिए सुलभ भाषामें त्रैमासिक जानकारी।
*विद्यार्थियों के लिये : विशेषज्ञों द्वारा उपयुक्त लेख
*पाठकों द्वारा पूछी गई जानकारी।

'उद्यम' का वार्षिक मूल्य रु० दस भेजकर परिवारके प्रत्येक व्यक्तिके लिये उपयोगी यह मासिक पत्रिका अवश्य संग्रहीत करें।

उद्यम मासिक, धर्मपेठ, नागपुर-१

स्वास्थ्य का वृहद ज्ञान सागर

आपका स्वास्थ्य

१८ वर्षों की

पुरानी फाइलें

चौथे और सोलहवें वर्ष के अलावा प्रत्येक वर्ष की फाइलें प्राप्य हैं।

प्रत्येक वर्ष की फाइल ६ रु० में प्राप्य है फाइलें वी० पी० से नहीं भेजी जायेंगी। अग्रिम मूल्य भेजना अनिवार्य है।

आपका स्वास्थ्य कार्यालय

चेतगंज, वाराणसी—१

घर बैठे संगीत सीखिए

प्रतिमास घर बेठे गायन, वादन तथा नृत्य की ठोस जानकारी प्राप्त करने के लिए १५) भेजकर **'संगीत'** मासिक के वार्षिक सदस्य बन जाइए। नमूना चाहें तो १)५० के टिकिट भेजिए। फिल्मी गीतों के प्रेमी २०) भेजकर **'फिल्म-संगीत'** त्रैमासिक के वार्षिक सदस्य बने। वर्ष में इसके कुल चार अंक (जनवरी, अप्रैल, जुलाई और अक्टूबर में) प्रकाशित होते हैं। प्रत्येक अंक में ३५ प्रसिद्ध फिल्मी गीत स्वरलिपि-सहित छपते हैं। हर प्रकार के संगीत-साहित्य की विस्तृत जानकारी के लिए हमारा बड़ा सूचीपत्र मुफ्त मंगाएं।

पता

संगीत कार्यालय, ६, हाथरस (उ. प्र.)

इंडियन मेडिकल असोसियेशनकी ओरसे डा० कोशलपति तिबारी द्वारा
संपादित, प्रकाशित और सुदर्शन मुद्रक वाराणसीमें मुद्रित।

HEALTH

is your most precious possession

Your Health

will help preserve it

Your Health aims to educate the common man on matters of health. It deals with day to day problems of sanitation and hygiene and presents the scientific side of preventing many bodily and mental ills.

Remember it is

A Publication of the Indian Medical Association.

SUBSCRIPTION RATES

(Post free)

Inland : 1 year Rs. 8/- ; 2 years Rs. 12/-

Foreign : 1 year Rs. 10/- ; 2 years Rs. 16/-

Members of I. M. A. ; 1 year Rs. 6/-

Remittances should be by money orders or postal orders payable to YOUR HEALTH

All business correspondence should be addressed to

Manager, YOUR HEALTH
23 Samavaya Mansion : Corporation Place
CALCUTTA-13

आपका स्वास्थ्य

इंडियन मेडिकल असोसियेशन की लोकोपयोगी मासिक पत्रिका

जून १९७२

हमारे तीन महत्वपूर्ण प्रकाशन

कहीं हवा न लग जाय

-कैप्टन शरत कुमार चौधरी-

इस पुस्तकमें मलेरिया, फाइलेरिया, चेचक आदि रोगोंसे बचनेके उपाय, रोगीकी परिचर्या सर्पदंश, प्राथमिक चिकित्सा सम्बन्धी अनेक महत्वपूर्ण समस्याओंकी चर्चा की गयी है।

मूल्य १५० पैसे

सुनो भाई पंचो

-डाक्टर कोशलपति तिवारी-

हिन्दीमें अपने ढंगकी सरल सुबोध शैलीमें लिखी गयी पुस्तक। रोग तथा स्वास्थ्य-सम्बन्धी उन सभी समस्याओं पर चर्चा की गयी है, जिनसे हमारे ग्रामीण भाइयोंको नित्य सामना करना पड़ता है।

पुस्तक दो भागोंमें प्रकाशित है।

प्रत्येक भागका मूल्य—१५० पैसे

गुजरात, मध्यप्रदेश, उत्तरप्रदेश, हरियाणा, राजस्थान सरकार, बिहार द्वारा नियोजन केन्द्रों, स्कूल-कालेजके पुस्तकालयों, राष्ट्रीय प्रसार सेवा खण्डों तथा ग्राम पुस्तकालयोंके लिए स्वीकृत।

डाक्टर के आने तक

- डाक्टर गोकुलदास अग्रवाल -

नागरिक सुरक्षाके संदर्भमें इस पुस्तकका विशेष महत्व है। देशके प्रत्येक नागरिकको प्राथमिक चिकित्सा सम्बन्धी ज्ञान प्राप्त करना आवश्यक है और इस पुस्तकमें विस्तृत ढंगसे इस विषयपर चर्चा की गयी है। प्राथमिक चिकित्सा (फर्स्ट एड और नर्सिंग) की शिक्षा लेनेवाले छात्र-छात्राओंके लिए सर्वश्रेष्ठ पुस्तक। प्रस्तुत पुस्तक आपके परिवारके लिए 'घरेलू डाक्टर' का काम देगी।

दो सौ से अधिक चित्र

मूल्य २७५ पैसे

चारों पुस्तकें एक साथ मँगानेपर डाक खर्च माफ। आपका स्वास्थ्यके ग्राहकोंको २५ प्रतिशत छूट दी जाती है। चारों पुस्तकें एक साथ न मँगानेपर प्रत्येक पुस्तकके लिए १२५ पैसे अलगसे डाक व्यय लगेगा।

हमारे अधिकृत विक्रेता,

हिन्दी प्रचारक संस्थान, पो० बा० १०६, वाराणसी
श्री गंगा पुस्तकालय, गायघाट, वाराणसी–१
आपका स्वास्थ्य कार्यालय, लहुराबीर, वाराणसी–१

आपका स्वास्थ्य

इंडियन मेडिकल एसोसियेशनका लोकोपयोगी प्रकाशन
वर्ष २० जून, १९७३ अंक ९

अनुक्रमणिका

संसय सोक मोह भ्रम नाहीं ... — २
शिशु विकास और माँ ३
माँका बदलता रूप और बालकका विकास ... ९
पारिवारिक परिवेश और बाल अपराध ... १२
बालक और परिवार १५
हमारे शरीरमें खनिज संतुलनमें गड़बड़ी ... १८
ये अस्त्र-शस्त्र, जिनकी आप कल्पना नहीं कर सकते २१
बच्चेकी सेहत, खुराक व नींद ... २३
सबके लिए पौष्टिक खाद्य पदार्थ ... २५
कठफोला २७

परिवार नियोजन-पूरक

भारतमें परिवार नियोजन कार्यक्रमकी प्रगति...२९
पल्टन ३२

कवर-चित्र
(जर्मन गणतंत्र दूतवासके सौजन्यसे प्राप्त)

● 'आपका स्वास्थ्य' में प्रकाशित प्रत्येक रचना और चित्रका कापीराइट प्रकाशकका है। इसलिए बिना आज्ञा कोई रचना या चित्र किसी प्रकार उद्धृत नहीं होना चाहिए।

● 'आपका स्वास्थ्य' के लेखकोंके विचार पूर्ण रूपसे उनके अपने हैं आवश्यक नहीं है कि संपादक मंडल. अथवा इंडियन मेडिकल एसोसियेशन उनसे सहमत हो।

मूल्य—इस अंकका ५० पैसे
वार्षिक छः रुपये

आपका स्वास्थ्य कार्यालय
वाराणसी (बनारस-१)

सम्पादकीय-

संसय सोक मोह भ्रम नाहीं

राम कथा सुनकर गरुड़जीने कृतज्ञता प्रगट करते हुए काक भुशुण्डिसे कहा, 'प्रभो आपकी कृपासे मेरे हृदयमें अब संशय, शोक, मोह भ्रम कुछ भी नहीं रहा।' गरुड़ ज्ञानी हैं अतः उनके इस आनंदभावमें कुछ तत्व तो होगा ही।

जीवनको दुखी बनानेवाले चार तत्व हैं सन्देह, शोक, मोह और भ्रम। अपना कार्य करते हुए हम जहाँ भी संदेहके चक्करमें पड़े बस मुसीबत आ गयी। रास्ता चलते यदि यात्री हर चौराहे पर अनिश्चयकी स्थिति में खड़ा रहे, बावजूद मार्ग निर्देशिकाके संदेहरत रहे तो वह कैसे समयसे मंजिलपर पहुँच सकेगा? पुनः संदेह मानव संबंधोंको बिगाड़ता है। आज संसारकी राजनीतिमें सबसे प्रबल प्रभाव संदेहका है, सभी राष्ट्र एक दूसरेपर संदेह करते हैं और 'शांति' 'शांति' का नारा लगाते हुए भी युद्धकी तैयारीमें रत रहते हैं। फिर संदेह जड़ नहीं है, पालने पोसनेपर वह बढ़ता है और भारी उपद्रव तथा दुखका कारण बनता है।

'शोक' दूसरी बला है। मन जब शोक मग्न होता है तो कोई कार्य नहीं कर पाता। इसी शोकसे बचनेके लिए भारतीय मेधाने भगवानको 'आनंद' रूप दे दिया। समूचे ज्ञान, विज्ञान और आध्यात्मिक प्रयासोंका एक ही लक्ष्य है सत्-चित-आनंदकी प्राप्ति। मनमें जब आनंद आ गया तो फिर किसी वस्तुकी आवश्यकता नहीं रहती। और यह तो स्पष्ट ही है कि आजके दुख दैन्यका प्रबल कारण हमारी बढ़ती हुई आवश्यकताएँ और उनके अभावसे उत्पन्न असंतोष है। अतः शोक से मुक्ति मिलनी चाहिये।

सुखी जीवनका तीसरा बंधन है 'मोह'। प्राणिमात्रकी सहज प्रवृत्ति है अपने अस्तित्वकी रक्षा, अपना कल्याण। और स्वार्थकी पूर्तिके हित 'यह मेरा है', 'यह अपना निजी है' कि भावना मनमें बैठ जाती है। व्यक्तिगत स्वार्थ और समाज या समष्टिके स्वार्थमें टकराव होता है। आज की सामाजिक व्यवस्थामें जो गड़बड़ी नजर आती है, समाजमें जो वैषम्य है उसका कारण यही मोहजन्य स्वार्थपरता है; मेरा धन, मेरा घर, मेरा परिवारके फेरमें देश और समाजके कल्याणकी उपेक्षा होती है, यह भूलकर कि 'मैं' का सारा कल्याण पूरे देश और समाजके कल्याणसे जुटा हुआ है। काला धन बटोरनेवाला यह नहीं सोचता कि देशका दिवाला पिट गया तो यह काला धन उसके लिए भी मिट्टी हो जायगा। अतः मोह आदमीको अन्धा बनानेवाला रोग है इससे बचना चाहिये। अपने हर कार्यमें आदमीको सोचना चाहिये कि क्या इसे करनेसे मेरा भला होगा, मेरे परिवारका भला होगा, मेरे समाज, मेरे देशका भला होगा? और तब पहले देश फिर 'मैं' के कल्याण क्रमसे निर्णय लेना होगा। यह तभी होगा जब मोहसे मुक्त हो और अपने स्वार्थको विश्व कल्याणसे जोड़ें।

(शेष पृष्ठ १४ पर)

शिशु-विकास और माँ

—श्री फ्लोरेंस जी ब्लेक, आर० एन०, एम ए०—

बच्चोंके जन्मसे पूर्व

ऐसे युग में, जब आदमी उलझे हुए और तेजीसे बदल रहे संसारका सामना कर रहा है और अपने आविष्कारोंका अपने ही खिलाफ इस्तेमाल कर संत्रस्त है, अपने आप से तथा अपने पर्यावरणसे ताल-मेल बैठाकर जीना सीखना सदाकी अपेक्षा अधिक महत्वपूर्ण हो गया है। किन्तु मनुष्यके पास अन्तर-वैयक्तिक संतोषके उपाय नहीं हैं। सारी मानव विशिष्टताएं जिन्हें तादात्म्य, प्रेम जो आत्म-प्रेमसे अधिक विस्तृत है, समानुभूति, जीवनकी सुरक्षात्मकता और विनाशकारी कार्योंका अवरोध कहा जाता है—जीवनके प्रारंभिक में ही विकास प्रेरक संबंधों और शिक्षासे अर्जित कर लेनी चाहिए। जब घर अथवा दूसरे देशोंमें आदमीकी उत्तरजीविकाके प्रति समस्याएं बहुत संकटपूर्ण हो जाती हैं तो मातृत्व-पितृत्वकी कलाको बचाये रखनेकी मनुष्यकी आवश्यकता पर बार-बार बल देना ही समयोचित कार्य है। परिवारमें जहाँ इस कलाका सर्वाधिक जीवंत अंश सीखा जाता है, भरण-पोषण करने तथा उसे शक्तिशाली बनानेके सर्वाधिक प्रभावपूर्ण तरीकोंकी लगातार खोज होती रहनी चाहिए। मधुर, निकटका और सतत संबंध तथा व्यक्तिगत पालन-पोषण, जो शिशु और छोटे बच्चेकी मानवीय अंतःशक्तिकी अधिकतम सुरक्षाके लिए आवश्यक हैं, केवल स्वस्थ परिवार ही इसे उपलब्ध करा सकता है।

सर्वांगतः शारीरिक वृद्धि, चारित्रिक विकास, पितृत्व तथा विश्व-नागरिकताके प्रति प्रतिबद्धताके लिए मानवी रचनातंत्रकी सामर्थ्यमें मांका बहुत बड़ा योगदान होता है। यह बात, पिता द्वारा अपनी पत्नी तथा सन्तानके भरण-पोषणमें निभायी गयी भूमिकाको नकारती नहीं, लेकिन माँ और उसकी निगरानीको इसलिए विशिष्टता दी जाती है कि वह अवयवी रचनाके सर्वाधिक-तीव्र शारीरिक विकासकी अवधि में, उसकी प्रथम संरक्षिका है। वही प्रथम व्यक्ति भी है जिससे जुड़ने और प्यार करनेकी शिक्षा बच्चा लेता है। शैशवकालमें दूसरोंके और फिर सयाने होनेपर संपूर्ण मानव जातिके साथ भावात्मक निकटता प्राप्त करनेकी बच्चेकी योग्यतामें सभी परवर्ती संबंधोंका योगदान होगा। पर इन संबंधोंका प्रतिमान, मांके साथ उसके प्राथमिक संबंधोंके द्वारा पहले ही से निर्धारित हो चुका होता है।

मांके शरीर द्वारा दिये गये पर्यावरणकी विशेषतासे ही यह निश्चित होता है कि भ्रूणकी दाय रूपमें प्राप्त अन्तःशक्ति किस स्तर तक मानी जाएगी। मांका शरीर ही वे पोषक-तत्व, गर्मी, संरक्षण और घनिष्टता प्रदान करता है जिनकी आवश्यकता बालकके अवयवोंको, गर्भसे बाहरकी जिन्दगीसे ताल-मेल बैठानेके लिए तैयार बने रहनेमें, होती है। विकासमान अवयवी यद्यपि गर्भमें भली-भाँति सुरक्षित रहता है, तथापि मांके स्वास्थ्य और पोषणकी स्थितिसे, उसकी उम्रसे, खास-खास दवाओंसे, मां जिन बीमारियोंसे ग्रस्त हो सकती है, उनसे और साथ ही उसकी भावनात्मक स्थितिसे वह प्रभावित हो सकता है। अग्रदर्शी माता-पिता, जब अपने उद्देश्यों, लक्ष्यों और पैतृक भूमिकाकी धारणाके लिए अपनी योग्यताका ईमानदारीसे मूल्यांकन करनेमें एक होकर कार्य करते हैं तो स्वास्थ्यकी प्रगतिमें वे अनन्त योगदान करते हैं। पारिवारिक जीवन प्रारंभ करने अथवा उसका विस्तार करनेके लिए शारीरिक, भावनात्मक और आर्थिक धरातलपर सर्वाधिक रुपसे तैयार होनेका निर्णय भी अपने प्रति और दूसरोंके प्रति युगलकी दायित्वकी समझदारीको उजागर करता है।

गर्भावस्थामें प्रारंभसे ही सावधानी बरतकर और अपनी रक्षा एवं निर्देशके लिए प्रशिक्षित कर्मचारीका उपयोगकर संभावित मां आगे भी परिवारिक स्वास्थ्यमें सहयोग करती है। अपने व्यवहारमें, जब वह पर्याप्त

आराम, व्यायाम और पर्याप्त मात्रामें प्रोटीन, खनिज तथा विटामिन ग्रहणकर अपने स्वास्थ्यको बनाये रखती है, वह आत्म-प्रेम तथा सुरक्षात्मकता व्यक्त करती है। आगे, नर्सों तथा दूसरे स्वास्थ्य कर्मचारियोंके सहयोगसे दैहिक रूपसे आये कष्ट—जिसका वह सामनाकर रही होती है—के परिणामस्वरूप उसके शरीर और भावनात्मक जीवन में हो रहे परिवर्तनोंके प्रति अपनी प्रतिक्रियाके संदर्भमें वह स्वयं सहायक हो सकती है। सहयोगी अनुभवोंसे संभावित माताएं, स्वयंको समझने और अपने भय को कम करने तथा परिश्रम, प्रसव एवं माताकी भूमिकाकी क्रमिक धारणामें सक्रिय सहभागके लिए तैयारी करनेमें, काफी मदद ले सकती हैं। गर्भकालमें स्त्रीमें होने वाले दैहिक तथा भावात्मक परिवर्तन मातृत्व के लिए तैयारीकी अतिरिक्त प्रेरणा देते हैं। वह अपनी स्वयंकी मांके बहुत निकट तक अनुरूप बनती है, पालन-पोषणके संदर्भमें वह ऐसे ही सोचने-विचारने लगती है जो उसने अपने बचपनमें सीखा है। वह दूसरों द्वारा किये गये और सुझाये गये पालन-पोषणका अध्ययन करती है और अपनेको उन संतुष्टियोंसे भर लेती है जो गर्भवती होनेके पहले उसके लिए कम आवश्यक थीं। वह अपने भीतरके शिशुके विषयमें दिवा-स्वप्न देखने लगती है, अपने पतिके साथ कल्पना-चित्र बनाने लगती है, और दोनों एक साथ अपने जीवनमें शीघ्र ही परिवर्तनोंकी कल्पना करते हैं। संभावित मां-बाप प्रायः इस बातके लिए अत्यधिक सतर्क हो जाते हैं हैं कि उनकी जिम्मेवारी बढ़ रही है। जिन दायित्वोंको, माता-पिता बननेपर, दम्पतिको अनिवार्य रूपसे वहन करना होता है उन्हें हल्का करनेमें शिशुके जन्मके पूर्व सतत पारिवारिक स्वास्थ्य-निरीक्षणके कार्यक्रमकी हिस्सेदारी बहुत सहायक हो सकती है। इससे शिशुपालनमें अनिवार्य रूपसे होने वाली कठिनाइयोंके दौरान उन्हें उपलब्ध होने वाले सहारेका निर्माण भी होता है। उदाहरणके लिए, मां-बाप अपनी समस्याओं, उद्देश्यों और आवश्यकताओंके संदर्भमें स्वास्थ्य-कर्मचारियोंके साथ भाग ले सकते हैं और उनके साथ सामंजस्य बनानेमें सहायक हो सकते हैं। इसमें स्वास्थ्य-कर्मचारी भी नियमित समयोंपर परीक्षाओं द्वारा स्वास्थ्यका मूल्यांकन कर, बीमारीसे मुक्त रखकर, बीमारीका निवारण करनेके तरीके सिखाकर, शारीरिक परिवर्तनोंका पता लगाकर जिनमें सुधार अपेक्षित होता है, और उन व्यवहारगत परिवर्तनोंसे आगाहकर जो शिशुके शरीर और मस्तिष्ककी वृद्धि और विकासके साथ होने वाले होते हैं, सहायताकर सकते हैं। भावी शिशु जब विकासकी एक स्थितिसे दूसरीकी ओर बढ़ेगा, तब उसे जिस निर्देशनकी आवश्यकता होगी, वह देनेके लिए तैयारी करना वे ही सिखाते हैं। वे मां-बापकी सहायता उस हालतमें भी करते हैं जब बच्चा बीमार होता है और उसे दूसरी स्वास्थ्य-सेवाओंकी अपेक्षा होती है। वे बताते हैं कि उक्त सेवाओंका सर्वोत्तम उपयोग कैसे किया जाया।

जब मां-बाप अपने बच्चेको स्वास्थ्यके साथ ही अपने स्वास्थ्यकी सुरक्षा करते हैं तो वे दूसरे महत्वपूर्ण संदर्भोंमें बच्चेकी ही सेवा करते हैं। वे एक स्वस्थ आदर्श प्रस्तुत करते हैं जिसके अनुरुप वह अपनेको बना सकता है। उसके साथ अपने अनुभवोंके जरिये मां-बाप उसे सुरक्षात्मक स्वास्थ्य-युक्तियोंका मूल्य भी समझा सकते हैं। इसके अतिरिक्त वे उसकी आत्म-सम्मानकी प्राप्तिमें भी योगदान करते हैं, जो उसके सयाने होनेपर, अपने स्वास्थ्य तथा दूसरोंके स्वास्थ्यकी रक्षा करनेकी सोद्देश्यताको कायम रखता है।

दूसरे परिवर्तन भी हैं जो तब प्रकट होते हैं जब मांका शरीर अत्यधिक नाजुक तथा असहाय हालतमें गर्भके विकासका संरक्षण करती तथा सहारा देती होती है। यदि वह अपने और दूसरोंपर निर्भर है तो उसके नारित्वका प्रसादन और सम्मान बढ़ जाता है, क्योंकि उस समय वह इस प्रकारके परितोषणके लिए लालायित रहती है। इससे उसे मांकी भूमिकाकी वास्तविक धारणाकी योग्यता प्राप्त करनेमें सहायता मिलती है और आत्म संवरणको बनाये रखनेमें मदद मिलती है। इस प्रकार शिशुमें भावात्मक निवेशके लिए शक्ति मुक्त हो

जाती है। वह उसमें जितना ही अधिक भावात्मक निवेशकर पानेमें समर्थ होगी, उतनी ही अधिक वह शिशुके जन्म लेनेपर सहजातके साथ उसे अपनाने तथा उससे आह्लादित होनेके योग्य होगी।

प्रथम वर्षमें

जो मां प्रसवके पहले ही अपनी भावात्मक शक्ति शिशुकी ओर प्रवाहित किये रहती है, वह अपने शिशुके लालन-पालनकी ललित कलाका अध्ययन उसी प्रकार जारी रखती है जैसे अध्यापक। वह बार-बार परीक्षा कर पता चलाती है कि उसके देखे हुए दूसरे नवजातोंसे वह कितनी समानता रखता हैं। वह उसकी अनुपमता (अनोखेपन) का पता लगानेकी भी कोशिश करती है। वह उसके परितृप्ति तथा कष्ट बनानेके विशिष्ट ढंगोंको पहचानती हैं। फिर शारीरिक सुश्रूषा, छातीसे लगाने, झुलाने, व्यायाम कराने और उसे ऐसी क्रियाओंके लिए प्रेरित करनेके लिए, जिनसे उसे सर्वाधिक आनंद मिले, वह तबतक प्रयोग करती रहती है जबतक वह बच्चेको आवश्यकताओंकी पूर्तिमें सफल नहीं हो जाती।

शिशुके निरालेपनके प्रति मांका आदरभाव, और उसे आराममें रखनेके लिए सावधानीके अपने उपायों द्वारा उस निरालेपनका संरक्षण, बालककी शारीरिक विकास तथा सीखनेकी शक्तिको बनाये रखते हैं। उसकी आवश्यकताकी अभिव्यक्तिके प्रति उत्तरदायित्वके जरिए उसकी मां, असहायावस्था और तनावकी दुर्बलकारी भावनाओं—ऐसी भावनाओं जो कुंठा तथा अपरिचित संसारके साथ सामंजस्य स्थापित करनेकी उसकी सम्पूर्ण असमर्थतासे उभरती हैं—पर काबू पानेमें उसकी जरूरतोंके परितोषकी तलाश कामयाब होती है, उसके रोनेसे जरूरतके वक्त कोई उसकी मदद करने आ जाता है। इस तरहके बार-बारके अनुभवसे वह एक सहायक हाथका अनुभव करने लगता है—इससे आशावाद उदय होता है। अपनी आवश्यकताओंकी पूर्तिमें बालक द्वारा स्वयं सक्रिय हिस्सेदारी करना उसका पुरस्कार बनता है। परिणामस्वरूप असहायता और तनावकी उसकी भावनाएँ एकदम सहनीय स्तर तक घट जाती हैं और उनका स्थान वे भावनाएँ ले लेती हैं जो अंतमें उसे स्वयंको शक्ति सम्पन्न, निरापद सम्मानित महसूस करनेके योग्य बनाती है।

बालककी आवश्यकताओं तथा उसके दैहिक विकासके प्रति माँकी चौकस अनुक्रियाके परिणाम स्वरूप वह आस्थाकी समझदारी हासिल करता है और बढ़ी हुई सक्रियताके लिए अपनी विकासमान सामर्थ्यसे बहुत आनन्द प्राप्त करता है। उसका निजी आनंद दूसरोंकी ओरसे भी एक अनुक्रिया जगाता है जो उसके लिए जीवनदायिनी होती है औंर उनके लिए भी जिनके साथ वह व्यवहार करता है। यह परितोषण—जो देख-रेख तथा इससे संबद्ध भावना परक आपसी व्यवहारसे उत्पन्न होता है और जो उस अनुक्रियासे निकलता है जिसे उसका निजी आनंद दूसरोंमें जगाता हैं—भावात्मक रूपसे मांसे तथा फिर दूसरोंसे उसके उलझे और जुड़े रहनेका कारण बनता है। इस तरह हम देखते हैं कि बालकमें मांका भावात्मक निवेश किस प्रकार उस बालकमें एक उसी प्रकारकी प्रति संवेदना जगाता है और दूसरोंके साथ प्रेम पूर्ण संबंध लिए, संवादमें बुद्धिमत्ताके विकासके लिए और अपनी मां तथा दूसरे शिक्षकोंसे सीखनेके लिए बुनियादी कार्य करता है।

स्वायत्तताका विकास

इस आयास कालमें निश्चितता तथा अपने और दूसरोंके प्रति आस्था बनाये रखनेमें दी गयी सहायता सबसे बड़े उपहारोंमें एक है जिसे मां अपने बच्चेको दे सकती है। जब वह पूर्ण रूपसे मांपर निर्भर रहता है, उस समय यदि नन्हा मुन्ना अपेक्षित सहायता पा जाता है तो वह अपने चरित्रका मूलाधार पा जाता है जो स्वस्थ और दृढ़ता पूर्वक रोपित होता है। निश्चय ही उसके शेष संपूर्ण जीवनमें नयी-नयी समस्याएं उठेंगी जो इन प्रतिष्ठित आस्थापूर्ण भावनाओंको विघटित करनेका भय उत्पन्न करेंगी। यदि उसके चरित्रका आधार दृढ़ होगा तो परवर्ती कार्य उसे कम कठिन

लगेंगे और उन्हें संपादित करनेमें वह अधिक सक्षम होगा। जब उसे जरूरत पड़ती है तो दूसरोंकी ओर देखता है और उनके निर्देशसे अपनी समस्याएं सुलझाता है।

अपने नवजात शिशुके जीवनका प्रथम वर्ष बीतनेके पहले मां इस बातकी पड़ताल करती है कि वह और उसकी देख-रेख बालकके लिए कहां तक महत्वपूर्ण हो रही है। वह ध्यान देती है कि बालककी विवेक-शक्ति बढ़ रही है, वह उसे और उसकी देख-रेखको वरीयता देता है, जब अपरिचित लोग उसके पास आते हैं तो वह चीख उठता है या दूर हट जाता है। वह गौर करती है कि वह उससे अधिक जुड़ता जा रहा है और उसे खुश करने तथा उसका अनुकरण करनेमें दिलचस्पी ले रहा है। जब वह उसे छोड़कर इधर-उधर जाने वाली होती है तो उसके व्यवहारमें बिखराव आ जाता है, जब उससे अलग हो जानेकी मांकी तैयारियोंको ध्यानमें लाता है, उस क्षण उसका हृदय टूक टूक हो जाता है। जानकार और अंतर्ज्ञानी मांके लिए ये व्यवहारगत परिवर्तन वृद्धिको संकेतित करते हैं और इस तथ्यकी ओर इंगित करते हैं कि उसका शिशु उसके अलगावके साथ तालमेल बैठानेके लिए एकदम तैयार नहीं है। जब वह थका-मांदा होता है, शारीरिक रूपसे औसतन कम समर्थ होता हैं या अपरिचित परिवेशमें होता है तो मांको खोनेका भय उसे अधिक सताना है। ऐसे क्षणोंमें उसकी मांको यह मालूम होता है कि वह परिचित परिवेश, विश्राम प्राप्त, और संपन्न स्थितिकी अपेक्षा इस हालतमें मांकी और भी अधिक जरूरत महसूस करता हैं।

जानकार मांके लिए अबोध और असहाय बालककी उसपर निर्भरता तथा उसे खोनेका भय अधिक भयकारी नहीं होता। उसे मालूम रहता है कि बालककी आस्था तथा मांके लिए उसकी आवश्यकता अनिवार्यतः उसके स्वास्थकी रक्षाके लिए बनी रहेगी। इसलिए वह जिस हद तक निराशा (या कुंठा) का सामना कर सकता है उससे अधिक निराशासे मां उसे बचाये रखती है और साथ ही वह उसे इतना अवसर तथा सहारा देती है कि वह अपनी उन आंतरिक शक्तियोंका निर्माण कर सके जो मांसे अलग होनेपर अनुभवोंसे आनंद प्राप्त करना तथा लाभ उठाना उसके लिए संभव बनाती हैं। यह सहारा सीखने तथा योजना बनानेकी उसकी योग्यताके अनुसार अलगावोंके मिश्रित पहलूको अपरिहार्य रूपसे अनावृत्त कर देता है ताकि मांसे अलग होनेपर उसे दूसरोंकी देख-रेख और करनेके लिए नयी चीजें मिलें।

बिना लज्जा और संदेह जैसी हीन भावनाओंके स्वायत्तता सीखनेमें उसकी सहायता करना एक दूसरा तरीका है जिसमें मां अपने बच्चेको अलगावके लिए तैयार करती है। वह उन संकेतोंको सावधानीसे देखती है जो स्तन पीने, दाँतसे काटने, गंदगी करने और निराश अथवा कुंठित होनेपर दूसरोंको तकलीफ पहुँचानेके बालोचित आवेशोंपर आधारित करनेकी उसकी तत्परता सुझाते हैं। जैसे—जैसे प्रत्येक शक्ति विकसित होती हैं, वह बालकके प्रति स्पष्टतः प्रत्याशाएं निर्धारित कर लेती है, सीखनेमें वह उसे सहायता देती है और उसकी सीखनेकी योग्यतापर विश्वास करती है। वह सिखाती है कि उसके स्वास्थ्यके लिए क्या सुरक्षित और क्या खतरनाक है, उसके साथियों और सयाने लोगोंके सुखके लिए कौन सी बात महत्वपूर्ण है। समस्या-समाधान तथा देख-भाल और परितोषणके लिए अपनी अधिक आवश्यकताओंको पूरा करनेकी उसकी योग्यता बढ़ाकर मां स्वायत्तता प्राप्त करनेमें उसकी मदद करती है। जो प्रश्न द्विलिंगी संसारमें जीवन तथा उसकी खोज बीनसे उभरते हैं उनके आसान उत्तर देकर वह उसकी जिज्ञासाको कायम रखती है। वह सीमाएं निश्चित करती है और यह पता लगानेमें, कि उनकी स्वीकृति उसके लिए अधिक सुखकर होगी और आत्म-निर्देशित खेलके लिए उसे अधिक आजादी देगी, माँ उसकी सहायता करती है। अपनी भावनाओंके विस्तृत क्षेत्रोंको पहचानने और निराश करनेवाली भावनाओंपर विजय प्राप्त करने (काबू पाने) में उसकी सहायता करती है।

माँ जो यह समझती है कि उसे खुश करने, उसके प्रेमको सुरक्षित रखने और साथ ही स्वयंको शक्ति संपन्न महसूस करनेके लिए उसका नन्हा मुन्ना कितना उत्सुक है, सम्मानजनक शब्दों तथा सामाजिक भाषाके साथ सहयोग करनेके लिए उसके प्रयासोंको बढ़ा देती है जो उसकी कुशलताको गौरान्वित करते हैं। वह जानती है कि सामाजिक होनेमें समय लगेगा और बालकके पक्षमें त्यागकी आवश्यकता होगी। इसलिए अपने (बालकके) विषयमें एक यथार्थपरक स्वस्थ बिम्ब प्राप्त करनेकी उसकी आवश्यकताके प्रति मां धीर तथा चिंतनशील रहती है।

उपक्रम उद्योग और तादात्म्यकी खोज

उपक्रम और उद्योगकी तथा योग्य, समर्थ और प्रिय लगनेवाले व्यक्ति (पुरुष या नारी) के रूपमें स्वयं के प्रति, समझदारीके साथ ही अपने बच्चोंके चरित्रको सशक्त करनेमें माताएँ दूसरी कौन सी देन दे सकती है। लेखककी दृष्टिमें आयी उनमेंसे कुछ सर्वाधिक महत्वपूर्ण देने संक्षेपमें निम्नलिखित सूचीमें वर्णित हैं।

१. माताएँ एक प्रगति-दायक पर्यावरण बनानेमें पारिवारिक तथा सामुदायिक संबंधोंको मजबूत बनाती हैं जिसके सभी सदस्य गर्व कर सकते हैं। पारिवारिक क्रिया-कलापोंके नियोजनमें और उनको निभाते चलनेमें दायित्वको स्वीकारनेकी शिक्षामें साझेदारी संपूर्ण समूहके लिए आनन्ददायक हो जाती है।

२. वे विकासके प्रत्येक शकुनमें आमोद-प्रमोद करती हैं और जब उनके बच्चोंका व्यवहार व्यापकतर सामाजिक अनुभवोंके लिए तत्परताको संकेतित करता है तो वे उन्हें उत्साहित करती हैं कि उनसे दूर जाकर भी वे ऐसी गतिविधि दिखायें। परिवारमें अपना स्थान बनाने तथा दूसरे बच्चों और बड़ोंके साथ संबंधोंमें अपने अनुरागके लिए माध्यम तलाशनेमें वे अपने बच्चोंकी मदद करती हैं।

३. जब बच्चे नये अनुभवोंका सामना करनेवाले होते हैं तो वे ज्ञानप्रद हो जाती हैं। प्रत्येक नये अनुभवकी बच्चे द्वारा प्राप्त किसी पूर्णानुभवसे तुलना कर और बच्चोंको यह जानकारी देकर कि उनसे और जिनसे वे सहायता चाहेंगे उनसे क्या आशा की जाएगी, वे उन्हें तैयार करती है। वे कष्टकर तथा आनन्ददायक दोनों तरहकी अनुभूतियोंमें भाग लेती हैं जिन्हें उन्होंने अपने बचपन और (इन बच्चों की-सी) समान परिस्थितियोंमें पाया था। वे अनुभवोंसे सामंजस्य करनेमें भी बचोंकी सहायता करती हैं। इस प्रकार माताएँ सक्रिय शिक्षा-प्राप्तिकी रुचिका संचार करती हैं और उनकी नये अनुभवों की अनुभूतियों—जब वे इन अनुभवोंमें उलझे होते हैं—में भाग लेनेके लिए अपने बच्चोंको तैयार करती हैं।

४. बचोंके बड़े होनेपर वे अपने निर्देशको फिरसे मजबूत करती है, ताकि उनकी योग्यता बढ़े और वे परितोषणकी प्रतीक्षा करें, ताकि वे समस्याएँ सुलझानेमें अधिक संलग्न हों, निर्णय लेनेमें अधिक विवेकशील हों, अपने और दूसरोंके विषयमें अधिक जानकार हों और दायित्व लेनेमें अधिक योग्य तथा स्वतंत्र हों। इससे उन कार्योंपर रोक लग जाती है जिनके लिए किशोर तैयार नहीं होते और फिर उनके परिपक्व होनेकी रफ्तारके मुताबिक नियंत्रणकी डोर शिथिल हो जाती है।

५. जब बच्चे विकासकी एक स्थितिसे दूसरी स्थितिमें संक्रमण करनेमें उलझ जाते हैं, जब वे अपने या दूसरोंके चलते निराश होते हैं, जब वे भयभीत या चिंतित होते हैं, जब वे अपने आपको अत्यधिक फैला चुके होते हैं या ऐसी समस्याओंका सामना कर रहे होते हैं जिनके लिये वे पूर्णतः तैयार नहीं थे तो माताएँ अस्थाई रूपसे उन्हें अपनेपर आश्रित कर लेती हैं।

६. वे अपने बच्चोंकी बातें, जब वे अपनी रुचियों और घरके बाहर किये गये अपने कार्योंके विषयमें बताते हैं, सुनकर प्रसन्न होती हैं। जब वे शिक्षा-प्राप्तिमें प्रगति करते हैं और बताते हैं कि उद्योगकी समझदारी प्राप्त करनेके लिए वे जो प्रयत्न कर रहे हैं उनके प्रति जागरुक हैं तो वे अपने बचोंकी खुशीमें हिस्सा लेती है।

७. जब उनके बच्चे कष्टमें होते हैं तो वे उस कष्टको महसूस करती है। वे उनकी समस्याओं, निराशाओं

तथा चिन्ताओंके प्रति गंभीरता बरतती है। उनकी अनुभूतियों और विचारोंमें शामिल होकर वे उनकी बातें ध्यानसे सुनती हैं; अपने निजी अनुभवपर उनकी दृष्टि खींचकर वे उनकी दृष्टिको व्यापक बनाती है और इसके सथ ही उनकी योग्यताके अनुसार स्वेच्छापूर्व समस्या-समाधानके लिए वे उन्हें स्वतंत्रता देती है।

८. वे मिजाजके उतार-चढ़ावोंको विद्रोहको व्यवहारगत टूटको, जो किशोरावस्थाके पूर्व और किशोरावस्थामें स्वाभाविक और अनिवार्य है, पहलेसे जान लेती हैं। क्योंकि वे अपने बच्चोंके क्रोध या आलोचना (शिकायत) से डरती नहीं हैं और संचार-रेखाओंको खुली रखना चाहती हैं इसलिए उनके सबल आवेगोंपर काबू पाने तथा भावात्मक रूपसे अलग होनेमें उनको सहारा देती हैं।

९. वे अपने किशोरोंसे आशा रखती हैं कि वे अपने विचार व्यक्त करें, उनके अपने स्तरों और मूल्योंसे किशोरोंके स्तर और मूल्य हों जब कभी उनके बच्चे उनके आश्रित होना चाहते हैं, वे एक नाद-पटकी तरह कार्य करने लगती हैं—यह जानकर कि इससे लक्ष्योंतक पहुँचने और मूल्यों तथा स्तरों जो सामाजिक रूपसे फलप्रद तथा बालकोंके अपने होंगें, की एक व्यवस्था प्राप्त करनेमें लड़के-लड़कियोंको बहुत मदद मिलेगी।

अन्तिम बात, जो किसी भी अर्थमें नगण्य महत्वकी नहीं है, यह है कि माताएं आत्मज्ञानकी अपनी निजी आवश्यकताके प्रति अंधी नहीं होती। वे अपने बच्चोंके साथ खुली और ईमानदार होती हैं। उनसे खुश होती और उनपर विश्वास रखती हैं। उनकी व्यक्तिगत प्रतिभा और रुचिको विकसित करती हैं और अपने प्रति तथा अपने बच्चोंके प्रति अपने पतिसे प्राप्त सहारेकी प्रशंसा करती हैं। वे मध्यवय तथा अपनी हमजोलियोंमें प्रसन्न रहती हैं और भविष्यको अपनी घटती हुई जिम्मेदारियोंके साथ महसूस करती हैं। इस प्रकार अपने बच्चोंको, जो अब काफी सयाने हो चुके होते हैं। स्वयंको अधिक समझनेके लिए आजादी देनेके काबिल हो जाती हैं, चाहे उन्होंने (बच्चोंने) जो भी जीवन पद्धति चुनी हो।

(पृष्ठ ३१ का शेषांश)

जनचेतना विस्तारके लिए प्रयोग करना। इनके अलावा सुप्रसिद्ध समाजसेवियोंको परिवार नियोजन शिक्षकके रूपमें नियुक्त करना और सभी स्तरपर नेताओं और संगठनकर्त्ताओंको शामिल करना।

(७) अंतर राष्ट्रीय सहयोग और सहायता

विश्वस्वास्थ्य संगठन, फोर्ड फाउन्डेशन जैसे अंतर राष्ट्रीय संघटनों और तकनीकी तथा संगठन क्षेत्रोंमें महत्वपूर्ण अनुभव प्राप्त देशों जैसे जापान, अमेरिकासे सहयोग-सहायता प्राप्त करना। कुछ महत्व क्षेत्र जिनमें इसी तकनीकी सहायताकी आवश्यकता हो सकती है ये हैं:

(१) देशमें गर्भ निरोधकोंका उत्पादन

(२) जनसंख्याकी गतिशीलताका अध्ययन

(३) प्रशिक्षण कार्यक्रम

(४) अनुसंधान परियोजनाओंमें आर्थिक और तकनीकी सहायता।

(५) अधिवेशनों विचार गोष्ठियों और परिसंवादोंके आयोजन।

(पृष्ठ ३२ का शेषांश)

नाते-रिश्तेदारको आकर रहते और खाते-पीते नहीं देखा। असलमें न तो वह कंजूस हैं और न रहना चाहते हैं, पर इस पल्टनने बेचारेको क्या नहीं बना दिया और फिर 'जब कुछ न बन सके तो तमाशा बना दिया'। यह ठीक है कि आखिर इस पल्टनके बनाने वाले भी वह खुद ही हैं। जनताकी हंसी-मजाक और चुटकियों-फब्तियोंका जवाब देनेके लिए पंडितजीने एक ही जवाब रट रखा है। जब कभी उनकी पल्टनपर कोई छींटा-कशी करता है तो वह छाती फुलाकर अपनी मर्दानगीकी ऐंठ दिखाते हैं—"अरे ग्यारह लड़के ही लड़के पैदा करना मर्दोंका काम है। कोई मजाक नहीं ?"

पर मर्दानगीकी ऐंठमें दम कितना है, यह पंडितजी खुद जानते हैं। गरीबी, मजबूरी और पश्चात्ताप ऐंठके इस बुलबुले को एक पल भी नहीं टिकने देते। ऊपरकी ऐंठ व भीतरके एहसासमें ठोस क्या है और खोखला क्या है, यह उन्हें भी मालूम है और दूसरोंको भी। ●

माँ का बदलता रूप और बालक का विकास

—सुश्री लीला रूपायन—

बहुत दिनों बाद घरसे निकली थी। सोचा, शारदासे ही मिलती चलूं। हमेशा शिकायत करती हैं, 'तुम आती नहीं। क्या पर्देमें रहना शुरू कर दिया है ? घर-गृहस्थीमें इतनी फँसी रहती हो, बाहरकी दुनियाँमें क्या हो रहा है कुछ उसे भी देखो।'

वहाँ पहुंची तो उसकी लड़की प्रीति चाय बनानेमें लगी थी। यह वही प्रीति थी जो इकलौती होने के कारण शारदाकी जान थी। पूछने पर पता चला, "मम्मी घरमें नहीं हैं। नौकरानी छुट्टी पर है। पड़ोसमें चाबी रखी थी। क्या करूं आंटी, स्कूलसे आई तो भूखके मारे जान सूख रही थी। सोचा, चलो चाय बना कर पी लूं।" फिर हैरानी से बोली, "क्यों आंटी, मम्मीको पता था, आज आप आने वाली हैं ?" मेरे नहीं कहने पर वह बोली, "आपने गलती की आंटी, आप पहले मम्मीको टेलीफोन कर देतीं तो अच्छा रहता। मम्मी तो अब रोज कहीं न कहीं चली जाती हैं।" यह सुनकर मैं आश्चर्यचकित रह गयी क्या यह वही शारदा है जो प्रीति को अपना जीवन और घरको स्वर्ग समझती थी। प्रीतिको स्कूलसे आनेमें थोड़ी देर होने पर जिसकी आँखें बरसने लगती थीं। आज उसे यह भी पता नहीं, प्रीति कब आई, उसने चाय पी भी या नहीं।

आजकी नारी कितनी बदलती जा रही है, यह सोचनेपर हम विवश हो जाते हैं। आज हम युवावर्गको दोष देते हैं, वातावरण और समाजको दोषी ठहराते हैं। देखा जाए तो सबसे अधिक दोषी आजकी नारी है। जब रहनुमा ही गलत रहनुमाई करेगा—तो दोष हम राह को या राहगीर को कैसे दे सकते हैं ? बच्चोंके लिए सबसे बड़ी रहनुमा उनकी मां होती है, जब वही कर्तव्य भूल जाय तो बाकी बचता ही कौन है ?

जिधर देखें, जहाँ सुनें, एक ही बात है। जमाना बड़ा खराब आ गया है, क्या करें बच्चे सुनते ही नहीं, बड़े स्वार्थी और उद्दण्ड हो गये हैं। पढ़ाईमें मन नहीं लगाते, घरमें टिकते नहीं। किसीने इसका समाधान ढूंढ़ने की चेष्टा नहीं की। इसके पीछे हाथ किसका है ? हम इस बातकी उपेक्षा कैसे कर सकते हैं, जिसमें मूल कारण माँ है।

माँ अपना कर्तव्य भूल गयी है। उसके कदम बहक चुके हैं। घरकी दहलीज पार करके, क्लब में, स्टेज पर, होटलोंमें, और जुएकी बिसातपर पहुंच चुके हैं। वह अपने आपको अधिक सुन्दर, अधिक चतुर और सोशल दिखानेमें व्यस्त रहने लगी है। अपने ये दोष छिपानेके लिए, अपनी सन्तानको गलत मार्गपर उंगली पकड़कर ले जा रही है। यदि मां ही अपने दायित्वको उचित ढंगसे नहीं निभाएगी तो बच्चे वह सबक कहाँसे लेंगे, जो हमेशा सुना जाता है, बच्चे सब कुछ अपने बड़ोंसे ग्रहण करते हैं। बुराई हो या अच्छाई यह भी दौलतकी तरह उन्हें अपने बुजुर्गोंसे विरासतमें मिलती है।

कर्तव्यको भुलाना अनपेक्षित

नारी अपने सौन्दर्यको निखारे, सबसे अधिक आकर्षक लगे, यह उसका अपना अधिकार है। पर अपने कर्तव्योंको भूल न जाए, यह उसके लिए हितकर नहीं। यह सुन्दर दिखानेवाली कला आजकी नारीके लिए धरोहरके रूपमें चली आ रही है। अपने-अपने युगमें हर नारीने अपनी सुन्दरताका बोध कराया है। फिर सौन्दर्य तो जीवनमें इतना घुला-मिला होता है कि उसको अलग किया ही नहीं जा सकता। परन्तु आज सौन्दर्य-प्रदर्शनका तरीका गलत हो गया है जिसका प्रभाव समाज, वातावरण और सबसे अधिक युवा वर्ग पर पड़ रहा है। जब मां दूसरोंको अपनी खूबसूरतीका बोध कराएगी, तो अपनी सन्तानको वह अपनेसे पीछे कैसे रहने देगी। जहाँ पहले मां अपनी पुत्रीको गृहकार्यमें निपुण, सुशील लक्ष्मी तैयार करती थी, अब वही मां अपनी लड़कीको सोसायटीकी गुड़िया तैयार करनेमें प्राणपण से लगी है।

पश्चिमकी नकल

कुछ दिन पहलेकी बात है। लड़कियोंके कालिजकी ट्रिप पिकनिक पर जा रही थी। बी० ए० थर्ड ईयरकी लड़की सोनाली जब अपनी टीचरके पास अपना लंच बाक्स देने गयी तो टीचर बड़ी हैरानी से बोली, ''क्यों सोनाली, तुम ये कपड़े पहन कर पिकनिक करने जाओगी ?'' ''हाँ, टीचर,'' सोनालीने खुश होकर कहा, ''अच्छी ड्रेस है न, मेरी मम्मीने खास पिकनिकके लिए बनवाई है।'' ''सौरी सोनाली, मैं तुम्हें इन कपड़ोंमें नहीं ले जा सकूंगी।'' टीचर यह कहते ही आगे चल दी। सोनाली रूआंसी हो गयी, ''पर टीचर क्यों ? मेरे कपड़े क्या खराब हैं ? ''नहीं बेटा, खराब नहीं, ये कपड़े तुम्हें बेपर्दा किये दे रहे हैं। सोचो, जहां हम पिकनिक मनाने जा रहे हैं वह सार्वजनिक स्थान है, छुट्टीका दिन है, हम अकेले तो पिकनिक नहीं करेंगे, हो सकता है, कहीं लड़कोंके कालिजकी ट्रिप आ गयी तो क्या होगा ?'' टीचरने प्यार से समझाया। बात उसके अन्तर तक उतर गयी, उसने अपनी टीचरके हाथ पकड़ लिए, और आँख भर कर कहा, ''मेरी मम्मीने ऐसा क्यों नहीं सोचा मैडम ?''

हमारा भारतीय पहनावा कितना सुन्दर है जिनमें नारीका शरीर पूरा ढककर और सुन्दर हो उठता है जिसकी पश्चिमी देशोंने भी प्रशंसा की है और उसे अपनाया भी है। हम पश्चिमकी अन्धाधुन्ध नकलमें अपनी संस्कृति, अपनी तहजीबको भूलते जा रहे हैं। यदि मां ही बच्चोंको सुन्दर स्मार्ट दिखनेके लिए बेपर्दा कर देगी तो उनके शरीरको कपड़ोंसे ढकेगा कौन।

एक समय था जब नारी पर्देमें रहती थी और अपने हर कर्तव्यका पालन करती थी। वक्त बदलता गया, नारी पर्देसे बाहर आती गयी। उसे आगे बढ़नेको प्रेरणा उसको वे कार्य सौंपे गये जो उसके बिना अधूरे पड़े थे। समाजने उसे घूंघट उठानेकी सुविधा दी तो उसने धीरे-धीरे अपना रंग इस तरह बदला कि वह बेपर्दा होकर समाजके सामने आ गयी।

मांका गौरव

नारीकी विशेषता, अच्छी माता, अच्छी पत्नी बननेमें है। इसका यह मतलब नहीं कि नारी घरकी चहारदिवारीमें बंद होकर सबकी सेवा करती रहे। नहीं, उसे समाजमें रहना चाहिए ताकि वह समाजसे कुछ अच्छा सीख सके और समाजके सामने अपने आदर्श रख सके। अच्छा सीख कर ही तो वह अपनी सन्तानको अच्छा नागरिक बना सकती है। न ही नारीको कोई पुरुषसे पीछे रहनेको कहता है। इतिहास गवाह है, नारीने हर कदम पर हर मैदानमें पुरुषका पथ-प्रदर्शन किया है, उसका साथ दिया है। वह तलवार उठानेमें भी पीछे नहीं रही है। उसने हकूमत भी की, परन्तु उसने बाकी कर्तव्योंको भी पूरी तरह निभाया। नारी पुरुषकी बहुत बड़ी ताकत है। वह पुरुषसे अधिक चतुर, व्यावहारिक बुद्धिजीवी और श्रमजीवी है इतने गुणोंके होते हुए भी नारी गलत मार्ग अपना ले, यह उचित नहीं। नारीने मांके रूपमें कितने व्यक्तियोंको देशको दिया है, नारीका श्रेष्ठ रूप अच्छी मां बनना है। इसी रूपकी देश और समाजको आवश्यकता है। ''मां'' शब्दको जो गौरव मिला हैं, उसे उसी गरिमाके साथ पूरा करना होगा। हम पिछले इतिहासके पन्ने उलटें तो हम जान जाएंगे, नारीने अपने कर्तव्यको जब भी निभाया है, वह युग हमेशा स्वर्ण युग रहा है, उस युगमें उन्नति हुई है।

जब लड़की किशोर अवस्थासे निकलकर नारीका गौरवशाली स्थान पानेके लिए मां बनती है तो उसकी प्रसन्नताका अन्त नहीं होता। जब वह माताका रूप होकर पहली बार अपनी सन्तानको गोदमें लेती है तो वह अपने आपको थोड़ी देरके लिए भगवानके आसन पर देखती है, उसके हृदयसे अनगिनत आशीर्वाद निकल पड़ते हैं, ''मेरा बालक योग्य और सहृदय हो, वह अच्छा नागरिक बने।'' परन्तु समयके साथ-साथ मां अपने सब कर्तव्य भूल जाती है। जब वह अपने दायरोंमें घिर जाती है तब बच्चा बगैर किसी सहारे घिसटता बढ़ता चला जाता है।

किसी हद तक यह मांके बसकी बात है, वह बच्चेको कैसा बनाये। वैसे तो बच्चेका भाग्य भी कुछ साथ देता है, परन्तु जहां तक उसकी योग्यता या चरित्र-निर्माणका प्रश्न है, वहां मांका हाथ होता है, निश्चय ही विदुषी मां अपनी सन्तानको विदुषी ही बनाएगी। कहावत है न, कलाकारको कला, मांके दूधसे मिलती है।

रजनी रोज जुआ खेलती है। उससे यह शौक कोई नहीं छुड़ा पाता, कभी कोई मित्र टोक दे तो एक ही उत्तर मिलता है, "क्या करूँ, पतिदेवके दौरे समाप्त ही नहीं होते। माहमें बीस दिन बाहर रहते हैं। घरमें कौन बोर होता रहे? जुएमें टाइम भी अच्छा निकल जाता है, और सबसे मिलना भी हो जाता है।" मैंने एक दिन उनसे पूछा, "आपके बचों पर इसका प्रभाव नहीं पड़ता?" रजनी झटसे बोली, "यदि मैं जुआ नहीं खेलूँगी तो क्या बच्चे आजके वातावरणसे अछूते रहेंगे।" उनके अपने प्रोग्राम हैं, दोस्तोंकी महफिलें जमती हैं, सैर-तमाशेको जाते हैं, मैं भी अपनेमें मस्त रहती हूँ।" मेरे पूछने पर, "आपके घरकी देखभाल कैसे होती है?" बोली, "नौकर बहुत पुराना है, सो सब सम्भाल लेता है।"

अब रजनीको कौन समझाए? यदि आपको ही अपने घरसे लगाव नहीं तो आपके नौकरको कैसे हो सकता हैं। आप ही अपना कर्तव्य भूल गयी हैं तो बचों की रहनुमाई आप कैसे करेंगी? पिता कमानेकी चिन्तामें, माहमें बीस दिन पहले ही बाहर रहते है, और आप पतिकी कमाईका सदुपयोग जुआ खेलकर पूरा कर रही है। यदि पथप्रदर्शक ही भटक जाए तो बच्चोंको सही मंजिल कैसे मिलेगी।"

आजकल आया माँका फैशन भी बहुत चल पड़ा है। माँ बच्चेको दूध नहीं पिलाती। एक तो उसके शरीरकी सुन्दरता नष्ट हो जाती है, दूसरे बाहर क्लबों और पार्टियोंमें जाना पड़ता है। बच्चे माँकी स्वतंत्रतामें बाधक होते हैं। थोड़े बड़े हुए तो उनको होस्टलमें भेज दिया जाता है।

सविताका कहना है, शादी करनेका यह मतलब तो नहीं, सारा दिन प्रतीक्षा और सेवा करते रहो, कभी पति की, कभी बच्चों की। उसकी बड़ी बच्ची होस्टलमें है, छोटे बच्चोंको आया पालती है। बड़ी बच्ची जब भी छुट्टियोंके बाद वापस होस्टल जाने लगती है तो रो-रोकर बुरा हाल कर लेती है, परन्तु सवितापर इसका कोई प्रभाव नहीं पड़ता।

क्या आया माँका स्थान ले सकती है? माँका दूध पीकर, माँके आंचलमें जो संस्कार बच्चेको मिलते हैं, यह कोई दूसरा दे सकता है। हर समय आयाके साथ बच्चा उसीके संस्कार ग्रहण नहीं करेगा? जब मां ही अपने बच्चेकी सेवा या प्रतीक्षा नहीं कर सकती तो आया क्यों करने लगी? आयाका तो बच्चोंसे खूनका कोई सम्बन्ध नहीं। वह बच्चोंकी कितनी उपेक्षा करती होगी, यह आधुनिक माँ क्यों नहीं समझती? कई बार तो ऐसा भी होता है, माँ जिन बुराइयोंसे बच्चोंको दूर रखना चाहती है, बच्चे उम्रसे पहले ही आया द्वारा सब कुछ जान लेते हैं। जितनी ममता उसे माँसे मिल सकती है, जितनी गर्मी उसे माँकी गोद देती है, उसे दूसरा कौन दे सकता है? माँका दूध पीकर बच्चा सदा अपने आपको माँका कर्जदार समझता है और यही हमारी सभ्यताकी विशेषता है। तभी तो वह मैदानमें खम ठोक कर कहता है, "माँका दूध पिया है, पीछे नहीं हटूँगा।" बच्चोंके मनमें एक ललक रहती है माँका प्यार पाने की, माँको उस ललकका ध्यान रखकर अपने मातृपदको सुरक्षित रखना चाहिए।

जमाना काफी बदल गया है, इसको सभी जानते हैं। बदलते जमानेके साथ आदमीको बदलना चाहिए, यह सुघड़ होनेकी निशानी है। परन्तु कुछ मान्यताएँ ऐसी हैं, जो जीवनके साथ जुड़ी रहनी चाहिए। इसीमें सारे परिवार की, समाज की, देश की भलाई है।

पारिवारिक परिवेश और बाल अपराध

— श्री लक्खी भूषण प्रसाद —

आजादीके बादसे हमारा देश समस्याओंके दौरसे गुजर रहा है। बढ़ती हुई जनसंख्याकी तीव्र गति, बेरोजगारी, गरीबी एवं अशिक्षाने अनेकानेक समस्याओंको जन्म दे रखा है। यह कहना अत्युक्तिपूर्ण नहीं होगा कि आबादीका विस्फोट, बेरोजगारी और गरीबी ही सभी सामाजिक समस्याओंके जन्मदाता है। हम लोग विश्वके सभी प्रगतिशील देशोंके साथ कदम मिलनेका प्रयत्न कर रहे हैं। देशमें बहुत बड़े पैमानेपर औद्योगीकरण, तकनीकी विकास और नगरीकरण हो रहा है, लेकिन दुःख है कि हम सफलताकी सर्वोच्च मंजिलको नहीं पा सके हैं।

बाल अपराधकी समस्या अन्य सामाजिक समस्याओंमें अपना प्रमुख स्थान रखती है और दिन-ब-दिन यह जटिलसे जटिलतर और जटिलतम होती जा रही है। नगरीकरणके साथ साथ उद्योग एवं तकनीकके विकाससे उसे और भी बढ़ावा मिला है। नये उद्योगोंका विकास हो रहा है, गांव शहरोंमें बदल रहे है, बेरोजगारी बढ़ रही है। फलतः चोरी करना, जुआ खेलना, पाकेटमारी करना, भीख मांगना आदि छोटे-बड़े अपराध बढ़ते जा रहे हैं। समस्याएं और भी गंभीर हो रही हैं, इसलिए कि इन सभी समस्याओंका प्रभाव प्रत्यक्ष रूपसे हमारे बच्चोंपर पड़ रहा है जो देशके भावी कर्णधार समझे जाते हैं।

बाल अपराधके कारण एवं निदानके संबंधमें मनोवैज्ञानिकों, समाज शास्त्रियों एवं समाज सेवियोंने अनेकानेक अध्ययन किये हैं लेकिन इस आधारपर सभी एक मत नहीं हैं। विभिन्न क्षेत्रोंके विद्वानोंने बाल अपराधके लिए उत्तरदायी भिन्न-भिन्न कारणोंका विश्लेषण किया है। कुछ विद्वान उसे वंशानुक्रम कहते हैं, कुछ उसे वातावरण प्रदत्त कहते हैं तो कुछ उसे गरीबीकी देन कहते हैं। सूक्ष्म रूपसे अध्ययन करनेपर निष्कर्ष यही निकलता है कि बाल अपराधके पीछे अनेक कारण होते हैं, भले ही कोई एक कारण किसी परिस्थिति विशेषमें प्रमुख क्यों न हो जाय। सामान्य दृष्टिकोणसे देखने पर यह पता चलता है कि बाल अपराधका प्रमुख कारण वातावरण ही है, इसीलिए कि व्यक्तित्वका विकास वातावरण की ही देन है। मैकाइवर, मन, टायलर वगैरहने अपने अध्ययनके आधारपर यह सिद्ध कर दिया है कि व्यक्ति अगर वंशकी देन है तो व्यक्तित्व वातावरणका प्रतिफल होता है। साधारणतः व्यक्तित्वकी क्रियाएं एवं प्रतिक्रियाएं ही प्रकारके वातावरणमें क्रियान्वित होती हैं—

१. पारिवारिक वातावरण
२. सामाजिक वातावरण

यह सत्य है कि व्यक्तित्व वातावरणकी देन है लेकिन संग्रहीत आंकड़ोंके आधारपर हम यह प्रस्तुत कर सकते हैं कि पारिवारिक वातावरणका बच्चोंके व्यक्तित्वके विकासमें सबसे बड़ा योगदान रहता है। यह बात प्रमाणित है कि बच्चा परिवारमें जन्म लेता है, परिवारमें ही उसके व्यक्तित्वका विशेष भाव विकसित होता है और फिर परिवारमें ही उसके जीवनका अन्त होता है।

पारिवारिक वातावरणके अन्दर आनेवाली निम्न बातें बच्चोंके व्यक्तित्वको प्रत्यक्ष एवं विशेष रूपसे प्रभावित करती हैं।

असंतुष्ट एवं भग्न परिवार

बच्चेके जन्मोपरान्त उसका प्रथम वातावरण माता-पिताकी गोदमें केन्द्रित रहता है। जन्मके तुरन्त बाद बच्चेका भरण-पोषण प्रायः माता-पिताके द्वारा सम्पन्न होता है। बच्चा जन्मसे ही अपने माता-पिताके

गुणोंको ग्रहण करता है और यह बात सत्य है कि ऐसी परिस्थितिमें अगर माता-पिता अपने बच्चेके व्यक्तित्व विकासके लिए सजग हो जायँ तो अपनी संतानको वे आसानीसे होनहार और चरित्रवान बना सकते हैं, लेकिन शत-प्रतिशत माता-पिता ऐसे नहीं हैं। वे बच्चोंके व्यक्तित्वके विकासके लिए सतत जागरूक नहीं रहते। पश्चिमी सभ्यताके प्रभावके साथ-साथ फ़ैशन-परस्ती, आर्थिक असम्पन्नता, विशाल भारतीय परिवार जैसे कारणोंने आजके पारिवारिक जीवनको बड़ा ही दयनीय बना दिया है। बालकके समुचित और संतुलित विकासके लिए पारिवारिक जीवन प्रेममय, सहानुभूति एवं शान्ति पूर्ण होना आवश्यक है। लेकिन जब यह वातावरण प्रतिस्पर्धा, आपसी तनाव, लड़ाई-झगड़े, आपसी कलहमें बदल जाता है तो बच्चेका वकास कुण्ठित हो जाता है और अन्तमें वह बुरे कार्योंकी ओर उन्मुख हो जाता है। माता पिताका अधिक कामुक होना, घरके बाहर घूमना और फ़ैशनपरस्ती भी बालकके व्यक्तित्वको प्रभावित करते हैं। विद्वान एफ० रुकर्टने बड़े ही अच्छे ढंगसे यह कहा है, "असंतुष्ट पारिवारिक जीवनसे व्यक्ति हमेशा ही अपराधकी ओर उन्मुख होता है।" कभी-कभी तो ऐसा भी पाया जाता है कि सौतेली मां, चाची या किसी भी परिवारके व्यक्तिके द्वारा तकलीफ देने, दबाए जाने, बेकार पीटने, डांटने एवं फटकारनेसे भी बच्चेके व्यक्तित्वको चोट पहुँचती है और वह अपराधकी ओर उन्मुख होता है। जब बच्चेकी भावना एवं संवेगपर चोट पहुंचती है तो उसकी मानसिक स्थिति बिगड़ जाती है और वही बुरे कार्योंका कारण बन जाती है।

अत्यधिक नियंत्रण या नियंत्रणके प्रति उदासीनता

बालकोंकी कड़ीसे कड़ी निगरानीमें रखने या निगरानीके अभाव या अधिक लाड़-प्यारसे भी बच्चे बाल अपराधी हो जाते हैं। भारतमें परिवारकी यह प्राचीन प्रथा है कि बच्चेको अधिकसे अधिक निगरानीमें रखा तथा किसी भी गलतीके लिए कठिनसे कठिन दण्ड दिया जाता है। अनुसंधानके आधारपर यह प्रमाणित हुआ है कि अत्यधिक नियंत्रणसे बच्चोंका विकास भी नियंत्रणसे बच्चोंमें परावलम्बन एवं हीनताकी भावना आ जाती है, फलतः वे स्वस्थ समाजमें अपनेको समायोजित नहीं कर सकते हैं। व्यक्तित्वमें हीनता एवं डरपोकपन आनेसे बच्चोंमें झूठ बोलने, लुकछिप कर गलत काम करने जैसी क्रियाएं बढ़ जाती हैं और अन्तमें वे अपराधको जन्म देती हैं। बच्चोंकी बराबर और बेकार शिकायत करना, बेरहमीसे पीटना, उनकी स्वतंत्रतापर पूर्ण प्रतिबन्ध लगाना, किसी भी कठिन एवं अरुचिकर कार्य करनेके लिए बाध्य करना आदि बालव्यक्तित्वके विकासका सबसे बड़ा रोड़ा है। दूसरी ओर ऐसे माता-पिता भी हैं जो बच्चोंके व्यक्तित्व विकासको अपना प्रथम उत्तरदायित्व नहीं समझते हैं। उनकी नजरमें यह ऐच्छिक कार्य होता है।

भौतिकवादी युगमें प्रायः ऐसा देखा जाता है कि मां पिता दोनों नौकरी करते हैं। बच्चे नौकर या नौकरानीके संरक्षणमें छोड़ दिये जाते हैं। फलतः नौकरानी एवं नौकर उनकी देख-रेख करनेमें अपने उत्तरदायित्वका पालन नहीं करते हैं। नौकर या नौकरानी बच्चेके व्यक्तित्व विकासको महत्व नहीं देते हैं, इसलिए कि उन्हें तो सिर्फ पैसेसे मतलब रहता है। फलतः बच्चा बेकार इधर-उधर घूमता है, घरसे भाग जाता है, बुरे साथियोंकी संगतिमें पड़ जाता है, अश्लील गाने गाता है, अस्वस्थ खेल खेलता है और यही आदत धीरे-धीरे एकदिन बाल अपराधका रूप ले लेती है। बाल अपराधके सम्बन्धमें ऐसी भी घटनाएं पायी गयी हैं कि बच्चा या बच्ची नौकर या नौकरानीके साथ यौन सम्बन्धके शिकार हो जाते हैं जो व्यक्तित्वके लिए कलंक हो जाता है।

निष्कर्षके तौरपर हम यही कह सकते हैं कि विशेष नियंत्रण बालकके व्यक्तित्व विकासको कुण्ठित करता है तो दूसरी ओर देख-भालका अभाव भी बच्चोंको अनुत्तरदायी और भ्रष्ट बना देता है। यह सत्य है कि

अगर माता-पिता बच्चेकी पढ़ाई, उसके भोजन, उसके आवास, उसकी आदतों पर ध्यान देंगे तो बच्चेमें सन्तुलित व्यक्तित्वका विकास असम्भव नहीं है।

मद्यपान और दुर्व्यवहार

अनेक सामाजिक कारणोंमें बच्चेके माता-पिताका नशाबाज और कुव्यवहारी होना बच्चेके विकासके लिए घातक हो जाता है। गरीबी और चिन्ताके भयसे मुक्त होनेके लिए आजकल बहुतसे पिता मद्यपान करते हैं। वे वर्तमान समयकी कठिनाइयोंसे संघर्ष करनेमें अपनेको कमजोर पाते हैं। फल यह होता है कि वे शराब पीकर अपने दायित्व और चिन्ताको खत्म कर देना चाहते हैं। इतना नहीं बल्कि पश्चिमी सभ्यताका भी आज हमारे जीवनपर कुछ कम असर नहीं है। मद्यपान, सिगरेट पीना, वगैरह तो आजके आधुनिक परिवारोंका फैशन हो गया है। वे बड़े ही चावसे घरके बाहर घूमते हैं, होटलोंमें जाते हैं, क्लब घूमते हैं, सिनेमा देखते हैं, बाजारमें घूमते हैं, परिणाम यह होता है कि बच्चोंका व्यक्तित्व प्रभावित होता है और वे उसको अपना लेते हैं। यह बात सत्य है कि बच्चेमें अनुकरणकी प्रवृत्ति अधिक होती है और वे धीरे-धीरे उन सब बातोंका अनुकरण कर लेते हैं। कभी-कभी ऐसा भी पाया गया है कि बच्चेके पिता नशेमें चूर हो घर आते हैं, अश्लील गाने गाते हैं, बच्चोंको पीटते हैं, फलतः घरका संतुलन बिगड़ जाता है और बच्चोंकी नैतिकता पर इसका बहुत ही बुरा असर पड़ता है। वे अपनेको हीन समझने लगते हैं, माता-पिताके प्रति उनकी मनोवृत्ति खराब हो जाती है और अन्तमें वे भी बुरे कार्यों की शरण लेते हैं। माता-पिता तथा परिवारके किसी भी व्यक्तिका दुराचारी और नशाबाज होना बालकके लिए घातक होता है।

बहुतसे ऐसे परिवारोंमें जिनमें माता-पिता या परिवारके अन्य व्यक्ति अपराध करते हैं जैसे चोरी-डकैती करना वेश्या गमन करना, पाकेट मारना, जुआ खेलना इत्यादि जिसका प्रभाव बच्चेपर बहुत ही हानिकारक होता है। बच्चेमें अनुकरणकी क्षमता अधिक तेज होती है और वे धीरे-धीरे उन सब बातोंका अनुकरण कर लेते है। कभी-कभी ऐसा भी देखा गया हैं कि बच्चोंकी नैतिकता पर इसका बहुत ही बुरा असर पड़ता है; वे अपनेको हीन समझने लगते हैं। माता-पिताके प्रति उनकी मनोवृत्ति बुरी हो जाती है। समाज उन्हें बुरी दृष्टिसे देखता है। फल यह होता है बच्चे भी बाध्य हो अपराधी बन जाते हैं।

[पृष्ठ २ का शेषांश]

और मार्गका अंतिम रोड़ा है 'भ्रम', रस्सीको साँप बनानेकी प्रवृत्ति। आजके संसारमें पग पगपर 'भ्रम' का साम्राज्य है। ज्ञानवंत ऋषियोंने चिल्ला चिल्लाकर कहा 'अपनेको जानो, 'भ्रममें मत पड़ो' मगर भरमका चक्कर ऐसा है कि अच्छे अच्छोंको चकरधिन्नी बना देता है। भ्रम कैसा भी हो ज्ञान का, शक्ति का, स्तर का, मान सम्मान का या अपने स्वास्थ्य का, सर्वत्र ही वह वर्जनीय है। भ्रम अंधेरा है जो ज्ञानके प्रकाशसे दूर हो सकता है। सूर्यकी भाँति ज्ञान नित्य उदय होता है किन्तु भ्रमांधकारवासी अपनेको कमरेमें बंद किये रहते हैं और कुतर्कके कृत्रिम प्रकाशमें जीते हैं। जीवनमें कल्याणकी कामना करनेवालेको भ्रमसे ऊपर उठना चाहिये। ये चारों रोग हैं इनसे बचें। सुखी होंगे।

बालक और परिवार

—श्री बीरसिंह—

परिवारमें रहकर ही बालकमें मानव गुणोंका विकास होता है। इन गुणोंकी नींव उसमें अपने जीवनके कुछ वर्षोंमें ही पड़ जाती है। ऐसे प्रमाण मिलते हैं कि यदि बालक अपने जीवनके पहले कुछ वर्ष परिवारमें न बिताए और उस आयुके बाद यदि उसे परिवारमें रखा जाय और अच्छेसे अच्छे ढंगसे शिक्षा दी जाय तो भी उसमें मानव गुणोंका विकास नहीं हो पाता।

आरनोल्ड गैसलने अपनी पुस्तक "वूल्फ चाइल्ड ऐण्ड ह्यूमेन चाइल्ड" में कमला और रामूका वर्णन किया है। इन बालकोंको जंगली जानवरोंने बचपनमें ही उनके परिवारोंसे छीन लिया था। फिर वे वर्षोंतक उन पशुओंके साथ ही रहे। जब उन बालकोंको जंगली जानवरोंसे छुड़ाकर लाया गया तो उनमें उन पशुओ जैसे ही गुण पाये गये। वे कच्चा मांस खाना पसंद करते थे और जानवरोंकी तरह ही बोलते थे। वे उन्हींके समान हाथ-पैरोंपर चलते थे और मनुष्यकी तरह पैरोंपर खड़े होकर चलना उन्हें नहीं आता था।

जब कमलाको अन्य बालकोंमें रखा गया और उनके साथ खेलनेको उत्साहित किया गया तो वह उनके साथ नहीं खेली। कई घंटोंतक अलग एक कोनेमें बैठी रहती बच्चोंकी ओर पीठ करके बैठती और दीवार की ओर अपना मुंह कर लेती। कई अच्छे डाक्टरों और मनोवैज्ञानिकोंने उसे शिक्षित करनेका प्रयास किया, पर वे सब उसमें मानवके गुणोंको विकसित करनेमें असफल रहे।

ऐसा ही एक वर्णन अन्ना और ईसाबेलाके बारेमें मिलता है। अन्ना एक अनधिकृत बालिका थी जो पांच वर्षकी आयुतक केवल अपनी मांके साथ ही रही। जब उसका पता चला तो उसमें मानव गुणोंका अभाव था। उसका स्वास्थ्य बहुत खराब था। बहुत प्रयत्न करनेपर भी अगले पांच वर्षोंमें उसमें वांछित मानव गुण विकसित न हो पाए। जब वह साढ़े दस वर्षकी थी, तो उसकी मृत्यु हो गयी और उसका व्यवहार केवल ढाई वर्षके बालकके समान था।

ईसाबेला भी अनधिकृत संतान थी। उसकी माता गूंगी व बहरी थी। ईसाबेलाको साढ़े छः वर्षतक एकान्तमें रखा गया। जब उसका पता लगा तो उसमें भी साधारण मानवके गुण नहीं पाये गये। निपुण प्रशिक्षण एवं उपयुक्त वातावरणके द्वारा उसके कुछ गुणोंका विकास हो पाया।

बालकके शिक्षाका प्रथम सोपान : परिवार

वास्तवमें परिवार बालकोंकी हर प्रकारकी शिक्षाका केन्द्र है। परिवारमें बालकका जन्म होता है और वहीं उसका लालन-पालन होता है। सामाजिकताके गुण परिवारमें ही उत्तम ढंगसे विकसित होते हैं। परिवारमें ही उसे मानव सभ्यता और संस्कृतसे परिचय मिलता है। उसके व्यक्तित्वका विकास भी परिवारमें ही हो पाता है। परिवारमें ही उसे भाषाका ज्ञान होता है। उसका नैतिक विकास भी परिवारके वातावरणके अनुसार ही होता है। उसको अनुचित अथवा उचित व्यवहारकी शिक्षा भी परिवारमें ही मिलती है। प्यार एवं घृणाके भाव वह परिवारमें प्राप्त करता है। शारीरिक विकास, अभिव्यक्तिकी स्वतंत्रता, रुचियोंका विकास, वास्तविक जीवनसे परिचय, धार्मिक शिक्षा, चरित्र-निर्माणकी सुविधाएं उसे परिवारसे ही प्राप्त होती है। आत्मनिर्भरताकी प्रथम शिक्षा भी उसे परिवारके वातावरणसे ही मिलती है।

आज भी अधिकांश बालक परिवारमें हीं रहते हैं और वहीं उनको अपने परिवारके अनुकूल शिक्षा प्राप्त होती है। यह बात अलग है कि कुछ परिवारोंके बालक अच्छी शिक्षा पाते हैं और कुछके अनुचित, किन्तु हम तो यह नहीं चाहते कि हमारे समाजके बालकोंकी शिक्षा अनुचित हो, उनका व्यवहार अवांछनीय हो। यदि हम चाहते हैं कि बालकोंका विकास उत्तम ढंगसे हो तो हमें

सभी परिवारोंका वातावरण अच्छी शिक्षाके अनुकूल बनाना होगा, किन्तु यह सब कैसे हो ?

जिन परिवारोंमें उपयुक्त वातावरण उपलब्ध नहीं है, उन परिवारोंके प्रौढ़ व्यक्तियोंको कुछ शिक्षा देनेकी आवश्यकता होगी ताकि वे बालकके लिए परिवारका वातावरण अनुकूल एवं उपयुक्त बनाये रखें। परिवारका उत्तरदायित्व माता-पितापर रहता है, उन्हें कुछ बातोंको समझना एवं करना होगा। ऐसी कौनसी आवश्यक बातें हैं ?

माता-पिताको आज इस तथ्यको जान लेना चाहिये कि हमारा आजका समाज बड़ी तेजीसे प्रगतिकर रहा है। उसमें बड़ी शीघ्रतासे तबदीली आ रही है। सामाजिक मूल्यों, संस्कृति एवं सभ्यतामें तेजीसे परिवर्तन आ रहे हैं। बालक जिन बातोंको अपना रहे हैं, वे हमारे लिए नयी हैं, उन्हें हम उपयुक्त नहीं मानते, किन्तु यह कोई नयी बात नहीं। हम जिन बातोंको उपयुक्त मानते हैं, उन्हें हमारे पूर्वज अनुपयुक्त मानते थे। इतिहास इस बातका साक्षी है कि प्रौढ़ और बालकमें सदा अनबन रही है। एक पीढ़ीकी संस्कृति और मान्यताओंसे कभी मेल नहीं होता। किन्तु यह नहीं कहा जा सकता कि एक पीढ़ीकी मान्यताएं उससे अगली पीढ़ीकी मान्यताओंसे अच्छी ही थीं। वास्तवमें यह परिवर्तन ही समाजकी उन्नति एवं प्रगतिका चिन्ह है। समाजकी इस प्रगतिके लिए बालक सदा अपने प्रिय एवं पूज्य जनोंसे संघर्ष करता आया है। उनके द्वारा लगाये गये बन्धनोंको तोड़कर ही वह अपनी अधिक शक्तिका परिचय देता है। यह तो प्रकृतिका ही नियम प्रतीत होता है। हमें उनके इस प्रकारके व्यवहारको अनुचित नहीं मानना चाहिए। यह संघर्ष उनमें शक्ति विश्वास वौर उत्तरदायित्वके गुणोंका संचार करता है।

यदि हम प्रौढ़ यह कहें कि बालक समाजके मूल्योंमें जो परिवर्तन लानेकी चेष्टा करता है, वे उसके अपने जीवनके लिए हानिकारक होते हैं तो यह बात पूर्णतः सत्य नहीं है। आजका बालक पहली पीढ़ीके बालकसे अधिक परिश्रमी है, अधिक गहराईसे सोचता है, अधिक प्यार करता है और देखनेमें भी अधिक सुन्दर लगता है।

हमें यह भी याद रखना चाहिए कि आजके वैज्ञानिक युगमें यांत्रिक प्रगति बड़ी तेजीसे हो रही है और इनसे हमारे वैयक्तिक, पारिवारिक एवं सामाजिक जीवनपर बड़ा प्रभाव डाला है। यही कारण है कि आजका सामाजिक जीवन बड़ा पेचीदा हो गया है। आज युवकको जीवनकी तैयारीके लिए अधिक समयतक शिक्षा प्राप्त करनेकी आवश्यकता है। अच्छी स्वास्थ्यसेवाओं और ज्ञानके कारण वह पहलेसे कम आयुमें ही वयस्क हो जाता है। पहलेसे अधिक समयतक वह अपने जीवनकी लम्बी तैयारीके कारण अपने माता-पितापर आश्रित रहता है। आजके किसानका बेटा किसान और डाक्टरका बेटा डाक्टर नहीं बनना चाहता। वह अपने लिए अलगसे कार्य पानेकी चेष्टा करता है और अपने पिताके कार्यमें हाथ नहीं बटाता। वह वास्तविक जीवनसे दूर भागना चाहता है। नशा करता है और माता-पितासे दूर एवं अलग रहना चाहता है। उसे अपने माता-पिताके विचारोंसे सहमति नहीं।

आज माता-पिता भी अपनी पूरी जिम्मेदारी शिक्षा संस्थाओं पर डाल देते हैं। वे बालकोंके लालन-पालन और उनको शिक्षा देनेमें अपने को असमर्थ एवं अयोग्य मानते हैं। वे चाहते हैं कि बालक अपना भोजन भी विद्यालयमें ले और वहीं छात्रावासमें रहे भी। आज बालकको माँ-बापके साथ बात-चीत करनेका समय भी प्राप्त नहीं हो पाता। कुछ परिवारोंमें तो यह हाल है कि माँ-बाप आपसमें भी कुछ घंटे ही साथ रह पाते हैं। बालकोंको कब देखें और उनसे बात कब करें ? जिन परिवारोंमें बालक माता-पिताके साथ रहते हैं, उनमें माँ-बाप बालककी आशाओं एवं इच्छाओंके अनुकूल अपने जीवनको ढालने या बदलनेका प्रयास करते हैं न कि बालक उनकी आकांक्षाओंके अनुकूल अपने जीवन बनानेकी चिंता करते हैं। आज पिता बालकको अधिक स्वतंत्रता देना चाहता है, उसके विकासको उसीकी

रुचियों एवं योग्यताओंके अनुकूल होने देनेमें अधिक विश्वास करता है। वह बालककी बहुत सी नादानियों और भूलोंको अनदेखा कर देता है।

आधुनिक मनोवैज्ञानिक एवं शिक्षाशास्त्री परिवारके प्यारको बालकके वांछित विकासमें बड़ा महत्त्वपूर्ण मानते हैं। पर बालक प्यार किसे मानते हैं? जब बालक माता-पिताकी आज्ञा मानता है तो मां-बाप उसे प्यार करते हैं। पर बालक इसे प्यार नहीं मानता। जब वह अपने माता-पिताकी आज्ञाका उल्लंघन करता है, वांछित सीमाएं तोड़ देता है, भूल करता है, अनुचित व्यवहार करता है और माता-पिता यदि उसे कुछ न कहकर, उसको भी बुरा न बताकर पहलेके समान प्यारका प्रदर्शन करें तभी वह मानता है कि मां-बाप उसे वास्तवमें चाहते हैं और प्यार करते हैं। यदि बालक इसको वास्तविक प्यार मानते हैं तो माता-पिता और समाज उनके अनुचित व्यवहारको कब तक सहे और उसके लिए मूल्य कब तक चुकाए? उसे किसी न किसी प्रकार प्यारका उचित अर्थ समझाना ही होगा। किन्तु यह सब कैसे हो।

केवल अपनी ही न कहें, बच्चोंकी भी सुनें

माता-पिताको इसके लिए कोई धन व्यय करनेकी आवश्यकता नहीं। उन्हें चाहिए कि वे बालकोंको अपना धन नहीं, समय दें। उनको अपनी बात न सुनाएं, उनकी बात सुनें। उनके जीवनको आदर्श बनानेका प्रयत्न न करें, अपने जीवनको आदर्श बनानेकी सोचें। उनके व्यवहारको वांछित बनानेकी न सोचें, अपने व्यवहारको उचित बनानेका प्रयास करें। उन पर प्रतिबन्ध न लगाएं। अपने व्यवहारको संयत करें। उनकी बुरी आदतोंको दूर करनेका प्रयास न करें, अपनी बुरी आदतोंको छोड़ दें। उनसे संघर्ष न करें, उनको अपनेसे संघर्ष करने दें। अपनी प्रशंसा स्वयं न करें। अपने विचार उनपर न थोपें। बालकोंको अपने विचारों एवं मूल्योंको परखनेके अवसर दें। अपनी भूलोंके लिए अपनेको और बालकोंकी भूलोके लिए उनको ही उत्तरदायी मानें। माता-पिता अपने विचारों पर दृढ़ रहें और उनको अपने विचारोंपर दृढ़ रहनेमें सहायता करें।

जिस प्रकार माता-पिता अपनी एवं बालकोंकी आवश्यकताओंकी पूर्ति हेतु कोई व्यवसाय करके धन कमानेका प्रयास करते हैं, उसी प्रकार उनको भी अनुभव कराएं कि धीरे-धीरे उनको अपनी बढ़ती हुई आवश्यकताओंकी पूर्ति हेतु और अपनी आने वाली सन्तान के लिए अभीसे किसी व्यवसायके योग्य होनेका प्रयास करना चाहिए और वर्तमान आवश्यकताओंकी पूर्ति हेतु भी माता-पिताके काममें कुछ हाथ बटाएं। इससे बालकोंमें आत्मसम्मान, विश्वास और आत्मनिर्भरताके गुणोंका विकास होगा और उन्हें पता लगेगा कि वास्तविक जीवन समस्याओंसे जूझनेका नाम है।

उन्हें इस बातका अनुभव कराएं कि यदि उन्हें प्यार, स्नेह, सहानुभूति एवं सहायताकी आवश्यकता है तो वे भी अपनेमें इन गुणोंका विकास करें एवं उनका प्रदर्शन करें। ऐसा करनेका अवसर एवं सुविधाएं उन्हें देनी चाहिए। माता-पिता उनको अपनी आवश्यकताएं बताएं और उनको अपनी आवश्यकताएं बताने दें। यदि वे न बताएं तो माता-पिता उनसे पूछें। ऐसा वातावरण निर्माण करें कि बालक और माता-पितामें खुलकर बात-चीत हो। कोई भी किसीसे कोई बात न छिपाए। माता-पिता जो कुछ बालकसे आज्ञा करें उसका कारण स्पष्ट करें और ऐसा ही उनको करनेको कहें।

जिन कामोंमें माता-पिताकी रुचि है और जिन कार्योंमें माता-पिताको आनन्द आता है, उनमें बालकको भी भागीदार बनाएं और ऐसा ही करनेका बालकसे भी आग्रह करें। यदि माता-पिता उसके अच्छे साथी बनेंगे तो वह भी उनका अच्छा साथी बननेका प्रयास अवश्य करेगा। इसके विपरीत अवस्थामें परिणाम भिन्न ही होंगे। यदि माता-पिता अपनेको परिवारके जिम्मेदार व्यक्ति मानते हैं तो उसे भी अवसर व सुविधाएं दें कि वह भी अपनेको ऐसा कहलानेका अधिकारी बन सके।

हमारे शरीरमें खनिज संतुलनमें गड़बड़ी

—डा० आर० मशोरोनी——

इस शताब्दीके आरम्भमें हृदयवाहिका रोगोंसे ज्यादा लोग पीड़ित नहीं होते थे, लेकिन अब अत्यधिक उद्योग-प्रधान देशोंमें इनके कारण सबसे अधिक मौतें होती हैं, अनुमानतः सभी मौतोंमें ५० प्रतिशत। गत कुछ दशकोंसे कारोनरी हृदय-रोगोंसे मृत्यु-दर तेजीसे बढ़ रही है। फिर भी औद्योगिक सभ्यतासे अपेक्षाकृत दूरके लोगोंमें यह रोग नहीं के बराबर है। विकासशील देशोंमें ये रोग बीचके दर्जेमें हैं, लेकिन हृदयवाहिका-सम्बन्धी मृत्यु-दरें वहाँ भी बढ़ रहीं हैं।

खान-पानकी आदतों, रक्त वसा स्तरों, घटती शारीरिक हरकत, आनुवंशिकी कारण, धूम्रपान, मनोसामजिक परेशानी और अन्य कारणोंसे इन भौगोलिक भिन्नताओं और चेतावनी वाले रुखोंको स्पष्ट करनेके प्रयत्नोंके सभी कोई परिणाम नहीं निकले हैं। कारोनरी हृदय-रोगोंके कारण और रोगजनन अभी अच्छी तरह नहीं मालूम, लेकिन हम यह जानते हैं कि अनेक पूर्ववृत्ति बातें इनका कारण बनती हैं।

कारोनरी हृदय-रोगोंसे मृत्यु-दरें जीवन स्तरोंके अंकों और टेक्नालाजीकल विकासके साथ-साथ बढ़ रही हैं। दूसरे शब्दोंमें जीवन-स्तर जितना 'अच्छा' होता है, उतनी ही अधिक मौतें हृदय-रोगोंसे होती हैं।

हालकी खोजोंसे तकनीकी विकाससे हृदयवाहिका रोगोंके सम्बन्धोंपर कुछ प्रकाश पड़ सकता है। खोजका ऐसा ही एक क्षेत्र तथाकथित "चिन्हत तत्त्व" हैं, अर्थात् शरीरके टिशूमें बहुत थोड़ी मात्रामें विद्यमान खनिज। यदि इनमेंसे कोई भी खनिज हृदय और रक्त प्रसार पर असर डालता है, जैसा कि वे शरीरके अन्य अनेक कामों पर करते हैं, तो यह आशा करना तर्कसंगत होगा कि वातावरणके औद्योगिक या अन्य किसी कृत्रिम हेर-फेरसे उनके प्राकृतिक संतुलनमें गड़बड़ीका प्रतिकूल प्रभाव पड़ेगा।

चिन्हित तत्त्व क्या हैं? पृथ्वीकी पपड़ीमें, अर्थात्, हमारे सारे भूरासायनिक वातावरणमें ९० से अधिक तत्त्व हैं। इनमेंसे केवल ११ तत्त्व हमारे शरीरमें पर्याप्त मात्रामें होते हैं—आक्सीजन, कार्बन, हाइड्रोजन, नाइट्रोजन, कैल्शियम, फास्फोरस, पोटैशियम, गंधक, सोडियम, क्लोरीन, मैगनेशियम। इसीलिए इन्हें 'बड़े' तत्त्व कहा जाता है। इनके जैविक प्रभाव मालूम हैं। अनेक और बहुत थोड़ी मात्रामें होते हैं। (शरीरके वजनके ०.१ प्रतिशत मात्रामें) और इसलिए इन्हें 'चिन्हित' तत्त्व कहते हैं। इनमेंसे सात या आठ—कोबाल्ट, तांबा, आयोडीन, लोहा, मैंगनीज, मोलिबडीनम जस्ता और संभवतः सेलेनियम—मानव जीवनके लिए आवश्यक हैं, क्योंकि इनका सम्बन्ध शरीरकी वृद्धिसे है। ये सांस, ग्रथिकार्यों और अन्य शारीरिक कार्योंके लिए भी जरूरी हैं। अन्य तत्त्वोंके लिए, जैविक उपयोगिता मालूम नहीं है। अनेकको केवल मिलावटके रूपमें देखा जा सकता है। यह संभव है कि कुछ चिन्हित तत्त्व हृदय और रक्त प्रसारके कार्योंमें महत्त्वपूर्ण योग देते हों। मसलन इनमेंसे कुछ तत्त्व हृदय कोशिकाओंकी संकुचनशीलताके नियंत्रण, वाहिका-दीवारोंके लचीलेपन, रक्तदान संचालन केंद्रों, वसाओं व शर्कराओंके चयापचय आदिके लिए जरूरी हो सकते हैं। दूसरी ओर यह भी संभव है कि दूषित तत्त्व जहरका काम देते हों, अर्थात् वे लाभदायक तत्त्वोंके काममें वाधा डालते हों, या अंगोंके ठीकसे काम करनेमें परिवर्तन कर देते हों।

वातावरणके अनुकूल बनाना

हजारों साल बाद आदमी प्राकृतिक वातावरण और संतुलनके अनुकूल हो गया है। वातावरणके प्रति यह सम्बन्ध चट्टानोंसे शुरू होता है, जो खनिजोंके मुख्य

स्रोत हैं। चट्टानोंसे खनिज मिट्टी, पानी, पौधों, पशुओं और आदमियोंमें जाते हैं। कुछ दशक पहलेका प्राकृतिक संतुलन स्वयं आदमीने कहीं बिगाड़ दिया है। औद्योगिक दृष्टिसे विकसित तथा कारोनरीके प्रति संवेदनशील देशोंमें, मिट्टी, पानी व हवा, विभिन्न कृषि कार्यों, जैसे सिंचाई व खादके उपयोग, खाद्यान्नमें मिलाये जानेवाले पदार्थों और उनके बनाने, जल उपचारके द्वारा, जैसे घरेलू कामकाजके लिए धातु या प्लास्टिक पाइपोंमें जल-वितरणसे प्राकृतिक संतुलनमें परिवर्तन आ गये होंगे, और फलस्वरूप हृदयवाहिका तंत्रपर खराब असर पड़ा हो। ये केवल सैद्धांतिक बातें हैं। लेकिन इनके सच होनेके भी कुछ प्रमाण उपलब्ध हैं।

सारी कहानी १९५७ में शुरू हुई जबकि एक जापानी वैज्ञानिकने यह पाया कि जापानके उन क्षेत्रोंमें जहाँ नदीका पानी अधिक अम्लीय था, वहाँ रक्ताघात अधिक होता था और जहाँ पानी कम अम्लीय था, वहाँ यह रोग कम था।

इस प्रेक्षणके बाद अमेरिकामें किये गये अध्ययनसे यह मालूम हुआ कि जिन राज्योंमें नरम जल (कैल्शियम व मैगनेशियम लवणोंकी मात्रा कम) दिया जाता था वहाँ सख्त पानीवाले इलाकोंकी अपेक्षा हृदयावाहिका रोगोंसे मृत्यु-दर अधिक थी। ऐसी ही स्थिति इंगलैंड, फिनलैंड, कनाडा, स्वीडन, नीदरलैंड व आयरलैंडमें पायी गयी। जिन क्षेत्रोंमें पानी—घरका पानी ही नहीं, बल्कि कुओं, जलाशयों और नदियोंका पानी—नरम था, वहाँ किसी न किसी प्रकारके हृदयवाहिका रोगसे मृत्यु दर अधिक पायी गयी। अन्य रोगों तथा मृत्युके अन्य कारणोंमें ऐसा संबंध नहीं पाया गया।

इतने देशोंमें इस प्रकारके संबंधकी पुष्टि होनेसे यह नतीजा निकलता है कि पानीमें कतिपय तत्त्वों या इससे सम्बन्धित तत्त्वोंका प्रभाव हृदयवाहिका तंत्र पर पड़ता है।

एक और प्रारम्भिक रिपोर्टसे इस सिद्धांतकी पुष्टि होती है: इंगलैंड और वेल्समें अनेक क्षेत्रोंमें अध्ययन किया गया क्योंकि उनकी जल सप्लाईकी किस्म अनेक वर्ष पहले बदल गयी थी, अर्थात् कुछ नगरोंमें पानी नरम हो गया था और कुछमें सख्त। जहाँ पानी नरम हो गया था, वहाँ हृदयवाहिका रोगोंसे मृत्यु दरोंका प्रतिकूल रुख पाया गया और जिन नगरोंमें पानी सख्त हो गया, वहाँ अनुकूल रुख था।

सख्त पानीके लाभकारी प्रभाव या मुलायम पानीके नुकसानदायक प्रभावके कारण अभी ज्ञात नहीं हैं। फिर भी यह बात महत्त्वपूर्ण है। वस्तुतः कुछ देशोंमें जन स्वास्थ्य अधिकारियोंने पानीको मुलायम बनानेकी विधियां रोकनेकी बात सोची है।

बहुत सख्त पानीके कुछ खराब प्रभाव पड़ते हैं, जैसे पाइपों, बायलरों और रेडियेटरोंमें पपड़ी जम जाना। सख्त पानीसे कपड़े धोनेके लिए अधिक साबुनकी जरूरत पड़ती है। इन व्यावहारिक कारणोंसे बहुत अधिक सख्त पानीको मुलायम बनाया जाता है, जिससे यह औद्योगिक व घरेलू कामकाजके लिए उपयुक्त हो सके। खर्च अधिक होनेके कारण पानीको मुलायम बनानेका काम केवल अत्यधिक औद्योगिक देशोंमें किया जाता है। इन विधियोंमें अधिकांश कैल्शियम व मैगनेशियम लवण तथा कुछ खनिज भी दूर हो जाते हैं। यह अभी नहीं मालूम कि पीनेके लिए जीवन-भर नरम पानी पीनेसे स्वास्थ्यपर खराब असर पड़ता है। बहुत अधिक मुलायम पानीका प्रभाव जंग लगानेवाला होता है। यह पाइपोंसे कैडमियम व सीसा जैसे नुकसानदायक तत्त्व हटा सकता है। ये तत्त्व फिर पीनेके पानीके अंग बन जाते हैं।

कुछ विशेषज्ञोंने सुझाव दिया है कि कैडमियमसे अतिरक्तदाब हो सकता है और वस्तुतः यह मालूम हुआ था कि गुर्दोंमें कैडमियम जमा होनेसे अतिरक्तदाब बढ़ता है। कुछ देश औद्योगिक गतिविधियोंसे कैडमियमके द्वारा प्रदूषण बढ़नेसे चिन्तित हैं।

एक वैकल्पिक स्पष्टीकरण यह है कि नरम पानीमें वे लाभकारी खनिज नहीं होते होंगे, जो सख्त पानीमें होते हैं।

'जल तत्त्व' के बारेमें इतना अधिक भावनात्मक होने से पहले एक बात सावधानीकी कहनी जरूरी है। अनेक समृद्धशाली समाजमें जितना पानी पिया जाता है, वह बहुत कम होता है। हमारा द्रव-संतुलन अन्य पेय, जैसे दूध, शराब, सोडा, शीतल पेय, फलोंके रस, काफी व चाय तथा सब्जियों, फलों व अन्य खाद्यान्नमें मौजूद जलसे बना रहता है। खाना पकानेमें पानी बहुत मात्रामें इस्तेमाल होता है और इस प्रकार खनिज पकाये जाने वाले भोजनपर जमा हो जाते हैं या उनसे निकलते हैं। इन सब पेय और खाद्यान्नमें खनिजकी मात्रा नल या कुँएके पानीसे बहुत भिन्न होती है और वास्तवमें हम जो पानी पीते हैं, उनसे कहीं अधिक खनिज हमारे शरीरमें पहुंचते हैं।

इसलिए इस बातका कोई कारण नहीं जान पड़ता कि पीनेका जल ही हृदयवाहिका तंत्रमें महत्त्वपूर्ण योग दे, अर्थात् यदि सख्त है तो लाभदायक और नरम है तो नुकसानदायक। फिर भी ऊपर जो परिणाम दिये गये है, वे इस प्रकारके रुखकी ओर संकेत करते हैं।

इसके अलावा, मुलायम पानीका हृदयवाहिका सम्बन्धी मृत्यु दरोंसे सम्बन्ध पीनेके पानीमें ही नहीं बल्कि नदीके जलसे भी पाया गया है जो सामान्यता पीनेके काम नहीं आता।

इससे संकेत मिलता है कि हमारे रोगोंका एक बड़ा कारण पानी नहीं बल्कि आम वातावरण है, अर्थात् चट्टानें व मिट्टी, जिनसे पानी होकर आता है।

भूविज्ञान कारक

यह बात हमें एक और समस्या पर ले आती है। यह है भूविज्ञान कारकोंका प्रभाव। सभी खनिजोंका प्राथमिक स्रोत चट्टानें हैं। चट्टानोंमें जो खनिज होते हैं, उनका असर पानी तथा जमीनकी ऊपरी सतह पर और अंतमें पौधों और इन पौधोंको खानेवाले पशुओंपर पड़ता है। भूतत्त्व वातावरणमें खनिजकी कमी या बहुलतासे संभवतः आदमी द्वारा लिए जाने वाले कतिपय खनिजोंमें भी घटबढ़ हो सकती है। यह भी अनिश्चित सिद्धांत है, लेकिन मानव स्वास्थ्यपर कतिपय भूरासायनिक वातावरणके कुप्रभावके प्रमाण उपलब्ध हैं। अमेरिकामें हुए प्रारम्भिक प्रेक्षणोंसे यह मालूम हुआ है कि उन क्षेत्रोंमें हृदयवाहिका रोगोंसे मृत्यु-दर अधिक है, जहाँ मिट्टीमें चिन्हित तत्त्व कम हैं, जबकि उन देशोंमें मृत्यु-दर कम है जिनके नीचे ऐसी चट्टानें हैं, जो टूट-फूटसे मिट्टीको चिन्हित तत्त्वोंकी अच्छी मात्रा देती रहती हैं।

अन्य प्रारम्भिक प्रेक्षणोंसे मालूम हुआ कि जिन देशोंमें हृदयवाहिका रोगोंके कारण मृत्यु दर अधिक है, वहाँ अधिक पुरानी चट्टानें होती हैं और वास्तवमें पुरानी चट्टानें नरम पानी पैदा करती हैं क्योंकि उनमें अपेक्षाकृत अघुलनशील खनिज होते हैं और उनको ढकनेवाली मिट्टीमें बहुत कम खनिज हो सकते हैं।

हमारे खाद्यान्न और टीशूमें एक तत्त्व क्रोमियम होता है। क्रोमियम वसाके निर्माण और ऐथिरोस्क्लीरोसिसके विरुद्ध महत्त्वपूर्ण पार्ट अदा करता है। उत्तरी अमेरिकाके जो लोग ऐथिरोस्क्लीरोसिस और कारोनरी रोगोंके प्रति अत्यधिक संवेदनशील होते है, आयु बढ़नेके साथ-साथ अपने टिशूसे क्रोमियम खो देते हैं। अन्तमें क्रोमियम समाप्त हो जाता है। अफ्रीका और एशियाके भागों में, जहां इन हृदयवाहिका रोगोंकी मात्रा कम है, लोगोंके शरीरमें जीवन भर क्रोमियमकी मात्रा अधिकाधिक रहती है। उत्तरी अमेरिकाके भोजनमें क्रोमियमकी कमी रहती है। बढ़िया चीनी और आटेमें क्रोमियम कम होता है और ये समृद्धशाली देशोंमें खाये जाते हैं।

ये सब प्रमाण इस बातकी ओर संकेत करते हैं कि भूतत्त्वीय वातावरण (चाहे वे चट्टानें हों, चाहे मिट्टी या पानी) तथा हृदयवाहिका रोगोंमें चिन्हित तत्त्व असंतुलन के द्वारा सम्बन्ध होता है। ये सब महत्त्वपूर्ण समस्याएं हैं। इनमें गहराईसे जानेकी जरूरत है और यह काम अंतरराष्ट्रीय स्तरपर होना चाहिए। विश्व स्वास्थ्य संगठन इस दिशामें कार्य कर रहा है।

(शेष पृष्ठ २४ पर)

ये अस्त्र-शस्त्र--जिनकी आप कल्पना भी नहीं कर सकते

—डा० अरुण कुमार सक्सेना—

वियतनाममें जो युद्ध हो रहा था, उसमें बड़ी-बड़ी शक्तियाँ विभिन्न प्रकारके नवीन अस्त्रोंका परीक्षण कर रही थीं और वियतनामी जनताको विशेष प्रकारसे बलिका बकरा बनाया जा रहा था। स्वतंत्रताके नामपर इस देशकी आधीसे अधिक जनता लगभग समाप्त-सी हो गयी है। भविष्यमें करोड़ों निरीह जनताका बलिदान तथा त्याग-के फलस्वरूप जो भी अच्छे फल प्राप्त होंगे उन्हें लगभग सौ वर्ष तक कुछ बड़े-बड़े नेता तथा उनके परिवार भोग करेंगे। जनता जिस स्थान पर थी, उसी स्थान पर रहेगी। ऐसा ही अन्य एशिया तथा अफ्रीकाके देशोंमें हो रहा है।

युद्धकी विभीषिकाओंका वर्णन करना तो समयको नष्ट करना होगा, क्योंकि प्रथम तथा द्वितीय महायुद्धकी यादोंको भुलाया नहीं जा सकता है। बमोंके दिल दहलाने वाले धड़ाके मीलों दूरपर स्थित मकानोंकी खिड़कियों-दरवाजों तथा शीशोंको चटका देते थे, किंतु आजके यह सर्वथा निशब्द अस्त्र ऐसा प्रलयकारी विनाश कर देते हैं कि जिनका आभास कुछ समयके पश्चात् होता है। ये अस्त्र जीवाणु विज्ञान तथा रसायनसे अपना विशेष सम्बन्ध रखते हैं। ये अस्त्र वायुयान द्वारा छितरा कर राकेटकी तरह फेंककर, गोलोंकी तरह छोड़ कर तथा तटोंपर सुरंगोंकी तरह लगाकर प्रयोगमें लाये जाते हैं। इनसे विभिन्न प्रकारके रोग फैलते हैं तथा शरीरपर विचित्र प्रभाव पड़ते हैं। इन अस्त्रोंकी मार अचूक होती हैं। जीवाणु-विज्ञानके सम्बन्धित कुछ भयंकर रोगोंका वर्णन किया जा रहा है जो कि इन अस्त्रोंके द्वारा फैलाये जाते हैं।

न्यूमोनिक प्लेग

पास्टेयुरिला पेस्टिस नामक जीवाणु, जो कि सभी हानिकारक जीवाणुओंमें सबसे हानिकारक है, को इन अस्त्रोंमें प्रयोग किया गया है। इसने छठी शताब्दीमें अपनी भयंकरता 'जस्टियन प्लेग' फैला कर दिखाई थी और मध्यकालमें इसे ही यूरोपमें 'काली मौत' के नामसे पुकारा जाता था। इससे फैला रोग अपने रोगियों-को लगभग सौ प्रतिशत नष्ट करनेकी क्षमता रखता है। यह रोग विद्युत गतिसे मनुष्योंको अपनी चपेटमें लाता है।

पलमोनरी एन्थ्रैक्स

इस रोगको अलसोर्टरके नाम से भी पुकारा जाता है। यह विशेषकर फेफड़ोंपर अपना दूषित प्रभाव डालता है और जब ज्वर तीव्र हो जाता है, तब इस रोगका पता चलता है। इस रोगपर किसी भी ऐन्टिबायोटिक्सका वश नहीं चलता। इससे पीड़ित रोगी लगभग चौबीस घण्टोंमें समाप्त हो जाता है।

टायफस

यह रोग रिकेटशिया नामक जीवाणुओंके द्वारा फैलता है। इसमें भी रोगी तीव्र ज्वरसे पीड़ित रहता है। इसी रोग ने, १४८८ ई० में स्पेन के 'ग्रानादाके घेरे' में लगभग १७,००० सिपाहियों का, १८१२ ई० में नेपोलियनकी सेना तथा द्वितीय महायुद्धके दौरान हिट्लरके बंदियोंका बड़ी ही शीघ्रतासे काम तमाम किया था।

बोटुलिस्म

यह विशेष प्रकारका जीव विष है, जिसे बोटुलिस्म जीवविषके नामसे पुकारते हैं। यह जीव विष क्लोस्ट-रिडियमबोटुलिनियम नामक जीवाणुओं द्वारा बनाया गया है। यह संसारके सबसे विषाक्त पदार्थ पोटेशियम साइनाइड से भी ३००,००००,००० गुना विषाक्त है। कहा जाता है कि फ्रांस जैसे देशकी समस्त जनसंख्याको इसके केवल एक औंसके द्वारा समाप्त किया जा सकत

है । इसका प्रभाव बिलकुल तंत्रिका गैसोंके समान मनुष्य-पर होता है ।

इसी प्रकारके अनेक विनाशकारी रासायनिक पदार्थ भी है, जिनका भी बिना किसी हिचकिचाहटसे युद्ध भूमिमें प्रचुर मात्रामें प्रयोग किया जाता है ।

तन्त्रिका गैस

इन्हें विशेषकर जी ए, जी वी, जी डी तथा वी एक्स नामोंसे पुकारा जाता है । इनमें वी एक्स तो सबसे हानिकारक गैस है । ये सब गैसें कोलीनिस्ट्रेएज् नामक एक एन्जाइम, जो कि तन्त्रिका तन्त्रके कार्य-कलापोंमें अत्यन्त आवश्यक है, का बनाना एकदम बन्द कर देती है । इसका प्रभाव यह होता है कि शरीरमें लकवे जैसे स्थिति उत्पन्न हो जाती है और रोगी लगभग तीस सेकेंडमें समाप्त हो जाता है । वी एक्स गैस विषैली मस्टर्ड गैससे भी ७५ गुना विषैली है । इस मस्टर्ड गैसका प्रयोग सर्वप्रथम प्रथम महायुद्धमें हुआ था । यदि वी एक्सकी एक बूंद भी शरीरके किसी भी भाग पर पड़ जाये तो मृत्यु अवश्यंभावी है । बताया जाता है कि अमरीकाके उटा स्थित सेनाके डुगवे प्रोविंग ग्राउन्ड में ६,४०० भेड़े चर रही थीं, कि एका-एक इसके एक हल्केसे झोंकेने उन सबको समाप्त कर दिया ।

नवीन प्रकारके और भी हानिकार उदस्फोटक

कुछ ऐसे रासायनिक पदार्थ हैं, जो कि मानव शरीर पर बड़ा ही विचित्र प्रभाव डालते है । इनके प्रभावके फल-स्वरूप शरीर छालोंसे भर जाता है ऐसे पदार्थोंको उदस्फोटक पदार्थ नामसे पुकारा जाता है । आजकलकी नवीन नाइट्रोजन मस्टर्ड पुरानी मस्टर्ड गैससे कहीं अधिक हानिकारक है । जो भी मनुष्य आंखों तथा फेफड़ोंपर छाले पड़नेसे बच निकलता है, वह भी कुछ मासके पश्चात् हड्डीकी मज्जामें विशेष गड़बड़ीके कारण स्वयं समाप्त हो जाता है ।

इन सबके अतिरिक्त अमरीकी सेनाके पास वी जेड नामक एक और गैस है जो सर दर्द तथा कै पैदा कर देती है । एल एस डी गैसका कुप्रभाव भी बड़ा ही विचित्र-सा है । यह मनुष्योंको पागल कर देती है ।

नवीन अस्त्र गैस सी एस, सी एन तथा एडेमासाइट आदि भी हल्की गैसे हैं जो कि दंगों आदिमें प्रयोगमें लाई जाती है । इन्हींको प्रचुरतासे वियतनाममें सुरंगों खाइयोंमें छिपे वियतकांग सैनिकोंको निकालनेके लिये प्रयोगमें लाया जाता था । नेपाम आदि स्वतः आग उत्पन्न करके दहन करनेवाले भयंकर पदार्थों की कोई कमी नहीं है । आजकलमें पदार्थ भी लगभग पुरानेसे हो चुके हैं । और इनका स्थान और भी भयंकर पदार्थों ने ले लिया है जिसकी विनाशकारी क्षमताका अभी तक किसीको भी पता नहीं है ।

इन सभी पदार्थों पर शोध कार्य अमरीकामें फिडरिकके पास फोर्टफिडरिक प्रयोगशालामें चल रहा है । इसी स्थान पर अमरीकाका सबसे बड़ा जानवरोंका बाड़ा भी है । इसी प्रकारका कार्य जर्मनीके वोकम शहरमें भी चल रहा है । सोवियत रूसके वैज्ञानिक भी इस दिशामें बड़ा महत्त्व पूर्ण कार्य कर रहे हैं ।

अमरीका नवीनतम अस्त्रोंका परीक्षण सर्वप्रथम डुगवेमें करता है, जो कि साल्ट लेक सिटीके पास स्थित है । अन्तमें ये सब नवीन अस्त्र अरकान्साजके पाइन व्लफ शस्त्रागारमें एकत्रित किये जाते हैं । यह शस्त्रागार लगभग २७८ स्टीलके कमरोंसे मिला कर बना है । ये पूराका पूरा शस्त्रागार पृथ्वीके नीचे लगभग चार-पाँच फुट गहराई पर है ।

यह बात सुनकर आश्चर्य होगा, कि ये सब अस्त्र अब पुराने पड़ चुके हैं और अमरीका इन्हें कहीं नष्ट कर देना चाहता है अर्थात् इनसे भी भयंकर अस्त्रोंका निर्माण हो रहा है, जिनका विनाशकारी प्रभाव अत्यन्त पेचीदा हो सकता है ।

यह बड़ी विचित्र सी बात है कि मनुष्य इतना अधिक ऊँचा उठ गया है जिसका अनुमान सहज नहीं लगाया जा सकता है किन्तु आश्चर्य है कि उसने अपनी पशुतापर विजय क्यों नहीं प्राप्त की है ।

(विज्ञानसे साभार)

बच्चेकी सेहत ख़ुराक व नींद

छोटे बच्चोंको ऐसी ख़ुराककी जरूरत होती है जिससे एक तो उनकी सेहत ठीक रहे, दूसरे उनकी माँस-पेशियाँ, हड्डियाँ और दाँत मजबूत बन सकें और शरीरमें खून खून बने। दाँत निकल आनेपर बच्चेको दूधके अलावा खाने-पीनेकी और चीजोंकी भी जरूरत होती है। इसलिए उसे ऐसा भोजन दिया जाय, जिसे वह मजेसे खा भी ले और साथ ही उसकी सेहत भी तरक्की करती रहे। बच्चा सिर्फ पेट भरनेके लिए ही भोजन नहीं खाता बल्कि उससे उसकी नीचे लिखी जरूरतें भी पूरी होनी चाहिए—

१) उसका शारीरिक विकास हो सके।
२) शरीरकी शक्ति बनी रहे।
३) सेहत ठीक रहे।

पौष्टिक तत्व वाले भोजनकी योजना बनाते वक्त या खाने-पीनेकी चीजें खरीदते समय इन बातोंको जरूर ध्यानमें रखिए कि एकसे तीन साल तकके बच्चेको किन-किन चीजोंकी जरूरत होती है।

दूध—दूध बच्चोंके लिए सबसे बढ़िया खुराक है। इसमें सभी विटामिन होते हैं। बच्चोंकी बढ़वारके लिए दूध बहुत जरूरी है। दिनमें बच्चेको दो या तीन प्याले दूध पीनेके लिए दें। कुछ दूध, आइसक्रीम, खीर या हलवे आदिके रूपमें भी दिया जा सकता है।

अंडा—दिनमें एक बार। अंडेकी जर्दी एक पौष्टिक आहार है। जिन घरोंमें अंडेका इस्तेमाल न होता हो, वे पनीर आदि दे सकते हैं।

रोटी या अनाज—दिनमें चार-पाँच चम्मच या जरूरतके मुताबिक इससे ज्यादा।

मक्खन-घी आदि—रोटी या डबल रोटीपर लगा कर या दाल-सब्जीमें डालकर, थोड़ा-थोड़ा हर रोज।

सब्जियाँ—बच्चेकी पसन्दके मुताबिक कोई भी हरी सब्जी या आलू आदि पकाकर दीजिए। दिनमें दो-तीन चम्मच या इससे ज्यादा।

माँस, मछली आदि—एक बड़ा चम्मच भरकर या इससे ज्यादा। अगर आप माँसाहारी नहीं हैं तो अपने बच्चेको दाल, फलीदार सब्जियाँ जैसे कि मटर, सेम आदि दे सकते हैं।

फल—मौसमी, संतरा, टमाटर आदि फलोंका रस निकालकर पिलाएं या ऐसे ही खिलाएं। इन फलोंसे शरीरको विटामिन 'सी' मिलता है।

भोजन कितनी बार ?

कुछ बच्चे दिनमें तीन बार भोजन करके बिल्कुल ठीक रहते हैं। लेकिन एकसे तीन सालकी उम्रके ज्यादातर बच्चे, एक या दो बार कोई हल्की चीज भी जैसे कि बिस्कुट, डबल रोटीके स्लाइस आदि खाना चाहते हैं। ये चीजें सुबहके नाश्ते और दोपहरसे भोजनके बीच और दोपहर तथा रातके भोजनके बीच दी जा सकती हैं।

कई बच्चे खानेके समय बहुत नखरे करते हैं। बच्चोंके इन नखरोंकी तरफ ज्यादा ध्यान नहीं देना चाहिए। एक बार भूखा रहकर दूसरी बार बच्चा खुद ही भर-पेट खा लेगा।

इनाम आदिका लालच

बच्चेके खाना न खाने और भूखे रहनेपर उसे इनाम या कोई और लालच देकर भोजन खिलानेकी कभी कोशिश न करें, नहीं तो वह हमेशा ही आपसे ऐसी उम्मीद करेगा। इस तरह उसकी आदत बिगड़ जायगी।

माँ-बाप और घरके दूसरे लोगोंको चाहिए कि खानेपीनेके मामलेमें बच्चोंकी जिदके आगे न झुकें बल्कि अगर सख्तीकी जरूरत महसूस हो तो सख्ती बरतनेमें

भी संकोच न करें। आपकी जरा सी सख्तीसे बच्चेमें अच्छी आदतें पड़ेंगी।

सोनेके वक्त

कई बच्चे सोनेके वक्त भी बहुत परेशान करते हैं। एक बार ढककर लिटा देनेपर वे पानी पीने या पेशाब करनेके बहाने बार-बार उठकर तंग करते है। अगर बच्चा दिनमें सोया है तो रातको उसे जल्दी नींद नहीं आएगी, ऐसी हालतमें उसे पलंगपर लिटाकर किसी खिलौनेसे खेलने दें या फिर किसी पुस्तक या पत्रिकामेंसे तस्वीरें आदि दिखाएँ। इससे बच्चेका मन बहल जाएगा और वह कुछ देरमें थककरअपने आप ही सो जायगा।

सोनेसे पहलेके इस समयका पूरा-पूरा फायदा उठाया जा सकता है। बच्चेको कोई रोचक और शिक्षाप्रद कहानी सुनाएं। बच्चे आम तौरपर बिल्ली, कुत्ते और दूसरे जानवरों या परियों आदिकी कहानियाँ सुनना पसंद करते हैं। इसी बहाने आप बच्चेको रुचि भी जान सकते हैं। हो सकता है कि कई बार बच्चा उस कहानीमें दिलचस्पी न ले जो आप उसे सुनाना चाहते हैं या सुना रहे हैं बल्कि वह अपनीपसंदकी कोई कहानी सुनाना चाहेगा और उसपर जोर देगा। इसलिए बच्चेको उसकी पसंदकी कहानी सुनाइए। बच्चेको कभी निराश न कीजिए। उसे खुश करनेके लिए कई तरहकी कहानियाँ याद कर लीजिए।

बच्चेको जबरदस्ती सुलानेके लिए कभी डाँट-डपट न करें। इससे बच्चेका मूड बिगड़ जाता है और हो सकता है कि वह जल्दी न सोए और रोने लगे। इससे बच्चेकी मानसिक शान्ति तो भंग होगी ही, आपको भी परेशानी होगी। पूरी नींद न मिलनेके कारण बच्चेकी सेहतपर भी बुरा असर पड़ सकता है।

जिस बच्चेके खाने-पीने और सोनेका निश्चित समय है, वह माँ-बापको ज्यादा परेशान नहीं करता। माँ-बापको इस बातका ख्याल रखना चाहिए कि बच्चा दिनमें जरूरतसे ज्यादा न सोये, नहीं तो वह रातको परेशान करेगा। अगर बच्चा रातको ज्यादा देर तक जागता रहे तो माँकी नींद खराब करेगा। बच्चेके कारण रातको ज्यादा देर तक जागनेसे माँकी सेहत खराब हो जानेका भी डर रहता है। अगर माँ बीमार पड़ जाय तो बाल-बच्चोंकी देखभाल और घरके दूसरे काम-काजमें पतिको बहुत दिक्कत होती है। इसलिए जरूरी है कि बच्चोंके खाने-पीने और सोनेका पूरा-पूरा ध्यान रखा जाय।

(घर-परिवारसे साभार)

[पृष्ठ २० का शेषांश]

तथाकथित 'प्राचीन' लोगोंके समूहके अध्ययनसे अच्छे परिणाम मिल सकते हैं। ये लोग अब भी प्राकृतिक वातावरणके निकट संपर्कमें रहते हैं। ये समूह औद्योगिक दूषण तथा हमारी औद्योगिक सभ्यताकी अन्य बातोंसे मुक्त हैं। वे स्थानीय भोजन करते हैं और प्रकृतिमें जैसा पानी मिलता है, पीते हैं। इन लोगोंके बारेमें अभी अनुसंधान जरूरी है क्योंकि फिर ये लोग औद्योगीकरणके साथ बदल जायेंगे। इनका जीवन अभीसे बदल भी रहा है।

मानव स्वास्थ्यपर वातावरणीय प्रभावकी समझ निश्चित रूपसे हृदयवाहिका रोगोंके प्राकृतिक इतिहासकी भी समझ बढ़ेगी। इससे यह भी मालूम होगा कि ये रोग कुछ देशोंमें कम और कुछमें ज्यादा, कुछ सभ्यताओंमें भिन्न-भिन्न रूपमें बढ़ क्यों रहे हैं। हो सकता है कि कि स्वास्थ्य अधिकारी चिन्हित तत्त्व वातावरण और खान-पानकी आदतोंमें परिवर्तनसे इन रोगोंपर काबू पाया जा सके। पानीमें क्लोरीन मिलाने, नमकमें आयोडीन मिलाने और कतिपय खाद्यान्नमें विटामिन मिलानेसे स्थिति ठीक हो सकती है।

●

सबके लिए पौष्टिक खाद्य पदार्थ

नीचे कुछ पौष्टिक खाद्य पदार्थ दिये जा रहे हैं जिन्हें आप स्थानीय तौर पर उपलब्ध सामग्रीसे बना सकते हैं और गांवोंके केन्द्रोंमें जिनका बखूबी उपयोग किया जा सकता है।

पूड़ा

घटक	मात्रा ग्रामोंमें	कैलोरियां	प्रोटीन ग्रामोंमें
गेहूंका आटा	६०	२०५	७.३
चीनी	२०	८०	—
अजवाइन	३	—	—
घी	१०	९०	—
पानी	८० मिली० लगभग		—
		३७५	७.३

विधि

१. छने हुए गेहूंके आटेमें अजवाइन मिलाएं।

२. पानीमें चीनी घोलें और आटेमें चाशनी मिलाएं।

३. गाढ़ा घोल तैयार करें और इसे १० मिनट तक पड़ा रहने दें।

४. तवेको गरम करें और इसपर थोड़ा घी डालें।

५. तवेपर यह गाढ़ा घोल डालें और इसे चारों ओर फैला दें।

६. पूड़ेके चारों ओर घी डालें और इसे पलट दें।

७. पूड़ेकी दूसरी तरफ भी अच्छी तरह सेक लें।

८. इस घोलसे दो छोटे-छोटे पूड़े तैयार करें।

चना-मूँग चाट

घटक	मात्रा ग्रामोंमें	कैलोरियां	प्रोटीन ग्रामोंमें
बंगाली चना	१५	५०	३.६
हरे साबत चने	१५	५०	३.६
नीबू	५	—	—
नमक (सफेद)	स्वादके मुताबिक		
		१००	७.२

विधि

१. रातको सफेद बंगाली चने और हरे चने पानीमें भिगोकर रख दें।

२. अगले रोज पानीको निकाल दें, चनोंको मलमलके एक कपड़ेमें बांधकर लटका दें ताकि पानी निकल जाय। इस बीच कपड़ेपर थोड़ी-थोड़ी देर बाद पानी छिड़कते रहें ताकि कपड़ा गीला रहे।

३. अगले दिन हरे चनों और बंगाली चनोंमें अंकुर फूट आएंगे। (अगर अंकुरित चनोंकी जरूरत है तो दो दिन पहले तैयारी शुरू कर दें।)

४. इन चनोंमें थोड़ा पानी और नमक डालकर इन्हें लगभग पांच मिनट तक उबालें जब तक ये गल न जाएं।

५. चनोंको ठण्डा करें और परोसनेसे पहले इनमें नींबू निचोड़ कर डालें।

कुल लागत : २४ पैसे
पोषक तत्व : ४७५ कैलोरियां
—१५ ग्राम प्रोटीन

बंगाली चना और आलू

घटक	मात्रा ग्रामोंमें	कैलोरियां	प्रोटीन ग्रामोंमें
बंगाली चना (सफेद)	३०	१००	७.२
आलू	५०	४९	०.८
घी	५	४५	—
नमक		स्वादके मुताबिक	
नींबू	.५		
		१९४	८.०

विधि

१. सफेद काबुली चनोंको रात भर भिगो रखें।

२. चनोंको तबतक उबालें जबतक वे गल न जाएं।

३. आलूओंको उबालें और उनका छिलका उतार कर उनके छोटे-छोटे टुकड़े करें।

४. घी गरम करें और इसमें थोड़ा जीरा डालें।

५. चने और आलू इसमें डाल दें। जरूरतके मुताबिक नमक डालें। थोड़े पानीमें कुछ मिनट तक पकाएं।

६. इसे ठंडा करें और इसमें नींबू निचोड़ कर डालें।

* * *

एक महिलाने बससे उतरते समय जान-बूझकर एक पैकेट बसकी सीटपर छोड़ दिया। एक यात्रीसे उसके ऐसा करनेका कारण पूछे बिना नहीं रहा गया।

'मैं तो रोज ही ऐसा किया करती हूं।' महिलाका जबाब था, 'यह मेरे पतिका खानेका पैकेट था। वे गुम हो जानेवाली चीजोंको जमा करनेवाले दफ्तरमें काम करते हैं।'

* * *

'मेरी बेटी इतनी होशियार है कि दो सालकी होनेपर भी अपने नामको उल्टा करके बोल लेती है।'

'अच्छा! क्या नाम है उसका?'

'कनक'

* * *

'टिकट दिखलाइए!' टिकट-चेकरने एक महिला यात्रीसे कहा जिसके साथ एक लड़का भी था।

'यह देखिये! डेढ़ टिकट!'

इसपर टिकट चेकरने लड़केको घूरकर देखा और बोला, 'आपको इसका पूरा टिकट लेना होगा। यह १४ के ऊपर है।'

'यह कैसे हो सकता है, मेरा ब्याह हुए तो अभी १२ साल ही हुए है?' महिलाने गुस्सेसे कहा।

'देखिए श्रीमतीजी मुझे किराया लेनेसे मतलब है, आपके निजी जीवनमेंसे कुछ कबूलवानेसे नहीं।'

कठफोला

—कु० ज़किया बानू—

मशरूमको भारतमें कठफोला, कुकुरमुत्ता या साँपकी छतरी आदि अनेक नामोंसे जानते हैं। यह ऐसा साधन है जिससे बहुत पौष्टिक और सुगन्धित भोजन मिल सकता है। ईसवी सन्की शुरूआतसे पहले कवि होरेसने अपनी एक किताबमें कठफोलाके अच्छे गुणोंका वर्णन किया है। पहली सदीमें डॉयस्कारीडीज़ने अपनी 'डीमैटीरिया मैडिका' नामक किताबमें ज़हरीले और खानेके लायक़ दोनों तरहके कठफोलोंका खुलासा दिया है। बेबीलोनिया और यूनानमें लोग एक जमानेसे अपने रोजानाके खानेमें इन्हें इस्तेमाल करते रहे हैं। रोमन नागरिक इन्हें देवताओंका भोजन मानते थे और वे अपने खास त्योहारोंपर इसका बना भोजन बहुत चावसे खाते थे।

बनस्पति-जगतमें कठफोला फफूंदी जातिके वर्गमें आता है। दूसरे पौधोंमें और फफूंदीमें यह फर्क है कि इनमें क्लोरोफिल[1] नहीं होती। यही वजह है कि ये कार्बन डाई-आक्साइड और पानी आदि साधारण यौगिकोंसे अपना भोजन अपने आप नहीं बना सकते; इन्हें उन पदार्थोंके सहारे रहना पड़ता है जो कार्बनिक हों और अर्द्धविग्रहीत हों। ऐसे रसायनोंका रूप बदलनेके लिए ताप और पानीकी ठीक मात्राकी जरूरत पड़ती है। इसलिये इनकी खेती दूसरे पौधोंकी निस्बत कुछ अलग और मुश्किल है।

कठफोलोंके बीज नहीं होते। इनकी नस्ल छोटे-छोटे जीव-बिन्दुओं या बीजाणुओंके ज़रिये बढ़ती है; ये बीजाणु धूलके कणों से भी छोटे होते हैं जो कठफोलोंकी निचली सतह और किनारोंपर बहुत बड़ी तादादमें पैदा होते हैं। इनकी उम्र कुछ घण्टोंकी होती है। अनुकूल वातावरण मिलने पर ये बीजाणु अंकुरित हो जाते हैं और धागेकी शक्लमें बदल जाते है जिसे कवकजाल (माइसीलियम) कहते हैं। यह माइसीलियम शाखाओंमें-बँट जाता है। बँटकर एक मोटी तह बना देता है जिससे कुछ समय बाद कठफोला बन जाता है। जैसा कि हम जानते हैं, आम, सेब या नारंगीको बीजके बजाय कलम बाँधकर उगाया जाता है; इसी तरह कठफोला भी पहलेसे तैयार माइसीलियमके छोटे-छोटे टुकड़ोंसे उगाया जाता है; और हम आसानीसे बहुत जल्दी फ़सल तैयार कर सकते हैं, माइसीलियमके जमीनमें रहनेवाले हिस्सेको कुम्भी (स्पान) कहते हैं। कुम्भीको अच्छे तरीकोंमें सुरक्षित रखा जाता है।

कठफोलेकी खेती करनेवालोंने बहुत दिनों तक कुम्भी बनानेका तरीक़ा अपने तक ही महदूद रखा, इसलिये सैकड़ों साल तक इसमें कोई खास तरक्क़ी न हो सकी; अब यह तकनीक बहुत आम हो गयी है और अनेक देशोंमें इसके विषयमें साहित्य छप रहा है।

कुम्भियाँ कई क़िस्मकी होती है, जैसे ईंटके आकारकी कुम्भी, पंख कुम्बी, शुद्ध कृषि कुम्भी आदि। सन् १९३४ में अमेरिकाके कठफोलोंके उद्योगने जनताको एक नयी, क़िस्मकी कुम्भी दी जिसका नाम है उन्नत कृषि कुम्भी। प्रयोग करनेपर देखा गया कि यह कुम्भी औरोंकी निस्बत थोड़े ही समयमें उम्दा फ़सल देती है, हम अपनी अनुसन्धानशालामें जिन कुम्भियोंसे फ़सल उगा रहे हैं, वे धानके फूस (पुराल), लकड़ीके बुरादे और सस्ते अनाजों पर अच्छी तरह उगती हैं, मगर, फूसमें उगी हुई कुम्भियां सबसे ज्यादा अच्छे नतीजे देती हैं।

सत्रहवीं सदी तक जंगली कठफोला जो खाली जमीन या चरागाहोंमें पाया जाता है, इस्तेमाल किया जाता था। किसीने इसकी खेतीपर ध्यान नहीं दिया। सबसे पहले फ्रांसमें लुई १५वें के शासन कालमें यह कार्य आरम्भ किया गया। पहले विश्वयुद्धमें खानेकी

---

१. क्लोरोफिल, पत्तियोंमें हरे रंगका एक रसायन होता है।

कमी होनेपर लोगोंने खाने लायक फफूंदी जातिके पौधोंको अपने खानेमें शामिल कर लिया; तभीसे इसकी वैज्ञानिक पैदावारका महत्व समझा गया। पश्चिमी देशोंमें इसीलिये इस क्षेत्रमें काफी तरक्की हो चुकी है। पूर्वीय देशोंमें चीन और जापानमें फफूंदीय पौधोंका बहुत इस्तेमाल होता है।

विदेशोंमें कठफोलोंकी खेती व्यापारिक पैमाने पर की जाती है। इसके लिए खास तरहके बड़े-बड़े बिना खिड़कियों वाले मकान होते हैं, ताकि बाहरका तापमान बदलनेसे उनपर कोई असर न पड़े।

जहरीला कठफोला

कुछ कठफोलोंमें विष होता है, पौधोंसे मिलनेवाले जितने विष हैं उनमें यह सबसे खतरनाक है। वैसे हर क़िस्मका कठफोला कुछ आदमियों पर कभी-कभी हल्के जहरका असर कर देता है जो करीब २४ घंटे तक रहता है।

भोजन क्षमता

कठफोला सिर्फ खुशबू ही नहीं रखता इसमें निश्चित भोजन-क्षमता भी होती है। इसमें वही सब पदार्थ रहते हैं जो कि ताजे फलों और तरकारियोंमें पाये जाते हैं, लेकिन खनिज लवणोंकी दृष्टिसे लोहे और तांबेकी मात्रा इसमें ज्यादा होती है; प्रोटीन व कार्बोहाइड्रेट भी काफ़ी रहते हैं, विटामिन हासिल करनेके लिए भी कठफोला अच्छा साधन है क्योंकि इसमें विटामिन ए, डी, ई और बी १२ के अलावा बाक़ी सब विटामिन खूब होते हैं।

कठफोलासे आर्थिक लाभ भी होता है, खानेकी पौष्टिकता बढ़ानेवाले पदार्थोंसे कठफोला अपनी तरहका एक ही है। इसमें ऐसी खूबियां हैं कि कम पौष्टिक भोजनको वसा और प्रोटीन-युक्त करके अधिक पुष्ट बना देता है। इसकी खेती बड़ी आसानी से की जा सकती है, इससे जो प्रोटीन प्राप्त होते हैं उनसे उद्योगोंको बढ़ावा मिल सकता है।

रूपान्तरकार—सी० एस्० एस्०

('खाद्य विज्ञान' से साभार)

KURAZOL
(Liquid & Tablet)
A Remedy for Asthma

ADIOL COMPOUND
A General Pick-up

HEMOGASTRIN
A Digestive & Haematinic Tonic

LYCOLIV
A Liver Tonic

Products of :
INTERNATIONAL CHEMICAL & BIOLOGICAL INSTITUTE
PRIVATE LIMITED
KURAZOL HOUSE, BANGALORE-4

परिवार नियोजन पूरक

भारतमें परिवार नियोजन कार्यक्रमकी प्रगति

—डा० बी० सी० श्रीवास्तव—

(रीडर, सोशल एंड प्रिवेंटिव मेडिसिन, मोतीलाल नेहरू मेडिकल कालेज, इलाहाबाद)

विकास

१८७७—श्रीमती एनी बेसेंटको प्रथम मंत्री नियुक्त कर माल्थूसियन लीगकी स्थापना। प्रथम बार जनता के समक्ष जनसंख्याकी समस्या प्रस्तुत की गयी।

१९१२-२३—अमेरिकाकी जनस्वास्थ्य परिचारिका श्रीमती मार्गरेट सैंगरने जन्म नियंत्रण अभियानका नेतृत्व किया। सन् १९२१ में उन्होंने एक बर्थ कंट्रोल लीगकी स्थापना की।

१९२३—डा० मेरी स्टोप्सने इंगलैंडमें जन्म नियंत्रण अभियानको लोकप्रिय बनाया।

१९२५—बंबईमें प्रोफेसर कर्वेने जन्म नियंत्रणका प्रचार आरंभ किया।

१९३०—मैसूर सरकारने प्रथम सरकारी जन्म नियंत्रण क्लिनिक खोली।

१९३५—इंडियन नेशनल कांग्रेसने परिवार नियोजनके पक्षमें मत व्यक्त किया।

१९४९—श्रीमती रामारावके नेतृत्वमें बंबईमें भारतके फैमिली प्लानिंग असोसियेशनकी स्थापना।

१९५१—भारतके जनगणना आयुक्तने देशमें जनसंख्याकी तीव्रवृद्धिका संकेत करते हुए उसके नियंत्रणके त्वरित उपाय करनेकी सिफारिश की। भारत सरकारका योजना आयोग तत्काल ही जनसंख्या नियंत्रणके सर्वव्यापक कार्यक्रम तैयार करनेकी ओर कृत संकल्प हुआ।

प्रथम योजना—केन्द्रीय स्वास्थ्य मंत्रालयने १९५३ में सरकारी कार्यक्रमके रूपमें परिवार नियोजन आरंभ किया। सरकारी स्तरपर परिवार नियोजन कार्यक्रम चलानेवालोंमें भारतको सरकारने पहल की। १४७ परिवार नियोजन केंद्र खोले गये।

दूसरी योजना—भारत सरकारने और भी प्रबल कार्यक्रम चलाया। क्लिनिकोंकी संख्या बढ़कर ४१६५ हो गयी। केन्द्रमें एक केन्द्रीय संगठन बनाया गया जिसमें एक परिवार नियोजन निदेशककी नियुक्तिकी गयी। १९५६ में केंद्रीय परिवार नियोजन बोर्ड बनाया गया जिसके केंद्रीय स्वास्थ्य मंत्री चेयरमैन थे। इसका उद्देश्य राज्य स्वास्थ्य मंत्रालयको सलाह देना था। ऐच्छिक वंध्याकरण आरंभ हुआ और पारंपरिक गर्भ निरोधकोंका अल्प आयवाले समूहके लागोंमें निःशुल्क वितरण आरंभ हुआ। जनसांख्यकी, मेडिकल और बायोलाजिकल अनुसंधानका प्राविधान किया गया। जनसांख्यकी प्रशिक्षण और अनुसंधान केंद्र जिसे अब जनसंख्या अध्ययनोंका अंतरराष्ट्रीय संस्थान कहते हैं, सन १९५६ में बंबईमें संयुक्त राष्ट्रसंघके सहयोगमें स्थापित हुआ। कलकत्ता दिल्ली और त्रिवेंद्रममें तीन और जनसांख्यकी अनुसंधान केंद्र स्थापित किये गये। सन् १९५७ में बंबईमें परिवार नियोजन प्रशिक्षण और अनुसंधान केंद्रकी स्थापना हुई और एक और केन्द्र १९५९ में दिल्लीमें बना।

१९५६ में अधिकारिक रूपसे वंध्याकरण परिवार नियोजन कार्यक्रमका अंग बन गया। दूसरे आयोजनकी अवधिमें २·२ करोड़ रुपये खर्च हुए (निर्धारित राशि ४९·७ करोड़)

तृतीय योजना—इसमें शिक्षा, सेवा, प्रशिक्षण, आपूर्ति, प्रवृत्तिकरण और अनुसंधानपर जोर दिया गया। सन् १९६२ में केंद्रीय परिवार नियोजन संस्थान की स्थापना हुई और इसका उद्देश्य था भारत सरकार-को तकनीकी जानकारियाँ प्रदान करना।

सन् १९६३ में क्लिनिकल मार्गके बदले प्रसार मार्गपर बल दिया जाने लगा अर्थात लोगों तक सेवा और सलाह पहुँचाना। परिवर्द्धित परिवार नियोजन अभियानके तीन लक्ष्य थे—सामूहिक स्वीकृति, परिवार नियोजन ज्ञानका प्रसार और सेवा एवं आपूर्तिको सुलभ बनाना।

१९६५ में लूपको सुरक्षित और प्रभावकारी गर्भनिरोधकके रूपमें स्वीकार किया गया।

१९६६ में स्वतंत्र परिवार नियोजन विभाग बनाया गया। १९६६ में पापुलेशन काउन्सिलने १५ देशोंके २५ अस्पतालोंमें प्रसवोत्तर कार्यक्रम आरंभ किया। इनमें २ अस्पताल भारत के थे।

तीसरी योजना में ४८·८६ करोड़ रुपये खर्च हुए। राज्यस्तर पर और १९९ जिलों में परिवार नियोजन ब्यूरो स्थापित हुए। तीसरी योजनाके अंतमें ३६७६ ग्रामीण परिवार नियोजन क्लिनिके और ७०८१ ग्रामीण उपकेंद्र तथा १३८१ शहरी परिवार नियोजन कल्याण आयोजन केंद्र थे। इनके अलावा २८ प्रशिक्षण केन्द्र थे।

चौथी योजना—भारत सरकारने कार्यक्रमको सर्वोच्च प्राथमिकता प्रदान की और ३१५ करोड़ रुपयोंकी धनराशि निर्धारित की। यह कार्यक्रम प्रारंभिक स्वास्थ्य केन्द्रोंके साथ समकलित कर दिया गया है। इसका उद्देश्य है देशके शतप्रतिशत ग्रामीण दम्पतियोंको दो या तीनसे अधिक बच्चे न पैदा करनेकी ओर प्रवृत्त करना और इस प्रकार जन्मकी गतिको सन् १९७८ के लगभग ३९ से २३ तक नीचे लाना। १९६८ में हिंदुस्तान लेटेक्स फैक्टरी निरोध तैयार करने लगी। १९७० में प्रसवोत्तर कार्यक्रम देशके ५९ चुने हुए अस्पतालोंमें आरंभ हुआ। १७ जिलोंमें व्यापक जिला कार्यक्रम आरंभ हुए। सार्वजनिक नसबंदी अभियान भी आरंभ हुआ।

१९७१ में मेडिकल टार्मिनेशन ऑफ प्रिगनैंसी एक्ट (गर्भपात कानून) पास और लागू हुआ।

परिवार नियोजन कार्यक्रमके सारांश

१. परिवार नियोजन सेवा और प्रशासनिक व्यवस्था
२. प्रशिक्षण
३. अनुसंधान और मूल्यांकन
४. परिवार नियोजन प्रसार प्रशिक्षकों द्वारा लोगोंमें ज्ञान प्रसार
५. गर्भ निरोधकोंका स्वदेशी उत्पादन
६. प्रचार और प्रसार
७. अंतरराष्ट्रीय सहयोग और सहायता

१. परिवार नियोजन सेवा और प्रशासनिक व्यवस्था

स्वास्थ्य और परिवार नियोजन राज्योंके विषय हैं, फिर भी बड़े पैमानेपर परिवार नियोजनके संवर्धनके हित केंद्रसे प्रभावशाली निदेशन और सहयोग प्राप्त हो सके इसके लिए कार्यक्रमको केन्द्रके तत्त्वावधानमें आयोजित योजना बनाया गया, यद्यपि इनका कार्यान्वयन राज्य सरकारोंके माध्यमसे ही होगा। सहायताका रूप है कि सभी अनावर्तक खर्चोंका शत प्रतिशत और आवर्तक खर्चोंमें कुछका पूरा और कुछका ९० प्रतिशत खर्च केन्द्र देता है।

प्रशासनिक व्यवस्था

(क) केन्द्रमें

१. कार्यक्रमको दिशा प्रदान करनेके लिए प्रधान मंत्रीके नेतृत्वमें मंत्रिमंडल समिति।

२. केन्द्रीय परिवार नियोजन काउन्सिल: इसमें राज्योंके स्वास्थ्य मंत्री हैं और अध्यक्ष है केन्द्रीय स्वास्थ्य मंत्री। इनके अलावा परिवार नियोजन कार्यसे संबंधित विभिन्न संगठनोंके प्रतिनिधि भी इस काउन्सिलमें हैं।

३. **स्वास्थ्य और परिवार नियोजन मन्त्रा-**

लय—इसमें तीन विशेषज्ञ समितियाँ हैं (१) जनसांख्यकी तथा सलाहकार समिति (२) मानव प्रजनन क्रिया विज्ञान सलाहकार समिति (भारतीय चिकित्सा अनुसंधान परिषदके अंतर्गत) (३) संचार, प्रेरणा, सक्रियता अनुसंधान समिति।

४. परिवार नियोजन आयुक्त—तकनीकी पक्ष-का प्रधान और सचिव, परिवार नियोजन मंत्रालय व्यवस्था पक्षका प्रधान होता है।

५. क्षेत्रीय निदेशक—कलकत्ता, लखनऊ, चंडीगढ़, भोपाल, अहमदाबाद और बंगलोरमें है जो राज्यों को परामर्श देते हैं।

(ख) राज्य स्तरपर

↓ मुख्यमंत्रीकी अध्यक्षतामें मंडल समिति
राज्य परिवार नियोजन बोर्ड
↓ स्वास्थ्य मंत्रालय
↓ सचिव
↓ निदेशक
उपनिदेशक, परिवार नियोजन

(ग) जिला स्तरपर

जिला परिवार नियोजन ब्यूरो
↓
जिला परिवार नियोजन अधिकारी

(१) शहरी क्षेत्रोंमें—५०,००० जनसंख्यापर एक परिवार नियोजन केन्द्र।

(क) क्लिनिक (ख) सचल इकाइयाँ–बंध्याकरण और लूप लगानेके लिए (ग) प्रसवोत्तर कार्यक्रम।

(२) ग्रामीण क्षेत्रोंमें—प्रत्येक प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्रसे एक परिवार नियोजन केंद्र संबंधित है, यह ८०,००० से १,००,००० जनसंख्याके लिए हैं और एक उपकेंद्र जिसमें एक सहायक नर्स, दाई और स्वास्थ्य सेवक होता है जो १०,००० जनसंख्यापर है।

सन् १९६६ तक १४८५ शहरी १२००० ग्रामीण केन्द्र तथा उपकेन्द्र थे।

भारत सरकारने मातृत्व और शिशु स्वास्थ्य सेवाओंको परिवार नियोजनमें मिला दिया है। परिवार नियोजन केन्द्रों और उपकेन्द्रोंमें आवश्यक चिकित्सा और पैरा मेडिकल चिकित्सा कर्मचारी और प्रसार शिक्षक तथा कार्यालय कर्मचारी होते हैं।

(२) प्रशिक्षण—नयी दिल्ली स्थित केन्द्रीय परिवार नियोजन इंस्टीट्यूटके अलावा देशमें ४ केंद्रीय इंस्टीट्यूट और १६ राज्य प्रशिक्षण केन्द्र कार्य कर रहे हैं। इनके अलावा हर राज्यमें क्षेत्रीय परिवार नियोजन केन्द्र हैं।

(३) अनुसंधान और मूल्यांकन—बंबई स्थित डेमोग्राफिक ट्रेनिंग और रिसर्च केन्द्रके अलावा अनेक स्थानोंपर जनसांख्यकी अनुसंधान केन्द्र कार्यकर रहे हैं। भारतीय चिकित्सा अनुसंधान परिषदके तत्त्वावधानमें अनेक संस्थाओं और विश्वविद्यालयोंमें परिवार नियोजनके चिकित्सा और प्राणिशास्त्रीय पक्षपर अध्ययन हो रहे हैं। इनमें किसी सरल और सुरक्षित खानेवाली गर्भ निरोध गोलीकी तलाश और लूपके बाद रक्तस्रावके कारणों और रोकथामकी तलाश भी शामिल है।

(४) शिक्षा—जनशिक्षा परिवार नियोजन कार्यका महत्त्वपूर्ण अंग है, क्योंकि प्रगति जनता द्वारा परिवार नियोजनके तरीकोंको स्वीकार करने और उपयोग करनेपर निर्भर है।

(५) गर्भनिरोधकोंका स्वदेशी उत्पादन—यदि प्रेरणाके बाद उपकरणोंकी पूर्ति नहीं हुई तो कार्यक्रमकी प्रगतिको गहरा धक्का लगेगा और संगठनको लोगोंका सहयोग मिलना बंद हो जायगा। अतः आवश्यक है कि देशमें ही पर्याप्त मात्रामें गर्भनिरोधकोंका निर्माण किया जाय जिससे बढ़ती हुई माँगकी आपूर्ति हो सके और नियमित आपूर्ति एवं वितरणकी समुचित व्यवस्था की जानी चाहिये।

(६) प्रचार और प्रसार—जनसंपर्कके सार्वजनिक साधनों यथा समाचार पत्र, पत्रिकाएं, सिनेमा, रेडियो, पोस्टर, पैम्फलेट, हैंडबिल, बसबोर्ड, होर्डिंग और कलात्मक माध्यम तथा संगीत, नाटक आदिका

(शेष पृष्ठ ८ पर)

पल्टन

—श्री सूर्य नारायण सक्सेना—

पल्टनकी सारी पहचानें और खासीयतें पंडितजी-की निर्जी पल्टनमें मौजूद हैं। रहमतपुर गाँवमें अगर दो-तीन बच्चे आपको एक रंगके कमीज-जाँघियामें दिखाई दें तो समझ लीजिए ये पंडितजीकी पल्टनके सिपाही हैं। इसलिये बड़े तो क्या, गाँवके बच्चे भी पंडितजीके सुपुत्रोंको आता-जाता देखते ही उन्हें चिढ़ानेके लिए आवाजें लगाते हैं—"अबे, पल्टनिए आ गए" या "वह जा रहा है पल्टनिया"। मास्टरजीका ऐसा कोई सिद्धान्त या उसूल नहीं है कि सब बच्चोंके लिए एक रंगके, एक जैसे ही कपड़े बनवायें। पर क्या करें? गाँवके प्राइमरी स्कूलके मास्टर! मुश्किलसे १५० रु० महीनेकी आमदनी। तिसपर नकद ग्यारह बच्चों और दो खुद पति-पत्नीका बोझ। गाँवके जुलाहोंके बने, सस्तेसे सस्ते गाढ़ेको रंगवाकर एक-एक कमीज और एक-एक जाँघिया बनवानेपर भी कमसे कम दो-दो थान लग ही जाते हैं और फिर गाढ़ा भी बेचारे खरीद नहीं सकते। आधा-पूरा सूत पंडिताइन ही कात कर देती हैं।

गर्मी और सर्दीमें इस पल्टनकी वर्दीमें बहुत थोड़ा फर्क पड़ता है। ऊनीकी तो बात ही छोड़ो अगर रूईका कपड़ा है तो वाह-वाह, वरना कोई भी मोटा कपड़ा हो, उसीसे काम चलाया जाता है। उसे भी कमीजके नीचे ही पहना जाता है, क्योंकि ऊनी स्वेटर या कोटने तो पंडितजीकी देहली भी नहीं झाँकी है। पर लोगोंको इससे क्या? वे मजाक करनेसे क्यों चूकें? कहते हैं सरकारकी पल्टनमें गर्मी और सर्दीकी दो वर्दियाँ मिलती हैं, पर इस पल्टनकी वर्दी सदा एक-सी रहती है।

अक्सर गाँवमें ज्योनार और तीज-त्योहारोंपर पंडितजीके परिवारको निमंत्रण मिलते रहते हैं। पंडितजी फिर चूकने वाले कहाँ! पर सच पूछिए तो भोजनका निमंत्रण मंजूर करनेमें मास्टरजीको खुशी तो क्या बड़ी आत्म-ग्लानि होती है, क्योंकि जब वे अपनी पल्टनको लेकर पहुँचते हैं, तो लोग मुँहपर न सही, पीठ पीछे और दाएँ-बाएँ जिस ढंगसे फब्तियाँ कसते हैं या कनखियोंसे हँसते हैं और खिल्ली उड़ाते हैं, उसे वे समझ तो लेते ही हैं।

पर क्या करें? बाजरा और चना भी रुपएका दो सेर नहीं मिलता और खाने वाले तेरह प्राणी। जीमनेके मौकेका उसी तरह इंतजार रहता है जिस तरह सूखा पड़नेपर उनके गाँवके किसान बारिशके लिए आसमानकी तरफ टकटकी लगाये देखते रहते हैं।

ऐसी बात नहीं कि पंडितजीकी पल्टन हमेशा हर जगह एक साथ ही जाती हो। पल्टनके सिपाही अकेले या दो-तीनकी टुकड़ियोंमें गाँवके छोटेसे बाजारमें, कुएँ पर, चौपालपर या फिर कोई बारात आये तो उसके आगे-आगे बाजेकी धुनके साथ बंदरोंकी तरह उछलते-कूदते दिखाई दे जाएंगे। शादी-ब्याह, मुण्डन, कनछेदन, कथा-कीर्तन या चुनावकी सभा हो या गाँवका कोई भी व्यक्तिगत या सामूहिक उत्सव या जनसमागम हो, मजाल क्या कि दो-चार या और अधिक पल्टनिए वहाँ मौजूद न हों? इतना ही नहीं वे आनेवालोंमें सबसे पहले और जाने वालोंमें सबसे आखिरी होते हैं। रात हो जानेपर कोई गाँव वाला कहेगा, 'अरे अब तो टलो।' दूसरा उसी लहजे में जवाब देगा, 'अरे पंडित जी जब तक रजिस्टर लेकर हाजिरी न बोलें तब तक दो-तीनकी तो भूल हो ही जाती होगी।' तीसरा कहेगा, 'अरे इतनोंके लिए घरमें जगह कहाँ है, इसीसे तो मारे-मारे फिरते हैं।'

इस तीसरी बातमें व्यंग्यके साथ-साथ सचाई भी कम नहीं है। पंडितजीके घरमें मुश्किलसे चार-पाँच चारपाइयाँ होंगी। बिस्तर तो शायद इससे भी कम और सर्दियोंके बिस्तर? चलिए छोड़िए, आगे जिक्र न किया जाय, तभी अच्छा।

लोगोंकी रायमें पंडितजी बड़े रूखे, कंजूस और लालची आदमी हैं। कभी किसीने उनके घर किसी

(शेष पृष्ठ ८ पर)

पारिवारिक जीवनोपयोगी स्वास्थ्य साहित्य

लोकप्रिय स्वास्थ्य साहित्य

राजा बेटा कैसे बनायें ?	३.००
सुन्दर दांत और उनकी देखरेख	२.५०
आपके बच्चेकी खुराक	३.३७
भोजन क्या, क्यों और कैसे ?	४.००
विटामिन और हीनता जनित रोग	४.२५

यौन-साहित्य

यौन मनोविकार कारण और निवारण	४.२५
विवाहित जीवनमें यौन सम्प्रयोग	५.५०
नारीकी यौन समस्यायें	२.५०
सन्तति-निरोध कब और कैसे ?	४.००
गर्भवती स्त्री और प्रसवपूर्व व्यवस्था	२.५०

प्रकाशक

स्वास्थ्य सन्देश प्रकाशन,
पोस्ट–कालपी (उत्तर प्रदेश)

स्वास्थ्य का वृहद् ज्ञान सागर

आपका स्वास्थ्य

१८ वर्षों की

पुरानी फाइलें

चौथे और सोलहवें वर्ष के अलावा प्रत्येक वर्ष की फाइलें प्राप्य हैं।

प्रत्येक वर्ष की फाइल ६ रु० में प्राप्य है फाइलें वी० पी० से नहीं भेजी जायँगी। अग्रिम मूल्य भेजना अनिवार्य है।

आपका स्वास्थ्य कार्यालय
चेतगंज, वाराणसी–१

उद्यम

मासिक पत्रिका

'उद्यम' में निम्न विषयों पर लेख प्रकाशित होते हैं।

*लाभदायक उद्योग-धन्धोंकी व्यवहारोपयोगी जामकारी

*व्यवसायमें सफल व्यक्तियोंकी मुलाकातें और परिचय तथा मवेशियोंके रोगोंका निवारण।

*इंजिनियरिंग, यंत्र सामग्री और ग्रामोद्योग संबंधी लेख

*आरोग्य, संक्रामक रोग तथा घरेलू औषधियों संबंधी जानकारी।

*पंचवर्षीय योजनाओंके कारण होता हुआ ग्रामसुधार

*महिला विभाग : घरेलू उद्योग, मितव्ययिता, खाद्य पदार्थ आदि पर लेख।

*बालकोंका विश्व : बालक-बालिकाओंके लिए सुलभ भाषामें त्रैमासिक जानकारी।

*विद्यार्थियों के लिये : विशेषज्ञों द्वारा उपयुक्त लेख

*पाठकों द्वारा पूछी गई जानकारी।

'उद्यम' का वार्षिक मूल्य रु० दस भेजकर परिवारके प्रत्येक व्यक्तिके लिये उपयोगी यह मासिक पत्रिका अवश्य संग्रहीत करें।

उद्यम मासिक, धर्मपेठ, नागपुर-१

घर बैठे संगीत सीखिए

प्रतिमास घर बैठे गायन, वादन तथा नृत्य की ठोस जानकारी प्राप्त करने के लिए १५) भेजकर **'संगीत'** मासिक के वार्षिक सदस्य बन जाइए। नमूना चाहें तो १)५० के टिकिट भेजिए। फिल्मी गीतों के प्रेमी २०) भेजकर **'फिल्म-संगीत'** त्रैमासिक के वार्षिक सदस्य बनें। वर्ष में इसके कुल चार अंक (जनवरी, अप्रैल, जुलाई और अक्टूबर में) प्रकाशित होते हैं। प्रत्येक अंक में ३५ प्रसिद्ध फिल्मी गीत स्वरलिपि-सहित छपते हैं। हर प्रकार के संगीत-साहित्य की विस्तृत जानकारी के लिए हमारा बड़ा सूचीपत्र मुफ्त मंगाएँ।

पता

संगीत कार्यालय, ६, हाथरस (उ. प्र.)

इंडियन मेडिकल असोसियेशनकी ओरसे डा० कोशलपति तिवारी द्वारा
संपादित, प्रकाशित और सुदर्शन मुद्रक वाराणसीमें मुद्रित।

आपका स्वास्थ्य रजिस्ट्री संख्या L-96 जून १९७३

HEALTH

is your most precious possession

Your Health

will help preserve it

Your Health aims to educate the common man on matters of health. It deals with day to day problems of sanitation and hygiene and presents the scientific side of preventing many bodily and mental ills.

Remember it is
A Publication of the Indian Medical Association.

SUBSCRIPTION RATES
(Post free)

Inland : 1 year Rs. 8/- ; 2 years Rs. 12/-
Foreign : 1 year Rs. 10/- ; 2 years Rs. 16/-
Members of I. M. A. ; 1 year Rs. 6/-

Remittances should be by money orders or postal orders payable to YOUR HEALTH

All business correspondence should be addressed to

Manager, YOUR HEALTH
23 Samavaya Mansion : Corporation Place
CALCUTTA-13

मूल्य—पचास पैसे

आपका स्वास्थ्य

इंडियन मेडिकल असोसियेशन की लोकोपयोगी मासिक पत्रिका

जुलाई १९७३

हमारे तीन महत्वपूर्ण प्रकाशन

कहीं हवा न लग जाय

-कैप्टन शरत कुमार चौधरी-

इस पुस्तकमें मलेरिया, फाइलेरिया, चेचक आदि रोगोंसे बचनेके उपाय, रोगीकी परिचर्या सर्पदंश, प्राथमिक चिकित्सा सम्बन्धी अनेक महत्व-पूर्ण समस्याओंकी चर्चा की गयी है।

मूल्य १५० पैसे

सुनो भाई पंचो

-डाक्टर कोशलपति तिवारी-

हिन्दीमें अपने ढंगकी सरल सुबोध शैलीमें लिखी गयी पुस्तक। रोग तथा स्वास्थ्य-सम्बन्धी उन सभी समस्याओं पर चर्चा की गयी है, जिनसे हमारे ग्रामीण भाइयोंको नित्य सामना करना पड़ता है।

पुस्तक दो भागोंमें प्रकाशित है।

प्रत्येक भागका मूल्य—१५० पैसे

गुजरात, मध्यप्रदेश, उत्तरप्रदेश, हरियाणा, राजस्थान सरकार, बिहार द्वारा नियोजन केन्द्रों, स्कूल-कालेजके पुस्तकालयों, राष्ट्रीय प्रसार सेवा खण्डों तथा ग्राम पुस्तकालयोंके लिए स्वीकृत।

डाक्टर के आने तक

- डाक्टर गोकुलदास अग्रवाल -

नागरिक सुरक्षाके संदर्भमें इस पुस्तकका विशेष महत्व है। देशके प्रत्येक नागरिकको प्राथमिक चिकित्सा सम्बन्धी ज्ञान प्राप्त करना आवश्यक है और इस पुस्तकमें विस्तृत ढंगसे इस विषयपर चर्चा की गयी है। प्राथमिक चिकित्सा (फर्स्ट एड और नर्सिंग) की शिक्षा लेनेवाले छात्र-छात्राओंके लिए सर्वश्रेष्ठ पुस्तक। प्रस्तुत पुस्तक आपके परिवारके लिए 'घरेलू डाक्टर' का काम देगी।

दो सौ से अधिक चित्र

मूल्य २७५ पैसे

चारों पुस्तकें एक साथ मँगानेपर डाक खर्च माफ। आपका स्वास्थ्यके ग्राहकोंको २५ प्रतिशत छूट दी जाती है। चारों पुस्तकें एक साथ न मँगानेपर प्रत्येक पुस्तकके लिए १२५ पैसे अलगसे डाक व्यय लगेगा।

हमारे अधिकृत विक्रेता,

हिन्दी प्रचारक संस्थान, पो० बा० १०६, वाराणसी
श्री गंगा पुस्तकालय, गायघाट, वाराणसी—१
आपका स्वास्थ्य कार्यालय, लहुराबीर, वाराणसी—१

आपका स्वास्थ्य

ESTD.1928
INDIAN MEDICAL ASSOCIATION

इंडियन मेडिकल एसोसियेशनका लोकोपयोगी प्रकाशन

वर्ष २०   जुलाई, १९७३   अंक १०

अनुक्रमणिका

विधि निषेधमय कलिमल हरनी ... २
बच्चोंकी भावनात्मक समस्याएँ और अभिभावकोंका दायित्व ... ३
मन्दित बच्चोंका समायोजन और हमारा कर्त्तव्य ... ७
स्वाद व गंध ... ११
उचित समयपर कार्य अधिक लाभदायक ... १३
गर्भवती और माताके लिए कसरतकी आवश्यकता ... १५
विटामिन 'ए' ... १७
नेत्रहीनताको रोकनके लिए हम क्या करें २०
खाद्य पदार्थ पकाकर खाइये ... २२
बच्चोंका बिकास और हमारा दायित्व ... २३
एलर्जी ... २७

कवर-चित्र
श्री परिमल गोस्वामी

परिवार नियोजन-पूरक

सौदा ... २९
यह सब क्या है ? क्यों है ? ... ३१

● 'आपका स्वास्थ्य' में प्रकाशित प्रत्येक रचना और चित्रका कापीराइट प्रकाशकका है। इसलिए बिना आज्ञा कोई रचना या चित्र किसी प्रकार उद्धृत नहीं होना चाहिए।

● 'आपका स्वास्थ्य' के लेखकोंके विचार पूर्ण रूपसे उनके अपने हैं आवश्यक नहीं है कि संपादक मंडल अथवा इंडियन मेडिकल एसोसियेशन उनसे सहमत हो।

मूल्य—इस अंकका ५० पैसे
वार्षिक छः रुपये

आपका स्वास्थ्य कार्यालय
वाराणसी (बनारस-१)

सम्पादकीय-

विधि निषेधमय कलिमल हरनी

संत समाजमें जो विधि निषेधकी कथाएँ कही जाती हैं वे ही कलिमल हरण करने वाली सूर्यतनया यमुना हैं। यदि आप कभी संत समाजमें, बड़े बुजुर्गोंके बीच, विद्वानोंकी बैठकमें उपस्थित होनेका सौभाग्य पा सके हैं तो विधि निषेधकी बात अच्छी तरह समझ सकेंगे। यह करना चाहिये (विधि), यह नहीं करना चाहिये (निषेध) इसकी चर्चा बहुधा ही अन्य प्रकरणोंके साथ चल पड़ती है। सच तो यह है कि अनादि कालसे मानव अपने अनुभवोंसे बहुत कुछ सीखता आया है और उन्हींके बारबारके अनुभवोंको संकलितकर उसने विधि-निषेधोंका निर्माण किया है। ये निदेश बातचीत द्वारा बड़ोंसे छोटोंको मिलते हैं, कथा—कहानियों, लोकोक्तियों, और शास्त्रों स्मृतियों द्वारा आगे आनेवाली पीढ़ियोंके लिए सुरक्षित हैं। साधु-सन्त भी गुरु परंपरासे और अपने अनुभवसे यह ज्ञान प्राप्त करते हैं और अपनी वाणी द्वारा मानवताको श्रवण कराते रहते हैं।

आधुनिक विज्ञान भी विधि-निषेधकी चर्चा करता है परन्तु परम्परागत ज्ञानमें जहाँ कोरे निषेध होते हैं या सोदाहरण निषेध होते हैं, विज्ञान उन्हें तर्क संगत बनाने की चेष्टा करता है बहुधा प्राचीन परम्परागत ज्ञानमें विधि-निषेधको पाप-पुण्यसे जोड़ दिया गया है। ऐसा नहीं करना चाहिये। क्यों ? क्योंकि ऐसा करना पाप है ! यह करना चाहिये क्योंकि यह कर्त्तव्य है, पुण्य लाभ होता है ! विज्ञान यही बात अन्य भाषामें कहता है, ऐसा न करो क्योंकि ऐसा करनेसे इन कारणोंसे हानि होती है, किन्तु हर अनुभव जन्य ज्ञानके लिए तर्क संगति ढूंढ़ना संभव नहीं होता और बहुधा उत्साही विज्ञानी घोषित कर देता है कि यह निषेध तोड़ो, यह केवल दकियानूसी है ! यहीं नूतन-पुरातनमें संघर्ष होता है।

सच तो यह है कि परम्परागत सभी विधि-निषेध रूढ़ नहीं है, उन्हें ध्यानसे आधुनिक अनुभव और ज्ञानके प्रकाशमें सहानुभूतिपूर्वक देखना चाहिये। हो सकता है कुछ निषेध प्राचीन मान्यताओं पर आधारित हो (जैसे भूत-प्रेतकी कल्पनापर) पर उन्हें भी देखना चाहिये क्योंकि उनके आधारमें अनुभव भी होता है। ऐसा करनेपर प्राचीनकी अवमाननाकी प्रवृत्ति; संतवाणीका उपहास करनेकी आदत दूर होगी; बहुतसे कामके लाभदायक विधि-निषेध प्राप्त होंगे और कुछ नयी दिशाएँ भी मिलेंगी। मूल बात तो यह है कि इन समस्त आचरण संहिताओंका, इन विधि-निषेधोंका एक ही विमल उद्देश्य है 'सुरसरि सम सब कहँ हित होई' !

बच्चोंकी भावनात्मक समस्याएँ और अभिभावकों-का दायित्व

—श्री विश्वम्भर नाथ शुक्ल 'पद्मेश'—

●

एक प्रसिद्ध बाल-मनोवैज्ञानिकके सतत प्रयोगोंसे उपलब्ध परिणामके आधार जब यह सिद्ध हो गया कि बालकोंमें दूषित मनोवृत्तियोंका सृजन बहुत कुछ पारिवारिक अभावोंके फलस्वरूप होता है तो मनोविज्ञान जगत्ने इस खोजको 'अपूर्व' की संज्ञासे विभूषित करके अनुसंधानकर्त्ताके प्रति अपना आभार प्रदर्शित किया। क्या था वह प्रयोग? प्रयोग मात्र एक प्रयास था जिसमें मनोवैज्ञानिकने कई माता-पिताओंसे सम्पर्क स्थापित किया और उनसे तीन प्रश्न पूछे—

१. क्या वे अपने बच्चोंको बेहद प्रेम करते हैं?

२. क्या वे बच्चोंको कठिनाइयोंका अध्ययन करते हैं?

३. क्या उन कठिनाइयोंको दूर करनेमें वे बालकोंको आवश्यक सहायता देते हैं? प्रथमको छोड़ उपर्युक्त दोनों प्रश्नोंका उत्तर अधिकांश माता-पिताओंने 'नकारात्मक' ही दिया और बादमें उन्हींके बच्चोंका मनोवैज्ञानिक सर्वेक्षण करके उसने उपर्युक्त सिद्धांत प्रतिपादित किया।

माता-पिताकी अत्यधिक व्यस्तता

वर्तमान वैज्ञानिक प्रगति और अंधाधुंध आधुनिकीकरणको दृष्टिमें रखते हुए यदि हम उपर्युक्त सिद्धांतका विश्लेषण करें तो पाएंगे कि उक्त तथ्य स्वयंमें सम्पूर्ण है। इसका एकमात्र कारण यही है कि आज बालकोंके संरक्षक अत्यधिक व्यस्त हैं और उनकी यह व्यस्तता उन्हें बालकोंके दैनिक कार्य-कलापोंकी ओर ध्यान देनेका भी अवसर नहीं देती, पथ-प्रदर्शनकी तो बात ही दूर रही। बात चाहे विद्यालयकी ही अथवा घरकी, भटकाव सभी जगह होते हैं। इस भटकावके लक्षण भी अलग-अलग होते हैं और उनका उपचार भी अलग-अलग होता है।

एक बालककी करुण कहानी

उदाहरणके लिए अब एक बालक 'क' से मिलिए—पढ़नेमें तेज है, कुशाग्र बुद्धि है, किन्तु यह सब कुछ केवल विद्यालय तथा उसके परीक्षा परिणामों तक ही सीमित रहता है। इसके विपरीत उसका पारिवारिक जीवन सर्वथा भिन्न रहता है। बात-बातपर रूठना, हर ऐच्छिक वस्तुको प्राप्ति हेतु हठ करना और आवश्यकता पड़नेपर लक्ष्य प्राप्ति हेतु भाई-बहन आदिसे झगड़ा तक करनेमें न झिझकना उसकी दूषित मनोवृत्तिके परिचायक हैं। एक दृष्टि उसकी देहपर भी डाल लीजिए—क्षीणकाय, रूखे ओंठ, गड्ढोंमें धंसी आंखें और दुबले-पतले हाथ-पांव उसकी शरीर-रचनाके आवश्यक लक्षण हैं।

बालकके प्रति पिताकी उपेक्षाका दुष्परिणाम

दूसरी ओर बालकके माता-पितासे भी मिल लीजिए। पति एक सरकारी कार्यालयमें अधिकारी हैं और शामको प्रायः सात बजेसे पूर्व घर नहीं आते। आते ही एक कप चाय पीकर या तो दोस्तोंके साथ दिल बहलाने बैठ जाते हैं, या फिर तीव्र ध्वनिसे रेडियो खोलकर उसीमें खो जाते हैं। यदि 'क' कभी कुछ उनसे बात करना या शिकायत करना चाहता है, अथवा अपने किसी अभावसे उन्हें अवगत कराने हेतु उत्सुक होता है तो उनके पिता "मम्मीसे कहो" कहकर तीन छोटे शब्दों द्वारा अपनेको विविध आपदाओंसे मुक्त कर लेते हैं। जी हां, बच्चोंसे निपटना किसी विपदाको झेलनेसे कम नहीं होता। उनका कहना है कि शैतान और इन्सानकी औलादमें कोई फर्क नहीं होता। सो बालक 'क' निराशा

के सागरमें गोते लगात हुआ मम्मीके पास पहुँच जात हैं। अब आप उनकी मम्मीसे भी मिल लीलिए—

माताकी व्यस्तता

बालककी मम्मी भी नितांत व्यस्त महिला हैं। साढ़े नौ बजे तक वह बिना सांस लिए भूतोंकी भांति व्यस्त रहती हैं। जी हां, उन्हें सांस लेनेकी भी फुर्सत नहीं मिलती। इसके बाद ग्यारह बजे तक अन्य विभिन्न कार्य। बारह बजे 'क' के स्कूलसे लौटनेपर उसे भोजन देनेके बाद ज्योंही उन्हें कुछ फुर्सत मिलती है कि पड़ोसकी दो-चार औरतें अपने घरोंसे खिचकर उनके आंगनमें महफिल जमा लेती हैं। फिर शामको पांच बजे तक 'क' उनके पास फटकनेका साहस नहीं कर सकता। महिला-मंडलके खिसकनेके बाद जब चाय पीते समय या अन्य किसी अवसरपर 'क' उनसे अपनी बात कहता है तो तुरंत उत्तर मिलता है, "अभी डैडी आते होंगे उनसे कहना, मैं क्या-क्या जिम्मेवारियां ओढ़ती फिरूँ अपने सिर पर ?"

अब क्या हो ? 'क' कहां जाए ? क्या वह अपनी आवश्यकता, अपना अभाव अपने पड़ोसियोंको बताए ? उसके माता-पिता उसे बेहद प्यार करते हैं, घरसे लेकर कार्यालय तकके लोगोंमें यही विख्यात है। किन्तु 'क' अभावों और असमर्थताके झूलेपर झूलता रहता है। कभी-कभी वह स्वयंको अनाथ-सा अनुभव करने लगता है। इसका एक मात्र कारण बच्चोंके माता-पिता उनके प्रति उदासीनता होती है क्योंकि वे यह सोचते हैं कि ज्यों-ज्यों बालक बड़ा होता जाता है, वह स्वयं सक्षम होता जाता है, इसलिए अपनी समस्याएँ भी स्वयं ही सुलझानेमें समर्थ होता है। फिर वे क्यों परेशान हों ?

तीन अन्य विचारधाराएं

दूसरी विचारधाराने लोगोंका कथन है कि सुबहसे शाम तक कार्य-भारसे थककर चूर हो जानेके कारण उनके पास इतना समय और शक्ति नहीं रहती कि वे बच्चोंके साथ मगजपच्ची कर सकें।

एक तीसरा वर्ग भी है जो कि बालकोंको आयाके भरोसे छोड़कर दायित्वहीन होना अधिक पसंद करता हैं।

चौथा वर्ग बच्चोंको मात्र 'दुर्घटना' का सृजन मानकर स्वयंको पूर्ण दायित्वहीन मानने वालोंका है।

इन चारों वर्गोंकी भावनाओंके पीछे एकमात्र कारण है माता-पिताका दायित्व अनुभव न करना। उनकी इसी भावनाका दूसरा पहलू बालकों और किशोरोंमें अनाथ-सा अनुभव करनेकी विकृति उत्पन्न कर उनको अल्पायुसे ही संत्रासका बोध कराने लगता है और वे माता-पितासे दूर होने लगते हैं। ऐसा क्यों होता है ?

इसका एक मात्र कारण यह है कि आजके इस यांत्रिक युगमें माता-पिता इस तथ्यसे सर्वथा अनभिज्ञ हैं कि मानव जीवनमें अपनी संतानके प्रति उनके कुछ दायित्व भी हैं। इसी दायित्वहीनतासे ग्रस्त रहनेके कारण वे बालकों एवं किशोरोंको दस-पांच मिनटका भी समय देना गवारा नहीं कर पाते, क्योंकि यह उनके बहुमूल्य समयकी बरबादी है। इसी कारण वे बालकों एवं किशोरोंकी हर क्षेत्रमें सफलता चाहते हुए भी न तो उन्हें सफलता प्राप्त करनेकी राह दिखा पाते हैं और न ही उनके लिए संघर्षरत होनेकी प्रेरणा ही दे पाते हैं।

मनोवैज्ञानिक सर्वेक्षणोंने सिद्ध कर दिया है कि जबतक बालकोंके विकास एवं उन्नतिके लिए माता-पिता प्रयत्न नहीं करेंगे और उन्हें आगे बढ़नेके लिए प्रोत्साहित नहीं करेंगे तबतक उनकी प्रतिभा और बुद्धिका समुचित विकास नहीं होगा और वे जीवनके हर क्षेत्रमें पिछड़े रहेंगे।

प्रोत्साहनका जादू

प्रसिद्ध लेखक गोयथने इसी दृष्टिकोणको ध्यानमें रखते हुए कहा था, "दूसरेको जैसा तुम देखना चाहोगे वैसा ही वह बन जाएगा।" यदि किसीको आप हीन मानते हैं और हर क्षेत्रमें आप उसे उसकी हीनताका बोध कराते रहते हैं तो वह एक न एक दिन हीन-भावनाओंके चंगुलमें फंसकर अपने जीवनपथके सारे दीप

बुझा लेगा। यही सिद्धान्त बालकोंपर भी लागू होता है। यदि आप यह चाहते हैं कि वह प्रगतिशील बने और उसे उचित पथ-निर्देश एवं सहायता नहीं देते तो उसके लिए कुछ भी बनना सम्भव नहीं होगा। किन्तु यदि आप उसे आवश्यक प्रोत्साहन और उसकी समस्याओंका सही समाधान देते रहते हैं तो उसको सफल एवं प्रगतिशील होनेसे कोई भी शक्ति डिगा नहीं सकती।

दोषी कौन

किन्तु इसके लिए केवल आपके बालकों अथवा किशोरोंका अपना निजी प्रयास ही पर्याप्त नहीं होता। बालक कितना ही तीव्र बुद्धि मेधावी और परिश्रमी हो, उसका भी सामना कभी-कभी ऐसी समस्याओंसे हो जाना सम्भव होता है जिन्हें वह स्वयं नहीं सुलझा सकता। उदाहरणार्थ आप 'क' को ही लीजिए। उसकी समस्या जो भी रही होगी, उसे वह स्वयं हल करनेमें समर्थ नहीं था और इसलिए वह अपने दो संरक्षकों माता अथवा पितासे सहायता लेना चाहता था, किन्तु वह सहायता मम्मी-डैडीकी अवांछित उदासीनताके कारण उसे प्राप्त नहीं हो सकी। फलस्वरूप उसके मस्तिष्कमें असहायताके बोधके साथ-साथ संरक्षकोंके प्रति विद्रोहकी भावना भी जन्म ले चुकी होगी। इस प्रकारका संत्रास और विद्रोही भावना यदि 'क' अवसर पाते ही माता-पितासे असहयोगके माध्यमसे प्रकट करके उन्हे चिंतित अथवा दुखी कर देता है तो इसमें किसका दोष होगा ?

प्रतिशोध की भावनाका उदय

इस समस्याका विस्तारपूर्वक अध्ययन करनेके पश्चात् ही मनोवैज्ञानिकोंका मत है कि किशोरों एवं बच्चोंके प्रति माता-पिता की उदासीनता ही उन्हे अवज्ञाकारी, असहयोगी पथा पथभ्रष्ट बना देती है और बड़े होनेपर यही वर्ग पूरे समाजके प्रति दायित्वहीन बनकर सामाजिक बोझ बन जाता है। वह यह सोचने लगता है कि जिस प्रकार मेरे माता-पिता मेरी बात पर ध्यान नहीं देते थे उसी प्रकार मैं किसीकी क्यों सुनू।" यह भावनात्मक विकार ही युवा संत्रासका रूप लेकर नूतन पुरातनमें संघर्षका बीज बो देता है।

बाल-हठपर कैसे विजय पाएं ?

बच्चोंका जिद्दी होना समस्याका एक महत्वपूर्ण पहलू है। यहां भी शोधकर्ता माता-पिताको बरी नहीं करता...बच्चोंको हठी बनानेमें माता-पिताका ही हाथ होता है। मान लीजिए आप बच्चेके साथ बाजार गये हैं और वहां वह आपसे कोई 'मांग' पूरी करनेकी प्रार्थना करता है और आप ध्यान नहीं देते। किन्तु वह भी अपनी बलवती इच्छाका दमन करनेमें स्वयंको असमर्थ पा प्रार्थनाको 'आग्रह' में बदल देता है कि उसे अमुक वस्तु तो चाहिए ही। अब आप सुनते हैं और उसे फुसलानेका प्रयास करते हैं कि वह जिद न करे। किन्तु वह अपनी बलवती आकांक्षाको मात्र इसलिए नहीं दबा पाता कि पहले तो आपने उसकी बात सुनी नहीं और जब सुनी भी तो उसे मूर्ख बनानेके लिए फुसला रहे हैं। कितना तर्कपूर्ण विचार वह सोच लेता है और फिर अपने आग्रहको आपसे असहयोग करके दृढ़ निश्चयके रूपमें प्रकट करता है...पांव पटकता है, चीखता है और यदि आवश्यकता पड़ी तो गला फाड़कर सप्तम स्वरमें रोने भी लगता है तब तो आप मानेंगे ही और उसकी मांग पूरी हो जाएगी। किसका दोष है ? क्या बालकका ? शायद नहीं, क्योंकि जब प्रारम्भमें उसने अपनी इच्छा पूर्ति हेतु आपसे प्रार्थना की थी आपने उसकी भावनाका, प्रार्थनाका उचित आदर नहीं किया था और जब प्रार्थनाने आग्रहका रूप ले लिया तब आपने ध्यान दिया। किन्तु चूंकि तब तक इच्छा शक्तिकी जड़ मजदूत हो चुकी थी इसलिए आपसे सहयोग करनेकी बाल-सुलभ प्रवृत्ति निष्प्राण हो गयी। यदि आपने उसकी प्रार्थनापर ध्यान देकर, उसे अपनी कठिनाई बता, या उसकी चाही हुई वस्तुमें निहित दोषोंका वर्णन कर उसे संतुष्ट कर दिया होता तो शायद परिस्थिति यह होती कि बालकके कोमल मनमें आपके

प्रति सहानुभूति अथवा ऐच्छिक वस्तुके प्रति विरक्ति उसे संतुष्ट कर देती और वह जिद न करता। यहां यह भी याद रखना आवश्यक है कि बालकके हठ करनेपर यदि आप एक बार भी उसकी मांग पूरी कर देते हैं, तो इसका यह अर्थ होगा कि उसे भविष्यमें अपनी मांगें पूरी कराने हेतु बहाना मिल जाएगा।

कुछ उपयोगी सुझाव

बहुधा अति भावुक प्रकृतिके लोग बालकोंको इतना अधिक प्यार करते हैं कि वे उसकी हर इच्छाकी पूर्ति, उसकी हर धृष्टताको क्षमा तथा उसके व्यावहारिक दोषोंको मामूली गलती मान उसे मनमानी करनेकी पूर्ण स्वतंत्रता दे देते हैं। ऐसे लोग बालकसे प्रेम करनेके बजाय उसे पराश्रयी तथा उच्छृंखल बनानेके दोषी होते हैं क्योंकि इस व्यवहारसे बच्चोंमें स्वावलम्बन एवं उत्तरदायित्व अनुभव करनेकी भावना नहीं पनप पाती। इस संबंधमें माता-पिताके लिए नीचे लिखे सुझाव उपयोगी होंगे :—

१. बालकोंसे प्यार करें, किन्तु अनुशासनकी बागडोर ढीली न होने दें।

२. बालकोंकी हर मांगकी पूर्ति, मांगकी उपादेयताको ध्यानमें रखते हुए करें।

३. उनकी मांगको, उनकी आवश्यकताओंको पूरा करते समय अपनी सामर्थ्यका ध्यान रखें। बच्चोंको संतुष्ट करतेके लिए अपनी आर्थिक मर्यादाका उल्लंघन न करें।

४. बालकोंके प्रेममें पड़कर अपने निजी अस्तित्वको न भूलें।

उपर्युक्त सिद्धांतोंका पालन करके आप बच्चोंको आरम्भसे ही उत्तरदायी, विचारशील तथा स्वावलम्बी बननेके प्रेरणा दे सकते हैं।

माता-पिताके आचरणका बचनेपर प्रभाव

आपका आचरण आपके बच्चोंके आचरणका आधार बनता है। अतएव बालकोंसे सच्चरित्रता कर्मठता, बुद्धिमत्ता और साहसकी आशा करनेसे पूर्व व्यवहार-कुशलताकी तराजूपर आपको स्वयं अपना मूल्यांकन करना होगा।

यदि आप देर तक सोनेके आदी हैं तो आपके बच्चे निःसंकोच आपका अनुकरण करेंगे। यदि आप भोर होते ही बिस्तर छोड़नेके आदी हैं तो आपके बच्चे भी आपका साथ देंगे। तात्पर्य यह है कि प्रत्येक माता-पिता बालकों एवं किशोरोंके जीवनको सुदृढ़ आधार देते हैं और उनकी सफलता बहुत कुछ इस बातपर आधारित होती है कि उन्हें अपने माता-पितासे क्या मिला।

यदि आप बच्चोंको उनकी छोट-छोटी उपलब्धियोंपर भी उसी प्रकार प्रोत्साहित करते हैं जिस प्रकार कि महत्वपूर्ण सफलताओंपर तो बच्चोंको अनायास ही अधिक उन्नति करने की प्रेरणा मिलती है अन्यथा वे उदासीन बन जाते हैं।

यदि आप बच्चोंको उनके प्रत्येक क्रियाकलापमें आवश्यक सहयोग देते रहते हैं तो वे और अधिक कर्मठ बननेका प्रयास करेंगे अन्यथा वे सुस्ती और कमजोरीके शिकार बन जाएंगे।

यदि आप गंदी आदतों और अलाभकारी व्यसनकी ओर आकर्षित बालकोंको उनके दुर्गुणोंसे परिचित कराकर उन्हें उनसे दूर रखनेका प्रयत्न नहीं करते तो बालक सदाचार और सद्व्यवहारकी महत्तासे अपरिचित रहकर पतनोन्मुख होंगे। उनकी व्यावहारिक गतिविधियोंपर नियंत्रण रखना आपका ही कर्तव्य है।

झूठे प्रलोभनोका दूषित प्रभाव

यदि आप बच्चोंको अपनेसे दूर रखनेके लिए उन्हें भली-भांतिके प्रलोभनोंमें फंसाकर भटकाए रखते हैं तो वह बच्चों और आप दोनोंके ही हितोंके प्रतिकूल होगा क्योंकि इसमें उन्हें यह विश्वास हो जाएगा कि जब भी वे आपके निकट आएंगे, आप किसी न किसी बहाने उन्हें अपनेसे दूर रखनेके लिए कोई न कोई प्रलोभन

(शेष पृष्ठ २१ पर)

मंदित बच्चोंका समायोजन और हमारा कर्त्तव्य

—श्री राम सुरेश लाल—

समायोजन व्यक्तिके लिए एक सर्वाधिक महत्वपूर्ण पहलू है। यह व्यक्तिकी आन्तरिक इच्छाओं, मूल प्रवृत्तियों, विचारों एवं धारणाओंसे समाजको अवगत कराता है। यह समाजके साथ इन इच्छाओं, मूल प्रवृत्तियों, विचारों एवं धाराणाओंका अन्तःसंबंध जोड़ता है। समाजकी अपनी स्थिति होती है। सामाजिक ढाँचों, सामाजिक क्रियाओं अथवा सामाजिक सम्बन्धोंका वह दायरा जिसमें व्यक्ति अपने हितसाधनके लिए प्रवेश करता है उसे पहले तो घेरते हैं, फिर संरक्षण प्रदान करते हैं। जिस प्रकार परिवारको इकाई मान लेने पर पारिवारिक बंधनोंको सहना पड़ता है और यही बन्धन संरक्षण प्रदान करते हैं, यही बात सामाजिक बन्धनोंको स्वीकार कर लेनेमें भी है। समाज जहाँ संरक्षण देना चाहता है, वहीं बांधकर व्यक्तिको सीमित कर देता है। ये सीमाएं अनेक रूपोंमें हैं। इन सीमाओंका दायरा विभिन्न व्यक्तियोंके लिए विभिन्न प्रकार का है। किन्तु ये दायरे कसे या ढीले भी किए जाते हैं जिसका असर व्यक्तिके समायोजन पर पड़ता है। मसलन पढ़े-लिखे, धनी और सम्पन्न लोगों पर उन्नत समाजके बन्धन अधिक हावी होते हैं। कम पढ़े-लिखे अथवा अपेक्षाकृत सामाजिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक कार्यों में पिछड़े व्यक्तियोंपर ये बन्धन उतने हावी नहीं हो सकते। समाजमें उपयोगिता उसीकी अधिक होती है, जो सामाजिक बन्धनों, कायदे-कानूनोंके साथ ज्यादा बंधा है। उसके बन्धनके पीछे उसके उत्तरदायित्वोंकी प्रेरणा है जिसे वह सहज ही स्वीकार कर लेता है। इस प्रकार यह स्पष्ट हो जाता है कि दायित्व जो समायोजनका आधार बनता है, एक निश्चित मात्रामें बुद्धिका ही परिणाम है। बुद्धिरहित व्यक्ति चाहे वह कितना भी धनी हो, समायोजनमें सफल नहीं हो सकता।

जैसे-जैसे व्यक्तिका स्तर ऊपर उठता या नीचे गिरता है, वैसे ही उसके दायित्व घटते-बढ़ते हैं। इन्हीं उत्तरदायित्वोंके पालनेसे समायोजनकी परख होती है। किन्तु जो व्यक्तिगत किसी ज्ञात-अज्ञात जन्मजात अथवा अन्य कारणोंसे शारीरिक अथवा मानसिक बाधाके शिकार होते हैं, उनके लिए दायित्व-वहन अथवा समायोजनकी बातें महत्वहीन हो जाती हैं क्योंकि समाजको उन्हीं लोगोंसे दायित्व पालन करानेका हक है, जो सक्षम हैं। जो व्यक्ति अपनी बाधाके कारण सामाजिक जिन्दगीका पूरा लाभ नहीं उठा पाते, उनके लिए दायित्व वहन अथवा समायोजनकी बातें आपत्तिमूलक हो सकती हैं। अतः समाजके सभी वर्गोंका यह कर्तव्य होता है कि ऐसे मानसिक एवं शारीरिक रूपसे बाधित व्यक्तियोंके समायोजनके लिए हर संभव उपाय करें।

समायोजनकी कठिनाइयाँ

बाधित व्यक्तियोंकी शारीरिक एवं मानसिक कठिनाइयां धीरे-धीरे बढ़ती हैं। पूर्ण विकसित अवस्थामें उन्हें समझनेमें कोई कठिनाई नहीं होती। मूक और बधिरों, दृष्टिहीनों तथा अपाहिजोंकी कठिनाइयां बड़ी आसानीसे समझमें आ जाती हैं। इन कठिनाइयोंमें व्यक्ति समग्र रूपसे पीड़ित नहीं होता। कहीं न कहीं उसमें कोई ऐसी विशेष योग्यता उभर आती है जिससे उसके जीवन-यापन अथवा समायोजनकी समस्याएं हल हो जाती हैं। धीरे-धीरे समाज भी उन्हें अपना उपयोगी अंग मान लेता है। उनके लिए सामाजिक सुविधाओंके द्वार खुल जाते हैं। एक हद तक उनको आर्थिक, शारीरिक एवं बौद्धिक सहायता देकर सक्षम भी बनाया जा सकता है। किन्तु जो व्यक्ति मानसिक मंदतासे ग्रस्त होते हैं, उनकी कठिनाइयाँ अपनी होती हैं। यदि अधिक उम्रके हो गये हैं तो वे समाजके सड़े-गले अंगके रूपमें

स्वीकृत हो जाते हैं। इस समस्याकी गहनता व्यक्तिके जीवनमें हो रहे विकासके प्रारम्भिक क्षणोंमें ही स्पष्ट परिलक्षित होती है। यह अवस्था शारीरिक एवं मानसिक कोषाणुओं तथा तन्तुओंके विकासकी अवस्था है। यह अवस्था व्यक्तिके साथ सामाजिक परिचयकी अवस्था है जिसमें व्यक्ति का "स्व" बहुत कुछ तिरोहित हो जाता है। वह अपने कायिक एवं मानसिक अवगुंठनके द्वार खोलता है और समाजके धक्कमधक्केको स्वीकार करता हुआ आगे बढ़ता है—जहां उसकी अपनी सत्ता और समाजकी सत्तामें कोई विरोधाभास नहीं रह जाता। नन्हा बालक अपनी किलकारियों, अपने हाव-भाव एवं अंग संचालन तथा अपनी तोतली भाषा और अपने ऊटपटाँग क्रियाकलापोंसे तथा कुछ बड़ा होनेपर अपनी जिज्ञासाओंसे एक उभरनेवाले व्यक्तिकी कल्पना साकार करता है। किन्तु एक मंदित बालक इन सारे तथ्योंसे रहित होता है। न तो वह समाजको कुछ दे पाता है और न स्वतः ले ही पाता है। कभी-कभी तो वह महान चिन्ताओं, आशंकाओं, हीन-भावनाओं तथा अपराध-भावनाओंको भी जन्म दे देता है। एक मंदित बालक घरमें बैठ भी नहीं सकता। वह कभी शीशेसे टकराता है, कभी आलमारियोंको तोड़ता है, कभी पेंसिल या कलम चबाता है—या कभी शीशे और मिट्टीकी स्लेटें ही तोड़ डालता है। भोजनकी परवाह नहीं करता। कभी-कभी खाद्य-सामग्रीको ही अशुद्ध कर डालता है। एक मंदित बालक मां-बाप, भाई-बहन. दादा-दादीको मात्र प्रतीकके रूपमें समझता है। वह उनकी उपयोगिता पर ध्यान नहीं देता। उनके प्रति अपने कर्तव्यको नहीं समझता। बार-बार समझाने, डांटने या उत्पीड़न देनेपर भी उसके अनुकूल असर नहीं पड़ता। घर, बाहर, खेलके मैदानमें अथवा सड़कों या गलियों में, अन्य बच्चोंसे या तो अकारण ही उलझ जाता है या दूरसे ही उनपर पत्थर कंकड़ मारकर भाग जाता है। जहां बहुतसे लोग बैठे हों, वहां सहसा गाने लगना, सीटी बजाना या रोने लगना, या किसीकी जेबमें हाथ डाल देना, किसीका मुंह चूम लेना या नोच लेना इत्यादि उसकी सामान्य क्रियाएं होती हैं। एक नियोजित ढंगसे खेलोंमें सहभाजनकी व्यवस्थाके अतिरिक्त भी अपनी मानसिक मंदताके कारण वह न तो खेलोंका अभिप्राय समझ पाता है और न ही उनके नियमोंको ही पकड़ पाता है। यही नहीं, अपनी शारीरिक सफाई और दैनिक क्रियाओंसे निपटनेके लिए भी वह पूर्णतया पराश्रित रहता है। उसे एक ही कार्य करना बार-बार सिखाया जाता है। आखिर मां-बाप अथवा संरक्षक उसकी अबोधताको कब तक ढो सकते हैं। वे प्रायः कहते हुए पाये जाते हैं, "पता नहीं हमें किस पापका प्रायश्चित्त करना पड़ रहा है। न इसे खानेकी अक्ल है, न पहनने की अक्ल? आखिर कोई इसे कब तक सम्भालेगा?" कभी-कभी देखा है—दो-दो सगे भाई मंदित हो जाते हैं। उनके माता-पिता कहते, "क्या बताएं, दोनों ही भाइयोंकी अक्ल कम है। घरमें ऐसा कोई है नहीं जो केवल इनकी ही देख-भाल करे।" यहां ऐसे ही दो परिवारोंका वर्णन कर रहे हैं।

पहला परिवार: श्री बर्नवाल एक सामान्य व्यापारी हैं। उनका पहला बच्चा ठीक है, पढ़ता है। उनके दूसरे और तीसरे बच्चे मंदित हैं। उनकी मानसिक आयु दो या तीन वर्ष है। बुद्धिलब्धि ४५ के आस-पास है। उनकी वास्तविक आयु १० और १२ साल है। दोनों ही बच्चे अपने मां-बाप पर पूरी तरह आश्रित हैं। वे न ठीकसे कपड़े पहन सकते हैं, न भोजन ही ठीक उठाकर खा सकते हैं। किसी प्रश्नका उत्तर 'हां' और 'न' में ही देते हैं। कभी-कभी कुछ रटी-रटाई बातें बोल जाते हैं—जैसे "समाचार ठीक है न?" "मेरे घर आइएगा।" पिटनेके भयसे हाथ जोड़ कर क्षमा मांग लेना या पैरों पर गिर कर चिपांजी सी शक्ल बना लेना, दांत निपोर देना और कभी नाचने-गाने लगना इत्यादि उनकी सामान्य क्रियाएं हैं।

ऐसी परिस्थितिमें अभिभावक क्या कर सकते हैं। पिता जो दिन भर आजीविका जुटानेमें लगे रहते हैं, बच्चोंको किस प्रकार संभाल सकते हैं। उनकी भी अपनी सीमाएं हैं। उनकी शिक्षा-दीक्षा इस स्तरकी नहीं कि

वे अपने बच्चोंका मार्गदर्शन कर सकें। दिन भर कामोंमें व्यस्तता और रात भर आराम। सुबह-शाम बचोंको देखकर कोफ्त—उनके जीवनका अवसाद कितना गाढ़ा है!

दूसरे परिवारमें माता-पिता और दो बच्चे हैं। परिवार अति निम्न श्रेणीका है। माता-पिताकी सम्मिलित आय ५० रुपएके आस-पास है। बच्चोंकी बुद्धिलब्धि ४५ के आस-पास। बड़ा बचा किसी अजनबीके सामने आते ही रो देता है। छोटा बच्चा जिसे देखता है, देखता ही रह जाता है। परिवारका सामाजिक स्तर भी गिरा हुआ है।

उपर्युक्त परिस्थितियोंमें कोई भी सुधार बिना बाहरी हस्तक्षेपके कैसे संभव हो सकता है? गली और मुहल्लेके बालक उन बच्चोंको देखते ही 'पगला, 'पगला' चिल्लाने लगते हैं। ऐसी स्थितिमें एक मंदित बालक या तो झेंप कर भाग खड़ा होता है या कमजोर बच्चोंको मारने दौड़ता है। जब कभी वह तोड़-फोड़के कार्योंमें लिप्त होता है तो दूसरे सामान्य बच्चे उसे मारने-पीटने लगते हैं। यह परिस्थिति उनके लिए अपमानजनक है।

सामाजिक अलगाव

मंदित बच्चों और सामान्य बच्चोंके बीच बहुधा सामाजिक अनैक्य या अलगावकी प्रवृत्ति देखी जाती है। वे एक दूसरेको अजनबीकी भांति घूरते हैं। गंभीर रूपसे मंदित बच्चे सामान्य बच्चोंसे दूर ही रहना चाहते हैं अथवा जब कभी वे सामान्य बच्चोंके पास जाना चाहते हैं, असफल हो जाते हैं। उन्हें डाँट-फटकार, घृणा-अनादर या दुरावका सामना करना पड़ता है। इन सबका मूल कारण यह है कि सामान्य बच्चोंमें जो सामाजिकता अथवा सामाजिक पृष्ठभूमिमें पार्ट अदा करनेकी क्षमता होती है, वह इन मंदित बच्चोंमें बिल्कुल नहीं होती। अतः अभिरुचियोंकी विषमता ही इस अलगावका कारण बन जाती है। सामान्य बच्चोंके साथ मंदित बच्चोंके समायोजनमें निम्न कठिनाइयां आती हैः—

(क) सामान्य बच्चोंमें मंदितोंके प्रति उपेक्षा भाव, तथा

(ख) मंदित बच्चोंका अपना समाज न होना।

सामान्य बच्चोंकी उपेक्षा

मूलतः उपेक्षा असहयोग की ही प्रक्रिया है। सहयोगका अभाव ही इस भावनाकी सृष्टि करता है किन्तु सहयोगका अभाव प्रतियोगिताके प्रारम्भका भी द्योतक है। खेलोंमें व्यक्तिगत गुणों या क्षमताओंके बलपर प्राप्त की गयी कुशलता अन्य बच्चोंके साथ प्रतियोगिताको जन्म देती है। यही प्रतियोगिता असामाजिकताकी स्थितिमें संघर्ष बन जाती है किन्तु उस प्रक्रियाका विकास क्रम-बद्ध एवं नियोजित होता है। इसे निर्देशित किया जा सकता है। मंदित बच्चोंके साथ जो सामान्य बच्चोंकी उपेक्षामूलक भावना होती है, वह मंदितोंकी दुर्बलताके आधार पर ही पनपती है। ये बच्चे अपनी मंद बुद्धि, अपूर्ण सामाजिकता तथा हीन भावनाओं द्वारा सामान्य बच्चोंकी श्रेणीमें न तो बैठनेके लायक होते हैं और न उन्हें इस प्रकारकी कोई सुविधा ही दी जाती है। सामान्य बच्चोंके साथ संतुलित सह-भोजन उनके वशका नहीं होता। यह मंदितोंके प्रति उपेक्षाका एक माध्यम बन जाता है। मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोणसे सहयोग तथा स्पर्द्धाकी भावनाओंकी तुष्टि मंदित बच्चोंकी क्षमतासे परे है। अतः समायोजनका कोई आधार न पाकर सामान्य बच्चोंमें मंदितोंके प्रति अनादर या उपेक्षाका भाव जाग्रत हो जाता है।

मंदितोंका जमघट

यद्यपि मंदितोंका कोई अलग समाज नहीं है फिर भी प्रशिक्षणके लिए उन्हें सामाजिक बनानेके हेतु एक संस्थाके अन्तर्गत रख सकते हैं। किन्तु प्रश्न यह है कि मंदितोंका जमघट उनके विकासमें सहायक होगा अथवा बाधक? यह एक महत्वपूर्ण प्रश्न है। इसपर व्यापक दृष्टिसे विचार होना चाहिए। इस प्रश्नके पीछे एक मौलिक मूल्य भी विद्यमान होता है कि आखिर हम मंदताका निराकरण करना चाहते हैं अथवा मंदताको समाजमें प्रतिष्ठित करना चाहते हैं। दोनों ही विचार अथवा लक्ष्य लचीले हैं। इनको समन्वित ढंगसे देखना होगा। मंदताका पूर्ण निराकरण असंभव है। समाजमें मंदितोंकी एकान्त प्रतिष्ठा भी नहीं की जा सकती।

मंदित या तो समाजमें पराश्रित रह सकते हैं या समाज सामान्य व्यक्तियोंके लिए सहायक अंगके रूपमें उनका पुनर्वास किया जा सकता है। पूर्ण आत्मनिर्भर व्यक्तिकी भूमिका निभानेमें वे कदाचित ही सफल हो सकें क्योंकि मुक्त छोड़ देनेपर वे असामाजिक किंवा अपराधी व्यक्तियों द्वारा पीड़ित या शोषित किये जाते हैं। दिल्लीके दरियागंज मुहल्लेमें एक जूता बनाने वालेके पास कुछ दिनों पहले एक किशोर बालक देखा गया था। कुछ बेशर्म हरकतें उसके साथ वे लोग कर रहे थे जिन्होंने लालच देकर उसे अपने पास रखा था—ऐसे मंदित बालकके पास बुद्धिका अभाव होनेसे व्यक्तिगत एक सामाजिक दोनों ही स्तरोंपर हानियां हैं। सामाजिक स्तरपर होने वाली क्षति यह है कि एक अवांछनीय प्रवृत्तिको माध्यम बनाकर उस प्रवृत्तिका ही विज्ञापन अलाभकार है। दूसरी क्षति व्यक्तिगत स्तरपर थी क्योंकि उस मंदित बच्चेके प्रति गलत सहानुभूति अपनाकर उसे हेय वासनाओंका माध्यम बनाया गया था जिससे उसका सुधार नितान्त असंभव था। किसी भी प्रकारकी सहायताका अर्थ कुत्सित प्रवृत्तियोंका शिकार बनाना कदापि नहीं हो सकता।

सामाजिक सुधार एवं समायोजन

मंदित बालका दायित्व पूरे समाजपर है। एक व्यक्तिसे लेकर एक समूह या समुदाय सभी उसके लिए सम्मिलित प्रयास कर सकते हैं। 'दिवा-सुरक्षा-कार्यक्रम' विशेष रूपसे उपयोगी होगी। यदि समाजके समृद्ध व्यक्ति अपने दायित्वोंका पालन करें तो ऐसी अनेक संस्थाएँ खोली जा सकती हैं जिनमें बच्चोंको बुलाकर दिन भर शिक्षा तथा सिलाई-बुनाई, कताई, लकड़ीके काम, मिट्टीके खिलौने या दियासलाई, गृह-उद्योग आदि का प्रशिक्षण दिया जा सकता है। यह ठीक है कि मंदताके विभिन्न प्रकार होनेसे सभी मंदित बच्चोंको एक ही प्रकारका प्रशिक्षण नहीं दिया जा सकता।

मन्दताके उपचारके लिए सामाजिक जाग्रति पैदा करना आवश्यक है जिससे अधिकाधिक स्वयंसेवी संस्थाओं या व्यक्तियोंके माध्यमसे ऐसे कार्यक्रम चलाये जा सकें जो उनके उपचारमें सहायक हों।

राज्य अपनी नीतियोंका निर्धारण स्वयं करता है। चूँकि हमारा राज्य एक कल्याणकारी राज्य है अतः उसका कर्तव्य है कि समाजके सबसे अधिक उपेक्षित, दलित एवं मन्दित व्यक्तियोंके लिए कल्याणकारी योजनाएं चलाये। मन्दितोंकी देशव्यापी सूची तैयार करनेका कार्य राज्य अपने हाथोंमें ले। उनकी मन्दताके अनुकूल समाज-सेवी संस्थाएँ बनानेका उत्तरदायित्व राज्यका है। जो समाजको कुछ दे नहीं सकते, वे मन्दित समाजका पूरा संरक्षण पानेके अधिकारी हैं। राज्य इस कार्यमें सहायक हो सकता है।

सामाजिक कार्यकर्त्ताओंकी भूमिका

मानसिक मन्दताके क्षेत्रमें सामाजिक कार्यकर्त्ताको निम्नलिखित संक्षिप्त भूमिकाएं निभानी होंगी।

(१) मन्दित बच्चोंके पुनर्वासकी व्यवस्थामें सक्रिय सहयोग प्रदान करना;

(२) संस्थेतर सेवाओंमें दिलचस्पी लेना तथा

(३) सामुदायिक जागरणके लिए सेमीनार, सिम्पोजियम, फिल्म शो इत्यादि प्रशिक्षण-माध्यमोंका सहारा लेना।

मन्दित बच्चोंकी स्थिति सुधारने लिए अथवा इससे बचनेके लिए जो भी प्रयत्न किये जाते हैं, उनमें मंदितोंके समायोजनका पक्ष ही निहित रहता है। चाहे उपचारके माध्यमसे हो अथवा प्रशिक्षण या पुनर्वासके माध्यमसे—मन्दित बच्चोंका समायोजन एवं पुनर्वास हो हमारा उद्देश्य हो सकता है। कहीं-कहीं यह लक्ष्य स्पष्ट दिखाई नहीं देता। किन्तु सामाजिक योग्यताका अभाव उनके लिए किये गये प्रयत्नोंका सार है। व्यक्ति, समूह तथा राज्यकी अलग-अलग भूमिकाएँ हैं। इतना निर्विवाद है कि मन्दताजनित समस्याएं सतहपर आ चुकी हैं। अन्ततोगत्वा हमें इस निष्कर्षपर पहुँचना ही है कि मन्दता एक ऐसी स्थिति है जिसका व्यक्तिकी आंतरिक क्षमताओं, पारस्परिक सम्बन्धों तथा क्रिया-प्रतिक्रियाओंसे घनिष्ठ सम्बन्ध है। इसके निराकरण या समाहारके अभावमें न तो व्यक्तिका हित है और न समाजका ही।

स्वाद व गंध

स्वाद व गंध रासायनिक अनुभूतियां हैं, फिर भी वैज्ञानिक दृष्टिसे इनका सही-सही निरूपण अभी किया जाना है। यदि इनका निरूपण हम कर भी लें तो भी इसमें संदेह रह जाता है कि क्या हम इस जानकारीके आधारपर सम्बद्ध पदार्थ, उदाहरणार्थ स्वादके लिए आम या गंधके लिए चमेलीके साथ भौतिक सम्पर्क द्वारा होने वाले उद्दीपनके बिना भी इन सापेक्ष अनुभूतियाँका सृजन कर सकनेमें सफल हो पाएँगे या नहीं।

ध्वनि और प्रकाशको तरंगोंमें परिवर्तित करके उनका मानचित्र तैयार किया जा सकता है तथा उन्हें नापा जा सकता है। दृष्टि और ध्वनि जैसी भौतिक अनुभूतियोंका अंकन और पुनरुत्पादन किया जा सकता है। एक बार सुनी हुई ध्वनिको कंठ, जिह्वा, होठों तथा अन्य अंगोंकी सहायतासे दोबारा उत्पन्न किया जा सकता है। इसी प्रकार एक बार देखी हुई वस्तुको स्मृतिके सहारे चित्रित या रेखांकित किया जा सकता है या उसका माडल तैयार किया जा सकता है। लेकिन पीड़ा या क्षोभ जैसी सम्पर्क अनुभूतियोंकी तरह स्वाद और गंधको केवल अनुभव ही किया जा सकता है और वह भी तबतक जबतक व्यक्तिका सम्बद्ध पदार्थसे सम्पर्क बना रहता है। स्वाद और गंधका प्रजनक पदार्थोंके रूपमें ही वर्णन किया जा सकता है जैसे मिठासको चीनीके रूपमें, सुगंधको गुलाबके रूपमें। हम वर्तमान अनुभूतिकी पिछली अनुभूतिसे तुलना करते हैं।

स्वाद व गंधकी हमारी अनुभूतियां इतनी संवेदनशील होती हैं कि पलक झपते ही सूक्ष्म मात्रामें उपलब्ध मिश्रणोंको पहचाना जा सकता है। इतना ही नहीं, पदार्थकी अत्यल्प मात्रामेंसे भी नाक केवल एक ही मिश्रण नहीं बल्कि उस मिश्रणके विभिन्न संयोजक पदार्थोंसे विभेद करके उन्हें पहचान लेती है।

जीभ एक असाधारण अवयव है जिसपर स्वाद विन्दु होते हैं। जीभ भोजनके मध्यस्थके रूपमें काम करती है। इसके अलावा, इसपर भी शरीरकी त्वचाकी भाँति स्पर्शकी प्रतिक्रिया होती है। कंठके सहयोगसे जीभ ध्वनि को नियंत्रित करती है तथा ध्वनिमें उतार-चढ़ाव भी पैदा करती है। जीभ एक चलायमान पेशी है जो जरा सा सिकुड़नेपर आकृति बदल लेती है। स्वाद और ध्वनिके अलावा जीभ भोजनको चबाने तथा लार मिलानेमें भी सहायता करती है। मनुष्यके स्वाद विन्दु जीभपर फैले रहते हैं, जबकि उच्च श्रेणीके अन्य पशुओंमेंसे विन्दु मुँहमें होते हैं। निम्न श्रेणीके जीवोंमें स्वाद ग्रहण करने वाले ये विन्दु शरीर भरमें छितरे होते हैं। उदाहरणार्थ मछलीकी बगलमें ये विन्दु होते हैं।

यह तो स्पष्ट है कि मीठे, खट्टे, कड़वे या खारे स्वाद-विशेषके लिए अलग-अलग स्वाद विन्दु होते हैं। दिखनेमें एक समान होते हुए भी रासायनिक दृष्टिसे ये विन्दु अलग-अलग होते हैं तथा इसीलिए वे अलग-अलग स्वादोंकी अनुभूति करते हैं। विभिन्न स्तनपायी जीवोंमें स्वाद विन्दुओंकी संख्याका अनुमान इस प्रकार लगाया गया है: चमगादड़ ८००; गिलहरी ६०००; खरहा और मनुष्य ९०००; भेड़ १०,०००; सूअर और बकरी १५,०००; खरगोश १७,०००; बैल ३५,०००। ये आंकड़े बताते हैं कि स्वादके मामलेमें मानव सर्वोपरि नहीं है।

वयस्क व्यक्तिकी जीभके मध्य भागमें स्वाद विन्दु नहीं होते, जबकि खट्टे, खारे तथा कड़वे स्वादके प्रति संवेदनशील क्षेत्र अनियमित रूपसे बिखरे रहते हैं। जीभके अगले हिस्सेसे हमें मीठे पदार्थकी अनुभूति होती है, पीछेके भागसे कड़वे की, किनारेपर खट्टे तथा अगले भागके और किनारेपर नमकीनकी। आयुके अनुसार स्वादके अनुभूति भी अलग-अलग होती है। बच्चोंमें जीभके

विशेषकर अगले भागमें तथा गालोंके अन्दरूनी हिस्सोंमें स्वाद विन्दु भारी संख्यामें होते हैं। इसीलिए बच्चोंको मीठेके प्रति विशेष लगाव होता है।

विभिन्न व्यक्तियोंकी स्वादकी अनुभूतिमें इतना अधिक अंतर होनेके कारण स्वाद सम्बन्धी सभी निष्कर्षोंसे केवल औसतन राय ही कायम की जा सकती है। जनताका काफी बड़ा अंश तो अपेक्षाकृत "स्वादान्ध" होता है। दूसरे शब्दोंमें वे लोग छोटे छोटे अंतरोंमें विभेद नहीं कर पाते हैं। फिनायल थायोकारबामाइडका उदाहरण एक सिद्ध उदाहरण है। देखा गया है कि फिनायल थायोकारबामाइडका स्वाद विभिन्न व्यक्तियोंको अलग-अलग लगता है। स्वाद अनुभूतिकी इस विभिन्नताका कारण अनुवांशिक अंतरोंको माना गया है। सोडियम वेन्जोएटका कई वयस्कोंपर अनुभूति-विषयक प्रयोग किया गया। इस प्रयोगसे पूर्व ही इन सभी वयस्कोंने सुबहका नाश्ता किया था। इनमेंसे प्रत्येकको सोडियम वेन्जोएटके चूर्णकी लगभग आधी-आधी ग्राम मात्रा दी गयी। स्वादके सम्बन्धमें इनके विचारोंकी प्रतिशत इस प्रकार की: स्वादविहीन ३०; कड़वा १०; मीठा १५; नमकीन १७; मीठा-नमकीन ९; खट्टा ९; खारा ४; जो बता नहीं सके ४ तथा जो स्वादका निर्णय नहीं कर पाये २। इस प्रकार ३० प्रतिशत ही इस तत्वके वास्तविक स्वाद-खारेको पहचान पाये।

इन स्वाद विन्दुओंकी कोशिकाओंमें जो रसायन होता हैं, उसके बारेमें अभी तक कुछ निश्चित नहीं पाया है। शायद यह रसायन प्रकृतिमें प्रोटीनकी तरह होता है और हरेक स्वादके लिए अलग-अलग होता है। संभवतया स्वाद सम्बन्धी अनुभूति जगानेमें यह आवश्यक भूमिका निभाता है। स्वादके उचित उद्दीपनसे ये तत्त्व विघटित हो जाते हैं, परिणामस्वरूप नाड़ियोंके संवेदनशील सिरोंको उत्तेजित कर देते होंगे।

स्वाद-अनुभूतिका रासायनिक आधार प्रोटीनके गुणों वाला होता है, यह बात कड़ुवे-मीठे स्वादोंके सम्बन्धमें विशेष रूपसे खरी उतरती है। गायों और सुअरोंके स्वाद विन्दुओंसे अलग की गयी प्रोटीन कड़वे और मीठे पदार्थोंके साथ मनुष्यकी जीभकी ही तरह उनके वास्तविक स्वादके अनुपातमें मिश्रित होती हैं। कड़ुवे पदार्थोंके साथ मिलकर मिश्रण तैयार करनेवाली प्रोटीन मीठे पदार्थोंके साथ प्रतिक्रिया करनेवाली प्रोटीनसे बिल्कुल अलग होती है। इस प्रकार पता चलता है कि रासायनिक प्रतिक्रियाओंमें बड़ी मात्रामें अन्तर होता है।

स्वाद और गंध मिलकर महक जतलाते हैं। गंध या महक वाष्पशीलता पर निर्भर होती हैं। आमतौरसे वे पदार्थ जो लगातार अणु फेंकते रहते थे, महक वाले होते हैं। शिशु स्तनपायी जीवोंमें, जिनकी खुराक माँका दूध ही होती है, गंधकी अनुभूति नहीं होती। यह तो माँका दूध छोड़नेके बाद ही जीवकी सहायतार्थ विकसित होती है। मनुष्यके सम्बन्धमें गंधकी अनुभूति यौवनारंभ पर चरमावस्थामें होती है तथा ४५ वर्षकी आयुके बाद कम होनी शुरू हो जाती है।

नाकके जिस भागमें अनुभूति अवयव होते हैं, वह भाग हमेशा रंगदार होता है—मनुष्योंमें पीला तथा कुछ पशुओंमें गहरा भूरा। गंध अनुनासिक रंगसे सम्बद्ध है। इसीलिए, एल्बीनों जैसे रंगहीन जानवरोंको शीघ्र ही विष चढ़ता है। जानकार किसान सफेदके स्थानपर काले सुअरोंका पोषण करना पसंद करते हैं, क्योंकि गंधमें भेदकर पानेके योग्य न होनेके कारण सफेद सुअर विषैले पदार्थ भी खा जाते हैं।

करोड़ों गंध-कोशिकाएं और हजारों स्वाद-विन्दु मस्तिष्क तक अनगिनत संदेश पहुँचानेके काममें लगे रहते हैं। फिर भी स्वाद और गंधके विलक्षण छटाई-विभाग बिना किसी प्रयासके ही ये आवश्यकताएं पूरी करते हैं तथा तुरन्त एवं निश्चयात्मक निर्णय देते हैं।

● ● ●

उचित समय पर कार्य अधिक लाभदायक

अंग्रेजोंमें एक मुहावरा है—"ए स्टिच् इन टाइम सेव्स नाइन"। अर्थात् वक्त पर किये गये कामसे भविष्यमें झंझटोंसे बचा जा सकता है। सदियों पुराना यह मुहावरा संसारमें सभी जगहोंपर माना जाता है। नवजात शिशुओंकी आंखोंकी देखभालके सम्बन्धमें यह मुहावरा पूरा नहीं तो काफी खरा उतरता है। है। क्योंकि जन्मके समय शिशुकी आंखोंकी देखभालमें जरा सी लापरवाहीसे अपूरणीय क्षति हो सकती है।

आँखोंकी पूर्ण ज्योति तो सभी व्यक्तियोंको परमात्माकी एक अपवादरहित भेंट है। पांचों इन्द्रियोंमें सर्वाधिक महत्वपूर्ण होनेके कारण इसके लिए कुछ अधिक देखभालकी आवश्यकता होती है।

जीवन भर आंखोंकी उचित देखभाल करनी होती है। और यह कार्य तो जन्मसे पहले ही शुरू हो जाता है। गर्भवती महिलाओंकी उचित देख-रेख इस दृष्टिसे अत्यन्त महत्वपूर्ण है। अतः नव-जात शिशुओंमें अंधता-निरोधपर पूरा-पूरा ध्यान दिया जाना चाहिए। प्रसवसे पहले और बादमें विशेष ध्यान अनिवार्य है। बादमें भी, जैसे धीरे-धीरे बच्चा बड़ा होता जाता है, आंखोंको दूषण या चमकीले प्रकाशसे बचानेके लिए निरन्तर देख-भाल जरूरी है।

गर्भके पहले दो महीनोंमें खसरेसे बचावका हर सम्भव प्रयास किया जाना चाहिए। अन्यथा पैदा होने वाले शिशुको मोतियाबिन्द तथा अन्य विकासीय दोष होनेकी संभावना हो सकती है। यदि दुर्भाग्यसे कहीं माता सुजाक, आतशक जैसे किसी रति रोगसे पीड़ित हो तो प्रसवसे पहले उसके लिए रोगका निदान करवाना जरूरी है।

पैदा होनेवाले बच्चेको आतशक हो सकता है। यह तब हो सकता है जब इस रोगसे पीड़ित माताका गर्भ-कालके दौरान उचित इलाज न करवाया जाय। लेकिन सुजाक रोग जन्म लेनेवाले बच्चेको नहीं लगता है। फिर भी यह मत सोचिए कि इससे कोई हानि नहीं होती। शिशुकी आंखोंके लिए यह रोग भी एक खतरा है और वह इस रूपमें कि माताके प्रजनन अंगोंसे जीवाणु शिशुकी आंखोंमें दाखिल हो सकते हैं, जिससे आंखोंमें सूजन हो सकती है। जिससे बादमें अंधा हो जानेकी आशंका रहती है। प्रसवके समय उचित देखभालसे इस विपत्तिको रोका जा सकता है।

गर्भवती महिलाके आहारसे पर्याप्त मात्रामें विटामिन तथा अन्य अनिवार्य पोषक तत्व होने चाहिए। विटामिन विशेषकी कमी तथा अपर्याप्त पौष्टिक आहारसे नवजात-शिशुके स्वास्थ्य पर बुरा असर पड़ता है तथा नेत्र रोगों तथा अन्य रोगोंसे पीड़ित होनेको आशंका बढ़ जाती है।

प्रसव-क्रियामें लापरवाहीसे भी शिशुकी आंखों पर बुरा प्रभाव पड़ता है। यदि माताके रति रोग संक्रमण तथा प्रजनन-अंगोंसे जीवाणुओंके निष्क्रमणका ठीक प्रकारसे इलाज न किया जाय तो शिशुकी आंखों पर जन्मके समय ही बुरा प्रभाव पड़ सकता है। प्रशिक्षित दाई और डाक्टरकी सेवाएं तुरंत उपलब्ध रहनी चाहिए। जहां शिशुकी आखोंको क्षति पहुँचनेकी आशंका काफी हो, उस दशामें सीजेरियन, चिमटी इत्यादि औजारों वाले मामलों पर विशेष ध्यान दिया जाना चाहिए।

जन्मके तुरन्त बाद माताके प्रजनन-अंगोंसे जीवाणुओंके निष्क्रमणको रोकनेके उपाये तुरन्त किये जाने

चाहिए ताकि वे नव-जात शिशुकी आंखोंमें न पहुंच सकें। शिशुकी आंखें खुलनेसे पहले उसकी पलकोंको नाकसे प्रत्येक आंखके बाहरी सिरे तक साफ व गोली रुईसे पोंछा जाना चाहिए। यहां तक कि जब चिलमचीमें शिशुको साफ किया जाता है, तो यह ध्यान रखना चाहिए कि पानी शिशुकी आंखोंमें न चला जाय। संक्रमणसे बचानेके लिए आंखोंमें क्रिस्टेलाइन पेंसीलिनकी बूंदें डाली जानी चाहिए।

प्रतिजीवाणु (एन्टीबायोटिक्स) के उपयोगसे पहले जो निरांधक उपाय किये जाते थे, उनमें आंखोंमें एक प्रतिशत सिल्वर नाइट्रेट डालना भी शामिल था। यदि नवजात शिशुको आंखोंसे पानी बह रहा हो तो तुरन्त डाक्टरको दिखाना चाहिए। बच्चोंको आंखोंमें मवाद जैसा द्रव पाया जाना अंधताका एक प्रमुख कारण होता है। माताके प्रजनन अंगोंसे गुजरनेके दौरान इस पदार्थसे शिशुको आंखोंमें इस रोगको पैदा करनेको काफी संभावनाएं होती है। जन्मके बाद भी संक्रमित नेपकिनों, तौलियों, स्पंजों या दाईके दूषित हाथोंसे भी इस बीमारीके होनेको संभावनाएं बनी रहती हैं।

जन्मोत्तर देखभाल

सीधी धूपसे नवजात शिशुकी आंखोंपर बहुत ही बुरा असर पड़ता है। अतः सीधी धूपसे शिशुको बचाना जरूरी है। आमतौरसे बच्चेको धूपमें ही पालनेमें छोड़ दिया जाता है। मक्खियोंसे भी बच्चेको बचाना चाहिए।

मां या दाईकी स्वास्थ्य सम्बन्धी निजी जानकारी भी आवश्यक है। गंदे कपड़े या परिवारके अन्य सदस्योंने जिस तौलियेका उपयोग किया हो, उससे बच्चेकी आंखें नहीं पोंछी जानी चाहिए। काजल या सुरमा डालनेके पुराने रिवाजको छोड़नेका प्रयास करना चाहिए, क्योंकि इसके साथ-साथ जीवाणु भी आंखोंमें जा सकते हैं। कुकरे-ग्रसित परिवारों और इस रोगके संभावित क्षेत्रोंमें इस सम्बन्धमें और अधिक ध्यान दिया जाना चाहिए।

करने/न करने योग्य निर्देश

ये करें

—गर्भवती महिलाके लिए पौष्टिक आहार अत्यावश्यक है।

—प्रसव-क्रिया योग्य डाक्टरों और प्रशिक्षित नर्सों द्वारा ही सम्पन्न की जानी चाहिए।

—यदि माता रति-रोगसे ग्रसित है तो उसका उचित इलाज आवश्यक है।

—शिशुको पहली बार नहलाते समय, ध्यान रखना चाहिए कि दूषित जल आंखोंको न छुए।

—यदि आंखोंमें कोई दूषित पदार्थ दिखायी दे तो डाक्टरकी सलाह लें।

—आंखोंको दूषित करनेवाली मक्खियोंसे बचनेके लिए मच्छरदानीसे पालनेको ढकें।

ये न करे

—चमकदार और सीधी धूप न लगे।

—बच्चेकी आंखोंमें काजल या सुरमा न डालें।

याद रखिए। निरोग दृष्टि प्रत्येक नवजात शिशुका जन्म सिद्ध अधिकार है तथा हर प्रकारकी देखभाल और सावधानी बरतनेसे ये अधिकार उसे दिया जाना चाहिए। कहीं ऐसा न हो कि अनजानेमें किसी दुखका कारण बनकर कोई निरपराध शिशुको जीवन भर दुष्परिणाम भुगतनेपर मजबूर कर दे। इसका अधिकतम ध्यान रखा जाना चाहिए।

'हालमें पता लगा कि इंसानके शरीरमें गन्धक भी होता है।' शरीर-शास्त्रके लेक्चररने अपने विद्यार्थियोंको बतलाया।

'गन्धक' एक छात्रा चौंककर बोल उठी, 'लड़कियोंके शरीरमें कितनी गन्धक होती है ?'

'सबमें अलग-अलग मात्रा मौजूद होती है।'

'तभी तो हममेंसे कुछ दूसरोंकी अपेक्षा अच्छी दियासलाइयाँ बना देती हैं।' वह लड़की बोली।

गर्भवती और माताके लिए कसरतकी आवश्यकता

— श्रीमती सुमन भटनागर एवं राज जैन —

शरीरके प्रत्येक अंगको कुछ विशेष कार्य करने पड़ते हैं और इसी नियमके अन्तर्गत हमारे शरीरकी मांसपेशियाँ भार संभालती हैं और गतिका नियन्त्रण करती है। शरीरके अंगोंको मजबूत बनाने और काम लेनेके लिए व्यायाम करना आवश्यक है। व्यायाम और सन्तुलित आहार मिलनेपर अंग काम करने योग्य व सुडौल बने रहेंगे। व्यायामके अभावमें कसाव कम हो जायेगा और चर्बी बढ़ने लगेगी।

सामान्यतया गर्भवती स्त्रियों व माताओंसे यह सुननेको मिलता है कि बच्चेके जन्मके बाद उनका पेट बाहर निकल आता है, कटिकी सुन्दरता समाप्त हो जाती है, आँतें गिरी-गिरी सी रहने लगती है। बहुतोंका प्रसवके पश्चात् शरीरमें दर्द व कब्ज बना रहता है। इन शारीरिक परिवर्तनों व व्याधियोंका कारण केवल अस्वस्थ रहनेकी ही स्थिति हो सकती है। गर्भ स्त्री-जीवनके लिए एक स्वाभाविक प्रक्रिया है, जो उसे स्वयंको अस्वस्थ कर रखनेवाली या उसके शरीरको बेडौल बनानेवाली नहीं है, अपितु उचित व्यायामका अभाव ही ऐसी स्थिति उत्पन्न करनेका मूल कारण है।

स्त्रीके गर्भवती होने पर उसका गर्भाशय जिसमें भ्रूणकी भर्ती होती है, बढ़ जाता है। इस अवस्थामें गर्भाशय व उदरकी पेशियाँ गर्भकालके अतिरिक्त भार वहन करनेके लिए लचीला व मजबूत होना पड़ता है। पार्श्विक बन्धनों, गर्भाशय और उदरकी पेशियोंमें लचीलापन न होनेके कारण वे भ्रूण तरल पदार्थ और अपराको सम्भाल नहीं पाते और पूर्ण विकास होनेके पहले ही भ्रूणको छोड़ देते हैं जिसे गर्भपात कहते हैं। पूर्ण गर्भकाल प्राप्त करनेकी अवस्थामें इन पेशियोंपर अत्यधिक भार पड़ता है। इन अंगोंको लगभग ७-८ किलो वजन वहन करने व तनाव सहनेकी क्षमता होनी चाहिये। प्रसवके पश्चात् गर्भाशय धीरे-धीरे संकुचित होकर साधारण आकार ग्रहण कर लेता है। पेशियाँ भी सिकुड़कर अपनी स्थितिमें आनेका प्रयत्न करती हैं। कई बार ये अंग बच्चोंके जन्मके पश्चात् पूर्ण रूपसे सिकुड़ नहीं पानेके कारण फैले रह जाते हैं। इसीलिए शरीर बेडौल बन जाता है, कमर या पीठमें दर्द, शरीरमें भारीपन, अपच व कब्ज भी रहने लगती है। यदि स्त्री स्वस्थ हो तो उसके प्रजनन सम्बन्धी अंगोंको प्रसवमें सरलता रहती है और प्रसवके पश्चात् वे शीघ्र ही पूर्व रूपमें आ जाते हैं। इसीलिए प्रत्येक स्त्रीके लिए प्रसवके पहले और पश्चात् व्यायाम करना शारीरिक गठन व स्वास्थ्यके लिए उत्तम है।

गर्भवती स्त्रीके लिए व्यायाम

गर्भवती स्त्रियोंको गर्भ धारण करनेसे लेकर प्रसव तकके लिए निम्न प्रकारके हल्के व्यायाम करने चाहिए—

सर्वप्रथम जमीनपर चटाई बिछाकर पीठके बल लेट जाइये। फिर घुटनोंको थोड़ा मोड़ लें। इससे पश्चात् धीरे-धीरे नाकसे सांस अन्दर लें और बाहर निकालें। इस क्रियाको प्रत्येक बार करनेके अनन्तर शरीरको ढीला छोड़ दें। ६-८ बार इस प्रकार सांसको अन्दर बाहर करें।

दूसरी विधि इस प्रकार है कि आप कुर्सी या चारपाईके पास सीधी खड़ी हो जायें। फिर पैरोंको एक फुट फैला लें और हाथोंको बगलमें रख लें। अब कुर्सीकी पीठ या चारपाईकी पावाको पकड़कर पंजोंके बल धीरे-धीरे बैठें और खड़ी हों। बैठनेमें ४-६ तक गिनने तक जितना समय लगायें तथा उठनेमें भी उतना ही समय लगाया जाय। यह कसरत ४-६ बार करें।

व्यायामकी तीसरी विधि यह है कि पीठके बल लेट जायें और हाथ बगलमें रखें। फिर एक पैरको धीरे-

धीरे उठायें और धीरे-धीरे नीचे लेजायें। इसी प्रकार दूसरे पैरको भी उठायें और नीचे लेजायें। यह क्रिया ४-५ बार करें।

इसके अतिरिक्त प्रतिदिन यदि सम्भव हो तो १-२ किलो अनाज घट्टीसे अवश्य पीसें। पीसनेसे शरीरको अच्छा व्यायाम मिलता है। गर्भकालके अन्तिम २-३ महीनोंमें मील दो मील घूमना लाभप्रद हैं।

इस प्रकार प्रसवके पश्चात् ६ माह तक व्यायाम करना उपयुक्त है। व्यायाम करनेसे पेट नहीं टूटेगा और कमर नितम्ब तथा उदरकी सुडौलता बनी रहेगी। गर्भाधान कालके समयको सांस लेने व निकालनेवाली पहली कसरत अब भी करती रहें। प्रसव हो जानेके सात दिवस पश्चात्से निम्न प्रकारकी कसरतें लाभप्रद है।—

(१) जमीनपर साधारण तरीकेसे बैठ जायें फिर पैरोंको सीधाकर लें। हाथोंको पेटपर रख लें। उसके पश्चात् पेटकी पेशियोंको सिकोड़ें और फैलायें। यह कसरत धीरे-धीरे १० बार तक करें।

(२) पीठके बल चटाईपर लेट जाइये फिर घुटनों को पेटकी तरफ मोड़कर कसकर हाथोंसे पकड़ लें। उसके पश्चात् कन्धोंको उठायें। यह कसरत आठ बार करें।

(३) प्रथम सीधी खड़ी होकर पैरोंको डेढ़ फीट के लगभग फैला लें। फिर कमरको हाथोंसे पकड़ें। व आगे-पीछे धीरे-धीरे झुकें। यह ४-६ बार करें। इसके पश्चात् इसी स्थितिमें दायीं तरफ सीधे घूमनेका प्रयत्न करें व धीरे-धीरे बायीं तरफ भी। इस व्यायामसे कमर पतली होनेमें योग मिलेगा और पेट भी सिकुड़ेगा।

सन्तुलित आहार और समुचित व्यायाम ही आपके स्वास्थ्य व सौन्दर्यका रहस्य है।

(लोक विज्ञानसे साभार)

KURAZOL
(Liquid & Tablet)
A Remedy for Asthma
● ● ●

ADIOL COMPOUND
A General Pick-up
● ● ●

HEMOGASTRIN
A Digestive & Haematinic Tonic
● ● ● ●

LYCOLIV
A Liver Tonic
● ● ●

Products of :
INTERNATIONAL CHEMICAL & BIOLOGICAL INSTITUTE
PRIVATE LIMITED
KURAZOL HOUSE, BANGALORE-4

विटामिन 'ए'

[विटामिन ए बहुत महत्वपूर्ण है, इसकी कमीसे रतौंधी और चर्म रोग हो जाते हैं। आयुके अनुसार इसकी दैनिक आवश्यकता और इसके साधनोंका ब्योरा यहाँ प्रस्तुत है।]

हमारे शरीरके विकास व स्वास्थ्यके लिए जिस प्रकार प्रोटीन, कार्बोहाइड्रेट, खनिज-लवण, और पानी आवश्यक हैं, उसी प्रकार:विटामिन भी आवश्यक पोषक पदार्थोंमें विशेष स्थान रखते हैं, हिन्दीमें इन्हें 'जीवनतत्व' कह सकते हैं, क्योंकि ये जीवनके लिए बहुत आवश्यक हैं, अगर काफी मात्रामें हमें विटामिन न मिले तो साधारण विकास और स्वास्थ्य असंभव हो जाता है। प्रारंभमें वैज्ञानिकोंने अनुमान किया था कि विटामिन दो-तीन ही होंगे। इसलिये उनको ए० बी० सी० कहना शुरू किया। परन्तु अब तो उनकी संख्या ८-१० हो गयी है।

मोटे तौरपर हम विटामिनोंको दो भागोंमें बांट सकते हैं, पानीमें घुलनेवाले विटामिन और वसा या स्नेहमें घुलनेवाले। पहले समूहमें बी और सी विटामिन है और दूसरेमें विटामिन ए, डी, ई और के हैं। दूसरे समूहमें विटामिन ए का पहला स्थान है। इसकी कमीसे शरीरकी वृद्धि कम हो जाती है, आँखें अंधी हो जाती हैं, शरीरकी खाल कठोर होकर कई तरहके रोग पैदा करनेवाले जीवाणुओंका घर बन जाती है, इसलिये इस विटामिनके बारेमें जानकारी रखना और अपने भोजनको सन्तुलित करना बहुत जरूरी है।

हमें विटामिन ए वनस्पति खाद्यों, मछलियों व पशुओंसे मिलता है, शाकों, कन्दों व फलोंमें यह कैरोटीनके रूपमें पाया जाता है, मनुष्यका शरीर इस कैरोटीनको विटामिन ए के रूपमें बदल कर अपने काममें लाता है। हरी तरकारियों व शाकों, गाजरों और फलोंमें काफी कैरोटीन होता है।

गाय, भेड़ आदि जानवर, वनस्पति संसारमें पाये जानेवाले हरे पौधों व उनके हिस्सोंको खाकर अपने ही शरीरमें विटामिन ए बनाते है, जो उनके जिगरमें जमा होता रहता है। मछलियां समुद्री घासपात और छोटे-छोटे जानवरोंको निगलकर अपने जिगरमें विटामिन ए का संग्रह करती हैं।

ये विटामिन अल्कोहल ग्रूपके माने गये हैं। ये जिगरमें एस्टरके रूपमें होते हैं। एस्टर कार्बनिक रासायनिक पदार्थ हैं जो अम्ल और अल्कोहलके संयोगसे बनते हैं। भोजनमें यह विटामिन 'ए' एस्टरके रूप में रहे तो आंतोंमें होनेवाले एस्टरेस नामक एनजाइमसे विभाजित होकर अल्कोहलका रूप धारण करता है और बादमें छोटी आंतोंसे प्रचूषित होकर रक्तमें मिल जाता है। भोजनसे शरीरको यह विटामिन अपेक्षित मात्रामें न मिले तो जिगरमें जमा हुआ विटामिन रक्तमें जाकर उसकी पूर्ति कर देता है अगर जिगर लगातार खूनमें होनेवाली यह विटामिनकी कमी पूरी करता रहे तो कुछ ही दिनोंमें शरीरमें इस विटामिनकी अल्पता हो जाती है। कभी यह अन्य कारणोंसे भी हो सकती है, जैसे भोजनका ठीकसे हजम न होना पचे हुए आहारका आंतों द्वारा ठीक-ठीक प्रचूषण न होना आदि। गर्भवती स्त्रियों व दूध पिलानेवाली माताओंको इस विटामिनकी अधिक आवश्यकता पड़ती है। अगर उस समय पर्याप्त मात्रामें यह न मिले तो शरीरमें इसकी अल्पता दिखायी देने लगती है।

विटामिन ए के अभावसे उत्पन्न रोग

जिनके आहारमें विटामिन ए की काफी कमी लगातार रहती है, उन्हें कुछ ही दिनोंमें रतौंधी हो जाती है। धुन्धले प्रकाशमें भी उनकी आंखें अन्धी रहती हैं। यानी आंखोंकी रोशनीके लिए विटामिन ए बहुत ही आवश्यक है। जीरोप्थेलिमिया नामक आंखोंकी बीमारी भी इसीकी कमीसे होती है। इस रोगमें आंखोंके कोये और पलकें सूखकर सूज जाते हैं। अगर ठीक समयपर इसका इलाज न किया जाय तो यह करोटोमेलेशिया

नामक रोगमें परिवर्तित हो जाता है। यह बीमारी भोजनमें लगातार विटामिन ए की कमीके कारण उत्पन्न होती है। कभी-कभी यह रोग अन्य पोषण तत्वों (प्रोटीन, रिबोफ्लेविन आदि) की कमीसे भी हो जाता है। इस बीमारीमें आंखका कोर्निया नरम पड़ जाता है। कभी-कभी आंखें तक चली जाती हैं। यह कुछ पूर्वी राष्ट्रोंमें चेचक, उपदंश या फिरंग रोग जैसी ही भयंकर बीमारी है, जिससे कभी-कभी बच्चोंकी आंखें हमेशाके लिए नष्ट हो जाती हैं। इनके अलावा आंखोंके ऐसे अनेक रोग हैं जो विटामिन ए की कमीसे होते हैं।

विटामिन ए दांतके बढ़ने और उसके ऊपरी चमकीले आवरण यानी एनैमलके ठीक से विकसित होनेके लिए नितांत आवश्यक है। अगर यह विटामिन लगातार कम हो जाय तो एनैमल बहुत पतला हो जाता है और दांतोंके खराब होनेके लिए आवश्यक वातारण बन जाता है। इसके अलावा, विटामिनकी निरंतर कमी शरीरमें रहे जाये तो शरीरकी वृद्धि कम हो जाती है, वजन और आकार ठीक नहीं रहता। साथ ही बदनमें भिन्न-भिन्न प्रकारकी छूतका मुकाबिला करनेकी शक्ति भी कम हो जाती है। फलस्वरूप, शरीर रोगोंका घर बन जाता है।

चर्म रोग

विटामिन ए की कमीसे चर्म सूखा व खुरदरा हो जाती है। चर्मको नरम व चिकना रखनेके लिए जरूरी तेल नहीं आ पाता, इसलिये चर्म अपनी नरमी खोकर खुरदरा बन जाता है। उसपर छोटी-छोटी फुड़िया भी निकल आती हैं और मेंढककी खाल जैसा हो जाता है। यह हालत खासकर कन्धोंके पीछे, जांघके सामनेके भाग पर होती है जो कभी-कभी पृष्ठाधार तक बढ़ सकती है, सारे धड़में भी फैल सकती है।

चर्मकी कठोरता

स्वस्थ आदमीकी त्वचा सामान्यतः मुलायम, चिकनी व नरम होती है, परन्तु विटामिन 'ए' के अभावके कारण वह सूखकर थोड़ी कठोर हो जाती है।

हाथी खाल

अल्प पोषणके कारण शरीरके मोटी खालवाले भागोंमें चमड़ी, हाथीकी चमड़ीके समान कठोर व खुरदरी और परतदार हो जाती है। यह आमतौर पर गट्टे और कुहनीके बीचके निचले भागमें दिखायी पड़ती है। प्रयोगोंसे पता चला है कि यह बीमारी अल्पपोषणकी निस्बत विटामिन ए की कमीके कारण होती है।

इन बीमारियोंसे बचनेके लिए यह बहुत जरूरी है कि हम अपने आहारमें विटामिन ए संपन्न खाद्य वस्तुएं रोज इस्तेमाल करें। विटामिन ए और कैरोटीन किन-किन पदार्थों में कितनी मात्रामें पाये जाते हैं, और हमें रोज विटामिन ए की कितनी मात्रा मिलनी चाहिये, इसका विवरण नीचे दिया जा रहा हैं।

विटामिन ए कैरोटीनके रूपमें

प्रति १०० ग्राम खाद्य वस्तुमें कैरोटीनके रूपमें रहनेवाले विटामिन ए की मात्रा।

लाल ताड़का तेल	४०,०००-५०,००	अ०इ०
हरी पत्तीवाले शाक		
चौलाईका साग	२५००-११,०००	,,
बन्द गोभी	२०००	,,
हरा धनिया	१०,४६०-१२,६००	,,
करीके पत्ते	१२,६००	,,
सहजनका साग	११,३००	,,
मेथीका साग	३,९००	,,
मूलीका साग	६,७००	,,
पुदीना	२,७००	,,
पालक	५,५००	,,
अगती	९,०००	,,
पान	९,६००	,,
अन्य तरकारियां		
गाजर	२०००,४,३००	अ०ई०
कुम्हड़ा	१०००	,,

फल

कटहल	५४० अ०इ०
पका आम	४,८०० ,,
पका पपीता	२,०२० ,,
नारंगी	३५० ,,
पके टमाटर	३२० ,,

खाद्यान्न और दालें

गेहूं	१०८ अ०इ०
ज्वार	१२६ ,,
रागी	७० ,,
चावल	बहुत कम
चनेकी दाल	३१६ ,,
लोबिया	११६ ,,
तुअर	२२० ,,
सोयाबीन	७१० ,,

विटामिन ए संपन्न खाद्य

मछलीका तेल

	अ०इ०/ग्राम	अ०इ०/प्रति चाय-चम्मच
हालिबट लिवर तेल	२०,०००	६०,०००
शार्क लिवर तेल	३०००-२०,०००	९०००-६०,०००
काड लिवर तेल	२०००	६०००

नोट—एक चाय चम्मच काड या शार्क लिवर तेल विटामिन ए की दैनिक आवश्यकता पूरी कर सकता है।

अन्य खाद्य (प्रति १०० ग्राम)

भेड़ या बकरीका जिगर	२२,३०० अ०इ०
अण्डा (समूचा)	२,२०० ,,
अण्डेकी जरदी	३,६०० ,,
मक्खन	२,५०० ,,
ताजा घी	२,००० ,,
चर्बीदार मछली	१०० ,,
गाय या भैंसका दूध	१८० ,,
मां का दूध	२०८ ,,
अमथितदुग्ध-चूर्ण	१,४०० ,,

प्रत्येक व्यक्तिकी विटामिन ए की प्रति दिनकी आवश्यकता नीचेकी सारणीमें दी जा रही है।

पुरुष (५५ कि० ग्रा० या १२० पौंड)

हल्का काम	५००० अ०इ०
साधारण काम	५००० ,,
थोड़ी मेहनतका काम	५००० ,,
बहुत ,, ,,	५००० ,,

स्त्रियां (४४ कि० ग्रा० १०० पौंड)

हल्का काम	५००० अ०इ०
सामान्य काम	५००० ,,
मेहनतका काम	५००० ,,
गर्भवती स्त्रियां	६००० ,,
बच्चेको दूध पिलानेवाली माताएं	८००० ,,

बच्चे

१-२ सालकी उम्र	२००० अ.इ.
३-४ ,,	२२०० ,,
५-६ ,,	२५०० ,,
७-८ ,,	३५०० ,,
९-१० ,,	४००० ,,
११-१२ ,,	५००० ,,

किशोर व युवक

१३-१४ सालकी उम्र	लड़के	५००० अ.इ.
,, ,,	लड़कियां	५००० ,,
१७-२० ,,	लड़के	५००० ,,
,, ,,	लड़कियां	५००० ,,

नोट—हल्का काम, जैसे लिखना, टाइप करना, सीना आदि।

सामान्य काम-घूमना, जूता बनाना, बढ़ईका हल्का काम और हल्का इंजीनियरिंग संबंधी काम।

मेहनतका काम-साइकिलकी सवारी, हल्की लोहारगिरी, हल चलाना, लकड़ीको आरेसे काटना फसल काटना आदि।

बहुत मेहनत काम-खानोंके काम, परिश्रमपूर्ण। लोहारगिरि, जमीन जोतनेका काम, वजनदार चीजें ढोना, लकड़ी काटना आदि।

(खाद्य विज्ञानसे साभार)

नेत्रहीनताको रोकनेके लिए हम क्या करें ?

— श्री सत्यपाल मलिक —

नेत्र मानव शरीरका अमूल्य अंग हैं। मनोवैज्ञानिकोंका यह कहना है कि मनुष्य अपने जीवन-कालमें जितना ज्ञान प्राप्त करता है, उसका ७५ प्रतिशत ज्ञान उसे नेत्रों द्वारा प्राप्त होता है। इसीलिए तो किसीने सच ही कहा है, 'आंख है तो जहान है।" इसके बिना यह संसार अंधकारमय है और जीवन एक भार समान।

परन्तु दुर्भाग्यकी बात यह है कि आंखका इतना महत्व होते हुए भी हमारे देशमें इसकी रक्षा तथा उपचारपर अधिक ध्यान नहीं दिया जाता। यही कारण है कि मिस्रको छोड़कर संसारमें सबसे अधिक नेत्रहीन भारतमें हैं। दूसरे शब्दोंमें दुनियाका हर तीसरा अन्धा व्यक्ति भारतमें रहता है। इतना ही नहीं, लगभग इतने ही लोग किसी न किसी नेत्र रोगसे पीड़ित हैं। नेत्र विशेषज्ञोंका कहना है कि इनमें से ८० प्रतिशत व्यक्ति अन्धे होनेसे बच सकते हैं, यदि वे समयपर तथा योग्य डाक्टरसे चिकित्सा कराएं।

अब प्रश्न उठता है कि भारतमें इतने व्यक्ति अन्धे क्यों हो जाते हैं? वास्तवमें अन्धता व दृष्टि-दोषके बहुतसे कारण हैं। आंखका सबसे पहला शत्रु चेचक है। चेचकसे आंखमें सफेद निशान पड़ जाते हैं, जिससे आंखका स्वच्छ-पटल (कार्निया) अपारदर्शक हो जाता है और इस प्रकार व्यक्तिको दिखाई देना बन्द हो जाता है। मधुमेहकी बीमारी भी व्यक्तिको नेत्र रोगी बना देती है। इससे प्रायः सफेद मोतिया हो जाता है। इससे दृष्टिपटल (रेटिना) को भी क्षति पहुंच सकती है।

पौष्टिक आहारकी कमी अन्धता व दृष्टि-दोषका एक एक अन्य महत्वपूर्ण कारण है। पिछले दिनों एक विज्ञान गोष्ठीमें बोलते हुए केन्द्रीय स्वास्थ्य मंत्रालयके सलाहकार बागचीने बताया कि भारतमें पौष्टिक आहारकी कमीके फलस्वरूप लगभग बारह हजार बच्चे कैराटोमलेशियासे पीड़ित होकर अन्धे हो जाते हैं। यह रोग प्रायः विटामिन 'ए' की कमीके कारण होता है। रात्रि-अन्धता तथा आंखोंकी शुष्कता आदि रोग भी विटामिम 'ए' की कमीके कारण होते हैं।

नजर कमजोर हो जानेपर चश्मा लगानेसे कतराएँ नहीं।

समाजमें प्रचलित अनेक मिथ्या धारणाएं भी आंखोंकी सुरक्षामें बाधा डालती हैं। उदाहरणार्थ, चश्मा ही लीजिए। कुछ ग्रामीण लोगोंकी यह धारणा है कि चश्मेके प्रयोगसे नजर कमजोर होती है और यदि चश्मा न लगाया जाय तो कुछ समयके पश्चात् अपने आप नजर ठीक हो जायगी। परन्तु यह धारण गलत है। हाल ही में इर्विन अस्पतालके नेत्र विभाग द्वारा दिल्लीके गांवोंमें लगाये गये नेत्र चिकित्सा शिविरोंमें यह पता चला है कि समयपर चश्मा न लगानेसे स्कूल जानेवाले कुछ बच्चोंकी आंखमें भैंगापन तथा मन्द दृष्टिकी बीमारी हो गयी। अतः यहाँ पर यह स्पष्ट करना आवश्यक है है कि यदि नेत्र-विशेषज्ञने चश्मा लगानेकी सलाह दी है तो चश्मा अवश्य ही लगाना चाहिए।

अज्ञान तथा लापरवाहीसे भी कई लोग अपनी अमूल्य आंखोंसे हाथ धो बैठते हैं। इर्विन अस्पतालके वाह्य आंख विभागमें आनेवाले रोगियोंसे बातचीत करनेपर कइयोंसे प्रायः यही उत्तर मिलता है—"कुछ समय पूर्व मेरी नजर कम होती दिखाई दी, परन्तु मैंने सोचा कि यह अपने आप ठीक हो जाएगी। परन्तु कुछ दिनोंसे जब बसोंके बोर्ड अखबार आदि पढ़नेमें भी कठिनाई महसूस होने लगी तो इलाज कराने यहाँ आया हूँ।" कई लोग, विशेषकर ग्रामीण, सतिया (आंखका नकली डाक्टर) के हाथों पड़ जाते हैं जिसके पास नेत्र चिकित्सा संबंधी ज्ञान अधूरा व कम होता है तथा जिसका मुख्य उद्देश्य धन अर्जन होता है।

परिवारके सभी सदस्य एक ही तौलियेका प्रयोग न करें।

आंखोंकी सुरक्षाके लिए आंखोंकी सफाईका ध्यान रखना भी अत्यावश्यक है। परन्तु बहुतसे लोग अज्ञानवश इसकी ओर कम ध्यान देते हैं। प्रायः लोग घरोंमें एक ही तौलिएका प्रयोग करते हैं, जिससे परिवारमें यदि एक सदस्यको अगर कोई नेत्र रोग (जैसे रोहे) होता है तो वह दूसरे सदस्योंमें भी फैल जाता है। सुरमा, काजल आदि डालनेके लिए भी प्रायः घरोंमें एक ही सलाईका प्रयोग किया जाता है। वास्तवमें ऐसा करना रोगको निमन्त्रण देना है।

बुढ़ापेमें प्रायः आंखमें मोतिया उतर आता है। इसके आनेसे दृष्टि मन्द पड़ जाती है। बहुतसे लोग यह सोचते हैं कि जब मोतिया पक जाएगा तब अस्पतालमें जाकर इसका आपरेशन करवा लेंगे। इस प्रकार वे मोतियाके पकनेका इन्तजार करते हैं। परन्तु अन्तमें जब वे डाक्टरके पास जाते हैं तो उस समय तक उनकी आंख बिलकुल खराब हो चुकी होती है। वास्तवमें बात यह है कि मोतिया दो प्रकारका होता है। एक सफेद मोतिया या मोतियाबिन्द और दूसरा काला या नीला मोतिया। लोग सोचते हैं कि सफेद मोतिया उतर रहा है परन्तु वह होता है काला मोतिया अतः जब तक वे डाक्टरके पास पहुँचते हैं तबतक काले मोतिये आंखका दृष्टिपटल (रेटिना) खराब हो चुका होता है। काले मोतियाका भी इलाज होता है यदि उचित समयपर कराया जाय तो।

बहुतसे दृष्टि-दोष आंखोंके गलत उपयोगके कारण होते हैं। देर तक चमकीली चीजोंपर आंख गाड़ना, बहुत बारीक अक्षर पढ़ना, कम या बहुत तेज रोशनीमें पढ़ना-लिखना, लेटकर या चलती गाड़ीमें पढ़ना-ये सब दृष्टिके लिए हानिकारक हैं।

उपरोक्त विवरणसे यह स्पष्ट है कि अन्धताकी समस्या अत्यन्त व्यापक एवं गम्भीर है, इसके विभिन्न कारण हैं और इनमेंसे कुछ हमारे अज्ञान, गलत धारणाओं, लापरवाही तथा पौष्टिक भोजन ग्रहण न करने आदिके परिणाम हैं। यदि सावधानी बरती जाय तथा योग्य डाक्टरसे समयपर परामर्श लेकर विधिवत नेत्रोंका उपचार किया जाय तो कई भयानक नेत्र रोगोंसे बचा जा सकता है। इसके साथ-साथ सरकारी एवं सामाजिक सस्थानोंका भी कर्तव्य है कि वे जनताको नेत्र सुरक्षाके बारेमें बताएं।

●

(पृष्ट ६ का शेषांश)

अवश्य देंगे और हो सकता है कि उसी झोंकमें वे आपसे कोई अनुचित मांग भी मनवा लें। इस प्रवृत्तिको बढ़ावा न दें क्योंकि इससे बच्चे उच्छृंखल हो जाते हैं। फलतः नियंत्रण-हीन होना साधारण बात हो जाती है।

बच्चोंको झूठे प्रलोभनोंमें न फंसाएं। एक बार झूठे बहानेसे फुसलाया हुआ बालक ज्योंही तथ्यकी वास्तसमझ लेता है त्योंही उसकी आपमें निहित आस्था डगमगाने लगती है। वह आपकी ही भांति असत्य भाषण द्वारा आपपर भी अवसर मिलते ही अपना दांव फेंकनेमें दक्ष होनेका प्रयास करने लगेगा, क्योंकि उसे इस बातका पूर्ण विश्वास हो जाता है कि असत्य भाषण द्वारा वास्तविकतापर पर्दा डालना अच्छी बात है और उसके इस विश्वासका आधार स्वयं आप होते हैं।

उपर्युक्त तथ्योंको ध्यानमें रखते हुए बालकों एवं किशोरोंकी उत्तरदायित्व बोध, सदाचारकी प्रेरणा और दुष्प्रवृत्तियोंसे बचाए रखनेमें, माता पिताका महत्वपूर्ण योगदान होता है और इस योगदानके अभावमें बालकोंमें चारित्रिक विकास और व्यवहारिक निपुणता जैसे आवश्यक गुणोंका अभाव हो जाता है।

●

खाद्य पदार्थ पकाकर खाइये

बहुतसे लोग फल-सब्जियों, दूध आदिको बिना आगपर पकाये-उबाले खानेको अधिक पोषक और इसलिये स्वास्थ्यके लिये उत्तम समझने लगे हैं। 'प्रकृतिकी ओर लौटो' आंदोलनने भी इस विचारको बहुत प्रोत्साहन दिया है। ऐसे लोगोंका यह विचार भी है कि 'प्राकृतिक' का अर्थ 'खालिस' (शुद्ध) भी होता है। लेकिन कई पोषण-विज्ञानी उपरोक्त दोनों विचारोंको सही नहीं मानते हैं।

ऐसे ही एक वैज्ञानिक हैं जन-स्वास्थ्य स्कूल, हार्वर्ड-के डा० जीन मेयर। उनका कहना है कि खानेको पकानेका एक मुख्य कारण उसे स्वादिष्ट और मुलायम बनाना नहीं है बल्कि उसे बैक्टीरिया तथा परजीवियों (पैरासाइट) से मुक्त करना है।

यह सही है कि कच्चे और प्राकृतिक आहारके अपने लाभ भी हैं; जैसे कि टमाटर, गाजर, पालक, फूल गोभी, शलजम, खुंभियां आदि पोषक भी हैं और अधिक कैलोरी भी प्रदान नहीं करतीं। लेकिन यह भी एक तथ्य है कि मानवका पाचन तन्त्र इनमेंसे कई चीजोंको पूरी तरह पचा नहीं पाता, क्योंकि उसके आमाशय और आंतोंमें इस प्रकारके सूक्ष्म जीव विद्यमान नहीं हैं जो कि कच्ची सब्जियों आदिकी सेलूलोसकी दीवारोंको तोड़ कर पाचन-तंत्रको उनके पीछे स्थित पोषक पदार्थों तक पहुंचनेमें सहायक हों। फूल गोभी, पालक और गाजर बहुधा पकाये जाने पर ही शरीर द्वारा भली-भांति पचाए जा सकते हैं।

विशेषज्ञोंका कहना है कि खाद्य पदार्थोंमें कई ऐसे संदूषक पदार्थ भी मौजूद होते हैं जिनसे आसानीसे बचा नहीं जा सकता जैसे कि चूहों, गिलहरियों आदिके बाल, मरे हुए कीड़ोंके टुकड़े, उनके अण्डे आदि।

अन्य सावधानियां

जैविक आहारोंको रासायनिक प्रदूषणसे तो बचाया जा सकता है तो भी जीवोंके कारण इनका संदूषण बाकी आहारोंकी अपेक्षा सर्वाधिक होता है। मानव अथवा अन्य जन्तुओंके मल-मूत्रादिसे बनने वाली जैविक खादमें आमाशय-आंत्र प्रदेशमें बसनेवाले परजीवी मौजूद होनेकी संभावना सबसे अधिक होती है।

डा० मेयर आहार सम्बन्धी सामान्य स्वच्छताकी भी दिनोंदिन बढ़ती उपेक्षाके कारण बहुत चिंतित है। उनका कहना है कि कच्चे और बिना छीले खाये जाने वाली चीजोंको खानेसे पहले खूब अच्छी तरह धो लिया जाना चाहिए।

दूधको बिना उबाले पीना बहुत हानिकर हो सकता है। डा० मेयरका कहना है कि यह सोचना बिल्कुल गलत है कि बिना उबाला हुआ दूध पास्चरीकृत दूधसे श्रेष्ठ होता है। पास्चरीकृत दूधमें भी वही पोषक तत्व मौजूद होते हैं। इनके अतिरिक्त वह क्षय (तपेदिक) के जीवाणुओंसे मुक्त होता है जिसके कारण पिछली पीढ़ियोंके बच्चे और बड़े कुबड़े हो जाया करते थे।

कच्चे अण्डे खाना भी संकटप्रद होता है। इनमें सालमनेला बैक्टीरिया विद्यमान हो सकते हैं जो कि आमाशय-आंत्र प्रदेशके रोग उत्पन्न करते हैं। टूटे हुए अण्डे कभी नहीं खाने चाहिए और इसी प्रकार कच्चे अण्डोंको भी नहीं चूसना चाहिए।

अमरिका आदि देशोंमें लोग कच्चे मांसको कूट कर भी खाने लगे हैं। नमक, प्याज, चटनी, मसालों आदिसे इसे चाहे कितना स्वादिष्ट बना लिया जाय तो भी गाय-बैलोंके मांसमें टेपवर्म मौजूद हो सकता है अथवा सूअरके मांसमें ट्राइकिनोसिस रोगके लक्षण मौजूद होते हैं जिसका तो वास्तवमें कोई उपचार ही नहीं है।

बच्चोंका विकास और हमारा दायित्व

श्री भवानी शंकर बनर्जी

"यही बच्चा हमारे बच्चोंमें सबसे बेवकूफ और बुद्धू है। छोड़िए उसे।" ये शब्द एक पिता के थे, जिनकी अनुपस्थितिमें मैं उनके बच्चेके साथ घुल-मिलकर खेल रहा था। उन्होंने आगे अपने अन्य बच्चोंकी प्रशंसा की और बताया कि बड़ी लड़की बहुत तेज है और सर्वदा अपनी कक्षामें प्रथम आती है। इससे छोटा भाई तो इसके कान काटता है। सबसे महत्वपूर्ण बात तो यह थी कि पिताके आते ही बच्चेका व्यवहार एकदम बदल गया तथा वह शान्त होकर बैठ गया। पिताकी उपस्थितिमें उसे बात करने व खेलनेका प्रयत्न करने पर भी उसकी प्रतिक्रिया निराशजनक ही रही।

अब प्रश्न उठता है कि बच्चेके व्यवहारमें एकाएक इस प्रकारका परिवर्तन क्यों हुआ? इसके उत्तरमें सबसे पहले पिताका बच्चेके प्रति उपेक्षापूर्ण व्यवहार ही प्रमुख है। बादमें ज्ञात हुआ कि माता भी पिताके विचारोंसे आंशिक सहमत है। बच्चेकी उपस्थितिमें ही माता-पिता बच्चेके प्रति निराशा तथा उपेक्षा करते हैं। एक ओर उपेक्षा तथा निराशाजनक अभिव्यक्ति तथा दूसरी ओर स्नेह व प्रेमपूर्ण वातावरणके अभावने बच्चेको अपने माता-पिताके सम्मुख निष्क्रिय बना रखा है। हाँ, यह सत्य है कि बच्चा अपने भाई-बहनोंकी तुलनामें कम बुद्धिमान है, परमनोवैज्ञानिक परीक्षणोंसे ज्ञात हुआ कि वह औसत बुद्धिमान बालक है। साथ ही यह देखा गया है कि मेरे साथ उसका व्यवहार बहुत ही स्वाभाविक है तथा मेरे आते ही वह जहां कहीं भी हो, दौड़ते हुए आकर लिपट जाता है।

इस प्रकारके अनेक उदाहरण हमारे चारों ओर दिखाई पड़ते हैं। वास्तवमें बच्चेके शारीरिक विकासके साथ साथ उसका बौद्धिक, मानसिक, सांवेगिक तथा सामाजिक विकास होता है। बच्चेके इस क्रमिक विकासमें माता-पिता और परिवारके अन्य सदस्योंका योगदान महत्वपूर्ण है। वस्तुतः बालक अपने जीवनका महामूल्य क्रियात्मक भाग माता-पिताके सम्पर्कमें ही व्यतीत करता है। माता-पिता तथा बालकके परस्पर सम्बन्ध पर यह निर्भर करता है कि बालकका भावी जीवन सुखी होगा अथवा दुःखपूर्ण। अतः माता-पिताको महत्वपूर्ण उत्तरदायित्व निभाना पड़ता है। दूसरी ओर बालक अपने जीवनके प्रारम्भिक वर्षोंमें ही माता-पिता या परिवारके अन्य वयस्क व्यक्तियोंके साथ आत्मीयता स्थापित करता है एवं अपने व्यवहारोंको उसीके अनुरूप परिवर्तित करता है।

बालकका सांवेगिक विकास

माता-पिता व परिवारके सदस्योंकी भावना इस बातको निश्चित करती है कि बालक अपनेको कितना सुरक्षित तथा स्वीकृत अनुभव करता है। यदि बालक अपनेको असुरक्षित, अस्वीकृत या तिरस्कृत अनुभव करता है तो वह सर्वदा आतंकित स्वभावका प्रदर्शन करेगा एवं उसकी पहलकी प्रवृत्तिमें भी कमी आ जाएगी।

बालककी मुख्य सांवेगिक आवश्यकताएं निम्न है— (१) प्रेम तथा स्नेह; (२) सुरक्षा; (३) स्वीकृति; तथा (४) नवीन अनुभवकी प्रगति। बालक सर्वप्रथम परिवारके सदस्यों तथा बादमें अन्य व्यक्तियों या बालकोंके सम्पर्कमें इन सांवेगिक आवश्यकताओंकी पूर्ति करनेका प्रयत्न करता है।

सांवेगिक आवश्यकताओंकी पूर्ति

बालकके प्रेम एवं स्नेह सम्बन्धी आवश्यकताकी पूर्ति सर्वप्रथम अपनी माता द्वारा होती है। फिर बालक अपने पिता व परिवारके अन्य सदस्योंसे प्रेम, सहानुभूति

व स्वीकृति प्राप्त करता है। यदि बच्चेको अपने माता-पिता अथवा परिवारके अन्य सदस्योंसे समुचित प्रेम मिलता है तो वह आगे चलकर सुयोग्य नागरिक बन सकता है। माताके बीमार रहनेपर या मृत्यु हो जानेपर बच्चेकी इस प्रेमकी भूखकी पूर्ति नहीं होती। अधिकांश विमाताएं बच्चेको वह प्रेम तथा स्वीकृति नहीं दे सकतीं जो बच्चेको अपनी मातासे मिल सकता है। प्रेमका अर्थ नियंत्रणका अभाव नहीं है। उचित प्रेमका प्रदर्शन तभी हो सकता है, जब उपयुक्त अवसरोंपर बालकको नियन्त्रित भी किया जाय। बच्चेको सही रास्तेपर लानेके लिए तथा व्यवहार सम्बन्धी समस्याओंमें परिवर्तन लानेके लिए इस प्रकारका प्रेम अत्यन्त-प्रभावकारी सिद्ध हो सकती है।

बालक चुपचाप नहीं बैठ सकता और न ही उसे चुप बैठना चाहिए। इसी प्रकार बच्चेका समस्त व्यवहार स्वाभाविक या इच्छित नहीं होता। वह कुछ न कुछ शरारतें करता ही रहता है। कुछ अवसरोंपर वह अपनी गलतियों व शरारती व्यवहारको छिपानेके लिए झूठ बोलता है। ऐसी स्थितिमें बच्चेको उचित प्रेमके साथ यह आश्वासन दिया जाय कि उसने जो किया है उसको सही रूपमें बताया है। सत्य बोलनेपर उसे कोई दण्ड नहीं देना चाहिए, वरन् उसे समझा देना चाहिए जिससे वह इस प्रकारके व्यवहारकी पुनरावृत्ति न करे। हमारे समूहके साथ मेरा कुछ इसी प्रकारका समझौता है। मेरे समूहमें आते ही सभी बच्चे अपनी-अपनी गलतियों व शरारतोंको सही-सही बता देते हैं तथा उन्हें यह भी ज्ञात है कि सत्य बोलनेपर कोई दण्ड नहीं मिलता।

दूसरी ओर कुछ ऐसे भी उदाहरण मेरे पास हैं जब बच्चे सामान तोड़ने-फोड़नेपर, खानेकी वस्तुएं चोरीसे खा लेनेपर या अन्य इसी तरहकी शरारतें करनेपर झूठ बताकर या बहाना बनाकर माता-पिता व परिवारके सदस्योंको बहका देते हैं। इस प्रकारकी आदत बच्चेमें लगभग ३-४ वर्षकी अवस्थासे ही आरम्भ होती है। माता-पिता व परिवारके अन्य सदस्य बच्चेसे अत्यधिक प्रेमके कारण बच्चेकी बहानेबाजीको उत्साहपूर्वक सुनते थे और हंसते थे। धीरे-धीरे बच्चेमें झूठ बोलने तथा चोरी करनेकी आदत बढ़ती गयी। यदि मात-पिता प्रारम्भसे ही बच्चेको रोके होते तो इस-प्रकारके व्यवहारका विकास नहीं होता।

यदि बच्चेको उपयुक्त प्रेम मिलता है तो वह अपनेको सुरक्षित एवं स्वीकृत भी अनुभव करता है। बच्चेकी इच्छाओं व आवश्यकताओंकी उपयुक्त रूपसे पूर्तिकी जानी चाहिए, जिससे वह अपनेको सुरक्षित स्थितिमें ला सके। आगामी जीवनमें यह सुरक्षा तथा स्वीकृतिकी भावना ही उसे बहुमुखी परिस्थितियोंका सामना करनेकी शक्ति दे सकती है।

बालकका कल्पना-जगत

बच्चोंका अपना एक कल्पनाका जगत होता है। माता-पिता, दादा-दादी, नाना-नानी या अन्य सदस्योंसे वह अनेक कहानियां सुनता है तथा बच्चोंकी पुस्तकोंमें भी विभिन्न कहानियां पढ़ता है। बच्चेमें जिज्ञासाकी प्रवृत्ति होती है। अतः वह अपने ज्ञान और बुद्धिके अनुसार सभी वस्तुओंको समझने, जाननेका प्रयत्न करता है। ऐसे अवसरोंपर वयस्क व्यक्ति उसे कुछ काल्पनिक कहानियां भी बताते हैं। बच्चोंके लिए यह सब कल्पना नहीं, सत्य है। और वह इन बातों को इस प्रकार कहता है कि मानो वह इसका अनुभव कर चुका हो।

बच्चोंकी यह कल्पना रचनात्मक है। कभी-कभी माता-तिता या परिवारके सदस्य बच्चोंको यह समझकर डांटने या मारने-पीटने लगते हैं कि वह झूठ बोल रहा है। इस प्रकारका व्यवहार गलत है। उचित तो यह होगा कि बच्चोंको उनके ज्ञान एवं बुद्धिके अनुसार परिस्थितियोंका सही-सही ज्ञान करा देनेका प्रयत्न करें। एक बच्चेको उसके नानाजी रामायणकी कहानियाँ सुनाया करते थे। एक दिन बच्चेने हनुमानजीका चित्र देखा तो कहने लगा, कल रातको हनुमानजी हमसे मिले थे। वह कह रहे थे, "मैं तुम्हें खोज रहा था। लंकामें राक्षसोंको मारनेके लिए तुम्हारे जैसे वीरकी

जरूरत है, चलो हमारे साथ। आज हम उनके साथ जाएँगे।" इस बच्चेके लिए इस कल्पना तथा सत्यके बीच कोई अन्तर नहीं है। ऐसे बच्चोंका सहयोग विभिन्न कहानियों, खेलों, अभिनयों, कला आदिमें प्राप्त करना चाहिए। उन्हें यह धीरे-धीरे समझानेका प्रयत्न करना चाहिए कि कल्पना और वास्तविक सत्यमें क्या अन्तर है।

बच्चे की स्वतन्त्र क्रियाएँ

बचा अधिकांशतः अपनेमें ही लीन रहता है। वह खेलता है, अपने अनुभवों को दूसरोंको बताता है अथवा अपने चारों ओरकी वस्तुओंके सम्बन्धमें जाननेकी इच्छा व्यक्त करता है। ऐसे अवसरोंपर उसकी स्वतन्त्र क्रियाओंको हतोत्साहित नहीं करना चाहिए। कुछ अवसरोंपर माता-पिता या अन्य व्यक्ति बच्चेके प्रति प्रेम या स्नेह दिखलानेके लिए उसे इन स्वतन्त्र क्रियाओंको करनेसे रोकते हैं। इस प्रकारका व्यवहार बच्चोंके विकासके लिए उपयुक्त नहीं होता। बच्चेको अपनी स्वाभाविक क्रियाओं व वृत्तियोंके साथ विकसित होने देना चाहिए।

बालकमें कल्पनाको विकसित होने देना चाहिए। कितने माता-पिता या अन्य व्यक्ति बच्चोंको यह कहकर डराते हैं कि भूत, अपदेवता, राक्षस आदि उसे दण्ड देंगे या पकड़कर ले जाएंगे। इससे बच्चोंके मनमें भयका विकास होता है। वह अंधकारपूर्ण या किसी एकान्त स्थानमें जानेसे डरने लगता है। बच्चेकी इस प्रकारसे सहायता करनी चाहिए जिससे उसमें कल्पनाओंका विकास हो तथा कल्पनाको एक रचनात्मक दिशा मिले। इसके लिए विज्ञानकी कहानियाँ, सामान्य ज्ञानकी बातें आदि बचोंको बताना उचित होगा। साथ ही बचोंको उन पौराणिक तथा आधुनिक कहानियोंको मानना चाहिए जिससे उनमें नैतिक भावनाका विकास हो तथा वे अपने व दूसरोंके संबंधमें शुभ कल्पनाएं कर सकें।

अधिकांश परिस्थितियोंमें यह देखा जाता है कि माता पिता या कोई अन्य व्यक्ति खेलते हुए बालकको गोदमें उठा लेते हैं। खेल व उसकी अन्य स्वतन्त्र क्रियाओंमें बालक अपने जगतमें रहता है तथा इससे उसे रचनात्मक आनन्द मिलता है। अतः खेलने व उसकी अन्य क्रियाओंको करनेसे रोकनेपर वह पहले तो असंतोष व्यक्त करता है। बादमें उसे गोदमें उठा लेनेपर या किलकारनेपर एक प्रकारका इन्द्रिय सुख मिलता है जो उसकी रचनात्मक क्रियाओंमें बाधक हो सकता है।

इसी प्रकार खेलते हुए बालकका चुम्बन करना भी ठीक नहीं है। इससे उसकी स्वतन्त्र क्रियाओंमें बाधा पहुँचती है तथा दूसरी ओर चुम्बनसे बालक या व्यक्तिको इन्द्रिय सुख मिलता है। उचित तो यह है कि बच्चेके बड़े होनेके साथ-साथ उसे प्यार न किया जाय। बच्चेकी ३-४ वर्षकी उम्रके बाद कमसे कम चूमना चाहिए। इस प्रकार चुम्बन या गोदमें उठा लेना बच्चेके मानसिक विकासके लिए भी बाधक है क्योंकि इससे बच्चा अपनेको उसी मानसिक स्थितिमें पाता है जैसा कि वह प्रारंभिक शैशवावस्था अर्थात दो वर्ष तक था। उचित तो यह है कि यदि बच्चा खेल रहा हो, लिखने पढ़नेका प्रयत्न कर रहा हो तो उसकी उसी प्रकारकी क्रियाओंमें सहायता की जाय। इससे बच्चेमें रचनात्मक शक्तिका विकास होगा तथा उसकी मानसिक स्थिति भी उन्नत होती रहेगी।

बच्चोंकी स्वतन्त्रताका ध्यान रखें

बालक अपनी स्वतन्त्रता चाहता है तथा कुछ स्वतन्त्र क्रियाओंमें अपनेको व्यस्त रखना चाहता है। कुछ परिवारोंमें यह प्रवृत्ति देखी जाती है कि बच्चोंको अधिकसे अधिक श्रृंगार कराते हैं तथा सुख और ऐशमें रखना चाहते हैं। कुछ बच्चोंका इस प्रकारसे श्रृंगार किया जाता है जैसे वे गुड़िया हों। बच्चेके लिए श्रृंगार तो आवश्यक है, परन्तु हर समय बच्चोंको श्रृंगार नहीं करना चाहिए, और न इतना अधिक श्रृंगार करना चाहिए जिससे उनकी स्वतंत्रता नष्ट हो।

बचा उछलता-कूदता, दौड़ता-गिरता रहता है। अतः उसे हर समय जूता पहनाकर नहीं रखना चाहिए। यह उसके लिए एक रोग जैसा होता है। इसके अतिरिक्त इस प्रकार श्रृंगार व सुख और ऐशमें रखनेसे

बच्चोंमें धीरे-धीरे शृंगार और सुख-ऐशकी आदत पड़ जाती है तथा वह आगे चलकर वस्त्रों व सुख-ऐशका दास बन सकता है।

माता-पिताकी इच्छाएं तथा अभिवृत्तियां

श्री ट्राइनका मत है कि यदि हम किसी व्यक्तिसे व्यवहार करते समय उसे देव रूपमें मानें तो वह देवता जैसा जैसा व्यवहार करेगा तथा यदि उसे शैतान मानें तो उसमेंसे शैतान ही बोलेगा, जो हमारा अहित भी कर सकता है। बालकके ऊपर माता-पिताकी इच्छा प्रत्यक्ष या परोक्ष रूपसे आरोपित होती ही रहती है। बालकके साथ हम प्रत्यक्ष रूपसे चाहे जिस प्रकारका व्यवहार ही करें, बालक इतना संवेदनशील होता है कि वह हमारी सत्य भावनाओंको समझ लेता है। यदि बालकके प्रति हमारे मनमें शुभ इच्छाएं हैं तो बालकके मनमें भी शुभ इच्छाओं तथा रचनात्मक क्रियाओंका विकास होता है।

कुछ माता-पिता या परिवारके सदस्य बालककी सफलताके विषयमें अत्यधिक चिन्तित रहते हैं। उनके मनमें यह भय रहता है कहीं हमारा बच्चा बिगड़ तो नहीं जाएगा। कभा-कभी वे यह चिन्ता बच्चोंके सामने ही व्यक्त कर देते हैं। इससे बच्चा स्वयं अपनी बुद्धिके साथ अपनी सफलताके बारेमें चिन्तित होने लगता है। इस प्रकारकी चिन्ता उसकी क्रियात्मक शक्तिके लिए हानिकारक होती है तथा अन्ततः बच्चा या तो असफल हो जाता है या चोरी, धूम्रपान, उद्दण्डता आदि करने लगता है जिसके बारेमें माता-पिता चिन्तित रहा करते थे।

प्रशंसा और प्रोत्साहनका जादू

कुछ माता-पिता अपनी इच्छाओं व कल्पनाओंको बच्चेके ऊपर आरोपित करते हैं। वे चाहते हैं कि उनका बच्चा अध्ययनमें प्रथम आये, व्यायाम व क्रीड़ामें अच्छा स्थान प्राप्त करे अथवा अन्य कोई प्रथम श्रेणीका क्रियात्मक कार्य करे। अतः वे बालककी सामान्य असफलताओंसे निरुत्साहित हो उठते हैं तथा कभी-कभी उसे दंड भी देते हैं। इससे एक ओर तो वे बालककी स्वतन्त्र इच्छाओंका हनन करते हैं तथा दूसरी ओर उसे हतोत्साहित करते हैं। वस्तुतः बालक अपने प्रयत्नोंके लिए प्रोत्साहन चाहता है, चाहे वह प्रयत्न सफल हो या असफल। माता-पिताका निरुत्साह व दंड उसे प्रोत्साहित न कर निरुत्साहित ही अधिक करता है। उचित तो यह है कि उसके प्रयत्नोंके लिए उसे प्रोत्साहित किया जाय। सफलता एक दिनमें नहीं आ सकती, वरन् यह तो निरन्तर प्रयत्नका परिणाम है।

आत्मविश्वासका प्रादुर्भाव कैसे हो ?

कुछ माता-पिता बच्चेके अधिकांश व्यवहारकी उपेक्षा या तिरस्कार करते हैं। इन बच्चोंमें निराशा और उपेक्षाकी भावनाका विकास होता हैं तथा वे अपनेको हीन समझने लगते हैं। कुछ माता-पिता तो बच्चेके प्रति पूरी तरह उदासीन रहते हैं। इन बच्चोंमें भी स्वतंत्र विचार विकसित नहीं हो पाते तथा वे अपनेको उपेक्षित समझते हैं। साथ ही वे अपनेको हीन और अनुपयोगी अनुभव करते हैं तथा उनमें अस्वस्थ 'स्व' की भावनाका विकास होने लगता है।

अतः माता-पिताको बच्चेके प्रति इस प्रकारकी अभिवृत्ति रखनी चाहिए जिससे बच्चा अपनेको स्वीकृत एवं उत्साहित अनुभव करे तथा उसकी स्वतन्त्र क्रियाओं व प्रयत्नोंका उपयुक्त विकास हो। उसकी रचनात्मक इच्छाओं, कल्पनाओं व क्रियाओंको प्रोत्साहित करना चाहिए जिससे वह स्वतंत्र रूपसे विकसित हो सके। साथ ही उसपर उपयुक्त नियन्त्रण भी होना आवश्यक है। इस सम्बन्धमें विस्तृत विचारके लिए किसी प्रशिक्षित सामाजिक कार्यकर्तासे सम्पर्क स्थापित करना उपयुक्त होगा।

एलर्जी

यह अक्सर कहते सुना जाता है कि जब डाक्टर किसी बीमारीको नहीं पहचान पाते या उसका इलाज नहीं कर पाते तो झटसे वे इसे एलर्जी बता देते हैं। इस शब्दका प्रयोग सिर्फ चिकित्साके क्षेत्रमें ही नहीं होता बल्कि विभिन्न अर्थोंमें भी एलर्जी शब्दका प्रयोग धड़ल्लेसे किया जाता है। 'साससे एलर्जी' या 'अपने अफसरसे एलर्जी' मुहावरोंसे कौन परिचित नहीं है ? सामान्यतया इस शब्दका अर्थ असमान प्रक्रिया या खास स्थितिमें खास प्रतिक्रियासे होता है।

सामान्य भाषामें एलर्जीसे ऐसी स्थितिका बोध होता है जिसमें व्यक्ति किसी ऐसी वस्तुके प्रति अधिक संवेदनशील हो जाता है जो अन्यथा नुकसान देह होती है। बादमें ऐसी वस्तु व्यक्ति विशेषके लिए एलर्जी वाली वस्तु मानी जाती है। ऐसे लोग जब इस प्रकारकी वस्तुके सम्पर्कमें आते हैं तो उनमें इससे बहुत अधिक प्रतिक्रिया होती है। एलर्जी वाले व्यक्तिको वह वस्तु कितना नुकसान पहुँचाती है, यह इस बातपर निर्भर करता है कि उसपर एलर्जी वाली वस्तुसे कितनी अधिक प्रतिक्रिया होती है। यह उसके स्पर्श और उसके प्रभावकी मात्रापर भी निर्भर करता है। यदि एलर्जीसे प्रभावित संवेदनशील अंग फेफड़ा या नाक है तो इसकी अत्यधिक प्रतिक्रियासे दमा या एलर्जी वाली सर्दी-जुकाम हो जाता है। इसी प्रकार यदि संवेदनशील अंग त्वचा है तो चर्म रोग या एक्जीमा हो सकता है।

एलर्जेन या तीव्रग्राहिता क्या होती है ?

किसी भी अत्यधिक संवेदनशील व्यक्तिमें जब किसी वस्तुसे एलर्जी वाली प्रतिक्रिया होती है या उपरोक्त बीमारियोंके लक्षण दीखने लगते हैं तो वैसी वस्तुको 'एलर्जेन' कहते हैं। सामान्य व्यक्तिको इससे कोई हानि नहीं होती। कुछ आम एलर्जेन वस्तुओंके नाम हैं। घरकी धूल, फूलोंके पराग, आमतौर पर लगने वाली फफूंदके बीजाणु, घरके आसपासके कचरोंमें मिलनेवाले सामान्य कीड़े; घोड़े, कुत्ते, बिल्लियाँ बकरी, भेड़ और गाय जैसे पशुओंके शरीरसे गिरनेवाली रूसीके साथके कीड़े; पक्षियोंके पंख, रसायन एवं दवाईयां। मछली अंडे, दूध, सुपारी और प्याज जैसे सादा पदार्थ भी एलर्जेनका काम कर सकते हैं।

भारतमें करीब ८२ लाख लोग श्वासनलीके दमोंसे पीड़ित हैं। इससे तीन गुणा अधिक लोग अधिक छींकके कारण एलर्जीवाले जुकामसे पीड़ित हैं। यदि शरीरके अन्य अवयवोंपर होनेवाली एलर्जी बीमारियोंपर विचार किया जाय तो इससे प्रभावित लोगोंकी संख्या साढ़े पाँच करोड़ तक पहुँच जायगी।

एलर्जेनकी पहचान

एलर्जेन या तीव्रगाही वस्तु हरेक व्यक्तिके लिए समान नहीं होती है। किस आदमीको किस वस्तुसे एलर्जी है इसका पता लगानेके लिए उसके जीवन इतिहासके अध्ययनके साथ-साथ उसकी त्वचापर स्थानीय तीव्रग्राही वस्तुओंका बहुत अधिक मात्रामें 'ऐण्टीजेन' प्रयोग करना आवश्यक है। किसी भी चिकित्सकके लिए वातावरणमें उपलब्ध सामान्य एलर्जेनका और किसी शहर, जिले या राज्यकी परिस्थितियोंका ज्ञान परमावश्यक है।

करीब १५ वर्ष पहले चिकित्सा विज्ञानको विशेष एलर्जी पैदा करनेवाले पराग, फफूंदीके बीजाणु और भारतीय वातावरण और वायुमण्डलमें उपलब्ध जीवाणुओंके बारेमें पता नहीं था। दिल्लीके पटेल चेस्ट इन्स्टीच्यूटने १९५६ में जब एलर्जी क्लिनिक प्रारंभ किया तो ऐसी ही समस्या उसके सामने भी आयी। जब डाक्टरोंने यह महसूस किया कि यहाँके बीमारोंके श्वासमें इंगलैंड या अमरीकाके पौधोंका पराग नहीं होता है तो बाहरसे आयातित प्रतिजनक (एण्टीजेनिक) पदार्थोंको बिल्कुल आवश्यकता नहीं हैं ,

सभी ऋतुओं और महीनोंके दौरान वायुमण्डलमें उपलब्ध पराग एवं फफूंदीके बीजाणुओंका पता लगाने-

के लिए सर्वेक्षण किया गया। एक बार जब इनका पता लगा तो पर्याप्त मात्रामें पराग और फफूंदीके बीजाणुके संबर्ध तैयार किये गये। इनसे एलर्जी पैदा करने वाला सत्व तैयार किया गया। घरकी धूल, आम कीड़ों एवं भोज्य पदार्थोंसे भी एलर्जी पैदा करने वाला सत्व तैयार किया गया और उनका मानकीकरण किया गया।

इसके बाद इस प्रतिजनकसे सैकड़ों बीमारोंपर एलर्जीके लिए उत्तरदायी विशेष उत्तेजक तत्वोंका पता लगानेके लिए ५०,००० लोगोंकी त्वचाका परीक्षण किया गया। वर्षोंके निरन्तर अनुसंधानके बाद पटेल चेस्ट इन्स्टीच्यूट अब चिकित्सकोंको एलर्जेनके बारेमें महत्वपूर्ण सूचना देनेमें सफल हो सकी है। अब इन्स्टीच्यूट बड़े पैमानेपर प्रतिजनक (एन्टीजेंस) तैयार कर सकती है जिससे देशके डाक्टरी कालेजों और संस्थानोंकी बढ़ती हुई मांगको पूरी की जा सके। दक्षिण एशियाके पड़ोसी देशोंको इसके निर्यातकी बहुत अधिक संभावना है।

पन्द्रह वर्ष पहले जो एक रहस्य था, वह अब वह सामान्य बात हो गयी है। इसका श्रेय वस्तुतः वैज्ञानिकोंको है जिन्होंने अपनी लगन एवं निरंतर प्रयत्नसे इसे खोज निकाला है।

[पृष्ठ ३० का शेषांश]

तो मेरा सौदा आपको करना न पड़ता। मैं आजीवन क्वांरी रह लूंगी, पर उस बूढ़ेसे विवाह न करूंगी। अपने हाथों मेरा सिन्दूर न पोंछिए पिताजी!"……कहते कहते सिसकियोंसे नीताका गला भर आया।

सुनकर राधेश्याम बिलखकर रो पड़े। उन्हें अपने अपराधका ज्ञान हो गया था। अपनी भूलका एहसान हो रहा था। काश! एक पुत्रकी आशामें वे इतनो पुत्रियोंके पिता न बनते तो गरीबीके अंधेरेमें इतना न डूबते कि राह भटक जाते और अपनी बेटीके साथ ऐसा विश्वासघात कर बैठते। धीरे-धीरे उनकी आंखोंके आगे से अंधेरा हट गया; वे कांपते कदमोंसे बाहर आये। वरसे बोले, "मैं विवश हूं, बेटी आपके साथ विवाह करने को तैयार नहीं। मुझे माफ करें।" वर गुस्सेसे बौखला उठा, "इतना पैसा इसीलिए दिया था? मैं लखपति हूं, दुनियामें पैसेसे क्या नहीं खरीदा जा सकता! ऐसी एक नहीं दस शादियाँ कर सकता हूं।" भोलू चाचा सामने आकर बोले, "पैसेसे किसीका शरीर खरीदा जा सकता है, पर दिल नहीं। आपकी इज्जत इसीमें है कि बरात वापस लेकर चुपचाप चले जाइए।"

वर बरातियों सहित उदास चेहरा लिए वापस जा रहा था। नीता अपनी विजय पर मुस्करा रही थी। भोलू चाचा व मोहल्ले वाले अपनी कामयावी पर खुश थे, पर राधेश्याम पश्चात्ताप और ग्लानि से गड़े जा रहे थे।

भोलू चाचापर बहुत बड़ी जिम्मेदारी आ गयी थी। बात हवाके साथ पूरे कस्बे में फैल गयी थी। चाचाने गली-गली खोज की और एक योग्य वर ढूंढ़ निकाला। लड़का स्वस्थ और युवा था। कपड़ेकी दूकान करता था। उसके राजी होनेपर मोहल्लेके सभी लोगोंने चन्दा जमा करके उसी मण्डपमें धूमधामसे नीताका विवाह कर दिया। विदाके समय राधेश्यामकी आंखोंमें आंसू छलक आये। पता नहीं, खुशीके या पुत्रीविछोहके या अपने अपराधके पश्चात्तापके। कुछ भी हो, उन्हें छोटे परिवारका महत्व समझमें आ गया था।

* * *

सौदा

—श्री मोती मेहरोत्रा—

राधेश्यामने जबसे होश सम्भाला था गरीबी और दुःख हाथ धो कर उनके पीछे पड़ गये थे। माँ बापका साया बचपनसे उठ गया था। दूरके रिश्तेकी बिट्टो चाचीने उन्हें किसी तरह पाल-पोसकर बड़ा किया और दसवीं पास करवा दी। गरीब और मातृहीन बच्चे समयसे पहले ही समझदार हो जाते हैं। राधेश्याम नहीं चाहते थे कि बूढ़ी चाची दूसरोंकी चाकरी करके उनका पेट पाले। इसलिए, एक प्राइमरी स्कूलमें नौकरी कर ली और अब वे मास्टरजी कहलाने लगे।

बिट्टो चाचीने जीते जी राधेश्यामका विवाह भी पासके गाँवकी लड़की राधासे कर दिया। अभी राधाको बाहोंमें समेटे एक वर्ष ही बीता था कि बिट्टोको बुढ़ापेने ऐसा दबोचा कि वह परलोक सिधार गयी और राधेश्याम एक लड़कीके पिता हो गये। बेटी नीता सवा साल भी पूरा न कर पाई थी कि दूसरी बेटी पैदा हो गयी। नीता और रीताके आ जानेसे खर्च बढ़ जाना स्वाभाविक ही था। भला डेढ़ सौ रुपये मासिकमें गुजारा कैसे चलता, इसलिए मास्टरजीने ट्यूशन करने शुरू कर दिये। एक पुत्रकी चाह उनके मनमें लगातार बनी हुई थी। इसी उम्मीदमें तीसरी बेटी गीताने जन्म ले लिया। मास्टरजीने सुना तो सिर थाम लिया। गरीबीका अभिशाप लड़कियोंके रूपमें प्रबल हो उठा।

राधेश्यामने मन ही मन निश्चय किया कि अब और ज्यादा सन्तान पैदा न करेंगे, पर जब किसी मित्रकी गोदमें खेलता पुत्र देखते हो उनके जीमें कसक सी होती। पड़ोसियोंके ताने भी सुनने पड़ते। "बिना बेटेके क्या आज तक किसीका वंश चला है?"—सुनते ही उनका पुरुषत्व जाग उठता। सोचते इस बार भगवान अवश्य पुत्र देगा। उसके राजमें देर है, अन्धेर नहीं। राधाका स्वास्थ्य गिरने लगा था, लेकिन उसे भी बेटेकी चाहने बेचैन बना दिया था। उस चाहको पूरा करनेकी कोशिश ने सीता और सुनीताको भी जन्म दे दिया। भगवानने कैसा कडुवा मजाक किया था दोनोंके साथ। वे अपनी की हुई गलतीपर पछता रहे थे। काश! पुत्रकी इच्छा त्यागकर परिवार नियोजित रखते तो आज वे गरीबीके गहरे दलदलमें अधिक नीचे क्यों धँसते जाते।

गाँवोंमें लोग कहते हैं कि लड़कीकी जात बहुत बेशरम होती है क्योंकि वह बढ़ती बहुत जल्दी है। बड़ी बेटी नीता अभी चौदह वर्षकी ही तो थी कि यौन पूरी शक्तिसे उसपर हमला कर बैठा। ऐसा निखार आया उसके शरीर और रूपपर कि घरसे निकलना मुश्किल हो गया। जिस गलीसे निकलती लोग इशारा करके आपसमें कहने लगते—"हाय राम! मास्टरजीकी बिटिया तो देखो कैसी गदराय गयी है। पूरी जवान दिखाई देत है।" नीता शरमसे गड़ी किसी तरह पैरोंको ठेलकर आगे बढ़ती। वह आठवींतक पढ़ चुकी थी। आगे पढ़ाकर क्या बापको नौकरी करानी थी! चिट्ठी लिख ले और रामायण पढ़ ले, इससे ज्यादा लड़कीका पढ़ाना कोई मायने नहीं रखता।

जिस वातावरणमें राधेश्याम पले थे, उससे उनके विचार रूढ़िवादी हो गये थे। पड़ोसी आकर समझाते, "भइया! जवान बिटिया घर मा बैठाय हो, ई कहाँ की बुद्धिमानी है। हाथ पीले करो और जिम्मेदारीसे छूटौ।" यह सुनकर कितने ही काँटे एक साथ उनके दिलमें चुभ जाते। पेट पालना मुश्किल था, दहेजके लिये पैसे कहाँसे जुटाते! वर कहाँसे खोजें, कितनी ही समस्याएं भीषण

रूपमें सामने आ जातीं । रातको नींद नहीं आती, दिनमें किसी काममें मन नहीं लगता ।

एक दिन पड़ोसके बिरजू काकाने आकर टोका, "मास्टर जी ! काहे इत्ती चिन्ता करत हो । अगले टेशन पर जाएके सुरजू दलाल ते मिलौ, ऊ ब्याह केरी दलाली करत है, जरूर, कौनो बढ़िया वर वताय देई ।"

बात मास्टरजीकी समझमें आ गयी । दूसरे दिन वे अगले स्टेशनपर पहुंच गये । दलालसे मिले । बातचीत हुई । वह दलाल अपने व्यापारमें बहुत कुशल था । शादियाँ करवाना उसके बाएँ हाथका खेल था । वे उसके प्रभावमें आ गये । वर तय हो गया । लेन-देन हो गया और शादीका मुहूर्त भी निकल आया । मास्टरजी वापस लौटे तो काफी खुश थे । धूमसे तैयारियाँ शुरू हो गयी । सिर्फ पन्द्रह दिन ही बाकी थे । सभीको हैरानी थी कि मास्टरजी को इतनी जल्दी वर कैसे मिल गया । इतना पैसा कहाँसे आ गया कि दिल खोलकर खर्च कर रहे हैं । अभी तो चार और ब्याहने को हैं । पर किसीका साहस कुछ पूछनेको न होता था ।

विवाहका दिन आ गया । शामसे सभी घोड़ीपर बैठे दूल्हे को देखनेके लिए उत्सुक थे । जब बाजोंकी आवाजसे मोहल्ला गूँजा तो सभी अपने घरोंके अन्दरसे निकलकर भागे । कोई छज्जे पर, कोई खिड़कीमें, कोई दरवाजेपर तो कोई सड़क पर । दूल्हेके सामने आते ही सेहरे की लड़ियोंके नीचेसे झांककर एक ने कहा, "हाय राम ! कैसा है दूल्हा ! उमर ज्यादा मालूम पड़ती है ।" सुनकर दूसरा फुसफुसाया, "ई की तौ मूँछ और भौंहें सब सफेद हैं ।" तीसरा बड़बड़ाया, "ई के तौ दाँतौ टूटे हैं ।" चौथा बोला, "दइया ! सारे गालन पर झुर्री पड़ी हैं ।" पीछेसे कोई बोला, "हां भइया ! साठ ते कम का ना होई !" बस खलबली मच गयी । घोड़ी बढ़ती हुई राधेश्यामके दरवाजे पर खड़ी हो गयी, पर मोहल्ले वालोंके मनमें तूफान मचा गयी । आँखोंके सामने मोहल्लेमें इतना बड़ा अनर्थ हो जाय और वे सब चुपचाप सह लें ! नहीं, वे ऐसा नहीं होने देंगे ।

जयमालाका समय आ गया था । समय बहुत कम था । अगर नीताने जयमाला डाल दी तो कौन बिगड़ीको सम्भाल सकेगा । पर आगे बढ़े कौन ? अन्तमें भोलू चाचा साहब बटोर कर राधेश्यामके पास पहुँचे । वे बरातियोंके स्वागतमें व्यस्त थे । चाचाने मौका पाते ही उन्हें एकान्तमें ले जाकर कहा, "भइया ! ई का बच्चीके साथ दुश्मनी निभाय हौ । इससे तो अच्छा होत कि कुए मा काटिके डाल देतेउ । तुम वहिके साथ बिआह कर रहे हौ, जौन टिकटी मा पाँव लटकाय बैठा है । अबहें बरात वापस कर देउ, हम सब तुमरी मदद करिब ।" सुनते ही राधेश्याम फूट पड़े, "तुम मेरी गरीबीपर तरस क्यों नहीं खाते ? अगर मेरे पास पैसा होता तो मुझे यह कदम क्यों उठाना पड़ता ? मैने तो वरसे आठ हजार रुपया लिया है, उसीसे सारा इंतजाम किया है । अब मैं उसे कहाँसे लौटाऊँगा ? फिर नीता चीथड़ोंसे निकलकर सोनेसे लद जाएगी ।" भोलू चाचा गुस्सेसे लाल होकर बोले, "तो साफ यह क्यों नहीं कहते कि तुमने आठ हजारमें लड़कीको बेचा है ? पर मैं यह अत्याचार कदापि नहीं होने दूँगा ।"

समय तेजीसे बीत रहा था । राधेश्यामपर बातका असर होते न देख चाचाने दूसरी चाल चली । वे भाग कर उस कमरेमें गये जहां नीता सजी-धजी हाथमें जयमाला लिए खोई-खोई सी खड़ी थी । चाचाने उसके कानमें कुछ फुसरफुसर की और उसने स्वीकृतिमें सिर हिला दिया । उधर दूल्हा सजे मंच पर बैठा था । बार-बार उसके रिस्तेदार नव-वधूसे जयमाला डालनेके लिए आग्रह कर रहे थे । राधेश्यामने अन्दर आ कर नीतासे कहा, "चलो बेटी, जल्दीसे चलकर जयमाला डालो ।" नीताके लिए यह कठिन परीक्षा की घड़ी थी । पहले तो वह चुप रही लेकिन पिताके आग्रहपर बिफर पड़ी, "पिता जी ! इतना घोर अत्याचार मुझपर क्यों कर रहे हैं ? विधवा बनाकर मेरी डोली क्यों घरसे निकाल रहे हैं ? अच्छा होता पैदा होते ही मेरा गला घोंट देते,

(शेष पृष्ठ २८ पर)

यह सब क्या है, क्यों है ?

— सुश्री इन्दु जैन —

अभी अपनी रिश्तेदारीमें एक शादीसे होकर आ रही हूँ। लड़का अच्छे परिवारका है और लड़की भी सम्भ्रांत कुलसे ली गयी है। निकट सम्बन्धी होनेके नाते रिश्तेकी शुरूआतसे, लेन-देन, दान-दहेज, गहना-कपड़ा सबका खर्च और तैयारी मैं नजदीकसे देखती आयी हूँ। पिछले छः महीनोंमें कमसे कम एक दर्जन बार यह सोच-सोचकर मेरा दिल बैठता चला गया है कि लड़के की शादीमें खर्चेका यह हाल है तो मैं—जो तीन बेटियों की माँ हूँ—मेरा बेड़ा पार कैसे लगेगा! मनमें बेचैनी ज्यादा बढ़ी तो अपनी माँसे जिक्र कर बैठी। उन्होंने जो सबसे पहली बात कही, वह यह कि "उनके एक ही तो लड़का है—शौकसे सब कुछ कर रहे हैं। कोई रोज-रोज तो यह दिन आता नहीं।" ठीक कहा उन्होंने! फिर ख्याल आया कि उन लोगोंके एक लड़की भी तो है—शादीके लायक! उसकी शादी किसी भी दिन तय हो सकती है? एकदम दूसरा खर्च वे लोग कैसे उठाएंगे? इस सवालका भी सरल सा जवाब मेरी माँने दे दिया। "बेटेके ब्याहमें जो आया है उसमेंसे बहुत सा सामान ज्योंका त्यों बेटीको दे देंगे।" मेरी आधुनिक तर्क-बुद्धि जाग उठी। मैंने सोचा कि बस यही मेरी सरल-हृदय माँ धोखा खा गयी! कौन बहू यह चाहेगी कि उसके पीहरसे आया सामान उठाकर ननदको दे दिया जाय? यही कलहका बाएस हो जाएगा और घरकी सारी शांति भंग हो जाएगी। लेकिन मैं फिर हार गयी। समाजका मनोविज्ञान सहज ही आत्मसात्‌कर लेनेवाली, दूरंदेशी और लोकनीतिको अनुमतसे पहचाननेवाली माँ बोली—"एक ही तो ननद है। बहू सोचेगी कि उसको खूब दे-दिवाकर यश कमा लूँ। उसके बाद तो अपना राज्य है। और कोई जिम्मेदारी तो सर पर है नहीं!"

उनकी यह बात इतनी तर्क-संगत थी कि मैं निरुत्तर हो गयी। बिरादरी वालोंका लड़केको इतना बढ़-चढ़कर देना, लम्बा-चौड़ा देन-लेन, इस सबपर मेरे भीतर जो एक झुँझलाहट थी वह इस वाक्यसे टकराकर टूट गई—"एक ही तो बेटा है।" साथ ही यह भी विचार आया कि किस तरह ननदका इकलौता होना एक बहूको अपने कर्त्तव्यकी ओर सहजतासे बढ़ाता चला जाएगा। बहूकी उदारता सासका मन जीत लेगी और एक वही घटना जो घर-घरमें चूल्हे अलग करवा जाती है—इस घरको स्वर्ग बना जाएगी।

साँवली और गोरी

दूसरी तरफ हमारे यहाँ चौका-बर्तन करने एक महरी आती है। एक क्या बल्कि दो आती हैं—कभी साँवली, कभी गोरी। साँवली महरीका नाम है पच्छिमा और गोरका लच्छिमा। साँवली उम्र की बड़ी है—उसके साथ कमसे कम आधे दर्जन बच्चे चिल्ल-पों मचाते आते हैं और वह काम करती हुई बराबर उन्हें तेलुगू भाषामें डाँटती-डपटती रहती है। लेकिन काम हँसती-हँसतीकर जाती है और सूखे, काले, अधनंगे बच्चोंकी फौज बगल और पल्लेसे लटकाये निकल जाती है। आये दिन उसे पेशगी चाहिए—या तो उसके बच्चा होनेवाला है या कोई बच्चा बीमारीमें आखिरी साँसें गिन रहा है। दो-एक साल मैंने उसके बच्चों की गिनती रखनी चाही लेकिन हार कर छोड़ दी। न जाने कब उनमें जमा-खर्च हो जाया करता था। लेकिन जब-जब गोरी लच्छिमा काम करने आई—वह साफ-सुथरे कपड़े पहने होती है, बाल सलीकेसे बँधे रहते हैं, शांति और सफाईसे घरका काम करती है। फिर भी एक अजीब बात मैंने पायी। उसके कामकी जरा सी नुक्ताचीनी की नहीं कि वह आग-बबूला हो उठती है और चंडीका रूप धारणकर पैर पटकती फटाकसे घरके बाहर निकल जाती है।

पूछने पर पता चला कि दोनों एक ही आदमीकी बीबियाँ हैं। लच्छिमा दूसरी बीबी है लेकिन उसके बच्चा नहीं है इसलिए उसका आदमी उसे बहुत मारता है, इतना कि वह पगली सी हो गयी है—आपे में नहीं रहती! मेरी अक्ल चकरा गयी! पिता बनने की भूख कितनी बड़ी है—पच्छिमा ही क्या वंश-बेल बढ़ानेको काफी न थी?

चूहों की प्रतिक्रिया

एक विदेशी पत्रिकामें पढ़ा था कि कुछ विद्वानोंने एक प्रयोग किया। जमीनका एक टुकड़ा लेकर उसमें दस चूहे दम्पत्ति वहाँ रख दिए। उनके खाने-पीनेकी सारी सुविधाएँ वहाँ मौजूद थीं। खुशहाल जिंदगीका एक स्वर्ग उनके लिए बसाया गया। धीरे-धीरे उनकी वंश-वृद्धि हुई। देखा कि सुविधाएँ और जीवन-संघर्षकी कमी होनेके कारण चूहोंके बच्चे बहुत होशियार होते जा रहे हैं। उनके बिल अब ज्यादा मजबूत बनने लगे हैं—आपकी आदान-प्रदान सहानुभूतिपूर्ण है। एक चूहा बीमार पड़ता है तो सब उसकी तीमारदारी करने आते हैं। स्वस्थ और सुन्दर समाजकी स्थापना हो रही है। लेकिन वंश-वृद्धि होती ही चली गयी। खाना-पीना मिलता रहा लेकिन जगह उतनी ही रही। धीरे-धीरे चूहों की तादात इतनी बढ़ गयी कि वे चलते-फिरते एक दूसरेसे टकराने लगे। एक-एक बिलमें कई-कई परिवारोंको रहना पड़ा। तब प्रयोग करने वाले विद्वानोंने यह पाया कि चूहोंमें निर्दयताकी भावना आ रही है, वे अपराधी होते जा रहे हैं। उन्होंने गुट बना लिए हैं और रातमें अचानक वे एक दूसरेपर हमला कर देते हैं—दूसरे गुटके बच्चोंको मार डालते हैं और उनकी चुहियोंको जबरदस्ती उठा कर ले जाते हैं। वे बिना वजह दूसरोंके बिलसे दाना चुरा लाते हैं जबकि उनके अपने बिलमें खानेकी कोई कमी नहीं है। यही नहीं, उनमें यौन विकृतियाँ बढ़ती जा रही हैं—रात-रात भर जागते हैं और सारे दिन सोते हैं। और अंतमें एक दिन सारे चूहोंमें एक भयानक युद्ध छिड़ गया। छः घण्टेकी लगातार मारकाटके बाद सैकड़ों चूहोंमेंसे पंद्रह चूहे ही जिंदा बचे—अगर उन्हें जिंदा कहा जा सकता है तो! क्योंकि उनमेंसे कोई अंधा हो गया था, कोई लूला-लंगड़ा, किसीके शरीरसे खून बह रहा था और कोई प्यास और तकलीफसे चिल्ला रहा था।

प्रयोगके इस भयंकर नतीजेने मुझे इतना आतंकित कर दिया कि जब मैं सड़कपर निकलती और कोई मुझसे टकरा जाता तो मेरे रोंगटे खड़े हो जाते। बसके लिए लगी लम्बी क्यू देखती तो जी घबरा उठता, तबीयत मिचला जाती। सोते-सोते लगता जैसे छातीपर किसीने पत्थर रख दिया है। सपना देखती कि अणु-विस्फोटकी छतरीकी तरह विस्फोटक पल-पल बढ़ते आत्माहीन शरीर हमारे सिरपर छाये हुए हैं। सुबह उठती तो लगता हमें क्या हो गया है। हम किस गफलतकी नींदमें डुबे हुए हैं—कब जायेंगे? बिहारीका एक दोहा है।—

अति अगाधु अति औथरो नदी कूप सर बाय।
सो ताको सागर कहा जो जाकी प्यास बुझाय।।

समाजशास्त्रियोंका कहना है कि हर जीवको अपना अस्तित्व बनाये रखनेके लिए वायुमंडलके एक नियत टुकड़ेकी जरूरत होती है। जब धरतीपर जीव इतने बढ़ जाते हैं कि उन्हें अपना निश्चित खंड नहीं मिल पाता तो वे दूसरोंके व्यक्तित्व-क्षेत्रमें घुसपैठ करने लगते हैं। इससे टकराहट पैदा होती है और इन्सानका व्यक्तित्व टूटने लगता है, रगड़ खाता है—उद्विग्न हो उठता है। तब वह ऐसे काम करता है जो अशोभनीय हैं, समाज विरोधी हैं। यह आकाश यों तो इतना बड़ा है लेकिन इसका हर अंश सबके लिए बराबर बँटा हुआ है। जब कोई मेरे आकाशके नीचे पसरने लगता है तो मेरा दम घुटने लगता है, जैसे एक मनमें जब हजार सवाल, लाखों भाव एक साथ आकर शोर मचाने लगते हैं तो बुद्धि बहरी हो जाती है—अपना संतुलन खो बैठती है। तब मनुष्य 'अज्ञेय' से शब्द लेकर कहता है—

"मेरा आकाश छोटा हो गया है मुझे नींद नहीं आती।"

पारिवारिक जीवनोपयोगी स्वास्थ्य साहित्य

लोकप्रिय स्वास्थ्य साहित्य

राजा बेटा कैसे बनायें ?	३.००
सुन्दर दांत और उनकी देखरेख	२.५०
आपके बच्चेकी खुराक	३.३७
भोजन क्या, क्यों और कैसे ?	४.००
विटामिन और हीनता जनित रोग	४.२५

यौन-साहित्य

यौन मनोविकार कारण और निवारण	४.२५
विवाहित जीवनमें यौन सम्प्रयोग	५.५०
नारीकी यौन समस्यायें	२.५०
सन्तति-निरोध कब और कैसे ?	४.००
गर्भवती स्त्री और प्रसवपूर्व व्यवस्था	२.५०

प्रकाशक

स्वास्थ्य सन्देश प्रकाशन,
पोस्ट–कालपी (उत्तर प्रदेश)

उद्यम

मासिक पत्रिका

'उद्यम' में निम्न विषयों पर लेख प्रकाशित होते हैं :

*लाभदायक उद्योग-धन्धोंकी व्यवहारोपयोगी जानकारी

*व्यवसायमें सफल व्यक्तियोंकी मुलाकातें और परिचय तथा मवेशियोंके रोगोंका निवारण ।

*इंजिनियरिंग, यंत्र सामग्री और ग्रामोद्योग संबंधी लेख

*आरोग्य, संक्रामक रोग तथा घरेलू औषधियों संबंधी जानकारी ।

*पंचवर्षीय योजनाओंके कारण होता हुआ ग्रामसुधार

*महिला विभाग : घरेलू उद्योग, मितव्ययिता, खाद्य पदार्थ आदि पर लेख ।

*बालकोंका विश्व : बालक-बालिकाओंके लिए सुलभ भाषामें त्रैमासिक जानकारी ।

*विद्यार्थियों के लिये : विशेषज्ञों द्वारा उपयुक्त लेख

*पाठकों द्वारा पूछी गई जानकारी ।

'उद्यम' का वार्षिक मूल्य रु० दस भेजकर परिवारके प्रत्येक व्यक्तिके लिये उपयोगी यह मासिक पत्रिका अवश्य संग्रहीत करें ।

उद्यम मासिक, धर्मपेठ, नागपुर-१

स्वास्थ्य का वृहद् ज्ञान सागर

आपका स्वास्थ्य

१८ वर्षों की

पुरानी फाइलें

चौथे और सोलहवें वर्ष के अलावा प्रत्येक वर्ष की फाइलें प्राप्य हैं ।

प्रत्येक वर्ष की फाइल ६ रु० में प्राप्य है फाइलें वी० पी० से नहीं भेजी जायेंगी। अग्रिम मूल्य भेजना अनिवार्य है ।

आपका स्वास्थ्य कार्यालय

चेतगंज, वाराणसी–१

घर बैठे संगीत सीखिए

प्रतिमास घर बैठे गायन, वादन तथा नृत्य की ठोस जानकारी प्राप्त करने के लिए १५) भेजकर **'संगीत'** मासिक के वार्षिक सदस्य बन जाइए । नमूना चाहें तो १)५० के टिकिट भेजिए । फिल्मी गीतों के प्रेमी २०) भेजकर **'फिल्म-संगीत'** त्रैमासिक के वार्षिक सदस्य बनें । वर्ष में इसके कुल चार अंक (जनवरी अप्रैल, जुलाई और अक्टूबर में) प्रकाशित होते हैं । प्रत्येक अंक में ३५ प्रसिद्ध फिल्मी गीत स्वरलिपि-सहित छपते हैं । हर प्रकार के संगीत-साहित्य की विस्तृत जानकारी के लिए हमारा बड़ा सूचीपत्र मुफ्त मँगाएं ।

पता

संगीत कार्यालय, ६, हाथरस (उ. प्र.)

इंडियन मेडिकल असोसियेशनकी ओरसे डा० कोशलपति तिवारी द्वारा
संपादित, प्रकाशित और सुदर्शन मुद्रक वाराणसीमें मुद्रित ।

HEALTH

is your most precious possession

Your Health

will help preserve it

Your Health aims to educate the common man on matters of health. It deals with day to day problems of sanitation and hygiene and presents the scientific side of preventing many bodily and mental ills.

Remember it is

A Publication of the Indian Medical Association.

SUBSCRIPTION RATES

(Post free)

Inland : 1 year Rs. 8/- ; 2 years Rs. 12/-
Foreign : 1 year Rs. 10/- ; 2 years Rs. 16/-
Members of I. M. A. ; 1 year Rs. 6/-

Remittances should be by money orders or postal orders payable to YOUR HEALTH

All business correspondence should be addressed to

Manager, YOUR HEALTH
23 Samavaya Mansion ; Corporation Place
CALCUTTA-13

आपका स्वास्थ्य

इंडियन मेडिकल असोसियेशन की लोकोपयोगी मासिक पत्रिका

अगस्त १९७३

पुस्तकालय
गुरुकुल कांगड़ी
27/2/74

हमारे तीन महत्वपूर्ण प्रकाशन

कहीं हवा न लग जाय

-कैप्टन शरत कुमार चौधरी-

इस पुस्तकमें मलेरिया, फाइलेरिया, चेचक आदि रोगोंसे बचनेके उपाय, रोगीकी परिचर्या सर्पदंश, प्राथमिक चिकित्सा सम्बन्धी अनेक महत्व-पूर्ण समस्याओंकी चर्चा की गयी है।

मूल्य १५० पैसे

सुनो भाई पंचो

-डाक्टर कोशलपति तिवारी-

हिन्दीमें अपने ढंगकी सरल सुबोध शैलीमें लिखी गयी पुस्तक। रोग तथा स्वास्थ्य-सम्बन्धी उन सभी समस्याओं पर चर्चा की गयी है, जिनसे हमारे ग्रामीण भाइयोंको नित्य सामना करना पड़ता है।

पुस्तक दो भागोंमें प्रकाशित है।

प्रत्येक भागका मूल्य—१५० पैसे

गुजरात, मध्यप्रदेश, उत्तरप्रदेश, हरियाणा, राजस्थान सरकार, बिहार द्वारा नियोजन केन्द्रों, स्कूल-कालेजके पुस्तकालयों, राष्ट्रीय प्रसार सेवा खण्डों तथा ग्राम पुस्तकालयोंके लिए स्वीकृत।

डाक्टर के आने तक

- डाक्टर गोकुलदास अग्रवाल -

नागरिक सुरक्षाके संदर्भमें इस पुस्तकका विशेष महत्व है। देशके प्रत्येक नागरिकको प्राथमिक चिकित्सा सम्बन्धी ज्ञान प्राप्त करना आवश्यक है और इस पुस्तकमें विस्तृत ढंगसे इस विषयपर चर्चा की गयी है। प्राथमिक चिकित्सा (फर्स्ट एड और नर्सिंग) की शिक्षा लेनेवाले छात्र-छात्राओंके लिए सर्वश्रेष्ठ पुस्तक। प्रस्तुत पुस्तक आपके परिवारके लिए 'घरेलू डाक्टर' का काम देगी।

दो सौ से अधिक चित्र

मूल्य २७५ पैसे

चारों पुस्तकें एक साथ मँगानेपर डाक खर्च माफ। आपका स्वास्थ्यके ग्राहकोंको २५ प्रतिशत छूट दी जाती है। चारों पुस्तकें एक साथ न मँगानेपर प्रत्येक पुस्तकके लिए १२५ पैसे अलगसे डाक व्यय लगेगा।

हमारे अधिकृत विक्रेता,

हिन्दी प्रचारक संस्थान, पो० बा० १०६, वाराणसी
श्री गंगा पुस्तकालय, गायघाट, वाराणसी-१
आपका स्वास्थ्य कार्यालय, लहुराबीर, वाराणसी-१

आपका स्वास्थ्य

इंडियन मेडिकल एसोसियेशनका लोकोपयोगी प्रकाशन
वर्ष २०　　अगस्त, १९७३　　अंक ११

बाल-शिक्षा विशेषांक

कवर-चित्र
श्री देबी प्रसाद चौधरी

अनुक्रमणिका

सुधा सुरा सम साधु-असाधू ... २
कक्षामें विद्यार्थियोंके सहयोगकी संभावना ... ३
बाल विकासकी समस्या परिवार और विद्यालय ... ६
वर्त्तमान परीक्षा प्रणाली समयकी कसौटी पर ... ९
बच्चोंमें आलस्यकी प्रवृत्ति ... ११
बधिर बच्चेकी शिक्षा ... १५
बढ़ता तन, भटकता मन किशोरवस्था और उसकी समस्याएँ ... १९
गलती बड़ोंकी—डांट बच्चोंको ... २२
पुत्रवधूके नाम पत्र (१) ... २६

परिवार नियोजन-पूरक

उत्तर प्रदेशमें परिवार नियोजन ... २८
मुठ्ठियोंमें कैद भविष्य ... ३०
अपनी-अपनी नजर ... ३२

● 'आपका स्वास्थ्य' में प्रकाशित प्रत्येक रचना और चित्रका कापीराइट प्रकाशकका है। इसलिए बिना आज्ञा कोई रचना या चित्र किसी प्रकार उद्धृत नहीं होना चाहिए।

● 'आपका स्वास्थ्य' के लेखकोंके विचार पूर्ण रूपसे उनके अपने हैं आवश्यक नहीं है कि संपादक मंडल अथवा इंडियन मेडिकल एसोसियेशन उनसे सहमत हो।

मूल्य—इस अंकका ५० पैसे
वार्षिक छः रुपये

आपका स्वास्थ्य कार्यालय
वाराणसी (बनारस-१)

सम्पादकीय-

सुधा सुरा सम साधु असाधू

'दोनों ही एक साथ पैदा होते हैं—कमल और जोंक, पर गुण, उनके अलग-अलग होते हैं कमल सुदर्शन स्पर्श सुखदाता है, जोंक कुरूप, स्पर्श होते ही रक्त चूषण करने लगती, है ! अमृत और मदिरा दोनों ही समुद्र मंथनमें प्रगट हुए किन्तु एक अमरत्व प्रदान करता है, दूसरा प्रमादकर्ता, प्राणहर्ता है । इसी प्रकार अच्छे और बुरे लोग होते हैं, दोनों ही मनुसंतान होते हैं पर एक संसारका कल्याण करता है, दूसरा केवल दारुण दुख देनेमें ही अपनी वीरता मानता है ।'

गोस्वामी तुलसीदासजीने मानसके आरंभमें ही गुण-दोष, साधु-असाधू, संत-असंतकी चर्चा की है, उन्होंने स्वीकार किया है कि एक ही परमात्माने जड़-चेतन गुण-दोषमय संसारकी सृष्टिकी है, इसमें दोनों ही छोर वर्तमान हैं—दुख-सुख, पाप-पुण्य, दिन-रात, साधु-असाधू, सुजाति-कुजाति, दानव-देव, ऊँच-नीच, रंक-राजा, अमृत-विष, जन्म-मरण, आदि । अब यह व्यक्तिपर निर्भर है कि वह क्या चुनता है । यहाँ भी गोस्वामीजीने चयनकी प्रवृत्तिका उल्लेख इस प्रकार किया है—

भल अनभल निज-निज करतूती लहत सुजस अपलोक बिभूति ।
गुन अवगुन जानत सब कोई । जो जेहि भाव नीक तेहि सोई ।।

अर्थात् जिसे जो भाता है उसे वही अच्छा लगता है । भला आदमी भलाईके शिखरकी ओर चलता है तो नीच निचाईकी चरम गहराई छूना चाहता है ।

कविका परामर्श है कि गुण-दोषको जानना चाहिये क्योंकि बिना पहिचाने चयन करनेमें कठिनाई होती है ।

हमारा क्षेत्र स्वास्थ्यका है, यहाँ भी यही शाश्वत नियम और सदुपदेश लागू होता है । स्वास्थता और रुग्णता, अच्छी-बुरी आदतें, सुवैद्य और कुवैद्य, पथ्य-कुपथ्य, सावधानी-लापरवाही, उपेक्षा-प्रतिषेध सभी उपलब्ध हैं । चयन आपको करना है, निदेश यदि चाहें तो उपलब्ध हैं । आपको उत्तम स्वास्थ्यके लाभ जानने चाहियें, कुव्यसन और हानिकारक आदतोंको छोड़ना चाहिये, रोग प्रतिषेधके उपाय करने चाहियें, सुवैद्यकी शरणमें जाना चाहिये और उसकी उत्तम सलाहका पालन करना चाहिये ।

इस प्रकार सत्-मार्ग चुनकर आप अपने जीवनको स्वस्थ्य, सुखी, सुन्दर बना सकेंगे । अब यह बात और है कि आपको बीमार पड़े रहनेमें सुख मिलता हो, कुटेवें ही आपके आनंदकी स्रोत हों, कुपथ्य और कुवैद्यमें ही आपका विश्वास हो, सहसा किसी रोगसे भिड़ जानेमें थ्रिल अनुभव होती हो । सही है कि स्वस्थ और बीमार दोनों ही को किसी दिन मरना होगा ही, अमृत पीकर भी, सुरा पीकर भी । अमृत मिलता नहीं अतः शायद आपको सुराकी मस्ती भा गयी है और चूँकि नियति एक है आपको उसकी हानिकी परवाह नहीं है । परन्तु आपकी अज्ञान रात्रिमें हम मशाल लिए आपको जगाने आये हैं कि सुपथ खुला है, शाश्वत आनन्दका मार्ग प्रशस्त हुआहै आप उठकर देखें तो ।

ईश्वर आपको सत् विवेक प्रदान करें यही हमारी शुभ कामना है ।

कक्षामें विद्यार्थियोंके सहयोगकी समस्या

—श्री हरिशंकर श्रीवास्तव—

विद्यार्थियों द्वारा कक्षाओंमें विचार-विमर्शके समय गूंगेकी तरह चुप्पी साधकर बैठे रहना या विद्यालयके अन्य सामूहिक कार्यक्रमोंमें सक्रिय भाग न लेकर उदासीनता प्रकट करना एक ऐसी समस्या है, जिसकी ओर ध्यान न देना भारी भूल होगी।

केवल छोटी कक्षाओंमें ही नहीं, अपितु ऊंची कक्षाओंमें भी अध्यापक द्वारा किसी प्रश्नका उत्तर पूछे जानेपर केवल इने गिने विद्यार्थियोंको छोड़कर अधिकांश विद्यार्थियोंको सांप सूंघ जाता है। कहीं अध्यापककी दृष्टि उनपर न पड़ जाय इससे बचनेके लिए वे मौन व्रत धारण करनेवाले संन्यासियोंकी तरह अपनी गर्दन झुका लेते हैं। अध्यापक द्वारा बतायी हुई किसी बातके पल्ले न पड़ने पर भी वे उसके सम्बन्धमें स्पष्टीकरण करनेका आग्रह नहीं करते। कक्षामें ही नहीं, अपितु सामूहिक कार्यक्रमों, जैसे सांस्कृतिक खेल-कूद, मनोरंजन सम्बन्धी कार्यक्रमोंमें भी अधिकांश विद्यार्थी दिलचस्पी नहीं लेते।

विद्यार्थियों द्वारा कक्षामें सहयोग न पानेके कारणोंको आन्तरिक एवं बाह्य कारणोंमें विभाजित किया जा सकता है। दोनों कारण एक दूसरेसे सम्बद्ध हैं और एक दूसरेको प्रभावित करते हैं। आन्तरिक कारणोंमें व्यक्तित्व सम्बन्धी कारण, शारीरिक तथा मानसिक बाधा, वाक्-दोष, आत्मविश्वासका अभाव, भीरुता आदि का समावेश किया जा सकता है। बाह्य कारणोंके अन्तर्गत पारिवारिक कारण, संस्थागत कारक, विद्यार्थी शिक्षक सम्बन्ध, पाठ्यक्रम विषय, भाषा, अध्यापन-विधि, वातावरण तथा सांस्कृतिक कारणोंको रखा जा सकता है।

दूधका जला छांछ फूंक-फूंककर पीता है। प्रसिद्ध मनोवैज्ञानिक फ्रायडके अनुसार मनुष्यके भावी जीवनकी रूपरेखा उनके जीवनके प्रारम्भिक पांच वर्षोंमें बन जाती है। विकासकी प्रारम्भिक अवस्थामें जिस प्रकारके व्यक्तित्वकी नींव पड़ जाती है, उसीपर कालान्तरमें संपूर्ण व्यक्तित्व रूपी भवनका निर्माण होता है।

पारिवारिक वातावरणका प्रभाव

परिवार व्यक्तिकी सर्वप्रथम् पाठशाला है। इस परिवार रूपी पाठशालामें बच्चे जो कुछ अपने माता-पिता तथा अन्य सदस्योंसे सीख लेते हैं, वह उनके व्यक्तित्वका अभिन्न अंग बनकर उनके आगामी जीवनकी समस्त क्रियाओं तथा व्यवहारोंको प्रभावित करता है। कक्षामें सहयोगके अभावकी जड़ें मूलतः शैशवकालके पारिवारिक अनुभवोंसे प्रस्फुटित होती हैं। प्रत्येक कालकी अपनी-अपनी शारीरिक, मानसिक, सांवेगिक तथा मनोवैज्ञानिक आवश्यकताएँ होती हैं। परिपक्व और सन्तुलित व्यक्तित्वके निर्माण तथा विकासके लिए इन सबकी पूर्ति नितान्त आवश्यक है। अच्छे पारिवारिक वातावरण तथा सदस्यों मुख्यतः माता-पिताके बीच अच्छे सम्बन्धोंके अभावमें बच्चोंका उचित ढंगसे पालन-पोषण तथा समाजीकरण नहीं हो पाता। समाजीकरणके अभावमें बच्चोंके व्यक्तित्व रूपी कोमल पौधोंमें अविश्वासका दीमक लगकर उन्हें भीतर-ही-भीतर खोखला बनाता रहता है।

बच्चोंकी जिज्ञासा वृत्ति और माता-पिताका दायित्व

जिज्ञासा और उत्सुकता प्रत्येक बच्चेमें स्वाभाविक होती है। बच्चे प्रायः बातूनी स्वभावके होते हैं और अक्सर अपने माता-पिता, परिवारके अन्य सदस्योंसे तरह-तरहके प्रश्न पूछा करते हैं। कभी कभी प्रश्नोंकी

झड़ी लगा देते हैं। उनके द्वारा पूछे गये प्रश्न कभी-कभी बड़े ही जटिल होते हैं। जैसे नया बच्चा कहाँसे और कैसे आया? कुछ शिक्षित माता-पिता जिन्हें बाल-मनोविज्ञानकी कुछ जानकारी होती है, बच्चों द्वारा पूछे गये प्रश्नोंको स्वाभाविक रूपमें लेते हैं और उनका उचित ढंगसे उत्तर देकर बच्चोंकी उत्सुकता और जिज्ञासाको शान्त कर देते हैं। पर अधिकाँश अशिक्षित ही नहीं, शिक्षित माता-पिता भी इस जिज्ञासा वृत्तिको बढ़ावा नहीं देते। वे बच्चोंको बातूनी समझकर कभी-कभी इतने अधिक चिड़चिड़े हो जाते हैं कि झिड़ककर उन्हें भगा देते हैं या मार बैठते हैं। इसका परिणाम यह होता है कि बच्चोंके नये अनुभव, नये ज्ञानको प्राप्त करने, सीखने तथा वाद-विवादकी आदतपर ऐसी गहरी चोट लगती है जिसके प्रभावसे वे बड़े होनेपर भी नहीं बच पाते। प्रारम्भिक कालके इस प्रकारके पीड़ादायक अनुभवोंसे बच्चोंमें अपने विचार प्रकट करने, पूछने व सीखनेकी उत्सुकता तथा इच्छामें जंग लग जाता है। यही नहीं, इसके परिणाम स्वरूप बच्चोंमें आत्मविश्वासका अभाव तथा तनाव बढ़ता है। इससे शिक्षण संस्थाओंके सामूहिक जीवनमें बच्चोंका भली प्रकार समायोजन नहीं हो पाता।

कक्षाके अन्य विद्यार्थियों तथा अध्यापकोंकी निन्दा, हँसी, आलोचनाका केन्द्र-विन्दु बननेसे स्वयंको बचानेके लिए भी विद्यार्थी प्रायः प्रश्न नहीं पूछते। इसके अलावा यदि उन्हें कोई बात समझ नहीं आती तो वे संकोचवश उसे दुबारा समझनेका आग्रह नहीं करते।

समस्याका शारीरिक और मनोवैज्ञानिक पहलू

शारीरिक संरचना, शारीरिक तथा मानसिक रुग्णता अस्वस्थताका भी प्रभाव इस पर पड़ता है। शोध तथा व्यक्तिगत अध्ययनके आधारपर यह पाया गया है कि शारीरिक, मानसिक तथा सांवेगिक रूपसे स्वस्थ विद्यार्थियोंकी अपेक्षा असंगठित व्यक्तित्ववाले अस्वस्थ तथा रुग्ण विद्यार्थियोंमें सहयोगकी प्रवृत्तिका अधिक अभाव पाया जाता है। हृदय तथा विचारोंकी संकीर्णता भी सहयोगके प्रति उदासीनता तथा निष्क्रियताको बढ़ाती है। कुछ विद्यार्थी ऐसे भी होते हैं जो अपने ज्ञान, बुद्धि तथा कौशलका प्रदर्शन इसलिए भी नहीं करते कि इससे दूसरे विद्यार्थियोंको किसी प्रकारका लाभ न पहुँच सके। उदाहरणार्थ कक्षा दसके एक विद्यार्थीने गणितके किसी प्रकाण्ड पण्डितसे गुणा, भाग, जोड़ तथा घटानेकी बहुत ही सरल विधि सीखी थी। इस विधिकी जानकारी अध्यापकको भी नहीं थी। पर कक्षामें किसी प्रश्नका उत्तर निकालनेके लिए कहे जानेपर वह विद्यार्थी या तो साफ इन्कार कर देता था या गलत विधिसे हल करनेका प्रयास करता था। हाई स्कूलकी परीक्षा उक्त विद्यार्थीने प्रथम श्रेणीमें उत्तीर्ण की और गणितमें विशेष योग्यता प्राप्त की। उक्त विद्यार्थी परिगणित जातिका था। और बचपनमें सौतेली माता तथा पिता द्वारा सदा तिरस्कृत रहा। सौतेले भाई-बहनोंसे उसका सम्बन्ध सदा तनावपूर्ण रहा जिसके कारण उसमें उनके प्रति उत्पन्न ईर्ष्या, द्वेष, जलन और बदलेकी भावना सहपाठियोंके साथ प्रदर्शित होने लगी। प्रारम्भिक कक्षाओंके सहपाठियों तथा अध्यापकोंसे भी उसे कभी उचित मान्यता नहीं प्राप्त हुई। इस बालकके सम्बन्धमें यह घटना भी अत्यन्त महत्वपूर्ण है कि जब वह नगरपालिका द्वारा संचालित प्राइमरी स्कूलकी कक्षा चारका विद्यार्थी था तो एक बार गणित पढ़ानेवाले अध्यापक महोदयने उसे कक्षामें केवल इसलिए बुरी तरह पीटा था कि जिस प्रश्नको हल करनेमें वह परेशान थे, उसे उसने उनके पहले ही हल करके उत्तर बता दिया था।

सामूहिक भावनाका अभाव

विभिन्न आर्थिक, सामाजिक तथा सांस्कृतिक स्तरोंसे सम्बद्ध विद्यार्थियोंके बीच एकता, सहयोग तथा सामूहिक भावना पाया जाता है। इस कारण कक्षामें विद्यार्थियोंकी शारीरिक समीपता होनेपर भी उनमें मानसिक तथा सांवेगिक स्तरपर विचारों तथा भावनाओंका स्वतन्त्र प्रवाह नहीं हो पाता। इसके अलावा भाषाकी भिन्नताका भी सहयोगकी भावनापर काफी प्रभाव पड़ता है। भाषा-भिन्नताको समस्या स्नातक तथा

स्नातकोत्तर कक्षाओंमें अधिक पायी जाती है। शिक्षाका माध्यम अंग्रेजी होनेपर उन विद्यार्थियोंके सम्मुख समस्या उत्पन्न होती है जो अंग्रेजी अच्छी प्रकार बोलने और समझनेमें असमर्थ होते हैं। इसी प्रकार शिक्षाका माध्यम हिन्दी या अन्य क्षेत्रिय भाषा होनेकी दशामें उन विद्यार्थियोंको कठिनाईका सामना करना पड़ता है जिन्हें इनकी अच्छी जानकारी नहीं होती।

विद्यार्थियोंमें असहयोगकी प्रवृत्तिको रोकने और सहयोगको बढ़ानेके लिए व्यक्तित्व सम्बन्धी, मनोवैज्ञानिक, सांवेगिक, पारिवारिक और संस्थागत पक्षोंपर ध्यान देना आवश्यक है। बाल मनोवैज्ञानिक, मानव व्यवहारकी अच्छी जानकारी रखनेवाले प्रशिक्षित सामाजिक कार्यकर्ताका ज्ञान-कौशल तथा उसकी सेवाओंका उपयोग समस्याके निदान और उपचारमें काफी लाभदायक सिद्ध हो सकता है।

अभिभावकोंसे सम्पर्क अपेक्षित

समस्याके समाधानके लिए आवश्यक है कि समस्याग्रस्त विद्यार्थियोंके माता-पिता तथा अभिभावकोंसे सम्पर्क स्थापितकर उन्हें उनके बच्चोंकी जैविकीय, मानसिक, सांवेगिक तथा मनोवैज्ञानिक आवश्यकताओं, रुचियों, क्षमताओं तथा सीमाओंसे अवगत कराया जाय ताकि बच्चोंके प्रति उनके दृष्टिकोण, आचरण तथा व्यवहारमें वांछित परिवर्तन सम्भव हो सके।

माता-पिता तथा प्राथमिक स्कूलके अध्यापकको चाहिए कि वे बच्चोंकी जिज्ञासा एवं उत्सुकताको न दबाएं। बच्चोंके बातूनी स्वभावको सामान्य रूपसे स्वीकार करना चाहिए। बच्चों द्वारा प्रश्नोंकी झड़ी लगाने या ऊट-पटांग प्रश्न पूछनेकी दशामें भी आक्रोश एवं क्रोध प्रकट करने या चिड़चिड़ानेकी अपेक्षा उचित ढंगसे उन प्रश्नोंका उत्तर देकर उनकी जिज्ञासाको शान्त करनेका प्रयास करना चाहिए।

विद्यार्थी तथा शिक्षक एवं अभिभावक तथा अध्यापकके बीच स्वस्थ सम्बन्धोंके विकास और परिवार तथा विद्यालयके वातावरणमें सुधार द्वारा बच्चेके व्यक्तित्वका स्वस्थ विकास सम्भव है। सामाजिक कार्यकर्ता वातावरणको स्वस्थ बनाने तथा शिक्षकों एवं अभिभावकों अपने दायित्वसे अवगत करानेकी दिशामें काफी सहायक सिद्ध हो सकते हैं।

समस्याग्रस्त विद्यार्थियोंसे सम्पर्क स्थापितकर तथा उनके व्यक्तित्व और व्यवहारोंको प्रभावित करने वाले सांवेगिक, मनोवैज्ञानिक, सांस्कृतिक तथा सामाजिक तथ्योंकी जानकारी प्राप्तकर उनकी समस्याओंका समुचित समाधान किया जा सकता है।

सामूहिक कार्यक्रमोंका आयोजन

विद्यार्थियोंकी अवस्था एवं शारीरिक, मानसिक क्षमता तथा रुचिको ध्यानमें रखते हुए ऐसे सामूहिक कार्यक्रम चलाये जाने चाहिए जिनमें सबको भाग लेने तथा अपनी-अपनी योग्यता प्रदर्शित करनेका समान रूपसे अवसर प्राप्त हो सके। खेल तथा सांस्कृतिक कार्यक्रमोंके माध्यमसे शारीरिक विकासके साथ-साथ मानसिक विकास भी सम्भव होता है, इससे बच्चोंमें सामाजिकताकी भावनाका विकास होता है। सामूहिक कार्यक्रमों द्वारा बच्चोंमें सांवेगिक स्थिरता बनाये रखनेमें भी सहायता मिलती है।

विद्यार्थियोंके सामूहिक कार्यक्रमोंमें भाग लेनेकी भावनाको प्रोत्साहन देनेके लिए अध्यापन विधि, पाठ्यक्रम विषय तथा प्रतिदिनके अध्यापनके अतिरिक्त प्रवेश सम्बन्धी नियम तथा विधिमें भी परिवर्तनकी आवश्यकता है। इस दिशामें एक सलाहकार तथा विशेषज्ञके रूपमें सामाजिक कार्यकर्ताओंकी सेवाओंका उपयोग विशेष लाभकारी सिद्ध हो सकता है।

विद्यालयोंका पाठ्यक्रम तथा मनोरंजन एवं सांस्कृतिक गतिविधियोंका आयोजन इस ढंगसे होना चाहिए कि उससे सभी विद्यार्थियोंको शारीरिक, मानसिक, सांवेगिक, नैतिक तथा आध्यात्मिक विकासके समान रूपसे समुचित अवसर प्राप्त हो सकें।

●

बाल विकासकी समस्या—परिवार और विद्यालय

—श्री वेद प्रकाश पाण्डेय—

औद्योगिक क्रांतिके फलस्वरूप संयुक्त परिवारका रूप जाता रहा। आज एकाकी परिवारमें माता-पिता दोनों अपने जीविकोपार्जनमें लगे हुए हैं, उन्हें कार्य करनेके लिये बाहर जाना पड़ता है जिससे बाल-विकासमें अवरोध उत्पन्न हो रहा है। बालकोंकी शैक्षिक प्रगति तथा अनिवार्य आवश्यकताओंकी तरफ आज परिवारके ध्यानका अभाव है। उनका जीवन इतना व्यस्त है कि विभिन्न गतिविधियोंमें रुचि नहीं ले पाते हैं जिससे बालक विभिन्न समस्याओंसे ग्रस्त हो गया है।

कोइ भी परिवार चाहे कितना समृद्धिशाली क्यों न हो,अपने घरको स्कूल नहीं बना सकता, बाल विकासके लिए शिक्षक सम्पर्क महत्वपूर्ण स्रोत है। प्रत्येक परिवार पाठशाला नहीं बन सकता है। विद्यालयकी कुछ विशेषताएँ हैं जिनके आधारपर बालकका सर्वांगीण विकास सम्भव होता है। दोनोंमें सहयोग आवश्यक है।

विद्यालय और परिवार एक दूसरेके पूरक

अतः परिवारमें विद्यालय और विद्यालयमें परिवारके वातावरणकी आवश्यकता है जो अभिभावक-अध्यापक सम्बन्धोंके आधारपर सम्भव हो सकता है। इनका बालकके सर्वतोमुखी विकासमें महत्वपूर्ण स्थान है जिसके द्वारा बालक विभिन्न वातावरणके साथ समायोजन स्थान कर सकता है।

विद्यालय भवनकी स्थितिका बालकके शारीरिक स्वास्थ्य ही नहीं वरन् मानसिक स्वास्थ्यपर गहरा प्रभाव पड़ता है। सर्वेके आधारपर ऐसा देखा गया है कि ग्रामीण वातावरणमें बने अधिकांश विद्यालय भवन वैसे सुन्दर व व्यवस्थित आधारपर नहीं बने हैं। जैसी आवश्यकता है। उनके आसपासका वातावरण दूषित है, जहाँ गन्दे तालाब हैं और फूल पत्तियों व खेल-कूदके मैदानका प्रभाव है। मकान खुले व हवादार नहीं हैं, रोशनदानोंका अभाव है वर्षाके दिनोंमें मकान चूने लगते हैं जिससे अध्ययन-अध्यापन कार्यमें विभिन्न कठिनाइयोंको झेलना पड़ता है। हर सुविधा होते हुए भी कार्यकी अवहेलना, निरीक्षण व मार्गदर्शनका अभाव है। अतः सरकारको क्षेत्रीय आधारपर इस ओर ध्यान देना चाहिए जिससे बाल विकासमें महत्वपूर्ण परिवर्तन हो सके।

हरित क्रान्ति व श्वेत क्रान्तिसे ही बालकका विकास सम्भव नहीं है। उसके लिए विभिन्न पहलुओंका अवलोकन आवश्यक है, क्योंकि ये ही राष्ट्र-रूपी नौकाकी पतवार हैं। इनका जीवन-दर्शन ही राष्ट्रकी नीति है जिसपर देशका अन्तरराष्ट्रीय स्तरपर विकास सम्भव है। इसीलिए पंडित नेहरूने एकबार कहा था कि मैं राष्ट्रकी प्रगतिके लिए सर्वप्रथम नन्हें-मुन्ने सितारोंको चाहता हूँ, क्योंकि वही भविष्यके पथ-प्रदर्शक नजर आते हैं।

खेल-कूदका महत्वपूर्ण स्थान

बाल विकासमें खेलकूदका महत्वपूर्ण स्थान है जिसके लिए स्वतंत्र वातावरणके आधारपर बालकमें उत्साह, धैर्य, लगन, तत्परता व स्वशक्तिका विकास संभव होता है जिसका आजके विद्यालयोंमें अभाव है। विद्यालयोंमें खेल-कूद सामग्रीकी सुविधा सामान्य स्तरपर भी नहीं है जिसकी नितान्त आवश्यकता है। खेलकूद द्वारा बालकमें शारीरिक विकास ही नहीं, बल्कि मानसिक योग्यताओंका भी विकास होता है। एक लेखकने कहा है कि खेलकूद प्रतिस्पर्द्धाका स्रोत है जिसके द्वारा मानवके व्यक्तित्वका विकास होता है। खेलकूद द्वारा अनुशासनके भावका भी प्रस्फुरण होता है। व्यक्तित्व विकासकी महत्वपूर्ण कड़ी है। अतः विद्यालयोंमें मांटेसरी व किंडरगार्टन पद्धतियोंकी तरह खेल-कूदकी व्यवस्थाका रूप स्वतंत्र वातावरणके आधारपर प्रशासकीय जिम्मेदार व्यक्तियोंको करना चाहिए।

प्रारम्भसे ही बालकोंमें ऐसी कुशलताओंके विकासके लिए इस प्रकारका प्रशिक्षण दिया जाना चाहिए कि भविष्यमें समाजके लिए वेरोजगार नागरिक न बनें। वे समाजके स्वावलम्बी नागरिक बनकर अपनी प्रतिभाका विकास करें। किसी भी बालकको बचपनसे किसी भी विषयमें प्रवीण करना सम्भव नहीं है। इसके लिए हर आधारपर व्यवस्थित वातावरण होना चाहिए।

मनोरंजनकी आवश्यकता

प्रायः ऐसा देखा जाता है कि माध्यमिक विद्यालयों तककी शिक्षामें बालक १० बजेसे ४ बजे तक अपना समय अध्ययन कार्यमें लगते हैं जिससे उनमें मानसिक थकान आ जाती है । अतः मध्यावकाशमें बालकोंके लिए कुछ स्वल्पाहार एवं मनोरंजन कार्यक्रमोंकी व्यवस्था होनी चाहिए । इस आधारपर बालक थकानका अनुभव नहीं करेगा । उसकी अपने कर्तव्योंके प्रति रुचि बढ़ती जाएगी इस आधारपर बाल-विकास संभव हो सकेगा इसके अतिरिक्त सफाई, लेखन, वादविवाद इत्यादि जैसी प्रतियोगिताएँ भी माहमें होनी चाहिए जिसमें प्राप्तांक भी देने चाहिए जिनका उत्तीर्ण होनेमें स्थान हो इस आधारपर बाल-विकास संभव हो सकता है ।

पाश्चात्य देशों अमेरिका, डेनमार्क, स्वीडनमें बाल-विकासके लिए प्रायः उपर्युक्त बातोंका ध्यान व्यवस्थित आधारपर दिया जाता है ।

पाठ्यक्रमकी नीरसता

आजकी शिक्षा-प्रणालीके अन्तर्गत प्रारम्भिक एवं माध्यमिक स्कूलोंमें बालकोंपर इतने अधिक विषय थोप दिये जाते हैं कि वह प्रत्येकपर अपना ध्यान एकाग्र नहीं कर पाता है और परिणाम स्वरूप बालक विषयोंके प्रति निराशा व्यक्त करने लगता है जिससे वह उस विषयमें कमजोर हो जाता है । यह समस्या बालकके मानसिक स्तरको प्रभावित करती है । प्रारम्भिक अवस्थामें बालक अपरिपक्वावस्थामें रहता है । वह प्रत्येक विषयके प्रति पूरी जानकारी पानेमें असमर्थ रहता है । कक्षा आठके विद्यार्थीसे साक्षात्कार करनेके पश्चात उसने कहा कि हमलोगोको इतने विषय पढ़ाये जाते हैं कि हम लोग प्रत्येक विषयपर पूर्ण ध्यान देनेमें असमर्थ रहते हैं जिस कारण मैं अंग्रेजी और गणितमें कमजोर हूँ । हम लोगोंको हिन्दी, अंग्रेजी, गणित, इतिहास, भूगोल, विज्ञान, इत्यादि पढ़ना पड़ता है । इतने विषयोंकी जानकारी कैसे हो सकती है ?

अतः प्रारम्भिक शिक्षा-प्रणालीके अन्तर्गत विषयोंका संक्षिप्त होना परम अनिवार्य है जैसा प्राचीन शिक्षा-प्रणालीके अंतर्गत था । इसके अन्तर्गत विषयोंका विभाजन ऐच्छिक विषयोंके रूपमें हिन्दी, अंग्रेजी, गणित, इतिहास, भूगोल, एवं वैकल्पिक विषयोंके अन्तर्गत विज्ञान, समाज विज्ञान, समाज सेवा, मनोविज्ञान इत्यादि के विषय रखने चाहिए जिससे अध्ययनमें बालक भी अपनी रुचिका प्रयोग स्वतंत्र वातावरणमें व्यवस्थित आधारपर कर सके ।

शिक्षा जगतके अन्तर्गत आज गम्भीर समस्याओंके रूपमें अध्यापक वर्गको भी सम्मिलित किया जा सकता है । आज अध्यापकोंका सही अर्थमें अध्यापन कार्यके प्रति रुचिका अभाव झलकता है । राजनीतिसे उनका गहरा सम्बन्ध हो गया है । उनको अल्प वेतन दिया जाता है । उन्हें समाजमें पाश्चात्य देशोंकी तुलनामें मान्यता कम मिली है । उनके जीवनमें कलहकी स्थिति विद्यमान है जिससे वे अध्यापन कार्यमें पूर्ण रुचि नहीं ले पाते हैं । अतः शिक्षकोंका नैतिक कर्तव्य है कि वे अपने कर्तव्योंका उचित निर्वाह करें । अध्यापन कार्यके प्रति अपना उत्तरदायित्व समझें । केन्द्रीय तथा राज्य सरकारोंको चाहिए कि इनके वेतनकी ओर महत्वपूर्ण ध्यान दें क्योंकि इन्हींके निर्देशन व मार्ग-दर्शनके आधारपर राष्ट्रकी प्रगति होती है । अतः इस क्षेत्रमें सरकारका ध्यान परम अनिवार्य है । आर्थिक विषमता जीवनको संकीर्ण बना देती है । सदैव निराशाका वातावरण विद्यमान रहता है । अतः वेतनमें वृद्धि व समुचित सुविधाओंकी व्यवस्था परम अनिवार्य है जिससे अध्यापक अध्यापन कार्यमें सफल हो सकें समाजके शिक्षित वर्गका परम कर्तव्य है कि वह भी अध्यापककी समस्याओंकी ओर ध्यान दे, उनका आदर व सम्मान करे जिसे शिक्षा जगतमें प्रगति सम्भव हो सके ।

विद्यालय समाजके पारस्परिक सम्बन्धकी पूर्ण आवश्यकता है जिसे बालकके सम्पूर्ण व्यक्तित्वका विकास हो सके । इसके लिए अभिभावक-अध्यापक सहयोगकी पूर्ण आवश्यकता है । दोनों बाल विकासके लिए एक सिक्केके दो पहलू हैं । अतः 'परिवार विद्यालयके लिए और विद्यालय परिवारके लिए' की भावना अभिभावकों और अध्यापकों में होनी चाहिए । इस प्रकार मानव कल्याण संभव हो सकेगा और समाज कल्याणकी दिशाको महत्वपूर्ण बल मिलेगा । ●

राज्यमें खाद्यान्न एवं आवश्यक उपभोक्ता वस्तुओंके सुलभ उपलब्धिके लिए

राज्यके शासनकी कार्य कुशलता एवं उसकी क्षमता बढ़ानेके लिए

उत्तर प्रदेश शासन कृत संकल्प है .

● सत्ताका विकेन्द्रीकरण किया गया है। विभागाध्यक्षोंको बहुतसे प्रशासनिक तथा वित्तीय अधिकार प्रतिनिहितकर दिये गए हैं। इससे शासनके कार्यमें गति आएगी।

● सूखा ग्रस्त क्षेत्रोंमें आपात कालिक कार्यक्रमको लागू करनेके लिए राज्य स्तरपर एक कार्यान्वयन समितिकी स्थापना की गयी है।

● अनावृष्टिको ध्यानमें रखते हुए राजकीय साधनोंसे दिये जाने वाले पानीके मूल्यमें कमी कर दी गयी है। एक रुपयेमें १२ हजार गैलन ट्यूबवेल पानीकी जगह अब १८,००० गैलन दिया जा रहा है।

● धानपर बिक्रीकर समाप्त कर दिया जा रहा है।

● कानपुर, लखनऊ, इलाहाबाद, वाराणसीके बड़े उपभोक्ता केन्द्रोंके खुले बाजारोंमें गेहूँ आसानीसे उपलब्ध हो सके, इसलिये राज्यके ३० जिलोंसे गेहूँके लाने ले जानेपर से नियन्त्रण हटा लिया गया है।

● अब इन जिलोंमें फुटकर विक्रेता (रिटेलर्स) १०० क्विंटल गेहूँ खरीद सकते हैं और २०० क्विंटलका स्टाक रख सकते हैं।

● उपभोक्ताको खुले बाजारमें आसानीसे गेहूँ उपलब्ध हो सके, इसलिए राज्यके ३७ जिलोंमें गेहूँकी उगाहीमे ढिलाईकर दी गयी है। अब गेहूँकी उगाही राज्यके १७ पश्चिमी जिलोंमें सीमित रहेगी।

● मेजा (इलाहाबाद), चौगढ़ (वाराणसी) और दुद्धी (मीरजापुर) की विषम स्थितिको देखते हुए इन स्थानोंमें राशनकी मात्रा प्रति यूनिट बढ़ाकर ८ किलोग्राम कर दी गयी है।

● विश्वविद्यालयोंकी परीक्षायें जो स्थगित कर दी गयी थीं वे शान्ति-पूर्वक सम्पन्न की गयी हैं।

● लखनऊ, इलाहाबाद, कानपुर, गोरखपुर और मेरठ विश्वविद्यालयोंके लिए प्रशासकीय और विद्वत समितियोंका गठन किया गया है। प्रशासकीय समिति कोर्ट और कार्य-कारिणी परिषद्का कार्य करेगी। विद्वत समिति शैक्षिक परिषद्का कार्य करेगी।

राष्ट्रपति शासन केवल लोकप्रिय शासनका मार्ग प्रशस्त करता है।

(सू० वि० उ० प्र० द्वारा प्रसारित–विज्ञापन सं०–३)

वर्तमान परीक्षा प्रणाली समयकी कसौटीपर

— सुश्री आशारानी व्होरा —

◆

परीक्षा केवल छात्र जीवनमें ही नहीं होती, जीवनका हर क्षेत्र व्यक्तिके लिए परीक्षा-स्थल है। अतः परीक्षाके नामसे घबराने या चिढ़नेकी आवश्यकता नहीं। प्राचीन कालसे आजतक छात्र जीवनमें परीक्षाका किसी न किसी रूपमें अस्तित्व रहा है। परीक्षाके माध्यमसे ही छात्रकी शैक्षणिक योग्यता, उसके मानसिक स्तर, उसकी रुचियों, कमियों व सफलताओंको जाना जाता है। ऊपरी कक्षामें प्रवेश परीक्षाके आधारपर ही होता है यानी सफलताकी हर सीढ़ीपर कोई न कोई परीक्षा देनी होती है। इसके अलावा अध्यापककी योग्यता और परिश्रमका माप भी परीक्षा द्वारा ही संभव है। अतः परीक्षाके महत्वसे इंकार करना या वर्तमान परीक्षा प्रणालीको बिल्कुल समाप्त करनेकी बात एकांगी दृष्टिकोण है जब तक कोई बहुत अच्छा तकीनकी विकल्प सामने न हो, पूर्व प्रणालीकी त्रुटियोंका विश्लेषणकर संशोधनोंकी बात सोची जा सकती है।

परीक्षा प्रणालीकी त्रुटियाँ

सम्पूर्ण व्यक्तित्वकी उपेक्षा : वर्तमान परीक्षा प्रणाली छात्रकी व्यक्तिगत रुचि, कल्पना-शक्ति, उसके नैतिक गुणों, नेतृत्वके गुणों, अध्यवसाय और श्रमनिष्ठाकी कोई सूचना नहीं देती। उससे यह बिल्कुल पता नहीं चलता कि सत्यपर निबंध लिखनेवाला कितना सत्यवादी है, वीरताका बखान करनेवाला स्वयं बिल्लीसे तो नहीं डरता या श्रमकी महत्तापर लेख लिखनेवाला छोटा-मोटा काम भी नौकरोंसे या मांसे तो नहीं करवाता ? हमारी शिक्षा प्रणाली व्यक्तिके चरित्र-निर्माणकी जिम्मेदारी नहीं लेती और परीक्षा-प्रणाली इसकी कोई जांच नहीं करती।

सहायक पुस्तकोंका अभिशाप : भाग्यपर निर्भरता या सट्टेबाजी, गेसपेपर, गाइड, कुंजी आदिमें से परीक्षार्थी कुछ प्रश्न चुन लेते हैं या अध्यापक उन्हें महत्वपूर्ण (?) प्रश्न गिना देते हैं और छात्र उनके उत्तर तैयारकर लेते हैं। कहीं-कहीं तो ट्यूशनपर निर्भर करनेवाले अध्यापक स्वयं ये उत्तर तैयार करके अपने छात्रोंको बता देते हैं। यदि अनुमान सही उतर गया तो ठीक वरना गये। यह भी हो सकता है कि जिस विषयमें छात्र अनुत्तीर्ण हुआ है, उसमें उसकी रुचि न हो और उसे छोड़ अन्य विषयोंमें वह सामन्यसे ऊपर या मेधावी हो। यह भी हो सकता है कि उस दिन, उस समय किसी कारणवश उसकी शारीरिक मानसिक स्थिति ठीक न हो (बहुधा परीक्षाके भयसे भी मनपर विपरीत प्रभाव पड़ता है) और परचे बिगड़ जाएं। अनेक बार योग्य छात्रोंके फेल और अयोग्य छात्रोंके पास हो जानेके यही कारण होते हैं।

परखका गलत आधार : किसी विद्यार्थीकी स्मरण-शक्ति तीव्र या मंद होती है। प्रायः रटकर याद रख लेने वाले विद्यार्थी मेधावी नहीं होते और मेधावी छात्रोंकी रुचियां व्यापक होनेसे उनकी स्मरण-शक्ति किन्हीं विषयमें तीव्र नहीं रह पाती। आजकी परीक्षा प्रणालीकी यह तीसरी मुख्य त्रुटि है कि यह मात्र स्मरणशक्तिपर आधारित है। छात्रको स्वयं अध्ययन-अनुसंधान और मौलिक अभिव्यक्तिके लिए प्रोत्साहित नहीं करती।

पक्षपातकी गुंजाइश : प्रायः परीक्षा प्रणालीमें भ्रष्टाचारके घुसपैठकी गुंजाइश है। छात्र-अध्यापक, स्कूल कर्मचारी, परीक्षा अधिकारी और परीक्षक सभी कुचक्रमें फंसे हैं। छात्र परीक्षा पास करने और अध्यापक अपने प्रिय छात्रोंको पास करवानेमें अनुचित साधनों और पक्षपातका सहारा लेते हैं। कुछ निडर, उद्दण्ड और दुस्साहसी प्रकृतिके छात्र जब पैसे और अधिकारके दुरुपयोगपर अमीर छात्रों और अध्यापकोंके नातेदारोंको अनुचित लाभ लेते देखते हैं तो उनमें बदलेकी भावना, आक्रोश और विद्रोह फूटता है तब वे परीक्षाओंका बहिष्कार करवाने, तोड़फोड़ करने, और छुरेबाजीतक करनेपर उतारू हो जाते हैं। यहां तक कि परीक्षा केन्द्रोंमें अब शिक्षकों-निरीक्षकोंकी सुरक्षा ही खतरेमें पड़ गयी है। इस तरह कलका नागरिक आज ही अनीति और भ्रष्टाचारकी राह सीखकर देश और समाजको उस ओर

ले जानेमें क्यों प्रवृत्त नहीं होगा ?

दोषपूर्ण मूल्यांकन विधि : मूल्यांकन विधि भी दोषपूर्ण है। परीक्षककी पेपर-जांचपर 'मेरा पड़ोस', 'मेरा विद्यालय' 'मेरा रिश्तेदार' तो प्रभाव डालते ही हैं, सिफारिश और रिश्वत भी उसपर गहरा असर करती हैं। इन सबके अलावा उसकी अपनी मानसिक, स्थिति भी। यदि परीक्षकका 'मूड' अच्छा है तो अपेक्षाकृत कम योग्य विद्यार्थी भी अधिक नम्बर ले जाता है जबकि खराब 'मूड' में योग्य विद्यार्थियोंके साथ भी अन्याय हो जाता है।

विद्यार्थी जीवकोपार्जन योग्य नहीं बन पाता

अन्तिम किन्तु सर्वाधिक महत्वपूर्ण बात है 'शिक्षाका अर्थ जीवनकी तैयारी' का वर्तमान परीक्षा प्रणाली कोई समुचित उत्तर नहीं देती। सात-आठ या दस प्रश्नोंमेंसे पांच प्रश्नोंके ठीक उत्तर लिखवाकर क्या हम मान लें कि विद्यार्थी सफल है या जीवनके हर क्षेत्रमें सफल होगा ? एक इंजीनियरिंगके छात्रने पुलका नक्शा ठीक बना दिया तो क्या इस बातकी गारंटी हो गयी कि वह पुल भी ठीक बनवा देगा ? ठेकेदारोंको सीमेंटमें अधिक रेत नहीं मिलाने देगा या सभी तकनीकी बातोंपर सूक्ष्मतासे ध्यान देगा ? शिक्षाके व्यावहारिक और नैतिक पक्षकी उपेक्षाका परिणाम आज चारों ओर सामने नजर आ ही रहा है।

समान स्तर अपनाना असम्भव

वर्तमान परीक्षा प्रणालीकी निरर्थकता इस बातसे भी सिद्ध हो जाएगी कि एक ही कापीपर विभिन्न शिक्षक अलग-अलग स्तरोंके अंक प्रदान करेंगे। ऐसा इसलिए कि मानव मस्तिष्ककी जांचकी किसी सही वैज्ञानिक तुलाका निर्माण अभी नहीं हो पाया है। आगे भी होगा, ऐसी संभावना नहीं दीखती। कम्प्यूटर हिसाब-किताब भले ही सही-सहीकर दें, मनुष्यकी बुद्धि और वैचारिक शक्तिकी सही जांच कभी नहीं कर सकते। मनोवैज्ञानिक और मनोविश्लेषकों द्वारा की जानेवाली बुद्धिलब्धि परीक्षा भी अधिकतर कल्पना और अनुमानोंपर आधारित होती है। किन्तु क्या इसी कारण छात्रोंके भविष्यके साथ खिलवाड़ करने दिया जाय ? द्वेष-भावना, पक्षपात, अहं और हीनभाव, अस्वस्थ प्रतियोगिता, व्यर्थकी चिन्ता, ग्लानिसे स्वास्थ्यकी हानि तथा आत्महत्या तक इस दोषपूर्ण शिक्षा-प्रणालीके ही भयावह परिणाम हैं। गलत मूल्यांकन न जाने कितनी प्रतिभाओंको नष्ट करनेके पापका भागी बन चुका है और अनुचित पक्षपात न जाने कितने अयोग्य व्यक्तियोंको समाजकी आंखोंमें धूल झोंकनेके लिए ऊंचे पदोंकी सीढ़ियोंपर चढ़ा चुका है। विद्रोह और असंतोषकी चिनगारी यहींसे फूटती है। फिर धीरे-धीरे सारा समाज इसकी लपेटमें आ जाता है।

सुधारके लिए कुछ सुझाव

इस तरह इतनी सारी व्याधियोंकी शिकार वर्तमान परीक्षा प्रणालीमें सुधार किये बिना काम चलेगा नहीं। संशोधनके लिए निम्न उपाय सुझाये जा सकते हैं : परीक्षामें मूल्यांकन विधि ऐसी हो कि विभिन्न परीक्षकों द्वारा विभिन्न समयोंपर जांचनेपर भी उत्तर पुस्तिकाओंके अंकोंमें बहुत अन्तर न आ सके। अन्तर होगा निश्चित ही, लेकिन इतना न हो कि डिवीजनको लांघ सके।

दैनंदिन कार्य, साप्ताहिक व मासिक कार्य, गृह कार्य प्रयोगिक कार्य, रुझान, मौलिक सूझ, श्रमनिष्ठा, चरित्र-व्यवहार सभी बातोंको ध्यानमें रखते हुए कक्षोन्नतिकी जाए। लिखित परीक्षाके साथ मौखिक और व्यावहारिक परीक्षाएं भी हों। राष्ट्रीय भावना, सामाजिक दायित्व, सामूहिक जीवनकी वृत्तियां, सहअस्तित्व, सहयोग, नेतृत्व, कला-प्रतिभा, लेखन-प्रतिभा आदि सभी बातें मूल्यांकनमें सम्मिलितकी जानी चाहिए।

रटनेकी घातक प्रवृत्तिको रोकनेके लिए पुस्तकीय ज्ञानपर आधारित मौलिक किस्मके प्रश्न पूछे जाएं और उत्तर पुस्तिकामें मौलिक अभिव्यक्तिको ऊंचा स्थान दिया जाय। कुंजियोंपर रोक लगाई जानी चाहिए और पुस्तक हाथमें देकर अपनी योग्यता व अनुसंधानवृत्तिसे प्रश्नोंके उत्तर उसमेंसे खोजनेकी प्रणाली विकसित की जाय। प्रश्न सीधे न हों, पर पुस्तकमें से खोजकर उनके उत्तर निकाले जा सकें, ऐसी व्यवस्था छात्रोंको पूरी पुस्तक पढ़ने और उसमें से उत्तर खोजनेमें बाध्य करेगी। इस तरहके अभ्याससे उनका सामान्य ज्ञान बढ़ेगा और उनमें आत्मविश्वास जाग्रत होगा। यह सोचना गलत है कि पुस्तक सामने होगी तो अयोग्य छात्र भी परीक्षा पासकर लेंगे। बिना अध्ययन किये नकल करके परीक्षा पास करनेकी कुप्रवृत्तिको रोकनेका इससे अच्छा उपाय दूसरा न होगा।

[शेष पृष्ठ १३ पर]

बच्चोंमें आलस्यकी प्रवृत्ति

—श्री राजेन्द्र कुमार—

अमरीकाके एक प्राध्यापक एम० वी० ओशिया अपनी पुस्तक "फाल्ट्स आफ चाइल्डहुड एण्ड यूथ" (बाल्यावस्था एवं किशोरावस्थाके दोष) में लिखते हैं—"एक बालक, शारीरिक और मानसिक रूपसे पूर्ण स्वस्थ होते हुए भी स्कूलके कार्यमें सदैव पिछड़ा रहता था। जब उसके माता पिताका ध्यान इस ओर आकृष्ट किया गया तो पता चला कि उस बालकमें दो बुरी आदतें थीं। एक तो यह कि वह किसी भी कामको समयपर अथवा उत्साहपूर्वक नहीं करता था, दूसरे खानेमें भी अनियमित था अर्थात् जब जो चाहता, खा लेता था। किसी भी कार्यको उत्तम रीतिसे करनेकी आकांक्षा वह खो चुका था। कारण यह था कि सम्यक रूपसे कार्य करनेकी उचित शिक्षा उसे नहीं दी गयी थी और न उसके अन्दर इस बातका चाव पैदा किया गया था कि वह अपने कार्यक्रम द्वारा अपनी शारीरिक क्षमताओंका अधिकसे अधिक लाभ उठा सके। उसमें 'महत्वाकांक्षा' नामकी चीजका एकदम अभाव था। उसे तनिक भी इस बातकी चिन्ता नहीं थी कि उसके विषयमें कोई क्या सोचता है, कोई उसकी प्रशंसा करता है या नहीं।"

श्री एम० वी० ओशिया द्वारा जैसे बालकका उदाहरण प्रस्तुत किया गया है वैसे बालकोंको खोजनेकी आवश्यकता नहीं है। अनेक बिना खोजे मिल जायँगे। खोजनेकी आवश्यकता है उन कारणोंकी, जो एक सामान्य बालकको उपयुक्त प्रकारका बालक बनानेमें योग देते हैं।

अच्छी आदतें : सफल जीवन

बाल्यावस्थामें बालकके स्वभाव निर्माणकी ओर बहुत ही कम ध्यान दिया जाता। मनमानी और अनियमित क्रियाओंसे उन्हें बचानेका प्रयास नहीं होता। प्रायः अभिभावक यह सोच लेते हैं, "बच्चा ही तो है, जिन कार्योंमें उसे खुशी मिलती है, करने दो, समझ आनेपर खुद ही संभल जाएगा।" ऐसा सोचना, बच्चोंको अपनेमें बुरी आदतोंकी नींव रखनेकी खुली छूट देना है। वस्तुतः आदतोंसे ही आदमी बनता है। भली आदतोंकी ओर बच्चेको प्रेरित कीजिए, वह भला आदमी बनेगा। भली आदतें डालनेसे प्रायः आलस्य स्वतः जाता रहता है।

बहुतसे बालकोंकी शारीरिक शक्तिमें कुछ गंदी आदतोंके कारण ही ह्रास होता है। इसके विपरीत बच्चोंका स्वस्थ स्वभाव आगे चलकर उनकी कार्यक्षमताको बल देता है। अतः बच्चोंको आहार आदिकी समुचित सुविधाएं देनेके साथ-साथ उनकी प्राकृतिक क्रियाओंको भी नियमितता देनेका प्रयास करना चाहिए। यदि नहाने, पानी पीने, मलोत्सर्ग करनेसे लेकर सोने-जागने तककी विभिन्न प्राकृतिक क्रियाओंमें जरा भी उपेक्षा बरती गयी तो शरीरके अन्दर विष बनने लगते हैं और कार्यक्षमताके लिए बालक पर्याप्त बल अर्जित नहीं कर पाता है।

कारणोंकी जाँच आवश्यक

बहुधा देखा गया है कि कुछ माता-पिता बालकके आलसी होनेकी शिकायत करते हैं, डाँट-डपटसे काम लेते हैं। फिर भी बालक क्रियाशील नहीं हो पाता, चाहनेपर भी नहीं हो पाता क्योंकि उसके आलस्यका कारण बाहर नहीं, उसके अन्दर होता है। यानी अन्दरसे जिस स्फूर्ति, जिस शक्तिकी उसे जरूरत होती है, वह किन्हीं कारणवश उसे नहीं मिल पाती। इसलिए समझदार माता-पिताको चाहिए कि अपने बालकके आलस्यका रोना रोनेसे पूर्व यह देखें कि उसे किसी प्रकारका शारीरिक कष्ट तो नहीं है।

एक निष्क्रिय बालकको मनोवैज्ञानिक उपचारके लिए लाया जानेपर मानसिक चिकित्सकने पहले उसकी डाक्टरी परीक्षा करवाई। पता चला कि बालकको 'एडीनायड्स' नामक गलेका रोग था। इस रोगके कारण उसकी श्वसन-प्रणालीमें व्याघात पड़ता था

और रक्त-शुद्धिके लिए आक्सीजन पर्याप्त मात्रामें उसके शरीरमें नहीं पहुंच पाती थी। परिणामतः उसके अन्दर लगातार 'विष' जमा होते रहे और उन्होंने बालककी शक्तियोंको निष्क्रिय कर दिया।

इसी प्रकार, एक शिक्षित और सम्पन्न परिवारका एक बालक एकदम आलसी सा लगता था। परन्तु जब उसके गलेकी गिल्टयां निकाल दी गयी तो वह दूसरे बच्चों जैसा ही चुस्त और फुर्तीला हो गया।

'हारमोन्स' की आनुपातिक अव्यवस्था भी कुछ कम खतरनाक नहीं होती। विशेष रूपसे देखा गया है कि यदि 'थायराइड' नामक ग्रन्थि अधिक सक्रिय हो जाय तो बालकका मस्तिष्क ठीक काम नहीं कर पाता है और वह स्नायविक दुर्बलताका शिकार हो जाता है। इसी प्रकार 'थायराइड' एकदम निष्क्रिय हो जाय तो बालक आलसी और ओजहीन हो जाता है।

इसलिए बच्चोंमें आलस्यके लक्षण प्रकट होते ही उनकी ओर विशेष ध्यान दिया जाता चाहिए और आवश्यकता पड़नेपर अविलम्ब उतके शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्यकी जाँच करानी चाहिए। और कहनेकी आवश्यकता नहीं कि बच्चोंमें आरम्भसे, स्वच्छता और स्वास्थ्यकी अच्छी आदतोंको विकसित करनेका प्रयास होना चाहिए। मुख और दांतोंकी सफाईसे लेकर छींकने और खाँसने तकका शिष्टाचार सिखा देना, प्रत्येक माँ-बाप, अध्यापक और बालसेविकाका कर्त्तव्य है।

अभिरुचिका विकास

यदि बालक खेल-कूद आदिमें सामान्य बालकोंकी ही तरह हो, किन्तु कामसे जो चुराता हो तो इसका तात्पर्य यह हो सकता है कि उसमें शारीरिक दोष कोई नहीं है, बल्कि कार्यके प्रति उसमें रुचि पैदा करनेकी आवश्यकता है। यह कार्य तभी संभव है जब बच्चेके व्यवहारका सूक्ष्म निरीक्षण करते हुए उसकी स्वाभाविक अभिरुचियोंका पता लगाया जाय। यदि बच्चेकी रुचिके अनुसार ही उसे दिये जानेवाले कार्यका चयन किया जाये तो कोई कारण नहीं कि हमें निराश होना पड़े। इसके अलावा, यदि किसी ऐसे कार्यमें बच्चेको लगाना ही हो, जिसमें उसका मन न लगता हो या कम लगता हो तो पहले बच्चेमें उस तरहके कामके अनुकूल नयी अभिरुचि पैदा कीजिए, ऐसे कारक उपस्थित कीजिए जो उस कार्यको बच्चेके लिए आकर्षक बना सके।

अपनी बातकी पुष्टिके लिए हम बालक चार्ल्स डार्विनका उदाहरण ले सकते हैं। डार्विन बाल्यावस्थामें कुछ आलसी था। पाठशाला जाता था, लेकिन पढ़ाई-लिखाईमें एकदम 'लिख लोढ़ा पढ़ पत्थर'। कक्षाकी कैद और पाठमें खोपड़ी मारनेसे उसे जंगलोंमें टहलना ज्यादा अच्छा लगता था। पिता डार्विनको डाक्टर बनानेका स्वप्न देख रहे थे और डार्विन था कि उसे पाठशाला फूटी आँख न सुहाती थी। पिताने उसे एक दूसरी शाला में यह सोचकर भर्ती कराया कि शायद नये माहौलमें उसका मन रम जाय। इस शालाके अध्यापकोंमेंसे एक प्राध्यापक हेस्लो बहुत बड़े मनोवैज्ञानिक थे। उन्होंने बालक डार्विनकी स्वाभाविक रुचिका पता लगा लिया और उसके घर भेजा कि वह पादरी या डाक्टर तो नहीं बन सकता, हाँ प्रकृति-विशेषज्ञ अलबत्ता बन सकता है। डार्विनको रुचिका विषय मिल गया और अपने अभिलषित विषयके क्षेत्रमें जो सफलता उसे मिली, वह विश्वविदित है।

कितने ही बालक ऐसे हैं जो वास्तवमें आलसी नहीं होते, उनकी क्रियाशीलता सुप्त भर रहती है और जहाँ उनको अपनी रुचिके अनुकूल क्षेत्र मिला, वहीं इस सुप्तावस्थाका अन्त हो जाता है। उनमें रचनात्मक क्षमताके चिह्न प्रकट होने लगते हैं। हो सकता है, आपके बेटे (जिसे आप आलसी समझते हैं) के ऊपर भी वही बात चरितार्थ होती हो, जो ऊपर चार्ल्स डार्विनके बारेमें कही गयी है। ऐसी स्थितिमें आप प्राध्यापक हेस्लो की तरह दूरदर्शितासे काम लेकर अपने बेटेको महान बना सकते हैं।

यानी, अन्तमें फिर—सबसे ज्यादा महत्वपूर्ण हो उठता है आपका दायित्व, किन्तु इस संबंधमें भी एक बात विशेष ध्यान देने योग्य है और वह है, माता-पिताका अपने बच्चोंसे पूर्ण मेलजोल और सहयोग। बालक भी

सामाजिक होता है। वह किसी कार्यमें अकेलापन बर्दाश्त नहीं कर पाता है। यदि माता-पिता और बाल-सेविका भी उनके कार्यमें दिलचस्पी लें तो बच्चोंको कार्यमें ज्यादा आनन्द आने लगता है। उन्हें यह नहीं महसूस होने पाता कि किसी कार्य विशेषमें उन्हें अकेला छोड़ दिया गया है।

पारस्परिक सहयोगके लाभ

माता-पिता और बच्चोंके पारस्परिक सहयोगके अनेक लाभ हैं। सबसे बड़ी बात यह है कि यह सहयोग वह कड़ी है जो बच्चों और माता-पिताके हृदयोंमें तादात्म्य स्थापित करती है। अक्सर माता-पिता बच्चोंके भविष्यमें तरह-तरहकी आशाएँ तो करते हैं, किन्तु इस दिशामें उन्हें अग्रसर करनेके लिए कोई ठोस कदम नहीं उठाते। ऐसेमें यदि उन्हें निराश होना पड़े तो दोष स्वयं उन्हींका है। बच्चोंको सच्चे और धैर्यशील पथ-प्रदर्शक की आवश्यकता होती है। भला माता-पिता, अभिभावकों और अध्यापकोंसे बढ़कर सच्चा और धैर्यशील पथ-प्रदर्शक दूसरा कौन हो सकता है?

किसीने कहा है कि पुनर्निर्माणकी अपेक्षा निर्माण ज्यादा सरल होता है। यदि माता-पिता आरंभसे ही इस बातकी चेष्टा करें कि उनकी सन्तान अच्छी बने तो बादमें उन्हें पछतावा न करना पड़े। और न ज्यादा नियन्त्रण करना पड़े। जब बालक बिगड़ गया तो उसको सुधारना असम्भव भले ही न हो, कठिन जरूर होता है। इसलिए प्रारम्भसे ही बच्चोंको आलस्यहीन और सदाचारी बालक बननेका मौका दें। बच्चे माता-पिताकी हर हरकतको बड़े गौरसे देखते हैं। जिस प्रकारका आचरण माता-पिताका होता है, वैसा ही आचरण बच्चे अपना लेते हैं। यदि आपके बच्चे पुरुषार्थी और चरित्रवान बनें तो आपको चाहिए कि आप अपना जीवन पुरुषार्थके साँचेमें ढाले और सदाचारके नियमोंका पालन करें। निश्चित जानिए आपके बच्चे आपकी आशाके अनुरूप पुरुषार्थी और चरित्रवान बनेंगे।

[पृष्ठ १० का शेषांश]

परीक्षकोंके लिए विद्यार्थीका विश्वास जीतना भी आवश्यक है, निस्सन्देह आज की स्थितिमें यह कठिन है। क्योंकि विश्वास सामूहिक रूपसे उठ चुका है। फिर भी 'मूड', सिफारिश आदि बातोंसे ऊपर उठनेपर कोई कारण नहीं कि कुछ वर्षोंके न्यायपूर्ण परीक्षाफलके बाद यह फिरसे कायम न हो। परीक्षाकी कापियोंको पैसे गिनकर जांचना, अपनी मूडके अनुसार जांचना या ऐसे न्यायिक निर्णयोंके क्षणोंमें निजी स्वार्थोंको बीचमें आने देना एक नैतिक अपराध है, सामाजिक अपराध है और राष्ट्रीय अपराध है। शिक्षक और परीक्षकका कार्य एक पेशा मात्र नहीं, राष्ट्रकी महत्वपूर्ण भूमिका है, ऐसा मानकर चलनेसे ही इस बुराईका निराकरण संभव है।

मूल्यांकन अंकों द्वारा न करके केवल श्रेणियों द्वारा किया जाय तो छात्रोंमें द्वेष भावना, अस्वस्थ प्रतियोगिता और हीनताकी भावनाको कुछ अंशों तक रोक जा सकता है।

स्मरणशक्तिकी माप केवल मौखिक लिखित परीक्षा ही नहीं होती। उसे अन्य तरीकोंसे भी आंकना और विकसित करना चाहिए। पूरे वर्षके पाठ्यक्रममें समय-समयपर स्मृति टैस्ट रखनेसे छात्रोंकी स्मरण शक्तिका विकास होगा। पाठ्येतर गतिविधियाँ हों, पर इतनी मात्रामें नहीं कि उनके अध्ययन और ज्ञानार्जनमें बाधा पड़े। अच्छा तो यह होगा कि उन्हें पाठ्यक्रमका अंग बनाया जाए और ज्ञानार्जनका साधन। इस तरह वे व्यक्तित्वके सर्वांगीण विकासमें सहायक हो सकेंगी और और विद्यार्थी अपने पाठ्यक्रममें रुचि भी ले सकेंगे।

राष्ट्रीय प्रतिभाको निखारनेके लिए छात्रोंको सामाजिक दायित्व चेतना और राष्ट्रीय भावनाको भी मूल्यांकनकी कसौटीपर कसा जाना चाहिए कि देशको अच्छे नागरिक मिल सकें। अच्छा हो, इक्का-दुक्का आयोगोंकी रिपोर्टोंसे ऊपर उठकर इन व्यापक प्रश्नोंपर देशके शिक्षाशास्त्री और समाजशास्त्री मिलकर विचार करें।

आय-कर दाता!

आय-कर विभाग ने प्रत्येक आय-कर दाता के लिये एक

स्थायी लेखा नम्बर

नियत कर दिया है

ऐसा यह सुनिश्चित करने के लिये किया गया है कि निर्धारितियों से प्राप्त भुगतान के चालान, ब्योरों और अन्य सभी चिट्ठी पत्रियों को ठीक तरह से दर्ज किया और पत्रावली में रखा जा सके। अगर, आपको गलती से दो स्थायी लेखा नम्बर मिल गये हों या कोई नम्बर नहीं मिला हो तो कृपा करके अपने कर निर्धारण आय-कर अधिकारी/आयकर आयुक्त से एक नम्बर रद्द करने को या एक ही नम्बर नियत करने को कहिये। कृपया अपने आय के ब्योरों, चालानों आदि पर अपना सही स्थायी लेखा नम्बर अवश्य लिखिये ताकि विभाग आपकी अच्छी सेवा कर सके।

निरीक्षण निदेशालय
(गवेषणा, आंकड़े और प्रकाशन)
नई दिल्ली

davp 73/167

बधिर बच्चेकी शिक्षा

—श्री राधेश्याम यादव—

◆

घरमें बच्चा एक खास उम्र तक ही रहता है और एक समय आता है जब उसे किसी स्कूलमें भेजनेके बारेमें सोचना पड़ता है। घरमें रहने, खाने-पीने, उठने-बैठने, खेलने-कूदने इत्यादिके बीच बच्चा जो भी सीख सकता है, वह लगभग सीख चुका होता है। अब उसे बाहरकी दुनिया और समाजमें जाने लायक एक विशेष प्रकारकी शिक्षाकी आवश्यकता होती है, ऐसी शिक्षा जो उसे बाहरके लोगों और अपने व्यवसायसे परिचित करे। कुछ न कुछ काम बच्चेको सीखना पड़ेगा। स्कूलकी शिक्षा इन्हीं सब जरूरतोंको पूरा करनेके लिए होती है। बधिर स्कूलोंमें इसीलिए बोलना, दूसरोंके बोलनेको समझना या लिपरीडिंग, इशारे और कुछ न कुछ काम, जैसे बुनाई, कढ़ाई, फर्नीचर बनाने या और फायदेवाले काम जिन्हें कि एक बधिर आसानीसे कर सकता है, सिखाये जाते हैं।

विशेष सावधानीकी आवश्यकता

बधिर स्कूलोंमें अक्सर बधिर शिक्षाके विशेषज्ञ होते हैं जो अपने-अपने विभागका काम अच्छी तरह जानते हैं लेकिन मुश्किल अक्सर वहाँ आती है जहाँ साधारण स्कूलोंमें सुननेवाले विद्यार्थियोंके साथ ही बधिर बच्चोंको भी बैठना पड़ता है और वही विषय लेने पड़ते हैं जो कि सुननेवाले विद्यार्थी लेते हैं। साथ ही साथ पढ़ाईका ढंग बधिरोंके लिए भी वही होता है जो सुननेवालोंके लिए इस्तेमाल किया जाता है। ऐसी परिस्थितिमें बधिर बच्चेके लिए सारी बातें समझना और सुननेवाले लोगोंके साथ-साथ चलना मुश्किल हो जाता है। चूंकि सुननेवाले विद्यार्थी अपनी सुननेकी क्षमताके कारण पढ़ाईकी बातें बधिरोंसे जल्दी सीखते हैं, इसलिए वे बधिरोंसे आगे हो जाते हैं और बधिर न सुननेके कारण वही बात धीरे-धीरे सीखते हैं, इसलिए पिछड़ जाते हैं। बधिरोंका यह पिछड़ना उनके ऊपर बहुत बुरा असर डाल सकता है कि वे शायद पढ़ना छोड़ बैठें या स्कूलमें बुरे ढंगसे व्यवहार करने लग जायँ। हो सकता है उनमें अपने जीवनके प्रति एक निराशका भाव भी उत्पन्न हो जाय और वे एक हताश व्यक्तिके रूपमें बड़े हों। इसलिए यदि बहरे और सुननेवाले बच्चोंको एक साथ पढ़ाया जाता है तो स्कूलके अध्यापकोंका फर्ज है कि वे बधिर बच्चों पर विशेष ध्यान दें और उनकी अलगसे मदद करें कि वे सुननेवालोंके बराबर आ जायँ और उनमें पिछड़ते जानेका अहसास न हो।

एक और भाव भी बधिर विद्यार्थियोंके मनमें आ सकता है और वह यह कि स्कूलसे निकलनेके बाद शायद वे अपना मनचाहा भविष्य न बना सकें, क्योंकि वे सुन नहीं सकते और सभी अच्छे अवसर अक्सर सुननेवालोंको ज्यादा दिये जाते हैं या यह कि वे अपने उद्देश्यको अगर प्राप्त भी कर सकते हैं तो उन्हें बहुत देर लगेगी, क्योंकि उनकी प्रगति सुननेवालोंकी अपेक्षा कहीं धीमी होती है। ऐसी निराशाएं, ऐसे विचार अक्सर ही बधिर बच्चोंके मनमें उठते रहते हैं और ऐसी परिस्थितिमें अध्यापकोंका यह कर्त्तव्य हो जाता है कि वे बधिर विद्यार्थियोंको ऐसी परिस्थितियोंसे निकाल लें कि जिनमें उनके अन्दर ऐसी भावनाएं उठें और वे जीवनके प्रति निराशा महसूस करें क्योंकि सारी बात कहने-सुननेके बावजूद सचाई तो यह रहेगी ही कि बधिर व्यक्ति सुन नहीं सकता और वह सुननेवालोंकी दुनियांसे थोड़ा बहुत पीछे रहेगा ही। पर सभी लोग जो बधिरोंसे सम्बन्धित

हों और जो उनके सम्पर्कमें आयें, अगर सहयोग दें तो यह हीन भावना कि वह बधिर है इसलिए पिछड़ा हुआ है, उसके मनसे दूर हो सकती है। यह सहयोग अधिकतर सद्भावना, सहानुभूति और बधिर विद्यार्थियों-को आगे बढ़नेमें ज्यादा मदद देनेके रूपमें ही हो सकता है।

बधिर विद्यार्थी और बाहरकी दुनिया

अक्सर ही बधिर बच्चा स्कूल छोड़नेके बाद सुनने वालोंकी दुनियामें कुछ न कुछ डर और गलतफहमियां लेकर प्रवेश करता है और ये डर और गलतफहमियां अगर समयपर नहीं दूर की जातीं तो अक्सर ही दुर्भाग्यमें बदल जाती हैं। अक्सर सुननेवाले लोग भी यह सोचते हैं कि बधिर लोगोंको अपने साथ शामिल करनेसे या उनका मनोरंजन करनेसे बधिर लोग खुश रह सकते हैं। पर बात पूरी तरहसे ऐसी नहीं है। सुननेवाले लोगोंके साथ मनोरंजन-कार्यक्रम इत्यादिमें शामिल होने पर बधिर बच्चे अपने आपको कटा-कटा भी महसूस कर सकते हैं। अक्सर यह अहसास कि वही खेल जो सुननेवालोंको अच्छे लगते हैं या वही बातें जिनसे सुनने वालोंका मनोरंजन होता है उनमें बधिर लोग हिस्सा नहीं ले सकते, बधिर बच्चोंके दिमागपर बुरा असर डालता है। इसलिए यह नहीं कहा जा सकता कि सुननेवाले बच्चोंके साथ मनोरंजन बधिर बच्चोंके लिए भी फायदेमंद होता है जब तक कि बधिर बच्चा खुद खेल या मनोरंजन-कार्यक्रममें आकर हिस्सा न ले। इसलिए मनोरंजनके कार्यक्रममें बधिर बच्चोंको उसी हद तक शामिल करना चाहिए जिस हद तक कि वे खुद उसमें शामिल होना चाहें। खासतौरसे अध्यापकों और मां-बापके लिए यह चेतावनी है कि वे कभी भी बधिर बच्चेपर सुननेवालोंके साथ किसी मनोरंजन कार्य-क्रममें भाग लेनेपर जोर न दें।

हालांकि यह सही है कि सुननेवालों और बधिरोंके बीच एक कड़ी जोड़ी जा सकती है, भावोंके आदान-प्रदानका सम्बन्ध बनाया जा सकता है और दोनों ही आधे रास्ते आगे आकर एक दूसरेकी दुनियामें हिस्सा ले सकते हैं। पर इसके साथ ही साथ यह भी सही है कि मूक-बधिरोंकी दुनिया वही दुनिया नहीं होती जो सुननेवालेकी होती है और अधिक-से-अधिक नजदीक दोनोंको अगर लाया जा सकता है तो वह यहीं तक है कि दोनों एक-दूसरेके सहायक हों और सुननेवाले बधिरों-की इच्छाओं और महत्त्वाकांक्षाओंको जहां तक हो सके उचित समयमें प्राप्त करनेमें मदद करें।

स्कूलसे बाहर आनेवाले बधिर बच्चे इसी सहज सहायताके बलपर अपने आपको पुनर्वासित कर सकते हैं कि उनके पिछड़ेपनके अहसास, उनके डर और असमर्थताको ज्यादासे ज्यादा हल्का किया जाए और जिन्दगीके सफरमें उन्हें हर सम्भव उपायसे अपने साथ लेकर आगे बढ़ा जाय।

बधिर और बोलने-लिखनेकी सामर्थ्य

एक जमानेसे आदमीने सिर्फ भाषा ही एक ऐसी चीज है जिसे बनाया और संवारा है ताकि वह अपने साथियोंसे अपनी बातों, भावनाओं और अनुभवका आदान-प्रदान कर सके। पूरी मानव जातिके इतिहासमें भाषा ही एक ऐसी चीज रही है, जिसके जरिये वह न सिर्फ अपने व्यक्तिगत तजुर्बोंको दूसरोंको बताता-समझाता आया है, बल्कि ऐसे तमाम जातीय और सामाजिक संस्कारों और तजुर्बोंको भी जो कि पीढ़ी-दर-पीढ़ी उसकी संततिकी विरासत बनते चले आये हैं। भाषामें न केवल वे आवाजें शामिल हैं जो आदमी संस्कृत करके अपने मुंहसे निकालता है बल्कि वे हावभाव भी जो वह उन आवाजोंके साथ सहायक रूपमें उत्पन्न करता है और जो उसको भाषाका एक अनिवार्य अंग होते हैं। मुंहका तरह-तरहसे खुलना, होठोंका तरह-तरहसे चलना, हाथों और शरीरकी अन्य भाव-भंगिमाएं, आंखोंकी तरह-तरहकी तेजी-मंदी और चाल। यह सब भाषामें शामिल है अन्य मनुष्यकी सभ्यताके शुरूसे इनका व्यवहार किया जाता रहा है।

यह तो रही बोलचालकी भाषा। इसके साथ ही साथ लिपि या लिखनेवाली भाषा भी है जो आदमीकी सभ्यताका एक जरूरी हिस्सा है। खासतौरसे आजकी पढ़ी-लिखी दुनियामें इसके बिना काम चलना मुश्किल है। बधिरोंके लिए भाषा हमेशा ही एक समस्या रही है। वैसे हमेशा ही यह कोशिशकी जाती रही है कि बधिर जहां तक हो सके बोलनेवाली भाषाको किसी प्रकार सीख लें और अगर उनकी अपनी न सुन पानेकी असमर्थताके कारण वैसा संभव नहीं हो सकता तो कम-से-कम वे अपने देश-स्थानकी भाषा लिखना तो सीख ही जायं ताकि उनके लिए सुननेवाली दुनियाके दरवाजे भाव और विचारोंके आदान-प्रदानके लिए खुले रहें। पर यह काम उतनी ही कठिनाइयोंसे भरा है, जितनी कठिनाइयां कि न सुनने वालेको भाषा सिर्फ इशारे देखकर सीखनेमें हो सकती है। किसी भी चीजका स्वाद बिना जीभपर रखे क्या जाना जा सकता है? फिर भी बधिर-शिक्षाका यह प्रयास रहता है कि न सुन पानेपर भी बधिरोंको भाषा और भावके अधिक-से-अधिक नजदीक लाया जाय। बधिरोंका बोलना सीखना, लिखना सीखनेसे ज्यादा कठिन है क्योंकि इनमें उन्हें अपने बोलनेके यंत्रको, जो उनके नियंत्रणमें नहीं है, इस्तेमाल करना पड़ता है। पर लिखना इसकी अपेक्षा ज्यादा आसान पड़ता है क्योंकि लिखी हुई बात कही हुई बातसे ज्यादा निश्चित होती है और उसके लिए बधिर बच्चेको ज्यादा सचेत होकर ध्यान केन्द्रित नहीं करना पड़ता। लिखे हुए और बोलनेमें यही सबसे बड़ा अन्तर है, जिसमें लिपि बोलनेसे आगे रहती है। लिखनेकी ताकत अगर बधिरमें है तो वह बोलना ठीकसे न जानते हुए भी सुननेवालोंसे सम्पर्क स्थापित कर सकता है क्योंकि बधिर लोगोंका बोलना सुननेवालोंकी तरह साफ नहीं होता और उनके अस्पष्ट शब्द और वाक्य सुननेवाले अक्सर आसानीसे नहीं समझ पाते। अक्सर सुननेके बाद गलतफहमियां भी हो जाती हैं। बधिर कुछ कहते हैं और सुननेवाले कुछ समझते हैं। ऐसे समय लिखना काफी सहायक होता है और बधिर आसानीसे सुननेवाले बधिरोंको अपनी।

लिखनेसे पहले बोलना सिखाएँ

लेकिन बधिर बच्चको सबसे पहले बोलनेवाली भाषा सिखानेकी प्रयास करना चाहिए ताकि वह अपने विचारोंके आदान-प्रदानमें सीमित न रहे। लिखनेकी क्रिया आखिरकार बोलनेकी क्रियासे ज्यादा धीमी क्रिया है और बहुतसे भाव और प्रतिक्रिएं जो फौरन ही कहे जा सकते हैं, लिखनेके समय तक ठंडे हो जाते हैं। और फिर रोजानाकी जिन्दगीमें हर समय हर बात लिखकर नहीं समझायी जा सकती। उठना, बैठना, खाना पीना, फिर बाहरका हर काम लिखकर नहीं करवाया जा सकता। इसलिए भाषा ही एक ऐसा माध्यम है जिसका इस्तेमाल बधिर बच्चेको आना चाहिए। हमारे यहाँ यह खेदकी बात है कि भारतीय भाषाओंमें बधिर शिक्षाके लिए विशेष चिन्ह या इशारे नहीं हैं और बधिर बच्चोंकी शिक्षामें इन भाषाओंके विषयमें कोई विशेष प्रगति नहीं हुई है।

एक विशेष बात और इस सम्बन्धमें कह देना आवश्यक है कि बोलनेकी भाषाका ज्ञान बधिर बच्चेको बचपनमें ही कराया जा सकता है, क्योंकि तब वह आसानीसे चीजों और बातोंपर अपना ध्यान केन्द्रितकर सकता है या कर लेता है। और नयी-नयी चीजोंके बारेमें जाननेकी उत्कंठा उसे जल्दी ही बहुत-सी बातोंका ज्ञान करा देती है। पर बड़ा होने पर इसी बातमें उसे कठिनाई हो सकती है या वह इशारोंको बोलनेसे अधिक सहज समझकर भाषाका बिल्कुल ही त्यागकर सकता है। इसलिए बोलनेकी शिक्षा देनेका काम बचपनमें ही होना चाहिए। फिर भाषाके अनगिनत शब्द, भाव-भंगिमाएं सीखनेके लिए एक लम्बे अर्सेकी जरूरत होती है। बचपनमें ५-१० सालों में यह काम आसानीसे पूरा किया जा सकता है। बड़ा होनेपर इतना लम्बा समय बधिर व्यक्ति आसानीसे भाषा सीखनेके लिए नहीं निकाल सकता।

इशारोंका प्रयोग

भाषा सीखनेके समय हम अक्सर ही कुछ-न-कुछ सहयोगी इशारे भी करते चलते हैं बधिर बच्चोंको सिखानेमें भी ये सहयोगी इशारे बहुत काम आते हैं। इस तरह बधिर विद्यार्थी न सिर्फ शब्दों और वाक्योंका उच्चारण सीखता है बल्कि उनके सहयोगी इशारोंके साथ-साथ वह ऐसे इशारे भी सीखता है जो बिना शब्दोंके इस्तेमालके ही भाव या मतलब जाहिर करते हैं। ऐसे खामोश इशारे बधिर बच्चे अक्सर ज्यादा ही इस्तेमाल करने लग जाते हैं। बधिरोंके भाषा विशेषज्ञ इस पर जोर देते हैं कि भाषा सीखनेके दिनोंमें बधिर बच्चेको इशारोंका इस्तेमाल नहीं करने देना चाहिए। उनके अनुसार ऐसा करनेसे बधिर बच्चे बोलनेकी आदत छोड़ देते हैं। पर बात दरअसल ऐसी नहीं है। बधिर बच्चोंको जहाँ भाषा बोलने-सीखनेपर जोर देना चाहिए वहाँ उन्हें इशारे करनेकी छूट भी देनी चाहिए, क्योंकि भाषाके सीखने, बोलनेके कठिन कामकी अपेक्षा कभी-कभी इशारे करना अधिक सहज होता है। एक और बात यहाँपर विशेष रूपसे कहनेकी है और वह यह है कि बच्चेको बोलनेपर जोर देनेके बजाय अगर यह बढ़ावा हो तो ज्यादा अच्छा है, ऐसा बढ़ावा जिससे बच्चा खुद ही बोलनेके प्रति प्रोत्साहित महसूस करे। ऐसा बढ़ावा अगर बार-बार और लगातार मिलता रहे तो बच्चा अपनी आवाजका इस्तेमाल करनेकी दिशामें बहुत आगे बढ़ जाएगा और धीरे-धीरे अपनी भावनाएँ और तजुर्बे बोलनेके द्वारा दूसरों तक पहुँचानेकी कोशिश करेगा।

स्वर और व्यंजनका उच्चारण

बधिरके लिए स्वर और व्यंजन दोनोंके उच्चारण पर समान अधिकार प्राप्त करना दो ही तरहसे संभव है। इनमें पहला साधन है देखकर उनका उच्चारण सीखना दूसरा है छूकर उनका उच्चारण सीखना। बच्चा सुन तो सकता नहीं, इसलिए आँख ही इस दिशामें उसका पथ-प्रदर्शनकर सकती है और देखनेमें समान उच्चारण वाले स्वर और व्यञ्जन केवल चेहरेके भाग छूकर ही पहचाने जा सकते हैं। जबान, होंठ, जबड़े और तालूकी हरकतें और स्पर्शको अच्छी तरहसे ध्यानमें बिठा लेना बच्चेके लिए बहुत ही जरूरी है क्योंकि बोलने वालोंकी इन्हीं हरकतोंको देखकर आगे बच्चा कही हुई बातका अंदाजा लगा सकता है।

इस तरह भाषापर अधिकार पाना एक परिश्रम मांगनेवाला और धीरजका काम है। कुछ ही बधिर बच्चे और माँ-बाप इतना धीरज और परिश्रमकर पाते हैं कि बच्चा बोलना सीख जाय और कुछ नहीं। कुछ आधे रास्ते तक ही पहुँचते हैं। कुछ अपनी अन्य समर्थताओंके कारण उचित तरक्की नहीं कर पाते। इस तरह अलग-अलग लोगोंके साथ अलग-अलग प्रगति और प्रतिक्रियाएँ होती हैं और उसीके हिसाबसे उनका भविष्य बनता है। वैसे अच्छी आवाज और सही बोलना सीखनेका आदर्श शायद बधिर बच्चेके लिये आदर्श ही रहता है और कभी भी प्राप्त नहीं होता, यह तो जाहिर बात है। शायद ही कोई जन्मजात बधिर बच्चा ऐसा हो जिसने सुननेवालोंकी तरह अच्छी और साफ भाषा बोलना सीख लिया हो। फिर भी आदर्शोंको सामनेसे हटाया नहीं जा सकता। केवल उनके नजदीक जितना ही सके आने का प्रयत्न भर किया जा सकता है।

बधिर बच्चोंके अभिभावको और शिक्षकोंको किसी भी हालतमें निराश और हतोत्साह नहीं होना चाहिए बल्कि पूरी निष्ठा और आशावादके साथ उनके विकासके लिए सचेष्ट रहना चाहिए। निरन्तर अध्यवसाय और प्रेरणासे बधिर बच्चोंमें भी कुछ ऐसी अद्भुत क्षमताओंका विकास हो सकता है, जिनके बलपर वे मानवताके कल्याणमें प्रसिद्ध विदुषी और सामाजिक कार्यकत्री हेलन केलरकी तरह अभूतपूर्व योगदान कर सकते हैं।

●

बढ़ता तन भटकता मन

किशोरावस्था और उसकी उलझनें

—सुश्री आशा रानी व्होरा—

किशोरावस्थाकी उलझनकी समस्या न केवल किशोरोंकी है, न केवल माता-पिता या अध्यापिकोंकी ही बल्कि यह एक बृहत्तर सामाजिक समस्या है। आजके समाजकी एक प्रमुख समस्या है और मुख्यतः औद्योगीकरणकी देन है।

हमारे शहरी समाजमें वैज्ञानिक औद्योगिक प्रभावसे किशोरावस्थाकी अवधि पहलेसे कुछ अधिक बढ़ गयी है। इससे पूर्वके समाजमें बचपनसे वयस्ककी ओर बढ़नेकी प्रक्रिया तेज होती थी, साथ ही सीधी-सादी भी। बच्चे १०-१५ सालकी उम्र तक पढ़ते थे, फिर लड़कियोंकी शादी हो जाती थी, लड़के काममें लग जाते थे। सामाजिक जीवनकी गम्भीर जिम्मेदारियोंकी ट्रेनिंग छोटी उम्रमें ही दे दी जाती थी। अधिकतर लड़के अपने पिताके साथ काम सीखते थे, वे फिर उसी पेशेमें लग जाते थे। पेशेके कामकी ट्रेनिंगके साथ ही घर-गृहस्थीके कामोंकी ट्रेनिंग भी उन्हें मिलती रहती थी। उनके पुरुषोचित कार्योंको भी बढ़ावा दिया जाता था। परिणामस्वरूप १६-१७-१८ तक पहुँचते-पहुँचते वे पुरुषोंवाले सभी काम सँभालने लायक हो जाते थे और रिश्ते निभानेकी, घरकी जिम्मेदारियोंकी, सामाजिक व्यवहारोंकी समझ रखने लगते थे।

उस समयके बच्चोंको देर तक माँ-बापपर निर्भर नहीं रहना पड़ता था, क्योंकि शिक्षा-प्राप्तिकी उम्र छोटी थी, जबकि आज उच्च शिक्षा प्राप्त करने तक यह निर्भरता २२-२५ साल तक, कभी-कभी उससे भी ज्यादा अवधिके लिए बढ़ जाती है। श्रम और समय बचानेकी मशीनोंके कारण श्रम बाजारमें आज किशोरोंकी बड़ी संख्याकी जरूरत नहीं रह गयी है। कृषि क्षेत्रमें आज भी बालक पिताके साथ खेतीमें हाथ बँटाते हैं, पर धीरे-धीरे शिक्षाकी अनिवार्यताके कारण यहाँ भी कार्यशील किशोरोंकी संख्या घटती जा रही है। उद्योगोंमें अब तकनीकी कुशलता हासिल करना जरूरी हो गया है तो हायर सैकण्डरीके बाद किसी तकनीकी प्रशिक्षण लेने तक भी १८-२० की आयु तो हो ही जाती है।

मानसिक विकास तेज, सामाजिक विकास धीमा

इस तरह किशोरावस्थाकी अवधि बढ़नेके मुख्य कारण हैं :—ग्रामीण अर्थव्यवस्थाका शहरीकरण या औद्योगीकरणमें क्रमशः परिवर्तन। रोजगार प्रतिद्वन्द्विता और शिक्षा की अनिवार्यता, विभिन्न सामजिक दबाव और विदेशी प्रभाव। ज्ञान-विज्ञानकी उन्नतिसे शारीरिक आयुसे मानसिक आयुका आगे बढ़ जाना, आदि।

उलझन और अस्थिरताका भी एक मुख्य कारण है, एक ओर बालकोंके मानसिक विकासकी प्रक्रियामें तेजी, दूसरी ओर बड़ोंपर देर तक निर्भरताके कारण सामाजिक विकासमें धीमी गति। आजके औद्योगिक युगमें इन दोनों स्थितियोंमें ताल-मेल बैठानेका प्रयत्न जरूरी है अन्यथा हमारे समाजमें बचपन और वयस्कताके बीचकी बढ़ती हुई खाई इस समस्याको और विस्तार देगी। किशोरावस्था ही वह शारीरिक मनोवैज्ञानिक सामाजिक पुल है जो इस खाईके दोनों छोरोंको मिलाता है। शिक्षण-प्रशिक्षणकी अनिवार्यताको स्वीकारते हुए हम इस अवधिको छोटा नहीं कर सकते तो किशोरोंको समझाकर, उन्हें आत्मनिर्भर बननेके अवसर देकर, उन्हें रचनात्मक कार्योंमें व्यस्त रखकर भविष्यके लिए कोई लक्ष्य, कोई दिशा देकर इस खाईको कम तो कर ही सकते हैं। यह समस्या न किसी एक व्यक्तिकी है, न किसी एक संस्था की, यह पूरे समाजकी बहुमुखी समस्या है तो इसे विभिन्न पहलुओंसे ही सुलझाना होगा।

भावनात्मक उत्थानकी अवस्था

किशोरावस्था भावनात्मक उथल-पुथल, उलझन और अस्थिरताकी अवस्था है तो इसे भावात्मक उत्थान की अवस्था भी कहा या बनाया जा सकता है। हर किशोरको वयस्क बननेकी प्रक्रियामें कुछ शारीरिक और भावनात्मक दबाव सहने पड़ते हैं। इस समय किशोर न तो बच्चोंके साथ अपना तालमेल बैठा सकता है और न बड़ोंके साथ। वह कोई बचपना या गलती करे तो—'क्या तुम बच्चे हो?' और बड़ोंकी बातमें कुछ दखल रखना चाहे तो 'अभी तुम्हें क्या समझ है?' कहकर उसे झटक दिया जाता है। परिणामतः वह दोनों ओरसे कटकर केवल अपने हमउम्र साथियोंमें रुचि लेने लगता है, जिसमें विपरीत सेक्ससे प्रशंसा पानेकी लालसा बढ़ जाना स्वाभाविक है। घरके दायरेसे बाहर पूरे समाजके साथ एक नये संबंध स्थापित करनेके पीछे भी उसकी यही प्रवृत्ति या भावना मुख्य है कि कहीं वह अपनेको स्थापित करे, कहीं कुछ करके दिखाये और अपनी भावनाओं, शक्तियों, आदर्शोंके लिए मान्यता प्राप्त करे। बोलचाल, वाद-विवाद, वेशभूषा द्वारा ध्यान आकर्षित करना, खेलोंमें या कलाओंमें प्रतिभा दिखाना, राजनीतिक उत्साह प्रदर्शित करना आदि इसी मान्यताप्राप्तिके प्रयत्न हैं और यही मान्यता न मिलनेपर उसके व्यवहार समाज-विरोधी व्यवहार बन जाते हैं। वह बड़ोंपर घरमें या बाहर निर्भर करता है कि वे उसके उत्साह और उत्साहमें बढ़ी हुई शक्तियोंसे लाभ लें या स्वयंको इस लाभसे वंचित करनेके साथ पूरे समाजको भी इससे वंचित करें। यह कार्य पहले घरका व फिर स्कूल और समाजका है कि वे किशोर की मूलभूत रुचियों और जरूरतोंको ऐसा मोड़ दें जो एक साथ उसे संतुष्टि और समाजको कोई सृजन दे सकें। भावात्मक अस्थिरताकी इस उम्रको इसी तरह भावात्मक प्रगतिकी उम्र बनाया जा सकता है।

व्यक्तित्वमें लचीलापन

किशोरावस्थाके प्रारम्भमें व्यक्तित्वमें एक लचीलापन होता है। वातावरणका प्रभाव ही इस लचीलेपनको बहुधा अस्थिरतामें बदल देता है। यह बिल्कुल स्वाभाविक है कि एक समय कोई छात्र पढ़ाईमें आगे निकलनेका प्रयत्न करे, उसमें एक अच्छा छात्र बननेकी धुन सवार हो, फिर कुछ समय बाद वह खेलोंमें अधिक रुचि लेने लगे। एक समय वह बातूनी हो। फिर एकाएक खामोश हो जाय। आज्ञाकारी और अनुशासनप्रिय हो, फिर अचानक उसमें परिवर्तन आ जाय और वह चिड़चिड़ा, झगड़ालू और उद्दण्ड हो उठे इसलिये कि इस समय किशोरोंके ध्येय अस्पष्ट, धुँधले, अवास्तविक और परिवर्तनशील होते हैं। यद्यपि बचपनके तर्कहीन भय खत्म हो चुके होते हैं, पर किशोरावस्थाकी अपनी चिन्ताएँ उठखड़ी होती हैं। इस समय उनकी प्रमुख समस्या होती है, स्वयंको नयी शारीरिक, सामाजिक स्थितियोंमें ढालना और समाजसे अपने नये संबंध विकसित करना। नये विचारों, नये मूल्यों और नयी क्षमताओंका उदय इन्हीं चिन्ताओंमेंसे होता है। कुछ तो ऐसे आश्चर्यजनक व्यक्तित्व गुण विकसित होते हैं जिनका विकास केवल इस उम्रमें भी सम्भव है। ऐसे समय समाजके निर्माणात्मक प्रभाव जितने ही अधिक काममें लाये जा सकें, किशोरके व्यक्तित्वका विकास उतना ही अच्छा होगा।

एक योजना-अवधि

माता-पितापर निर्भरता कम होते ही दस वर्षकी आयुके बाद किशोर इस बातमें रुचि लेने लगता है कि अपने प्रश्नोंका हल वह खुद ढूँढ़ निकाले। अपनी जिज्ञासाओंके समाधानके लिए उसे बड़ोंपर निर्भर न रहना पड़े। वह समाजमें अपनी भूमिकाके बारेमें अधिकसे अधिक सोचने लगता है। इसी भूमिकाका निर्णय लेनेके बाद वह कई प्रयोग करता है। तभी कोई पौराणिक, धार्मिक या ऐतिहासिक आदर्श पुरुष उसकी कल्पनामें आ बैठता है तो कभी कोई राजनैतिक नेता, प्रसिद्ध खिलाड़ी या फिल्मी हीरो। यह भी संभव है कि अपने आदर्श चरित्रमें डूबकर वह स्वयं भी वैसाही बननेका प्रयत्न करे। फिर उस रूपमें कोई कटु अनुभव होनेपर उसे छोड़ किसी अन्य कलाकार या

अभिनेताकी नकल करने लगे। चूंकि उस महानता या कलाकारी स्थिततक पहुँचनेकी लम्बी साधनासे वह अपरिचित होता है, इसलिए जरा सी असफलताकी ठेस लगते ही निराश, मूडी या विद्रोही हो उठता है। इसमें उसका दोष नहीं कि इसी उम्रमें भिन्न-भिन्न परिस्थितियोंमें किशोरोंकी प्रतिक्रियाएँ भिन्न होती हैं। उनका कोई सामान्यीकरण नहीं किया जा सकता।

कई किशोर, जिनके माता-पिता समझबूझसे काम लेते हैं और जिनकी बचपनकी पृष्ठभूमि मजबूत होती है, अपनी समस्याओंको बिना किसी परेशानीके हलकर लेते हैं। उनपर न कोई भारी सामाजिक दबाव होते हैं, न मनोवैज्ञानिक या भावनात्मक ही। यह इसपर निर्भर करता है कि बचपनमें उनकी विकास प्रक्रिया कितनी सफल रही। प्रायः बचपनकी अनसुलझी समस्याएं ही किशोरावस्थामें दोबारा उभरकर सामने आखड़ी होती हैं। अब इस उमरमें भी यदि उन्हें हल करनेकी क्षमता किशोरमें नहीं आ पाई तो फिर इस उलझावका प्रभाव प्रायः जीवन पर्यन्त चलता है। यह क्षमता किशोर स्वयं भी अपनेमें पैदाकर सकता है और उचित देखरेखसे भी उसमें पैदा की जा सकती है। प्यारके संरक्षणमें, उचित देखरेखमें दिशा दी जाय और उसे बाहर अच्छे साथी मिलें तो समस्याएं विकारोंका रूप लेंगी ही तो उनका रूप अस्थायी होगा और समाधान निश्चित।

इसीलिये यह अवधि पूरे जीवनकी योजना-अवधि है। प्रतिभाके व्यक्तित्व गुणोंके प्रस्फुटनकी अवधि है। सामर्थ्य और क्षमताओंके विकासकी अवधि है। प्यार और नफरतके निर्धारणकी अवधि है। साहस और कायरता, स्वार्थ और ईमानदारी, सामाजिक दायित्व और समाज-विरोधके बीच स्वभाव द्वारा एकके चुनावकी अवधि है। यह भी हो सकता है कि दोनोंमेंसे कोई भी चुनाव न हो पाये और व्यक्तित्व हमेशा ही दो पलड़ोंकी अस्थिरताके बीच झूलनेवाला बनकर रह जाय। किशोरोंकी अनुशासकहीनता और उनके समाज विरोधी कार्योंकी शिकायत करनेवालोंकी इसलिए इस उम्रपर सबसे पहले ध्यान देनेकी जरूरत है, अन्यथा उनका अवरुद्ध विकास सारे समाजके निर्बाध विकासके लिए खतरा बन जाता है। उनकी सुरक्षाकी गारंटी ही समाजकी सुरक्षाकी गारंटी हो सकती है।

सभीपर दायित्व

चूंकि यह समस्या प्रतिदिन गंभीर होती जा रही है, समाजके प्रत्येक वर्गको इसकी चिन्ता होनी चाहिए। माता-पिता, शिक्षक सामाजिक और राजनैतिक नेता सभीपर इसका दायित्व है। केवल छात्रों और अध्यापकों पर दोष डालनेसे बात नहीं बननेवाली। कितने ही कारण हैं जिनसे छात्र या किशोर समाजविरोधी व्यवहार, हड़ताले, हुल्लड़ें, कक्षाओंसे अनुपस्थिति, सार्वजनिक सम्पत्तिका नुकसान, मारपीट, हिंसा लड़कियोंका शिक्षकोंका, बड़ोंका अपमान, कानून भंग, चोरी, झूठ, तथा अन्य अनैतिक कार्य आदि पर उतर आते हैं। शारीरिक तथा भावनात्मक परिवर्तनोंकी अस्थिर मनोभूमि परसे गुजरते हुए कई बार तो किशोर अकारण ही अपने भीतर ऐसी उत्प्रेरणायें अनुभव करता है जिनकी जड़ बचपनमें कहीं गहरी गयी होती है। कई बार भीतरकी बढ़ी हुई शक्तियोंको राह न मिलनेसे कुछ साधारण महत्वपूर्ण कार्य करनेकी उसकी इच्छा कुंठित होकर तोड़फोड़ वाले कार्य करने लगती है। उनमें अधिकांश समाज-विरोधी कार्य खालीपनके वैक्यूमको भरनेके लिए अस्थायी असंतोषको राह देनेके लिए या जोखिम उठाकर ध्यान आकर्षित करनेकी इच्छापूर्तिके लिए ही होते हैं। ऐसे मामलोंमें अच्छी मित्रता, अच्छी सलाह, कार्य करनेके अच्छे अवसर मिलते ही उनका सुधार भी जल्दी हो जाता है। किसी निर्माण या कला अभिव्यक्तिकी चाह वाले ऐसे किशोरोंका मूल व्यक्तित्व सशक्त होता है। उनके संकल्प दृढ़ होते हैं और आदर्श ऊंचे। किसी अन्याय या अभावसे टकराकर, किसी गलत संगतिमें पड़कर, खालीपनसे ऊबकर या किसी दुर्घटनाका शिकार वे अस्थाई रूपमें अपनी पटरीसे हटते हैं, फिर ठीक सिगनल मिलते ही अपनी गाड़ी सही पटरी पर ले आते हैं।

गलती बड़ोंकी-डांट बच्चोंको

—श्री विश्वभरनाथ शुक्ल—

श्री 'अ' एक बृहत व्यापारिक प्रतिष्ठानके उच्च अधिकारी एवं सामाजिक व्यक्ति हैं। इसीलिए बहुधा पार्टियोंमें जाना भी पड़ता है और घरमें पार्टियां देनी भी पड़ती हैं। यदि ऐसा न करें तो सामाजिक प्रतिष्ठाको धक्का लगता है। यदि पार्टी होती है तो उसमें जिन, रम और स्काचकी बोतलें खोलनी ही पड़ती हैं, क्योंकि इसे वे सामाजिक प्रगतिका मानदंड मानते हैं।

घरमें तीन बच्चे, दो नौकर एवं पत्नी हैं। अक्सर पार्टियोंके समय बच्चे अपने 'अंकिल्स' के पास मंडराते रहते हैं। सबसे बड़ा लड़का है, उसके बाद लड़की और फिर लड़का। जब पार्टियोंका दौर समाप्त होता है तो बच्चे उसीकी नकल करते हैं। मेज पर शराबकी खाली बोतलें सजती हैं, कभी-कभी उनमें सजीवता लाने हेतु पानी भी भर लिया जाता है। खाद्योंका स्थान बिस्कुट और टाफियां लेती हैं तथा पार्टीका सफल आयोजन हो जाता है।

किन्तु अभी कुछ दिन पूर्व श्री 'अ' की आंखोंके सामने ही विचित्र घटना घटी। सबसे बड़े पुत्रने एक पार्टीके बाद मेजपर रखी एक बोतल उठा ली, जिसमें अल्प मात्रमें शराब बची थी। फिर एक गिलासमें उसे ढाला और मेहमानोंकी भांति ही चुस्कियां लेना शुरू कर दिया।

"यह क्या हो रहा है अनिल।" श्री 'अ' ने उसे मद्यपान करते देख टोका।

"ड्रिंक ले रहा हूँ पापा।" अनिलने निर्विकार भावसे उत्तर दिया।

"यह अच्छी चीज नहीं है बेटे।" पापाने उसके हाथसे गिलास लेकर कहा।

"फिर आप और अंकिल लोग क्यों लेते हैं पापा?" सहज प्रश्न था अनिलका।

"बेटे, हम लोगोंको आदत पड़ गयी है, इसलिए लेना पड़ता है। फिर हम लोग बच्चे भी तो नहीं हैं।" श्री 'अ' ने कहा।

"तो क्या बड़े होकर हम लोग भी ले सकते हैं?" अनिलने पूछा।

"अगर न लें तो अच्छा होगा। यह हानिकारक होती है।" श्री 'अ' ने कहा, किन्तु अनिल संतुष्ट न हो सका। यदाकदा वह मम्मीसे अथवा पापासे 'ड्रिंक' के बारेमें पूछताछ करता ही रहता था और सिर्फ इतना ही नहीं, अवसर मिलते ही चखनेसे भी चूकता नहीं था। यहां तक कि यूनिवर्सिटीमें प्रवेश पाते-पाते अनिल 'ड्रिंक' का अभ्यस्त हो चुका था।

यह तो रही पार्टियोंकी दास्तान। अब जरा माता-पिताके मनोरंजन साधनोंका भी परिचय प्राप्त करें। श्री 'ब' कार्यभारसे निपट कर, कार्यालयसे घर आने पर थक जाते हैं। इसलिए सात-आठ बजते-बजते उन्हें मनोरंजनकी आवश्यकता प्रतीत होती है। इसलिए सात बजते-बजते 'स' 'द', 'य'. आदि मित्रगण उनकी बैठकमें आ जाते हैं। फिर रमी, फ्लश अथवा 'स्वीप' का क्रम रात ग्यारह बजे तक चलता रहता है। यही नहीं, अवकाशके दिनोंमें तो दिन भर मनोरंजनके ये साधन अपनाये जाते हैं।

माता-पिताका मनोरंजन : बच्चोंपर प्रतिक्रिया

परिवारके बच्चे और दिनों तो रातके आठ-नौ बजते-बजते सो जाते हैं किन्तु अवकाशके दिन उन्हें बड़ोंकी महफिल छोड़कर और कहीं जानेकी आवश्यकता ही नहीं होती। कोई बच्चा बिखरे पैसोंका हिसाब करता है तो कोई बिखरे ताशके पत्तोंको पहचाननेका यत्न करता है। यह तो रहा बड़ोंकी उपस्थितिमें होने वाला दृश्य। किन्तु प्रातः देखा गया है कि बड़ोंकी अनुपस्थितिमें वही बच्चे पैसोंके अभावमें कांचकी गोलियोंका दांव लगाकर खेल खेलते हैं अथवा यदि गोलियां न हों तो

भी ताशके खेलमें पैसोंका स्थान घूंसे अथवा सिगरेटकी खाली डिब्बियां ले लेती हैं। इस प्रकारका प्रशिक्षण बड़े होनेपर बच्चोंको जुआरी बननेकी प्रेरणा देकर उन्हें गलत रास्तेपर ले जानेमें काफी सहायक सिद्ध हो सकता।

अब आइए जरा श्री 'स' से भी भेंट कर लें। आप बेहद गंभीर प्रकृतिके व्यक्ति है और ज्यादा बातचीत करना, यार दोस्तोंमें बैठना-उठना उन्हें कम प्रिय है। घरसे आफिस और आफिससे घर आना उनकी एकमात्र दिनचर्या है। इसलिए यदि कोई उनसे किसी कार्यवश मिलने आया है तो वे अपने पुत्रसे कहला देते हैं कि "जाकर कह दो, बाबूजी घरमें नहीं हैं।" सुपुत्र उनकी आज्ञाका पालन करते हैं, किन्तु साथ ही यह बात भी अपने ज्ञान तन्तुओंमें सहेज लेता हैं कि यदि कोई मिलने आये अथवा कोई काम करना हो तो झूठे बहाने बनाना फुरसत पानेका बढ़ियाँ और सुगम साधन है। इसीलिए उन्हें जब स्कूलमें कोई काम दिया जाता है तो वे उसे करनेके बजाय दूसरे दिन अध्यापकसे बहाना बनाकर सुगमतासे मुक्ति पा लेते हैं। इसका परिणाम यह देखा गया है कि श्री 'स' के सुपुत्र अपनी कक्षामें सभी छात्रों से पीछे रहते हैं और परीक्षाफल सदा ही असफलताका द्योतक होता है।

माताओंकी उदासीनता

बहुधा घरोंमें बहुत सी माताएं बालकोंको अनुशासन सत्य-भाषण और चरित्रके प्रति सजग रहने की प्रेरणा देनेके प्रति उदासीन रहती हैं, जिसका प्रभाव यह पड़ता है कि बालक पहले तो मांके प्रति अनुशासनहीन होता है और फिर धीरे-धीरे पिताके अस्तित्वको भी गौण मानने लगता है। इसका प्रभाव यह होता है कि दीर्घ कालमें वह माता-पिता दोनों ही के प्रति उदासीन हो मनमानी करनेको पूर्ण स्वच्छंद हो जाता है। इस क्रियाकी प्रतिक्रिया यह होती है कि बालकका चारित्रिक विकास और मानसिक संतुलन भंग हो जाता है तथा वह अविकसित व्यक्तित्वका स्वामी बन समाजपर बोझ बना रहता है।

वयस्कोंके व्यक्तित्वका परोक्ष प्रभाव

उपरोक्त कुछ उदाहरण केवल इस तथ्यको ही प्रमाणित करते हैं कि हमारी भावी पीढ़ीका विकास बहुत कुछ उन बुनियादोंपर आधारित होता है जिनका सृजन हम उनके माता-पिता करते हैं। दूसरे शब्दोंमें इसे हम यों भी कह सकते हैं कि बच्चे जो भी अनुचित कार्यकलाप करते हैं उसका प्रशिक्षण वे प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष रूपमें हमसे प्राप्त करते हैं। किन्तु यह कोई ऐसा विकार नहीं है जिसका उपचार न हो सके। बालकोंको इन्हीं विकारोंसे बचाये रखने हेतु बाल मनोवैज्ञानिकोंने इस दिशामें काफी कार्य किया है और उनका कहना है कि परिवारके वयस्क सदस्य बच्चों एवं किशोरोंपर अपनी आदतोंका प्रभाव बड़ी सुगमतासे परोक्ष रूपसे निरंतर डालते रहते हैं।

जैसा कि अनेक प्रयोगों द्वारा सिद्ध हो चुका है, बच्चों के व्यक्तित्वका विकास बहुत कुछ वयस्कोंके व्यक्तित्व पर आधारित होता है, अतएव एक बुरी आदत जो वयस्कके जीवनका अंग बन चुकी है, यदि बार-बार बालकोंके सामने दुहराई जाती है तो जैसा ऊपरके प्रथम उदाहरणमें देखा गया है वे भी उस क्रियाकी अनुकृति करनेका प्रयास अवश्य करेंगे। किन्तु सामाजिक सुरक्षा एवं प्रगतिकी दृष्टिसे बालकोंका इस प्रकार अनुकरण करनेका प्रयास अत्यन्त हानिकारक होगा। इसलिए मनोवैज्ञानिक इस तथ्यका यह निष्कर्ष निकालते हैं कि बालकोंको अपनी अहितकर आदतोंसे परे रखनेके लिए हमें निम्नलिखित सावधानियाँ बरतनी चाहिए।

(१) जब हम अपनी सामाजिक प्रतिष्ठा अथवा व्यवहार-कुशलताकी रक्षार्थ अथवा आदतवश मद्यपान करते हैं तो हमें इस बातका ध्यान रखना चाहिए कि हमारे बच्चे वहाँ पर न हों। आपकी प्रत्येक क्रिया प्रतिपल शिशु-मानसमें नवीनतम जिज्ञासाएं उत्पन्न करती रहती है, इसलिए बच्चोंका किसी भी रूपमें इन क्षणोंमें उपस्थित रहना उचित नहीं कहा जा सकता।

(२) कभी-कभी यह भी देखा जाता है कि माता-पिता किसी कार्यको बालकोंकी दृष्टि बचाकर करनेका प्रयत्न करते हैं तो बालक उस क्रियाविशेषके प्रति अनावश्यक ही जिज्ञासु हो उठते हैं। जैसा कि स्वतः स्पष्ट है इस प्रकार छिपाकर किये जाने वाले कार्य ऐसे होते हैं जो बालकोंके लिए रंचमात्र भी हितकर नहीं होते, ऐसे कार्योंको उसी समय किया जाना चाहिए जब कि बच्चोंको उनका भान तक न हो सके।

(३) प्रगतिशील मानवने शराब पीने, जुआ खेलने आदि गन्दी आदतोंको सभ्यताका बाना पहनाने हेतु क्लब आदिके रूपमें संस्थाओंका विकास कर लिया है जहाँ वह इन व्यसनोंको सामूहिक रूपसे बड़े पैमाने पर संचालित करता हैं। इसलिए यदि आप भी किसी ऐसी संस्थाके सदस्य हैं तो जब भी आप वहाँ जाएँ बच्चोंको न ले जाएँ।

(४) यदि आप किसी क्लब जैसी संस्थाके सदस्य नहीं है और जुएकी 'फड़' घरमें जमानेके आदी हैं, तो महफिल जमानेके बाद बालकोंको उस स्थानपर कतई न आने दें। ऐसा करनेसे वे आपके लेन-देनसे अनभिज्ञ रहेंगे और ताशके प्रति उदासीन रहेंगे जो कि जुएसे उन्हें परे रखनेका प्रथम चरण है।

(५) यदि आप स्वयंके कार्यकलापोंको बालकोंको नजरसे छिपाकर करनेमें असमर्थ रहे तो जो भी काम आप करेंगे बच्चे उसका अनुकरण करेंगे। जैसा कि सर्वविदित है हमारा चारित्रिक ढांचा स्वयं ही इतना ढुलमुल हो चुका है कि हम बालकोंका सही पथ-निर्देशन करनेमें स्वयंको असमर्थ पाते हैं, स्वयंको बच्चोंकी दृष्टिमें प्रत्यक्ष कर देनेके घातक परिणामोंसे उन्हें परे रखना कठिन हो जायगा।

(६) बालकोंके चारित्रिक विकास और उन्हें अच्छी सीख देनेमें अनुशासनका बहुत महत्त्वपूर्ण हाथ होता है। किन्तु यह अनुशासन उसी समय कारगर हो सकता है जब कि हम स्वयंको अनुशासित रखें। स्वयंको परे रखनेके लिए किसी वास्तविकताको छुपानेके लिए बालकोंसे असत्य भाषण करवाना, उनके सामने अपने अनैतिक कार्योंका बखान करना, और माता-पिताका आपसमें लड़ना अथवा तनावका वातावरण रहना आदि ऐसे कार्य हैं जिनसे बालकोंमें अनुशासनहीनता बढ़ सकती है और वे अनुत्तरदायी तथा चरित्रहीन बन सकते हैं। अतएव अनुशासित समाज-निर्माण हेतु आवश्यकता इस बातकी है कि हम स्वयंको अनुशासनकी सीमामें रखें जिससे बच्चोंका भविष्य उज्ज्वल रहें।

माता-पिताका असंगत व्यवहार

इसी प्रसंगमें एक सेठ परिवारकी कहानीका वर्णन समस्याको और अधिक स्पष्ट करेगा। एक सेठ जी घीका व्यापार करते थे। बहुधा रातमें दुकान बन्द कर जब घर आते तो सेठानीको बताया करते कि अमुक दिन कितने देसी घीमें कितना बनस्पति घी मिलाकर उन्होंने कितना नफा कमा लिया। सेठानीके साथ ही साथ उनकी बातें उनका दस-वर्षीय पुत्र भी सुना करता था। सेठका यही पुत्र ग्वालेके यहाँसे नित्य शामको दूध लाया करता था। सेठकी बातोंका कुछ ऐसा प्रभाव पड़ा कि वह प्रतिदिन दो सेरके बदले डेढ़ सेर दूध लाने लगा और आधा सेर दूधका मूल्य अपने जेब खर्चके लिए सुरक्षित रख लेता था। दूधकी मात्राकी कमी वह रास्तेमें पड़ने वाले नगरपालिकाके नलसे कर लेता था। सेठानीने शिकायत की कि ग्वाला दूधमें पानी मिला देता है, ग्वालेका दावा था कि वह भैंसके नीचेका शुद्ध दूध देता है। आखिर फिर खुफिया जाँच खुद ग्वालेने की और सेठके पुत्रको दूधमें नलपर पानी मिलाते पकड़ वह उसे सेठानीके पास लाया। बालकने शांत भावसे स्पष्टीकरण दिया, "पिताजी भी तो देसी घीमें वनस्पति घी मिलाते हैं, उन्हें क्यों नहीं डांटती ? मुझे डाँटने चली हो, हाँ...," सेठानी निरुत्तर थी। रातमें घटनाकी सूचना जब सेठको मिली वे कांप उठे। भगवान् भला करे, उसी दिन सेठने देशी घीमें वनस्पति घी मिलाना बन्द कर दिया। यह है पारिवारिक अनुशासनका प्रभाव।

बाल-मस्तिष्क उस भौचक व्यक्तिके मस्तिष्ककी भांति होता है जिसे यह न ज्ञात हो कि परिस्थिति-विशेष में उसे क्या करना चाहिए ? और ज्योंही वह कोई उपाय

खोज लेता है, उसीपर चल पड़ता है। ऐसी स्थितिमें बालकोंके समक्ष ऐसे कार्य ही करने चाहिए जिनसे वे कुछ शिक्षा ले सकें, कुछ काम की बातें सीख सकें और अपने लिये सही रास्ता चुन सकें।

आजके युगमें मनुष्यमें स्वार्थपरताकी भावनाने बहुत गहरी जड़ें जमा ली हैं, जिसका परिणाम यह होता है कि यदि हम कोई काम करना चाहते हैं तो करनेसे पूर्व इस समस्यापर विचार करते हैं कि उपरोक्त कार्य-विशेषसे हमें कितना लाभ होगा? यही आदत हम अपनी सन्तानोंको भी सिखानेका प्रयास करते हैं और यदि वह मानवीय भावनाओंके वशमें होकर निःस्वार्थ भावसे किसी दूसरे बालक या व्यक्तिकी सहायता करना चाहता है तो उसे प्रोत्साहन देनेके बजाय उसे मना करनेका प्रयास करते हैं।

माता-पिताकी इस स्वार्थपरक भावनाका यह प्रभाव पड़ता है कि धीरे-धीरे वह समाजके प्रति बहिर्मुखी प्रवृत्तिका त्यागकर स्वार्थमय अन्तर्मुखी भावनाओंका विकास करने लगता है तथा दीर्घकालमें उसका एकमात्र लक्ष्य परमार्थको भूल मात्र स्वार्थ-सिद्धि रह जाता है। इसका मूल केवल हमारा चारित्रिक पतन होता है जिसका उत्तराधिकार हम अपनी सन्तानको सौंपकर उसे मानव मूल्योंसे शून्य स्वार्थमय यांत्रिक मानवका रूप दे देते हैं। बालकोंको इस विकारसे परे रखने हेतु हमें सदैव ही इस ओर प्रयत्नशील रहना चाहिये कि हमारी सन्तान बहिर्मुखी प्रतिभा का धनी बनकर परमार्थयुक्त सच्चरित्र जीवन जिए।

भावात्मक लगावका अभाव

वर्तमान यांत्रिक सभ्यताकी व्यस्तताने हमारे जीवन क्रमको यांत्रिक कार्य-प्रणालीमें बांध दिया है। न तो हम कभी स्वयं अपने बारेमें सोच पाते हैं और न ही अपने बच्चोंके बारे में। यही नहीं, अपनी इस जड़ता पर प्रायः हम खीझ भी उठते हैं कि हमारा जीवन यंत्र-मात्र बनकर रह गया है और हम केवल एक कल मात्र हैं जो पत्नी तथा बच्चोंका बोझ ढकेलनेके लिए धनोपार्जन करते रहते हैं। न तो हमारे जीवनमें संवेदनाओं का निवास है, न ही मानवीय भावनाकी अनुभूति और इन संवेदनाओं तथा भावनाओंसे शून्य हमारे मध्य चल रही हमारी संतानें—अन्यथा न होगा यदि यह सोचें कि मम्मी-डैडी हमारी जरा भी फिक्र नहीं करते हैं।

यही वह तर्क है जिसपर बाल मनोवैज्ञानिक यह दलील देते हैं कि वर्तमानमें बालकों एवं किशोरोंमें व्याप्त अभावोंका एक मात्र कारण माता-पिता तथा उनके बीच व्याप्त वह अपरिमित दूरी है, जिसे कम करनेका प्रयास कोई पक्ष भी नहीं करता। किन्तु यह दूरी कम कैसे हो? इसके लिए आज तक किसी भी पक्षने कोई प्रयास नहीं किया। न तो माताएँ ही बालकोंकी ओर ध्यान देती हैं और न ही पिता। कारण है सबकी अपनी-अपनी व्यस्तता जिसका एकमात्र निराकरण हमारी इस प्रवृत्तिको त्यागनेमें है कि हम धनोपार्जनका यन्त्र मात्र न होकर, प्रथम मनुष्य हैं, बादमें धनोपार्जक। जब तक हम अपनेमें यह परिवर्तन नहीं लाते तबतक बालकोंके प्रति हमारी उदासीनता तिरोहित नहीं हो सकेगी।

●

‘‘आर्थिक क्षेत्रमें चाहे हम कितनी भी प्रगति क्यों न करें, परन्तु यदि आबादी उत्पादनसे भी तेज गतिसे बढ़ती रहे तो राष्ट्र कभी भी आत्मनिर्भरताको प्राप्त नहीं कर सकता।’’

—श्री जयसुखलाल हाथी

‘‘जनसंख्याकी बेतहाशा वृद्धि दुश्मनोंके आक्रमणसे भी अधिक खतरताक है।’’

—डा० श्रीपति चन्द्रशेखर

पुत्रवधुके नाम पत्र

१७ कलिदास रोड
देहरादून।
दिनांक १३ मार्च, १९७३।

चि० बेटी गीता,

तुम्हारे पापा मम्मीके साथमें १० ता० को देहरादून वापस आ गया। गाड़ी लखनऊसे रातमें १२ बजेके बाद किसी समय चली थी। दिनमें लगभग साढ़े बारह बजे यहाँ पहुँची थी। फिर दो दिन हम सब लोगोंने मिलकर खूब मौज मनायी। सभी लोग आनन्द की मनः स्थितिमें थे। खूब हंसीके फुव्वारे छूटे। शायद तुम्हारी मम्मीने तुमसे चर्चा भी की हो अगर तुम भी साथ आ पाती तब बहुत ही अच्छा होता।

तुम्हें सहसा मेरा यह पत्र पाकर बड़ा अटपटा सा लग रहा होगा। मैं भी पत्र लिखनेके पूर्व दुविधाकी स्थितिमें रहा हूँ ऐसा स्वाभाविक ही है। हमारी सामाजिक परम्पराओंके मानसिक संस्कार इसके लिए जिम्मेदार हैं। काफी संकल्प-विकल्प औंर सोचने-समझनेके बाद मैंने अपनी प्यारी बेटीको पत्र लिखनेका निर्णय कर ही डाला। ऐसा करनेके मेरे दो कारण हैं। प्रथम तो अपने प्रिय जनोंको पत्र लिखनेमें सभीको विशेष सुख और आनन्दकी अनुभूति होती है। अभी तक तुम केवल मेरे एक स्नेही मित्रकी बेटी थीं, अब मेरे बेटेकी जीवन-सहचरी बनने वाली हो। हर मां-बापके लिए यह बड़ा सुखद रिश्ता है। हम लोगोंकी एक लम्बी साधनाके बाद यह स्थिति बन पा रही है। सभी अपना-अपना स्नेह तुम्हारे प्रति अपने ढंगसे व्यक्त करके आह्लादित हो रहे हैं। नीलू-गुन्नो-इला तो हर समय तुम्हारी बातें करती हैं। तुम्हारी आँटी अपने ढंगसे तुम्हारे प्रति सुखद कल्पनाओंमें खोई रहती हैं। सभी तुम्हे पत्र लिखने और तुम्हारे पत्र पानेको आतुर रहते हैं। मुझे भी इंच्छा और प्रेरणा हुई कि मैं ही क्यों इस सुखकर स्थितिसे वंचित रहूँ। लखनऊकी पिछली यात्राके बाद यह स्थिति अधिक उग्र हो गयी। ९ ता० को रातको जब तुम्हें घरपर छोड़कर हम लोग स्टेशन जा रहे थे तब मुझे कुछ वैसी ही अनुभूति हो रही थी जब अशोकको पहली बार घरसे दूर इलाहाबादके म्योर होस्टलमें छोड़कर वापस हुआ था।

दूसरा कारण अधिक महत्वपूर्ण है। यद्यपि प्राथमिक रूपेण हम सब उन्हीं जैविक प्रवृत्तियोंके वशीभूत हैं जैसा कि अन्य प्राणियोंमें पायी जाती है तथापि मनुष्य जीवन एक कला है। हमारी संस्कृति और सभ्यताने हमारे हर जैविक व्यवहारको कलाका रूप दे दिया है। इसलिये अब जीवनको ढंगसे जीनेके लिए मात्र जैविक प्रवृत्तियाँ ही पर्याप्त नहीं होतीं। दूसरी कलाओंकी तरह जीवनकी कलाके लिए भी ज्ञान, विवेक और साधनकी जरूरत होती है। बच्चे जब छोटे होते हैं तब हम उन्हें अंगुली पकड़कर चलाना सिखाते हैं, आग और पानीसे डरना सिखाते हैं, स्कूलकी उमरपर लिखना-पढ़ना भी सिखाते हैं परन्तु इसके बाद प्रायः इंस प्रक्रिया की इतिश्री मान ली जाती है। उनके बड़े होनेपर ढोल बजाकर और लड्डू खाकर उनका विवाह करके हम यह मान्यता रखते हैं कि वे स्वयं ही सब कुछ निबट लेंगे।

अब कोई भी उन्हें यह बतानेकी कोशिश नहीं करता कि जीवन कैसे जिया जाये। जीवन पथकी इस नयी मंज़िलको कैसे मनोरम बनाया जाय इसके बारेमें कहींसे भी कोंई निर्देश अभी तक तुम्हें उपलब्ध नहीं होंगे। जब हम लोगोंने अपने जीवनकी इस यात्राका प्रारम्भ किया था तब हमारी भी कुछ ऐसी ही स्थिति थी। हमने अपना रास्ता खुद बनाया। इसमें परेशानियाँ भी हुई। आज जब हमारे बेटे-बेटियाँ इस पथके राही बननेकी तैयारियाँ कर रहे हैं तब स्वाभाविक है कि हमारे मनमें यह इच्छा हो कि कुछ ऐसा हो सके कि उनके मन मस्तिष्क इस यात्राको उत्साहके साथ प्रारम्भकर सकनेके अनुकूल बने।

जीवन बहुत सुन्दर प्रक्रिया है। जब हम बच्चे होते हैं तब हमारा सारा स्नेह मां-बाप तक सीमित होता है अवस्था परिवर्तनके साथ हमारे प्रेम पात्र बदलते जाते हैं और जीवन यात्राके नये-नये सोपान शुरू होते हैं। अब हम लोग इन सबको पूरा करके उस स्थितिमें हैं जब हम अपने बच्चोंको अपने अपने घरोंसे नेह-नाता छोड़कर नये नीड़ बसानेके लिए प्रेरितकर रहे हैं। हमारे लिए यह कल्पना बड़ी सुखद है। मनमें निरन्तर कामना रहती है कि हमारे बच्चोंकी इस यात्राकी शुरुआत सुखद हो, यात्रा पथ मनोरम बने और उनकी उपलब्धियाँ हम सबके गौरवका निमित बनें। इन सबके लिए जिस ज्ञान और साधनकी आवश्यकता है, वह सब एकबारगी सुलभ करा पाना आसान नहीं है, परन्तु कुछ संकेत तो किये ही जा सकते हैं जो सही मार्ग निर्देशकों का काम करेंगे। यह कोशिश इन पत्रोंके माध्यमसे मैं करूँगा।

आशा हैं तुम स्वस्थ और प्रसन्न होगी। इला होली में तुम लोगोंके पास आ रही है।

अगला पत्र तुम्हारा उत्तर आनेके बाद लिखूंगा। तुम्हारी परीक्षाएँ निकट हैं। बहुत बड़े पत्र लिखनेकी जरूरत नहीं है।

हाँ, एक बात भूला जा रहा था—संगीताका कान पकड़कर एक चपत लगा देना पर हल्के से।

तुम्हारा शुभकांक्षी,
सुरेन्द्रनाथ

KURAZOL
(Liquid & Tablet)
A Remedy for Asthma

ADIOL COMPOUND
A General Pick-up

HEMOGASTRIN
A Digestive & Haematinic Tonic

LYCOLIV
A Liver Tonic

Products of :
INTERNATIONAL CHEMICAL & BIOLOGICAL INSTITUTE
PRIVATE LIMITED
KURAZOL HOUSE, BANGALORE-4.

परिवार
नियोजन
पूरक

उत्तर प्रदेशमें परिवार नियोजन तथा मातृ एवं शिशु कल्याण कार्यक्रम

—डा० देव नारायण शर्मा—

स्वतन्त्रता प्राप्तिके बाद देश और प्रदेशमें विकासकी अनेक आयोजनाएँ तथा चिकित्सा स्वास्थ्य सम्बन्धी विभिन्न राष्ट्रीय कार्यक्रम आरम्भ किये गये। इनके परिणामस्वरूप कृषि एवं औद्योगिक उत्पादनमें वृद्धि हुई। बाढ़ एवं सूखेकी स्थितिपर काफी हद तक काबू पाया गया तथा अनेक संक्रामक रोगोंपर नियंत्रण किया गया। इसमें कोई संदेह नहीं है कि सफल पंचवर्षीय योजनाओंके माध्यमसे प्रदेशने सभी क्षेत्रोंमें प्रगति की है फिर भी सम्पूर्ण प्रगति, उपलब्धि और विकासका यह प्रभाव आम जनताके जीवनमें दिखाई देना चाहिए था, वह नहीं हो सका है।

समस्या

प्रदेशमें प्रथम पंचवर्षीय योजना वर्ष १९५१ से प्रारम्भ की गयी। उस समय प्रदेशकी जनसंख्या ६ करोड़ ६२ लाख थी और मृत्यु दर लगभग २७ प्रति हजार व्यक्ति थी। इस समय प्रदेशकी आबादी ९ करोड़से भी अधिक है और मृत्यु दर लगभग १६ प्रति हजार व्यक्ति है। उत्तम स्वास्थ्य सेवाओंके कारण मृत्यु दरमें बराबर कमी होती रही है और इस अवधिमें जन्म दरमें कोई विशेष अन्तर नहीं हुआ। अतएव जन्म और मृत्यु दरमें पैदा होनेवाले असंतुलनके विकासको योजनाके लाभको काफी हद तक रद्द कर दिया है।

उद्देश्य

जनसंख्या वृद्धिपर नियंत्रण रखनेके लिए वर्ष १९५६ से परिवार नियोजन कार्यक्रम सम्पूर्ण देशमें प्रारम्भ किया गया है। इस कार्यक्रमका उद्देश्य परिवार नियोजनको विभिन्न विधियोंके प्रति दम्पतियोंको प्रेरित करके वर्तमान ४१ प्रति हजार जन्मदरको चौथी पंचवर्षीय योजनाके अन्त तक घटाकर ३२ प्रति हजार तथा बाद ५ से ७ वर्षको अवधिमें २५ प्रति हजार जनसंख्या लाना है।

सेवा सुविधाएँ

परिवार नियोजनको सेवा सुविधाएं सभी दम्पतियों को आसानीसे उपलब्ध हो सके इस हेतु प्रदेशके ग्रामीण क्षेत्रोंमें ८७५ ग्रामीण परिवार कल्याण नियोजन केन्द्र तथा प्रत्येक केन्द्रके अन्तर्गत ८ उप केन्द्रोंकी व्यवस्था की गयी है। शहरी क्षेत्रोंमें १५४ नगर परिवार कल्याण

नियोजन केन्द्रों की व्यवस्था है। इसके अतिरिक्त ऐसे क्षेत्रोंमें जो केन्द्रसे दूर है, १६८ सचल नसबन्दी एवं लूप दलोंके माध्यमसे जनताको निःशुल्क सेवा सुविधाएं उपलब्ध करायी जाती है।

वर्ष १९७२-७३ की उपलब्धियाँ

परिवार कल्याण नियोजन तथा मातृ एवं शिशु स्वास्थ्य कार्यक्रममें वर्ष १९७२-७३ के जो संयोगवश स्वाधीनताका रजत जयंती वर्ष है, कार्यक्रमको अब तक की प्रगति और उपलब्धियां अत्यन्त महत्वपूर्ण स्थान है। विभिन्न क्षेत्रोंकी उपलब्धिका संक्षिप्त विवरण निम्नलिखित है—पहली बार सम्पूर्ण प्रदेशमें परिवार कल्याण महोत्सवका बड़े पैमानेपर आयोजन किया गया जिसके परिणामस्वरूप वर्षमें ३,४७,६७९ नसबन्दी आपरेशन किये गये। यह उपलब्धि पिछले तीन वर्षोंकी सम्पूर्ण उपलब्धिसे भी कही अधिक है। इस वर्ष व्यापारिक संस्थाओं द्वारा १३७.२ लाख निरोधकी बिक्री की गयी जो वर्ष १९७१-७२ की अपेक्षा २८ प्रतिशत अधिक हुई।

स्वास्थ्य परिचारिकाओं (ए० एन० एम०) के प्रशिक्षण हेतु १० प्रशिक्षण केन्द्र इस वर्ष भी खोले गये। कुल केन्द्रोंकी संख्या ३६ हो गयी है और प्रवेशकी क्षमता ७२० से बढ़कर १०८० पहुँच गयी।

मातृ एवं शिशु स्वास्थ्यके अन्तर्गत गर्भवती महिलाओंकी अल्प रक्तता तथा बच्चोंकी टिटनेस, डिप्थीरिया, काली खाँसी आदि रोगोंसे सुरक्षाकी योजनाका विस्तार २८ जिलोंसे बढ़कर इस वर्ष प्रदेशके ५४ जिलोंमें किया गया।

९ महिला चिकित्सालयोंमें ६३ नयी बंध्याकरण (महिला नसबन्दी) शैय्याएं इस वर्ष स्थापित की गयी। इसके अतिरिक्त प्रसवोत्तरकालमें महिलाओंको परिवार नियोजनकी प्रेरणा एवं सुविधाएं प्रदान करने हेतु २ महिला चिकित्सालयोंमें कार्यक्रम आरम्भ किया गया। ऐसे केन्द्रोंकी संख्या ७ है।

ग्रामीण क्षेत्रोंमें ५१ मुख्य परिवार कल्याण नियोजन केन्द्रों तथा १८६ उपकेन्द्रोंके भवनोंका निर्माण कार्य सम्पन्न किया गया।

१ अप्रैल १९७२ से प्रदेशमें गर्भपातका वैधिकरण किया गया। चिकित्सकीय आधारपर गर्भ समापनकी सुविधाएं इस समय ५ मेडिकल कालेजों और महानगरियों में स्थिति पाँच प्रमुख चिकित्सालयों द्वारा प्रदान की जा रही है।

प्रदेशमें प्रथम बार चिकित्सा स्वास्थ्य एवं परिवार नियोजन सेवाओंका मंडल स्तर पर एकीकरण का ११ मंडलीय अधिकारियोंकी नियुक्ति की गयी।

जून १९७२ में विश्व बैंककी सहायतासे एक विशेष जनसंख्या परियोजना चलाये जानेके अनुबन्धपर हस्ताक्षर हुए। इस परियोजनापर ८५ लाखका व्यय अनुमानित है तथा इसका कार्यक्षेत्र रायबरेली, प्रतापगढ़, सुल्तानपुर, मुजफ्फरनगर, सहारनपुर, लखनऊ होगा।

सम्पूर्ण उपलब्धि

परिवार नियोजन कार्यक्रमके अन्तर्गत कार्यक्रमके आरम्भसे मार्च, १२७३ के अन्त तक १२०७९४३ नसबन्दी और ६७३०१९ लूप निवेशन किये गये हैं। इस प्रकार नसबन्दी लूपको स्वीकृति स्तर क्रमशः १३.७ तथा ७.६ प्रति हजार आबादी है।

जन सहयोग

यद्यपि परिवार नियोजन कार्यक्रमके अन्तर्गत अब तक प्रदेशमें काफी महत्वपूर्ण कार्य हुआ है। किन्तु प्रदेशकी गम्भीर जनसंख्या समस्याको पृष्ठिमें रखते हुए यह आवश्यक है कि इस कार्यक्रममें और अधिक तीव्रता लायी जाय। इस कार्यक्रमको जनतामें लोकप्रिय बनानेको दिशामें जन नेताओं और विशेषकर ग्राम प्रधानों, तथा अन्य स्वयंसेवी कार्यकर्ताओंके सहयोगको नितांत आवश्यकता है। वर्ष १९७२-७३ में अधिकसे अधिक जन सहयोग प्राप्त करनेके उद्देश्यसे स्वयं मुख्य मंत्रीजीने अपने स्तरके समस्त ग्राम प्रधानोंको एक पत्र द्वारा सम्बोधित कर कार्यक्रमके प्रति उनके सहयोगका आह्वान किया था। मुझे आशा है कि इस दिशामें समाजके सभी जागरूक व्यक्ति परिवार कल्याण कार्यक्रमको प्रदेशमें लोकप्रिय बनानेके लिए अपना पूरा-पूरा योगदान प्रदान करेंगे।

मुट्ठियों में कैद भविष्य

—श्री ओम तिवारी—

एक शाम जब आनंद दफ्तरसे लौटा तो साथके मकानपर स्वभावतः उसकी दृष्टि पहुँच गयी। बाहर दरवाजेका ताला खुला हुआ था और चबूतरा पानीसे धुला कुछ गीला गीला था। उसे लगा कि कोई नया किरायेदार आ गया है।

घरमें घुसते ही उसकी पत्नीने कहा-देखा वही हुआ जिसका हमें डर था। वह थोड़ी देर तक पत्नीकी आँखोंमें ढूढ़ता रहा कि उसका संकेत किस डरकी ओर है पत्नीने आगे कहा—तुमने देखा होगा मकान किरायेपर उठ गया। आनंदने धीरेसे कहा—तो क्या हुआ वह तो उठना ही था, आज नहीं तो कल। इसमें इतना डरनेकी कौनसी बात है? पत्नीने तनिक पास आकर धीरेसे कहा "नहीं जी, यह बात नहीं, बात दरअसल यह कि वह लोग हमारी बिरादरीके नहीं हैं।"

वह अब तक सम्भलकर बैठ चुका था—अरे बिरादरीके नहीं है तो क्या हुआ, आखिर होंगे तो इन्सान ही।

प्रत्युत्तरमें उसकी पत्नी तनिक खीझ भरे स्वरमें बोली-तुम समझनेकी कोशिश क्यों नहीं करते हो वह लोग हिन्दू नहीं है।

वह ठहाका मारते हुए हंसा—अरी भागवान, तो यह दुनियाकी किस किताबमें लिखा है कि उस मकानमें हिन्दूके अलावा और कोई नहीं रहेगा।

पत्नी बड़बड़ाती रही, पण्डित रामसुमिरनकी अक्लपर पत्थर पड़ गये हैं, दस-बीस किरायेके ज्यादा मिलते देखे कि सारी पण्डिताई भूल बैठे और चाहे जिसको घरमें बिठा लाया।

कोई सात आठ दिन भी नहीं बीते होंगे कि उन लोगोंको नये किरायेदारके बारमें पूरी जानकारी हो गयी थी। आदमीका नाम अब्दुल मजीद और पत्नीका नाम शमीम। उन दोनोंके अलावा एक बूढ़ी औरत भी साथमें है जो अब्दुल मजीदकी माँ है। पति किसी दफ्तरमें बाबू है और पत्नी लड़कियोंके स्कूलमें मास्टरनी है।

अब्दुल मजीदकी उम्र यही कोई तीस या इकतीसके लगभग होगी। उसकी पत्नीकी छबीस या सत्ताईस। दोनोंकी शादी हुए करीब तीन साल बीत चुके थे, परन्तु अभी तक बच्चा नहीं हुआ।

आनंदकी पत्नी मुंह बिचकाकर कभी-कभी कहती, यह भी कोई जिन्दगी है, तीन साल शादीको हुए और अभी तक सूखी संठ घूम रही है। और यहाँ तो शादीके साल भीतर ही पिकू हो गया था। फिर पतिके थोड़ा पास आकर कहती, मानो चाहे न मानों मुझे तो लगता है कुछ गड़बड़ी है। अभी तक बच्चा नहीं हुआ, तो अब क्या होगा? आनन्द कहता चलो अच्छा ही है। दोनों मियाँ-बीबी कमाते हैं, चैनसे हैं, यहाँ तो जबसे जिन्दगीमें पैर रखा है चैन नामकी चीज देखनेको नहीं मिली। दिनभर दफ्तरमें खटो और बाकी वक्त घरमें। कभी किसीको जूता नहीं है तो कभी किसीको चप्पल नहीं। जूता-चप्पल जुट भी जायें तो मालूम हुआ बीबीके पास धोती नहीं है और मियाँकी पतलूनमें पेबन्दपर पेबन्द लगनेकी नौबत आ रही है, आखिर मजीद भाईको देखो, मेरी ही उम्रके होगे, देखनेमें खासे लड़के जैसे मालूम होते हैं। एक हम हैं जो वक्तसे पहले ही बूढ़े हो गये। तुम कभी शीशेमें अपनी सूरत देखो कर सकती हो पड़ोसिनसे मुकाबला। तुम्हारी और उनकी उम्रमें मुश्किलसे साल दो साल का अन्तर होगा और सूरतमें जमीन-आसमानका। आनन्द और उसकी पत्नीमें अक्सर बात शुरू होती

पड़ौसी दम्पतिको लेकर, परन्तु बातोंका सिलसिला समाप्त होता उनकी अपनी जिन्दगी पर। और वह भी झगड़ेमें।

अब्दुलमजीद कुछ दिनोंमें मुहल्लेके सब लोगोंसे घुल-मिल गया था। आनंद सुबह-शाम जब भी उधरसे निकलता तो उसे महसूस होता कि वह अन्दर ही अन्दर बहुत छोटा होता जा रहा है। आखिर ऐसा क्या है जो उसमें नहीं है? मजीद अगर बाबू है तो वह भी अपने दफ्तरका बड़ा बाबू है जितना पति-पत्नी दोनों मिलकर कमाते हैं उतना वह अकेला ही कमाता है। फिर भी दोनोंका कोई मुकाबला नहीं है। जैसी धोती शमीम घरमें पहनती है, ऐसी धोती उसकी पत्नी विशेष अवसरोंपर भी नहीं पहनती है। आनन्दको मन ही मन कोई अनजानीसी पीड़ा सताती रहती है। कभी रात देरतक जब पड़ोसके मकान से मजीद और शमीमके कहकहोंकी आवाज उसके कानोंमें पड़ती तो घण्टो वह चारपाईपर छटापटता रहता। इस हँसीके कहकहोंसे अपनी जिन्दगीमें उतरने के वह सिर्फ सपने ही देखता रह गया था।

मुहल्लेकी औरतोंके लिए शमीम एक अजूबा थी। शादी हुए तीन साल हो गए और गोद सूनी। जो औरतें मजीदकी माँसे बात करतीं उनके पास दबीजबानमें कहनेके लिए एक यही बात होती थी। बूढ़ी मांको नन्हें मजीदकी बेहद चाह थी। और सुबह-शाम वह खुदासे दुआ माँगती कि ऐ परवारदिगार, इन बूढ़ी आंखोंको एक बार नन्हें मजीदको दिखा दे, फिर चाहे यह आंखें हमेशाके लिए बन्द हो जायें।

बूढ़ी मांकी मनःस्थिति देखकर मुहल्ले टोलेकी औरतोंका हौसला बढ़ता धीरे-धीरे वह साफ कहने लगीं—हमें तो लगता है, तुम्हारी बहू बाँझ है।

बाँझ? बूढ़ी मांकी आखें विस्मयसे फैल जाती। बहू और बेटे जब कामपर चले जाते तो वह घरमें अकेली पड़ी सोचती रहती। दिन भर एक ही बात सोचनेको प्रतिक्रिया शामको बहूपर व्यक्त होती, थोड़ी झुंझलाहट।

धीरे-धीरे बूढ़ी मांकी खीझ और झुंझलाहट शब्दोंमें बदलती गयी। शमीमने अब पहली बार सुना कि वह बाँझ है तो वह हंसीसे दुहरी हो गयी। मजीदने भी माँकी बातकी हँसकर टाल दिया। बूढ़ी मां भला आसानी से कब माननेवाली थी।

धीरे-धीरे स्थिति काफी गम्भीर हो गयी। बूढ़ी मांको जिद थी कि मजीद अपनी दूसरी शादी कर ले। मजीदने मांको बहुत समझाया, परन्तु वह किसी तरह माननेको तैयार न हुई आखिर हारकर मजीदने आनन्दका सहारा लिया। उसने कहा, आनन्द भाई, मैं अम्मीजान को कैसे समझाऊं कि शमीम बाँझ नहीं है। आप मेरी मदद करे—भाभीजानसे कहें कि वह अम्मीको असलियत बता दे।

आनन्दकी कुछ समझमें नहीं आया। उसने पूछा—क्या असलियत है? मजीदने तब आनन्दके कंधेपर हाथ रखा—आनन्द भाई यही कि जब मैं चाहूँगा तब बच्चा पैदा होगा। यह अपने हाथकी बात है।

आनन्दने पूछा, वह कैसे?

मजीद अपने हाथको बन्द मुट्ठी खोलते हुए कहा—देखो, इसे पहचानते ही इसके सहारे हम खुशहाल जिन्दगी बिता रहे है। जिन्दगी जीनेके यह दिन बच्चे पैदा करके गवाना मेरी समझमें अकलमंदी नहीं है।

आनन्दके मुहसे अस्फूट स्वरमें निकला "निरोध" और उसे लगा कि वह सारी जिन्दगी गलत रास्तेपर रहा।

"इस कार्यक्रममें विभिन्न स्तरोंपर समाजके जाने-माने लोगोंका सहयोग लिया जाना चाहिए। ये लोग ही आलोचनाका उत्तर देंगे, शंकाओंका समाधान करने और उन लोगोंमें इस कार्यक्रमके लिए उत्साह पैदा करनेमें सहायक हो सकते हैं जो अभी इस कार्यक्रमके औचित्य और महत्तासे आश्वस्त नहीं है।"

—श्री अशोक मेहता

अपनी-अपनी नजर

"जनसंख्या वृद्धिकी समस्या पूरे विश्वकी समस्या रही है। विकासशील देशोंके लिए यह और भी अधिक गंभीर है। हमारे देशमें अब यह एक समस्या मात्र नहीं, बल्कि डर यह है कि यह भारी विपत्तिका कारण बन सकती है।"

"जनसंख्या बढ़नेसे विकासके सारे प्रयत्न निरर्थक हो जाते हैं और इससे समाज तथा हर परिवारमें तबाही आती है।"

'सभीको बच्चे प्यारे हैं और वे बच्चे चाहते भी हैं। परन्तु हर बच्चेकी जिन्दगी अच्छी बने, यह हमारी जिम्मेदारी है। इसलिए हम उतने ही बच्चे पैदा करें जिनकी हम अच्छी तरह परवरिश कर सकें।'

—डा० जाकिर हुसैन

"हम अपने आर्थिक विकासके ही लिए नहीं, बल्कि खुराक तकके लिए विदेशी सहायतापर निर्भर है। इसलिए हमारे सामने साधनोंके अनुसार आबादीको सीमित करनेके अलावा कोई चारा नहीं है। सरकार परिवार नियंत्रण कार्यक्रमों को देश भरमें जोर शोरसे चलाने और लोकप्रिय बनाने का भरसक काम कर रही है। परन्तु सब लोगोंके सक्रिय सहयोगके बिना सरकार इस काममें अकेले सफल नहीं हो सकती। इसको जन-आन्दोलन बनना चाहिए और सामाजिक संस्थाओं डाक्टरों तथा आम लोगों, सभीका सहयोग मिल जाना चाहिए।"

—डा० सर्वपल्ली राधाकृष्णन

"अगर जनसंख्यामें इतनी ही तेजीसे वृद्धि होती रही तो हमारे आर्थिक उन्नतिके सारे प्रयत्न विफल हो जाएँगें।"

"अपनी भलाई तथा देशकी भलाई इसीमें है कि लोग अपने परिवार सीमित रखें।"

—श्री वी० वी० गिरि

"किसी देशके लिए जनसंख्या बहुत बड़ी ताकत हो सकती है, परन्तु जब उस देशमें साधन सीमित हों, तब जनसंख्या वृद्धिका अर्थ है कम प्रगति और अधिक समस्याएँ।"

"हम भले ही और अधिक स्कूल तथा अस्पताल बनाएँ और अन्य सुविधाओंकी व्यवस्था भी करें, पर हमारी आबादी जिस तेजीसे बढ़ रही है उसके कारण यह अपर्याप्त हो जाती है।"

"परिवार नियोजनका उद्देश्य जनसंख्यामें कमी करना मात्र नहीं है, बल्कि ऐसी हालतें पैदा करनी है, जिसमें परिवार सुखी बन सके और माँ-बाप अपने बच्चोंकी उचित देखभाल कर सकें।"

"आबादीको रोके बिना योजना तैयार करना उसी प्रकार है जिस प्रकार बाढ़ग्रस्त भूमिमें मकान बनाना।"

"ज्यादासे ज्यादा लोगोंको अधिकतम भलाई करना ही वास्तवमें परिवार नियोजन कार्यक्रम को चलानेका तात्पर्य है।"

—श्रीमती इंदिरा गांधी

"यदि आप अपनी ऊँची जन्मदरपर रोक नहीं लगाते और जनसंख्याको नियंत्रित नहीं करते तो हमारी विकास योजनाएं निरर्थक हो जाएगी।" —यशवन्तराव चव्हाण

079228

पारिवारिक जीवनापयोगी स्वास्थ्य साहित्य

लोकप्रिय स्वास्थ्य साहित्य

राजा बेटा कैसे बनायें ?	३.००
सुन्दर दांत और उनकी देखरेख	२.५०
आपके बच्चेकी खुराक	३.३७
भोजन क्या, क्यों और कैसे ?	४.००
विटामिन और हीनता जनित रोग	४.२५

यौन-साहित्य

यौन मनोविकार कारण और निवारण	४.२५
विवाहित जीवनमें यौन सम्प्रयोग	५.५०
नारीकी यौन समस्यायें	२.५०
सन्तति-निरोध कब और कैसे ?	४.००
गर्भवती स्त्री और प्रसवपूर्व व्यवस्था	२.५०

प्रकाशक

स्वास्थ्य सन्देश प्रकाशन,
पोस्ट—कालपी (उत्तर प्रदेश)

स्वास्थ्य का वृहद् ज्ञान सागर

आपका स्वास्थ्य

१६ वर्षों की

पुरानी फाइलें

चौथे और सोलहवें वर्ष के अलावा प्रत्येक वर्ष की फाइलें प्राप्य हैं।

प्रत्येक वर्ष की फाइल ६ रु० में प्राप्य है फाइलें वी० पी० से नहीं भेजी जायँगी। अग्रिम मूल्य भेजना अनिवार्य है।

आपका स्वास्थ्य कार्यालय
चेतगंज, वाराणसी—१

उद्यम

मासिक पत्रिका

'उद्यम' में निम्न विषयों पर लेख प्रकाशित होते हैं।

*लाभदायक उद्योग-धन्धोंकी व्यवहारोपयोगी जानकारी

*व्यवसायमें सफल व्यक्तियोंकी मुलाकातें और परिचय तथा मवेशियोंके रोगोंका निवारण।

*इंजिनियरिंग, यंत्र सामग्री और ग्रामोद्योग संबंधी लेख

*आरोग्य, संक्रामक रोग तथा घरेलू औषधियों संबंधी जानकारी।

*पंचवर्षीय योजनाओंके कारण होता हुआ ग्रामसुधार

*महिला विभाग : घरेलू उद्योग, मितव्ययिता, खाद्य पदार्थ आदि पर लेख।

*बालकोंका विश्व : बालक-बालिकाओंके लिए सुलभ भाषामें त्रैमासिक जानकारी।

*विद्यार्थियों के लिये : विशेषज्ञों द्वारा उपयुक्त लेख

*पाठकों द्वारा पूछी गई जानकारी।

'उद्यम' का वार्षिक मूल्य रु० दस भेजकर परिवारके प्रत्येक व्यक्तिके लिये उपयोगी यह मासिक पत्रिका अवश्य संग्रहीत करें।

उद्यम मासिक, धर्मपेठ, नागपुर-१

घर बैठे संगीत सीखिए

प्रतिमास घर बैठे गायन, वादन तथा नृत्य की ठोस जानकारी प्राप्त करने के लिए १५) भेजकर **'संगीत'** मासिक के वार्षिक सदस्य बन जाइए। नमूना चाहें तो १)५० के टिकिट भेजिए। फिल्मी गीतों के प्रेमी २०) भेजकर **'फिल्म-संगीत'** त्रैमासिक के वार्षिक सदस्य बनें। वर्ष में इसके कुल चार अंक (जनवरी, अप्रैल, जुलाई और अक्टूबर में) प्रकाशित होते हैं। प्रत्येक अंक में ३५ प्रसिद्ध फिल्मी गीत स्वरलिपि-सहित छपते हैं। हर प्रकार के संगीत-साहित्य की विस्तृत जानकारी के लिए हमारा बड़ा सूचीपत्र मुफ्त मंगाएं।

पता

संगीत कार्यालय, ६, हाथरस (उ. प्र.)

इंडियन मेडिकल असोसियेशनकी ओरसे डा० कोशलपति तिवारी द्वारा
संपादित, प्रकाशित और सुदर्शन मुद्रक वाराणसीमें मुद्रित।

HEALTH

is your most precious possession

Your Health

will help preserve it

Your Health aims to educate the common man on matters of health. It deals with day to day problems of sanitation and hygiene and presents the scientific side of preventing many bodily and mental ills.

Remember it is

A Publication of the Indian Medical Association.

SUBSCRIPTION RATES

(Post free)

Inland : 1 year Rs. 8/- ; 2 years Rs. 12/-
Foreign : 1 year Rs. 10/- ; 2 years Rs. 16/-
Members of I. M. A. ; 1 year Rs. 6/-

Remittances should be by money orders or postal orders payable to YOUR HEALTH

All business correspondence should be addressed to

Manager, YOUR HEALTH
23 Samavaya Mansion : Corporation Place
CALCUTTA-13

मूल्य—पचास पैसे

Compiled
1999-2000